मध्यएसिया का इतिहास

खण्ड १

राहुल सांकृत्यायन

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद्
पटना

प्रथम संस्करण, वि० सं० २०१३, सन् १९५६ ई०

मूल्य १०॥) सजिल्द १२) ८

मुद्रक
सम्मेलन मुद्रणालय
प्रयाग

समर्पण

परगत डा० काशीप्रसाद जायसवालको
जिनकी स्मृति अठारह वर्षोंके अनन्त वियोगके बाद भी
मेरे जीवनकी प्रिय निधि है

वक्तव्य

"विद्वानेव विजानाति विद्वज्जनपरिश्रमम्"

बिहार-राज्य के शिक्षा-विभाग के अन्तर्गत यह परिषद् एक साहित्यिक सस्था है। अबतक इसके द्वारा दो दर्जन महत्वपूर्ण पुस्तकों का प्रकाशन हो चुका है। उन्हे समस्त हिन्दी-ससार ने पसद भी किया है।

सन् १९५४ ई० में, बिहार के तत्कालीन शिक्षासचिव श्री जगदीशचन्द्र माथुर आइ० सी० एस० के अनुरोध से, परिषद् ने इस पुस्तक का प्रकाशन स्वीकृत किया था। किन्तु परिषद् की स्वीकृति से पूर्व ही इसके दूसरे खण्ड के कई फार्म लखनऊ में छप चुके थे। तव भी, हिन्दी में ऐसी पुस्तक का अभाव और एक अधिकारी विद्वान् द्वारा उस अभाव की पूर्ति का सत्प्रयास देखकर, परिषद् ने अपने नियमो के अपवाद-स्वरूप, विशेष परिस्थिति में, वह स्वीकृति दी थी।

इसलिए कि लेखक ने इस पुस्तक के दूसरे खण्ड की छपाई पहले ही शुरू करा दी थी, इस पहले खण्ड की पाण्डुलिपि भी—दोनो खण्डो की एक-सी छपाई कराने के विचार से—लखनऊ भेज दी गई। परन्तु कुछ अनिवाय कारणो से जब दूसरे खण्ड की ही छपाई में विलम्ब होने लगा, तब प्रस्तुत खण्ड को पहले ही प्रकाशित करना आवश्यक समझ, प्रयाग में इसकी छपाई का प्रबन्ध करना पडा, क्योकि इसके लिए लखनऊ में खरीदा हुआ कागज भी प्रयाग भेजना था।

हम चाहते थे कि दोनों खण्ड एक साथ ही प्रकाशित हो। पर दूसरा खण्ड इससे कुछ वडा है। फिर भी हम उसे अविलम्ब प्रकाशित करने में प्रयत्नशील है। आशा है कि यह भी शीघ्र ही पाठको की सेवा में पहुँचेगा। तबतक इस खण्ड का पहले निकल जाना उचित ही हुआ।

इस पुस्तक में विभक्तियो के चिह्न सर्वत्र शब्दो के साथ लगे हुए है। परिषद् की अन्य पुस्तको में ऐसा नही है। किन्तु इस पुस्तक के दूसरे खण्ड के कई फार्म जैसे पहले छप चुके थे वैसे ही इस खण्ड के भी छपवाने पडे। कारण, दोनो खण्डो की छपाई में समता रखना आवश्यक प्रतीत हुआ। विभक्तियो को शब्दो से हटाकर या सटाकर लिखने-छापने की परिपाटी आज भी हिन्दी-जगत् मे प्रचलित है। अत पहले के छपे हुए पृष्ठो को नष्ट करके परिषद् की परम्परा के अनुसार पुन नये सिरे मे छपाई शुरू कराना हमने अनावश्यक समझा, क्योकि पुस्तक के महत्त्व में इससे कोई बाधा नही पडी है।

अस्तु। भारत का इतिहास पढने पर प्राय ऐसा अनुभव होता है कि मध्य एसिया के इतिहास से भारत के इतिहास की कितनी ही घटनाएँ सम्बद्ध हैं । परन्तु हिन्दी में मध्य एसिया के कुछ देशो के भौगोलिक एव ऐतिहासिक विवरण तो मिलते हैं, सम्पूर्ण मध्य एसिया का क्रम-बद्ध इतिहास नही मिलता। इसलिए अनेक ऐतिहासिक जिज्ञासाओ का समाधान नही हो पाता था। आशा है कि अब यह पुस्तक भारत और उसके पडोसी देशो के इतिहास की शृखला को अटूट सिद्ध करके पाठको को सन्तुष्ट करेगी।

इस पुस्तक के समर्थ लेखक महापण्डित श्री राहुल साकृत्यायनजी अन्तरराष्ट्रीय ख्याति के विद्वान् हैं। इस युग के आप एक धुरन्धर साहित्यकार हैं। साहित्यिक शोध का क्षेत्र आपके अनवरत अनुसन्धानात्मक परिश्रम एव लेखनी-सचालन से बहुत उवर हुआ है। आपकी अथक लेखनी ने कितने ही ऐसे विषयो को सनाथ किया है, जिनकी ओर हिन्दी-ससार के विद्वज्जनो का ध्यान आकृष्ट नही हुआ था। अत हिन्दी-साहित्य आपकी खोज की लगन और देन से बहुत लाभान्वित हो रहा है। विश्वास है कि यह पुस्तक भी हिन्दी-साहित्य के एक चिर-अनुभूत अभाव की पूर्त्ति करेगी तथा ऐतिहासिक शोध के कामो में भी सहायक होगी।

शिवपूजन सहाय
(सचालक)

दीपावली, सवत् २०१३ वि०
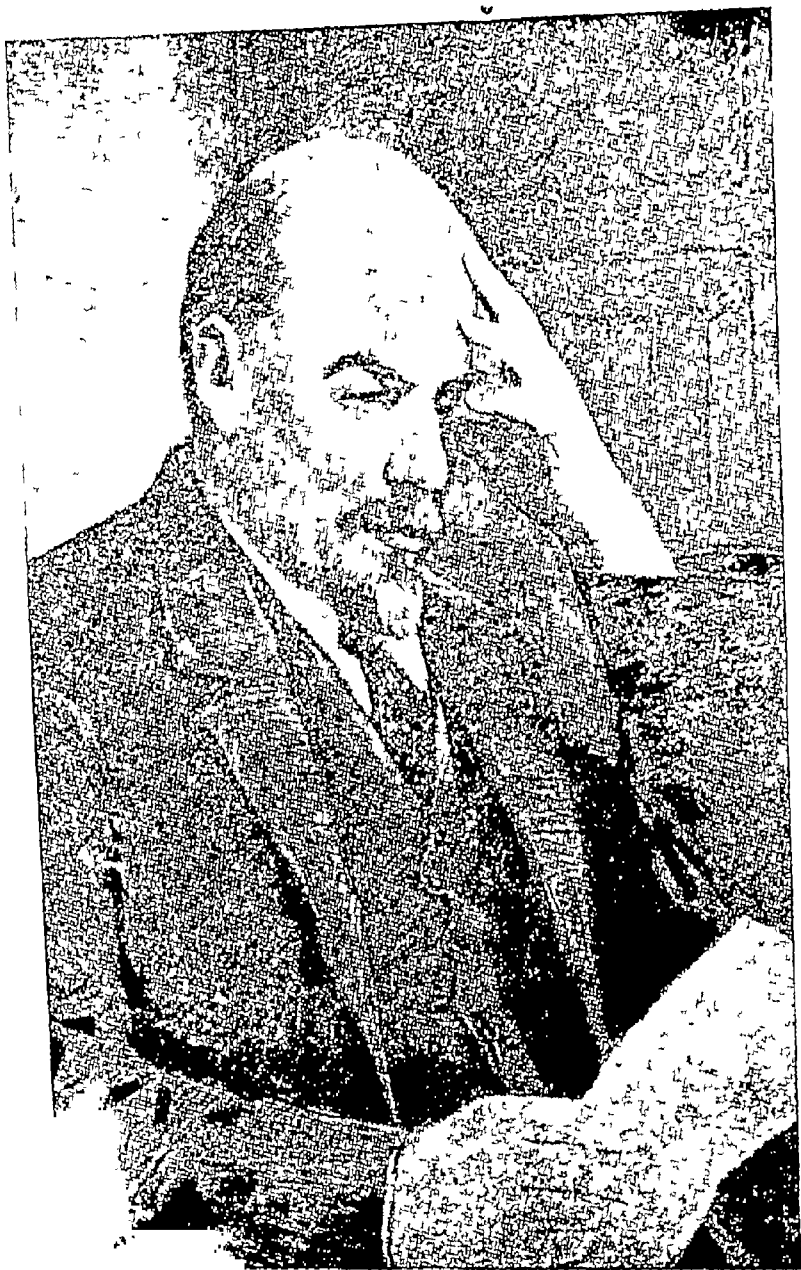
लेनिन

भूमिका

भारतके इतिहास की जगह मध्य एसियाके इतिहासपर मैंने क्यों कलम उठाई, यह प्रश्न हो सकता है। उत्तर आसान है। भारतके इतिहासपर लिखनेवाले बहुत हैं। जिसका अभाव है, उसकी पूर्ति करना जरूरी था, यही विचार इस प्रयासका कारण हुआ। अपनी यात्राओंमें मैं रूस और मध्य-एसियाके सम्पर्कमें आया, उनके ऊपर कितनी ही पुस्तकें लिखी और अनुवादित की। उसी समय विचार आया, आधुनिक ऐतिहासिक घटनाओंको पिछले इतिहासकी पृष्ठभूमिमें देखना चाहिये। इस तरफ आगे बढा, तो यह भी मालूम हुआ, मध्य-एसियाका इतिहास हमारे देशके इतिहाससे बहुत घनिष्ट सम्बन्ध रखता है। द्रविड (फिनो-द्रविड) जाति—जिसने मोहनजोडरो और हडप्पाके भव्य नगर और यशस्वी सिन्धु-सभ्यताको प्रदान किया—का सम्बन्ध मध्य-एसियासे भी था। हालके पुरातात्विक अनुसन्धान बतलाते हैं, कि आर्योंका सम्पर्क द्रविड जातिसे सबसे पहले सिन्धु-उपत्यकामें नहीं, बल्कि ख्वारेज्ममें हुआ था। वहां पराजित करके उनका स्थान ले आर्य भारतकी ओर बढे। उनका बढाव पिछली विजित भूमिको बिना छोडे आगे की तरफ होता रहा, इसीलिये भारतीय आर्योंकी परम्परा में अपने पुराने छोडे हुये स्थानका उल्लेख नहीं पाया जाता। आर्योंकी अनेक लहरोंके बाद ग्रीक लोगोंने भी बाख्त्रिया-से आकर भारतके कुछ भाग पर शासन किया। शक-कुषाण भी वहांसे ही होकर आये। तथा-कथित हूण—हेफ्ताल—भी मध्य-एसियासे भारतकी ओर बढे। तुर्क और इस्लाम भी वहांसे चलकर भारत आया। इन शासकों और उनकी जातियोंके इतिहासका एक भाग मध्य-एसिया-में पडा रहा, जिसे जाने बिना हम अपने इतिहासको समझनेमें गलती कर बैठते हैं। इस दृष्टि से भी मुझे इस पुस्तकके लिखनेकी प्रेरणा मिली।

यद्यपि मैं अपने इतिहासको मध्य-एसिया—अर्थात् मुख्य चीन, भारत-अफगानिस्तान, ईरान, कास्पियन समुद्र और रूस द्वारा घिरी हुई भूमि—तक ही सीमित रखना चाहता था, लेकिन इतिहासकी नदी बहुत टेढी-मेढी बहती है, जिसके कारण मुझे इन सीमांत देशोंके इतिहास में भी कहीं-कहीं भटकना पडा। वैसा न करनेसे विषयके समझनेमें कठिनाई होती।

नामोंके उच्चारणमें हिन्दीमें अभी हमारी कोई परम्परा नहीं बनी है, विशेषकर उन नामोंके बारेमें, जो कि पहली बार इस पुस्तकमें आ रहे हैं। अंग्रेजों और अंग्रेजीका उच्चारण सबसे भ्रष्ट होता है, इसलिये मैंने उससे बचनेकी कोशिश की है। जर्मन इसके बारेमें ज्यादा अच्छे रहते हैं, और अपनी अधिक उच्चारणानुरूप लिपिके कारण रूसी सबसे अच्छे हैं। पर, मूल भाषाओंकी लिपियोंमें जो दोष हैं, उसे वह कैसे दूर कर सकते हैं? मंगोल लिपिमें मुश्किलसे डेढ दर्जन अक्षर हैं। वहां क, ग, और ह में कोई अन्तर नहीं है। कगान, खगान, हगान, हकान चाहे जिस तरह एक ही लिखे शब्दको पढ़ लीजिये। चीनी नामोंके उच्चारणमें भी ऐसी कठिनाई है। इसके अतिरिक्त पुस्तककी छपाई जिस निराशाजनक परिस्थितियोंमें वर्षों रुक-रुक

कर होती रही, उसके कारण मै नामोंके एक समान उच्चारणका वरावर इस्तमाल नही कर सका। इस तथा दूसरी वातोंमें भी विषय-सूचिमें दिये गये रूपको अन्तिम मानना चाहिये।

पुस्तककी सामग्रीका बहुत बडा भाग मैंने रूसमें अपने दो सालके प्रवास (१९४५-४७ ई०) में जमा किया। इसमें शक नहीं, मध्य-एसियाके इतिहासकी जितनी सामग्री रूस और रूसी भाषामें है, उतनी अन्यत्र नहीं मिल सकती। जिस तत्परतासे वहा ऐतिहासिक और पुरातात्विक अनुसन्धान हो रहे हैं, उनके कारण हर साल नई-नई सामग्री प्राप्त हो रही है। अफसोस है १९४७ के वादकी उपलब्ध सामग्रीमें बहुत कम हीका इस्तमाल मै कर सका। प्रो० ताल्स्तोफ़ कई वर्षोंसे पुरातात्विक अभियानोंके नेता होते रहे है। इस विषयमें—विशेषकर ख्वारेज्म, कराकुम और किजिलकुमकी भूमिके सम्वन्धमें—उनका ज्ञान अद्भुत है। सप्तनदके वारेमें डा० वेर्न्स्तामका अध्ययन गभीर है। इन दोनो विद्वानोंसे जव-जव मुझे मिलनेका मिला, उन्होने समय और श्रमका कुछ भी न खयाल करके दिल खोल कर अपने ज्ञानसे लाभ उठानेका मुझे अवसर दिया। इसका उल्लेख मै अपनी यात्रा-पुस्तक "रूसमें पच्चीस मास" में कर चुका हू। मै अपनी कुछ कल्पनाओंमें उतना आग्रहवान् न होता, यदि उनके साथ विचार-विनिमयके वाद उनमें सार न रहता। मध्य-एसियाका इतिहास लिखनेके अधिकारी सोवियत् विद्वान् ही हो सकते हैं, लेकिन अभी वह भिन्न-भिन्न कालो और अशोपर ही अनुशीलन कर रहे है। न मालूम कव तक वह इस अनुशीलनको क्रमवद्ध इतिहासके महाग्रथके रूपमें परिणत करेंगे। उस ग्रथके तैयार होने तक मेरे इस प्रयासका मूल्य रहेगा ही।

दो सालके वाद रूससे भारत चले आनेका एक वडा कारण सगृहीत सामग्री और अध्ययनको पुस्तकके रूपमें लानेका खयाल था। मैने वहा चार-पाच मन पुस्तकें जमा की थीं। इनके अतिरिक्त दो वर्षमें पढ़ी पुस्तकोंसे वहुत से नोट लिये थे। वहा रहते पुस्तक लिखनेपर वह प्रेसका मुह देख सकती, इसमें पीछेके तजर्वेने भी सन्देह पैदा कर दिया। इन्ही पुस्तकोंको सुरक्षित लानेके खयालसे मै अफगानिस्तानके छोटे रास्तेको छोड इगलैण्ड होते भारत लौटा। यदि सीधे रास्ते लौटा होता, तो अगस्त १९४७ मे पश्चिमी पाकिस्तानमें आता, फिर न मालूम सामग्री और सग्राहक पर क्या वीतती?

इतनी वडी पुस्तकको छापनेवाले मिलने मुश्किल थे। एक प्रकाशकने पहिली जिल्दके वीस-पचीस पृष्ठ कम्पोज कर लिये, और दूसरी जिल्दको नेशनलहेरल्ड प्रेसमें छापनेके लिये दिलवा दिया, पर अन्तमें यह भार उनको अपनी शक्तिसे वाहर मालूम हुआ। नेशनल हेरल्ड प्रेसने मेरी जिम्मेवारीपर उस जिल्दको छापना शुरू किया, जिसके लिये कागज भी मै दे चुका था। पहलेवाले प्रकाशकके हाथ ढीला करनेपर यह सारा वोझ मुझे वर्दाश्त करना पडा—और वह पहुँच नही दूसरा खड था। श्री जगदीशचन्द्र माथुरने पुस्तककी पाण्डुलिपिको देखकर इसे विहार राष्ट्रभाषा परिषद्को देनेके लिये कहा। पर पहिले तो पहलेवाले प्रकाशकको तैयार करना था, जिन्हें मै वचन दे चुका था। वह राजी हुये। विहार राष्ट्रभाषा परिषद्ने प्रकाशित करनेकी इच्छा प्रकट की, जिसमें श्री जगदीशचन्द्र माथुर और परिषद्के सचालक-मण्डलने जो प्रयत्न किया, वह न होता, तो पुस्तककी सद्गति कीडे-मकोडे ही करते।

पुस्तकका पहला जिल्द सम्मेलन मुद्रणालय प्रयागमें छपा है, और दूसरा नेशनल हेरल्ड प्रेस लखनऊमें। सम्मेलन मुद्रणालयके अध्यक्ष श्री सीताराम गुप्ते अपनी तत्परता और काय-

क्षमताके लिये प्रसिद्ध है। उन्होंने इसको जिस तत्परतासे छापा, उसके लिये मैं उनका हृदयसे कृतज्ञ हूं। पहले नेशनल हेरल्डने फुर्तीसे छापना शुरू किया था, फिर उसने वर्षो तक चुप्पी साध ली। हर्ष है, नये प्रबन्धकने अब तत्परता दिखलाई है। आशा है, दूसरा खंड भी जल्दी निकल जायगा।

लिखावट खराब होने और अभ्यास छूट जानेके कारण, मैं पुस्तक को टाइपराइटर-पर बोल कर लिखाता हूं। मुझे परिश्रमका अभ्यास है, और बाहरी बाधा उपस्थित न हो, तो सारा समय लिखने-पढनेमें बिता सकता हूं। मेरे साथ चलनेवाले सहायक बहुत कम मिल सकते हैं। श्री मंगलदेव परियार इस विषयमें मेरी ही तरह निरलस हैं। उनकी सहायता और द्रुतगतिने इस पुस्तकमें बडी सहायता की है।

त्रुटियोंके बारेमें विषय-सूचीके हेडिंगो और उच्चारणोको अन्तिम मानना चाहिये।

मसूरी,
४-६-५६

राहुल साकृत्यायन

मध्य-एसियाका इतिहास (१)

विषय-सूची

मध्यएसिया का इतिहास

खण्ड १

भाग १

प्रागैतिहासिक मानव (१ लाख वर्ष—३००० ई० पू०)

अध्याय १

पुराकल्प

§१ पृथ्वीपर प्राणी

वैज्ञानिक खोजो से पता लगता है, कि हमारी पृथिवी का जन्म आज से दो या चार अरब वर्ष पहले हुआ था। लेकिन, उस समय अपनी उष्णता के अधिक होने और दूसरे साधनो के अभाव से कोई वनस्पति या प्राणी न पैदा हो सकता और न जी सकता था। मनुष्य तो पृथिवी के आयु से मिलाने पर बिल्कुल हाल में आया हुआ प्राणी है। पन्द्रह लाख वर्ष पहले भी उसका बहुत मुश्किल से पता लगता है। एक तरह हम कह सकते हैं, कि उसकी सत्ता का भान दस लाख वर्ष से पहले नही जाता। आगे हम देखेंगे, कि इस दस लाख वर्ष में भी साढे नौ लाख वर्ष तक वह मनुष्य कहलाने का पूरी तौर से अधिकारी नही हो सका था और जिसे हम मानवता कहते हैं, उसका आरम्भ तो आज से पन्द्रह हजार वर्ष से भी पीछे नहीं होता।

मध्य-एसिया में मानव का इतिहास लिखते समय मानव की पृष्ठभूमि पर भी एक सरसरी दृष्टि डाल देना अनावश्यक नही होगा। दो (या चार) अरब वर्ष की पृथिवी की आयु में तीन चौथाई अथवा १४२ ५ करोड वर्ष तो अजीव-कल्प के हैं। इस सारे समय में पृथिवी पर किसी तरह का कोई जीवधारी नही था। ५७ ५ करोड वर्ष पहल ही सर्वप्रथम हमें प्राणी के फोसील (पथराये शरीर) का पता लगता है। इसी समय से जीव-कल्प आरम्भ होता है—अर्थात् पृथिवी पर प्रथम जीवधारी को आये अभी साढे सत्तावन करोड वर्ष हुए हैं। जीवकल्प के पहले प्राक्-कैंब्रियन चट्टानें एक लाख अस्सी हजार तथा २५ हजार फुट मोटी मिलती हैं। जीवकल्प भी पुराजीवक (पलियोजोइक्), मध्य-जीवक (मेसो-जोइक्) और नव-जीवक (किनोजोइक्) तीन कल्पो में विभक्त हैं। पुरा-जीवक कल्प के छ भेद हैं, जिनके नाम फलक (१) से मालूम होंगे। पुराजीवक कल्प में हम अत्यारभिक तथा मीन जैसे प्राणी तक को ही देख पाते हैं, प्रथम मीन का अस्तित्व ३२ करोड वर्ष से पहले नही मिलता। पुराजीवक को आदिकल्प भी कह सकते है।

मध्य-जीवक (द्वितीय-कल्प) में विशालकाय शरटो (छिपकली-मगर की जातियो), दन्त-धारी पक्षियो तथा प्रथम शुद्ध पक्षी तक जीवन का विकास हो जाता है। शरट-युग को त्रियासिक युग कहतेहैं और दन्तधारी पक्षी जुरासिक युग में हुए थे। जहाँ पुराजीव कल्प ३० करोड वर्ष तक रहा, वहाँ मध्य-जीवक कल्प साढे १४ करोड वर्ष में समाप्त हो गया। इसके बाद नवजीवक (किनोजोइक्) कल्प आज से ६ करोड वर्ष पहले आरम्भ हुआ, जो अब तक चला जाता है। नवजीवक कल्प के तृतीयक और चतुर्थक दो युग-भेद है। यदि जीवकल्प के आरम्भ से इस तरह

के विभाजन को स्वीकार करें, तो पुराजीवक आदि युग हुआ, मध्य-जीवक द्वितीयक युग, नवजीवक तृतीयक और चतुथक दो युगो में विभक्त हुआ। नवजीवक के तृतीयक और चतुथक युग भी अनेक भागो में विभक्त हैं। इसी युग मे प्राय ५ करोड वर्ष पूर्व प्रथम स्तनधारी प्राणी का प्रादुर्भाव हुआ। इससे पहले के प्राणी (शुद्ध पक्षी, दन्तधारी पक्षी) अण्डज थे। अण्डज प्राणी का उत्पादन उतना सुरक्षित नही होता, क्योकि माता को अण्डे बाहर कही रख देने होते है, जहाँ पर उनके खानेवालों की सख्या कम नही होती। उनकी रक्षा में मीन और शरट जैसे जल-थल उभयजीवी प्राणियो को, विशेषकर अडे से बाहर निकलने के बाद पानी और भोज्य पत्तियो के लिए वृक्ष सहायक होता है। स्तनधारी प्राणियो को सबसे बडी सुविधा यह है, कि उनका अडा बाहर नही, बल्कि माँ के पेट के भीतर परिपुष्ट होता है और काफी शक्ति-सचय के बाद बाहर आता है। उस वक्त भी तुरन्त वह अपने पैर पर खडा होकर स्वावलम्वी नही हो जाता, किन्तु, उसकी रक्षा के लिये जहाँ माँ की बच्चे के प्रति ममता सहायक होती है, वहाँ माता के स्तन से दूध निकलकर भोजन से उसे निश्चिन्त कर देता है। नवजीवक कल्प एक तरह स्तनधारियो का कल्प था।

जैसा कि अभी कहा, नवजीवक कल्प तृतीयक और चतुथक दो युगो में विभक्त हैं। इस सारे नवजीवक को जीवन की उपा मान कर पाँच भागो में विभक्त किया गया है, जिनमें उपा (एओसेन), लघुउषा (ओलिगोसेन), सध्यउषा (मिओसेन) और अतिउपा (प्लिओसेन)के चार युगों को तृतीय युग कहा जाता है। मध्यउपा-युग आज से साढ़े तीन करोड वप पहले था और अतिउपा पन्द्रह लाख वप पहले। मियोसेन (मध्यउपा) युगके अन्त के करीव प्राग्मानव का आरम्भ माना जाता है। इसे स्पष्ट करने के लिए यह समझ लेना आवश्यक है, कि उपायुग में ही लेमूर और नर-वानर वश का अलग विभाजन हुआ था। लघुउपा-युग में अभी नर-वानर वश अलग नही हुआ था। यह मध्य उपा युग ही था, जिसमें नर और वानर दोनो वश अलग होने लगे। अतिउपा युग के सारे समय तक हम कल्पना ही से कह सकते हैं, कि मानव का पूवज किसी रूप में अवस्थित था। हमारे यहाँ सिवालिक में इस जन्तु की फोसील हड्डियाँ मिली ह। तो भी इसमें भारी सन्देह है, कि मनुष्य वनने की ओर वढ़ने में यह सफल हुआ था, उधर वढ रहा था, इसमें तो सन्देह नही, क्योकि वनमानुपो की अपेक्षा उसके शरीर और कपाल का विकास अधिक मानवोचित था।

तृतीय कल्प के अन्त में चाहे मानव का प्रथम पूर्वज किसी रूप में अस्तित्व में आया हो, किन्तु उसका स्पष्ट पता हमें चतुथयुग या अतिउपा युग में ही मिलता है, जव कि उसे हम जावा-मानव, पेकिंग-मानव, हैंडलवर्ग-मानव, नियडथल (मुस्तेर)-मानव आदि के रूप में पाते हैं। तो भी हमारे नृवश (सपियन-मानव) का पता वहुत पीछे लगता है।

मानव और उससे सम्वन्ध रखनेवाले प्राणियो के विकास का परिचय यहाँ दिये फलको से अच्छी तरह हो जायगा। लेकिन, मध्य-एसिया में मानव विकास को वहाँ प्राप्त सामग्री के आधार पर वतलाने के लिए यह जरूरी होगा, कि वहाँ के प्राकृतिक भूगोल और जलवायु के इतिहास पर भी कुछ कहा जाय, क्योकि मानव विकास में इनका भारी हाथ रहा है।

फलक १—भूतत्त्वीय कल्प[1]

		युग	स्तर की मुटाई (फुट)	काल (वर्ष)	शरीर विशेष
प्राणिकल्प	नवजीवीय	अभिनवा	४०००	१० लाख	मानव
		अतिनवा	१३०००	१५ "	मानव
		मध्यनवा	२१०००	३५ करोड़	
		अल्पनवा	१२०००		स्तनधारी
		उषा	२३०००	६ करोड़	
	मध्यजीवीय	क्रैतासन्	४६०००		क्षुद्र पक्षी
		जुरासिक	२००००		दन्तधारी पक्षी
		त्रियासिक	२२०००		शरट
	पुराजीवीय	पैर्मीयन	१३०००		
		कर्बनभक्षीय	४००००	३० करोड़	
		प्राचीन रक्त	३७०००		प्रथम मीन
		सिलूरियन	१५०००		
		औदोंविचियन्	४००००		
		केम्ब्रियन्	४००००	५७.५ करोड़	प्रथम फोसील
अजीव कल्प		प्राक्-केम्ब्रियन	१८०००		
			२५०००	२ या ४ अरब	

§२ प्राकृतिक भूगोल

तृतीय कल्प ऐसा समय था, जबकि पृथिवी लगातार कँप रही थी, भूकपो का ताँता लगा हुआ था। पृथिवी की ऊपरी पपड़ी सिकुड़ रही थी, जिसके कारण एक विशाल पर्वत-श्रेणी पृथिवी के भीतर से ऊपर की ओर उठने लगी। यह उठी पर्वत-श्रेणी युरोप और एसिया (युरेसिया महाद्वीप) को दो भागो में विभक्त करती आज भी मौजूद है। इसी सुदीर्घ पर्वत-श्रेणी के अलग-अलग भाग है पेरिनेस, काकेसस, हिमालय और उसके आगे मध्य-चीन के पर्वत। युरेसिया द्वीप का रूप आज की तरह पहिले नही था। इसके भीतर एक बड़ा समुद्र लहरें मार रहा था, जो कि अतलान्तिक को भूमध्य सागर और काला सागर से मिलाते कास्पियन, अराल समुद्र तथा बल्काश को लेते तियेनशान पर्वतमाला तक फैला हुआ था। उत्तर से दक्षिण की ओर फैली अल्ताई और तियेनशान पर्वतमाला इस महासमुद्र को और पूर्व बढ़ने में बाधक थी। इससे यह भी मालूम होगा, कि मध्य-एसिया का पूर्वी और पश्चिमी भागो में विभाजन कृत्रिम और राजनीतिक नही, बल्कि प्राकृतिक है। तियेनशान और पामीर की पर्वतमालाएँ दक्षिण में हिमालय-श्रेणी से मिलकर पश्चिमी मध्य-एसिया को पूर्वी मध्य-एसिया से अलग करती हैं।

[1] Geology in the Life of Man (Duncan Leith 1945) p 39

यह अवस्था तृतीय कल्प के आरम्भ में थी। तृतीय कल्प के मध्य में पहुँचने तक युरेसियन महासागर कई स्थानो में छिन्न-भिन्न हो गया और उसके स्थान पर आस्ट्रिया से बलकाश सागर तक एक महासागर दिखाई पड़ने लगा। बल्कान से काला सागर, कास्पियन सागर, अराल और बलकाश तक को अपने पेट में रखनेवाले इस जलनिधि को भूतत्व-विशारद् सरमातिक सागर कहते हैं। लेकिन, भूपरिवत्तन का काम अभी समाप्त नही हुआ था, तृतीय कल्प के अन्त में सरमातिक सागर भी कई स्थानो से विलुप्त हो गया और उसके स्थान पर काला सागर, कस्पियन सागर तथा अराल और बलकाश के महासरोवर बच रहे।

तृतीय कल्प का अन्त हो रहा था और चतुर्थ का आरम्भ, जबकि एक और प्राकृतिक परिस्थिति उपस्थित हुई। तियेनशान् के पश्चिमवाले मध्य-एसिया मे महासमुद्र के बहुत सूख जाने के कारण जलवायु में सूखापन होना जरूरी था, उधर भूमध्य-रेखाके ऊपर जमी महाजलराशि से आशा हो सकती थी, कि वह इस सूखी प्यासी भूमि के लिए बादल भेजकर सहायता करेगी। लेकिन, बादलो के रास्तेमें हिमालयसे काकेसस तक फैली अति उच्च पर्वतमाला वैसा करने नही देती थी। वह वल्कि, समय-समय पर उचककर अभी और भी ऊपर उठती जा रही थी। आकाशमें सिर उठाकर बादलोका रास्ता रोकनेके लिए तैयार इस महापवत-श्रेणीने पश्चिमी मध्य-एसियाकी वर्षा को बहुत कम कर दिया। इसका परिणाम मध्य-एसियाकी भूमिपर यही हुआ, कि वहाँके बचे-खुचे समुद्र या महासरोवर और क्षीण होने लगे, नदियोकी धाराएँ पतली हो चली, भूमि और शुष्क होने लगी। पानी और नमीके अभावमें वनस्पतियो और उनपर अवलम्बित प्राणियोकी स्थितिमें क्रान्ति होना आवश्यक था। कजाकस्तानकी प्यासी भूमि, उज्वेकिस्तान तथा तुर्कमानिस्तानके कराकुम (कालामरु) एव किजिलकुम (लालमरु) उसीके परिणाम हैं। चतुर्थ कल्पके आरम्भसे आज तक मध्य-एसियाकी यह सूखी प्यासी भूमि इसी अवस्थामें चली आई हैं, बीचमें कभी-कभी सूखा और नमीके कारण जलवायुमें थोडा-सा अन्तर देखनेमें आया। आज भी इस भूमिमें जाडोमें थोडी-सी हिमवर्षा हो जाती है और वर्षाके नामपर गर्मियोमे कभी-कभी कुछ छीटे पड जाते हैं। अत्यन्त ऊँचे पर्वत-शिखरो या पवत-पृष्ठोको छोडकर मध्य-एसियाकी सारी भूमि सालभर प्यासी ही रहती है।

पूर्वी और पश्चिमी दोनो मध्य-एसियाको लेकर देखें, तो मालूम होगा, कि मचूरियाकी पश्चिमी सीमासे लेकर कालासागर या अजोफ सागरके पूर्वी छोर तकके दक्खिन की भूमि ऊँची धरती या पवतोसे घिरी एक विशाल खलार है। यहाँका पानी वासफोरस (तुर्की) के एक मँवरे से भागको छोडकर महासागरोसे कोई सम्बन्ध नही रखता। बल्कि कालासागर मध्य-एसियासे बाहर होनेके कारण हम कह सकते हैं, कि उसके वर्षा या समुद्रके पानीका पृथिवीके महासागरोसे कोई सम्बन्ध नही है। वासफोरसका जलमार्ग भी बहुत समय तक बन्द था और वह अन्तिम हिमयुग (प्राय १००००० वप पूर्व) के बलके कम होनेपर पिघली अपार जलराशिके फूट निकलनेके कारण ही खुला। मध्य-एसियाकी यह जलनिर्गमहीन खलार अल्ताई-तियेनशान्की पवत-श्रेणियो द्वारा दो भागोमें विभक्त है, जिसमें (१) पूर्वी मध्य-एसिया गोबीसे लेकर तरिम-उपत्यका तक पश्चिममें तियेनशान् और दक्षिणमें क्वेलुन पर्वतमालासे घिरा है। (२) पश्चिमी मध्य-एसियाके पूर्वमें तियेनशान् और पामीर दक्षिणमें अफगानिस्तान और ईरानकी पवतमाला तथा पश्चिममें काकेशस गिरिमेखलासे घिरा है। इसका पश्चिमी भाग अर्थात् कास्पियन समुद्रके पासकी

भूमि समुद्रतलसे ६०० फुट नीची है। यदि कालासागरसे कास्पियन सागरके बीचकी पार्वत्य भूमिको तोडकर जलमार्ग बना दिया जाय, तो कालासागरका पानी बडे वेगसे कास्पियनमें गिरने लगेगा और कास्पियन तथा अराल समुद्र मिलकर एक बहुत बडे सागरके रूपमें परिणत हो जायेंगे, जिसका प्रभाव मध्य-एसियाके जलवायु पर भी बहुत भारी पडेगा। दूसरी ओर यदि तियेनशान्-पामीरके
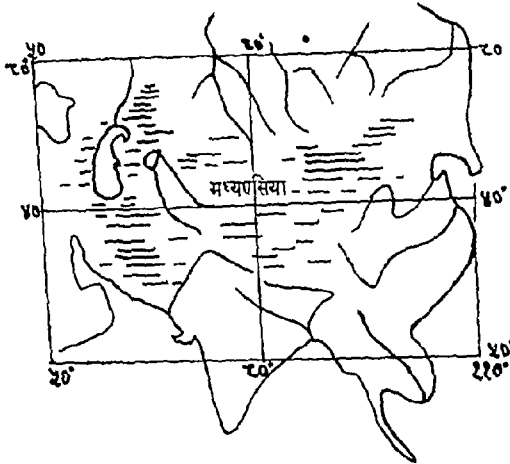
१ जलनिर्गमरहित

हिमाच्छादित पहाडोसे निकलनेवाली इली, चू, सिर, जरफ़शाँ और वक्षु (आमू) नदियाँ दक्षिणसे मुर्गाब आदि, और पश्चिमी (काकेशस) गिरिमालासे किरा आदि छोटी-बडी नदियाँ पानी लाना वन्द कर दें, तो सारा पश्चिमी मध्य-एसिया पूर्णतया रेगिस्तान हो जायगा।[1]

§३ जलवायु-परिवर्त्तन

यद्यपि मध्य-एसियाके तीन तरफ खडे इन विशाल पर्वतोंने वर्षाको रोक उसका बहुत अहित किया है, किन्तु साथ ही इस भूमिको बिल्कुल प्यासा मरने भी नही दिया। इनसे निकलनेवाली नदियाँ कम या अधिक परिमाणमें हिमगलित पानी बराबर लाती रही। मानवका प्रादुर्भाव तृतीयकल्पके अन्तमें उषापाषाण-युगमें हुआ। उस समय मध्य-एसियामें मानवके अस्तित्वका कोई पता नही लगता और जैसा कि हम आगे बतलायेंगे, जावा नर-वानरकी विचरण-भूमि मध्य-एसियासे तीस डिग्रीसे भी अधिक दक्षिणमें है। मध्य-एसियामें बीस हजार वर्ष पहले चतुर्थ हिमयुगके समय मानव अवश्य मौजूद था। निर्मानव कालसे मानवकाल लेते आज तक मध्य-एसियाकी भूमि प्रकृतिके निष्ठुर हाथोंमें खेल रही थी,[2] जिसके साथ मनुष्य भी अपनी बेवसी दिखलानेके सिवा कोई चारा नही रखता था। आज वहाँ मानव अपने भव्य सामाजिक उत्कर्षमें पहुँचकर प्रकृतिके

---

[1] Exploration in Turkistan, (R Pumpelly, 1903) vol I pp 1-4
[2] वही, I pp 2,8

बाधाको हटानेके लिए कटिबद्ध हुआ है। कास्पियन सागरका अजोफ-कालासागरसे मिलानेके लिए वोल्गा-दोनकी विशाल नहर तैयार हो गई है, जिसके द्वारा बम्बईसे चला जहाज बाकूके तैलक्षेत्रमें आसानीसे पहुँच सकता है। लेकिन, यह परिवतन उससे बहुत कम है, जो कि मध्य-एसियाकी तीन विशाल मरुभूमियो (प्यासी भूमि, कराकुम और किजिलकुम) को सस्यश्यामला भूमिमें परिणत करनेके लिए किया जा रहा है। वक्षु (आमूदरिया) को एक विशाल नहर द्वारा किजिलकुम-मरुभूमिके भीतर हो कास्पियन समुद्रसे मिलानेका काम बडे जोर-शोरसे चल रहा है। इससे किजिलकुमकी करोडो एकड बालुका-भूमि मेवेके बागो और गेहूँ के खेतोके रूपमें परिणत हो जायगी। इस नहरके कारण बम्बईका कपडा लालसागर, भूमध्यसागर, कालासागर, अजोफ-सागर, दोन नदी, दोन-वोल्गा नहर, वोल्गा नदी और कास्पियन सागर होते वक्षु नहर और वक्षु नदी द्वारा अफगानिस्तान पहुँच जायेगा। लेकिन, इतनेसे हम पश्चिमी मध्य-एसियाकी जल-समस्याको पूरी हल हुई नही देखते। सिर, जरफशाँ और आमू दरियाके पानीसे बनी अनेक महान् जलनिधियो तथा उनसे निकलनेवाली नहरो द्वारा सिंचित करोडो एकड भूमि रेगिस्तानके पेटसे निकालकर जो हरे-भरे खेतोंके रूपमें परिणत की जायगी, उसके कारण सूय-किरणें इस भूमिके जलको मनमानी तौरसे सोखने नही पायेगी और उससे जलवायुमें भी अनुकूल परिवर्त्तन होगा। लेकिन सोवियत विज्ञानवेत्ता इतने ही से सतोप नही करना चाहते। वह सोच रहे हैं, कि कैसे जिब्राल्टर और बासफोरसकी जलप्रणालियो द्वारा सम्बन्धित पृथिवीके महासागरोको अजोफ और कास्पियनके कृत्रिम माग द्वारा मिलाकर मध्य-एसियाकी जलराशिको बढाया जा सकता है। परमाणु-शक्ति और परमाणु-बमका आविष्कार कर मनुष्यका मस्तिष्क बैठ नही सकता, वह उस दिनकी आशा रख रहा है, कि मध्य-एसियाके जलाभावको वह दूर करके छोडेगा। सोवियत राष्ट्र ओब नद के पानी के बहुत से भाग को मध्य-एसिया के रेगिस्तान की ओर मोड कर इसे करना चाहत है। प्रसगवश यह कह देना आवश्यक है, कि हमारे यहाँ भी, जहाँ कि वर्षा करनेमें प्रकृति बहुत उदार है, अपने प्राकृतिक जलमार्गोमें अनुकूल परिवतन करनेकी बहुत सम्भावना है। कटक या उडीसासे हमें समुद्र द्वारा बम्बई या सूरत जानेकी अनिवायता नही होगी, यदि महानदी और नर्मदाके ऊपरी भागोको कुछ ही मील लम्बी नहर द्वारा मिला दिया जाय।

§४ वनस्पति-क्षेत्र मे परिवर्त्तन

तृतीय कल्पका अति-उपा युग आया, जब कि जावामें प्रथम मनुष्यका दर्शन होने लगा। उस समय पश्चिमी मध्य-एसियामें समुद्रके पास जहाँ-तहाँ थोडा-सा रेगिस्तान था, अर्थात् प्यासी भूमि, कराकुम और किजिलकुमका अभी शिलान्यास ही भर हो पाया था, बाकी भूमि या तो तृण-वनस्पतिसे आच्छादित मैदान अथवा भारी जगलोमे ढंके पहाड और उनकी तराइयाँ थी। भूकम्प समय-समयपर आए जिनमे ये पवत उचककर और ऊपर उठ गये, बादलका रास्ता और रुका, वर्षाकी और कमी हुई, जिससे वनस्पति-क्षेत्र समुद्रोंके तटमें पहाडोंकी ओर सिकुडने लगा।

मध्यउपायुग (साढ़े तीन करोड वर्ष पूर्व) के बाद महासागरासे मरमानिक सागरका सम्बन्ध टूट गया। उसका जल भाप बनकर उडता गया, समुद्र सूखना और उसका क्षेत्र अधिक

खारा होता गया। इसके अवशेषके रूपमे जिप्सम और लवणकी राशि जमा होती गई, जो आज भी वहाँ मिलती है। प्रकृतिने सूर्य-किरणो द्वारा ही जल सुखाकर अपना काम समाप्त नही कर दिया, बल्कि यह युग भीषण आँधियोका भी था। आज वैसी प्रचण्ड आँधियोके न होनेपर भी वायु देवता अपने पूर्व पौरुषको रेगिस्तानोमें किसी जगह बालूके पहाडोको बना और किसी जगह बिगाडकर दिखाते हैं। उस समय जब कि वनस्पति-हीन[1] होते मैदान मे अभी बालू नही, साधारण मिट्टीकी प्रधानता थी, इन प्रलयकर झझावातोने मिट्टीके अतिसूक्ष्म रेणुओ (त्रसरेणुओ) को आकाशमें बहुत ऊपर उठाकर ले जाके ऊँचे पर्वतोके मस्तकपर जमा करना शुरू किया। इन त्रसरेणुओकी भारी मोटी तह वनस्पतियोके लिए बडी ही उर्वर है, जिससे वायुने मैदानोको वञ्चित कर पहाडोका घर भरा।

§५ हिमयुग[1]

सूय-किरणें और झझावातोका प्रभाव मध्य-एसियाकी भूमिमें बहुत पडा, किन्तु उससे कम प्रभाव चारो हिमयुगोका इस भूमिपर नही पडा। तृतीय कल्पके अति-उपायुगके बाद ये हिमयुग आने शुरू हुए। एक-एक हिमयुग हजारो नही लाखो वर्पो तक रहा। इनके समयमे मनुष्य पृथिवीपर आ चुका था, यद्यपि अभी वह उसका एक दुलभ प्राणी था और पृथिवीके कुछ ही स्थानोमें देखा जाता था। यह हिमयुग आजके परमाणु-बमसे भी अधिक भयानक सावित हुए थे। मानव प्रकृतिमाता पर बहुत विश्वास करके बहुत-कुछ आलसीकी जिन्दगी बिताने लगा था, न उसे तन ढाँकनेकी फिकर थी, न छत ढूंढनेकी। हिमयुग उनसे कहने लगा—या तो हमारे प्रहार-को सहन करने लायक बनो, नही तो पृथिवीसे लुप्त होनेके लिए तैयार हो जाओ। आज भी यदि युरोपका वार्षिक माध्यम तापमान पाँच ही डिग्री सेंटीग्रेड नीचे गिर जाये, तो हिमयुगकी अवस्था पैदा हो जायगी। सारे अतिउषाकालमें तापमान गिरता गया, सर्दी बढती गई, जिसके परिणाम-स्वरूप हिमयुगोका आरम्भ हुआ। चारो हिमयुगोमें युरोपकी भूमिपर इगलैण्डसे उराल पर्वत तक हजारो फुट मोटी बर्फ की तह जम गई थी। लेकिन, उरालसे पूर्व अर्थात् मध्य-एसियामें वैसा नही हुआ। बर्फकी तह मोटी न होनेपर भी जलवायु अत्यन्त भीषण रूपसे शीतल हो गया था। हिम-युगोकी उग्र सर्दीके कारण पशु-वनस्पतिके क्षेत्र क्षीण होते गये। हर दो हिमयुगके बीचके सन्धिकाल (हिमसन्धि) में जलवायुकी अवस्था कुछ नरम जरूर हो जाती और प्राणी-वनस्पति फिर अपनी खोई हुई भूमिको प्राप्त करनेकी कोशिश करते। यह स्मरण रखना चाहिए, कि यह सन्धिकाल भी हजारो वर्षके थे।

मान लो, हम आजसे लाखो वर्ष पूर्वके प्रथम हिमयुगमें जाकर मध्य-एसियाको देख रहे हैं। उस समय इसके पश्चिमोत्तरमे उरालसे परे हजारो फुट मोटी बर्फसे ढँकी रूसकी भूमि है। मध्य-एसियाकी भूमिमें एक अति विशाल समुद्र (सरमातिक) लहरें मार रहा है, जिसमें पूर्व, दक्षिण और पश्चिमके हिम-पर्वतोकी हिमानियोसे निकलकर बडी-बडी नदियाँ गिर रही हैं, जो अपने सागर-सगमोपर डेल्टा और कछारोमें मिट्टीके स्तर जमा करती जा रही हैं। हजारो

---

[1] General Anthropology (Franz Boas and others, New York 1938) p 116, Expl Turk pp 1-4।

वर्ष बाद प्रथम हिमयुग समाप्त हो गया। अब हिमसंधि-काल आ गया। पश्चिमोत्तर-भागमें दुरन्तव्यापी हिममालिका रूससे लुप्त हो गई। पूर्व, दक्षिण और पश्चिमके हिम-पर्वतोंकी दूर तक विस्तृत हिमानियाँ भी संकुचित होने लगी, इसके कारण नदियोंकी धाराएँ क्षीण होती गई। सर-मातिक समुद्रमें जलकी आय कम और व्यय अधिक होने लगा—नदियोंसे जितना जल आता था, उससे कहीं अधिक धूपमें भाप होकर उड़ता जा रहा था। विशाल सरमातिक समुद्र और भी छिन्न-भिन्न होने लगा। सहस्राब्दियाँ बीतती गईं, नदियोंकी धाराएँ और भी कृश हो गई। पानीकी कमी और रेगिस्तानकी वृद्धिके कारण चू, तलस, जरफशाँ और मुर्गाबकी भाँति कितनी ही समुद्रमें पहुँचनेसे पूर्व ही अपनेको मरुभूमिमें खोने लगी। झंझावात नदियोंकी लाई मिट्टीके साथ खेलवाड़ करने लगा। मोटे कण अर्थात् बालू एक जगहसे दूसरी जगह टीलोंके रूपमें बनते बिगड़ते रहे और सूक्ष्म कण (त्रसरेणु) टिड्डी दलकी भाँति उड़ते-सुस्ताते, घासके मैदानों, तराई और पहाड़ोंके जंगलोंको पड़ कर ढाँकते जा रहे थे।

इस प्रकार हिमयुगों और हिमसंधियोंने मध्य-एसियाके भूतलको बड़ी निर्दयतापूर्वक दलित-मर्दित कर दूसरा ही रूप दे दिया। प्रकृतिकी इस निष्ठुर क्रीडाने केवल धरातलके ही आकार-प्रकारमें परिवर्तन नहीं किये, बल्कि वनस्पतियों और प्राणियोंकी अवस्थामें भीषण उथल-पुथल मचाई।

स्रोत ग्रंथ

१ पेर्वोबित्नोये ओबश्चेस्त्वो (प० प० येफिमेंको) लेनिनग्राद १९३८
2 Geology in the Life of Man (Duncan Leith, London 1945)
3 Exploration in Turkistan (R Pumpelly, 1903) vols I, II
4 General Authropology (Fruncz Boas and others, New York 1938)
5 Everyday Life in the Old Stone Age (Marjorie and C H B Quennell, London 1945)

अध्याय २

पुरा-पाषाणयुग[1]

§१ मानव-जातियाँ

चतुर्थयुग अधिउषा (प्लेसृतोसेन) और अतिउषा (होलोसेन) के दो उपयुगोमें विभक्त है। अधिउषायुग हमारी सपियन-मानव-जातिकी प्रधानताका है, जिसमें नवपाषाण युग प्रथम है, जो आजसे ७००० हजार वर्ष पहले शुरू हुआ था—यद्यपि उसका यह अर्थ नही, कि वह पृथिवी पर सभी जगह एक ही समय आरम्भ हुआ। तस्मानियाके मूल निवासी, जो युरोपीय लोभी नर-राक्षसोंके कारण अब ससारसे लुप्त हो चुके है, उन्नीसवी सदी तक अभी पुरापाषाण-युगमे विचरण कर रहे थे। चतुर्थ युगके आदिम भाग पुरापाषाण-युगके आदिम या निम्न पुरापाषाण-युगमें और भी कितनी ही मानव-जातियाँ अस्तित्वमें आई थी, जिनमेंसे नियण्थल (मुस्तेर) मानवका ही अभी तक मध्य-एसियामें पता लगा है। हो सकता है, इससे पहलेकी हैडलबर्ग और पेकिंग मानव जैसी जातियोके भी अवशेष आगे मिलें। मानव-इतिहासको क्रमबद्ध करनेके लिए यह आवश्यक है, कि उज्बेकिस्तानमें मिले मुस्तर मानवकी कडीको पीछेसे मिलानेके लिए दूसरे मानवोका भी कुछ वर्णन कर दिया जाय।

सभी मानव-जातियाँ उसी समय विद्यमान थी, जब कि पृथिवीपर चार महान् हिमयुग आये थे। ये हिमयुग निम्न प्रकार थे[2]—

		मानव-जाति
पश्च-हिमयुग	१३००० वर्ष	ओरिन्यक
चतुर्थ हिमयुग (उर्म)	५०००० ,,	मुस्तेर
तृतीय हिमसधि	१ ५० लाख	अश्योल
तृतीय (रिस्)	२ ,,	प्राग्-अश्योल
द्वितीय हिमसधि	३ ,,	शौल (हैडलबर्ग)
द्वितीय ० (मिदेल)	४ ,,	पेकिंग
प्रथम हिमसधि	५ ,,	
प्रथम ० (गुज)	६ ,,	

ऊपरी-पुरापाषाण-युग चारो हिमयुगोंके समाप्त होनेके साथ आजसे प्राय १५ हजार वर्ष पूर्व आरम्भ होता है। कुछ विद्वान् पुरापाषाण-युगमें एक मध्य-पुरापाषाण-युग को भी मानते

---

[1] Our Early Ancesters (M C Burkitt 1929) pp 3-6, Prehistoric India (P Mitra, Calcutta 1928)

[2] पेर्वोवित्नोये ओब्श्चेस्त्वो (प० प० येफिमेंको) पृष्ठ ३०, Everyday Life in the Old Stone Age (Marjorie and C H B Quennell (1945) p 11, Progress and Archaeology (V Gordon Childe) p 9

है, जो ३५ से ५० हजार वर्ष पूर्व मौजूद था और इसी समय चतुर्थ हिमयुगके भीतरसे मुस्तेर (नियण्डथल) मानव जीवन-संघर्ष कर रहा था। ऊपरी पुरापाषाण-युगके ६ हजार वर्षोंमें निम्न प्राचीन जातियोंका पता लगा है—

वर्ष पूर्व	जाति	उपजाति
१५०००	ओरिन्यक	ग्रिमाल्दी, क्रोम्योन्
१४०००	सोलूत्र	
१३०००	मद्लेन	
११०००	अज़िल	

यहाँ जो काल दिया गया है, उसे एकदम निश्चित नही समझना चाहिए। उदाहरणार्थ, जहाँ मद्लेन मानवको कोई-कोई विद्वान् १३००० हजार वर्ष पहले मानते है, वहाँ दूसरे उसे २५-२६ हजार वर्ष पहिले स्वीकार करते है। इनको स्पष्ट करनेके लिए यहाँ दिये हुए दूसरे, तीसरे और चौथे फलको को देखें। पाँचवे फलकसे ताम्र और लौह-युगकी सभ्यता भारतवर्षमें किस रूपमें रही, इसका पता लगेगा।

फलक २—नवजीवक-कल्पका विवरण

फलक ३—चतुर्थ युग[1]

युग		हिमयुग		पुरातत्वीय युग	मानव-जाति	समाज
चतुर्थ युग	बुद्ध-उषा			लौह		
				पित्तल		
				ताम्र		
	अधि-उषा		मध्य पा०	नवपाषाण		
				अजिल		
		वम	उपरि पुरा पा०	मद्लेन	सपियन	मातृसत्ताक
					क्रोमञो	
				सोलूत्र	ग्रिमाल्दी	
				ओरिन्अक		
		रिस		मुस्तेर	नेयण्डर्थल	सगोत्र विवाह
		मिन्देल	निम्न पुरा पा०	अश्योल		
		प्राग्हिम		शेल		
					हैडलवर्ग	आदिम साम्यवाद

—प० प० एफिमेन्को ('पेर्वोबित्नोये ओव्श्चेस्त्वो') पृष्ठ ६६

फलक ४—मानव-जातियाँ[2]

	मानव-जातिया	वर्ष	हिमयुग	उद्योग	आविष्कार (मिश्र)
		१५०० ई० पू०			लौह
		२००० ,,			पित्तल
		३००० ई० पू०			इतिहासारम्भ
		४००० ,,			लोह उपयोग
		५५०० ,,			ताम्र
		६५०० ,,			
पुरापाषाण	क्रोमञो	८५०० ,,			
	ग्रिमाल्दी	१३५०० ,,			
	मुस्तेर	७५०० ,,	रिस उतार प्राचीन मुस्तेर, आग, धनुष		
	हैडलवर्ग		मिन्देल, अश्येल		
	पेकिङ्ग		गुज संधि, शेल		
	जावा	५०००० ,,			
		१० लाख	अधिउषा		

[1] पे० ओब्० पृ० ११२।

[2] वही पृ० ६६ General Anthropology (Frunz Boas and others 1938) pp 174-75

फलक ५--भारत में इद-उषा युग

काल	वर्ष
इस्लाम	१००० ई०
गुप्त	४०० ,,
शक	०
मौर्य	३०० ई० पू०
बुद्ध	५०० ,,
उपनिषद्	७०० ,,
ऋग्वेद	१२०० ,,
सिंधु सभ्यता	३००० ,,

§२ निम्न-पुरापाषाण युग[1]

१ जावा मानव[2]

अभी तक जितने मानव-अवशेषोंका पता लगा है, उनमें जावा-मानव सबसे पुराना है। इसे त्रिनील मानव या पिथक-अश्राप भी कहते हैं। १८९१ ई० में डच विद्वान् प्रोफेसर ई० दुब्वाको मध्य-जावाकी सोलो नदीके किनारे त्रिनील स्थानमें इस मानव-खोपडीका ऊपरी भाग, दाढके दो

२ पुरापाषाणयुग का मानव

दाँतो और जाँघकी एक हड्डीके साथ प्राप्त हुआ। यह फोसील जिस स्तरमें मिली थी, उसमें वह अतिउषाकालकी मालूम होती थी। इसी स्तरमें सूअर, जलीय अश्व, हरिन तथा विलुप्त स्टेगोडन

[1] काल एक लाख वर्षसे पूर्व Gen Anth p 227 पेर्वो वितूनोये ओवृश्चेस्त्वो (प० प० येफिमेंको १९३८, पृष्ठ २७)

[2] Pithecanthropus, इसके समकालीन मानव नवदा उपत्यका (होशंगाबाद और जब्बलपुर के जिले) में मिले हैं—Prehistoric India (Stuart Pigget, 1950) p 29

गज जैसे प्राणियोकी फोसीलायित हड्डियाँ मिली थी, जिससे मालूम होता है, कि जावा मानवको भोजनके लिए इन जानवरोको मारना पडता था। जावा मानवका कपाल-क्षेत्र ६४० घन सेन्ती-मीतर है, जो सभी वन-मानुषोसे अधिक है, क्योकि उनका कपाल-क्षेत्र ६५५ घन सेन्तीमीतरसे अधिक नही होता। लेकिन यह आधुनिक मानवके कपालक-क्षेत्र १६०० घन सेन्तीमीतरका दो-तिहाई है, अथवा उतना ही, जितना कि आधुनिक मानवके अत्यल्प विकसित वेद्दा (लका) लोगोका कपाल-क्षेत्र होता है। जावा मानव बाहरसे दीर्घ कपाल (७१ २) किन्तु खोपडीके भीतर आयत-कपाल (८०) था। इलियट स्मिथके मतसे वह निसन्देह मानव-वशका था और कुछ थोडी-सी वाणी (भाषा) की शक्ति भी रखता था, किन्तु वह खाँसने जैसी ध्वनिसे अधिक विकसित नही थी। खडा होके चलनेमें वह बहुत-कुछ मनुष्य जैसा था, किन्तु दात वनमानुषसे अधिक समानता रखते थे। ऊँचाईमें वह ५ फुट ६ या ७ इच था अर्थात् बहुत-कुछ आजकलके साधारण मनुष्य जितना लम्बा था। भय उपस्थित होनेपर वह आसानीसे वृक्षोपर चढ जाता था

३ जावा मानव

और शायद रहनेके लिए वही घास-फूसकी नीड जैसी झोपडी भी बना लेता था। जावा-मानव[1] उमी समय जावाके सदाहरित जगलोमें निवास करता था, जब कि युरोप प्रथम-हिमयुगसे गुजर रहा था। उस समय सुमात्रा और मलायासे मिला हुआ जावा, एसियाका एक अभिन्न अग था। जावा मानवके कालके विषयमें मतभेद होना स्वाभाविक है। कोई-कोई उसे हैडलवर्गीय मानवका समकालीन मानते हैं और कोई उसे पैकिंग मानवसे पीछेका।[2]

---

[1] विशेष के लिए पठनीय General Authropology, History of Anthropology (A C Haddon) 56-57 Man the verdict of science (G N Ridley 1946) p 41, Progress and Archaeology [2] History of Anthropology (A C Haddon) p 53

२ पेकिंग-मानव

प्रोफेसर ओसबोन तथा दूसरे कितने ही नृतत्व-विशारदोका मत है, कि मानव-जातिका उद्गम एसिया हीमें कही होना चाहिए। जावा मानव एसियामें मिला। पेकिंग मानव भी एसियामें ही प्राप्त हुआ। चीन और मगोलियामे पुरा-पाषाण युगके बहुतसे पुराने पाषाण हथियार मिले हैं, किन्तु उनके साथ मानव-अवशेष नही मिले, अत मानवकी आकृति आदिके वारेमें कुछ कहना मुश्किल है। वर्तमान शताब्दीके आरम्भमें कुछ फोसील हुए मानव-दन्त भी मिले थे। लेकिन सबमे महत्वपूर्ण प्राप्ति १९२६ में हुई जब कि चीनकी राजधानी पेकिंगसे ३७ मील दक्षिण-पश्चिम चूकूतीयानकी एक गुहामें अधिउपा (प्लैसृतोसेन) के दो मानव-दन्त प्राप्त हुए। १९२७ में एक और दाँत तथा निचली दाढ़ का फोसील मिला, जो कि किसी तरुणका विना घिसा हुआ दाँत था। यह जावा-मानव से अधिक विकसित रहा होगा। २ दिसम्बर १९२९ को सभी सन्देहोको दूर करनेवाली प्राप्ति एक तरुण चीनी विद्वान्को मिली। यह खोपडी प्राय पूरी है और इसका कपाल-क्षेत्र जावा मानवसे कुछ अधिक है। इसका काल प्राय ५ लाख वर्ष पूव वतलाया जाता है। वडा होनेपर भी पेकिंग मानवका कपाल जावा-मानवसे बहुत समानता रखता है। खोपडी अधिक चिपटी, सँकरी और पीछेकी ओर नीचा होती, ललाट तथा आँखोके ऊपर उभडी हुई हड्डी दोनोमें एक-सी है। किन्तु पेकिंग मानवकी अपेक्षा जावा मानवका ललाट अधिक ऊँचा है, इसलिए कितने ही विद्वान् उसे नेयण्डथल (मुस्तेर) के पास खीच लाना चाहते हैं। इसका कपाल-क्षेत्र ९०० घन सेंतीमीतर तक अथात् जावा-मानवसे ४० ही सेंतीमीतर कम है। जून १९३० ई० में उसी गुहासे एक और खोपडी मिली, जिसका कपालक-क्षेत्र प्रथमसे अधिक तथा आकृति मुस्तेर-मानवसे वहुत समानता रखती है। नवम्बर १९३६ में उसी गुफामेंसे तीन और खोपडियाँ मिली, जिनमेंसे दो १२०० और ११०० घन सेंतीमीतरवाली दो पुरुषोकी थी और तीसरी १०५० घन सेंतीमीतरकी
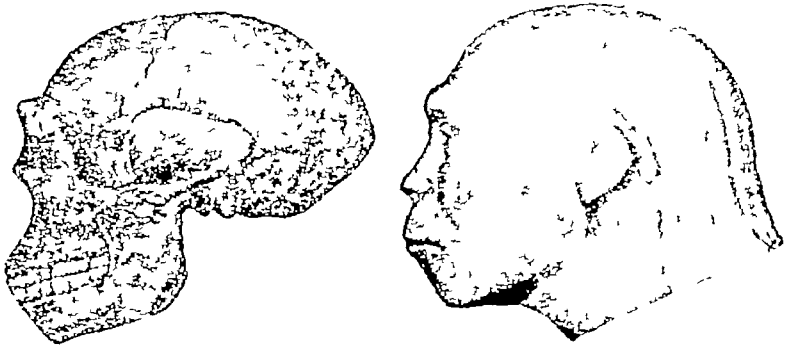
८ पेकिङ् मानव (खोपडी और मानव)

एक स्त्रीकी थी। स्टाइहाइमको मिली नियडथल स्त्रीकी खोपडी ११०० घन-सतीमीतरकी थी। इन पिछली खोपडियोके साथ गालकी हड्डियाँ भी मिली, जिनसे पता लगता है कि पेकिंग-मानव गाल और नाककी हड्डियामें आधुनिक मगोलायित जातियोसे समानता रखता था, यह

समानता उसके दाँतोमें भी थी। इस प्रकार यह कहा जा सकता है, कि यह मगोलीय जातियोका पूर्वज था। प्रोफेसर ब्लैकका कहना है—पेकिङ्ग-मानवके दाँतोकी विशेपता वतलाती है, कि वह उस मानवित (होमोनिद) से बहुत अन्तर नही रखता था, जिससे कि पीछे नियडर्थल (मुस्तेर) और सपियन मानव-जातियोका विकास हुआ।"

पेकिंग मानव अग्निका उपयोग करता था, यद्यपि यह नही कहा जा सकता कि वह अग्नि बना भी सकता था। इसके हथियार लकडी पत्थर और हरिनकी सीगके होते थे।

३ हैडलवर्ग मानव[1]

आजसे डेढ़ लाख वर्ष पहले प्रथम या द्वितीय हिमसधिमें एक मानव रहता था, जिसे हैडलवर्ग मानव कहा जाता है। १९०७ ई० मे जर्मनीके हैडलवर्ग नगरके समीप मावरमें इस मानवका सबसे पहले जबडा मिला था। स्थानके कारण इस मानव-जातिका नाम हैडलवर्ग पड गया। इससे पहले जावा और पेकिङ्ग मानव यद्यपि मौजूद थे, किन्तु उनपर अब भी नर या वन-मानुषके बीचमें होनेका सन्देह हो सकता था। हैडलवर्ग मानव पहला असदिग्ध मानव है। इसका वह जवडा आजके धरातलसे ७९ फुट नीचे एक प्राचीन नदीकी बालुकामें चिपका हुआ मिला था। उसी स्तरमें अधि-उपा युगके स्तनधारियोकी हड्डियाँ भी मिली थी, जिनमे सरलदन्त गज, सिह और लोमधारी गेंडा भी थे। हैडलवर्ग मानवके ये ही खाद्य थे और इन्हीसे उसका सघर्ष था। उस समय हिमसधिके कारण जलवायु अधिक ठडा नही था, जिससे उसे गुहामें रहनेकी अवश्यकता नही थी। इस मानवका जबडा बहुत बडा और भारी था, ठुड्डीका एक तरह अभाव था। वह आजकलके कितने ही आधुनिक मानवोसे अधिक बडा नही था। कितने ही शरीर-शास्त्रियो का कहना है, कि जबडा यद्यपि वनमानुष जैसा भारी है, किन्तु कुछ दूसरे शरीर-लक्षण आगे आनेवाली मुस्तेर जाति जैसे है। इसीलिए कितने ही विद्वान् इसे मुस्तेर (नियडर्थल) का पूवज मानते है। शायद इसके हथियार शेल-कालीन हथियारो जैसे थे। यह भी अनुमान किया जाता है, कि अपने सास्कृतिक विकासमें हैडलवर्ग-मानव पेकिंग-मानव जैसा ही था।

४ मुस्तेर (नियण्डर्थल)[2]

वर्तमान सपियन मानव-वशसे भिन्न जिन पुरातन मानव-वशोके चिह्न प्राप्त हुए है, उनमें सबसे अधिक इसी मानवके है। सर्वप्रथम १८४५ ई० में जिब्राल्टरमें इसकी एक खोपडी मिली थी, किन्तु उस समय विद्वानोका ध्यान उसकी ओर नहीं गया। उससे आठ वर्ष बाद डुसेल्-डोफ (जर्मनी) के पास नियण्डर्थलकी घाटीकी एक गुहामें खुदाई करते समय मजूरोको एक खडित ककाल मिला, जिसमे ऊपरी कपाल, बाँह और पैर एव कधे और कूल्हेकी हड्डियाँ थी। खोपडी अधिक चिपटी तथा बाँहोकी हड्डी अधिक उभडी हुई थी, जो कि आगे चलकर इस जातिका विशेष शरीर-लक्षण मानी गई, इसी कारण इसका नाम नियण्डर्थल-मानव पडा। लेकिन, नियण्डर्थलके

---

[1] Man the Verdict of Science (G N Ridley) p 41

[2] काल ५०००० वर्ष (V Gordon Childe Progress and Archcology, p 79 ५००००-३०००० वर्ष (Gen Anth)

अतिरिक्त इसका दूसरा अधिक प्रसिद्ध नाम मुस्तेर है। १९०८ ई० में फ्रांसके दोरदोएँ इलाकेके मुस्तेर स्थानमें एक नियण्डर्थल कंकाल प्राप्त हुआ था, जिसके नामपर यह मानव और उसकी संस्कृति मुस्तेरके नामसे प्रसिद्ध हुई। इस मानवकी हड्डियाँ बेलूजियम, इंग्लिशचैनलके द्वीप-समूह (१८४८ ई०), युगोस्लाविया (१८९९ ई०), क्रिमिया (१९२३ ई०), फिलस्तीन (१९२५ ई०), इताली (१९२९ ई०), क्रिमिया, दोनेत्स उपत्यका,[1] उज्बेकिस्तान (१९३८ ई०) आदि बहुत जगहो पर मिली हैं। यह मानव तृतीय हिमयुग (रिस्) के बादकी तृतीय हिमसंधिमें मौजूद था, जिसका काल एक लाखमे २५ हजार वर्ष पूर्व तक आँका गया है। मुस्तेरीय संस्कृतिके हथियार मंगोलिया और चीन (शेनसी) तक मिले है, किन्तु शरीर-अवशेष न मिलनेसे यह कहना मुश्किल है, कि वह मुस्तेर मानवके हैं।

मुस्तेरकी गुहामें प्राप्त हड्डी १५ वर्षके एक बालककी थी, जो ५ फुटसे कम लम्बी थी। आमतौरसे यह जाति छोटे कदके लोगोकी थी, जिनकी लम्बाई ५ फुट २ इंचसे ५ फुट ४ इंच तक पाई जाती है। जिब्रालूतरकी स्त्री-खोपडीका कपालक-क्षेत्र १२८० घन-सेंतीमीतर था और शापेल-ओ-सेंतकी खोपडी १६०० घन-सेन्तीमीतर। मुस्तेर मानव दीर्घ-कपाल (७० और ७६ के

५ मुस्तेर (नियण्डथल मानव)

बीच) था। बाँहोकी हड्डीका उभडा होना इसकी अपनी विशेषता थी, यह बतला आये हैं। इसका चेहरा बहुत लबोतरा और नाक अधिक चौडी होती थी। चौडी होने का यह अर्थ नहीं, कि वह चिपटी होती थी। इसकी ठुड्डी नहीके बराबर थी। नियण्डथल-मानवके पैर आजकलके बच्चों

[1] पेर्वो०ओब्० पृष्ठ २९०, २९६, और २२०, ३०० में भी।

जैसे थे, जिससे जान पडता है, कि उसकी घुट्टीके जोड ऐसे थे, कि वह पैरोपर अधिक चक्कर काट सकता था। कधेपर सिर कुछ आगेको निकला रहता था।[1]

मुस्तेर-मानव तेशिकताश (मध्य-एसिया) में भी मिला है, इसे हम आगे बतलायेंगे। इसका मूलस्थान एसिया माना जाता है।[2]

चतुर्थ हिमयुगके उतार आरम्भ होनेके बाद कुछ सहस्राब्दियो (२५ हजार वष पूव) तक मुस्तेर मौजूद रहा। आजसे २५-३० हजार वर्ष पूर्व सपियन (उत्तम) मानवकी पुरातन शाखा क्रोमेञों आ मौजूद हुई। कितने ही नृतत्त्व-विशारद् मानते है, कि विशेष परिस्थितियोके कारण मुस्तेर मानव का ही सपियन-मानवके रूपमें जाति-परिवर्त्तन हुआ।[1] दूसरोका कहना है, कि सपियन विजेताओने मुस्तेरको पराजित कर उन्हें अपनेमें हजम कर लिया। अन्तिम उपरि-पुरापाषाण युगके क्रोमेञो, ग्रिमाल्दी और मद्लेन मानव सपियन जातिके थे। आजसे २५-३० हजार वष पहले मुस्तेर मानव जाति लुप्त हो गई। सबसे पुरातन अवशेष मुस्तेर जातिका ही मध्य-एसियामें मिला है, इसलिए उसके बारेमें और विस्तारके साथ हम आगे लिखेंगे। यहाँ मानव-विकासकी कडीको स्पष्ट करनेके लिए सपियन मानवकी कुछ पुरानी जातियोका वर्णन कर देना उचित है।

---

[1] आग का उपयोग यह जानता था (General Anthropology p 239 विशेष के लिए L, Humanite Prehistorique (G) acques de Morgan, Paris (924)

[2] 10 Hist of Anth p 58

[3] Gen Anth p 78

स्रोत ग्रन्थ

1 पेर्वो० ओव्०
2 Our Early Ancesters (M H Burkitt, Cambridge, 1929)
3 Prehistoric India (Paggot),
4 Prehistoric India, (P Mitra, Cal 1924)
5 General Anthropology
6 History of Anthropology (A C Haddon, London, 1945)
7 7 Man the Verdict of Science (G N Ridley, London 1946)
8 Progress and Archaeology (V G Childe, London 1944)
9 Stone Age in India (P T S Ayyangar)

अध्याय ३

उपरि-पुरापाषाण और मध्यपाषाण-युग

§१ ओरन्यक (१५००० वर्ष पूर्व)

तूलूज् (फ्रास) से ४० मील दक्षिण-पश्चिम ओरन्यक नामक स्थान है। यही पर इस मानव के शरीर-अवशेष मिले थे, जिसके कारण इस जाति तथा इसकी शाखाओ का नाम ओरन्यक पडा। इसी जाति के अन्तगत क्रोमेञो, सोलूत्रे, मद्लेन और अज़िल जातिय। हं, जो आज से १५ हजार वष पूर्व तक मौजूद थी। मुस्तेर मानव के साथ पुरापाषाण युग का निम्न स्तर खतम हो जाता है और ओरन्यक से हम उपरिपुरापाषाण युग में पहुँचते है।

१. क्रोमेञो[1]

फ्रांस की वेजेर नदी की उपत्यका में, जहाँ पर कि पूर्वोक्त मुस्तेर-गुहा है, एक दूसरी लटकी हुई चट्टान है, जिसे क्रोमेञो कहते हैं। १८६८ ई० में क्रोमेञो की शैल-गुहा में पाँच मानव-ककाल मिले, जिनका नाम प्राप्ति-स्थान के कारण क्रोमेञो पड गया। उपरि-पुरापाषाण युग में युरोप का सब से अधिक प्रसिद्ध मानव यही था। मुस्तेर मानव जहाँ खवकाय था, वहाँ क्रोमेञो कितनी ही बार ६ फुट का कद्दावर मनुष्य था। यह दीघ कपाल था और इसका कपाल-क्षेत्र १५९० से १७१५ घन सेन्तीमीतर तक होता था। चेहरा शरीर की अपेक्षा छोटा और चौडा था। क्रोमेञो स्त्रियाँ पुरुषो की अपेक्षा अधिक नाटी होती थी। इस मानव का शरीर-लक्षण कितनी ही बातो मे आधुनिक एस्किमो—विशेष कर ग्रीनलैण्डवालो—से इतनी समानता रखता है, कि कितने ही विद्वान् मानते हैं, कि मध्य-एसिया से नवपाषाण-युग के मानव के आने पर क्रोमेञो उत्तर की ओर हटते दूर चले गये, जो ही आजकल एस्किमो है। इस बात मे तो सभी सहमत हैं, कि यह मानव-वंश मुस्तेर की भाँति उच्छिन्न नही हो गया, बल्कि उसकी सतान या रक्त आधुनिक मानव में मौजूद हं।[2]

२ ग्रिमाल्दी[3]

भूमध्यसागर के तट पर फ्रास के माने प्रदेश में ग्रिमाल्दी नाम की नौ गुफाएँ हैं, जिनमें अधिकाश ध्वस्त हो चुकी हैं। इन्ही में से एक शिशु-गुहा में १९०१ में माँ और बेटे के दो सम्पूण

---

[1] पेर्रो० ओव्० पृ० ४३, Gen Anth pp 78-82

[2] Gen Anth pp 76, 78,

[3] Everyday Life in the old Stone Age p 23

कंकाल मिले। स्त्री प्रौढ़ा रही होगी और पुत्र १४ वर्ष के करीब का। स्त्री का कद ५ फुट ३ इंच था और लड़के का ५ फुट से थोड़ा ही अधिक। दोनो कंकाल ओरन्यक काल के हैं, यद्यपि इनका सम्बन्ध उनसे नही है। नृतत्त्व-विशारद् इसे निग्रोयित जाति का बतलाते हैं। इसकी खोपड़ी दीर्घ कपाल, ठुड्डी थोड़ी सी विकसित, दांत बहुत बड़े, नाक की हड्डियाँ चिपटी थी। बड़े नथुने विशेष तौर से निग्रो जैसे थे। इसके निग्रो-सम्बन्ध को अपेक्षाकृत लम्बी टाँगें तथा बाहु के ऊपरी भाग भी बतलाते हैं। ग्रिमाल्दी कंकाल अफ्रीका के श्मेस लोगो से अधिक समानता रखते हैं। यद्यपि यह प्रश्न जटिल है, कि निग्रोयित आकार के ये लोग युरोप मे कैसे पहुँचे। कुछ विद्वानो का कहना है, कि ग्रिमाल्दी-मानव क्रोमेञो मानव का पूर्वज था। प्रोफेसर इलियट-स्मिथ का मत है, कि ग्रिमाल्दी जाति का शरीर-लक्षण, निग्रो की अपेक्षा आस्ट्रेलायित मानव से ज्यादा मिलता है।

६ क्रोमञों मानव

ग्रिमाल्दी मानव यद्यपि ओरन्यक् कालमें था, तो भी उस जातिमें इसे सम्मिलित करनेके लिए अधिकांश विद्वान् तैयार नही हैं।

ओरन्यक् मानव सांस्कृतिक विकासमें मुस्तेर मानवसे आगे बढ़ा था। उसके चकमक-पत्थरके हथियार अधिक सुघरे तथा कार्यकारी थे। उसके हथियारोंके भेद भी अधिक थे। यद्यपि हथियार पत्थरके अतिरिक्त कुछ हड्डीके भी थे, लेकिन इसमें सन्देह नही उसके हथियारोमें लकड़ीके भी बहुतसे रहे होंगे, जो १०-१५ हजार वर्षों तक सुरक्षित नही रह सकते थे। अपने पत्थरके हथियारोसे वह बारहसिंगेकी सींगोको काटकर बाण और भालेके फल बनाता था। हड्डीके हथियारोका बनाना शायद इसी मानवने पहले-पहल आरम्भ किया। हड्डीकी सूइयोसे वह चमड़ेकी सिलाई भी करने लगा था, यद्यपि इस सुईसे मोची की सुईकी तरह सूत खींचा जाता था। ओरन्यक् मानव धनुष और बाणका इस्तेमाल जानता था। इसने हड्डियोपर अपनी कलाभिरुचिका प्रदर्शन

किया है, साथ ही गुफाओमें उसके हाथके चित्र भी मिलते हैं। स्पेनके अलूतमीरा गुफाकी छत और दीवारोपर उसके हाथके बनाये हुए कितने ही बैल, बिसोन, हरिन और घोडेके अत्यन्त सजीव चित्र हैं। अलूतमीराकी गुफा बहुत अँधेरी—२८० मीतर लम्बी है, (एक मीतर ३ फुट पौने ४ इचका होता है)। गुफाके भीतर रोशनी बिल्कुल नही जा सकती और चित्र भीतरकी दीवारमे सब जगह बने हुए हैं। आज भी प्रकाशके विना उन्हे देखा नही जा सकता, इसलिए चित्रकारोने अवश्य दिये की सहायता ली होगी। ओरनयक मानव ४-५ इचकी मिट्टीकी मूर्तियाँ भी बना लेता था, जो काफी अच्छी थी।

३ सोलूत्रे[1] (१४००० वर्ष पूर्व)

फ्रासमें मासोके पास सोलूत्रे नामक स्थान है, जहाँ ऊपरी पुरापाषाण युगके मानवके शरीरावशेष मिले हैं, जिसके कारण उसका नाम सोलूत्रे पडा। इस मानवके अवशेष इगलैण्ड, उत्तरी स्पेन और मध्य युरोप तक मिले हैं। वह घोडोका शिकारी था और हिमयुगके समाप्त होनेके बाद युरोपमें जो घासके मैदान मौजूद हुए थे, उनमें घूमा करता था। चकमक-पत्थरके बने हुए सुन्दर फल वह अपने भालो और बाणोंमें लगाता था, जो शिकारके लिए ही भयकर हथियार नहीं थे, बल्कि उनके बनानेमें कला और सुरुचिका भी भारी परिचय दिया गया था। सोलूत्रे मानवकी दस्तकारीके रूपमें चकमक पत्थरकी छिलाई और सफाई अपने जिस उच्चतम विकासपर पहुँची थी, उसका मुकाबिला नवपाषाण युगके पहलेवालोने नही कर पाया। इसने हड्डीकी सच्ची सूई बनाई, इससे पहले मोचियोकी तरह ही सिलाई होती थी। इस मानवकी सूईके लिए सूतका काम अँतडियोके रेशे या नसें करती रही होगी। इस समय मानवने अपने चमडेके परिधान और जूता आदिके बनानेमें बहुत तरक्की की होगी, इसमें सन्देह नही। इस मानवके रहनेके समय युरोपका जलवायु वैसा गरम नही था, जैसा ओरन्यक् मानवके समय। वह कुछ अधिक सर्द था। इस समय युरोपमें मम्मथ गज अब भी मौजूद थे।

४ मद्लेन[2] (१३००० वर्ष पूर्व)

सोलूत्रे मानवके दो सहस्राब्दियो बाद मद्लेन मानवका पता लगता है। फ्रासकी वेजेर नदीकी उपत्यकामें मद्लेन कैसल (गढ़) के करीब ही इस मानवका अवशेष मिला था। अपने पत्थरके हथियारोमें यह सोलूत्रे मानवका मुकाबिला नही कर सकता था। हड्डी और हाथी-दाँतके हथियारोको यह ज्यादा पसन्द करता था और चकमकको बहुत कठोर हथियारोके[3] तौर पर ही इस्तेमाल करता था। औरन्यक-वशका इसे नालायक उत्तराधिकारी कह सकते हैं। यह फ्रास ही नही स्पेन, जर्मनी, बेल्जियम और इगलैण्डमें भी रहता था। इसके समय शायद हिमयुग की स्मृति भी लुप्त हो चुकी थी। मद्लेन मानव अपने भालो और बाणोके फल हाथी-दाँत तथा हरिनकी

---

[1] पेर्वो० ओव्० पृ० ३५०-६३।

[2] Gen Anth p 242

[3] पेर्वो० ओव्० पृ० ४६६-८३, Gen Anth pp, 77, 143,

सीगोंका बनाता था। इन फलोंमें कुछ काँटेदार भी होते थे, जिनसे आगे मछली मारनेकी बर्छीका विकास हुआ। अपने हड्डीके हथियारोंपर वह चित्रकारी भी करना जानता था। मद्लेन मानव के चित्रो मे सील और सामोन मछलीकी आकृतियाँ काफी मिलती है। एस्किमोसे इसके शरीर-लक्षणो में भारी समानता है। एस्किमो लोग भी हड्डी और लकडी पर कलाकार्य करनेमे बहुत दक्ष होते है। हो सकता है, मदलेन मानव लकडीके बोटोको चमडेसे बाँधकर एक तरहकी नाव बनाता था। वह धनुहीके सहारे बर्मा द्वारा लकडी और हड्डीमे गोल छेद कर सकता था। वह जाडेके दिनोमे गुफाओ या चट्टानोकी छायाके नीचे शरण लेता और गर्मियोमे घास या चमडेकी झोपडी में। आधुनिक एस्किमो लोगोसे आकृति और हस्त-शिल्पमे ही नही वह भारी समानता रखता था, बल्कि दीपकसे प्रकाश और खाना पकानेका भी शायद काम लेता था। चित्रकलाके विकासमे, प्रागैतिहासिक मानवोमें इसे सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। इसके चित्रोमे मम्मथ गजका सजीव चित्रण यदि कही देखा जाता है, तो कही बिसोन और सिहका आकार, कही लाल और दूसरे हरिणोका शिकार अकित मिलता है। वह लाल, भूरे, काले और पीले रगोको इतनी सुन्दरताके साथ इस्तेमाल करता था, कि चित्र बहुत सजीव और भावपूर्ण हो जाता था। इसके चित्रोमे कितने ही पूर्ण आकार के है। वह ब्रुशका अवश्य इस्तेमाल करता था। रगोको शायद हरिनकी सीगोकी बनी नलियो मे रखता था।[1]

§२ मध्यपाषाण

अज़िल, अस्योल[2] (११००० वर्ष पूर्व)

मद्लेनसे दो सहस्राब्दी बाद इस मानवका पता लगता है, जो कि पुराण मानवजातियोका अन्तिम प्रतिनिधि था, और अपनी विशेषताओके कारण इसे पुराणपाषाण और नवपाषाणके बीचवाले मध्यपाषाण युगका मानव कहते है। दक्षिणी फ्रासमे पूरके समीप मास्-अज़िलकी गुफामे इसके हाथकी चीजे मिली थी। इंगलैण्ड और स्काटलैण्डमें भी इसका पता लगता है। अज़िल मानवकी एक विशेषता यह थी, कि वह मुर्देकी बहुत सी खोपडियोको अलग करके अण्डेकी तरह एक जगह गाडा करता था। बवेरियामे नोर्दलिंगेन के पास ओफनेत गुहामें एक ही जगह १७ खोपडियाँ गाडी मिली थी, जिनके साथ गेरूके टुकडे भी थे, जिससे मालूम होता है, कि वह गेरूसे रंगकर शरीरका श्रृङ्गार किया करता था। उन खोपडियोंमे एक छोटे बच्चेकी भी थी, जिसके पास बहुतसे घोंघे आदि रखे हुए थे, जो मरनेपर भी लडकेको खेलनेके लिए थे। जान पडता है, शरीरके बाकी भागको ये लोग जला दिया करते थे। पीछे जब शरीरका जलाना आम हो गया, तो भस्मको मिट्टीके बर्तनमे रखकर गाड दिया जाता था, लेकिन यह नव-पाषाण युगकी बात है। हिमयुगके बीते बहुत दिन हो गये थे, युरोपका जलवायु इस वक्त गरम था। मदलेनके समय घासवाले मैदानो का स्थान घने जगलोने ले लिया था। अज़िल मानव अच्छे मछुए थे, साथ ही शिकार भी उनकी जीविकाका बडा साधन था। पालतू

[1] दक्षिण-भारत में कुर्नूल के पास एक गुहा में इस जैसे हथियार १८८१ ई० में मिले थे, Prehistoric India (Paggot, page 35)

[2] (पेर्वो० ओव् पु० ब्रि० १६०, Gen Anth p 15)

किया है, साथ ही गुफाओमे उसके हाथके चित्र भी मिलते है। स्पेनके अलूतमीरा गुफाकी छत और दीवारोपर उसके हाथके बनाये हुए कितने ही बैल, बिसोन, हरिन और घोड़ेके अत्यन्त सजीव चित्र हैं। अलूतमीराकी गुफा बहुत अँधेरी--२८० मीतर लम्बी है, (एक मीतर ३ फुट पौने ४ इचका होता है)। गुफाके भीतर रोशनी बिल्कुल नही जा सकती और चित्र भीतरकी दीवारमें सब जगह बने हुए है। आज भी प्रकाशके बिना उन्हें देखा नही जा सकता, इसलिए चित्रकारोने अवश्य दिये की सहायता ली होगी। ओरनयक् मानव ४-५ इचकी मिट्टीकी मूर्तियाँ भी बना लेता था, जो काफी अच्छी थी।

३ सोलूत्रे[1] (१४००० वर्ष पूर्व)

फ्रासमे मासोंके पास सोलूत्रे नामक स्थान है, जहा ऊपरी पुरापाषाण युगके मानवके शरीरावशेष मिले है, जिसके कारण उसका नाम सोलूत्रे पडा। इस मानवके अवशेष इगलैण्ड, उत्तरी स्पेन और मध्य युरोप तक मिले है। वह घोडोका शिकारी था और हिमयुगके समाप्त होनेके बाद युरोपमें जो घासके मैदान मौजूद हुए थे, उनमें घूमा करता था। चकमक-पत्थरके बने हुए सुन्दर फल वह अपने भालो और बाणोमें लगाता था, जो शिकारके लिए ही भयकर हथियार नही थे, बल्कि उनके बनानेमें कला और सुरुचिका भी भारी परिचय दिया गया था। सोलूत्रे मानवकी दस्तकारीके रूपमे चकमक पत्थरकी छिलाई और सफाई अपने जिस उच्चतम विकासपर पहुँची थी, उसका मुकाबिला नवपाषाण युगके पहलेवालोने नही कर पाया। इसने हड्डीकी सच्ची सूई बनाई, इससे पहले मोचियोकी तरह ही सिलाई होती थी। इस मानवकी सूईके लिए सूतका काम अँतड़ियोके रेशे या नसें करती रही होगी। इस समय मानवने अपने चमडेके परिधान और जूता आदिके बनानेमें बहुत तरक्की की होगी, इसमें सन्देह नही। इस मानवके रहनेके समय युरोपका जलवायु वैसा गरम नही था, जैसा ओरन्यक् मानवके समय। वह कुछ अधिक सर्द था। इस समय युरोपमें मम्मथ गज अब भी मौजूद थे।

४ मद्लेन[2] (१३००० वर्ष पूर्व)

सोलूत्रे मानवके दो सहस्राब्दियो बाद मद्लेन मानवका पता लगता है। फ्रासकी वेज़ेर नदीकी उपत्यकामें मद्लेन कैसल (गढ) के करीब ही इस मानवका अवशेष मिला था। अपने पत्थरके हथियारोमें यह सोलूत्रे मानवका मुकाबिला नही कर सकता था। हड्डी और हाथी-दाँतके हथियारोको यह ज्यादा पसन्द करता था और चकमकको बहुत कठोर हथियारोंके तौर पर ही इस्तेमाल करता था। औरन्यक-वशका इसे नालायक उत्तराधिकारी कह सकते है। यह फ्राम ही नही स्पेन, जर्मनी, बेल्जियम और इगलैण्डमें भी रहता था। इसके समय शायद हिमयुग की स्मृति भी लुप्त हो चुकी थी। मद्लेन मानव अपने भालो और बाणोके फल हाथी-दाँत तथा हरिनकी

[1] पेर्वो० ओव्० पृ० ३५०--६३।

[2] Gen Anth p 242

[1] पेर्वो० ओव्० पृ० ४६६--८३, Gen Anth pp. 77, 143

सींगोका वनाता था। इन फलोमे कुछ काँटेदार भी होते थे, जिनसे आगे मछली मारनेकी वंशीका विकास हुआ। अपने हड्डीके हथियारोपर यह चित्रकारी भी करना जानता था। मद्लेन मानव के चित्रो में सील और सामोन मछलीकी आकृतियाँ काफी मिलती हे। एस्कमोमे इसके शरीर-लक्षणों में भारी समानता है। एस्किमो लोग भी हड्डी और लकडी पर कारुकार्य करनेम वहुत दक्ष होते हैं। हो सकता है, मदलेन मानव लकडीके बोटोको चमडेमें बाँधकर एक तरहकी नाव बनाता था। वह धनुहीके सहारे वर्मा द्वारा लकडी और हड्डीम गोल छेद कर सकता था। वह जाडेके दिनोमे गुफाओ या चट्टानोकी छायाके नीचे शरण लेता और गर्मियोम फूस या चमडेकी झोपडी में। आधुनिक एस्किमो लोगोसे आकृति और हस्त-शिल्पमे ही नही वह भारी समानता रखता था, बल्कि दीपकसे प्रकाश और खाना पकानेका भी शायद काम लेता था। चित्रकलाके विकासमें, प्रागैतिहासिक मानवोमें इसे सवश्रेष्ठ माना जाता है। इसके चित्रोमे मम्मथ गजका सजीव चित्रण यदि कही देखा जाता है, तो कही विसौन और सिहका आकार, कही लाल और दूसरे हरिनोका शिकार अकित मिलता है। वह लाल, भूरे, काले और पीले रगोको इतनी सुन्दरताके साथ इस्तेमाल करता था, कि चित्र वहुत सजीव और भावपूर्ण हो जाता था। इसके चित्रोमें कितने ही पूर्ण आकार के है। वह ब्रुशका अवश्य इस्तेमाल करता था। रगोको शायद हरिनकी सीगोकी वनी नलियो में रखता था।[१]

§२ मध्यपाषाण

अजिल, अश्योल[२] (११००० वर्ष पूर्व)

मदलेनसे दो सहस्राब्दी वाद इस मानवका पता लगता है, जो कि पुराण मानवजातियोका अन्तिम प्रतिनिधि था, और अपनी विशेषताओ के कारण इसे पुरापाषाण और नवपाषाणके बीचवाले मध्यपाषाण युगका मानव कहते हैं। दक्षिणी फ्रासमें लूदके समीप मा-द-अजिलकी गुफामें इसके हाथकी चीजें मिली थी। इगलैण्ड और स्काटलैण्डमें भी इसका पता लगता है। अजिल मानवकी एक विशेषता यह थी, कि वह मुर्देकी वहुत सी खोपडियोको अलग करके अण्डेकी तरह एक जगह गाडा करता था। ववेरियामें नोर्दलिगेन के पास ओफनेत गुहामे एक ही जगह १७ खोपडियाँ गाडी मिली थी, जिनके साथ गेरूके टुकडे भी थे, जिससे मालूम होता है, कि वह गेरूसे रगकर शरीरका श्रृङ्गार किया करता था। उन खोपड़ियोमें एक छोटे बच्चेकी भी थी, जिसके पास वहुतसे घोंघे आदि रक्खे हुए थे, जो मरनेपर भी लडकेको खेलनेके लिए थे। जान पडता है, शरीरके वाकी भागको मे लोग जला दिया करते थे। पीछे जब शरीरका जलाना आम हो गया, तो भस्मको मिट्टीके वर्तनमें रखकर गाड दिया जाता था, लेकिन यह नव-पाषाण युगकी वात है। हिमयुगके बीते वहुत दिन हो गये थे, युरोपका जलवायु इस वक्त नरम था। मदलेनके समय घासवाले मैदानो का स्थान घने जगलोने ले लिया था। अजिल मानव अच्छे मछुए थे, साथ ही शिकार भी उनकी जीविकाका वडा साधन था। पालतू

[१] दक्षिण-भारत में कुर्नूल के पास एक गुहा में इस जसे हथियार १८८१ ई० में मिले थे, Prehistoric India (Paggot, page 35)

[२] (पेर्वो० ओम् पृ० बि० १६०, Gen. Anth p 45)

पशुका पहले-पहल इन्हींके समय पता लगता है, जो कि कुत्ता था। अभी कृषिका कहीं पता नहीं था। अखिल मानवको मछली या जानवरके शिकारपर गुजारा करना पड़ता था। कुत्तेकी घ्राणशक्तिका उपयोग करके वह शिकारके जानवरोंका अच्छी तरह पीछा कर सकता था और शायद कुत्ते जानवरके घेरनेमें भी सहायता करते थे। अभी फल जमा करने और शिकारसे प्राप्त मासके सिवाय आहारका कोई दूसरा साधन मानवको प्राप्त नहीं हुआ था।

§३ मानव शरीर-लक्षण

प्राचीन मानवोंका फोसील-भूत हड्डियोंके सिवा और कोई शरीरावशेष नहीं मिला, इसलिए उनके केशोंकी बनावट कैसी थी, चमड़े, आँख और केशका रग कैसा था, रुधिर किस वर्गका था इत्यादि बातोंके जाननेका हमारे पास साधन नहीं है। आजकलकी मानव-जातिके मुख्यत चार भेद हैं आस्ट्रेलायित, निग्रोयित, मगोलायित और श्वेताग। रगोंका अन्तर दिखलाई पड़ते भी मगोलायित और श्वेताग जातियोंके शिशुओंकी नासाकृतिमें पहले अन्तर नहीं रहता, नासा-सेतु (बाँसा) का विकास वयस्कताके साथ होता है।

१ शरीर-लक्षण[१]

केशकी बनावट चमड़ेका वर्ण और नासाकृतिको देखकर आज हम मानव-जातियोंके भिन्न-भिन्न भेदको समझ लेते हैं। निग्रोयित जातियोंके चमड़ेका रग काला, बाल काले तथा ऊन जैसे फूले होते हैं। आस्ट्रेलायित लोगोंका चमड़ा काला और बाल काले तथा लहरदार होते हैं। मगोलायित, जिसमें अमेरिकन इडियन भी शामिल हैं, हल्का रग, सीधे बाल तथा उन्नत-नासा-सेतुके होते हैं। श्वेताग बहुत हल्का रग, पतली नाक तथा भिन्न-भिन्न वर्ण और बनावटके केशोंवाले होते हैं। नेत्रकी आकृतिमें भी भेद देखा जाता है, किन्तु वह अधिक स्थिर लक्षण नहीं है। श्वेतागों और निग्रोयितोंकी आँखें अधिक विस्फारित होती हैं, जब कि मगोलायितोंकी ऊपरी पपनीमें एक भारी परत पड़ी रहती है, जिसके कारण वह पूरी तौर से खुल नहीं सकती। निग्रोयितों और आस्ट्रेलायितोंके ओठ बहुत मोटे होते हैं, मगोलायितोंके उनसे कम और श्वेतागोंके ओठ बहुत पतले होते हैं। कभी-कभी शरीराकृतिमें भिन्न प्रकारके विकास भी देखे जाते हैं। अमेरिकन इडियन नियमितरूपेण काले बालों और आँखों तथा हल्के रगवाले होते हैं, किन्तु अलास्का और ब्रिटिश कोलम्बियाके विशालतम मस्तिष्क और अल्पतम रोमवाले लिगित और हैदा एस्किमो इसके अपवाद है। इनका चमड़ा बहुत सफेद, केश लाल और आँखें हल्की भूरी होती ह, जिनके कारण इन्हें कपिल (ब्लौंड) एस्किमो कहा जाता है। आजकल भी देखा जाता है, भिन्न-भिन्न जातिके लोग प्राय अपनी ही जातिमें विवाह या सन्तानोत्पत्ति करते हैं, जिसके कारण उनकी शरीराकृतिमें आनुवशिकता कायम हो जाती है अर्थात् एक जातिमें एक ही रूपरगके

---

[१] Gen Anth p 102

व्यक्ति पैदा होते रहते है। मानव-आकृति और रगके परिवर्तनमे जलवायु भी कारण होता है। अधिक गरम देशोमें रहनेवाले लोगोका रग श्याम होने लगता है, चाहे उनके माता-पिता श्वेताग ही हो, तो भी जलवायु का प्रभाव उतना अधिक और शीघ्रतामे नही देखा जाता, जितना कि जोडा-निर्वाचन या एस्किमोकी भाँति अज्ञात कारणो द्वारा देखा जाता है।

भिन्न-भिन्न मानव-जातियोमे वर्ण-भेद और रूप-भेद किस तरह हुआ, इसके बारेमें विद्वानोने बहुत सी कल्पनाएँ दौडाई है। अथर कीथके मतानुसार वर्ण-भेदका कारण मनुष्य-शरीरके भीतरकी निष्प्रणालिक ग्रथियोके हारमोन (जीवन-रस) है। मस्तिष्कके ललाटकी बगलमे अवस्थित पिटुइटरी ग्रथि अधिक बढी हो, तो उससे हारमोनका भी अधिक स्राव होगा, जिसके कारण नाक,[1] चिबुक (ठुड्डी), हाथ और पैर अधिक लम्बे हो जायेंगे। शरीरकी वृद्धिपर थाइराइड ग्रथि नियत्रण करती है। यदि इसका हारमोन कम निकले, तो नासा और केश बहुत कम विकसित हो पाते है और चेहरा चिपटा हो जाता है। इस हारमोनकी कमी से निग्रो जातिके लोगो के शरीरपर बालकी कमी है। जलमें आइडिनका अभाव होनेसे थाइराइड ग्रथि हारमोन स्राव के लिए अधिक प्रयत्न करके स्वय बढकर घेघेका रूप धारण कर लेती है। बचपनसे वैसा होना बकलोल भी बना देता है। इसका अर्थ यह हुआ, कि बाहरी प्रकृति (जलमे आइडिनका अभाव) भी मनुष्यकी भीतरी निष्प्रणालिक ग्रथियोपर प्रभाव डालती है और उसके द्वारा (अर्थात् प्राकृतिक वातावरणके कारण) शरीर-लक्षणोमें परिवर्तन होता है। केवल रग आदि हीमे नही, बल्कि शरीरके ढाँचे पर भी इस तरहके प्रभाव देखे जाते है, जिससे मालूम होता है कि शरीर-लक्षण कोई स्थिर चीज़ नही है। पूर्वी युरोपसे अमेरिका आये हुए यहूदियोकी कपाल-भित्ति ८३ होती है, किन्तु उनके पुत्र-पुत्रियोकी ८१ ४ और पौत्र-पौत्रियोकी ७८ ७ बन जाती है। शरीर-दीर्घताकी बात तो यह है, कि हावर्ड-विश्वविद्यालयके छात्र अपने माता-पितासे ३ ८ सेन्तीमीटर अधिक ऊँचे हो जाते है।

२ जातियो का सम्मिश्रण[1]

प्राचीन मानव-जातियो में भी जाति-सम्मिश्रण हुआ, क्योकि मानव सदासे घुमन्तू रहा है—कृषियुगसे पहले तो वह घुमन्तू छोडकर और कुछ था ही नही। हम आजकी मानव-जातिके इतिहास में भी ऐसे बहुत से उदाहरण पाते हैं, जिसमें दो-चार व्यक्ति नही, बल्कि जातियोका सम्मिश्रण हुआ। ईसापूर्व द्वितीय शताब्दीके अन्तमें ग्रीक लोग आक्रमण कर भूमध्यसागरके तट पर बस गये। थ्रेस (बलकान) वासी क्षुद्र-एसिया में चले गये, इसी तरह केल्ट भी इताली तक फैलते क्षुद्र-एसिया में पहुँच गये। रोमन उपनिवेशिक युरोपके बहुत से भागो मे जा बसे। जर्मन कबीले कालासागर के उत्तरी तट से चलकर पश्चिम और दक्षिणी युरोप तथा उत्तरी अफ्रीका में जा बसे। स्लावोने फिनोको हटाकर रूसमें उनका स्थान ले लिया। बुलगार कालासागर-

---

[1] Gen Anth p 102 शैशवके बाद नाक स्पष्ट होती है, Gen Anth p 101, वहीं और p 106

तट छोड वल्कानमें चले गये। कितने ही हूण कवीले वतमान मगोलियासे चलकर हुँगरीमें जा मगियार के रूप मे वस गये। युरोप-निवासी तव तक वरावर चलते-फिरते ही दिखाई देते रहे, जव तक कि खेतो में वैयक्तिक सपत्ति का अधिकार स्थापित नही हो गया । जो वात युरोपके लिये हुई, एसिया उसका अपवाद नही रहा। इन्दोनेसिया के निवासी मलयू लोग पश्चिम की ओर प्रयाण करते-करते युरोपियन तुर्की तक चले गये। इस प्रकार किसी भी जाति का शुद्धताका दावा विल्कुल झूठा है। हाँ, कभी-कभी आदिम मानव ऐसे स्थान पर भी पहुँच गया, जहाँ प्राकृतिक वाधाओ के कारण वह् वाहरसे सम्वन्ध स्थापित नही कर सका। उदाहरणाथ, ग्रीनलैण्ड के स्मिस-सोड इलाके के एस्किमो और तस्मानिया के मूल निवासी। सहस्राब्दियोसे दूसरी जातियोके सम्पर्कसे वचित होनेके कारण इन जातियो ने अपने विशेप शरीर-लक्षण विकसित कर लिये। एक समयकी सकरित या मिश्रित जातियाँ भी अधिक समय तक एक जगह् अलग-अलग रहकर विशेप लक्षण विकसित करने में समर्थ होती हैं। अधिक देशोमें विखरी होनेपर भी प्राय अपनी जातिमें ही सन्तानोत्पत्ति करनेके कारण युरोपीय यहूदी लोगो की शुकाकृति नाक उनका साफ परिचय देती हैं।

३ रक्त-भेद[1]

वतमान शताब्दीमे चिकित्सा शास्त्रकी खोजोमें रक्त-परीक्षाका भी एक स्थान है। मानव जातिके रक्तका ओ० ए० वी० और एवी इन चार समूहोमें वर्गीकरण हुआ है। रक्तको किसी बीमारके शरीरमे डालते वक्त इस वर्गीकरणका ध्यान रखना आवश्यक होता है, क्योकि जहाँ ओ रक्त किसी भी आदमीको दिया जा सकता है, वहाँ ए रक्तको वी मे डालनेसे हानि होती है। शुद्ध अमेरिकन-इडियन लोगोमें शुद्ध ओ रक्त पाया जाता है। आस्ट्रेलियन मूलनिवासियोमें भी ओ रक्त ही अधिक मिलता है और वाकीके ए रक्तवाले होते हैं। सारे एसियाको लेनेपर २० से ३५ सैकडा ही ओ रक्त मिलता है। पश्चिमी युरोपमें वीकी अपेक्षा ए रक्तवाले ज्यादा मिलते हैं, किन्तु पूर्वी और दक्षिणी युरोपमें वी की प्रधानता देखी जाती है। सीमान्त पर रहनेवाले कितने ही लोगोमे ए वहुत कम मिलते हैं और वी रक्तवाले ही अधिक होते हैं। विद्वानोका कहना है, कि ओ रक्त, चूँकि सर्वत्र मिलता है, इसलिए शायद यही मूल और सवसे प्राचीन रक्त हो। वीकी अपेक्षा ए रक्तको आदिम जातियोमें ज्यादा पाया जाता है, इसलिये ए अधिक पुराना है। इस प्रकार रक्तकी आनुवशिकतासे हम पीछेकी ओर वढ़ते-वढते पुरा-पापाणके मानवो तक पहुच सकते हैं किन्तु तुलनात्मक परीक्षाके लिए हमारे पास साधन नही है। एक विद्वान्‌का कहना है, कि यूरेसि-याई जातियोका चौडे सिरवाला होना वी रक्तकी उत्पत्ति और प्रसारके कारण हुआ। राइन-लैण्डकी अपेक्षा वर्लिन और लाइपजिगमें एकी अपेक्षा वी रक्त अधिक पाया जाता है। एल्ये नदीके पूरव पश्चिमकी अपेक्षा और भी अधिक वी मिलता है। वी रक्तकी अधिकताका कारण वहाँके लोगोका यूरेमियाई (स्लाव) लोगोंके साथ अधिक सम्मिश्रण है। रक्तका वर्गीकरण का चिकित्सा-शास्त्रसे वाहर नृतत्त्वीय अनुसन्धानमें भी उपयोगी हो चला है, किन्तु उसमें हम

---

[1] पेर्वोवित्नोये ओवश्चेस्त्वो (प प एफिमेंको)

प्राचीनतम मानव-जातियोके बारे मे बहुत अधिक नही बतला सकते। हाँ, मुस्तेर, क्रोमेञो आदि कितनी ही प्राचीन जातियोकी मगोलायित आकृति शायद उन्हे ए वर्गका बतलाती है।

स्रोत ग्रन्थ

1 History of Anthropology, pp 36-37
2 L' Humnite Prehistorique (J de Morgan)
3 General Anthropology (Boas)
4 Our Early Ancetsors, (M C Burkitt)
5 Progress and Archaeology (V G Childe)
6 Anthropology I, II (E B Taylor, London 1946)
7 In the Beginning (G Elliot Smith, London 1946)
8 Geology in the life of man (Duncan Leith, London 1945)
9 Man the verdict of Science (G N Ridley, London 1946)
10 History of Anthrpology (A C Haddon)

अध्याय ४

मध्य-एसिया के आदिम मानव

मध्य-एसियाकी अपार बालुकाराशि (प्यासी भूमि, कराकुम, किजिलकुम, तकलामकान और गोबी) का पूरी तौरसे अनुसधान अभी ही शुरू हुआ है, जब कि ये रेगिस्तान कम्यूनिस्त शासनमें आये। नृतत्त्व-विशारदोको बहुत आशा है, कि मानवके आरभिक इतिहासकी कुजी शायद इन्ही रेगिस्तानोसे मिले, जो कि किसी समय हरे-भरे घासके मैदान अथवा वृक्ष-वनस्पतिसे आच्छादित वनखड थे। पश्चिमी मध्य-एसियामें सबसे प्राचीन मानव मुस्तेरके अवशेष दो जगह मिले है। इरतिसके तटपर कुरदाइ में मध्य-पुरापापाण युगका मानव रहता था, लेकिन सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है दक्षिणी उज्बेकिस्तान में तेशिकताशका गुहा-मानव।

§१ मध्य-पुरापाषाण-युग

१ तेशिकताश मानव

पामीर का ही पश्चिमकी ओर बढा हुआ पर्वतीय भाग उज्बेकिस्तान गणराज्यमें समरकन्दसे लेकर तिरमिजके उत्तर तक फैला हुआ है। इसी पर्वतमालाके दक्षिणी भागमें दरबदका प्रसिद्ध गिरिद्वार है, जो स्वेन-चागकी यात्राके समय (६३० ई०) देशकी प्रतिरक्षाका बहुत जबर्दस्त साधन समझा जाता था। इस सँकरे गलियारेमें लोहेका फाटक लगा हुआ था। अब उसका यह सैनिक महत्त्व नही रह गया है, और न समरकद बुखारासे आनेवाले यात्रीके लिए दरबदसे गुजरना आवश्यक है। लेकिन दरबद होकर जानेवाली शीराबादकी छोटी नदी अपना एक दूसरा महत्त्व रखती है। दरबदसे कुछ मील उत्तर इसी नदीके दाहिने किनारेपर कत्ताकुगनका विशाल गाँव है, जिससे कुछ और ऊपर जानेपर नदीके बाँये तटपर अमीर-तैमूर स्थान है। शायद अमीर-तैमूर यहाँ आया हो, किंतु अमीर-तैमूरके आनेसे पचासो हजार वर्ष पहले एक दूसरी ही मानव-जातिका यहाँ डेरा था, जो तैमूरसे कही ज्यादा खूनखार थी। अमीरतैमूरके बिल्कुल पास की पहाडीमें तेशिकताशकी गुहा है। यही मुस्तेर मानवके अवशेष जून १९३८में मिले।[1] यह स्थान उज्बेकिस्तानके बाइसून जिलेमें है। अमीर-तैमूरमें भी मध्य-पुरापापाण युगके अस्त्र मिले हैं, किंतु वहाँ मानव-शरीरावशेष नही मिले। एसियामें यहाँसे पूरब मुस्तेर मानवका अवशेष और कही नहीं मिला है। यह गुफा १५-१६ सौ मीतर लबी और १५ से २० मीतर चौडी है। सोवियत पुरातत्ववेत्ताओने इसकी सुव्यवस्थित रीतिसे खुदाई करके बहुत सी एतिहासिक सामग्री प्राप्त की है, जिनमें पाषाण-अस्त्र (नुकलेयस, छुरे) तथा बहुत प्रकारके जानवरोकी हड्डियाँ है। जगली बकरियोकी विशाल सीगें काफी परिमाण में प्राप्त हुई हैं। इस गुफाके वर्तमान धरातलके नीचे दस स्तरोका पता लगा है। ऊपर से तीसरे

---

[1] त्रुदी उज्बेकिस्तान्स्कओ अकदमी नाउक (ताशकद १९४०, पृष्ठ ५४२-४)

तलम ५० मीतर लबा एक चबूतरा-सा मिला, जिसपर बहुतेरे बडे-बडे पत्थर पडे हुए थे। यहाँ बकरीकी सीगो तथा पत्थरके हथियार बनानेके साधन प्राप्त हुए। नवे स्तरके तीसरे चौथे तथा दसवें स्तरके भी तीसरे चौथे चतुष्कोणोमे सबसे अधिक सामग्री मिली, जिनमें पाषाण-अस्त्रोंके साथ दो बकरीकी सीगें तथा बहुतसे जगली जानवरोकी हड्डियाँ मिली। मालूम होता है, पत्थरके हथियारोका मिस्त्रीखाना यही पर था। सबसे महत्त्वकी चीज जो यहाँ मिली, वह थी आदमीकी
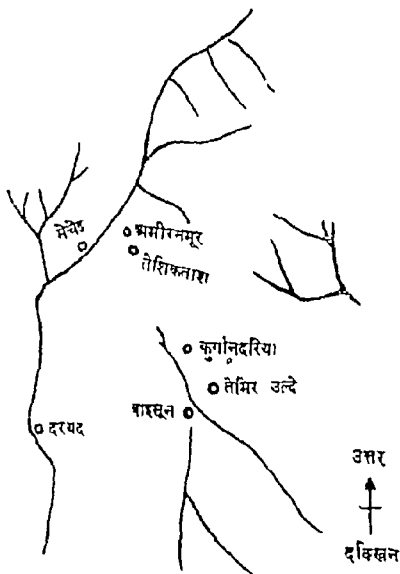
७ तेकिशताश गुहा

हड्डी, खोपडी, जिसमें नेयण्डर्थल या मुस्तेर मानवके शरीर-लक्षण स्पष्ट दिखाई पडते हैं। खोपडी बहुत मोटी थी, इसका ललाट नीचा था, भौंकी हड्डी उभडी हुई थी, दाँतोमें कुकुरदत छोटा था यद्यपि और दाँत बहुत बडे थे। मुंह बहुत बडा था, पर ठुड्डीका अभाव था।

तेशिकताश गुफामें मिली हड्डियोके देखनेसे पता लगता है, कि वहाँ सबसे ज्यादा सिबेरीय बकरोका इस्तेमाल होता था, जिसकी ६४९ सख्याका पता लगा है। इसके अतिरिक्त ५ पक्षी, २ घोडे, २ सूअर, १ पार्दसिंग तथा ५, ७ और जानवरोका पता लगा है। हड्डियोसे मालूम होता है, कि तेशिकताश मानवका सबसे प्रधान खाद्य सिबेरीय बकरी थी, उसीका शिकार उसकी प्रधान जीविका थी।

इस खोपडीका कपालक-क्षेत्र १४९० घन-सेंतीमीतर था, जबकि आजकलके शिशुका ११५० से १५०५ घन-सेंतीमीतर होता है (चिम्पाजीका कपालक-क्षेत्र ३५०, ओराङ्गउतानका ३८० और गुरिल्लाका ४०० घन-सेंतीमीतर होता है)। यह खोपडी १५-१६ सालके लडकेकी थी। गुहामें से बहुत सारे पाषाणास्त्र और हड्डियाँ मिली, इसलिए आशा हो सकती थी,
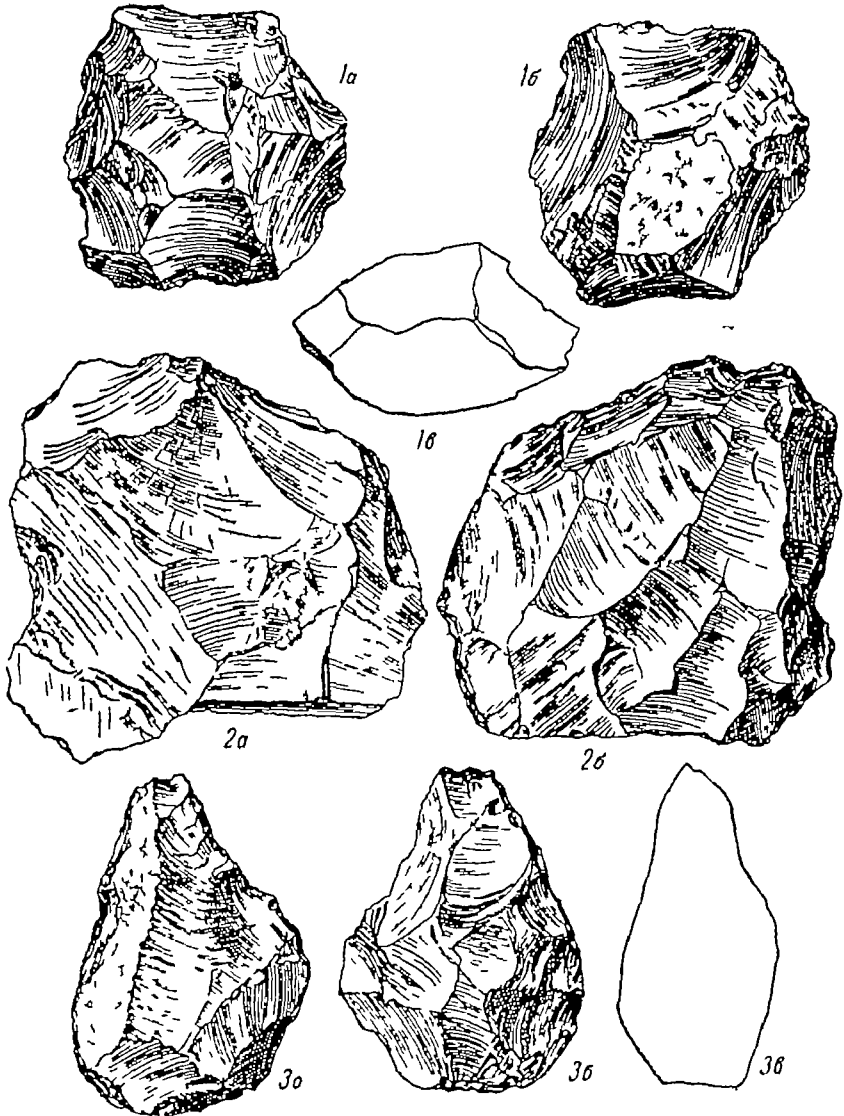
८ तेशिकताश मानवके पाषाणास्त्र p १८,

कि वहाँ और भी खोपड़ियाँ या शरीरावशेष होंगे। किंतु मुस्तेर मानवके अवशेष उतने सुलभ कहीं भी नहीं हैं। नृतत्त्व-विशारदोंका कहना है, कि तेशिकताश मानव पेकिंग मानव और आधुनिक मानवके बीचका था।

(१) जीवनचर्या

आजसे २५-३० हजार वर्ष पहले चतुर्थ हिमयुगके अंतम लुप्त इस मुस्तेर मानवकी जीवन-यात्रा कैसी थी, इसका कुछ पता उसकी गुफामें मिली हड्डियाँ बतलाती ह और कुछ का अनुमान हम तस्मानिया के मूल-निवासियोंकी जीवन-यात्रासे कर सकते हैं। तस्मानियाके लोग दक्षिणी उज्बेकिस्तानके बराबर ही शीतोष्ण (प्राय ४० डिग्री अक्षांश)मे रहते थे, यद्यपि एक दूसरेसे भिन्न (दक्षिणी और उत्तरी गोलार्ध) में होनेके कारण उनकी ऋतु एक दूसरेसे उलटे कालमें पड़ती थी। तेशिकताश मानवको जहाँ हिमयुगकी कठोर सर्दीमें जीवन-संघर्ष करना पड रहा था, वहाँ पिछली शताब्दीमें अँगरेजोंकी कृपासे जीवनसे मुक्त हो जानेवाले तस्मानियन लोगोंको उतनी सर्दीका मुकाबिला नहीं करना पड़ता था, तो भी वह ऐसी जगह पर थे, जहाँ कभी कभी जाड़ोंमें बर्फ पड़ जाती थी। आबेल तस्मनने १६४२ ई० मे आस्ट्रेलियाके दक्षिणमे अवस्थित इस द्वीपका पता लगाया था, जिसके ही नाम पर उसका नाम तस्मानिया[1] पड़ा। १७७७ ई० मे कप्तान कूक जब तस्मानिया पहुँचा, तो उसने वहाँके लोगोंको पुरापाषाण-युगमे पाया। जान पड़ता है, तस्मानियन लोग एसियासे मलाया-जावा होते आस्ट्रेलिया पहुँचे थे। उस समय आस्ट्रेलिया शायद एसियासे स्थल द्वारा मिला हुआ था। प्रबल मानव-शत्रुओंके भयके मारे तस्मानियन लोग भागते भागते इस द्वीपमें पहुँच हजारों वर्षोंसे अपना सरल जीवन बिता रहे थे। दूसरे बर्बर मानव-शत्रुओंने उन्हें भागकर जान बचानेका अवसर दिया था, किंतु सभ्य अँगरेज उतनी दया दिखलानेके लिए तैयार नहीं थे। अस्तु, तस्मानिया द्वीपमे पहुँचकर ये मानव संपर्कसे वंचित हो अपना पुराना जीवन बिता रहे थे, जबकि श्वेतांग नई भूमियोंकी खोज करते उनके पास पहुँचे। उस समय वह लोहा या किसी धातुका हथियार इस्तेमाल नहीं करते थे। पुरापाषाणयुगीन मानवकी तरह उनके हथियार छिले चकमक पत्थरके होते थे। पाषाण कुठारको भी बनाना नहीं जानते थे, जिसे कि शेल मानव बना सकता था। वे आमतौरसे नंगे रहा करते थे, किंतु कभी-कभी चमड़े भी पहनते थे। कागरूके चमड़ेसे बिछौनेका काम लेते थे। वर्षा और गर्मीसे उनके स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ता था। उनका घर खाली शाखाओं और घासोंका बनाया हुआ आड़ होता था, जिसके ऊपर छत डालनेकी आवश्यकता नहीं समझी जाती थी। अँगरेजोंने धीरे धीरे तसमानियाके सुन्दर द्वीपको निगलकर अधिकांश निवासियोंको अकाल ही काल-कवलित करा दिया। बचे हुए निवासियोंको १८३१ ई० में पासके फ्लिण्डर द्वीपमें निर्वासित कर दया दिखाते हुए झोपड़ियों में रख दिया गया। खुली जगहमें वर्षामें भीगते और जाड़ेमे काँपते उन्हें कोई रोग नहीं हुआ था, किंतु अब उन्हें सर्दी और जुकाम होने लगा। अपनी प्राकृतिक अवस्थामें यह लोग शरीर पर चर्बी और गेरू पोता करते थे, जिससे शायद सर्दी-गर्मीका बुरा प्रभाव नहीं पड़ता था।

---

[1] Everyday Life in the Old Stone Age, pp 40-44

तस्मानियन लोगोके जीवनसे हमें पता लग सकता है, कि आजसे ५० हजार वर्ष पहले मध्य-एसियाके प्राचीन निवासी कैसे रहते थे। तस्मानीय लोग घोंघे-कौडी आदिकी मालाके बडे शौकीन थे और तेज चकमक पत्थरसे काट कर गोदना भी गोदाते थे। आहारकी खोजमें वह बराबर एक जगहसे दूसरी जगह घूमते रहते थे। कितनी ही बार बच्चोको भी आहारकी कमीके कारण भूखे मरनेके लिए छोड दिया जाता था, वही बात विकलागो और अधिक बूढे आदमियोकी भी थी। कडी लकडीके बने हुए सीधे-सादे भालेसे वह कागरूका शिकार करते थे। लकडीको काटकर उसे चकमक मे छील लेते थे। यदि लकडी टेढी होती तो उसे आगमे गर्माकर सीधा करते थे। एक छोरको आगसे जला लेते थे, फिर उसे छीलकर तेज बना लेते। यह छोर उसी ओर होता था, जिधर लकडी ज्यादा मोटी अतएव भारी होती थी। उनके भाले ११-१२ फुट लबे होते थे। एक ओर भारी होनेकी वजहसे उस ओर सामने करके फेंका हुआ भाला लक्ष्यपर सीधे जाता था। तस्मानीय शिकारी ४०-५० गजके फासलेसे कागरूको मार सकता था। वह जिस तरह चिर-अभ्यासके कारण भालेका ठीक निशाना लगा सकता था, वैसे ही ढाई फुट लबे मोटे डडे या पत्थरोको भी फेंककर शिकार कर सकता था। उनकी आँख, कान और घ्राणकी शक्ति बडी तीव्र थी, जिससे अपने शिकारका अच्छी तरह पीछाकर सकते थे। जो भी पशु-पक्षी उनके हाथमें आता, उसे लकडीकी आगमें डाल अवपका करके बालो और पखोको झुलसा कर चकमकके चाकूसे काटकर टुकडे-टुकडे कर देते। नमकका काम थोडी-सी लकडीकी सफेद राख देती थी। वह केवल भुना हुआ मास खाते थे, उबालनेके लिए उनके पास कोई बर्तन नही था।

भोजनके बारेमें तेशिकताश मानवकी भी यही अवस्था रही होगी। तेशिकताश मानव गर्मियोमें अपनी गुफासे बहुत दूर-दूर तक भटकता रहा होगा। उसको ऐसी नदी, जलाशय भी मिलते होगे, जिनमें मछलियाँ रहती थी। शायद इनकी स्त्रियाँ भी तस्मानीय स्त्रियोकी भाति पानीमे गोता लगाकर या वैसे ही मछलिया पकडती रही होगी। बसी या जालका पता तस्मानीय लोगोको नही था। पुरुषोका काम शिकार खेलना था। तस्मानीय स्त्रियाँ दूसरा काम करती थी। वह अपने पुरुषोके पास खाते वक्त बैठ जाती, वह अपनी आज्ञाकारिणी स्त्रियो को अपने माममेंसे काटकर एक टुकडा थमा दिया करते थे। तस्मानीय पुरुष लकडीके बोटोको नावकी तरह इस्तेमाल करते थे, तीन चार आदमी उस पर बैठ कर लकडीके भालोसे मछली मारते थे। यही भाले नावकी लग्गीका भी काम देते थे।

वह व्यापार या चीजोकी अदला-बदलीका ज्ञान नही रखते थे, न कृषि जानते थे और न पशुओका पालन ही। उनके यहा न कोई सामन्त-राजा था, न कानून और नही कोई नियमित सरकार। अगर बीमारी होती, तो थोडा-सा खून निकालकर चिकित्सा कर लेते थे। मुर्दोको कभी-कभी वह गाड देते थे और कभी-कभी किसी पेडके कोटरमें रख देते थे। यदि जलाते तो अवशेष को गाड देते, लेकिन खोपडीको या तो सम्मारकके तौरपर रख लिया जाता या पीछेसे कही अलग गाड दिया जाता था। उनका विश्वास था, कि मनुष्य मरनेके बाद अपने पितरोंके साथ एक आनन्दमय द्वीप में रहता है। झगडा खडा होने पर उनके न्याय तरीका बडा विचित्र था "दोनो पक्ष वाले पास आकर आमने सामने से छातीके ऊपर अपने दोनो हाथोको रखके अपने सिरको एक दूसरेके चेहरेपर हिलाते बहुत न्यायपूर्ण चीखनेकी आवाज तब तक करते रहते, जब तक कि उनमेंसे एक थक नही जाता या

उसका क्रोध शात नही हो जाता था ।" शायद सहस्राब्दियोके तजर्बेके बाद उन्हे युद्धकी जगह यह तरीका पसद आया। तस्मानीय जातिका अतिम पुरुष त्रुगनिनि १८७७ ई० में मरा, जिसके साथ पुरापाषाण युगकी इस प्राचीन जातिका खातमा हो गया ।

(२) भाषा[1]

प्राचीन मानवने अपने पत्थरके हथियारो या हड्डियोके रूपमे जो अवशेष छोडे ह, उनमे उनके इतिहास पर सबसे अधिक प्रकाश पडा है। पर, भाषा द्वारा मानवके प्रागैतिहासिक काल पर उससे भी अधिक प्रकाश पडा है, जितना कि शरीरके ढाचे या हथियारोके अध्ययनमे। शरीरके ढाँचेमे भिन्न भिन्न जातियोके सभी व्यक्तियोमें वह भिन्नता नही देखी जाती, जो कि भाषाके अध्ययनसे स्पष्ट दिखाई पडती है। भाषाने एक दूसरे से बहुत दूर निवास करनेवाली जातियोके पुराने सबधका पता दिया। अफ्रीकाके पासके मदगास्कर द्वीपके निवासियोका सबध मलय लोगोसे है, इसका किसको पता लगता, यदि भाषाने इसकी सूचना न दी होती। भारतीय आर्योका, अँगरेजो, जर्मनो, और रूसियोसे वश-सबध है, इसका पता नही लग सकता था, यदि भाषाने इसका सकेत न किया होता। लेकिन जिह्वा, तालु, ओठके अतिरिक्त स्वर-यत्रके काफी विकास होने पर ही मानव ठीकसे वर्ण-उच्चारण कर सकता है। स्वर-यत्रके विकासका पता मस्तिष्कके भीतरके उस क्षेत्रके विकाससे लगता है, जहाँसे भाषण-यत्र पर नियत्रण होता है। निम्न-पुरापाषाण युगके मानव—जावा, पेकिंग और हैडलबर्ग—के स्वर-यत्रका विकास इतना नही हुआ था, कि वह वर्णोका अच्छी तरह उच्चारण कर सकते। मुस्तेर मानव इस विषय मे कुछ आगे बढ़ा हुआ था, किंतु वर्तमान भाषा-वशो में से किसी का उसके साथ सबध जोडना बहुत कठिन है। भाषा भावो के सकेत का साधन है। शब्द, स्पर्श, और गति (अग-परिचालन) द्वारा प्राणी एक दूसरे को अपने भावो से अवगत कराते हैं। कुत्ता अपने स्पर्श और भिन्न-भिन्न प्रकार की अग-गति से ही अपने भावो को नही व्यक्त करता, बल्कि उसके शब्दो में भी दु ख, रुलाँसे होने, प्रार्थना, आग्रह, खतरा या आक्रमण के भावो को प्रकट करनेवाले भिन्न-भिन्न स्वर होते है। तो भी वनमानुष जैसे बहुत ही विकसित प्राणियो में भी किसी प्रकार की भाषा का पता नही लगता। मनुष्य अन्य प्राणियो की तरह सकेत द्वारा भी अपने भावो को व्यक्त करता है और वचन द्वारा भी। यह कहना कठिन है, कि इन दोनों में पहले किसका विकास हुआ। आज भी एक दूसरे की भाषा से अपरिचित व्यक्ति अथवा गूगे-बहरे सकेत द्वारा अपने भावो को प्रकट करते हैं। भाषा के विकास के लिए स्वर-यत्रो का अधिक विकसित होना अवश्यक है। लेकिन स्वर-यत्र के भी विकसित होने पर भाषा का विकास तब तक नही हो सकता, या भाषा तब तक नही फूट निकल सकती, जब तक कि मस्तिस्क में उसका नियत्रक-यत्र भी विकसित न हो चुका होता। तोता-मैना इसके उदाहरण हैं। अपने स्वर-यत्रो के विकास के कारण वह मनुष्य-जैसी भाषा बोल तो सकते हैं, किंतु नियत्रक स्थान के अभाव के कारण केवल मनुष्य के स्वरो की नकल भर है। धीरे-धीरे बोलता आदमी ० ०७ ($\frac{७}{१००}$) सेकेण्ड में एक स्वर बोल सकता है, जल्दी बोलने में और भी कम

---

[1] Gen Anth. pp 135-40

समय लगता है। इतनी जल्दी और बारीकी से शब्द को निकालना मनुष्य के उपर्युक्त यत्र की करामात है।[1]

भापा का लिपिवद्ध होना वहुत पीछे हुआ। मिस्र और असीरिया की भापाएँ आज से ८-५ हजार वर्प पहले लिपिवद्ध हुई। मिस्र में अक्षर-सकेत न हो अय-सकेत रहने के कारण उच्चारण का पता नही लग सकता। उच्चारण का पता तो आज की हमारी लिपिवद्ध भापाओ की पुस्तको द्वारा न भी पूरा ही हो सकता। एक-एक स्वर के उच्चारण मे जहाँ व्यक्ति में अन्तर देखा जाता है, वहाँ स्वरो के उतार-चढाव आदि के सबध में तो आज भी हमारी लिपियो मे कोई विशेप सकेत नही है। देश और काल में दूरस्थ एक वश की भापाओ के तुलनात्मक अध्ययन से हमें उनका सबध मालूम होता है, तथा यह भी कि उनमें कितना परिवतन हुआ है। भापाओ का इतिहास यह स्पष्ट वतलाता है, कि उनका उच्चारण, अर्थ और व्याकरण-नियम सभी परिवतनशील है। सास्कृतिक स्तर में जव भारी परिवतन आता है, तो इस परिवतन की गति भी तीव्र हो जाती है। सास्कृतिक विकास जव एक तल पर रुक सा जाता है, तो भापा में परिवतन भी बहुत कम होता है। हिन्दी-युरोपीय भापा-वश की स्लाव-जैसी भापाओ का सश्लिष्ट (सेन्थेटिक) रूप अव तक मौजूद रहना यही वतलाता है, कि काफी समय तक वह उसी सास्कृतिक स्तर पर रह गई। हम जानते है कि स्लाव जातियो के पूर्वज (शक) वहुत पीछे तक घुमन्तू पशुपाल रहे और अपने दक्षिण के पडोसियो के लौह-युग में चले जाने के वाद भी कुछ शताब्दियो तक पित्तल-युग में ही रहे। भिन्न-भिन्न भापा वोलनेवाले लोगो के साथ घनिष्ठ सपक होने पर भी भापा मे तेजी से परिवतन होता है। यह गलत धारणा है कि लिपिवद्ध भापा ही मे परिवर्तन की गति मद होती है। ग्रीनलैंड और मेकेंजी नदी के एस्किमो लोग अत्यन्त प्राचीन समय से एक दूसरे से अलग हो गये, किंतु उनकी आजकल की वोलियो में वहुत कम अन्तर पाया जाता है। अफ्रीका की वन्तू वोलियाँ भी देश और काल के भारी अन्तर के वाद भी वहुत कम परिवर्तित हुई। यह भी इसी तत्त्व को वतलाती है, कि सास्कृतिक विकास की गति मद होने पर भापा में परिवतन की गति भी धीमी हो जाती है। दूसरी तरफ हम हिंदी-युरोपीय भापाओ को देखते हैं, कि युरोप मे लेकर एसिया तक की उनकी भिन्न-भिन्न भापाओ और वोलियो मे कितनी तेजी के साथ परिवतन हुआ।

परिवतन में स्वर सवसे आगे रहती है, लेकिन व्यजन भी कम परिवर्तित नही हाते। भापा के यह वाहरी कलेवर ही तेजी से परिवर्तित नही होते, वल्कि उनके अर्थो में भी भेद हो जाता है और कभी-कभी तो वह विल्कुल उल्टा अथ देने लगते ह। हिंदी और वँगला में उपन्याम से हम कथाग्रथ का अर्थ लेते हैं, किंतु दक्षिण भारत की वोलियो म उसका अर्थ है भापण।

जिस तरह यह कल्पना अवैज्ञानिक है, कि एक ही जोडे से दुनिया की सभी मानव जातियाँ पैदा हुई, उसी तरह एक भापा से दुनिया की भापाओ का विकास मानना भी गलत है। यद्यपि आज चार पाँच भापा-वश ही पृथ्वी के अधिकाश देशो और लागो में वाले जाते हैं युरोप, अमेरिका और एसिया के भी वडे भाग में हिंदी-युरोपीय भापा-वश की वालियाँ चलती ह। तुर्की चीनी तुर्किस्तान से लेकर तुर्की तक मे वोली जाती है। चीनी भापा भी एसिया के वहुत वडे भूखण्ड म वोली जाती है। मलय भापा-वश फिलिपाइनसे मदगास्कर तक फैला हुआ है। अफ्रीका के

---

[1] Language its Nature, Devolopment and origin (O Jesperson, 1923)

बहुत बड़े भाग में बन्तू भाषा-वंश का राज्य है। लेकिन एक-एक भाषा का इतना विस्तार नव-पाषाण युग ही नही, बल्कि और पीछे की घटना है। युरोप के बहुत से भागो तथा भूमध्यसागर के निकटवर्ती देशो में बहुत पीछे तक अ-हिन्दूयुरोपीय भाषाएँ बोली जाती थी। दक्षिणी अफ्रीका में बन्तू भाषा का प्रचार हाल के समय में हुआ है। तुर्की भाषा-वंश पाचवी सदी ई० मे पश्चिमी मध्य-एसिया में जरा-जरा फैलने लगा और आधुनिक तुर्की विशेषकर उसके युरोपीय भाग में तो, पद्रहवी सदी में उसका प्रवेश हुआ। अरबी का मिस्र और मराको की भाषा होना पैगंबर मुहम्मद (मृत्यु ६२२) के बाद की बात है। अनुसधान से पता लगता है, कि प्राचीन काल मे भाषाओ का बहुत अधिक विकेंद्रीकरण था और आज से कही अधिक भाषाएँ उस समय बोली जाती थी। उनमें से कुछ सदा के लिए लुप्त हो किसी एक भाषा के अधिक फैलने में सहायक हुई। सास्कृतिक इतिहास हमें बतलाता है, कि उच्च सस्कृतियां अल्प-विकसित सस्कृतियो को अपने जैसा बनाने में सफल होती है। उच्च सस्कृति पर जल्दी पहुँचने के लिए अल्प-विकसित लोगो को जो परिवतन करना पड़ता है, उसमे पराई भाषा का स्वीकार भी शामिल है। भाषा वस्तुत सास्कृतिक अवस्था के विकास का दपण है। सास्कृतिक विकास के साथ भाषा का विकास अनिवाय है, और इसी परिवर्तन में जातियो की तरह कितनी ही भाषाओ का नाम शेष हो जाना भी आवश्यक है। भाषा-वंश बतलाता है, कि उनकी भाषाओ को बोलनेवाले खास मानव-वंश रहे होगे अर्थात् एक मानव-वंश की एक भाषा रही होगी, किंतु भाषा रक्त के सबध को सबदा निश्चित नही बतलाती। कितनी ही जातियाँ अपनी भाषा छोड़ दूसरी भाषा स्वीकृत कर लेती है। अमेरिका के निग्रो अपनी भाषा भूल गये है, और वह अब अँगरेजी बोलते है। पूर्वी जर्मनी के अधिकाश निवासी स्लाव-जाति के हैं, लेकिन अब वह जर्मन भाषा बोलते हैं।

§२ मध्यपाषाण-युग (१२००० वर्षपूर्व)

पहले युगो की अपेक्षा इस युग के मानव के अवशेष पश्चिमी मध्य-एसिया में बहुत जगहो पर मिले है। निम्न सिरदरिया में तुर्किस्तान-शहर में इसका पता लगा है। कराताउ, और म्यूकम (जबुलिजिला), बेत्पक् दला (अल्माअता) भी मध्य-पाषाण युग के अवशेषो के लिए मशहूर है। अराल समुद्र के पास भी इस युग के मानव के अवशेष पाये गये है। किजिलकुम और कराकुमकी विशाल मरुभूमियाँ आज सोवियत पुरातत्ववेत्ताओ की आखेट-भूमि बन गई हैं। कोई आश्चर्य नही, यदि वहाँ ऐसे मध्यपाषाण युगीन मानव के अवशेष और भी मिल जायँ, जिनसे उस युग के इतिहास पर काफी प्रकाश पड़े। यह तो हमें मालूम है, कि आज से १०-१२ हजार वष पहले से ही, जब मध्यपाषाण-युग का मानव मध्य-एसिया में रहता था, उस समय का जलवायु वहाँ के मानव के लिए अत्यन्त प्रतिकूल सिद्ध हो रहा था। हिमयुग के पश्चात् समुद्र और नदियो के सूखते जाने से यहाँ की भूमि अत्यन्त सूखी होती। जगलो और घास के मैदानो को विकराल रेगिस्तान अपने पेट में हजम करते गये। मध्य-एसिया के मानवों के लिए यह सत्यानाश की घड़ी थी। उसके लिए दो ही रास्ता था, या तो वहाँ रहकर लुप्त हो जायँ अथवा अन्यत्र चले जायँ। युरोप की अवस्था इस वक्त बड़ी अनुकूल थी, इसलिए

उनका उधर जाना स्वाभाविक था। भारत में इस युग के अवशेष ऊपरी गगा से कच्छ तक मिले हैं।[1]

जैसा कि नाम से ही पता लगता है, मध्यपाषाण युग पुरा पाषाण और नव-पाषाण के बीच का समय है। यह मानव-प्रगति में बहुत शिथिल सा समय था। इस समय प्रवाह रुक सा गया था, उसका खुलना नव पाषाण युग ही में देखा जाता है (यह वही समय था, जबकि युरोप में अज़िल मानव रहता था)। मध्यपाषाण-युगीन मानव की जीविका का साधन फल-सचय तथा पशु और मछली का शिकार था। अभी केवल कुत्ता मनुष्य का पालतू साथी बन सका था। ग्राम्य पशुओ में यही वह जानवर था, जो मनुष्य के घनिष्ठ सपर्क में सबसे पहले आया और आज भी उसकी स्वामि-भक्ति वैसी ही देखी जाती है।

मध्यपाषाण-युगीन मानव उस समय के प्रतिकूल वातावरण में बेत्पक्दला (अल्माअता) से अराल और कास्पियन तट तक किसी तरह अपना जीवन व्यतीत करता रहा। प्रकृति की निष्ठुरता के कारण उसके लिए जीवन-सघर्ष बहुत कठिन था, जिसी के कारण वह युरोप की अनुकूल भूमि की ओर गया। हिमयुग के अवसान हुए देर होने के कारण बहुत से पहाड़ हिममुक्त हो गये थे, जिसके कारण यातायात का बहुत सुभीता था। मध्यपाषाण-युग के बाद मध्य-एसिया के अनौ जैसे कितने भागो में, हम जिस मानव को पाते हैं, उसका सबध यदि खोपडी में से अल्पाइन जाति से मिलता है, तो सस्कृति में उसकी मसोपोतामिया और सिंध-उपत्यका से अधिक घनिष्ठता दिखाई पडती है। ऐसी अवस्था में यह कहना कठिन है, कि यहाँ रहनेवाली जाति मध्यपाषाण-युगीन मानवो की सतान थी, अथवा पश्चिमी मध्य-एसिया के दक्षिणी भाग को अधिक अनुकूल पाकर भूमध्य जातीय मेसोपोतामिया और सिंध-उपत्यकाके लोगो का यहाँ स्थायी प्रवेश हो गया। सिंधु-उपत्यका या मसोपोतामिया से अनौ या अराल तट तक भूमध्य-जातीय लोगो और उनकी सस्कृति के अवशेष मिलते हैं। हो सकता है, मध्यपाषाण युग में पश्चिमी मध्य-एसिया के पुराने निवासी युरोप की ओर प्रवास कर गये हो और पीछे उनकी जगह भूमध्यीय लोग अपनी नवीन सस्कृति के साथ आ गये हो। यदि पहले के निवासियो में कुछ रह गये हो, तो वह भी धीरे धीरे भू मध्यीय जाति के भीतर मिल गये।

---

[1] Gen Anth p 252 L' Humenite' Prehistorique p 594 Our Early Ancesters pp 10, 75 Prehistoric India (S Paggot), p 36

स्रोत ग्रथ :

1 त्रुदी उज्वेकिस्तान्स्काओ अकदमी नाउक (ताशकद १९४०)
2 Everyday Life in the Old Stone Age (Quinnell)
3 General Anthroplology (Boas)
4 Language its Nature, Devolopment and Origin (O Japerson, 1923)
5 Le' Humenite' Prehistorique (J De Morgan)
6 Prehistoric India (S Paggot)
7 Prehistoric India (P Mitra)
8 Language (L Bloomfield, 1933)
9 Les Langues du Monde (A Meillet and M Cohen, Paris 1924)
10 Researches to the Early History of Mankind (E B Taylor, London, 1878)

अध्याय ५

नवपाषाण-युग, अ-नवपाषाण-युग

मध्य-एसिया में मानव पाषाण-युग से नवपाषाण युग में ईसा पूर्व ५००० अर्थात् आज से ७००० वर्ष पूर्व आया। सिरदरिया की उपत्यका, सोग्द (जरफशा-उपत्यका), तुषार (मध्यवक्षु-उपत्यका), ख्वारेज्म (निम्न वक्षु-उपत्यका) और अराल, मत्र (मुर्गाव, उपत्यका) आदि बहुत से स्थानों में नव पाषाण युग के अवशेष मिले हैं।

§१ नवपाषाण-युग (५००० ई० पू०)

मध्यपाषाण युग में जलवायु के अत्यन्त सूखे होने के कारण यहाँ के मानव को बहुत कष्ट हुआ। नवपाषाण युग में उसमें थोड़ा परिवर्तन अवश्य हुआ था, जिसके कारण प्रगति का अवरुद्ध मार्ग फिरसे खुला। नवपाषाण-युग की विशेषता है—१ कृषि, २ पशुपालन, ३ मृत्पात्र-निर्माण और ४ पीस-घिस कर बने पाषाणास्त्र। कृषि और पशुरक्षाके कारण अब मानव निरा घुमन्तू नहीं रह सकता था। उसे अब एक जगह बसने की अवश्यकता हुई—इसी समय पहले-पहल ग्राम आबाद हुए। मनुष्य सामाजिक जीवन की उस अवस्था में पहुँचा, जब कि वह एक जगह रहते हुए सामूहिक काम कर सकता था और सामूहिक तौर से अपने शत्रुओं से रक्षा भी कर सकता था। अब शिकार और फल-संचय ही जीविका के साधन नहीं रह गये थे। कृषि और पशुपालन में स्त्री का अब प्रधान भाग नहीं रह गया था, इसलिए सारे पुरापाषाण-युग में चली आई मातृसत्ता का लोप हुआ और उसकी जगह पुरुष-प्रधानता या पितृसत्ता की स्थापना हुई। शिकार (चाहे मछली का हो या प्राणियों का) ही मध्य-एसिया के मानव की पिछले युग में प्रधान जीविका थी। पहाड़ों में जंगल था और वहाँ आज जैसे तब भी जंगली सेब, नास्पाती, अंगूर आदि फल होते थे। मानव को फल-संचय का भी अधिक सुभीता था, किंतु जिन जगहों पर नवपाषाण युग के मानव के अवशेष मिले हैं, वहाँ फल-संचय का सुभीता कम ही रहा।

१ कृषि[1]

गेहूँ और जौ मध्य-एसिया के पहाड़ों में जंगली अवस्था में मौजूद थे। आज भी लाहुल की सीमाके पार लदाखके रास्ते में नदी की कछारों के पास जंगली गेहूँ और चने मिलते हैं और लदाख जानेवाले अपने घोड़े-खच्चरों को वहाँ दो-चार दिन ठहरकर चराना आवश्यक समझते हैं। गद्दी लोग तो हर साल वहाँ अपनी भेड़ों को मोटी करने के लिए ले जाते हैं। कोई आश्चर्य नहीं, यदि

---

[1] Gen Anth, p p 90 99

कृषि के लिए उत्तरपाषाण-युग के मानव ने गेहूँ और जौ का स्वीकार किया। आरंभिक गेहूँ-जौ जगली गेहूँ जौ ही अब के से दाने वाला होता था। जगली अवस्था में भी, जलवायु अनुकूल होने पर अधिक मोटे होते हैं, किंतु मानव द्वारा बोने के बाद उनकी हरियाँ पतली, तथा उनके कण सूक्ष्म हो गए। इस अनाज और फल मनुष्य के हाथों में पड़कर अधिक बड़े और स्वादु बने।

कृषि का आविष्कार कैसे हुआ इसके बारे में विद्वान् कहते हैं: शिकारी आदमी ने घास के अभाव में शिकार के पशुओं को दूसरी जगह जाने से रोकने के लिए पहले घास के तौर पर अनाज को बोना शुरू किया, जिसमें खाद्य होने का परिचय उसे पीछे मिला। सूखे फल यद्यपि देर तक सुरक्षित रखे जा सकते हैं, किंतु जैसा कि पहले बतलाया, मध्य-एसिया में उनकी सुलभता बहुत कम जगह पर थी। शिकार के मांस को जाड़ों में भले ही कुछ महीनों तक रक्खा जा सके, नहीं तो जल्दी न खतम करने पर उसके सड़कर खराब हो जाने का डर रहता है। उस समय के मानव को मांस की दुर्गन्ध आज की जितनी नापसन्द नहीं थी, तो भी मांस सड़ाकर खाना स्वास्थ्य के लिए हानिकर है, इसका पता तो उसको था ही। अनाज ऐसी चीज थी, जिसको बहुत समय तक रक्खा जा सकता था। शिकार, भिक्षा तथा फल-चयन बिल्कुल अनिश्चितता का जीवन है। कृषि ने मानव को इसके बारे में बहुत-कुछ निश्चिन्त कर दिया। चाहे मास के बराबर स्वाद और शक्ति अनाज में न भी हो, किंतु उसके द्वारा महीनो के लिए आहार की चिंता का दूर हो जाना मानव-प्रगति के लिए हुई बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ। शिकारी मानव को प्राय रोज शिकार की चिंता में दौड़ते रहना पड़ता था। अपने पत्थर के हथियारो द्वारा शिकार करने मे सफल होना रोज-रोज नही हो पाता था। कितनी ही बार उसे सपरिवार भूखे रहना पड़ता था।

खेती करने के लिए अब उसे विशेष हथियारो की अवश्यकता हुई, जो सभी हथियार पत्थर के होते थे। पुरापाषाण-युग के मानव अपने पत्थर के हथियारो से पेडो को काट लेते थे, डालियो को काट छीलकर लकड़ी के भाले या डंडे बना लेते थे। मई १९५१ में (परमाणु-युग के भीतर) मुझे निम्न-पुरापाषाण युग के शिल्पका परिचय मिला। केदारनाथ ८ मील के करीब रह गया था। मेरे भार-वाहक तरुण नेपाली बलबहादुर ने पहिले डंडा रखने की अवश्यकता नही समझा था, लेकिन जब ९००० फुट से ऊपर की चढाई मे साँस फूलने लगी, तो उसे डंडे की अवश्यकता मालूम हुई। *वृक्षो के क्षेत्र मे हम लोग ऊपर थे, किंतु झाड़ियाँ अभी* खतम नही हुई थी। झाड़ियो मे डेढ़-दो इंच मोटे डंडे मिलने आसान थे, किंतु हमारे पास फल खाने के छोटे से चाकू के अतिरिक्त यदि कोई दूसरा हथियार था, तो रिवाल्वर, जिससे डंडा नहीं काटा जा सकता था। बलबहादुर अपने पूर्वजो की तरह चौबीस घण्टे खुकुरी बाँधना धर्म नहीं समझता था। लेकिन, डंडे की भारी अवश्यकता थी। पुरापाषाण-मानव का चकमक का पाषाण में किसी तरह का छिला हथियार भी नही था। उसने नाले मे पड़े बहुत से पाषाण-खंडों में से एक धारदार पत्थर उठा लिया, और कुछ ही मिनटो में झाडी में से एक अच्छा खासा मोटा डंडा काट लाया। उसी पाषाणास्त्र से उसने डंडे की कमचियाँ काटकर गाँठो को भी चिकना कर दिया, फिर छाल को छीलने लगा। मुझे डर लगा, कही वह इसमें अपनी कला न दिखाने लगे। मैं केदारनाथ जल्दी पहुँचना चाहता था। आकाश का कोई ठिकाना नही था, न जाने कब धूप छिप जाय और मैं फोटो लेने से वंचित हो जाऊँ। उसने ऊपर के थोड़े से भाग को छीलकर अपना काम खतम कर दिया और हम वहाँ से चल पड़े। म अपने पूर्वजो के इस युग से परिचित था,

किंतु बलबहादुर को इतिहास से क्या काम था, उसे तो काला अक्षर भैंस बराबर था। अवश्यकता आविष्कारकी मा होती है, इसका ही यहाँ पता नही लगा, बल्कि यह भी मालूम हुआ, कि पाषाण-युग के सिद्धहस्त मानव ने और भी अच्छी तरह् से काटने, फाड़ने, छीलने आदि कामो को अपने पत्थर के हथियारो से किया होगा। कृषि-युग के लिए आवश्यक हल को उसने पहले ही बना लिया होगा, इसमे सदेह है, किंतु वर्षा से भीगी धरती को पत्थर की कुदाल से वह खोद सकता था। आगे चलकर उसने लकडी के किसी तरह के हल मे चकमक पत्थर का फाल लगायाहोगा। फसल काटने के लिए उसका पत्थर का हसिया मध्य-एसिया और दूसरी जगहो में बहुत मिला है। टेढी लकडी में दाँत की तरह तेज धारवाले छोटे छोटे पत्थरो को जड दिया जाता था, यही उस समय का हसिया था। डठल काटने के कारण पत्थर के दाँत धीरे-धीरे अधिक चिकने हो जाते हैं, ऐसे दात बहुत से मिले है। कृषि के साथ तीसरा आवश्यक हथियार था आटा पीसने का ओखल-मूसल। आजकल ओखल-मूसल अधिकतर चावल कूटने या अनाज के छिलके को छुडाने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। मैदान में लकडी और पत्थर दोनो के ओखल होते है, किंतु मूसल लकडी का ही होता है। पहाड में पत्थर की ही ओखल होती है, जो प्राय किसी चट्टान में गढा खोदकर वनाई जाती है। आटा पीसने का साधन उस समय ओखल-मूसल नही, बल्कि खरल से अधिक समानता रखता था। ११वी शताब्दी में भी तिब्बत के घुमन्तू लोग किसानो से बदल के लाये अपने अनाज को पत्थर की बडी कुडी मे मोटे लोढे से पीसा करते थे। भारतीय विद्वान् स्मृतिज्ञान-कीर्ति (१०४० ई०) भेस बदल कर किसी पशुपाल के यहाँ चाकरी करते थे। एक दिन बडी रात तक मालकिन के हुक्म से आटा पीसते हुए उनको झपकी लग गई, और शिर लोढे से जाकर टकरा गया। सत्तू के लिए भूना जौ कुछ बिखर गया, जिसके लिए मालकिन ने गालियाँ देना जितना आवश्यक समझा, उतना बेचारे स्मृति के शिर मे लगी चोट के लिए सान्त्वना देना जरूरी नही समझा। नवपाषाण-युग में अभी न हाथ की चक्की का पता था न पनचक्की का। उस समय यही पत्थर की कुडी-लोढ़ा या ओखल-मूसल काम देता था। आज भी तिब्बत आदि देशो में सत्तू खाने का रवाज है। इससे आदमी रोटी बनाने के झझट से ही नही बच जाता, बल्कि जहाँ रोटी बनाने के लिए रोज-रोज लकडी जमा करने और चूल्हा फूंकने की तरद्दुद है, वहाँ एक दिन भूनकर सत्तू पीस लेने पर महीनो के लिए छुट्टी हो जाती है। भारतीय आर्य ईसा से डेढ़ हजार वर्ष पहले भारत पहुँचे। उनके प्राचीनतम ग्रथ ऋग्वेद में ही नही, बल्कि पीछे के भी पुराने सस्कृत-ग्रथो मे रोटी का पता बहुत कम लगता है। सत्तू (सक्तु) और छालनी तो वैदिक काल में दृष्टान्त रूप मे मशहूर हो गये थे। अनौ की खोदाई मे[1] तदूर का भी पता लगा है, जिससे मालूम होता है, कि मध्य-एसिया के नवपाषाण-युगीन मानव तदूरी रोटी से अपरिचित नही थे। शायद मिट्टी या पत्थर के तवो पर भी वह रोटी बना लेते थे।

२ पशुपालन

तिब्बत के ऊँची पथारो में गदहे की जाति का एक जानवर (क्याङ्) पाया जाता है, जो खच्चर के जितना बडा होता है। तिब्बती लोगों ने क्याङ् को पालतू बनाने की बहुत कोशिश

---

[1] Exploration in Turkistan pp 16-27

थी, किन्तु वह उसमें सफल नहीं हुआ। पालतू बनाने का मतलब अपने साथ रखना ही नहीं, बल्कि आहार में काम लेना भी है। [illegible] के लामा के लड़के के साथ मैंने एक क्याङ् को देखा था। क्याङ् का छोटा बच्चा पहाड़ में मिल गया था, जिसे अपने लड़के के साथ लामा ने पाल लिया और अब वह बड़ा होने पर भी लड़के के साथ रहता था। लेकिन, उस पर भला कौन बोझ लाद सकता था? वह प्राण देने के लिए तैयार हो जाता यदि कोई पीठ पर कुछ बाँधने की कोशिश करता। नवपाषाण युग ही में नहीं बल्कि उससे पहले भी मनुष्य के पास किसी जंगली जानवरों के बच्चों का पहुँच जाना सम्भव नहीं था और उस हरिन, कुत्ते, भेड़ या दूसरी जाति के छोटे बच्चे को किसी ने पाल लिया हो, तो कोई आश्चर्य नहीं। लेकिन असली पशुपालन तब शुरू होता है, जब कि मनुष्य अपने घर में नर-मादा पशुओं को रखकर उनकी सन्तान बढ़ाता है। मध्य पाषाण युग में कुत्ता पालतू हो गया था, यह हम बतला आये हैं। विस्तार के साथ पशुपालन का व्यवस्थित प्रबंध नवपाषाण-युग में ही हुआ। यह बतला चुके हैं, कि पालतू जानवरों की हड्डियाँ पतली और सूक्ष्म होती हैं जब कि उसी जाति के जंगली प्राणियों में उससे उल्टा पाते हैं। यदि भूमि अत्यन्त हरी भरी हो, तो, जंगली जानवर बड़े कद्दावर होते हैं। बारहसिंगे तो वनस्पति की कमी के कारण जहाँ शरीर में छोटे होते जाते हैं, वहाँ उनकी सींगें छोटी तथा शाखायें कम होती जाती हैं, तो भी उनकी हड्डियों की बनावट पालतू जानवरों जैसी नहीं होती। भेड़, गाय और सूअर मध्य-एसिया में इस समय पालतू बनाये गये। घोड़े के पालतू बनने में कुछ सन्देह है। मध्य-एसिया में ही पालतू बनाई गई भेड़ें, यहाँ से गये लोगों के साथ युरोप गईं। यद्यपि जंगली गदहा मध्य-एसिया में भी रहा होगा, किंतु गदहे और बिल्ली को सबसे पहले पालतू बनाया मिस्रियों ने। मध्य-एसिया का ऊँट दो कोहानों का होता है, जब कि अरब और दूसरी जगह के ऊँटों के पीठ पर एक ही कोहान होता है। ऊँट नवपाषाण-युग के पीछे मध्य-एसिया में पालतू बनाया गया।

३ मृत्पात्र

मिट्टी के बर्तन बनाना भी नवपाषाण-युग की एक विशेषता है। आग का पता निम्न-पुरापाषाण युग में ही लग गया था। उसी समय (युग के पिछले भाग में) लकड़ी या पत्थर से घिस कर आग पैदा करना भी आदमी को मालूम हो गया था। वह अपने मांस को आग पर भूनकर खाना जानता था। अनाज की उत्पत्ति से उसे मिट्टी के बर्तनों की अधिक आवश्यकता मालूम हुई, इसीलिए इस समय मृत्पात्रों के बनने और उनके उपयोग का विशेष प्रचार हुआ। कई-कई प्रकार और रंग के मिट्टी के बर्तन बनने लगे—पानी रखने के बर्तन, पानी पीने के बर्तन, पकाने के बर्तन आदि नाना प्रकार के भेद इसी समय प्रकट हुए। अभी कुम्हार का चक्का नहीं बन पाया था। श्रम का विभाजन भी उतना नहीं हुआ था और एक ही आदमी या परिवार पीर-बबर्ची-भिश्ती-खर सबका काम देता था। तिब्बत में आज भी कुम्हार की अलग जाति या पेशा नहीं है, लोग स्वयं मिट्टी के बर्तन बना लेते हैं। कितने ही बर्तन वहाँ आज भी कुम्हार के चक्के की सहायता से नहीं बनते। चाय रखने की खोटी (टोंटीदार हैण्डलदार सैंकी) तो बहुधा हाथ से बनाई जाती, और कितने ही हाथ उसमें अद्भुत कला का चमत्कार दिखलाते हैं। नव पाषाण-युग के मानव भी अपने हाथों से ही मिट्टी के बर्तनों बनाया करते थे। गोलाई लाने के

लिए वह मिट्टी की गोल-गोल मेखलाएँ बना कर एक के ऊपर एक रख देते और फिर गीले हाथों से भीतर-बाहर उसमें चिकना देते। यदि मिट्टी के बर्तनों को खुले आवे में पकाया जाय, तो हवा का प्रवेश निर्बाध हो जाता है। मिट्टी में लौह-कण मौजूद रहते है, पकते वक्त हवा के साथ इनके सीधे संबंध से बर्तन लाल हो जाते है। यदि बन्द हवा के साथ भट्ठी के भीतर बर्तन को पकाया जाय, तो हवा के सम्पर्क से बहुत-कुछ वञ्चित रहने के कारण बर्तन लाल न हो, भूरा या राखके रंग का हो जाता है। यदि मिट्टी में कुछ कोयला पीसकर मिला दिया जाय, तो बर्तन का रंग काला हो जाता है। यह बातें नव पाषाण-युग के मानव को मालूम थी ?

४-पाषाणास्त्र[1]

पुरापाषाण-युग के मानव के हथियार बहुत कुछ फ्लिन्ट (चकमक) पत्थर के होते थे, जो मामूली पत्थर से ज्यादा कड़ा होता है, इसीलिए उसकी मांग बहुत अधिक थी, और वह हर जगह सुलभ नहीं था। खड़िया की खानों के खड़िया के स्तर में हड्डी की तरह यह मिला करते है। नवपाषाण-युग का मानव अपने पत्थर के हथियार से खोदकर कुआँ सा बनाते हुए चकमक के स्तर पर पहुँचता था। कभी-कभी इसके लिए उसे २०-२० फुट गहरी खुदाई करनी पड़ती थी। चकमक को निकाल लेने के बाद कुएँ फिर उसी गड्ढे में कभी-कभी ढह जाते थे। बेल्जियम में स्पीनेंस की चकमक खान में पुरापाषाण-युग के दो पिता-पुत्र खनक खान के नीचे उतरकर अपना काम कर रहे थे, इसी समय उनपर से छत गिर गई और दोनो दबकर मर गये। आज भी उनका शरीर ब्रुसेल्स के राष्ट्रीय म्यूजियम में रखा हुआ है। चकमक पत्थर की दुर्लभता ही कारण थी,जिसमें कि नयी तरहके हथियारो के बनानेका दिशा-निर्देश किया। खतरा शायद कभी ही कभी होता था। खड़िया की खानो में चकमक की रीढ ढूंढ़ना और निकालना इतना समय और श्रमसाध्य था, कि आदमी ने उसकी जगह साधारण पत्थरो को भी इस्तेमाल किया। उसने देखा कि रगड़कर पालिश करने मे दूसरे पत्थरो में भी धार आ जाती है। रगड़कर पालिश करके पत्थर के हथियार बनाना नवपाषाण-युग के मानव के हथियार की सबसे बड़ी विशेषता थी। १८६६ ई० में डेनमार्क के कुछ प्रागैतिहासिको ने नवपाषाण युग की कुल्हाड़ी की परीक्षा ली। उन्हें मालूम हुआ, कि केवल इन्ही हथियारो से जंगल के फैल और दयार जैसे दरख्तो को काटा जा सकता है और इनके सहारे पेड के तने को खोदकर नाव बनाई जा सकती। नवपाषाण-युग के मानव ने घिसे पालिश किये हथियारो के बनाने के साथ-साथ पुराने ढंग के चकमकवाले पाषाण-अस्त्रो को, जो कि छांट और चैली निकालकर बनाये जाते थे, छोड़ा नही। पाषाण-अस्त्रो के अतिरिक्त उस समय लकड़ी और सींग के हथियार भी इस्तेमाल किये जाते थे।

५ जलवायु

पुरापाषाण-युग के मानव के लिए तापमान की अनुकूलता-प्रतिकूलता सब से अधिक ध्यान देने की बात थी। तापमान गिरने से सरदी बढ़ती, जिसके कारण शिकारके जानवर दक्षिण

---

[1] Gen Anth pp 152-62

की, किंतु वह उसमे सफल नही हुए। पालतू बनाने का मतलब केवल साथ रखना ही नहीं, बल्कि जानवर से काम लेना भी है। साक्या के लामा के खच्चरो के साथ मैंने एक क्याङ् को देखा था। क्याङ् का छोटा बच्चा कही से मिल गया था, जिसे अपने खच्चरो के साथ लामा ने पाल लिया और अब वह बडा होने पर भी खच्चरो के साथ रहता था। लेकिन, उस पर भला कौन बोझ लाद सकता था ? वह प्राण देने के लिए तैयार हो जाता, यदि कोई पीठ पर कुछ बांधने की कोशिश करता। नव-पाषाण युग ही में नही, बल्कि उससे पहले भी मनुष्य के पास किसी जगली जानवरो के बच्चे का पल जाना मुश्किल नही था, और ऐसे हरिन, कुत्ते, भेड या दूसरी जाति के छोटे बच्चे को कभी किसी ने पाल लिया हो, तो कोई आश्चय नही। लेकिन असली पशुपालन तब कहते हैं, जब कि मनुष्य अपने घर में नर-मादा पशुओ को रखकर उनकी सतान बढ़ाता है। मध्य-पाषाण युग में कुत्ता पालतू हो गया था, यह हम बतला आये हैं। विस्तार के साथ पशुपालन का व्यवस्थित प्रबघ नवपाषाण-युग में ही हुआ। यह बतला चुके ह, कि पालतू जानवरो की हड्डियाँ पतली और सूक्ष्म होती है, जब कि उसी जाति के जगली प्राणियो मे उसमे उल्टा पाते हैं। यदि भूमि अत्यन्त हरी-भरी हो, तो, जगली जानवर बडे कद्दावर होते हैं। बारह-सिगे तो वनस्पति की कमी के कारण जहाँ शरीर में छोटे होते जाते है, वहाँ उनकी सीगे छोटी तथा शाखायें कम होती जाती है, तो भी उनकी हड्डियों की बनावट पालतू जानवरो जैसी नही होती। भेड, गाय और सूअर मध्य-एसिया में इस समय पालतू बनाये गये। घोडे के पालतू बनने मे कुछ सदेह है। मध्य-एसिया में ही पालतू बनाई गई भेड़ें, यहाँ से गये लोगों के साथ युरोप गईं। यद्यपि जगली गदहा मध्य-एसिया में भी रहा होगा, किंतु गदहे और बिल्ली को सबसे पहले पालतू बनाया मिस्रियो ने। मध्य-एसिया का ऊँट दो कोहानो का होता है, जब कि अरब और दूसरी जगह के ऊँटो के पीठ पर एक ही कोहान होता है। ऊँट नवपाषाण-युग के पीछे मध्य-एसिया में पालतू बनाया गया।

३ मृत्पात्र

मिट्टी के बतन बनाना भी नवपाषाण-युग की एक विशेषता है। आग का पता निम्न-पुरापाषाण युग मे ही लग गया था। उसी समय (युग के पिछले भाग म) लकडी या पत्थर से घिस कर आग पैदा करना भी आदमी को मालूम हो गया था। वह अपने मास का आग पर भूनकर खाना जानता था। अनाज की उत्पत्ति से उसे मिट्टी के बतनो की अधिक आवश्यकता मालूम हुई, इसीलिए इस समय मृत्पात्रो के बनने और उनके उपयोग का विशेष प्रचार हुआ। कई-कई प्रकार और रग के मिट्टी के बतन बनने लगे—पानी रखने के बतन, पानी पीने के बर्तन, पकाने के बतन आदि नाना प्रकार के भेद इसी समय प्रकट हुए। अभी कुम्हार का चक्का नही बन पाया था। श्रम का विभाजन भी उतना नही हुआ था और एक ही आदमी या परिवार पीर-बवरची-भिश्ती-खर सबका काम देता था। तिब्बत में आज भी कुम्हार की अलग जाति या पेशा नही है, लोग स्वय मिट्टी के बतन बना लेते हं। कितने ही बतन वह, आज भी कुम्हार के चक्के की सहायता मे नही बनते। चाय रखने की खोटी (टोंटीदार हैण्डलदार मकी) तो बहुधा हाथ से बनाई जाती, और कितने ही हाथ उसमें अद्भुत कला का चमत्कार दिखलाते हैं। नव पाषाण-युग के मानव भी अपने हाथो मे ही मिट्टी के बतनों बनाया करते थे। गोलाई लाने के

लिए वह मिट्टी की गोल-गोल मेखलाऐं बना कर एक के ऊपर एक रख देते और फिर गीले हाथो से भीतर-बाहर उसमें चिकना देते। यदि मिट्टी के बर्तनो को खुले आवे में पकाया जाय, तो हवा का प्रवेश निर्बाध हो जाता है। मिट्टी मे लोह-कण मौजूद रहते है, पकते वक्त हवा के साथ इनके सीधे सबध से बर्तन लाल हो जाते है। यदि बन्द हवा के साथ भट्ठी के भीतर बर्तन को पकाया जाय, तो हवा के सम्पर्क से बहुत-कुछ वंचित रहने के कारण बर्तन लाल न हो, भूरा या राखके रग का हो जाता है। यदि मिट्टी में कुछ कोयला पीसकर मिला दिया जाय, तो बर्तन का रग काला हो जाता है। यह बाते नव पाषाण-युग के मानव को मालूम थी ?

४-पाषाणास्त्र[1]

पुरापाषाण-युग के मानव के हथियार बहुत कुछ फ्लिन्ट (चकमक) पत्थर के होते थे, जो मामूली पत्थर से ज्यादा कडा होता है, इसीलिए उसकी मांग बहुत अधिक थी, और वह हर जगह सुलभ नही था। खड़िया की खानो के खड़िया के स्तर में हड्डी की तरह यह मिला करते हैं। नवपाषाण-युग का मानव अपने पत्थर के हथियार से खोदकर कुआं सा बनाते हुए चकमक के स्तर पर पहुँचता था। कभी-कभी इसके लिए उसे २०-२० फुट गहरी खुदाई करनी पडती थी। चकमक को निकाल लेने के बाद कुऐं फिर उसी गड्ढे म कभी-कभी ढह जाते थे। बेल्जियम में स्पीनेस की चकमक खान में पुरापाषाण-युग के दो पिता-पुत्र खनक खान के नीचे उतरकर अपना काम कर रहे थे, इसी समय उनपर से छत गिर गई और दोनो दबकर मर गये। आज भी उनका शरीर ब्रुसेल्स के राष्ट्रीय म्यूजियम में रखा हुआ है। चकमक पत्थर की दुर्लभता ही कारण थी,जिसमें कि नयी तरहके हथियारो के बनानेका दिशा-निर्देश किया। खतरा शायद कभी ही कभी होता था। खड़िया की खानो मे चकमक की रीढ ढूंढना और निकालना इतना समय और श्रमसाध्य था, कि आदमी ने उसकी जगह साधारण पत्थरो को भी इस्तेमाल किया। उसने देखा कि रगडकर पालिश करने से दूसरे पत्थरो में भी धार आ जाती है। रगडकर पालिश करके पत्थर के हथियार बनाना नवपाषाण-युग के मानव के हथियार की सबसे बडी विशेषता थी। १८६९ ई० में डेनमार्क के कुछ प्रागैतिहासिको ने नवपाषाण युग की कुल्हाडी की परीक्षा ली। उन्हें मालूम हुआ, कि केवल इन्ही हथियारो से जगल के ओक और दयार जैसे दरख्तो को काटा जा सकता है और इनके सहारे पेड के तने को खोदकर नाव बनाई जा सकती। नवपाषाण-युग के मानव ने घिसे पालिश किये हथियारो के बनाने के साथ-साथ पुराने ढग के चकमकवाले पाषाण-अस्त्रो को, जो कि छांट और चैली निकालकर बनाये जाते थे, छोडा नही। पाषाण-अस्त्रों के अतिरिक्त उस समय लकडी और सीग के हथियार भी इस्तेमाल किये जाते थे।

५ जलवायु

पुरापाषाण-युग के मानव के लिए तापमान की अनुकूलता-प्रतिकूलता सब से अधिक ध्यान देने की बात थी। तापमान गिरने से सरदी बढती, जिसके कारण शिकारके जानवर दक्षिण

[1] Gen Anth pp 152-62

की ओर अधिक गरम जगहो मे चले जाते। इसलिए शिकारी को भी दक्षिणाभिमुख यात्रा करनी पडती। इसके अतिरिक्त अपने शरीर के लिए भी उसे अधिक चमडा पहनने की अवश्यकता होती। नवपाषाण-युग का मानव अब कृषि-जीवी भी था। कृषि में तापमान से भी अधिक नमी अथवा वर्षा के न्यूनाधिक होने पर ध्यान देना पडता। मध्य-एसिया में जहा मध्य-पाषाण-युग वर्षा और जल के अभाव का समय था, वहाँ नवपाषाण-युग अपेक्षाकृत अधिक आद्र था। इसके कारण मानव वहाँ वर्षा के भरोमें खेती कर सकता था। अभी नहरो द्वारा सिंचाई करने का समय नही आया था। इस नमी के कारण मनुष्य के स्वास्थ्य पर बुरा असर पडता था, जहाँ यह वनस्पति के लिए अधिक लाभदायक सिद्ध होती थी, वहाँ उसके कारण मक्खियाँ और मच्छरो को भी बहुत सुभीता था, जिनकी भरमार से तरह-तरह की बीमारियाँ होती थी। मृत्यु का तुलनात्मक अध्ययन भी हमें इसी परिणाम पर पहुँचाता है। भिन्न-भिन्न युगो के भिन्न-भिन्न आयु के लोगो में प्रतिशत मृत्यु-सख्या निम्न प्रकार थी[1]—

युग आयु	०-१४	१५-२०	२१-४०	४१-६०	६० से ऊपर
मध्य-पुरापाषाण	४०	१५	४०	५	
उपरिपुरापाषाण	२४ ५	६ ८	५३ ६	११ ८	
मध्य-पाषाण	३० ८	६ २	५८ ५	३	१ ५
नवपाषाण	,,	,,	,,	,,	,,
प्राचीनपित्तल (आस्ट्रिया)	७ ९	१७ २	३९ ६	२८ ६	७ ३
१९वी सदी (,,)	५० ७	३ ३	१२ १	१२ ८	२१
२०वी सदी (,,)	१५ ४	२ ७	११ ६	२२ ६	४७ ४

यद्यपि यह विवरण मध्य-एसिया नही मध्य-युरोप (अस्ट्रिया) का है, तो भी हम मध्य-एसिया के नवपाषाण युग के बारे में भी कह सकते है, कि उसके अधिकाश मानव २१ से ४४ वर्ष की उमर में मर जाते थे, उसके बाद १४ वर्ष से नीचे के लडके ज्यादा मरते थे। ४० वर्ष से ऊपर जीनेवाले बहुत थोडे ही आदमी होते थे।

६ अनौमें नवपाषाण-युग[2]

पश्चिमी मध्य-एसिया के दक्षिण-पश्चिम कोण पर तुर्कमानिया सोवियत गणराज्य की राजधानी अश्कावाद से थोडी दूर पश्चिम अनौ के प्राचीन ध्वसावशेष है, जिनकी खुदाई १९०३ मे अमेरिकन पुरातत्त्ववेत्ता राफेल पम्पेलीने की थी। यह स्थान इरान और सोवियत की सीमा पर अवस्थित कोपेत दाग पर्वतमाला से थोडा उत्तर में है। पम्पेलीने यहाँ ध्वसावशेषो की खुदाई के अतिरिक्त अश्कावाद के एक पाताल-कूप के भिन्न-भिन्न स्तरो की भूस्थिति का भी परिचय दिया है। इस कुएँ में २२ सौ फुट तक नल धँसाया गया था, तो भी चट्टान का पता नही लगा

[1] Progress and Archaeology p 111

[2] Exploration in Turkistan vol I p 16

था। २१सौ फुट पर भूरे रग की चिकनी मिट्टी मिली थी। उसके ऊपर कभी पत्थर के ढोके, कभी भूरी मिट्टी, १८ सौ फुट पर वालू, १७ सौ फुट पर गोल-गोल पत्थर इसी तरह आगे इन्ही चीजो को पाया गया। ६०० से ८०० फुट की गहराई मे हिमयुग का प्रभाव दिखाई पडा। इन स्तरो से पता लगा, कि मध्य-एसिया के जलवायु में समय-समय पर परिवतन होता रहा। अनौ में खुदाई तीन जगहो पर हुई थी, जिसमें उत्तरी कुर्गान (उत्तरी डीह) की खुदाई वतमान तलसे २० फुट नीचे तक की गई। यह कुर्गान आस-पास के धरातल से २० फुट ऊचा है। उत्तरी कुर्गान मे नवपापाण-युग और अनव-पापाण युग के अवशेष मिले थे। अनौ के नवपापाण-युगीन लोग कच्ची ईंटो के आयताकार मकानो मे रहते थे। घरो की छते आज की तरह मिट्टी की नही, वल्कि फूस की होती थी। आजकल वर्षा के अत्यन्त कम होने के कारण सारे मध्य-एसिया में मिट्टी की छतें होती है। यह मिट्टी की छतें कौशांवी और रायवरेली से पच्छिम उराल पवतमाला तक चली जाती हैं। पूरव मे मिट्टी की छतो का स्थान फूस की झोपडियां या खपड़ैलके मकान लेते है। यही अवस्था प्रागैतिहासिक कालमे चली आ रही है। पूरवमे मिट्टीकी छतोका रवाज नही है, उसका कारण मिट्टीका कमजोर होना नही, वल्कि वर्षाका आधिक्य है। अनौमें फूसकी झोपडियाँ यही वतलाती है, कि ६ हजार वर्षपूव वहाँ आजकी अपेक्षा वर्षा अधिक होती थी। तो भी वह वहुत अधिक नही होती थी, नही तो कच्ची ईंटोका स्थान मिट्टीकी रद्देवाली दीवारें लेती। पक्की ईंटोका वनाना तभी सुकर था, जब कि आस-पासमें जगल काफी होता। करीव-करीव उसी समयसे थोडा पीछे मोहनजोदडोमें पक्की ईंटोका उपयोग होता था।

अनौ के मानव हाथसे मिट्टीके वतन भी वनाते थे, जो पतले किंतु देखनेमें भद्दे होते थे। अपने वर्तनोपर वह भिन्न-भिन्न ज्यामितीय आकृतियाँ वनाते थे। मिट्टीकी तकली पर वह उन कातते थे, लोढे और कुडीसे अनाज पीसते थे। उनकी खेती गेहूँ और जौकी थी, जिसकी भूसीको मोटे वतनोंके वनानेकी मिट्टीमें सान लेते थे। उनके शिकारके जन्तुओमें सूअर, लोमडी, भेडिया, हरिन आदि थे। सीनेके लिये हड्डीका सूआ इस्तेमाल करते थे। इनके हथियार छिले हुए चकमक पत्थरके होते थे। लकडीके खडे और पत्थरकी मुडीकी गदा इनका युद्धका हथियार था। तीर और भालेके फल या गोफन (ढेलवाँस) के पत्थरका भी उपयोग इन्हें मालूम नही था। इनके शिकार किये हुए पशु ऐसी आयु और आकारके थे, जिन्हें आसानीसे मारा जा सकता। घरके भीतर मिट्टीके फशके नीचे यह अपने वच्चोको दफना देते थे, साधारण मुर्देको वाहर फशके नीचे दवाते थे। शवके साथ गुरिया अन्य उपभोगकी चीजें और खान-पानकी वस्तुएँ भी दफनाते थे। शायद वच्चे देवताको प्रसन्न करनेके लिए घरकी फर्शके भीतर वलि रूपमे दवाये जाते हो। अन्दमनके आदि-निवासी भी वच्चोको घरके भीतर और वडोको वाहर दफनाते है। दाँत न निकले वच्चे रोममें भी दफनाये जाते थे, जवकि सयानो को आगमें जलाना होता था। भारतके हिंदुओमें यह प्रथा आज भी देखी जाती है। सवसे नीचे १० फुट मोटाईवाले प्राचीनतम स्तरमें पालतू पशुओंका पता नहीं लगता, वल्कि हाँ, शिकार किये हुए जगली पशुओंकी हड्डियाँ मिलती है। पम्पेलीने नवपाषाण-युगीन स्तरमें निम्न चीजोंका भाव और अभाव उल्लिखित किया है[1]—

---

[1] Exploration in Turkistan p. 60

भाव	अभाव
हस्तनिर्मित रेखा-रंजित मृत्पात्र	पालिश किया पात्र या गुरिया
गेहूँ-जौकी खेती	पक्की ईंटें
कच्ची ईंटके आयताकार गृह	बर्तनकी मुठिया
हड्डीका सूआ	उत्कीर्ण पात्र
चकमकके सीधी धारवाले हथियार	सोना-रूपा
मिट्टीकी तकली	राँगा
ताबे-सीसेका हलका-सा ज्ञान	लोहा
पीसनेका पत्थर	धातुके फल
फीरोजेकी मणियाँ	पशु, मनुष्य या वृक्षके चित्र
दीर्घश्रृंग गाय, सूअर, घोडे	कुत्ता
घरमें सिकुडे शिशुकी समाधि	ऊँट
गौ, भेड, हरिन, बारहसिंगा, घोडा, भेडिया और सूअरका शिकार	बकरी

इस स्तरमें जिन चीजोका अभाव था, उनमेंसे कितनी ही ऊपरके स्तरोमें मिली।

§२ अनवपाषाण-युग[1] (३००० ई० पू०)

जैसा कि नामसे प्रकट है, यह एक अवान्तर युग था, जब कि पाषाण-युगका अन्त हुआ, किंतु धातु-युगका आरम्भ नही हो पाया। अनौ की खुदाई में हम देख आये हैं, कि इससे पहलेके युगमे भी तावे-सीसेका हलका-सा परिचय था, किंतु असली धातु-युगके आरंभ होनेके लिये आवश्यक है, कि आदमी धून (धातुपाषाण) को गलाकर धातु बना सके। यह भी याद रखना चाहिए, कि पाषाण-युगका अन्त दुनिया के सभी देशोमें एक समय नही हुआ। जहाँ मेसोपोतामियामें पाषाण-युगका अन्त ३५०० ई० पू० में होता है, वहाँ डेन्माकमें १६०० ई० पू० में और न्यूजीलैण्डमें उसका अन्त सन् १८०० ई० में ही जाकर होता है, जबकि वहाँके आदिम निवासियोका युरोपियन जातिसे सम्पर्क होना है। अनौमें इस स्तरको पम्पेलीने द्वितीय संस्कृति कहा है, जो कि ऊपरके तलसे २५ फुट नीचे है। पम्पेलीने इसका काल ६०००-५००० ई० पू० माना है, लेकिन अधिकाश विद्वानोके मतसे यह समय ४००० ई० पू० से अधिक पुराना नही हो सकता। इस कालमें निम्न वस्तुओका भाव और अभाव देखा जाता है—

भाव	अभाव
मृत्पात्र पूर्ववत्	कुम्हारका चक्का
तन्दूर पात्र	पक्की ईंटें
घर पूर्ववत	बर्तनकी मुठिया
चकमक का हँसिया, सूआ, गदा और गोफन	उत्कीर्ण पात्र

---

[1] 'Le' Humanite' Prehistorique, 590 95

भाव	अभाव
मिट्टीकी तकली	सोना-रूपा
तांबे और सीसेका थोडा-सा ज्ञान	रांगा-पीतल
पीसनेका पत्थर	लोहा
छोटी-बड़ी सींगवाली गायें, सूअर, घोड़े,	धातुके फल
बकरी, ऊँट, कुत्ता और मुड़िया भेड़	पशु और मनुष्यके चित्र
घरमें शिशु-समाधि	

अनवपाषाण-युगमें खेतीके अतिरिक्त पशुओंको पालतू बनानेका भी प्रयास देखा जाता है, यद्यपि हथियारोंमें अभी कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। हत्थेके बिना मिट्टीके बर्तन अब भी बनते थे, लेकिन उनको लाल और दूसरे रंगकी रेखाओंसे अलंकृत किया जाता था। तांबेके छुरे का होना संदिग्ध-सा मालूम होता है। कुत्ता, बकरी, ऊँट और बिना सींगकी भेड़को इस समय पालतू बना लिया गया था। अनौमें इससे पहलेके स्तरमें भी फीरोजेकी मणियाँ मिली हैं। तरह-तरहके आभूषणोंसे शरीरको सजाना और पहलेसे चला आता था। फीरोजाकी खाने अनौ से थोडा ही दक्खिन ईरानके भीतर मिलती है। ऊँट शायद पूरबसे लाकर पालतू किये गये।

§३ मानव-जाति

मुस्तेर मानव आजके सपियन मानवसे बहुत भेद रखता था। उसको आजकी किसी जातिमें मिलाना संभव नहीं है। यद्यपि प्रकृतिके और स्थानोंकी तरह प्राणियोंमें भी विकास सपकी गतिमें ही नहीं होता, बल्कि कभी-कभी मेढ़क-कुदानकी तरह एकाएक जाति-परिवर्तन भी हो जाता है। इस नियमके अनुसार हजारों वर्षोंमें एक मानव-जातिसे विलक्षण शरीर-लक्षणवाली दूसरी मानव-जाति पैदा हो सकती है। इस प्रकार तेशिकताश-मानव ३०-३५ हजार वर्ष बाद मध्यपाषाण-युगके मानवके रूपमें परिणत हो सकता है, किंतु तो भी इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलता। मध्यपाषाण-युगके अन्तमें जो मानव अपने पालतू कुत्तोंके साथ मध्य-एसियासे पहले-पहल युरोपकी ओर गया, वह हिंदू-युरोपीय जातियोंका पूर्वज था। इसका यह अर्थ नहीं समझना चाहिए, कि हिंदू-युरोपीय जातियोंके निर्माणमें किसी और रक्तका संमिश्रण नहीं हुआ है। अनौमें मिली नवपाषाणयुगकी खोपड़ियाँ दीर्घकपाल थीं। विशेषज्ञ बतलाते हैं, कि इन खोपड़ियोंमें वही सारे लक्षण मिलते हैं, जिन्हें कि भूमध्यीय जातिकी विशेषता माना जाता है। उनमें मंगोलायित खोपड़ीसे कोई समानता नहीं है। यह खोपड़ियाँ बतलाती हैं, 'भूमध्यीय मानव-जातिकी एक शाखा मध्य-एसियाके भीतर घुस गई थी।'

मध्य-एसियाके भिन्न-भिन्न भागोंमें जिन जातियोंके अवशेष मिले हैं, उनपर एक विहगम दृष्टि डालनेसे मालूम होगा, कि अन्तिम हिमयुगके बीच तथा उसके कई सहस्राब्दियों पीछे तक मुस्तेर (नेयंडर्थल) मानव यहाँ रहता था। जीवन-निर्वाहका जब तक स्थायी साधन नहीं प्राप्त हो, और जब तक प्रकृति और प्राणि शत्रुओंसे अपनी रक्षा करनेमें सफल नहीं हो जाये, तब तक प्रजननकी अपार क्षमता रहने पर भी मानव-वंश तेजीसे नहीं बढ सकता। अपने घातक शत्रुओं पर कुछ हद तक विजय करके ही मानव फल-फूल सकता है। गुहाओंमें रहनेवाला मुस्तेर-मानव मध्य-एसियामें बहुत ही कम सख्यामें रहा होगा, यद्यपि, इसका यह अर्थ नहीं कि उसके अवशेष

अभी जिन दो-चार जगहोंमें मिले ह, उन्हें छान और स्थानोमें वह नही मिल सकते । मध्यपाषाण युगीन मानव भी बहुसंख्यक नही हो पाया होगा, ना भी मुस्तेरसे उसकी सख्या अवश्य बडी होगी। मध्यपाषाण-युगका मानव आधुनिक सपियन-मानव-वशसे सबध रखता था और वही शायद हिंदू-युरोपीय जातियोका पूवज था । यह भी बतलाया जा चुका है, कि इसी मानवने नवपाषाण-युगीन सस्कृतिको अपने साथले जाकर युरोपमे उसकी नीव डाली। युरोपमे जो खोजे हुईह,उनमे यह बात मान ली गई है, कि मध्य-एसियामे आया यही मानव यरोपकी पुरानी जातियोको अपनी सस्कृति और शस्त्रसे पराजित करनेमे सफल हुआ, जिसके परिणामस्वरूप पुराने निवासियोमेंसे कितने ही या तो मर-हर गये, या अपने पुराने निवासस्थानको छोडकर एस्किमो लोगोंके रूपमें दूर किनारो पर भाग गये, अथवा विजेताओसे घुल-मिल गये । मध्य-एसियामें मध्यपाषाण-युगीन मानवो (हिंदू-युरोपीय जातियोके पूवजो)के कुछ भाग रह गये या नही ? अभी तक जो अनुसधान हुआ है, उससे यही पता लगता है, कि अगले नवपाषाण-युगमे अनो या ख्वारेज्मके नवपाषाण-युगीन ध्वसावशेषोंमे जिस मानवका पता लगता है, वह भूमध्यीय जातिका था । साथ ही यह भी स्वीकार किया जाता है, कि मध्य-एसियासे जानेवाले हिंद्-युरोपीय जातिके पूवज युरोपमे जाकर नवपाषाण-युगीन सस्कृतिका प्रचार करते ह, अर्थात् नवपाषाणास्त्रोके साथ जौ-गेहूँकी खेती और गाय-भेंडके पालन करनेका काम इन्ही के द्वारा वहाँ आरभ होता है, इससे सिद्ध होता है, कि नवपाषाण-युगमे पुरातन हिंदू-युरोपीय मानवका सबध मध्य-एसियासे था । भूमध्यीय जातिका ख्वारेज्म तक घुस जाना क्या यह नही बतलाता, कि पुरातन हिंदू-युरोपीय लोग केवल जलवायुकी प्रतिकूलताके कारण ही पश्चिमकी ओर भागनेके लिए मजबूर नही हुए, बल्कि भूमध्यीय जातिके यह मानव-शत्रु भी उनके पीछे पडे हुए थे ?

मुस्तेर, प्राग्-हिंदू-युरोपीय और दीघकपाल भूमध्यीय इन्ही तीन जातियोका इस समय तक मध्य-एसियामें होना सिद्ध होता है। इन तीनोका सबध किस तरहका रहा, यह अभी अधकारमें है । नवपाषाण-युगमे भी पहलेसे मध्य-एसियाकी भूमि की अपनी विशेषता चली आती है, जिसके कारण उसके गभमे ऐसे प्रकाशके निकलनेकी सम्भावना है,जो मानवके भूले हुए इतिहास-को अँधेरे से उजाले में लादें । अतीतकालमें प्यासी-भूमि, किजिलकुम और कराकुमके विशाल रेगिस्तान मानवके लिए सबसे बडे शत्रु रहे ।इन रेगिस्तानोके भीतर भूलकर हजारोने अपने प्राण गँवाये । इतना ही नही रेगिस्तान हमेशा मानवकी भूमि पर आक्रमण करता रहा, साल-साल वह खेतीकी भूमि ही नही, गाँव और नगरोंको उदरसात् करता रहा । आज केवल ख्वारेज्मके रेगि-स्तानोमें ही २०० नगरो और बस्तियोके ध्वसावशेषोका पता लगा है । सोवियत इतिहासज्ञ और पुरातत्त्ववेत्ता इन ध्वसावशेषोंके महत्त्वको समझते हैं । वह जानते है, कि जिस तरह बालूने अपनी ध्वस-लीला दिखलानेमें कोई कसर उठा नही रखी, उसी तरह उसने बहुत सी अमोल ऐतिहासिक सामग्रीको अपने नीचे सुरक्षित रक्खा है। सोवियत सरकार दूसरे सास्कृतिक कार्योंकी तरह पुरातत्त्वके अनुसधानो पर भी बडी उदारतासे पैसे खर्च करती है। पिछले १४-१५ वर्षोंसे ख्वारेज्मके रेगिस्तानमें यह अनुसधान जारी है । १९४९ ई० मे इसके लिए हवाई जहाजोने १० हजार मीलोकी उडान की। मोटरो, लारियोका बडे व्यापक रूपमें उपयोग किया गया। उस साल ७ दजनके करीब चमपत्र पर लिखे अभिलेख इस मरुभूमिने दिये । यह अभिलेख उस भाषामें लिखे हुए हैं, जो लुप्त हो चुकी है। १७०० वष पुरानी भाषाका नमूना प्राप्त करना पुरातत्ववेत्ताओंके

लिए कम प्रसन्नताकी बात नही है। पुरातात्त्विक अभियानोके अतिरिक्त रेगिस्तानकी भूमिमेसे करोडो एकड जमीनको खेत और बगीचेके रूपमे परिणत करनेके लिए वक्षु नदीको कास्पियन सागरसे मिलानेवाली महानहरकी खुदाई हो रही है। इसमे जहाँ निजन मरुभूमि पर मानव वस्तियाँ वसेंगी, वहाँ पुराने ध्वसावशेषोके भीतरमे मानव-इतिहासके रहस्यको ढूढ निकालना आसान होगा।

अनव पाषाण-युगके बाद हम धातु-युगमे प्रवेश करते है। कृपि और धातुशिल्प मिलकर ग्रामो और नगरोको स्थायित्व प्रदान करते हैं, किंतु मध्य-एसियामे घुमन्तू जीवनका सवथा उच्छेद हाल तक नही हो पाया था। नवपाषाण-युगमे भी घुमन्तू और स्थायी निवासियोका सघप रहा, जो सघर्ष सोवियत क्रान्तिके बाद ही खत्म हुआ। बीचका सारा मध्य-एसियाका इतिहास घुमन्तूओ और अघुमन्तूओके सघपका इतिहास है। अघुमन्तू दासता, अवदासतामे होते समान्तवाद तक पहुँच गये थे, जबकि घुमन्तू जातियाँ वहुत-कुछ जनयुग अथवा जन-सामन्त युग तक ही अपने जीवनको सीमित रखती रही।

स्रोत-ग्रथ

1 General Anthropology (Boas)
2 Exploration in Turkistan (R Pumpelly) vols I, II
3 Progress and Archaeology (V G Childe)
4 Le' Humanitie' Prehistorique (J de Morgar)
5 Our Early Ancesters (M C Burkitt)
6 Geology in the Life of Man (Dumcan Leith)
7 The Evolution of Man (G Elliot Smith, London 1927)
8 The Skeletan Remain of Early Man (G E Smith)
9 Antiquity of Man, 2 vols (Arthur Keith 1925)
10 New Discovery relating to the Antiquity of Man (A Keith, 1931)

भाग २

धातु-युग (३०००-७०० ई० पू०)

अध्याय १

ताम्र-युग (२५००-१५०० ई० पू०)

१ युगकी विशेषता

पाषाण-युग मानवका प्रथम युग है, जो भिन्न-भिन्न विद्वानोके मतानुसार ३ लाख या १ लाख वर्ष तक रहा। ताम्र-युगके साथ मानव धातु-युगमें प्रवेश करता है, जो आजसे पहिले ७००० से ४५०० वर्ष तक भिन्न-भिन्न देशोमें चला आया। सभी देशोमें ताम्रयुग एक साथ नही शुरू हुआ। मिस्र और मेसोपोतामियामें उसका आरभ सबसे पहले (३५०० ई० पू०) हुआ। हो सकता है, भूमध्यीय जाति से मध्य-एसियामें घुस आनेके समय हिंदी-युरोपीय-पूर्वजोने धातुकी कला सीखी। किसी देशमें ताम्रयुग और पित्तलयुगमें अन्तर रहा है, जैसा कि मध्य-एसियामें २५०० से १५०० ई० पू० तक ताम्रयुग रहा और १५०० से ७०० ई० पू० तक पित्तलयुग, परन्तु कई देशोमें दोनोका अन्तर इतना कम रहा, कि पाषाणयुगसे सीधे पित्तलयुगमें मानवका प्रवेश माना जा सकता है।[1] पाषाणयुगके अन्तमें भी कही-कही प्राकृतिक रूपमें तावेके कठोर डले (ओहायो भाँति) आदमीको मिल जाते थे, जिन्हें विना आगमे गरम किये वह ठोंक-पीटकर तेज वना लेता था, किंतु ऐसे वनाये हुए हथियारोके कारण इसे हम ताम्रयुग नही मानते। ताम्रयुग तब शुरू होता है, जब कि आदमी तावेकी धून (धातु-पाषाण) को लेकर उसे कोयलेकी आगमें पिघले द्रव्यको अपने भिन्न-भिन्न उपयोगके हथियारोके रूपमें ढालने लगा। यह विद्या आदमीको वहुत पीछे मालूम हुई। प्राचीन मानव धधकते लकडीके कोयलेको एक गढ़ेकी पेंदीमें रख देता, और उसके ऊपर एकतह धून और एक तह कोयलेको रखता ऊपर तक भर देता। फिर फूँकनेकी फोफियाँ लगाकर कई आदमी हवा देने लगते, जैसा कि आज भी कही-कही सोनार करते देखे जाते हैं। पीछे आदमीको मालूम हुआ, कि मुँहसे फूँकने की जगह चमडेकी भाथीसे हवा देना ज्यादा अच्छा है। इस प्रक्रियासे वह धूनसे धातु अलग करने लगा। १९ वी शताब्दीके मध्य तक कुमाऊँ-गढवालमें और मध्य-प्रदेशमें आज भी कहीं-कही जनजातियोने धूनसे धातु निकालनेकी यही विधि अपना रखी है। भाथीमें अवश्य इन लोगोने कुछ विकास किया, और कहीं-कही आदमी हाथकी जगह पैरसे चलनेवाली वडी-वडी भाथियोका इस्तेमाल करने लगे।[2]

---

[1] किसी-किसीका कहना है कि भारतमें नवपाषाणके वाद सीधे लौहयुग आया (Gen Anth pp 199, 201) पर ताँबेके हथियार मोहनजोदरो और बहादुरगढ (हरद्वार) में मिले हैं।

[2] Our Early Ancestors, pp 185-94

२ ताम्र-उद्योग

तांवा वनाना पत्थर, हड्डी या लकडीको छीलकर हथियार वनाने जैसा नही था। तांवेकी धूनमें ओषिद्, सलफिद् और सिलिकेत (कार्वोनेत) मिला रहता है। उनसे वहुत तेज तापमानमें पिघला कर ही तांवेको अलग किया जा सकता है। तांवा पिघलानेके लिए भारी गर्मीकी अवश्यकता होती है। १०८३° सेंटीग्रेटके तापमानमें तांवा पिघलकर पानीहो जाता है और अपने अन्य साथियोकी अपेक्षा अधिक भारी होनेके कारण उसका पानी नीचे चला जाता है, जिसे नीचेके छेद से अलग करते हुए भिन्न-भिन्न प्रकार के सांचो म ढाल लिया जाता है। तांवे के इस प्रकार के निर्माण के साथ-साथ मानव पाषण-युग से धातु-युग मे ही नही आया, वल्कि वह अव वैज्ञानिक युग का मानव वन गया। तांवा वनाना रसायन-शास्त्र का वाकायदा प्रयोग है। इसके साथ मानव के शिल्प में विशेष परिवतन हुआ। सस्कृत और पाली के पुराने ग्रथो मे लोह का अथ तावा होता है सिहलद्वीप (लका) में अशोक के पुत्र भिक्षु महेन्द्र के लिये जो महाविहार वनाया गया था, उसमें एक निवास का लोह-महाप्रसाद (लोहे का महल) नाम इसलिए पडा था, कि उसकी छते तांवे की थी। इससे पता लगता है, कि आज से २१-२२ सौ वर्ष पहले भी तांवे के लिए लोह शब्द प्रयुक्त होता था। आजकल लोहार लोहे के काम करनेवाले को कहा जाता है। पहाड में तांवे के वतन वनानेवालो को तमोटा या टमटा कहते हैं। नीचे मैदान में ताम्रकार नाम की कोई जाति नही मिलती, उनके स्थान पर वहाँ कसेरे हैं, जो कांसे, पीतल के वर्तनो को वनाते है। ताम्र-युग में लोहार या लोहकार जैसे शब्द का प्रयोग ताम्रकार के लिए होता था।[1]

इस प्राचीनतम धातु के लिए भारतीय आर्यो की भाषा में अयस् शब्द का भी प्रयोग होता था, जो कि पीछे केवल लोहे के लिए वर्ता जाने लगा। फिर तांवे और लोहे में भेद करने के लिए तांवे को लोह-अयस् और ताम्र-अयस् तथा लोहे के लिए कृष्णायस (काला-अयस्) शब्द का प्रयोग होने लगा। भारत में आने के कई शताब्दियो वाद हिंदी-आय असली लोहे से परिचित हुए।

ताम्र के आविष्कार के साथ साथ हम एक नये उद्योग को स्वतन्त्र रूप से स्थापित होते देखते हैं। पत्थर, लकडी या हड्डी के हथियार के लिए कच्चे माल को विशेष प्रयत्न से तैयार करने की आवश्यकता नही होती, उनको छील-घिसकर किसी हथियार का रूप देना, उस युग का हरएक आदमी थोडा-वहुत कर सकता था। हां, अधिक कुशल और अभ्यस्त शिल्पी की वनाई चीजें अधिक सुन्दर और उपयोगी होती थी। इसके कारण भले ही लोग उसकी खुशामद करते रहे हों। लेकिन, वह ऐसी स्थिति में नही था, कि शिकार और पीछे कृषि और पशुपालन की जीविका को छोडकर पत्थर छीलने का ही व्यवसाय करने लगता। यह भी स्मरण रखने की वात है, कि जिस तक्ष (छेदने, छीलने) धातु का प्रयोग सस्कृत में केवल लकडी के छीलने-छेदने के लिये ही होता है, वह रूसी भाषा में केवल पत्थर छीलने-छेदने के लिए इस्तेमाल होता है। आरभिक ताम्रयुग में हिंदी-युरोपीय जाति की वह शाखा पूर्वी-युरोप से मध्य-एसिया में लौट आई थी, जिसके वशज

---

[1] ४००० और ३००० ई० पू० के वीच नियरऐसिया में तांवा पिघलाकर ढालने का आविष्कार हुआ। Progress and Archaeology p 32)

आज आर्य और शक के नाम से प्रसिद्ध हुए, यह संदिग्ध-सा है। किंतु, ताम्रयुग के मध्य या पित्तल-युग के आरंभ में (२००० ई० पू० के करीब) वह अवश्य वहाँ पहुँच गये थे।

३ व्यापार[1]

ताम्रयुग के साथ लोहारो का स्वतंत्र पेशा स्थापित हुआ। गाँवो में अलग लोहारशाला कायम हुई और कुछ आदमी नियमित रूप मे ताम्र-उत्पादन के व्यवसाय म लग गये। इसके साथ ही ताँबे की माँग बहुत बढ गई। पत्थर के हथियारो के सामने ताँबे के हथियार उतने ही शक्तिशाली थे, जितने तलवार के सामने बारूद से चलनेवाले हथियार। ताँबे के हथियार केवल युद्ध और शिकार के लिए ही उपयोगी नही थे, बल्कि कृषि में भी उनका अधिक और अधिक उपयोग होने लगा। जगलो और झाडियो को साफ करके खेत बनाना पाषाण-युग में मुश्किल काम था, लेकिन ताँबे के कुल्हाडे उसको बहुत आसानी से कर सकते थे। यदि मनुष्य को अवश्यकता होती, तो जगलो और झाडियो के लिए उस समय खैरियत नही थी। हलके फाल और हँसिया में भी ताँबे का उपयोग अधिक होने लगा। इतनी माँग होने के कारण अगर ताँबे ने व्यापार का स्थायी रास्ता निकाला, तो इसमें आश्चर्य करने की अवश्यकता नही। ताँबा उस वक्त की बहुत दुलभ चीज थी, और उसके बनाने की विद्या तथा आवश्यक कच्चे माल सब जगह सुलभ नही थे। ऐसे मँहगे उद्योग का सब जगह जल्दी फैलना आसान काम नही था। इसीलिए दुनिया के भिन्न-भिन्न भागो मे ताम्रयुग के फैलने में २५०० ई० पू० मे १८०० ई० तक का समय लगा। इससे पहले खाने-पीने की चीजों का आदान-प्रदान भले ही होता रहा हो, किंतु वह बाकायदा व्यापार नही था। शिकारी अवस्था में जहाँ आदमी को कभी-कभी शिकार के न प्राप्त होने के कारण भखे रहना पडता, वहाँ शिकार मिल जाने पर मास को खतम करने की जल्दी भी पड जाती थी, जिसमें कि वह सडने न पाये। कनौर (किन्नर) तथा कितने ही दूसरे प्रदेशो में आज भी यह प्रथा देखी जाती है शिकार को मार लेने पर शिकारी जोर से चिल्लाकर पुकारता है—'है कोई यहाँ है तो आके अपना हिस्सा ले।' आज यद्यपि शिकारी अपनी पलीतेवाली बन्दूक को इस्तेमाल करते हुए वैयक्तिक रूप से शिकार करता है, लेकिन तब भी उसके पुराने सस्कार उसे सामूहिक शिकार के युग का स्मरण दिलाते हैं, इसलिए वह आसपास में खडे किसी आदमी को भी उसमें भागीदार बनाना चाहता। शिकारी समझता था, कि यदि उसका शिकार बडा जानवर है, तो वह और उसका परिवार अकेले जल्दी मास को खा नहीं सकता, वह सड जायगा। ऐसे मास के साथ क्रय-विक्रय वथा अदला-बदली करने का भी कहाँ सुभीता हो सकता था? इसीलिए व्यापार करने की जगह पर, हमारी पुरानी विवाह आदि प्रथाओं के अवसरो पर न्यौता के रूप में चीजो के भेजने जैसा रवाज था, जिसका यही अर्थ था, कि इस वक्त आपके कार्य-प्रयोजन में हम सहायता करते हैं, हमारे कार्य-प्रयोजन में यदि क्षमता हो, तो आप भी इसी तरह सहायता करें।

कृषियुग और पशुपालन के साथ वैयक्तिक सम्पत्ति की स्थापना हुई। सम्पत्ति भी रोज-रोज के खाने से अधिक जमा होने लगी, इसीलिये उधार देने या अदला-बदली करने का रवाज

---

[1] वही P 59

चला। लेकिन, अदला-बदली से, विशेषकर जब कि उतनी ही चीजें मिलती हो, बाकायदा व्यापार-प्रथा स्थापित नही हो सकती और न सारे समय व्यापार करनेवाला वणिगृवर्ग स्थापित हो सकता था। ताम्रयुगने व्यापारके लिए सबसे अधिक सुभीता प्रदान किया, क्योंकि ताँबेके हथियार केवल विलास की चीज नही थे। वह युद्ध और जीविका दोनो के सबसे उपयोगी साधन थे, उनकी हर जगह माग थी और माँगके अनुसारही उनका मूल्य भी अधिक था। अब अनाज, मास या पशुओं का मूल्याकन ताँबे के टुकडो या हथियारो म किया जाने लगा और बराबर के भार के खाद्य को ढोने की जगह छोटे से ताँबे के टुकडे को ले जा बहुत सी खाद्य-सामग्री लाई जा सकती थी। ताम्रयुग ने देशो की छोटी-छोटी सीमाओ को व्यापार के लिए तोड दिया। व्यापार के लिए अब यातायात का सुभीता ढूँढा जाने लगा। मानव-दिमाग सोचने लगा, कि कैसे थोडे समय में अधिक से अधिक चीजो को दूर से दूर जगहो में पहुँचाया जा सकता है। इसीका परिणाम हुआ, नदियो और समुद्रों का में नौका सचालन और धरती पर गाडी या रथ का सचार।

४ हथियार

ताँबे के हथियारो के बनने के पहले पाषाण-युग में भी बहुत तरह के पत्थर, हड्डी या लकडी के हथियार बनने लगे थे। काटने के लिए जहाँ कुल्हाडे बनते थे, वहाँ मांस काटने या छीलने आदि के लिये पत्थर की छुरियाँ भी बनती थी। तीर और भाले के फल भी बहुत बना करते थे। ताँबे के हाथ में आने पर आदमी पाषाण-युग के हथियारो की नकल करने लगा। ताबे के कुठारो की शक्ल वही थी, जो कि पत्थर के कुल्हाडो की। हाँ, समय बीतने के साथ उसमें और कितने ही भेद शुरू किये गये। भाले और तीर के फल भी पाषाण-युग की नकल पर ही बने। पत्थर का हथियार छुरे या कटारी बनानेके लिए नमूना हो सकता था, लेकिन ताँबेके हथियार को काफी लम्बा बनाया जा सकता था, इसलिए इसी युग मे पहले-पहल लम्बी सीधी तलवारें बनने लगीं। पाषाण-युग के मानव को अस्तुरे की अवश्यकता नही थी। उसको अपनी दाढी-मूँछ बढ़ानेमें कोई शौक का खयाल नही था, बल्कि वह उसे सहजात समझकर बुरा नहीं समझता था। लेकिन, ताम्रयुग में आकर अब इच्छानुसार दाढी-मूँछ बनाने के लिये अस्तुरा भी आन उपस्थित हुआ। हँसिया, फरसा, दोहरा फरसा, बसूला आदि बहुत तरह के हथियार बनने लगे।

मानव को आदिकाल से ही शरीर को सजाने का शौक था। वह पहले फूलो-पत्तो, दाँतो, कौडियो, हड्डियो आदि से शृगार किया करता था। नवपाषाण-युग मे मध्य-एसिया का मानव फीरोजा और दूसरे कितनी ही तरह के रग-बिरगे पत्थरो के आभूषण बनाता था। ताम्रयुग में अब ताँबे के बहुत तरह के आभूषण बनने लगे। लौहयुग में लोह के आभूषण उतने नही बने, जितने कि ताम्रयुग में ताँबे और पित्तलयुग मे काँसे-पीतल के। इसमें एक कारण यह भी था, कि ताँबा लोहे की तरह मोर्चा खानेवाली धातु नहीं थी। ताम्रयुग के बहुत तरह के कंकण, कुंडल, हँसली आदि आभूषण मिले हैं।

५ राज-व्यवस्था

लाखों वर्षों से मनुष्य प्रकृति का स्वतत्र पुत्र था। उसका सामाजिक सगठन पहले परिवार के रूप मे हुआ। परिवार जहाँ अपने व्यक्तियो के आहार को एकत्रित करने के लिए मिलकर

प्रयत्न करता रहा, वहाँ उनके झगडो को भी शात करता था, साथ ही वाहर मे आक्रमण होने पर सारे नर-नारी अपनी रक्षा के लिए लडने जाते थे। उसी युग मे मानव मातृसत्ताके आदिम साम्यवाद से निकल कर जन-युग में पहुँचा, जबकि सामाजिक सगठन कई परिवारोंसे मिलकर बने जन के रूप में हुआ। नवपापाण-युग मे कृपि और पशुपालनने मातृ-सत्ता हटाकर पुरुप-सत्ता स्थापित करते हुए जनके प्रधान नेता महापितर की सृप्टि हुई। यद्यपि वह आगे आनेवाले राजा का अकुर था, तो भी वह अभी उनसे ऊपर नही समझा जाता था, और उसकी प्रतिप्ठा इसीलिए अधिक थी, कि वह योग्य सैनिक नेता और जनके भीतर शाति रखनेवाला योग्य पच था। ताम्र-युग में अव महत्त्वाकाक्षी व्यक्तियो को आगे वढकर मर्वेसर्वा वनने का अच्छा मौका मिला। कृपि और पशुपालन द्वारा कुछ व्यक्तियो के पास अधिक सम्पत्ति जमा होने लगी। इन्ही व्यक्तियो ने आरभिक जनयुग के दासताहीन समाज मे दासता का आरभ किया। पहले यदि जनो में युद्ध होता, तो वह वहुत क्रूर होता था (क्रूरता तो आज भी पूँजीवादी युद्ध की एक विशेपता है, कोरिया में सैनिको से अधिक गाँव के निरीह नर नारी वच्चे-वूढे अमेरिकन वमो के शिकार हो रहे हं)। आदिम जनो के युद्ध में हारे हुए जन को या तो नि शेप नप्ट हो जाना पडता, या अपनी शिकार-भूमि को छोड वचे-खुचे आदमियो को लेकर दूर भाग जाना पडता था। उस वक्त पराजित को दास वनाने की प्रथा नही थी, वहुत हुआ तो उनकी कितनी ही स्त्रियो को पकडकर अपनी स्त्री वना लिया। मातृ-सत्ता-युग मे विवाह की प्रथा नही थी, इसलिए पिता का पता लगना आसान नही था, प माता को पहचानने म कोई कठिनाई नही थी, इससे भी माता का नाम और शासन चल पडा, यद्यपि शरीर मे उस वक्त की स्त्री पुरुप से अधिक वलवान नही होती थी। आदिम जनयुग में भी विवाह की प्रथा यही तक पहुँच सकी थी, कि पुरुपो का एक झुड पति माना जाय और स्त्रियो का एक झुड पत्नी। कृषि और पशुपालन के साथ सम्पत्ति का उत्पादन वढ चला अधिक हाथो के का होने पर अधिक काम तथा उससे अधिक सम्पत्ति के उत्पादन का रास्ता निकल आया था, इसलिए वैयक्तिक सम्पत्ति के उत्पादन और स्वामित्व के वलपर जहाँ पुरुप समाज का नेता वन गया, वहाँ इस पितृसत्तायुग के युद्धो में पकडे गये शत्रुओ को मारने की जगह दाम वनाकर जीवित रहने का अधिकार दिया गया। युद्ध की पहले की क्रूरता में इसके द्वारा कुछ कमी हुई, इसमें सदेह नही। दासो का श्रम अधिक धन उत्पादन करने लगा।

ताम्रयुग में दासता-प्रथा ज्यादा वढ चली—दासो की सख्या अधिक वढने लगी, क्योंकि खेती और दूसरे व्यवसायो में उनके श्रम की वडी माँग थी। दास वही लोग रख सकते थे, जिनके पास काफी सम्पत्ति थी, जिनके पास काफी काम था। युद्ध रोज-रोज नही हुआ करता, कि दास विना मूल्य के मिलते रहे। इसलिए फुसला-बहका, डरा-धमका, प्रलोभन देकर दास-दासियाँ वनाई जाने लगी। दासो के श्रमने धनिको के हाथ में और भी सम्पत्ति एकत्रित कर दी, वह धन के वलपर और भी लोगो को हाथ में करने लगे। इस प्रकार ताम्र-युग के साथ एक और वडी सामाजिक क्रान्ति यह हुई, कि जनयुग के स्वतन्त्र मानव-समाज के स्थान पर सामन्तयुग की घोर विपमता का समाज स्थापित हुआ। ताँवे के हथियार, उस समय ऐसे ही महँगे थे, जैसे कि आजकल के लडाई के वारूदी हथियार। जहाँ सामन्त अपनी सम्पत्ति से महँगे हथियारों को खरीद या वनवाकर, उनके चलानेवाले आदमियो को भाडे पर रखकर शक्तिशाली हो सकता था, वहाँ

साधारण आदमी इसकी क्षमता नही रखता था। ताम्रयुग के सामन्तो के सामने उनके पिछडे हुए स्वच्छन्द जन (कबीले) टिक नही सकते थे, क्योकि उनके हथियार निकम्मे थे, चाहे लडने मे वह अधिक वीर थे। शस्त्र-बल के अतिरिक्त सख्या-बल भी सामन्तो के पक्ष मे था, क्योकि उनके पास सम्पत्ति-बल अधिक था।

ताम्रयुग ने व्यापार के लिए छोटी-छोटी जन-सीमाओ को तोड फेंका और अपने क्षेत्र को व्यापक बनाया। मिस्र कहाँ, मेसोपोतामिया कहाँ, सिन्धु-उपत्यका कहाँ, अनौ और ख्वारेज्म कहा? आजकल नक्शे में देखने से भले ही वह नजदीक-नजदीक मालूम हो, और विमान द्वारा पहुँचने में भी दूर न मालूम होते हो, लेकिन आज से साढे चार हजार वर्ष पहले वह दुनिया के छोर पर अवस्थित थे। लेकिन, ताम्रयुग में हम एक जगह की बनी हुई चीजो को समुद्रो, पहाडो और रेगिस्तानो को पारकर दूसरी जगह पहुँचते देखते है। व्यापारिक एकता की तरह देशो के एकीकरण में भी इस युग ने बडा काम किया। अपने ताम्र के हथियारो के बलपर सामन्त दूसरो को अपने अधीन करते जन-सीमाओ को मिटा राज्यो और महाराज्यो की स्थापना करने मे सफल हुए। ताम्रयुग ने मनुष्य को बतला दिया, कि अब छोटे-छोटे जन अपनी रक्षा नही कर सकते। मध्य-एसिया का दक्षिणापथ इस समय नवपाषाण युग से ताम्रयुग में आकर ग्राम-नगरो में बसे स्थायी निवासियो का देश था, किंतु इसका उत्तरापथ वर्तमान (कजाकस्तान) अब भी पूर्णतया घुमन्तुओ की निवास-भूमि था। जैसे पिछली शताब्दियो में हम उत्तरापथिक घुमन्तुओं का दक्षिणापथिक निवासियो के साथ बराबर सघर्ष देखेंगे, वही अवस्था ताम्रयुग में भी थी। उत्तर के घुमन्तू जन (कबीले) अपने सरदारों के नेतृत्व में दक्षिण के समृद्ध नगरो और ग्रामो को लूटने के लिए आते, और पीछे उनमे से कितने ही वहाँ बसकर शासन करते, जातियो के सम्मिश्रण और सस्कृतियो के दानादान का काम करते थे।

६ अनौमें

ऐतिहासिक काल में पश्चिमी मध्य-एसिया को दक्षिणापथ और उत्तरापथ इन दो भागो म विभक्त देखा जाता है। दक्षिणापथ से हमारा मतलब है, सिरदरिया और अराल समुद्र से दक्षिण का भाग, जिसमें आजकल तुर्कमानिस्तान, उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तान के गणराज्य मौजूद हैं। उत्तरापथ में किरगिजिस्तान का कुछ भाग और कजाकस्तान सम्मिलित हैं। दक्षिणापथ में कराकुम और किजिलकुम जैसे दो महान् रेगिस्तान ह, जिनमें किजिलकुम पुरानी सस्कृतियो की सुरक्षित समाधि-सा है। उत्तरापथ में प्यासी-भूमिका भारी रेगिस्तान है। यही पश्चिममें तलस नदी से पूरब में इली नदी तक, फैला सप्तनद भभाग है। जो उत्तरापथ का सबसे अधिक आबाद तथा ऐतिहासिक महत्त्व की भूमि है। इसिककुल और बलकाश के दो महासरोवर भी इसीम हैं। त्यानशान् तथा अल्ताई की पर्वतमालाएँ इसके दक्षिण-पूर्वी तथा पूर्वी छोर पर ह। सप्तनद उत्तरापथ का एक छोटा भाग है। त्यानशान् पर्वतमाला ही इली नदी से टूटकर उत्तर मे अल्ताई का रूप ले लेती है, जो कि अपने ताँबे और सोने की खानो के लिए सदा से प्रसिद्ध है। एक समय सारा एसिया इसी के सोने के ऊपर निर्भर करता था—तुर्की और मगोल भाषा का अल्ताई (सुवर्णगिरि) नाम यथार्थ ही है।

६. अनौमे ताम्रयुग[१]

दक्षिणी कुर्गान की स्थापना के साथ ईसा पूर्व तृतीय सहस्राब्दी के मध्य म यहाँ ताम्रयुग की स्थापना होती देखी जाती है। यह समय मध्य-एसिया के लिए जलवायु के अनुकूल था। अनौके दक्षिण खुरासान में तांबा मौजूद था, पामीर तथा अल्ताई तो अपने तांबे की महान् निधियो के लिए प्रसिद्ध हैं ही। अनौ में इस युग मे कुम्हार के चक्के का उपयोग दिखाई देता है। मृत्पात्र भी

११ मध्यएसिया (उत्तर दक्खिना पथ)
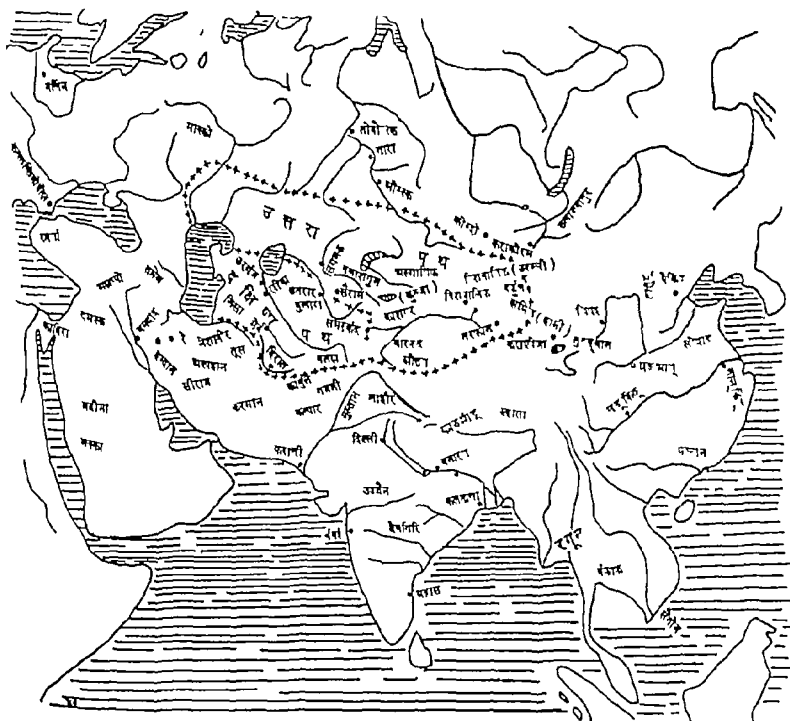
नाना रूप के बनने लगे थे। पात्रो पर मनुष्य, प्राणी और वृक्ष-लता आदि के चित्र होते थे। यद्यपि, आभूषणों में बहुत भेद नहीं हुआ, किंतु अब वह अधिक सुन्दर बनते थे। बहुमूल्य पत्थरो का उपयोग बडी कला मकता के साथ किया जाता था। पता लगता है, इस युग में अनौवालो का सिन्धु-उपत्यका, और मसोपोतामिया से सबध था। काल्दिया, असीरिया और सिन्धु-उपत्यका में बहु- पूजित माता-माई का सम्मान यहाँ भी बहुत अधिक था। घर के भीतर अब भी मृत शिशुओं को दफनाया जाता था। इस युग में निम्न चीजो का भाव और अभाव देखा जा ता है

[१] Exploration in Turkistan, pp 18-19

भाव	अभाव
कुम्हार का चक्का	कलई वाला मृत्पात्र
ताम्रा और मामूली चित्र	पक्की ईंटें
घर (पूववत्)	वतन की मुठिया
किवाड की चूल के नीचे पथरी (पूववत्)	धातु या पाषाण का कुल्हाडा
गाय, बैल, देवी की मिट्टी की मूर्तियाँ	लोहा
हड्डी के शर-फल	धातु मे सीसा का मिश्रण
ताँबे का हँसिया, माला और वाण के फल	लेख
जानकर ताँबे मे सीसे की मिलावट	
करवट शव-समाधि	

७ ख्वारेज्ममे ताम्रयुग

ख्वारेज्म की किजिलकुम की मरुभूमि म नवपाषाण युग से लेकर १२वी-१३वी सदी ईस्वी तक के बहुत से ध्वसावशेप मिलते है, जिनमें ई० पू० चौथी सहस्राब्दी से तीसरी सहस्राब्दी के आरभ तक केल्त मीनार सस्कृति का अस्तित्व पाया जाता है। यह सस्कृति मुख्यतया मत्स्यजीवी तथा शिकारी मानवो की थी। इसके अतिरिक्त यह लोग खेती भी किया करते थे। कई बातो म यह अनौके नवपाषाण-युग मे समानता रखते थे। ईसापूव तृतीय सहस्राब्दी के मध्य में ख्वारेज्म ताम्रयुग मे अथवा स्थानीय पित्तलयुग में चला गया। वस्तुत सारे मध्य-एसिया में ताम्रयुग और पित्तलयुग का भेद स्पष्ट नही पाया जाता।

ख्वारेज्म में पित्तलयुग का परिचय ताजाबागयाव (ई० पू० दूसरी सहस्राब्दी) और अमीराबाद (१०००-६००० ई० पू०) की सस्कृतियो में मिलता है।[१]

अनौ और ख्वारेज्म के रहनेवाले एक ही जाति के मालूम होते है, जो उस समय अराल से लेकर सिङ्कियाङ्ग (पूर्वी तुर्किस्तान) तक फैले हुई थी। रुसी विद्वान् स प ताल्सतोफका मत है, कि यह जाति मुण्डा-द्रविड जाति से सबध रखती थी। ख्वारेज्म की इस सस्कृति का सिन्धु-उपत्यका (मोहनजोदरो) की सस्कृति से इतना सादृश्य है, कि दोनो को आकस्मिक न समझ एक मानना ही अधिक युक्तियुक्त है।

८ लिपि आदि

ताम्रयुग सभी देशो में लिपि के प्रचार का युग है। व्यापार और राज्य के विस्तार के कारण लिखित सकेतों द्वारा सूचना देना अत्यावश्यक था। हम मोहनजोदरो में इस युग में लिपि का उपयोग देखते है, यद्यपि वह अभी तक पढ़ी नहीं जा सकी है। मेसोपोतामिया और मिस्र में तो हजारो अभिलेख मिले हैं। ख्वारेज्म मे भी कुछ चिह्न मिले हैं, लेकिन कहा नही जा सकता, कि

---

[१] क्रत्किये सोओब्श्चेनिया vol 13 pp 46-50, देखो आगे ४।२

वह लिपि है या शिल्पियो के सकेत मात्र । कुछ भी हो, धातु-युग मे प्रवेश करने के बाद किसी तरह की लिपिका होना आवश्यक हो जाता है। उसके साथ ही गणित और नाप-तौल भी राज्य और व्यापार के सचालन के लिए आवश्यक होते है, इसीलिए यह कल्पना करना गलत नही होगा, कि ताम्र-पित्तलयुग मे मध्य-एसिया में इन चीजो का उपयोग होने लगा था।

स्रोत-ग्रथ

1 General Anthropology (Francz Boas)
2 Our Early Ancesters (M C Burkitt)
3 Exploration in Turkistan 2 vols (R Pumpelly)
4 क्रत्किये सोओबूश्चेनिया vol XIII (लेनिनग्राद)
5 अर्खेओलोगिचेस्किये रस्कोप्कि व् त्रियलोति (गुर्जी,त्विलिसि १९४१)
6 The Most Ancient East (V G Childe, London 1928)
7 The Primitive Society (R H Lowie, 1920)

अध्याय २

पित्तल-युग (७०० ई० पू०)

१ युग की विशेषता[1]

ताँबे में दशांश राँगा (टिन) मिला देने से पीतल बन जाता है। ईसा पूर्व २००० ई० पू० मे मानव को यह सूत्र मालूम हो गया था। राँगा मिला देने से जहाँ धातु का रंग बदल जाता है, वहाँ वह अधिक कड़ी भी हो जाती है। ताँबे में राँगा संभवत अकस्मात् ही मिला। आजकल टिन पैदा करनेवाले देश मलाया, दक्षिणी अफ्रीका, खुरासान (ईरान), टस्कनी (जर्मनी), चेकोस्लोवाकिया, स्पेन, दक्षिणी-फ्रान्स, कार्नवाल (इंगलैंड) आदि हैं। काकेशस, शाम में भी राँगा मिलता है। काकेशस, चेकोस्लोवाकिया, स्पेन और कार्नवाल में पास ही पास राँगे और ताँबे दोनो की खानें हैं। जान पड़ता है, ताम्रकारो ने कभी गलती से राँगे की धून भी ताम्र-धून के साथ मिला दी, जिससे चमत्कारपूर्ण एक नई धातु तैयार हो गई और फिर काफी तजर्बे के बाद मालूम हुआ, कि दशांश राँगा मिलने से अच्छा पीतल बनता है। शायद राँगे का सुलभ न होना ही मिस्र और मसोपोतामिया म ताम्र युग के देर तक रहने का कारण हुआ। सिन्धु-उपत्यका और सुमेरिया (मसोपोतामिया) में जो ताँबे की चीजें मिली है, उनमें निकल का भी अंश है। उसे जान-बूझकर मिलाया नही कह सकते, बल्कि उसका कारण इन देशों में उम्मां की ताम्र-धूनो का उपयोग होना था, जिनमें कि काफी निकल होता है।

पीतल के आविष्कार के साथ धातु-विज्ञान और आगे बढा। यह उस महान् धातु-युग का आरंभ था, जिसका विकास आधुनिक धातु-युग में हजारो तरह के मिश्रित धातुओ के रूप में देखा जा रहा है। काकेशस दक्षिणापथ से कास्पियन समुद्र के परले पार है, जहा पहुँचने के लिए उसके दक्षिण से सुगम स्थल-मार्ग भी था। काकेशस में पीतल बनाने के लिये राँगे की जगह सुर्मे का इस्तेमाल होता था। सुमेरियन लोग सीसा मिलाकर पीतल बनाते थे। यह स्मरण रखना चाहिए, कि जस्ता (जिंक) और ताँबे के मिश्रण से तैयार हुआ काँसा बहुत पीछे बनने लगा, जब कि मानव लोह-युगमें पहुँच चुका था। नवपाषाण-युग और ताम्र-पित्तल-युगकी बस्तियोमे एक और महत्त्वपूर्ण भेद देखा जाता था नवपाषाण-युगीन बस्तियाँ हर बात में स्वावलंबी देखी जाती थीं, किंतु ताम्र-पित्तल-युग के आरंभ होते ही वह स्वावलंब खतम हो गया, क्योंकि अब धातुओं के हथियारो या उसके कच्चे माल के लिए दूसरे देशो पर निर्भर रहना पड़ता था।

---

[1] The Bronze Age (V G Childe) p 2 (मिस्र, मेसोपोतामिया और सिंधु-उपत्यकाएँ ३६००-६००० ई० पू० तक)

२ ख्वारेज्ममे पित्तल-युग[1]

ताजावागयाव-सस्कृति पित्तलयुग की सस्कृति मानी जाती है, जो कि ईसापूर्व दूसरी सहस्राब्दी में मौजूद थी। अझका-कला, तेगिककला आदि के ध्वसावशेष इस सस्कृति मे सबध रखते है। इस युग का मानव कृषक और पशुपाल था। उसका समाज मातृसत्ताक जन था। गाँव किस तरह के होते थे, इसका अच्छी तरह पता नही लगा, जिसका कारण निर्माण-सामग्री का स्थायित्व-हीन होना हो सकता है। इस समय के मृत्पात्र विना मुठिया के होते थे, लेकिन काले-लाल रगो के सजाने के अतिरिक्त कच्चे बर्तन पर खोदकर भी उन्हें अलकृत किया जाता था।

इसी युग में अमीराबाद की सस्कृति (ई० पू० प्रथम सहस्राब्दी का पूर्वार्ध) भी है, जिसे प्राग्-लौह सस्कृति भी कहा जाता है। यह मानव भी मातृसत्ताक जन-समाज में पहुँचा था। कृषि, पशुपालन इसकी मुख्य जीविका थी। जानवासकला आदि के ध्वसावशेष इसीके हैं।

३ सप्तनदमें

ईसा-पूर्व द्वितीय सहस्राब्दीके अन्तमें उत्तरापथका सप्तनद प्रदेश भी पित्तल-युगमें पहुँचा। तलस्, चू, इली आदि सात नदियोके कारण इस प्रदेश का यह नाम पडा। हो सकता है सप्त-सिन्धु जैसा ही कोई इसका मूल नाम रहा हो, जिसे कि तुर्की और मँगोल भापाओ से रूसी में अनुवादित होकर आजकल सेमी-रेच्ये (सात नदी) कहा जाता है। इस प्रदेशको यह भी वडा लाभ था, कि अल्ताईकी ताबेके खानें इसके पास थी। आजकल भी वल्काश सरोवरके उत्तरमें अवस्थित करागदा के कारखाने सोविवत रूसके ताँवा वनानेंके सवसे बडे कारखाने है। हालमें सप्तनदके कितने ही पुराने नगरोके ध्वसावशेपोकी खोदाई हुई है, जिनमें तरज (जम्बूल), सरिग तथा वालासगून (दोनों किर्गिजिस्तान की चू उपत्यकामें,), कोइलूक (इली-उपत्यका) खास महत्त्व रखते हैं। १९४१ में महा-चू-नहर तैयार हुई, जो प्राचीनकालकी परित्यक्त वस्तियोंके भीतर होकर गुजरी। यहां खोदते समय हजारो पुरातत्त्व-सामग्री प्राप्त हुई। चू और इलीके द्वाबे में पित्तलयुग का केन्द्र था। यहाके लोग कृषि, मछुवाई और शिकारीका जीवन विताते थे।

१ अद्रोनीय—पित्तलयुगमें उत्तरापथमें अद्रोनी, करासुक और मिनूसून लोगोकी जिन सस्कृतियोका पता लगा है, वह भी शिकारी, मछुवाई और कृपिसे जीविका करते थे। अद्रोनीय सस्कृति का समय १७००-१२०० ई० पू० माना जाता है। यह उत्तरापथके उत्तरी भागमें येनेसेइ नदीसे उराल तक फैली थी। उस्त-एरवाके पास अद्रोनीय सस्कृतिसे सबध रखनेवाली कितनी ही चीजें मिली है। इसके मृत्पात्रोंमें ज्यामितीय आकृतियोका अलकरण देखा जाता है।

२ करासुक—१२००-८०० ई० पू० में उत्तरापथमें हम करासुक सस्कृतिका पता पाते है। अल्ताई पर्वतमालाके पश्चिमोत्तरमें इसकी कितनी ही कब्रें मिली हैं, जिनकी चीजें अद्रोनीय जैसी हैं।

३ मिनूसूल—पित्तलयुगमें उत्तरापथमें एक और सस्कृतिका पता लगा है, जिसे मीनूसून कहते हैं। इसकी भी वहुत सी कब्रें मिली हैं, जिनमें मुर्दोंके साथ पीतलके आभूपण, छुरे,

---

[1] क्रात्किये सोओबृश्चेनिया, XIII, 110-18

तलवार, कुल्हाडे आदि रखे प्राप्त हुए हैं। येनेसेइ नदीके किनारे तक इसका पता लगता है। शायद इस जाति का केन्द्र उत्तरापथके पूर्वोत्तर था और बेकालके पास तक फले खकासी लोगोके साथ इसका सबध था।[1]

उत्तरापथकी उपरोक्त तीन सस्कृतिया जिस समय समाप्त होती है, उसके अनतर ही शक लोगोका उत्तरापथमें स्पष्ट पता लगता है। इससे अनुमान होता है, कि यही शकोके पूवज थे। नवपापाण-युग और अनवपापाण-युगमे दक्षिणापथ ही नही उत्तरापथ और सिङ्कयाङ (तरिम-उपत्यका) तकमें हम मुडा-द्रविड जातिका पता पाते ह। ईसा-पूव ७वी ८वी शताब्दीसे देखते है, कि सारे मध्य-एसियामें हिन्दू-युरोपीय वशकी शक-आय शाखाका ही पर प्राधान्य है। कोई आश्चय नही, यदि मुडा-द्रविड और हिन्दू-युरोपीय कालके बीचमें उत्तरापथमें रहनेवाली पित्तलयुगकी उक्त तीनो जातिया वही हो, जिन्होने मध्य-एसियासे मुडा-द्रविड-वशके प्राधान्यको खतम किया, और स्वय उनका स्थान लेकर आगे उत्तरापथ और सिङ्कयाङमें शक और दक्षिणापथमें आयके रूपमें अपनेको प्रकट किया। इससे यह भी मालूम होता है, कि मध्य-एसियामें हिन्दू युरोपीय जन ईसा पूव तीसरी सहस्राब्दीके मध्यसे पहले नही थे। ऐसा होने पर उनकी एक शाखा हिंदू-आर्योंका भारतमें पहुचना ईसा-पूव दूसरी सहस्राब्दी के मध्यमें अधिक युक्तियुक्त मालूम होता है।

४ अनौमे[2]

अनौमें दक्षिणी कुर्गान ताम्र-पित्तल-युगका अवशेष है, तो भी इस स्तरमें हम पित्तलकी जगह ताम्रकी ही प्रधानता देखते है। लोगोंके बारेमें भी हम निश्चित नही बतला सकते, कि वह नवपापाण-युगकी तरह मुडा-द्रविड जातिके थे अथवा हिंदू-युरोपीय आय।

५ जातियाँ

मध्यपापाण-युगमे पित्तल-युगके अन्त तक हमें मध्य-एसियामें चार मानव जातियोका पता लगता है। मध्य-पुरापापाण युगमें उत्तरापथकी प्यासी-भूमि, और अल्ताईमे मुस्तेर मानवके अवशेप मिले है, इसी तरह दक्षिणापथमें सोग्द और तुखार (मध्य-वक्षु उपत्यका) में भी मुस्तेर मानवका पता लगता है। १२ हजार वप पूव मध्य-पापाण युगीन मानवके अवशेप उत्तरापथमें किपचक (प्यासी-भूमि) और सप्तनदमें तथा दक्षिणापथमें सिर उपत्यका, सोग्द और ख्वारेजममें मिलते हैं।

ताम्रयुगमें अनौ, ख्वारेजमसे सप्तनद तक मुडा-द्रविड जातिकी प्रधानता थी। पित्तल युगमें आर्यों और शकोके पूर्वज सारे उत्तरापथ और दक्षिणापथमें फैले। मुस्तेर और मध्य-पापाण युगीन मानवके सबधमें हम निश्चयपूर्वक कुछ नही कह सकते। मध्य-पापाण युगीन मानव, हो सकता है, नवपापाण युगके मुडा-द्रविडका ही पूर्वज हो, और यह भी हो सकता है, कि

---

[1] "नेकतोरियै इसगी आर्खेआलोगिचेस्किख रबोत् व् सेमिरेच्ये" (अन० बेर्नश्तम) "क्रत्किये सोओव्" XIII, 110-18

[2] Expl in Turk. p 18-19

वे ही, उन हिंदू-युरोपीयोंके पूर्वज हो, जो कि नवपापाण-युगके आरभमें युरोपकी ओर भागनेके लिये मजबूर हुए। ऐसी अवस्थामें मुडा-द्रविड-वशके लोग भूमध्यीय वशके होनेके कारण दक्षिण या दक्षिणपूर्वसे मध्य-एसियामें घुसे होगे। पित्तलयुगमें मध्य-एसिया खाली करके जानेवाले हिंदू-युरोपीय वशकी एक शाखाको फिर हम उनके पूर्वजोंकी भूमिमें लौटते देखते हैं। ये ही शको और आर्योंके जनक थे। इनके आनेके बाद मुण्डा-द्रविड लोगोका क्या हुआ, शायद वहा भी वही इतिहास पहिले ही दोहरा दिया गया, जो कि भारतमें पीछे हुआ—अर्थात् कुछ मुण्डा-द्रविड पराधीन होकर वहीं रह गये और धीरे-धीरे विजेताओंने उन्हें आत्मसात् कर लिया, कुछ लोग पराधीनता न स्वीकार कर खाली पडी हुई भूमिमें आगे खिसक गये। अल्ताईसे सिद्ध क्याड तक फैले मुण्डा-द्रविड जातियोंके इन्ही भागे हुए अवशेषोको हम आज वोल्गाके उत्तरके वनखडोमें रहनेवाली कोमी, बाल्तिकके पूर्वी तट पर बसनेवाली एस्तोनी और फिनलैण्डमें बसनेवाली फिन जातिके रूपमें पाते हैं। किसी समय मास्को और लेनिनग्रादका सारा भूभाग उसी जातिका था, जिसकी शाखायें वतमान कोमी, एस्तोनी और फिन हैं। फिन भापाका द्रविड भापासे सबध भी इसी बातकी पुष्टि करता है, कि शकार्यों और द्रविडोंके सघर्षके ही परिणामस्वरूप उनका एक भाग जो उत्तरकी ओर भागा, वही फिन जाति है। इस प्रकार मुण्डा-द्रविड कहनेकी जगह हम नवपापाण-युगकी मध्य-एसियायी प्राचीन जातिको फिनो-द्रविड कह सकते हैं। उत्तरकी उक्त तीनों जातियोमें कोमी दूसरोंके सम्पर्कमें सबसे कम आई। यद्यपि आज इन फिनो-द्रविड जातियोका रग युरोपियनो जैसा गोरा ही नही होता, बल्कि इनके बाल पिगल होते हैं—काले केशोका तो उनमें कही पता नही लगता। लेकिन, यदि कौमी नर-नारियोंका फोटो देखें, तो मालूम होता है, कि हम दक्षिणके किसी शुद्ध द्रविड व्यक्तिका फोटो देख रहे हैं। कदमें भी यह लोग नाटे और शरीरमें एकहरे होते हैं।

फिनो-द्रविड नृतत्वके अध्ययनके लिये उपयोगी सामग्री भारतमें ही नही सोवियत रूसमें भी बहुत है, जिसकी ओर हमारे देशके विद्वानोका ध्यान ना चाहिये।

स्रोत-ग्रथ

1 The Bronze Age (V G Childe, Cambridge 1930)
2 ऋत्किये सोओवस्चेनिया Vol XIII1 (लेनिनग्राड) 1946
3 Exploration in Turkistan (R Pumpelly)
4 General Anthropology (F Boas)
5 In the Beginning (G Elliot Smith) (London 1946)
6 Le' Humanite' Prehistorique (J de Morgan)

अध्याय ३

लौहयुग (७०० ई० पू०)

ईसापूर्व द्वितीय सहस्राब्दीमें पित्तलयुगमें पहुंचने पर भौगोलिक तौरसे हमें शकों और आर्योंका भेद स्पष्ट दिखाई पड़ता है। इस समय शक यक्सत नदी (सिर-दरिया), अरालसमुद्रसे उत्तर रहते थे, उनके दक्षिणमें आर्योंका निवास था। सुग्ध (जरफशा-उपत्यका), ह्वारज्म (ख्वारज्म) से लेकर पहले हिंदूकुश और खुरासानके पर्वतों तक और थोड़े ही समय बाद फारसकी खाड़ी और सिन्धु तथा गंगाकी कछारों तक आर्य पहुंच गये। ग्रीक इतिहासकारोंके अनुसार हम यह भी जानते हैं कि दुनाई (डेन्यूब) से त्यानशान तक फैली घुमन्तू जातिको शक, स्कुथ अथवा सिथ कहते थे।[1] ग्रीक और उसका अनुसरण करनेवाली अंग्रेजी भाषामें उसका चाहे कितना ही बुरा अर्थ हो, किन्तु शक शब्दमें ऐसा कोई बुरा भाव नहीं है। ग्रीक लेखकोंके अनुसार शक लोग अपनेको स्कोल या सकोल कहते थे। दार्योशने अपने वहिस्तूनके अभिलेखमें उन्हें शक नामसे पुकारा है। भारत भी ईरानकी इस रायसे सहमत है। बहुतसे लेखक कालासागरके उत्तरमें रहनेवाले सिथियों और सिरदरियाके उत्तरमें घूमनेवाले शकोंमें अन्तर करना चाहते हैं। इतने दूर तक फैले हुये घुमन्तू जनमें कुछ स्थनीय भेद हो सकता है, लेकिन इससे उन्हें हम अलग नहीं मान सकते। ग्रीक इतिहासकार ई० पू० ५वीं शताब्दीमें भी यह माननेके लिये तैयार थे, कि कालासागरसे सिरदरिया तकके घुमन्तूओंमें रीति-रिवाज, खान-पान और वस्त्र-भूषा में अन्तर नहीं था। उनके हथियार भी एक तरहके होते थे। दोन नदीको पूर्वी और पश्चिमी शकोंकी सीमा माना जाता था।

१ शकद्वीप

युरेसिया द्वीपमें एक समय दुनाइ (डेन्यूब) से त्यान्‌शान्-अल्ताई (पर्वत-श्रेणी) तक फैली शक जातिकी भूमिको हम पित्तलयुगके आरंभमें भारतीय परिभाषाके अनुसार शकद्वीप कह सकते हैं, पुराने ईरानी शब्दानुसार शकानवेइजा या पीछेकी भाषाके अनुसार शकस्तान भी कह सकते हैं। लेकिन ई० पू० द्वितीय शताब्दीमें शकोंके बस जानेके कारण ईरानके पूर्वी भागको शकस्तान या सीस्तान कहा जाने लगा। इस भागको हम आदि-शकस्तान कह सकते हैं, इसी परिभाषाके अनुसार हम अराल और सिरदरियाके दक्षिणकी भूमिको आर्यद्वीप, आर्यान-

---

[1] "अल्ताइ व् स्किफ़्स्कोये व्रेमिया" (स० व० किसेलेफ), वेस्निक द्रेव्नेइ इस्तोरिइ १९४७ पृ० १५७-७२, श्लकये सोओवश्चेनिया XIII, p 112 में बेर्नश्ताम का लेख भी इसी विषय पर। इसका समर्थन पुन वेर्नश्तामने किया है "इस्तोरिको-कुल्तुर्नोये प्रोश्लोये सेवेर्नोइ किर्गिजिइ पो मतेरिलियाम् वोल्शवो चुइस्कओ कनाला" में (फ्रुन्जे १९४३)

न होनेसे हम उसे पश्चिमी हिंदू-युरोपीय जनगण कहते हैं। मध्य-एसियासे हिंदू-युरोपीय जनोंका युरोपमें जाना सभी स्वीकार करते है, और इसमें भी सहमत है, कि वह नवपापाण-युगमें हुआ। नवपापाण-युगकी एक विशेपता है कृपि, लेकिन कृपिके हथियारो और धान्योंके लिये एक प्रकारकी शव्दावली हम केन्तम और शतम् भापाओमें नही पाते। केन्तम् की वात तो दूर शतम् भापाओमे भी कृपि-सवधी एक तरहके शव्द नही मिलते, इससे यह कहना उचित नहीं जचता, कि नवपापाण-युगमें हिंदू-युरोपीय मध्य-एसियामे पश्चिममे गये, शतम् और केन्तम् का भेद हुआ, शक और आर्य दो स्वतन्त्र जनोमें विभक्त हुए। यदि हम नव पापाण-युगसे पहले इन विभाजनोंको मानें तो भापाशास्त्रके अनुसार इसमें कोई हरज नही पडता, किन्तु कालके अनुसार वहुत लम्वा समय भापाओके परिवतनके लिये देना पडता है। इस शतम्-केन्तम् और शक-आर्य भेदके समयको निर्धारित करनेके लिये शायद मध्य-एसियाकी मरुभूमि इतिहास वेत्ताओंकी सहायता करे।

ऊपर कहे आर्यद्वीपमे भूमध्यीय जाति चली आई, यह अनौ (दक्षिणी तुर्कमानिया) और ख्वारेजमकी पुरातान्विक खोजोसे सिद्ध है, किंतु शकद्वीपमें भूमध्यीय जातिका कोई इस तरहका हस्तक्षेप दिखाई नही पडता। मध्यपापाण युग हो या नवपापाण-युग, इसी समय पश्चिमकी ओर भागे हिंदू-युरोपीय जनगणकी शाखा शकार्य मध्य-एसियामे पहुँचकर फिरसे अपना द्वीप कायम करनेमें सफल हुई। यहाँ आर्योंका सम्पर्क उसी भूमध्यीय जातिसे हुआ, जिसकी समुन्नत संस्कृतिके अवशेप सिन्धु-उपत्यका और मसोपोतामियामे मिलते हैं। इस सम्पर्कके कारण आगे वढ़नेमें वहुत सहायता मिली और आर्य जल्दी जल्दी पित्तलयुगको पार हो लौहयुगमें पहुँच गये। ऐसे सम्पर्क के अभावके कारण शकद्वीपके शक सामाजिक विकासमें उतने नही वढ़ सके। ई० पू० ६ठी ५वी शताव्दीमें, जव कि आर्योंके स्थानोमें लोहेका खूव प्रचार था, शकलोग अभी पीतलकी ही तलवारो, वाण और भालेके फलोको इस्तेमाल करते थे। ह्यार्यावशकी सेनामें सम्मिलित ग्रीक लोगोसे लडते इन शक सैनिकोके वारेमें लिखते हुए ग्रीक इतिहासकार कहते हैं, कि उनके देशमे चादी और लोहा नही होता, इसीलिए इन धातुओंका प्रचार उनमे नहीं है, साथ ही सोने और तावेकी वहुतायत है, इसीलिए वह हथियारोके लिये पीतल और सौंदर्यके लिये सोनेका मुक्तहस्त हो उपयोग करते है। इस समयके पीछे तथा हूणोंके प्रहारसे पहले ही काला सागरके तट पर रहनेवाले शक भी पशुपाल-घुमन्तू-जीवनको पूर्णतया या अशत छोडकर कृपिजीवी ग्रामवासी वन गये। शकद्वीपका सारा पूर्वी भाग तव तक अपने पशुपाल-घुमन्तू-जीवनको छोडनेके लिये तैयार नही हुआ, जव तक कि हूण उनको इस भूमिसे भगानेमें समर्थ नही हुये। १२८ ई० पू० मे चीनी सैनिक-पर्यटक चाङ्क्यान् जव उनके केन्द्र वाख्तरमें पहुँचता, तो एक विशाल वैभवशाली राज्यके स्वामी होनेके वाद भी अभी शकोंको उसने तम्वुओंमें रहते अपने घोडो और भेडोको जगह जगह चराते-घूमते देखा —अर्थात् अव भी वह अपने पुराने जीवनसे चिपके रहना चाहते थे। स्थायी निवासियोंको लडाकू घुमन्तू जातियाँ आमतौरसे डरपोक कह कर घृणाकी दृष्टिसे देखती है। डरपोक न होने देनेके लिये तैमूर विश्वविजेता वननेके वाद तथा नवीन समरकन्द जैसी वडे वडे प्रासादोकी नगरीका सस्थापक होते हुए भी घुमन्तू जीवनका अभिनय करता था। यह अभिनय विल्कुल वेकारकी चीज नही थी। वस्तुत घुमन्तू जीवन युद्धके लिये सदा तैयार सैनिक जीवन जैसा है। अन्तर इतना ही है, कि सैनिक जहाँ घूमनेके लिये स्वतन्त्र

होने पर भी स्त्री और वाल-बच्चोंके सबधसे वचित रहता है, वहाँ घुमन्तूका सारा परिवार (नर-नारियों और बच्चे-बूढों सहित सारा जन) सेनाका अभिन्न अग होता है। वह जैसे आक्रमणके लिये एक क्षणकी सूचनामें तैयार हो सकता है, वैसे ही सैनिक अवश्यकता पडने पर भागनेके लिये भी तैयार हो सकता है। घुमन्तू विजेताको जहाँ शत्रुके समस्त नगर और गाँव लूटपाटके लिये खुले मिलते हैं, वहाँ उनपर विजय प्राप्त करनेवाले नागरिकोंको कुछ भी हाथ नही आता। यही कारण है, जो घुमन्तू लोग सहस्राब्दियो तक अजेय साबित हुए। चीनने हूणोको बार बार मार भगाते जब सफलता नही पाई, तो अपनी प्रतिरक्षाके लिये महा दीवार खडी की। कुरव महान् मसागेत घुमन्तूओके साथ लडते लडते मारा गया। उसके उत्तराधिकारी दारयोशको भी ५१३ ई० पू० में पश्चिमी शकों पर आक्रमण करके पछताना पडा। ग्रीक लोगोका तजर्बा इससे बेहतर नही था।

२ शक लोग

घुमन्तू जीवनमें जहाँ सैनिक और राजनीतिक दृष्टिसे कितने ही सुभीते हैं, वहाँ सामाजिक और सास्कृतिक दृष्टिसे यह घाटेका सौदा है। दूसरी जातियोके लौहयुगमे चले जानेके बाद भी शकोका पित्तलयुगमें पडा रहना सामाजिक गतिरोध ही था। हम जानते हैं, सामाजिक विकासके अनुसार भाषाका विकास होता है। शक भाषाके बहुत कम ही नमूने हमारे पास तक पहुँचे है, और जो पहुँचे भी है, वह ईसवी सन्‌के आरभ होनेके बादके हैं। लेकिन शकोके उत्तराधिकारियोकी भाषा देखनेसे मालम होता है, कि उनकी भाषा जो विश्लेषात्मक न हो, सश्लेषात्मक ही रह गयी, उसका कारण पूर्वजोका यही सामाजिक गतिरोध था। भारतीय आर्योंकी भाषामें परिवर्तन भारतमें आते ही होने लगा, जब कि अपने सारे शतम् वशमें अपरिचित टवर्गका ऋग्वेद तकमे प्रयोग होने लगा। हमारी भाषामें मौलिक परिवर्तन (सश्लेषात्मकसे विश्लेषात्मक होना) जहाँ ईसाकी छठी-सातवीं शताब्दीमें हो चुका, वहाँ शकोंके आधुनिक वशज स्लावो (रूसी आदि जातियों) की भाषा आज भी सश्लेषात्मक है—उसमें क्रिया तथा शब्दके रूपोंमें प्रत्यय सस्कृत की भाँति अभिन्न अगके तौर पर प्रयुक्त होते है और सहायक क्रियाओका उपयोग आज भी नही देखा जाता। इससे उनमें यह विशेषता देखी जाती है, कि भाषाके ढाचेकी दृष्टिसे स्लाव भाषायें सस्कृतसे जितनी नजदीक है, उतनी हमारे यहाँ की कोई भी जीवित भाषा नही है।

दारयोश एक आर्य राजा था। उसने ५१३ ई० पू० में युरोपके भीतरसे कालासागरके किनारे किनारे उत्तर में बढकर शकोंके ऊपर असफल आक्रमण किया था। ग्रीक इतिहासकारो द्वारा उद्धृत शक परम्पराके अनुसार इस आक्रमणसे १००० वर्षपूर्व शकोंका प्रथम राजा हुआ था। इसमें सदेह है, कि जब तक शकोकी भूमिमें शक रहे, तब तक कोई उनका वास्तविक राजा हुआ होगा। शक घुमन्तूओंके सरदार या नेताओ को भी दूसरोकी देखादेखी राजा माना गया होगा। शकोंमें स्त्रियोंका विशेष स्थान था, बल्कि ई० पू० चौथी-पाचवी शताब्दीमें दोनसे पूर्व रहनेवाले शक जनगणका नाम सरमात या सर्वमात इसीलिए पडा था, कि उनमे माता (स्त्री) सर्व-सर्वा होती थीं। स्त्रियाँ मृत जन-पतिका स्थानापन्न ही नहीं होती थी, बल्कि वह सेना-सचालन भी करती थीं।

इतिहासके आरम्भमें शकोमें जो रीति-रवाज, वेष-भूषा देखी जाती थी, वह बहुत पुराने कालसे चली आई थी। चीनी और ग्रीक दोनो लेखक इस बातमें सहमत है, कि शकोंका मुख्य

भोजन मास और मुख्य पान दूध था। मासके साथ ताजा खून पीना भी उनमें प्रचलित रहा होगा, तभी तो युद्धमें प्रथम गिरे शत्रुका गरम-गरम खून वह पाण्डव भीमकी तरह पीते थे, शत्रु सरदारकी खोपडीका कटोरा बनाकर बडी सावधानीसे रखते थे। यह दोनो प्रथाये हूणोमें भी देखी जाती है, यद्यपि वह मगोलायित थे। चगेज खानके मगोल सनिकोके इतने सफल होनेमें एक कारण उनका घोडा था, जिसपर चढकर वाण चलाते हुए जहाँ वह युद्ध कर सकते थे, वहाँ अवश्यकता पडने पर घोडेकी नसमें छेदकर उसके खूनसे भूखको शान्तकर फिर लडनेकेलिये ताजा हो जाते थे। विवाह-प्रथा शकोंमें वहुत प्रारभिक रूपमें थी। कई भाइयोकी एक स्त्री हो सकती थी और स्त्रियोके एक समूहका पुरुषोंका एक समूह पति समझा जाता था, अर्थात यूथ-विवाह उनमें प्रचलित था। किसी सरदारके मरने पर उसकी एक पत्नीको अवश्य कब्रमे अपने पतिका साथ देना पडता था। मिस्री सामन्तोकी तरह शकोमें भी शव-क्रिया वडी शानमे सम्पन्न होती थी। मृत सरदारके साथ उन सभी चीजोको कब्रमें रख दिया जाता था, जिनकी कि उसे जीवनमें जरूरत पडती थी। सभी तरहके हथियार, आभूषण, खान-पानकी चीजें और घोडोंको ही कब्रमें नही रखा जाता था, वल्कि दास-दासियोको भी स्वामीके साथ जाना पडता था। पुराने शकोंमें मुर्दे (विशेष कर सामन्तके मुर्दे) को दफनानेका रवाज था। उनकी कब्रें काकेशसके उत्तरमें मिली हैं, और अल्ताई भी उनसे खाली नही है। साधारण कब्रोमें भी खान-पान-सहित वतनोका रक्खा जाना आवश्यक समझा जाता था। यह प्रथा शकोकी एक शाखा खसोमें ईसवी सन्‌के आरभसे पीछे तक भी पाई जाती थी, यह लदाखसे कुमाऊँ तक मिलने वाली खस-समाधियोमे सिद्ध है। दफनानेके अतिरिक्त शक मुर्देको पेडके ऊपर टाँग देते थे, जिसमें पक्षी मास खा जायें। उसके बाद हड्डीको इकट्ठा करके गाड दिया जाता था। पारसियो में अव भी इसी प्रथा का अनुसरण किया जाता है, और वृक्ष की जगह दख्मा में शव को गिद्धो द्वारा खाने के लिये छोड दिया जाता है। यूनानी लेखको से यह भी मालूम होता है, कि पक्षियो के लिये छोड देने की जगह कभी कभी मनुष्य अपने हाथो से हड्डी से मास को अलग कर देता और इस तरह विना चिरप्रतीक्षा के ही हड्डी को दफना ने का मौका मिल जाता था। मुर्दा दफनाने के साथ-साथ शको में मुर्दा जलाने का भी रवाज था। उस समय पत्नी को साथ भेजने के लिये जिंदा जलाने की जरूरत पडती। ८वी ९वी शताब्दी मे, जब कि रूसी लोग अभी ईसाई नही हुये थे, उनमें सती प्रथा मौजूद थी, जिसे एक अरब पर्यटक ने अपनी आखो देखा था। भारत में सती-प्रथा का रवाज शको के आने के साथ हुआ।

शको की पोषाक सारे युरेसिया द्वीप में एक सी थी। उनके सिर पर एक नुकीली टोपी होती थी, जो शक-सिक्को से लेकर मथुरा और अमरावती की २री-३री शताब्दियो की मूर्त्तियो में भी पाई जाती है। पैरो में पायजामा और देह पर लवा चोला, साथ ही घुटने या उसके पास तक पहुँचनेवाला चमडे या नम्दे का बूट उनकी विशेष पोशाक थी। कमर में कमरवन्द के साथ सीधी लम्बी तलवार लटका करती थी। उनकी लम्बी नाक और भूरेवालो का चीनी लेखको ने विशेष तौर से उल्लेख किया है। सस्कृत के लेखको ने शको, यवनो, पल्हवो और वाह्लिको को रक्तमुख कहा है। शक सुदरिया अपने सौन्दय के लिये भारत में अधिक विख्यात थी। हमारे वैद्यो ने उनके सौंदय का कारण प्याज अधिक खाना वतलाया है। वागभट्टने अपने "अष्टागहृदय" (उत्तरतत्र) में लिखा है—

"यस्योपयोगेन शकांगनानां लावण्यसाराद्वि-विनिर्मितानाम्।"

शको के परम देवता सूय थे, इसका पता ग्रीक पुस्तको से ही नही मिलता है, बल्कि भारत में शको जैसी बूटधारी सूर्य-प्रतिमाओ का व्यापक प्रसार तथा ईसाई धर्म स्वीकार करने से पहले रूसियो की सूर्य में एकात-भक्ति भी इसी बात को बतलाती है। सूय के अतिरिक्त "दिवु" शको का पूज्य देवता था, जो कि वैदिक द्यौ और ग्रीक जेउस है। "अपिया" (आप्या) के नाम से पृथ्वी

माता पूजी जाती थी। सूय को वह "स्वलियु" कहते थे, जिसमें रके स्थान में लके साथ शको के अत्यन्त प्रेम को हटा देने पर सूर्य शब्द साफ दिखाई पडेगा। स्वलियु देवता दिवू पिता और अपिया माता का (द्यावापृथिवी) पुत्र था। 'पक' भी एक प्रधान देवता था, जो वेद में भग, ईरानी मे वग (बगदाद=भगदत्त) और रूसी में बोग के रूप में मौजूद है। राजा या बडे सरदार को शक लोग पकपूर कहते थे, जो कि भगपूर (भगपुत्र) का ही रूपान्तर है। फारसी और अरबी मे चीन के सम्राट् को फगफूर कहा जाता है, जो कि इसी पकपूर से निकला है। चीनी सम्राट् देवपुत्र (स्वगपुत्र) कहे जाते थे, यह हमें मालूम ही है। चन्द्रमा देवता को शक लोग अरतिम्पत (अर्यी-पति) कहते थे। वृन्दू भी उनकी एक देवी थी और थमी-मसद तथा विरोपत (वीरपति) उनके देवता थे। शक भाषा के पुराने नमूने बहुत ही कम मिले हैं। उनमें से कुछ हैं[1]—

---

[1] Les Scythes p 539

तविती=अग्नि
शक=शक
जरिना=हरिना
महकनग=महाराजा
तमूरी=समुद्रीय (रानी)
स्वलियु=सूय
पथ=पृथक्कृत
कनग=राजा (रूसी कन्याग)
तवितवरू=जनपाल
स्परोत्र=स्वरएध्र

स्रोतग्रन्थ

1 Les Scythes (F G Bergmanss, Halles 1860)
2 वेस्लिक द्रेव्नेइ इस्तोरिइ 1947
3 कत्कि० सोओव० XIII

भाग ३

उत्तरापथ (६०० ई० पू०-७०० ई०)

अध्याय १

शक (६००-१७४ ई० पू०)

§१ शक-जातियाँ[1]

हम देख चुके हैं, ई० पू० ३री सहस्राब्दी से प्रथम सहस्राब्दी के प्राय मध्य तक सप्तनद और अल्ताई में क्रमश अफनास (२५००-१७०० ई० पू०), अन्द्रोन (१७००-१२०० ई०) पू०, करासुक (१७००-८०० ई० पू०) और अन्तिम के समकालीन मिनिसुन जातियाँ रहती थी। कोई प्रमाण नही है, कि यह लोग शको के पूर्वज छोड किसी दूसरी जातिके थे। ईसा पूव ७वी शताब्दी में हम उत्तरी मध्य-एसिया में शक जातियो का प्रसार निम्न प्रकार पाते हैं। (१) दोन से पूरब कास्पियन के उत्तर होते अराल समुद्र और यक्सर्त (सिरदरिया) के मध्य तक मसागित जाति का विस्तार था, अराल समुद्र के पास यह जाति निम्न वक्षु-उपत्यका में अर्थात् ख्वारेज्म में भी फैली हुई थी। इसके दक्षिण में कास्पियन के किनारे दहा घुमन्तू शक जाति थी, जिसने पीछे पार्थ जातिको जन्म दिया। मसागित् से पूरब यक्सर्त की ऊपरी उपत्यका के उत्तरी भाग, नरिम नदी और इसिकुल तक सकरौका (प्राग्-सइवङ) जाति रहती थी। सइवङ जन पीछे इसीसे निकला। अल्ताई में उस समय प्राग्-वूसुन जाति थी, जिससे पीछे वूसून जन पैदा हुआ। इससे पूरब ह्वाङ्हो नदी के पास कानसु तक यूची जन के पूर्वज रहते थे। तरिम-उपत्यका या सिङकियाङ में शकों की ही एक शाखा खश रहते थे, जो ई० पू० ७ वी सदी से पहिले ही कराकुरम गिरिमाला को पारकर गिल्गित और कश्मीर में फैल गये थे। फिर आगे चलकर उन्होंने नेपाल तक सारे हिमालय को खशभूमि बना दिया। यह सारी शक-खश जाति ई० पू० ५ वी सदी तक पित्तल-युग में थी। दारयोश के अभिलेख मे तिग्राखौदा, हौमवर्क, त्याई नाम के तीन शक जनो का पता लगता है, किन्तु उनके स्थान के बारे में कुछ कहना मुश्किल है। मसागित् के पूरब मे शकरौका का विचरण स्थान सप्तनद का पश्चिमी भाग था। यह जातिया अभी प्रागैतिहासिक काल में विचर रही थी। इन के बारे में ग्रीक और ईरानी लोगो ने जो कुछ वर्णन किया है, उसके अतिरिक्त और पता नही लगता। इनमें से कुछ जातियो के बारे में निम्न बातें मालूम होती है—

(१) मसागित्[2]—मसागित् शब्द मसाग या महाशक से निकला है। सचमुच ही उस समय यह शक जनों में सबसे बडा जन था। दोन से लेकर यक्सर्त नदी के मध्य तक तथा खारेज्म में फैला यह महाजन महाशक कहे जाने का अधिकारी था। इनका

---

[1] Les Scythes,

[2] वही p 540

सबसे प्रिय हथियार कुल्हाडा था। दूसरे शकोकी तरह यह घोडे पर चढकर तीरका निशाना लगा सकते थे। तीर और भाले के फल ही नही इनके कुल्हाडे और लम्बी सीधी तलवारें भी पीतलकी होती थी। पशुओ का मास और दूध इनका मुख्य भोजन था। तम्बू के डेरो को छोडकर कोई इनका स्थायी निवास नही होता था। यह पक्के यायावर थे। इनकी स्त्रिया पुरुषो की भाति युद्ध में लडती थी, और कितनी ही बार सेना का नेतृत्व भी करती थी। यद्यपि महाशक पुरुष अलग अलग व्याह करते थे; किन्तु तो भी दूसरी स्त्रियो के साथ सम्बन्ध रखने की स्वतन्त्रता थी। इससे मालूम होता है, कि अभी यह यूथ-विवाह से आगे नही बढ़े थे। वृद्ध-वृद्धाओ को मार डालने की प्रथा इनमें प्रचलित थी। एस्किमो लोगो में अभी हाल तक वृद्धावस्था में पहुचने पर बुजुर्गों को मार डालनेका आम रवाज था, जिसका कारण उनका परिवार के ऊपर भारस्वरूप होना था। मसगित् या महाशक जन के साथ अखामनशी (ईरानी) शासका का बराबर सघर्ष रहा, जिसके बारे में हम आगे कहेंगे। मसगित् के पश्चिमी कबीलो को सरमात भी कहते थे। बल्कि कभी कभी इस सारे कबीले का नाम मसगित्-सरमात बतलाया जाता है। यह बतला चुके हैं, कि स्त्रियो की प्रधानता के कारण ही इस कबीले का सर-मात या सब-मात नाम पडा। शायद यह यूनानियो का दिया हुआ नाम हो।

(२) सकरौका—महाशक जन से पूरब किन्तु यक्सत नदी के उत्तर-उत्तर सप्तनद भूमि के पश्चिमी भाग में यह घुमन्तू जन पशुचारण करता था। सकरौका वस्तुत शक-ओक (शकस्थान) का ही परिचायक है। इनकी भूमि सोग्द के उत्तर में थी। यह एक समय दारयोश प्रथम की प्रजा थे। इनके दक्षिण में सोग्द लोग सोग्द (जरफशा) नदी से वक्षु नदी तक रहते थे। इनकी टोपी लम्बी नुकीली होती थी। कुछ विद्वानो का मत है, कि शकरौका और शक-हौमवक एक ही थे। दारयोश के समय यह यक्सत नदी के दाहिने किनारे पर बसते थे, किन्तु ई० पू० द्वितीय सदी में इनके घोर्दू खोजन्द की पश्चिमी पहाडियो में रहते थे। यह भी सन्देह किया जाता है, कि चीनियों ने जिन्हें सइवाङ लिखा है, वह वस्तुत यही सकरौका थे।

(३) दाहे—यह सभवत शकरौका और महाशक के बीच मे यक्सत नदी के पहाडियो के निवासी थे, जो पीछे कास्पियन के किनारे ईरान की सीमा तक पहुंच गये। चीनियो ने इनका नाम अनसी बतलाया है। यह अच्छे घोडसवार धनुधर होते थे। इन्हीके एक कबीले पारथी ने २४८-४७ ई० पू० में मामूली राज्य स्थापित करके अन्त में ईरानी-ग्रीको के सारे राज्य को अपने कब्जे में कर लिया।

(४) खस—इस जनका ग्रीक या ईरानी स्रोता से पता नही लगता। तालमी और दूसरे लेखको ने हिमालय के खसों का वर्णन किया है, और हमारे लिये जो आज भी यह एक जीवित जाति है। गिल्गित-चित्राल में कसकर, कश्मीर में कश, काशगर में खशगिरि, और कश्मीर से पूरब नेपाल तक खस या खसिया जाति तथा नेपाली भाषा का दूसरा नाम खसकुरा (खस भाषा) यही बतलाते हैं। पित्तल युग में तरिम उपत्यका इनका निवास थी। हूणो से भगाये जाने के बाद जब तक कि लुघुयूची इनकी भूमि में छा गये, तब तक सारी तरिम-उपत्यका खसभूमि थी।

(५-६) वूसुन्, यूची—यह दोनो शक जातियां को आगे हम त्यानशान से ह्वाङ्हो तक देखेंगे। जिस काल के बारे में हम यहाँ लिख रहे है, उस समय चाहे जिस नाम से हो, इन्ही के पूर्वज इस भूमि के स्वामी थे।

सारे उत्तरापथ के शक घुमन्तू पशुपाल थे, इसीलिये उनके अवशेषो मे गाँवो, गढ़ो और मकानो का पता मिलना समव नही है। लेकिन घुमन्तू होने पर भी शक सरदारो की कब्रें बहुत शान-शौकत से बनाई जाती थी, जिनमें उनके उपयोग की कितनी ही सामग्री दफना दी जाती थी। ऐसी कब्रो से उनके बारे में बतलानेवाली कितनी ही सामग्री प्राप्त हो सकती है।

§२ अल्ताई के शक[1]

सोवियत पुरातत्त्व-वेत्ताओ की खोजो से अल्ताई के शको के इतिहास पर बडी रोशनी पड रही है। क मोइसेवा ने अपने एक लेख में[1] लिखा है —

"साफ-सुथरी और बल खाती हुई सडक अधिकाधिक ऊचाई पर चढती चली गई है। चट्टानी कगारो को पाकर मोटरो का एक दल इस सडक पर से आगे बढ रहा है। सोवियत सघ की विज्ञान अकदमी और देश के एक सबसे बडी म्युजियम लेनिनग्राद एर्मीतेज ने पाज़ीरिक घाटी में पुरातत्व-सम्बन्धी खोज का सगठन किया है। पश्चिमी साइबेरिया मे अल्ताई पहाडो के बीच स्थित यह स्तपीय घाटी चालू पथों और बस्तियो से बहुत दूर है।

ऐसा मालूम होता है, मानो अल्ताई पहाडो का सारा सौन्दर्य पाज़ीरिक घाटी के इस रास्ते में केन्द्रित हो गया है। सदा मौजूद रहने वाली बर्फ से ढँकी पहाडी चोटिया नीले आसमान की पृष्ठ-भूमि में बहुत भली लगती है। निस्तब्ध जगलो के बाद चरागाहो की ताज़ा हरियाली आखो के सामने आती है। कातूना नदी का हरा पानी धीमी गति से घाटी में से बहता पहाड के कगार पर पहुचता है। वहा से वह जब नीचे गिरता है, तो फुहारो के सिवा और कुछ नही दिखाई देता। नदी के किनारे भेडो के रेवड, ढोर तथा घोडो के दल चरते रहते है।

यह एक समृद्ध और सुन्दर प्रदेश है।

मोटरें इस समय चिबित दर्रे से गुज़र रही हैं, फिर पाज़ीरिक घाटी से जानेवाली घूमती हुई सडक पर मुड जाती है। शोध-दल के मुखिया प्रोफेसर रुदेन्को और उनके सभी साथी खुदाई-स्थल पर पहुचने और अपना काम शुरू करने के लिए उत्सुक हैं। उन्हें पाच बडे पाज़ीरिक टीलों की खुदाई का काम पूरा करना है। दो की खुदाई और पुरातत्वविदो द्वारा उनका अध्ययन हो चुका है। प्राचीन शको के जीवन और रीति-रिवाजो के बारे में यहा से अत्यधिक मल्यवान् सामग्री मिली है।

आखिर महा उलगान नदी के पानी पर सूरज की किरनो की चमक दिखाई देती है। इसके एक बाजू भीमाकार कगारों के समूह से घिरी एक तलहटी है। यही पाज़ीरिक घाटी है। इसके रहस्यमय दिखाई पडने का कारण शायद यह है, कि यहा कोई नही रहता। यहा इस लिए कोई नही रहता, कि घाटी में पानी का एकदम अभाव है। यहा पानी कई किलोमीतर दूर से लाना पडता है।

पुरातत्वविदों के कैम्प के साथ निस्तब्ध घाटी में मानवीय आवाजो तथा हथौडियों, कुदालों और लट्ठो की ध्वनिया गूजने लगती है। टीलो की बगल में तम्बू लग जाते हैं, और अलावों का धुआ उठने लगता है। खनक मुर्दों के प्राचीन टीलो पर से पत्थरों को हटाने लगते हैं।

---

[1] "सोवियत् भूमि" (दिल्ली १९५३)

टीलो पर छाई मिट्टी और लट्ठो के साफ हो जाने पर सामने बडी चतुराई से बने लकडी के तहखाने का दृश्य आ जाता है। यह तहखाना एक बडे घर के समान मालूम होता है, सिवा इसके कि उसमें दरवाजे या खिडकियां नही है।

तहखाने को खोला जाता है, लेकिन कुछ दिखाई नही देता। हर चीज पर वर्फ की मोटी तह जमी है। टीले पर से कुछ भी हटाना कठिन है। चिर-आच्छादक वफ तहखाने और उसके भीतर की चीजो को हजारो सालो से सुरक्षित रखे हैं।

क्यो टीलो की प्रत्येक चीज वर्फ-बन्द दिखाई देती है? विद्वान् एक मुद्दत से इस सवाल में दिलचस्पी ले रहे हैं। अल्ताई पहाडो की भूमि सदा वर्फ से जमी नही रहती। फिर भी चट्टानी टीलो के नीचे उसे अक्सर वैसा देखा गया है। पूरी खोजबीन के वाद विद्वान् इस नतीजे पर पहुचे है, कि टीलो में वर्फ का चिर-जमाव कृत्रिम रूप से पैदा किया गया है। उनका कहना है, कि टीलो का पतझड में निर्माण किया गया होगा, ताकि नमी और पाला टीलो में प्रवेश कर प्रत्येक चीज को वर्फ से ढँक दे। गर्मी के दिनो में तहखानो पर स्थित चट्टानो के कारण धूप उनमें प्रवेश नही कर पाती और वर्फ के पिघलने की नौवत नही आती। इस प्रकार वर्फ दीर्घकालीन युगों तक—पुरातत्वविदो द्वारा टीलों की निस्तब्धता के भग होने तक—जैसी-की-तैसी बनी रही।

अब समस्या यह थी, कि टीलों से चीजो को कैसे हटाया जाय। इसका एक ही तरीका था, कि वर्फ को गर्म पानी से धीरे-धीरे पिघलाया जाय। वफ के पिघलने पर पुरातत्वविदो की आखो में चमक दौड गई। कितनी अप्रत्याशित निधि यहा जमा थी? कारु कार्य युक्त चमडे की चीजें, रेशम और फर से बने महिलाओ के समूचे कपडे, और प्राचीन योद्धाओं के सिर पर पहनने के कवच। शोध-दल की कलाकार वेरा सुन्त्सोवा ने तुरन्त इन चीजो के चित्र बनाने शुरू कर दिए, ताकि चमडे, फर और फैल्ट से वनी इन चीजो के सजीव रगो का रिकार्ड रह सके। वफ के चिर-जमाव ने अब तक उन्हें अपने असली रूप में पूर्णतया सुरक्षित रखा था। लेकिन कौन जाने अव, प्रकाश में आने के वाद भी, उनकी पहले वाली शोभा बाकी रह सकेगी?

पुरातत्त्व के इतिहास में ऐसी एक भी मिसाल नहीं मिलती, जहा हजारो साल पुरानी चमडे, फर, कपडे या फैल्ट की चीजें सही-सलामत अवस्था में उपलब्ध हुई हो। मिस्र के शाहो के समाधि-स्थलों में अनेक सुन्दर चीजें मिली थी। लेकिन, वहां के महीन कपडों और चमडे तथा लकडी की चीजो को जैसे ही वाहर निकाला गया, वे पुरातत्वविदो के हाथ का स्पर्श पाते ही राख का ढेर हो गईं और उनके चित्र तक नही लिए जा सके। लेकिन यहा सभी चीजें इतने अच्छे ढग से सुरक्षित थी, कि वे आज भी उतनी ही मजबूत और सुन्दर दिखती थी, जितनी कि पहले,—लगता था जैसे उन्हें अभी अभी वनाया गया है।

दृढ़ देवदार से वनी शव-पेटिका इतनी भारी थी, कि उसे विना अलग अलग किए बाहर निकालना असम्भव था। सबसे पहले मजबूती से फिट किए हुए ऊपर के ढक्कन को हटाया गया। पुरातत्वविदों की नजर अल्ताई के प्राचीन निवासियो के शरीरो पर टिक गई। वे इतनी अच्छी हालत में थे, कि लगता था मानो उन्हें अभी कुछ ही दिन पहले शव-पेटिका में रखा गया हो। उनकी सख्या दो थी,—एक शक सैनिक शरीर दूसरा उसकी पत्नी।

सैनिक का रग सावला था और गालो पर हड्डिया अपेक्षाकृत ऊची थी। स्त्री का चेहरा सफेद और छोटा तथा हाथ कमनीय था। दोनो शरीर मसाले से सुरक्षित थे।

पुरुष की छाती और कधो पर गोदना गुदा हुआ था, इसकी ओर ध्यान गया। बिल्ली की भाति मालूम होता परदार गिद्ध, और एक हिरन बाज जैसी चोच वाला और बिल्ली की एक लम्बी दुम का चित्र गोदा हुआ था। यह कल्पनातीत पेचीदा डिजाइन सावली चमडी पर साफ नजर आता था। प्राचीन शको का ख्याल था, कि इस तरह के गोदने क्रूर पिशाचो से उनकी रक्षा करते है और साहस तथा ऊचे वश के सूचक है।

उपलब्ध चीजों की पूर्णतया जाच करने, उनका वर्णन करने तथा चित्र बनाने में कई दिन लग गए। इस बीच तहखाने में भी काम होता रहा। प्रतिदिन अधिकाधिक आश्चयकर चीजों का पता लगता था। फेल्ट का एक बहुत बडा कालीन मिला। इस पर सम्पन्नता और समृद्धि की देवी का रगीन चित्र बना था, जो अपने हाथों में जीवन के वृक्ष को लिए थी। उसके सामने काले घुघराले बालो से युक्त एक घोडसवार खडा था। कालीन के चारो ओर तेज रग के फूलो की किनारी थी। प्राचीन प्रथा के अनुसार घर की सबसे बढ़िया चीजो को भी मृत व्यक्ति के साथ दफना दिया जाता था।

नम्दे के बराबर में ही एक मखमली कालीन भी मिला, जो बहुत ही मूल्यवान कालीन सिद्ध हुआ। इस पर घोडसवारों, शेर के शरीर और बाज की चोच वाले विचित्र जन्तुओ और हिरन के चित्र बने थे। कालीन के डिजाइन से पुरातत्वविदो को शक योद्धा के दफनाने की तिथि का पता लगाने मे मदद मिली। अल्ताई के मखमली कालीन पर अकित घोड-सवार की छवि ईरान की प्राचीन राजधानी के खण्डहरो में से मिली छवियो और मुहरो के डिजाइन से मिलती है। यह खण्डहर ईसवी सन् से पूर्व छटी या पाचवी शती के है, अर्थात् आज से २४०० या २५०० साल पुराने हैं।

टीलो में चीनी कपडे भी निकले। एक प्राचीन चीनी आईना तथा अन्य कितनी ही चीजें मिली, जिनसे पता चलता है, कि टीलो का निर्माण करने वाले अल्ताई के प्राचीन लोग ईसा से पहिले पाचवी शती के निवासी थे।

अब तक हुई खुदाई से पुरात्वविदो को यह मालूम हो गया, कि कबर की दीवार के पीछे उन्हें घोडे मिलेंगे। सचमुच उन्होने एक लकडी की दीवार देखी, जिसके पीछे चौदह सुन्दर घोडे दफनाए हुए थे। ये सब-के-सब, अपने शानदार साज-सामान के साथ बहुत बढिया स्थिति में सुरक्षित थे। लकडी पर नक्काशी के काम और सोने के पत्तर से सुसज्जित जीन, विविध रगो से युक्त घोडे के लबादे और चीनी रेशम की बनी ओहारें सभी बहुत सुन्दर थीं।

घोडों के विशेषज्ञों को ऐसा मौका शायद ही मिलता है, जबकि उन्हें दो हजार साल से भी ज्यादा पहले मारे गए घोडों के सुनहरी ताम-झाम को अपने हाथ से स्पर्श करने का सौभाग्य प्राप्त हो। हा मारे गए, क्योंकि ये घोडे युद्ध या किसी दुर्घटना में पडकर नही, बल्कि योद्धा की कब्र में दफनाने के लिए मरे थे।

पाजीरिक टीलो की अन्तिम निधियों को बक्सो में पैक करने के बाद शोध-दल घाटी से विदा हो गया। प्राचीन शको के मृत शरीरों को लेनिनग्राद के एर्मीताज म्युजियम के लिए रवाना कर दिया गया।

सोवियत विज्ञान ने अल्ताई के टीलो के रहस्यो का उद्‌घाटन कर लिया। सुदूर अतीत को उन्होने फिर से हमारे लिए मूत कर दिया। पाज़ीरिक घाटी से मिली चीजें उन लोगो के जीवन, धार्मिक विश्वासो और कला की कहानी हमें वताती है, जो किसी जमाने में अल्ताई पहाडों में रहते थे। इन्हें देखने से पता चलता है, कि ये लोग चिरकाल से ही सस्कृति में हीन तथा अविकसित नही थे। इन चीजो से पता चलता है, कि शक जाति के लोगो की सस्कृति ऊची थी। ये चीजें प्राचीन शको के इतिहास में एक नया पृष्ठ जोडने में मदद देती है।"

स्रोत-ग्रथ

1 Les Scythes (F G Bergmann)

२ आर्खेआलेगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिज़िइ (अ न वेर्न्‌श्ताम्, फ्रुन्ज़े १९४१ ई०)

३ इस्तोरिको-कुल्तुर्नोये प्रोश्लोये सेवेर्नोइ किर्गिज़िइ पो मतेरियलाम् वोल्शवो चुइस्वओ कनाला (वेर्न्‌श्ताम, फ्रुन्ज़े १९४३)

४ अल्ताई व् स्किफस्कोये व्रेमिया (स व किसेलेफ), "वेस्लिक् द्रेव्नेइ इस्तोरिइ" 1947 II pp 157-72

५. ऋत्क० सोओव्० XIII,p112

६ "सोवियत् भूमि" (दिल्ली १९५३ ई०)

अध्याय २

हूण (३०० ई० पू०—३०० ई०)

शको के उनके मूलस्थान से निकाल कर उसपर अपना अधिकार जमाना हूणो का काम था। यही नही, बल्कि मध्य एसिया के उत्तरापथ और दक्षिणापथ दोनो में जो आज सभी जगह मगोलायित चेहरे देखे जाते है, यह भी हूणो की ही देन है। तुर्क हूणो ही से निकले और मगोल भी हूणो ही की सन्तान है।

१ प्राचीन हूण

शको की तरह हूण भी घुमन्तू पशुपाल थे। मध्य-एसिया मे दोनो एक दूसरे के पडोसी थे। यूची के निकाले जाने से पहिले शक-भूमि त्यानशान् और अल्ताई से पूरब हूणो की गोचर-भूमि से मिल जाती थी। इसलिये अन्तिम सघर्ष के पहिले भी इनका कभी कभी आपस में युद्ध या वस्तुविनिमय के लिये सबध हो जाया करता था। चीन के इतिहास से पता लगता है, कि वहा पर भी धातुयुगीन सास्कृतिक विकास में पश्चिम से जानेवाली जाति का विशेष हाथ रहा। यह जाति शको से सबध रखनेवाली थी, इसमें सन्देह नही। चीनियो के उत्तर में रहनेवाले हूणों का भी यदि शको के साथ सबध रहा और उनके द्वारा वह धातुयुग में आये, तो कोई आश्चर्य नही है। तातार और तुर्क यह दोनो शब्द हूणो के वशजो के लिये इस्तेमाल हुये है, लेकिन चीनी इतिहास में ईसा की दूसरी सदी के पूर्व तातार शब्द का पता नही है, और ५वी सदी से पहिले तुर्क शब्द भी उनके लिये अज्ञात था। ग्रीक और ईरानी स्रोत जब सूखने लगते है, इसी समय से चीनी स्रोत हमारे लिये खुल जाते है। शको के बारे में चीनी इतिहासकारो ने बहुत कुछ लिखा है। लेकिन अभी तक उसमें से थोडा ही युरोप की भाषाओ में आ सका है। रूसी विद्वानो का इस सामग्री को प्रकाश में लाने तथा व्यवस्थित रूप से छानबीन करने का काम बहुत सराहनीय है। किन्तु वह रूसी भाषा में बद्ध होने से हमारे लिये बहुत उपयोगी नही हुआ। नवीन चीन और सोवियत-रूस आज सारी शकभूमिका स्वामी है। वहा इतिहास के अनुसन्धान में जितनी दिलचस्पी दिखाई जाती है, उससे आशा है, कि उनके बारे में पुरातत्व-सामग्री तथा लिखित सामग्री से बहुत सी बातें मालूम होगी। त्यानशान् (किरगिजिया) में नरीन् की खुदाई में शको के विशेष तरह के वाण के फल तथा मट्टी के गोल कटोरे और दूसरी चीजें भी मिली है। इस्सि कुल सरोवर के किनारे त्यूप स्थान में भी इस काल की कुछ चीजें मिली है, जोकि मास्को के राजकीय ऐतिहासिक म्यूजियम में रखी हुई है। कजाक गणराज्य के बेरका-रिन स्थान में निकली कब्र में भी कुछ चीजें मिली है, जो ५वी-४थी सदी ई० पू० की मानी जाती है। वही करावोको (इलीपत्यका) में खुदाई करने पर शको के पीतल के वाणफल मिले।

सिनृगीर और उनके उत्तराधिकारियों से संबंध रखनेवाले हैं। शक-जनों के पीतल के हथियार पूर्वी युरोप (चेरतोम लिक) से बैकाल और मन्चूरिया की सीमा तक है, इनकी गोचर भूमि समय-समय पर बहुत दूर तक फैली हुयी थी। डाक्टर बेर्नश्ताम—सप्तनद, अल्ताई और त्यानशान के प्राचीन इतिहास और पुरातत्व के बड़े विद्वान—का कहना है, कि ई० पू० ६वीं शताब्दी में इस सारे इलाके में घुमन्तू शक जनों का निवास था। यह भी पता लगा है, कि शकों ने कुछ खेती का भी काम सीखा था, तब भी वह प्रधानतया पशुपाल थे[1]।

चीन में भी अपने इतिहास को बहुत अधिक प्राचीन दिखलानेका आग्रह रहा है, किन्तु चीनका यथार्थ इतिहास ई० पू० छठी सदीसे शुरू होता है। उसके पहिलेकी सारी बातें पौराणिक जनश्रुतियासे अधिक महत्व नही रखती। चीनका प्रथम ऐतिहासिक राजवंश चिन (२५५-२०६ ई० पू०) है। इस वंशके संस्थापक चिन-शी-ह्वाङ-ती (२५५-२५० ई० पू०)ने बहुत सी छोटी-छोटी सामन्तियोंमें बटे चीन को एक राज्यमें संगठित किया। इससे पहिले उत्तरके घुमन्तू हूण चीनको अपने लूटपाटका क्षेत्र बनाये हुए थे। यह अश्वारूढ़, मांसभक्षक, रुधिरपायी लड़ाके बराबर अपने दक्षिणके चीनी गांवो और नगरोंपर आक्रमण किया करते थे। उनकी संपत्ति घोड़ा, ढोर और भेड़ें थी, और कभी कभी ऊंट, गदहे, खच्चर भी इनके पास देखे जाते थे। वर्तमान मंगोलिया, मंचूरिया तथा इनके उत्तरके साईबेरियाके भूभाग इनकी चरभूमि थे। हूण कबीलोंको चीनी ह्युङ्-नू कहते थे। तुर्क, किरगिज, मगयार (हुंगर) आदि पीछे इनके ही उत्तराधिकारी हुए। ह्युङ्-नूके अतिरिक्त चीनी इतिहास एक और भी घुमन्तू मंगोलायित जनका पता देता है, जिसको तुङ्-हू कहते थे। इन्हीके उत्तराधिकारी पीछे खित्तन (खिताई), मंचू आदि हुए। विशाल हूण जनके बहुत छोटे छोटे उपजन थे, जिनके अपने अपने सरदार हुआ करते थे। हमारे यहा तथा दूसरे देशोमें भी ओर्दू (उर्दू) शब्द सेनाका पर्याय माना जाता है। इन घुमन्तुओंमें एक पूरे जन—जिसमे उसके सभी नरनारी बाल-वृद्ध सम्मिलित थे—को ओर्दू कहा जाता था। इनका शासन जनतान्त्रिक था, और सरदारको जनके ऊपर अपना स्वतंत्र दर्जा कायम करनेका अधिकार नही था। हूण बच्चे जहा बचपन हीसे पशुओ का चराना सीखते थे, वहा उससे भी पहिले वह छोटी छोटी धनु ही से पहिले चूहेका शिकार करते, फिर सियार और खरगोशका। नंगी पीठ पर घोड़सवारी करना भी बचपन ही से इन्हें सिखाया जाता था और अधिक क्षमता प्राप्त करनेपर वह घोड़े पर बैठे-बैठे धनुष चलाने लगते थे। दूध और मांसका भोजन तथा चमड़ेकी पोशाक इन्हें अपने पशुओंके ऊपर निर्भर करती थी। ऊनके नम्दे भी यह बना लेते थे। जवानो अर्थात् योद्धाओंका इनके यहा बहुत मान था, और खानपानमें सबसे पहिले उनकी ओर ध्यान दिया जाता था। बूढ़े और निर्बल सिर्फ जूठ-काठ पानेके अधिकारी थे। मरे पिताकी रखी या छोड़ी हुई स्त्रियोंके पति बेटे हुआ करते थे। छोटे भाईकी विधवा भी दूसरे भाईकी पत्नी बनती थी। शको या इनकी स्थितिमें रहनेवाले दूसरे जनोकी तरह लड़ाईसे पीठ दिखाकर भागना इनके यहा बुरा नहीं समझा जाता था, बल्कि वह युद्ध-कौशलका एक अंग था। दया-मायाकी इनके यहा कम गुंजाइश थी। इनके हथियार धनुष-बाण, तलवार और छुरे थे। सालमें तीन बार इनकी जन-सभा होती थी, जबकि सारा ओर्दू एकत्रित होकर जहा

---

[1] आर्खे० ओचेर्क० पृष्ठ २४-२५

धार्मिक और सामाजिक कृत्योको पूरा करता, वहा साथ ही राजनीतिक और दूसरे झगडे भी मिटाता। बहुत से सरदारोके ऊपर निर्वाचित राजा को शान्यू कहा जाता था।

अन्दाज लगाया जाता है, कि १४००-२०० ई० पू० तक चीनमे उत्तरके इन घुमन्तुओकी लूटपाट बराबर होती रहती थी। ईसा-पूर्व तीसरी शताब्दीमे सान्-शी, शेन्-शी, ची-ह्ली मे इनके ओर्दू विचरा करते थे। इसी समय ह्वाङ-हो नदीके मुडाव पर भी इनका ओर्दू रहा करता था, जिसके कारण आज भी उस प्रदेशको ओर्दुस् कहते हैं। चिन-शी-ह्वाङ ती (२५५-२०६ ई० पू०) ने चीनके बडे भागको एक राज्यमें परिणत कर सोचा, कि हूणोकी लूटमारसे कैसे चीनकी रक्षा की जाय। इसके लिये उसने चीनकी महान् दीवारके कितने ही भागको एक रक्षाप्राकारके तौर पर निर्मित कराया, और ओर्दू तथा शान्-सी आदि प्रदेशोमे घुस आये हूणोको निकाल कर उत्तरकी ओर भगा दिया। समुद्र तटसे पश्चिममे लन्चाउ तक की इस दीवारको बनानेमें ५ लाख आदमी मर-मर कर वर्षों तक कोडोके नीचे काम करते रहे। निर्माण-कालसे लेकर हजार वर्षो तक उत्तरके घुमन्तुओं और चीनका जो खूनी सघर्ष होता रहा, उसके प्रमाण स्वरूप लाखो खोपडिया दीवारके किनारे जमा होती गई। चीनके उत्तरमे जहा हूणोसे मुकाबिला करना पडता था, वहा पश्चिममें यूची-पूवज शक भी कम खून-खराबी नही करते थे।

२ हूण-राजावलि

१	तूमन शान्-यू	२५० ई० पू०
२	माउदुन्, तत्पुत्र	१८३ ,,
३	ची-यू, तत्पुत्र	१७२ ,,
४	चू-चेन्, तत्पुत्र	१७२-१२७ ,,
५	इचिसे, तद्भ्रात	१२७-११७ ,,
६	अच्वी	११७-१०७ ,,
७	चान्-सीलू	१०७-१०४ ,,
८	शूली-हू	१०४-१०३ ,,
९	शूती-हू	१०३-९८ ,,
१०	हूलू-हू	९८-८७ ,,

(१) तूमन शान्-यू (२५० ई० पू०)[1]—जिस समय चिन-वशके नेतृत्वम चीन एकताबद्ध हो रहा था, उसी समय (२५० ई० पू०) हूणोमें भी एकता पैदा हुई। चीन सम्राट्की मृत्युके बाद जो अराजकता पैदा हुई, उससे हूणोके प्रथम शानूयू तूमन ने लाभ उठाया और डेढ़ हजार बरस पीछे होनेवाले अपने योग्य उत्तराधिकारी चिंगिज खान्की तरह ओर्दू तथा दूसरे प्रदेशोपर लूटमार की, और ओर्दूस्को फिरसे अपने जनकी गोचर-भूमि बना लिया। उत्तरसे हूण आकर अब फिर पश्चिमी कान्सूके निवासी यूचियोके पडोसी बन गये। तूमन्का प्रभाव अपने जनपर बहुत था, किन्तु हूणोका सबसे बडा शानूयू उसका पुत्र माउदुन हुआ। बुढ़ापेमे पिताने अपनी

[1] A thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai 1895)

तरुणी पत्नीके फेरमें पड़कर ज्येष्ठ पुत्र माउ-दुनको वंचित करके छोटेको राज देना चाहा। माउदुनको रास्तेसे अलग करनेके लिये उसने अपने पश्चिमी पड़ोसी (यूची लोगोंके) पास अमानत रखा और फिर उनपर आक्रमण कर दिया। जिसका अर्थ यही था, कि यूची माउदूनको मार डालें। लेकिन, माउ-दून एक तेज घोड़ेपर चढ़कर भाग निकला। पिताने प्रसन्नता प्रकट करनेके लिये उसे दस हजारी सरदार बना दिया, किन्तु माउदून अपने पिताकी करनीको भूलनेवाला नहीं था। कहते हैं, माउदूनने सिटकनी (सानवाला बाण) का आविष्कार किया। वह शब्दवेधी बाणमें अभ्यस्त था, एक दिन उसने बूढ़े पिताको बाणका लक्ष्य बनाकर बदला लिया।

(२) माउदून (१८२ ई० पू०)[1]—शान्-यू बनते ही माउदूनने अपने पिताके परिवारको कत्ल कर डाला और केवल पिताकी एक स्त्रीको अपने लिये जीवित रहने दिया। इस समय तक चीन और यूची ही नहीं, बल्कि पुराने तुंगुस (तुङ्-हू, ह्वान) भी अपने जनका एक बड़ा संगठन कर चुके थे। हूणोंकी उनके साथ भी लड़ाई होने लगी। गोबीकी बालुका भूमिके बीचमें दोनों जनोंका एक भीषण संघर्ष हुआ। वह माउदूनका मुकाबला कर बुरी तौरसे हारे। बहुतसे तुंगुसोंको हूणोंने अपना दास बनाया। उनमेंसे कुछ भागकर मंगोलियाके उत्तर-पूर्वमें जानेमें सफल हुए, जो आगे धीरे धीरे शक्ति-संचय करके फिर हूणोंके प्रतिद्वन्द्वी बन गये। माउदून एक चतुर सेनानायक था। जनके संगठन और शासनमें भी उसने वसी ही प्रतिभा दिखलाई। उसने अपने तीन प्रतिद्वन्द्वी जनोंको परास्त कर हूणोंकी शक्तिको बढ़ाया। उसे कोरेस, दारयोश, सिकन्दरकी श्रेणीका विजेता माना जा सकता है। तुंगुसोंको उसने परास्त करके उत्तरसे अपने को सुरक्षित कर पश्चिमी पड़ोसी यूचियोंकी खबर लेनेकी ठानी। यूची भी बड़े वीर योद्धा थे, हूणोंकी तरह ही वह घुमन्तू पशुपाल तथा घोड़सवारीके साथ धनुष चलाना जानते थे। यह बहुत संभव है, हथियार और युद्धकी शिक्षामें हूणोंके गुरु इन्हीं शकोंके पूर्वज थे। यूची माउदूनकी सेनासे कितने ही समय तक मुकाबिला करते रहे, किन्तु अन्तमें (१७६ या १७४ ई०पू०) उन्हें हूणोंके सामने पराजय स्वीकार कर कोकोनोर और लोबनोरकी अपनी पितृभूमिको छोड़नेके लिये मजबूर होना पड़ा। माउदूनने चीन-सम्राट् वेन्-ती (१६६-५६ ई० पू०) को लिखा था—"जितनी जातियां (तातार) घोड़ेपर चढ़े धनुषको क्षुब्ध रखती हैं, उन्हें एकताबद्ध कर मैंने एक राज्य कायम कर लिया। यूचियोंको और तरबगताइयोंको भी मैंने नष्ट कर दिया। लोबनोर तथा आसपासके २६ राज्य, अब मेरे हाथमें हैं। अगर तुम नहीं चाहते, कि ह्यु-ङ्नू महादीवारको पार करें, तो तुम्हें चीनियोंको महादीवारके पास हर्गिज नहीं आने देना चाहिये। साथ ही मेरे दूतको नजरबन्द न कर तुरन्त मेरे पास लौटा देना चाहिये।"

(क) शासन आदि—

माउदूनका राज्य पूरबमें कारियासे लेकर पश्चिममें बल्काश तक और उत्तरमें बैकालसे दक्षिणमें क्विन्‌लन् पर्वतमाला तक फैला हुआ था। उसके पिताके समय हूण राज्य केवल अपने कबीले तक सीमित था और दक्षिणमें चीनके भीतर हूण जब तब लूटमार भर कर लिया करते थे। इतने बड़े राज्यके संचालनके लिये पुरानी व्यवस्था उपयुक्त नहीं हो सकती थी, इसलिये माउदूनको

---

[1] वहीं p 347, वेनश्ताम् (आर्खे० ओचेक० पृ० ६२)

नई व्यवस्था कायम करनी पड़ी। यह स्मरण रहना चाहिये, कि हूणोका समाज पितृसत्ताक था अभी वहा सामन्तशाही नही फैली थी। चीनमें किसान अर्धदास और दास जैसे थे। उनके बाल-बच्चे सामन्तोंकी चल सम्पत्ति थे। हूण-शासनयन्त्र निम्न प्रकार था—

१२ माउदुनका हूणसाम्राज्य (१८३ ई० पू०)

(१) शान्-यू—राजावाची चीनी शब्द शान्-यूका हूण भाषाका रूप जेगी कहा जाता है। शायद इसीका रूपान्तर चगीज हुआ। राजाकी पूरी उपाधि थी तेंग्री-कुदू शान्-यू (देव-पुत्र महान्)। आज भी मगोल और तुर्की भाषामें देवताका वाचक तेंग्री शब्द मौजूद है। शान्-यू प्रभावशाली योद्धा और नेता होता, लेकिन उसके ऊपर हूण-ओर्दूका नियत्रण रहता था।

(२) दूगी—इसका अर्थ है धर्मात्मा या न्यायी। शान्-यूके नीचे दो दूगी हुआ करते थे, जिनमें एकको पूव-दूगी और दूसरेको पश्चिम-दूगी कहते थे। पूव-दूगीका दर्जा ऊचा समझा जाता था, और आमतौरसे वह युवराज माना जाता था। हूण साम्राज्यके पूव भाग पर पूर्व-दूगीका शासन था और पश्चिम पर पश्चिम-दूगीका। राज्यके मध्य-भाग अर्थात् हूण-जनक्षेत्र पर स्वय शान्-यू सीधे शासन करता था।

(३) रुक-ले (कुतलू)—यह भी दक्षिण और वाम दो होते थे, जिनमे वामका दर्जा ऊचा था।

(४) इनके नीचे वाम और दक्षिणके दो सेनापति होते थे।

(५) इनके नीचे वाम दक्षिण के दो दीवान होते थे। आगे भी दो वाम दक्षिण कुतलू जैसे दसहजारी और हजारी तकके चौबीस सैनिक अधिकारी होते थे। हूण-शासनमें सैनिक-असैनिक अधिकारका भेद नही था।

इनके अतिरिक्त हूण-शासकों की उपाधि, शृगोसे समझी जाती थी, जो शायद समय समय पर उनके शृगार होते हों। दोनो दूगी और दोनो रुकले चतु शृग कहे जाते थे। उनके नीचे षट्-शृग अधिकारी थे। दोनो कुतलू शासन-प्रबधकको देखते थे। दूगी आदि २४ श्रेष्ठ अधिकारियो-के अपने क्षेत्र थे, जिनके भीतर ही वह अपने ओर्दू तथा पशुओको लेकर विचरण कर सकते थे। उनको अपने हजारी शतिक और दशिक आदि अफसरोके नियुक्त करनेका अधिकार था।

शान्-यूकी रानीकी पदवी इन् चो (येन्-चो) थी। हूणोंके तीन-चार ऊंचे कुलमें से उसे लिया जाता था। शान्-यूका अपना कुल बहुत ही सम्मानित समझा जाता था। हूणोंने जो श्रेणियां और पदवियां स्थापित की थी वह तुर्कों और मंगोलोंके समय तक मानी जाती रही। तैमूरने भी हजारी पंच-हजारी दस-हजारी दर्जे मंजीवार किये थे जो कि उसके वंशज बाबरके साथ पीछे भारतमें आये।

(ख) नववर्षोत्सव—

यह उत्सव हूणोंका सबसे बड़ा राष्ट्रीय मेला था, जिसे शान्-यू बड़ी शान-शौकतसे मनाता था। पितरों, तिङ्गरी (देव), पृथिवी और भूत-प्रेतोंके लिये बलि इसी समय दी जाती थी। शरदमें दूसरा महोत्सव मनाया जाता था, जिसमें ओर्दूकी जनगणना, सम्पत्ति और पशुओं पर कर लगानेका काम किया जाता था। हूण-जनामें अपराध कम था और उसके दण्ड देनेमें देरी नहीं की जाती थी। वह दोनों महोत्सवोंके समय किया जाता था। महोत्सवमें घुड़-दौड़, ऊंटोंकी लड़ाई तथा दूसरे कितने ही सैनिक और नागरिक मनोरंजनके खेल होते थे। उनके अपराध दण्डमें मृत्यु-दण्ड तथा घुटना तोड़ देना भी शामिल था। सम्पत्तिके विरुद्ध अपराधका दण्ड था सारे परिवारका दास बना दिया जाना।

नववर्षोत्सव और शरदोत्सव दोनों सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक महा-सम्मेलन थे। इनके अतिरिक्त भी शान्-यूको कुछ धार्मिक कृत्य रोज करने पड़ते थे। दिनमें शान्-यू सूर्यको नमस्कार करता और सन्ध्याको चन्द्रमाकी पूजा और नमस्कार। चीनियोंकी भांति हूण भी पूर्व और वाम दिशाको श्रेष्ठ मानते थे। शान्-यू सभामें उत्तरकी ओर मुंह करके बैठता, जब कि चीन सम्राट का बैठना दक्षिणाभिमुख होता था। चान्द्रमासकी तिथियोंको प्रधानता दी जाती थी। सेना अभियानके लिये शुक्लपक्ष और वहांसे लौटनेके लिये कृष्ण-पक्ष प्रशस्त माना जाता था। लूट में सम्पत्ति और बंदी हुए दासोंका स्वामी वही होता था, जिसने दुश्मनसे उन्हें छीना। दुश्मन का सिर काट लेना, बहुत वीरता मानी जाती थी।

जान पड़ता है, शकोंका प्रभाव हूणों पर भी पड़ा था। शकोंकी भांति ही हूणोंमें भी मृत सरदारकी बहुत सी मूल्यवान सम्पत्ति कब्रमें गाड़ दी जाती थी, समाधिके ऊपर कोई स्तूप या वृक्ष आदि चिन्ह नहीं लगाया जाता और न मरेके लिये बहुत रोना-धोना किया जाता था।

(ग) युद्ध—

हूण पशुजीवी ही नहीं आयुध-जीवी भी थे। लूटमार उनका पेशा था। उनकी लड़ाईकी एक बड़ी चाल थी, दुश्मनके सामने पराजित होनेका अभिनय करके भाग पड़ना। जब दुश्मन उनका पीछा करते कुछ दूर निकल जाता, तो सुशिक्षित सुसंगठित जहां-तहां छिपे हूण दस्ते शत्रुकी पीठ पर आक्रमण कर देते। माउदूनने चीनके युद्धमें एकबार इस तरह ३ लाख २० हजार चीनी सैनिकोंको अपने जालमें फंसा लिया था। चीन सम्राट अपनी सेनाके साथ आधुनिक ता-तुङ्-फू (शेनसी) से एक मील दूर एक दृढ़ दुर्गबद्ध स्थान पर पहुंच चुका था, लेकिन उसकी अधिकांश सेना पीछे रह गई थी। माउदून अपने ३ लाख चुने हुए सैनिकोंके साथ चीनियों पर टूट पड़ा और सम्राट् घिर गया। सेना ७ दिन तक घिरी रही। बड़ी मुश्किलसे चीनी अपने सम्राट्को घेरेसे निकाल पाये। समझौतेमें उन्हें कितनी ही अपमानजनक बातें करनी पड़ी। माउदूनके घेरेका

एक कोना ढीला था। इस निर्बल कोनेसे सम्राट् सेनाके साथ भागनेमें समर्थ हुआ। माउदूनने पीछा नहीं किया। चीनको अपनी एक राजकुमारी, रेशम तथा बहुमूल्य धातु, रत्न, चावल, अंगूरी शराब तथा बहुत तरहके खाद्यकी भेंट देनेके लिये मजबूर होना पडा। इस तरह चीनी राजकुमारियोंका शक्तिशाली घुमन्तू राजाओंसे व्याह करनेकी प्रथा चली। समझा गया, राजकुमारीका लडका मातृकुलका पक्षपाती होगा।

चीन सम्राट् हुङ-तीके मरनेके बाद उसकी विधवा रानी कौन्हू अपने पुत्र (वेन्-ती) को गद्दी पर बैठा बारह साल (१८७-७९ ई० पू०) तक स्वय राज करती रही। हूणोमें पितृ-सत्ताक समाज होनेके कारण कुछ सुभीता था, जिसके कारण कितने ही चीनी भाग कर उनके राज्यमे चले जाते थे। ऐसे ही किसी दरबारीकी बातमे पडकर माउदूनने रानीको सदेश-पत्र भेजकर अपने हाथ और हृदयको देनेका प्रस्ताव किया। दरबारियोने युद्धकी आग भडकानेकी कोशिश की, लेकिन किसी समझदारने रानीको समझाया—"अभी भी लडके हमारी सडको पर सम्राट्के भागनेकी गीत गाते फिरते है।" रानीने बहुत नरम सा पत्र लिखा—"मेरे दात और केश परम-भट्टारक (आप) के प्रेमको प्राप्त करनेके योग्य नही है।" साथ ही उसने दो राजकीय रथ, बहुत से अच्छे अच्छे घोडे तथा दूसरी भेंटे भेजी। माउदून इससे कुछ लज्जित सा हुआ और उसने बहुत से हूणी घोडे भेजकर क्षमा मागी। माउदूनने बहुत लम्बे काल (३६ साल) तक राज्य किया।

(३) चो-यू[1] (कूयुक् १६२ ई० पू०) यह माउदूनका पुत्र था, जिसे चीनी लेखक लाऊशान् शान्-यू (महान् वृद्ध जेङ-गी) के नामसे याद करते है। सम्राट्ने शान्-यूके लिये नई राजकुमारी भेजी, जिसके साथ वहासे एक हिजडा (ख्वाजासरा) भी आया, जो जल्दी ही शान्-यूका विश्वासपात्र मत्री बन गया। चीनी भेंटो, राजकुमारियो के प्रभावमें आकर हूण ज्यादा विलासी होते जा रहे थे। ख्वाजासरा इसे पसद नही करता था। उसने हूणोंको समझाया—"तुम्हारे ओर्दूकी सारी जनसख्या मुश्किलसे चीनके कुछ परगनोके बराबर होगी, किंतु तब भी तुम चीनको दबानेमे समर्थ होते रहे। इसका रहस्य है, तुम्हारा अपनी वास्तविक अवश्यकताओके लिये चीनसे स्वतत्र होना। मैं देखता हूँ, कि तुम दिन पर दिन अधिक और अधिक चीनी चीजोके प्रेमी बनते जा रहे हो। सोच लो, चीनी सम्पत्तिका ५वा भाग तुम्हारे सारे लोगोको पूरी तौरसे खरीद लेनेके लिये काफी है। तुम्हारी भूमिके कठोर जीवनके लिये रेशम और साटन उतने उपयुक्त नही है, जितना कि ऊनी नम्दा। चीनके तुरन्त नष्ट हो जाने वाले व्यजन उतने उपयोगी नही हो सकते, जितनी तुम्हारी कूमिश और पनीर।" वह बराबर हूणोको इस तरह सजग करता रहा। चीनके जवावमें शान्-यूकी ओरसे जो चिट्ठी उसने लिखवाई थी, वह चमपत्रकी लम्बाई चौडाईमें ही अधिक बडी नही थी, बल्कि उसमें शान्-यूकी अधिक लम्बी उपाधि भी लिखी गयी थी—"हूणोके महान् शान्-यू जेंगी, और पृथिवीके पुत्र, सूर्य-चन्द्र-समान आदि" आदि।

चीनी राजदूतने एक बार हूणोंमें वृद्धोका सम्मान नही होता कहकर ताना मारा था, इसपर उसने जवाब दिया—"जब चीनी सेना लडाईके लिये निकलती है, तो मैं नही देखता, कि उनके सबघी अपनी सेनाके लिये कितनी ही अच्छी चीजोसे अपनेको वचित न करते हो। हूणोका व्यवसाय

---

[1] A thousand years of Tatars, p 348

है युद्ध। बूढ़े और निर्बल युद्ध नहीं कर सकते, इसीलिए सबसे अच्छा आहार लड़नेवालोंको दिया जाता है।" "लेकिन पिता और पुत्र एक ही तम्बूको इस्तेमाल करते हैं, पुत्र अपनी सौतेली मासे ब्याह करता है। भाई भाभी या चचा-भतीजेके साथ कोई विशेष विचार नहीं रखता।" यह कहने पर उसने कहा—"हूणोंका रिवाज है अपनी भेड़ और ढोरोंके मासको खाना और दूधको पीना। वह ऋतुके अनुसार घास-पानीको लेकर भिन्न-भिन्न चरभूमियोंमें घूमा करते हैं। हर एक हूण पुरुष दक्ष धनुर्धर होता है शान्तिके समय भी उनका जीवन सरल और सुखी होता है। उनके शासनके नियम बिल्कुल सरल हैं। शासक और जनताका सम्बन्ध उचित और चिरस्थायी है। यद्यपि पुत्र या भाई अपने पिता या भाइयोंकी स्त्रियोंको रख लेते हैं, किंतु इसका कारण यही है, कि अपने खानदानको सुरक्षित रख सकें। चीनी विचारानुसार यह पाप हो सकता है, लेकिन इससे कुल और वंशकी रक्षा होती है।" यह कहते हुए यह भी कहा—"लेकिन चीनमें दिखावाके लिये चाहे पुत्र या भाई ऐसे पापके भागी न होते हों, किंतु इसका परिणाम होता है विद्रोह, शत्रुता और परिवारका ध्वंस। तुम्हारे यहां आचार और अधिकारकी ऐसी गंदी व्यवस्था है जिसने एक वर्गको दूसरे वर्गके खिलाफ खड़ा कर दिया है, एक आदमी दूसरे आदमीके विलासके लिए दास बननेके लिये मजबूर है। आहार और कपड़ा केवल खेतके जोतने और रेशम-कीट पालनेसे मिलता है। वैयक्तिक सुरक्षाके लिये प्राकार-बद्ध नगर बनाना पड़ता है। संकटके समय तुम्हारे यहां कोई नहीं जानता, कि कैसे लड़ना चाहिये, और शान्तिके समय तुम्हारा हर एक आदमी ऐड़ीसे चोटी तक खून पसीनेको एक करते जीता है। अपने ढकोसलोंकी बढ़-बढ़कर बात मेरे सामने मत करो।" फिर उसने कहा—"चीनी दूत, तुम्हें बोलना कम चाहिये और अपनेको इतने ही तक सीमित रखना चाहिये, जिसमें अच्छे किसम और अच्छे नापका रेशम, चावल, शराब आदि हमारी वार्षिक भेंटें भेजी जायें। यदि भेंटकी चीजें संतोषजनक हों, तो बात करना बेकार है। हम लोग बात बिल्कुल नहीं करेंगे। यदि हमें संतुष्ट नहीं करोगे, तो हम तुम्हारी सीमाओं पर आक्रमण करेंगे।"

७ साल राज करनेके बाद चीयूको चीनके ऊपर आक्रमण करनेकी अवश्यकता पड़ी। वह १ लाख ४० हजार हूण सेनाके साथ लूटपाट करता वर्तमान सियान्-फू तक चला आया और बड़ी भारी संख्यामें लोगों, पशुओं और धन-सम्पत्तिको अपने साथ ले गया। चीनी बड़ी तैयारी करनेमें लगे थे, किंतु तब तक चीयू अपना काम करके लौट चुका था। कई साल तक यह आतंक छाया रहा, फिर इस बात पर सुलह हुई—"महा-दीवारसे उत्तरकी सारी भूमि धनुधरों (हूणों) की है, और उससे दक्षिणकी भूमि टोपी और कमरबन्द वालोंकी।"

यूची-पलायन—चीयूकी सबसे बड़ी विजय थी, कान्सूम यूची शकोंको भगाना। माउदुन उन्हें सिर्फ परास्तभर कर पाया था। उस समय लोबनोरसे ह्वाङ्हो के मुड़ाव तक यूचियोंकी विचरण-भूमि थी। लोबनोरसे उत्तर-पूरब सइवाङ्(शक) रहते थे। चीयूने अपनी सुसंगठित सेनासे यूचियों पर लगातार ऐसे जबर्दस्त आक्रमण किये, जिसके कारण यूचियोंकी भारी क्षति हुई और १७६ या १७८ ई० पू० में वह अपनी भूमि छोड़कर पश्चिमकी ओर भागनेके लिये मजबूर हुए। सइवाङ्की भूमिमें थोड़ा जानेके बाद उनका एक भाग तरिम-उपत्यकाकी ओर चला गया और दूसरा इली-उपत्यकाके रास्ते आगे बढ़ा—पहले भागको लघु-यूची कहते हैं और दूसरेको महायूची। लघु यूचियोंके आनेसे पहले तरिम-उपत्यका उन्हीं खशों (कशों) की थी, जो कि उस समय भी कश्मीर

और पश्चिमी हिमालय तक फैले हुए थे। अब कुछ शताब्दियोंके लिये तरिम-उपत्यका लघु-यूचि-यो की हो गई। महायूचियोंने सइचक्को खदेड़ कर उनकी जगह अपने हाथमें ले ली। सइ-वाङ्क अपने पश्चिमी पड़ोसी तथा त्यानशान और मस्तनद के निवासी वूसुन पर पड़े। महायू-चियोको हूणोने यहा भी चैनसे नही रहने दिया और वह बराबर पश्चिमकी ओर बढ़ते हुए सिर-दरिया और अराल समुद्र तक फैल गये। फिर वहासे दक्षिणकी ओर घूमे। कुछ समय तक उनका केन्द्र वक्षु नदीके उत्तरमे था। इसी समय ग्रीको-वाख्त्री राजा हेलियोक्ल मरा था। कास्पियन तटवासी पार्थियो और सोग्द-उपत्यकामे पहुचे यूचियोने उसके राज्यको आपसमे बाटकर इस यवन-राजवशको खतम कर दिया। आगे १२८ ई० पू० मे, जब चाङ्क्यान् वाख्तरमे पहुचा, तो उस समय वह यूचियोका केन्द्र बन चुका था। आगे हम बतलायेंगे, कि कैसे यूची अपनी शक्तिको आगे बढाते हुए भारत तक पहुचे।

§३ पीछेके हूण शासक

(४) चूचेन=चीयू (१७२-१२७ ई० पू०)—अपने बापके स्थान पर शान्-यू बना। चीनी हिजड़ा अब भी प्रभावशाली मत्री था। चीयू के पास भी चीनसे नई राजकुमारी आई। तत्कालीन चीन सम्राट् वू-तीने उसे धोखेसे पकड़ना चाहा, भारी युद्ध हुआ, अन्तमे शान्यू जालमें एक वार आकर भी निकल भागनेमें समर्थ हुआ। अब चीन और हूणोके निरतर सघर्ष होने लगे और चीनी सीमात हूणोंकी आक्रमण-भूमि बना रहा।

(५) ईचिसे[1] (१२७-११७ ई० पू०)—यह ५वा शान्-यू चीयेका भाई था। इसने भी चीन सीमात पर लूटमार जारी रक्खी, लेकिन वह बहुत दिनो तक चल नही सकी। वूती बड़ा शक्तिशाली सम्राट् था। उसने हूणोका बल तोड़नेके लिये बहुत भारी तैयारी की। इसकी बड़ी बड़ी सेनाओंने एकके बाद हूण-भूमिपर लगातार आक्रमण किये, लाखो हूणोको बेदर्दीसे मारा और उनकी भेडोको बड़ी सख्यामें पकड़ लिया। इस प्रकार हूण उत्तरकी ओर भगाये जाते रहे। यूचियोकी भूमि (कान्सू) हूणोसे खाली करा ली गई। कान्सूमें ही एक नगर चाङ्-ये था, जहा कोई हूण सरदार रहता था। इस नगरके विजयके समय चीनी सेनाको एक सोनेकी मूर्ति मिली, जिसकी हूण पूजा किया करते थे। अदाज लगाया जाता है, कि यह "सुवर्ण-पुरुष" बुद्धकी प्रतिमा थी। तरिम-उपत्यकामें बुद्ध-धर्म अशोकके समयमें पहुचा बतलाया जाता है, हो सकता है, वहासे यूचियामें होते वह हूणोंमें पहुचा हो। यूचियोकी पुरानी भूमिके विजयके बाद चीनको भारतका परिचय वहा प्रचलित बौद्ध-धर्मके कारण ही मिला। लेकिन बौद्ध-धर्मके चीन में पहुचनेका प्रमाण अभी और पीछे मिलता है।

यद्यपि चीनी सेना हूणोंको उत्तरमें ढकेलने में सफल हुई थी, किंतु वह उसे सदाकी विजय नही समझती थी। इसीलिए सम्राट् वूतीने अपने सेनापति चाङ्-क्यान्को अपने शत्रु हूणोके शत्रु यूचियोके पास भेजा, कि पश्चिमसे यूची भी उनके ऊपर आक्रमण करें। सम्राट्ने यूचियोको उनकी पुरानी भूमिमें आकर बसनेका निमत्रण दिया। चाङ्-क्यान् १३८ ई० पू० में अपनी यात्रा पर चला। यह चीनका प्रथम महान् यात्री है, जिसका यात्रा-विवरण

[1] A thousand years of Tatar, p 349

बड़ा आनन्ददायक है। चाङ-क्यान् दस साल हूणोंका बन्दी रहा। जब वू-सूनोंने अपनेको हूणोंसे स्वतंत्र कर लिया, तो यह वह हूणोंकी नजरबन्दीसे भागकर वूसून भूमिसे होते हुए खोकन्द पहुंचा। यहांके निवासी घुमन्तू नहीं, बल्कि नगरों और ग्रामोंके निवासी थे। वहांसे समरकन्द होते वह यूचियोंके केन्द्र बाख्तरमें पहुंचा। चाङ-क्यानने यूचियोंको बहुत समझानेकी कोशिश की, कि सम्राट् वू-तीने तुम्हारी जन्मभूमि खाली करा ली है, वह चाहते हैं कि तुम लौटकर उसे सम्हाल लो। लेकिन यूची भली प्रकार जानते थे, कि घुमन्तुओंका जीतना वैसा ही अचिरस्थायी है, जैसा कि ढेला फेंकने पर काईका फटना। वह बाख्तरके विशाल राज्यके स्वामी हो आनन्दसे जीवन बिता रहे थे, इसलिये हूणोंसे झगड़ा मोल लेनेके लिये तयार नहीं थे। चाङ-क्यान्को बदख्शां, पामीर और सिङ्-कियाङ होकर लौटना था, जहां वह हूणोंकी पहुंचसे बाहर नहीं रह सकता था। उसे फिर उनकी फंदमें रहना पड़ा और बारह वर्ष (१३८-१२६ ई० पू०) के बाद चीन लौटनेका मौका मिला। ११५ ई० पू० में फिर उसे वू-सुनोंके पास भेजा गया, जो इस्सिकुल महासरोवरके पास त्यान्-शान्में रहा करते थे। चीन पश्चिम जानेवाले रेशम पथको सुरक्षित तौरसे अपने हाथमें रखना चाहता था, इस लिये चाङ-क्यान्को दूसरी बार भेजा गया था। उसने पार्थिया आदि दूसरे देशोंमें पता लगानेके लिये अपने दूत भेजे। लौटकर उसने सम्राट्की पश्चिमी देशोंके बारेमें रिपोर्ट दी। मूल रिपोर्ट प्राप्य नहीं है, लेकिन सूमा-च्याङने ९९ ई० पू० में अपनी पुस्तक "शी-की" और पाङकीने ९२ ई०में "च्यान्-शान्-शूकी"में (अपूर्ण पुस्तक जिसे पीछे उसकी बहिनने पूरा किया) उपयोग किया है। पिछली पुस्तकमें २०६ ई० पू०—२४ ई० तकका वर्णन है। चाङ-क्यान् पश्चिमसे लौटनेके बाद ११४ ई० पू० में मर गया। उसके विवरणके जो अंश मिलते हैं, उनसे बहुत सी बातोंका पता लगता है। पार्थियन लोग चर्मपत्र पर आड़ी लाइनमें लिखते थे। फर्गानासे पर्थिया तक शक-भाषा बोली जाती थी।

इवी-ज्या (१२७-११७ ई० पू०), अच्वी (११७-१०७ ई० पू०), चान्-सी-लू (१०७-१०४ ई० पू०), शूली-हू (१०४-१०३ ई० पू०), शू-ती-हू (१०३-९८ ई० पू०), हू-लू-हू (९८-८७ ई० पू०) ये हूणोंके ५र्वेके बादके शान्-यू हैं, जिनका समकालीन हान्वंशी सम्राट् वू-ती (१४०-८६ ई० पू०) था। चिन्-वंशने हूणोंकी शक्तिको तोड़नेके लिये जो प्रयत्न किया था, उसकी समाप्ति हान्वंश ने की।

(क) वूती और हूण

वू-तीका ५४ वर्ष का शासन हूणों के पराजय, चीन के शक्ति के चरम उत्कर्ष और रेशम-पथ को सुरक्षित करने के लिये बहुत महत्त्व रखता है। १२९ ई० पू०, ११९ ई० पू० और ९९ ई० पू० में चीन ने हूणों के ऊपर तीन जबदस्त आक्रमण करके उनके उर्दू को छिन्न-भिन्न कर दिया। जेनरल वेइ-सिन् के आक्रमण १२९ और ११९ ई० पू० में हुये थे। इन आक्रमणों के फलस्वरूप हूणों की सैनिक शक्ति ही नहीं तोड़ दी गई, बल्कि तीन सालों के भीतर चीन को १९ हजार, ७० हजार और १० हजार हूण बंदी मिल गये, जिन्होंने दास बनकर चीन के आर्थिक विकास में भारी काम किया। इधर फर्गाना तकका वणिक्-पथ भी चीन के हाथ मे आ गया, इसलिये रोम के साथ खूब व्यापार होने लगा। इससे पहले ही

अल्ताई के उत्तर-पूरब के घुमन्तू तिङ्गली और मप्तनद तथा त्यानशान के व-सुन हूणो के अधीन थे। वह समय पडने पर सैनिक सहायता भी देते थे।

वूती की सफलता का एक कारण यह भी था, कि धीरे धीरे हूण सरदार विलासी होते जा रहे थे और उनमें शक्ति हथियाने के लिये आपस में घोर वैमनस्य था। चीयूने १७६ या १७४ ई० पू० में यूचियो को देश छोडने के लिये मजबूर किया। यह हूण-शक्ति के चरम उत्कर्ष का समय था। अब जबकि वू-तीकी शक्तिसे मुकाबला करना था, तो हूणोका सगठन बहुत खोखला था। चीनके भीतर घुसकर लूटपाट करना हूणो की आजीविका का एक प्रधान साधन था और इसी वजह से कितने ही समय भिन्न-भिन्न सामन्तो के ओर्दू एक हो जाया करते थे। यह एकता स्थायी नही होती थी। इसीसे लाभ उठाकर ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी के अन्त तक फर्गाना तक का सारा मध्यएसिया चीन के हाथ में चला गया। १० वे शान्-यू हू-लू-कू (९८-८७ ई० पू०) के समय इस वैमनस्य ने हूणो में गृह-युद्ध का रूप ले लिया। ९० ई० पू० में चीन ने हूणो पर एक वहुत वडा सैनिक अभियान भेजा। इस समय सिङ्क्याङ्ग के कराखोजा और पीजाम् के इलाके चीनियो के हाथ में थे। इतिहास के आरंभ से ही तरिम-उपत्यका में कराशर से काशगर और काश-गर से खोतन तक बहुत से समृद्ध नगर वसे हुये थे, जिनमें खस और शक जातीय लोग रहा करते थे। चीनियो ने हूणो को वहुत दूर उत्तर भगा दिया था, किंतु इतने पर भी हूणो की शक्ति बिल्कुल खतम नही हुई थी। यह उस जवाब से मालूम होता है, जिसे कि सधि करने के लिये भेजे गये दूत को उन्होने दिया था—"दक्षिण हान के महान् वश का है और उत्तर हूणो का। हूण प्रकृति के स्वच्छन्द पुत्र हैं। वह कठिनाइयो तथा छोटी मोटी बातो की परवाह नही करते। चीन के साथ एक बडे पैमाने पर सीमान्ती व्यापार करने के लिये हमारा प्रस्ताव है, कि एक चीनी राजकुमारी व्याह करने के लिये आये, प्रति वर्ष १० हजार समूरी चमडे, उच्च श्रेणी के रेशम के १० हजार थान और इनके अतिरिक्त पहले सधि-पत्रो से मिलने वाली भेंट भी, हमारे पास भेजी जाय। यदि यह कर दिया जाय, तो हम फिर सीमात पर लूट पाट नही करेंगे।"

शान्-यू की मा बीमार थी। शकुन-शास्त्रियो ने बतलाया, कि देवता बलि चाहते हैं। खोकन्द के विजेता तथा चीन का सर्वश्रेष्ठ सेनापति स्यत्-बो दरबारी षड्यन्त्र के कारण भाग कर हूणों की शरण में चला आया था, उसी की वलि देवता को दी गई। जान पडता है, देवता इससे और रुष्ट हो गये। कई महीने तक लगातार हिम-वर्षा हुई। पशु और उनके बच्चे मर गये, लोगो में महामारी फैल गई। अन्न की फसल जहा होती थी, वहा पकने नहीं पाई। इसके साथ युद्ध-क्षेत्र मे भारी पराजय हुई, जिसमें बड़े-बडे सेनापति मारे गये। इससे हूणों की कमर क्यो न टूट जाती?

(ख) हूण-पराभव

खूखन, हू-हन्-ये या खू-नान्-जा (५९-३१ ई० पू०) १४ वा शान्-यू था। इस समय मचूरिया से लेकर इसीकुल तक की हूण-भूमि में प्रचड गृह-कलह चल रहा था। एक नही पाच-पाच शान्-यू बन गये थे, जिनमें हू-हन्-ये का अपना बडा भाई चीन्ची उसका जबदस्त प्रतिद्वद्वी था। आपसी सघर्ष तथा चीन के प्रहार के कारण कितने ही हूण सरदार चीन की अधीनता स्वीकार करने में ही कल्याण समझते थे। कराकोरम (मगोलिया) प्रदेश में हू-हान्-ये ने चीन्ची को जबदस्त हार दी। हू-हान्-ये का दूसरा प्रतिद्वन्द्वी बो-यान था, जिस पर उसने ५० हजार सेना के साथ आक्र-

मण किया। अन्त मे वो-यान को निराश होकर आत्महत्या कर लेनी पडी। हू-ह्यान्-ये का शासन बहुत मजबूत हो चला। इतने प्रतिद्वन्द्वियो के खिलाफ हू-ह्यान्-ये के विजय का एक कारण यह भी था, कि सरदारो के प्रभाव के बढ़ने के बाद भी हूणो में अभी सामरिक जनतंत्रता का लाप नही हुआ था और वह जननिर्वाचित था। किंतु, भोग और सम्पत्ति ने हूणो में भेद अवश्य प्रकट कर दिया था।

हू-ह्यान्-येने परिषद के सामने चीन की अधीनता स्वीकार करने का प्रस्ताव रक्खा। बहुत से सरदारो ने असहमति प्रकट की। उनका कहना था—"हमारा प्राकृतिक जीवन है केवल पशुबल और क्रियापरायणता। अपमानपूर्ण अधीनता तथा सुखी जीवन हमारे लिये उपयुक्त नही है, बल्कि उसके प्रति हम घृणा करते हैं। घोडे की पीठ पर चढकर लडना यही हमारी राजनीतिक शक्ति का मूलमंत्र है। यही वह चीज है, जिससे कि हम सदा बर्बर जातियो में अपनी प्रधानता कायम रखते आये है। युद्ध में मरना हमारे हरेक वीर योद्धा की कामना रहती है। चाहे हम आपस में कभी लड भी पडे, तो भी कोई परवाह नही, क्योकि यदि एक भाई सफल नही होगा, तो दूसरा सफल होगा और इस प्रकार राज्य सदा अपने वश मे रहेगा। असफल भाई भी कमसे कम बहुत सम्मानजनक मृत्यु को प्राप्त करेगा। चाहे चीनी साम्राज्य बहुत मजबूत है, किंतु वह न हमको जीतने की और न अपने मे पचा लेने की शक्ति रखता है। हम लोग क्या अपने पुराने रास्ते को छोडकर चीनियो के सामने नतमस्तक हो, और अपने पूर्वज शान्-युओ के नाम पर बट्टा लगायें, अपने को दास बनाये और दूसरे लोगों के सामने उपहासास्पद बनें। चाहे ऐसा करने से हमें शान्ति मिल जाय, किंतु दूसरो पर प्रभुत्व करने का हमारा हक सदा के लिये खतम हो जायगा।"

समर्पण के पक्षपाती एक राजकुमार ने कहा—"ऐसा नही है। सभी जातियो के सामने कुअवसर और सुअवसर आते रहते है। चीन की शक्ति इस समय बहुत उत्कर्ष पर है। कुलजा को लेकर उन्होंने दुर्गबद्ध कर लिया है। उधर के सभी राज्य चीन के विनम्र सेवक है। शू-ती-हू (१०३ ६८ ई० पू०) के समय से ही हम जो खो रहे हैं, उसे फिर प्राप्त नही कर सके। इस सारे समय में हम पिटे है। निश्चय ही इस समय हमारे लिये यही इच्छा है, कि थोडा सा अपने अभिमान को कम करे, न कि बराबर लडने जायें। यदि चीन की अधीनता स्वीकार करते है, तो शांतिपूर्वक हम अपने प्राणो की रक्षा कर सकते है। यदि हम ऐसा नही करते, तो बहुत भयंकर तौर से नष्ट होते जायेंगे। ऐसी अवस्था में हमारे लिये कौन रास्ता अच्छा है यह स्पष्ट है।"

चीन ने संधि की शर्तों में यह भी रखी थी, कि शान्-यू का एक पुत्र प्रतिभूति (अमानत) के तौर पर भेजा जाये। हू-ह्यान्-ये ने इसे स्वीकार किया। उसके जेठे भाई ची-ची ने भी वैसा ही किया।

अगले साल (५१ ई० पू० में) हू-ह्यान्-ये ने चीनी दरबार मे आने के लिये प्रार्थना की। हूण पराजित होते भी चीनकी जितनी क्षति कर बैठते थे, उससे यह सौदा सस्ता मालूम हुआ। सम्राट् स्वेन्-ती (७३-४८ ई० पू०) ने उसकी अगवानी के लिये एक मजबूत और बडा शानदार दस्ता भेजा, हू-ह्यान्-ये के आने पर स्वयं बडे सम्मान के साथ उसका स्वागत किया। सम्राट् के सभी राजकुमारो तथा दूसरे सामन्तो के ऊपर शान्-यू को माना गया और उसे धरती में सिर छुवा कर कोरनिश करने को नहीं कहा गया। सम्बोधन में भी शान्-यू का नाम लिये विना "आप मित्र" कहा गया। उसे बहुत मूल्यवान भेंट दी गई, जिसमें एक सोने की मोहर, एक राजकीय

खड्ग और कितने ही राजकीय रथ, घोडे, जीन और दूसरी चीजें थी। सम्राट् से मुलाकात करने के बाद विशेष दूत ने ले जाकर शान्-यू को निवास-स्थान पर पहुचाया। कुछ समय बाद शान्-यू को लौटने की अनुमति मिली।[1]

ची-ची ने भी अधीनता स्वीकार करते हुये प्रार्थना की थी, कि उसे महादीवार के बाहर ओर्दुस प्रदेश में रहने की आज्ञा दी जाये, जिसमें कि खतरे के समय वह उधर के दुर्गवद्ध नगरो की रक्षा कर सके। ची-ची के दूत की भी सम्राट् ने बडी खातिर की। अगले साल फिर दोनो भाई शान्-युओं के पास दूत आये, जिनमें हू-हान्-ये के दूत की ज्यादा आवभगत की गई। उससे अगले साल (४९ ई० पू० मे) हू-हान्-ये जब दरबार में गया, तो उसका पहले ही की तरह सम्मान हुआ और ज्यादा भेंट भी प्राप्त हुई। इससे ची-ची की ईर्ष्या और भडक उठी। उसने हू-हान्-ये को निबल समझा और अपने सारे ओर्दू को लेकर पश्चिम की विजय पर चल पडा। कुलजा के घुमन्तू वू-सूनों को अपनी ओर करने के लिये उसने दूत भेजा। वूसून राजा ने दूत का सिर काटकर युद्ध घोषित कर दिया। वह जानता था, कि चीन उसकी पीठ पर है। ची-ची ने उसे हराया, फिर उत्तर में तरबगतई, वू-से, च्याङ-कुन्, तिङ-ली आदि घुमन्तूओ को अपनी अधीनता स्वीकार करने के लिये मजबूर किया। चाङ-कुन् से ७ हजार ली दक्षिण-पूरब इस समय ची-ची के ओर्दू का केन्द्र था। उस समय तक वू-सूनो की प्रमुखता में यहा के घुमन्तू बहुत कुछ स्वायत्त शासन कर रहे थे। चीची शान्-यू या उत्तरी हूण-ओर्दूका मुख्य-स्थान कराकोरम (उलान्वातोर) के पास था, जहाँ से किरगिजों का केंद्र २३०० मील और आज का तुर्फान तथा पीजाम २००० मील थे। ४८ ई० पू० में सम्राट् ग्वेनती गद्दी पर बैठा। उसने हू-हान्-ये की प्रार्थना पर २० हजार नाप अनाज भेजा। ची-ची इस पर जल मरा। उसका लडका सम्राट् का प्रतिहार था। उसे उसने बुला भेजा और पहुचाने के लिये आये हुए दूत को भी मार डाला। दरबार को सूचना मिली थी, कि हू-हान्-ये का ओर्दू बहुत शक्तिशाली और समृद्ध है, वह ची-चा का मुकाबला अच्छी तरह कर सकता है।

४८ ई० पू० से हूण ओर्दू दो भागों में बट गया—हू-हान्-येका दक्षिणी ओर्दू अब चीन के अधीन था और ची-ची का उत्तरी ओर्दू बिलकुल स्वतत्र था। हू-हान्-ये और चीन में जो सधि हुई थी, उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार हैं—"चीन और हूण में सदा के लिये शाति रहेगी। उनमें एक परिवार जैसा मेल रहेगा। दोनो में से कोई पक्ष एक दूसरे पर न आक्रमण करेगा न धोखा देगा। अगर कोई लूटपाट करे, तो उसकी दूसरे पक्ष के सामने शिकायत की जाय। वह दोषियों को दण्ड दे और क्षति-पूर्त्ति दिलवाये। अगर कोई चढाई हो, तो प्रत्येक पक्ष उसे अच्छी तरह दबाने का प्रयत्न करेगा। जो पक्ष इस सधि को तोडे, उसके और उत्तराधिकारियो के साथ देव वैसा ही करे, जैसा कि उसने इस सधि पत्र के साथ किया।"

सधि हो जाने के बाद शान्-यू और चीनी राजदूत एक पहाड के ऊपर गये, जहाँ अपनी रत्नजटित तलवार से शान्-यू ने एक सफेद घोडे की वलि दी, और यूचियो के राजा की खोपडी में—जिसे कि विजय के चिन्ह के तौर पर हूणो ने अपने पास रख रखा था—घोड़े के खून में सोना मिला कर चीनी राजदूत के साथ एक एक घूट पिया।

---

[1] वही p 357

चीनी दरबारी ऐसी शपथ से बहुत नाराज थे। उन्होंने जोर डाला, कि शपथ को लौटा लिया जाय, लेकिन सम्राट् ने इसे पसन्द नही किया।

उधर ची-ची चीन के दूत को मार डालने के लिये परेशान था। समरकन्द का (शक) राजा कुलजा के वूसूनों के अत्याचार से उत्पीडित था। उसने किरगिज-प्रान्त में स्थित ची ची को मदद के लिये बुलाया, और हूणों की अधीनता को फिर से स्वीकार किया। ची-ची उनकी मदद के लिये चला, लेकिन वूसूनो की मदद के लिये चीनी सेना भी आ पहुची। शान्-यू ची ची तलस् (तुलाई) नदी के किनारे लडते हुये मारा गया, जिसके कारण उत्तर की बबर जातिया की एकता खतम हो गई।

३ उत्तरी और दक्षिणी शान्-यू[1]

ची ची और हू ह न् ये के द्वारा ईसापूव प्रथम शताब्दी में हूण जन दो भागो में विभक्त हो गया, जिसमे दक्षिणी हूण चीन के साथ रहना चाहते थे। महादीवार से दूर उत्तर गोबी के रेगिस्तान से परे वतमान मगोलिया और बाइकाल के पास घूमने वाले हूण चीन की पहुच से अपने को दूर समझते परवाह नही करते थे, कि चीन रुष्ट होगा, तो हमारी हानि होगी। चीन की अधीनता स्वीकार करने की मनोवृत्ति ५२ ई० पू० में हू-हान्-ये ने जो प्रकट की थी, जान पडता है, वह ची-ची के मरने के बाद बिल्कुल लुप्त नही हुई। हू-हान्-ये बराबर अपने को चीन का अनन्य-भक्त साबित करना चाहता था, यद्यपि चीन-सम्राट् उसपर पूणतया विश्वास नही कर सकता था। वह समझता था, ये घुमन्तू हूण—जिनका न किसी खेत से नाता है और न घर से—बे-नकेल के ऊट हैं। लेकिन साथ ही उसको विश्वास था, कि जबतक उनकी अच्छी तरह भेंट-पूजा होती रहेगी, तब तक वह विरोधी नही बनेंगे। उसे यह पता लग गया था, कि हूणो को "आदमी" बनाने के लिये सबसे अच्छा तरीका यही है, कि उनके पास सामन्ती भोग की वस्तुयें पहुचाई जाय और उनके अन्त पुर में सुन्दर-सुन्दर चीनी राजकुमारिया प्रवेश करें। ३३ ई० पू० में (मरने से दो साल पहले) हू-हान्-ये फिर दरबार में आया। अबकी भी ४९ ई०पू० की तरह ही उसका स्वागत हुआ। शान्यूको सम्राट यूेन्-ती (४८-३२ ई० पू०) ने अपने अन्तःपुर की सबसे सुन्दरी तरुणी चाउ-चुन् (प्रभावती) प्रदान की। सम्राट् के हरम में हजारो सुन्दरिया रहती थी, जिनमें से चाउ-चुन् की तरह कितनी ही ऐसी भी थी, जिन्हें सम्राट ने कभी देखा भी नही था। कायदा था दरबारी चित्रकार सुन्दरियों का चित्र अंकित करता। सम्राट् चित्र देखकर उनमें से किसी को पसन्द कर अपने पास बुलाता। चित्रकारो को इसके लिये खूब रिश्वत मिलती थी। उस समय माउ नामक एक दरबारी चित्रकार था, जो इस काम पर नियुक्त था। अन्तःपुरिकायें अपने सौन्दर्य को बढ़ा-चढ़ाकर चित्रित कराने के लिये खूब पैसा देतीं थीं। चाउ-चुन सर्व-सुन्दरी थी, किन्तु वह इस बात के लिये राजी नही हुई। माउ ने नाराज होकर उसका बहुत भद्दा चित्र बनाया, इसीलिये सम्राट् ने उसे कभी नही बुलाया। चीन के विशाल प्रासाद के एकात कोने में उसका जीवन बीतने लगा। शरद आता, पत्ते पीले होकर गिरने लगते। वह सोचती मेरा तारुण्य और सौन्दर्य भी इसी तरह खतम हो जायगा। इसी समय हू-हान्-ये ने सम्राट्

[1]वही p 431

से एक राजकुमारी मागी । राजकुमारियां अपने प्रासाद को छोडकर वर्वर हूणो के तम्बू में जानेके लिये तैयार नही हो रही थी । लेकिन हूण राजा को एक राजकुमारी अवश्य देनी थी, यदि चीन के जन-धन की रक्षा करनी थी । चाउ-चुनने जाना पसद किया । सम्राट् ने समझा, कि वह कोई साधारण सी तरुणी होगी, और प्रसन्नतापूर्वक देना स्वीकार किया । लेकिन, जव वह शान्यू के साथ भेजने के लिये सम्राट् के सामने लायी गई और उसकी दृष्टि इस निरुपम सुन्दरी पर पडी, तो वह अपनी वातसे उलट तो नही सकता था, लेकिन उसने उसी वक्त चित्रकार माउ को प्राण-दण्ड का हुकुम दिया । चीन के वहुत से कवियो और नाट्यकारो ने चाउ-चुन् के स्वदेश छोडने के करुण दृश्य और रेगिस्तान तथा जगली पश्चिमी देश के भयानक चित्र अकित किये हैं । हूण-प्रतिहारिया सितार के साथ मधुर सगीत द्वारा उसके मन को वहलाने का वेकार प्रयत्न करती थी । निर्जन रेगिस्तान में सदाहरित समाधि को खडी देख चाउ-चुन सोचती, एक दिन मुझे भी यही दफन कर दिया जायगा । कहते है इसी समय हूणो का सगीत यत्र चीन में प्रचलित हुआ ।

हू-हान्-ये चीन सम्राट् का वहुत कृतज्ञ हुआ । इसको प्रकट करने के लिय उसने सम्राट् से प्रार्थना की, कि हू ह्वो से लोवनोर तक की सारी सीमा की रक्षा का भार में लेने के लिये तैयार हू, वहाँ छावनी रखकर व्यर्थ धन खर्च करने की अवश्यकता नही । लेकिन एक बूढे मत्री ने सम्राट् को सावधान किया—"शासी से कोरिया तक जगलो से आच्छादित पर्वत-श्रेणियाँ खडी थी, तो भी विजेता माउदुन और उसके उत्तराधिकारी भीतर घुसने में सफल होते रहे । वह जहाँ चाहते थे, वहाँ से अपनी इच्छानुसार चीन पर आक्रमण करते थे । वह तव तक ऐसा करते रहे, जब तक कि वू-ती (१४०-८६ ई० पू०) ने उन्हें रेगिस्तान के उत्तर में भगा नही दिया और सारी महादीवारको दुर्गवद्ध नहीं कर दिया । सीमात की छावनियाँ इसीलिये है, कि देशद्रोही चीनी भागकर हूणो के देश में न चले जायें, साथ ही यह भी कि हूण चीन के ऊपर आक्रमण न कर सकें । यह कहने की अवश्यकता नही, कि हमारे सीमात के निवासियो में भारी सख्या हूण-वंशियों की है, जिन्हें कि हम धीरे धीरे हजम कर रहे है । हाल में हमने च्याङ (तिव्वत-वशियो) से सबध जोडना शुरू किया है, जो कि हमारे अफसरो की लोलुपता और लूट-खसूट से वहुत रुष्ट हैं । यदि च्याङ और हूण दोनो घुमन्तू आपस में मिल गये, तो हमारे लिये भारी खतरा पैदा हो जायगा । एक शताब्दी से थोडा अधिक हुआ, जबकि महादीवार बनाई गई । यह केवल मिट्टी का ढूह नही है । पहाड के ऊपर और नीचे पृथिवी के स्वाभाविक उतार-चढाव पर यह बनाई गई है । इसमें मधु-छत्र की तरह वहुत से गुप्त मार्ग और तहखाने तैयार किये गये हैं, स्थान-स्थान पर दुर्ग बनाये गये हैं । क्या यह सारा विशाल श्रम नष्ट होने के लिये छोड दिया जायगा ।"

सम्राट् के दूत ने मीठी मीठी वाते करके शान्-यू को समझाने की कोशिश की । क्या रहस्य है, इसे वह भली भाँति समझता था । इसके एक ही साल वाद सम्राट् यूवेन्-ती और दूसरे साल शान्-यू हू-हान्-ये भी मर गये ।

चाहे उत्तर और दक्षिण का मत भेद भीतर-भीतर रहा हो, लेकिन वह बीसवें शान्-यू हू-तू-एल-शी-ताउ-कू (१८-४६ ई०) की मृत्यु तक प्रकट नहीं हो सका । हूणो में यह नियम नही था, कि शान्-यू का वडा वेटा उसका उत्तराधिकारी हो । कभी कभी वडे वेटे की तो वात अलग सारे वेटो को छोड कोई सगा या चचेरा भाई शान्-यू बना

दिया जाता था। हू-हान्-येके के बाद उसके पाच बेटे एक के बाद एक शान्-यू बने। २०वें शान्-यू का भतीजा द्वितीय हू-हान ये उत्तराधिकारी समझा जाता था, लेकिन सैनिक जनतंत्रता उसमे बाधक हुई। बहुत संघर्ष के बाद हू-हान् ये द्वितीय (४८ ५७ ईस्वी) यद्यपि शान्-यू चुन लिया गया, किंतु २०वें शान्-यू के पुत्र ने भी अपने को शान्-यू घोषित कर दिया। वह एक तरह अपने चचा चो-ची के अपूर्ण काम को पूरा करना चाहता था।

अब दोनो हूण ओर्दुओ म संघर्ष शुरू हो गया। ४९ ईस्वी में दक्षिणी शान्-यू के भाई ने उत्तरी शान्-यू के भाई को हराकर बंदी बनाया। उत्तरी शान्-यू जानता था, कि चीन के कृपा-पात्र अपने प्रतिद्वंद्वी से म सीधे मुकाबला नही कर सकता, इसलिये दक्षिण की अपनी चरभूमि मे ३०० मील दूर चला गया। भविष्यवाणी थी, कि घुमन्तुओ को अपनी नवी पुश्त में ३०० मील दूर भागना पडेगा। थोड़े समय बाद पाँच असन्तुष्ट सरदारो तथा ३० हजार परिवारो को लिये उत्तरी शान्-यू का भाई बागी हो निकल भागा। सारे दल ने उत्तरी हूण-केंद्र से ७५ मील पर डेरा डाला, जहाँ दोनोमें लडाई हुई। पाचो सरदार मारे गये। उनके पुत्रो ने अपने बचे-खुचे आदमियो के साथ दक्षिणी हूणो के पास जाना चाहा, किंतु उत्तरिया ने उन्हें पकड लिया और उनके बचाने के लिये आये दक्षिणियोको हराकर खदेड दिया। सम्राट्ने दक्षिणी शान्-यू को और दक्षिण जानेके लिये कहा और वह लिन्-चाऊ (त्यू-यूवेन) के इलाके में चला गया। यही के रहने वाले हूणो ने तीन शताब्दी बाद चीन के एक राजवश की स्थापना की।

उत्तरी शान-यू चीन से झगडा मोल नही लेना चाहता था। उसने बहुत से चीनी युद्ध-बंदियो को लौटा दिया। लूट-पाट करने के लिये उसका बहाना था "हम चीन की भूमि पर लूट पाट नही करते, हम तो अपने विश्वासघाती सरदारो का पीछा कर रहे हं।" ५२ ईस्वी में उत्तरी शान्-यू ने सधि के लिये अपना दूत भेजा, लेकिन उस समय दरबार में इस पर मतभेद रहा। अगले साल घोडो और समूरी खालो की भेंट भेजकर फिर उसने सुलह करने का प्रयत्न किया, और गायको की एक मडली मागी तथा अपने सी-यू (तुर्किस्तान) के अनुगामी राजाओ को साथ ले आकर अधीनता तथा सम्मान प्रदर्शित करने के लिये आज्ञा माँगी। चीन चाहता था, कि दोनो में से कोई नाराज न हो। बहुत नरमी के साथ स्वीकृति देते हुये चीन दरबार ने उसे लिखा " अतीत्-काल में हू-हान्-ये और ची-ची गृह-कलह में लगे हुए थे। उस समय देवपुत्र ने अपना कृपापूर्ण सरक्षण दोनो को दिया और उनके पुत्रो को राजसेवा में स्वीकार किया। हाल के वर्षों में दक्षिणी शान्-यू ने दक्षिण की ओर मुँह फेर कर हमारी अधीनता स्वीकार की। चूकि वह हू-हान्-ये की अविच्छिन्न संतान में सर्वज्येष्ठ है, इसलिये हमने उसको उचित उत्तराधिकारी माना। लेकिन जब वह अपने अधिकार से बाहर जा हमारी मदद मे उत्तरी ओर्दू को नष्ट करना चाहता है, तो हमारे लिये आवश्यक हो जाता है, कि उत्तरी शान-यू की उचित अभिलाषा पर भी ध्यान रखें, क्योकि उसने भी कई बार हमारे प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन किया है। इसलिये कोई कारण नही है, कि क्यो न उत्तरी शान्-यू सी-यू राजाओ को उनका कर्त्तव्य-पथ दिखलाने के लिये उनके साथ आकर अपनी स्वामि-भक्ति का प्रमाण हमारे सामने दें। "

प्रथम उत्तरी शान्-यू ५२ ईस्वी के बाद किसी समय मर गया। उसका उत्तराधिकारी द्वितीय शान्-यू ५९ ईस्वी में स्वय महादीवार के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये आया।

तो भी वह ३ साल तक बराबर चीन में लूटपाट करता रहा,जिसको हटाने के लिये दक्षिणी ओर्दू ने बड़ा काम किया। ६३ ईस्वी मे उत्तरियो ने चीन से व्यापारिक सुविधा प्राप्त करने के लिये प्राथना की। दरबार ने अनुमति दे दी, समझा, लूटपाट वद हो जायगी। दो साल बाद ६६५ ईस्वी में उत्तरी शान्-यू के पास चीन का दूतमडल गया। दक्षिण ओर्दू को यह पसद नही आया और उनमें से कुछ उत्तरियो मे जा मिले। चीन बराबर भेट भेजता रहा, लेकिन हूण अतिरिक्त लाभ के विना सतुष्ट नहीं रह सकते थे, इसलिये उनकी लूटपाट नही वद होती थी। सम्राट् मिङ-र्ती। (५८-७६ ई०) ने मजबूर होकर उत्तरियो के ऊपर ७३ ईस्वी मे बहुत भारी सेना भेजी, लेकिन हूण अपनी सनातन युद्ध-नीति के अनुसार गोवी रेगिस्तान के पार भाग गये। ८४ ईस्वी मे फिर उत्तरी शान्-यू को हम व्यापारी सुविधा पाते देखते है, जिस पर दक्षिणियों ने उनके कुछ आदमियो और पशुओ को पकड कर अपना असतोप प्रकट किया।

ईसवी प्रथम शताब्दी का अन्त होते होते उत्तरी हूणो में आपस का वैमनस्य ज्यादा हो गया। साथ ही उनके प्रतिद्वन्द्वियो की शक्ति और सख्या भी बढ गई। उनके पूरब (मचूरिया) के घुमन्तू स्यान्-पी (हू-ह्वान्), जो तुगूसो की एक शाखा थे, तेजी से शक्ति सचय कर रहे थे और वह समय दूर नही था, जब कि वह चीन को एक राजवश देनेवाले थे। शक्तिशाली स्यान्-पी पूव से उत्तरी ओर्दू पर आक्रमण कर रहे थे। दक्षिण मे उनके दक्षिणी भाई-बद जान छोडने के लिये तैयार नही थे, पश्चिम में सी-यू तुर्कीस्तानी कबीले चोट-पर-चोट कर रहे थे, उत्तर में तिङ-लिङ (ककाली) भी अपना प्रभुत्व दिखला रहे थे। चारो ओरो के प्रहारो से छिन्न-भिन्न होकर उत्तरी हूण ओर्दू विलुप्त होने लगा। उनमें से कुछ उत्तर की ओर भागे, और कुछ सेलगा के उपरी धार से होते इर्तिश नदी, इस्सीकुल (सरोवर) की तरफ बढ़कर वूसुनों की भूमि को हथियाने लगे। इतने ही तक सतोप न कर वह कगो की भूमि अराल-समुद्र से उत्तर-उत्तर शक-वशीय सर्मातो के उत्तराधिकारी अलानो को कास्पियन के उत्तर से हटाते कालासागर और दुनाइ (डैन्यूब) के किनारे पहुँच गये। अतिला (एत्-ज़ेल) बडे अभिमान से कहता था मै शान्-युओ का वशज हूँ। मातृभूमि से भगाने के लिये उत्तरी हूणों पर अन्तिम प्रहार स्यान्-पी ने ७७ ईस्वी में किया। उन्होंने शान्-यू को पकड लिया और उसके चमडे को विजय-स्मारक के तौर पर अपने पास सुरक्षित रखा। उत्तरियो के बचे-खुचे आदमियो में से २ लाख ने कई टुकडियो में हो महा-प्राकार के भिन्न-भिन्न स्थानो में आकर चीन की अधीनता स्वीकार की। तब से स्वतन्त्र हूण जाति का नाम समाप्त हो गया।

दक्षिणी शान्-यू ४८-१९० ईस्वी तक चीन के सामन्त के तौर पर चीनी जन-समुद्र के कोने में रहे। वह अधिक और अधिक चीनी बनते गये, और अब भी चीन के लिये काफी सैनिक सहायता देते थे। कभी कभी उनमें अपने पूर्वजो का खून जोश मारता, लेकिन उसका परिणाम हजारों के प्राणहानि के सिवा और कुछ नही होता था। १७७ ईस्वी में तत्कालीन शान्-यू ने चीन के लिये स्यान्-पी विजेता दर्जे-ग्वेसे लडाई की। चीनी हारे। मरने वालो म हूणो का शान्-यू भी था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र हुआ, जिसे मारकर एक चीनी जेनरल शान्-यू बना। पीछे हूण राजवश का नाम भी लुप्त हो गया। तुङ-हू (सुअरवाले आदमी) स्यान्-पी के रूप में आगे आये और उनके नेता दर्जे-ग्वेने १६५ ईस्वी के आसपास स्यान्-पी वश की स्थापना की। हूणों की तरह ये भी सैनिक जनतन्त्रता और घुमन्तू जीवन के अनुगामी थे। इस वश ने

दिया जाता था। हू-हान्-येके के वाद उसके पाच वेटे एक के वाद एक शान्-यू वने। २०वें शान्-यू का भतीजा द्वितीय हू-हान ये उत्तराधिकारी समझा जाता था, लेकिन सैनिक जनतन्त्रता उसमे वाधक हुई। वहुत सघर्ष के वाद हू-हान् ये द्वितीय (४८ ५७ ईस्वी) यद्यपि शान्-यू चुन लिया गया, किंतु २०वे शान्-यू के पुत्र ने भी अपने को शान्-यू घोषित कर दिया। वह एक तरह अपने चचा ची-ची के अपूर्ण काम को पूरा करना चाहता था।

अव दोनो हूण ओर्दुओ मे सघर्ष शुरू हो गया। ४९ ईस्वी में दक्षिणी शान्-यू के भाई ने उत्तरी शान्-यू के भाई को हराकर वदी वनाया। उत्तरी शान्-यू जानता था, कि चीन के कृपा-पात्र अपने प्रतिद्वद्वी से स मीधे मुकावला नही कर सकता, इसलिये दक्षिण की अपनी चरभूमि से ३०० मील दूर चला गया। भविष्यवाणी थी, कि घुमन्तुओ को अपनी नवी पुश्त में ३०० मील दूर भागना पडेगा। थोडे समय वाद पाँच असन्तुष्ट सरदारो तथा ३० हजार परिवारो को लिये उत्तरी शान्-यू का भाई वागी हो निकल भागा। सारे दल ने उत्तरी हूण-केंद्र से ७५ मील पर डेरा डाला, जहाँ दोनोमें लडाई हुई। पाचो सरदार मारे गये। उनके पुत्रो ने अपने वचे-खुचे आदमियो के साथ दक्षिणी हूणो के पास जाना चाहा, किंतु उत्तरियो ने उन्हें पकड लिया और उनके वचाने के लिये आये दक्षिणियोको हराकर खदेड दिया। सम्राट्ने दक्षिणी शान्-यू को और दक्षिण जानेके लिये कहा और वह लिन्-चाऊ (ल्यू-यूवेन) के इलाके में चला गया। यही के रहने वाले हूणो ने तीन शताब्दी वाद चीन के एक राजवश की स्थापना की।

उत्तरी शान-यू चीन से झगडा मोल नही लेना चाहता था। उसने वहुत से चीनी युद्ध-वदियो को लौटा दिया। लूट-पाट करने के लिये उसका वहाना था "हम चीन की भूमि पर लूट पाट नही करते, हम तो अपने विश्वासघाती सरदारो का पीछा कर रहे हैं।" ५२ ईस्वी मे उत्तरी शान्-यू ने सधि के लिये अपना दूत भेजा, लेकिन उस समय दरवार में इस पर मतभेद रहा। अगले साल घोडो और समूरी खालो की भेंट भेजकर फिर उसने सुलह करने का प्रयत्न किया, और गायको की एक मडली मागी तथा अपने सी-यू (तुर्किस्तान) के अनुगामी राजाओ को साथ ले आकर अधीनता तथा सम्मान प्रदर्शित करने के लिये आज्ञा माँगी। चीन चाहता था, कि दोनो में से कोई नाराज न हो। वहुत नरमी के साथ स्वीकृति देते हुये चीन दरवार ने उसे लिखा " अतीत्-काल में हू-हान्-ये और ची-ची गृह-कलह में लगे हुए थे। उस समय देवपुत्र ने अपना कृपापूर्ण सरक्षण दोनो को दिया और उनके पुत्रो को राजसेवा में स्वीकार किया। हाल के वर्षों में दक्षिणी शान्-यू ने दक्षिण की ओर मुँह फेर कर हमारी अधीनता स्वीकार की। चूंकि वह हू-हान्-ये की अविच्छिन्न सतान में सर्वज्येष्ठ है, इसलिये हमने उसको उचित उत्तराधिकारी माना। लेकिन जव वह अपने अधिकार से वाहर जा हमारी मदद से उत्तरी ओर्दू को नष्ट करना चाहता है, तो हमारे लिये आवश्यक हो जाता है, कि उत्तरी शान-यू की उचित अभिलाषा पर भी ध्यान रखें, क्योकि उसने भी कई वार हमारे प्रति अपने कर्त्तव्य का पालन किया है। इसलिये कोई कारण नही है, कि क्यो न उत्तरी शान्-यू सी-यू राजाओ को उनका कर्त्तव्य-पथ दिखलाने के लिये उनके साथ आकर अपनी स्वामि-भक्ति का प्रमाण हमारे सामने दें। "

प्रथम उत्तरी शान्-यू ५२ ईस्वी के वाद किसी समय मर गया। उसका उत्तराधिकारी द्वितीय शान्-यू ५९ ईस्वी में स्वय महादीवार के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये आया।

तो भी वह ३ साल तक बराबर चीन में लूटपाट करता रहा, जिसको हटाने के लिये दक्षिणी ओर्दू ने बड़ा काम किया। ६३ ईस्वी में उत्तरियो ने चीन से व्यापारिक सुविधा प्राप्त करने के लिये प्राथना की। दरबार ने अनुमति दे दी, समझा, लूटपाट बद हो जायगी। दो साल बाद ६६५ ईस्वी में उत्तरी शान्-यू के पास चीन का दूतमडल गया। दक्षिण ओर्दू को यह पसद नही आया और उनमें से कुछ उत्तरियो में जा मिले। चीन बराबर भेंट भेजता रहा, लेकिन हूण अतिरिक्त लाभ के बिना सतुष्ट नही रह सकते थे, इसलिये उनकी लूटपाट नही बद होती थी। सम्राट् मिङ-र्ती (५८-७६ ई०) ने मजबूर होकर उत्तरियो के ऊपर ७३ ईस्वी में बहुत भारी सेना भेजी, लेकिन हूण अपनी सनातन युद्ध-नीति के अनुसार गोबी रेगिस्तान के पार भाग गये। ८४ ईस्वी मे फिर उत्तरी शान्-यू को हम व्यापारी सुविधा पाते देखते हैं, जिस पर दक्षिणियों ने उनके कुछ आदमियों और पशुओं को पकड कर अपना असतोष प्रकट किया।

ईसवी प्रथम शताब्दी का अन्त होते होते उत्तरी हूणो में आपस का वैमनस्य ज्यादा हो गया। साथ ही उनके प्रतिद्वन्द्वियो की शक्ति और सख्या भी बढ गई। उनके पूरब (मचूरिया) के घुमन्तू स्यान्-पी (हू-ह्वान्), जो तुगूसो की एक शाखा थे, तेजी से शक्ति सचय कर रहे थे और वह समय दूर नही था, जब कि वह चीन को एक राजवश देनेवाले थे। शक्तिशाली स्यान्-पी पूर्व से उत्तरी ओर्दू पर आक्रमण कर रहे थे। दक्षिण मे उनके दक्षिणी भाई-बद जान छोडने के लिये तैयार नही थे, पश्चिम में सी-यू तुर्किस्तानी कबीले चोट-पर-चोट कर रहे थे, उत्तर मे तिङ-लिङ (ककाली) भी अपना प्रभुत्व दिखला रहे थे। चारो ओरो के प्रहारों से छिन्न-भिन्न होकर उत्तरी हूण ओर्दू विलुप्त होने लगा। उनमें से कुछ उत्तर की ओर भागे, और कुछ सेलगा के उपरी धार से होते इर्तिश नदी, इस्सीकुल (सगेवर) की तरफ बढ़कर वूसुनो की भूमि को हथियाने लगे। इतने ही तक सतोष न कर वह कगो की भूमि अराल-समुद्र से उत्तर-उत्तर शक-वशीय सर्मातो के उत्तराधिकारी अलानो को कास्पियन के उत्तर से हटाते कालासागर और दुनाइ (डैन्यूब) के किनारे पहुँच गये। अतिला (एत्-जेल) बडे अभिमान से कहता था मै शान्-युओ का वशज हूँ। मातृभूमि से भगाने के लिये उत्तरी हूणो पर अन्तिम प्रहार स्यान्-पी ने ७७ ईस्वी मे किया। उन्होने शान्-यू को पकड लिया और उसके चमडे को विजय-स्मारक के तौर पर अपने पास सुरक्षित रखा। उत्तरियो के बचे-खुचे आदमियो में से २ लाख ने कई टुकडियो में हो महा-प्राकार के भिन्न-भिन्न स्थानो में आकर चीन की अधीनता स्वीकार की। तब से स्वतन्त्र हूण जाति का नाम समाप्त हो गया।

दक्षिणी शान्-यू ४८-१६० ईस्वी तक चीन के सामन्त के तौर पर चीनी जन-समुद्र के कोने में रहे। वह अधिक और अधिक चीनी बनते गये, और अब भी चीन के लिये काफी सैनिक सहायता देते थे। कभी कभी उनमें अपने पूर्वजो का खून जोश मारता, लेकिन उसका परिणाम हजारों के प्राणहानि के सिवा और कुछ नही होता था। १७७ ईस्वी में तत्कालीन शान्-यू ने चीन के लिये स्यान्-पी विजेता दर्जे-न्वेसे लडाई की। चीनी हारे। मरने वालो में हूणो का शान्-यू भी था। उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र हुआ, जिसे मारकर एक चीनी जेनरल शान्-यू बना। पीछे हूण राजवश का नाम भी लुप्त हो गया। तुङ-हू (सुअरवाले आदमी) स्यान्-पी के रूप मे आगे आये और उनके नेता दर्जे-न्वेने १६५ ईस्वी के आसपास स्यान्-पी वश की स्थापना की। हूणो की तरह ये भी सैनिक जनतत्रता और घुमन्तू जीवन के अनुगामी थे। इस वश ने

उत्तरी चीन पर ४ थी शताब्दी के अन्त तक अपने शासन को कायम रक्खा। स्यान्-पी के उत्तराधिकारी उन्हीके वंश के तोबा थे, जिनका तृतीय राजा ताउ-वू-ती (३८६-४०९ ई०) बहुत बड़ा विजेता तथा उत्तरी वेई वंश का संस्थापक था। तोबा की एक शाखा उनकुरन ने ज्वेन्-ज्वेन् साम्राज्य को ३५४ ईस्वी के आसपास स्थापित कर उसका विस्तार त्यानशान् से कोरिया तक किया। इन्हींके लौह कमकर तथा उत्तराधिकारी तुर्कों ने तुर्क-वंश और तुर्क-संसार की स्थापना की, जिसका वर्णन आगे आयेगा।

स्रोत ग्रंथ

1 A Thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai 1895)

२ आर्वेआलोगिचेस्किइ आचेक स्वेर्नोइ किर्गिजिइ (अ न वेर्न्श्ताम्, फ्रुन्जे १९४१)

३ हुन्नु इ गुन्नी (क इनस्त्रान्त्सेफ, लेनिनग्राद १९२६)

४ इज इस्तोरिइ गुन्नोफ १ वेका दो नाशे एरा (अ न वेर्न्श्ताम्), सोव्येत् वोस्तोक वेदेनिये II (1941) पृष्ठ ५१-५७

५ सिरिइस्कि इस्तोच्निकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ (न पि गुलेव्स्कया, लेनिनग्राद १९४१)

6 Histoire des Huns (Desqugue, Paris 1756)

७ पेर्वोनचाल्निख क्रोफ कवूरा इज नोइन-उला (लेनिनग्राद १९४७)

8 Excavation in Northern Mongolia (C Trever, Leningrad)

9 The Story of Chang Kien (J of American Oriental Society, Sep 1917 p 77)

१० ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्य (वरतोल्द, १८९८)

11 Histoire d' Attila et de ses successures (Am Thierry, Paris 1856)

12 History of the Hing nu in their Relations with China (Wylie, Journal of Anthropological institute, London, vol III 1892, 3)

13 Sur l'origine des Hiung-nu (Shiratori, Journal Asiatigus CC II no I, 1923)

ओर पहुचानेवाला मध्य एसिया का वाणिज्य-मार्ग वू-सुनो की भूमि मे इस्सीकुल के किनारे से जाता था। यही उनका केन्द्र ची-गू था। हूण और चीन दोनो वू-सुनो को अपनी अपनी ओर खीचना चाहते थे। इली-उपत्यका, चू-उपत्यका और त्यान्शान् पर्वतस्थली वू-सुन भूमि थी, जो कि उन्हे अपने शक-पूर्वजो से मिली थी। उनके दक्षिण में पहाडो से उतरते ही तरिम-उपत्यका थी, जहा बसनेवाली हू-मा जाति से उनका व्यापारिक संबंध था। पश्चिम में तलस-उपत्यका में कग जाति का सीमांत उनके साथ आ मिलता था। पश्चिम और दक्षिण मे फर्गाना (तावान) की सुन्दर उपत्यका या राज्य उनका पडोसी था, जो कि रेशम-पथ के कारण बहुत समृद्ध तथा अपनी उत्तम जाति के घोडो के लिये अति प्रसिद्ध था। १२६ ई० पू० में चाङ-क्यान् ने लौटकर जब तावान के घोडो की प्रशसा की, तो राजी खुशी से काम न निकलते देख सम्राट् वू-ती को वहा सैनिक अभियान भेजना पडा, जिसके कारण चीनी साम्राज्य की सीमा वहा तक पहुच गई। वू-सुन लोग घुमन्तू पशुपाल थे। चीनी लेखक उनके बारे में कहते हैं—"वू-सुन् न खेती जानते है न बागवानी। वह अपने पशुओ के साथ तृणजल सुलभ एक स्थान से दूसरे स्थान मे घूमते रहते है। धनी वू-सुनो के पास चार-चार पाच-पाच हजार घोडे रहते है।"

१ संस्कृति

वू-सुन यद्यपि अपने पूर्वज शको की तरह अब पीतल नही लौह युग मे आ गये थे, किंतु अभी उनकी अवस्था आदिम समाज जैसी थी। १९२९ ईस्वी में किर्गिजिस्तानमें जो पुरातात्विक खुदाई हुई थी, उससे पता लगता है, कि मृत्पात्र कला में वह बडे चतुर थे। धातु, काष्ठ, चर्म और मृत्पात्र का हस्तशिल्प उनके यहा अच्छा विकसित था। उनके काष्ठ या मिट्टी के वर्तन तीन प्रकार के मिले है—अन्न रखने के, खाने के और भोजन पकाने के। सोने का आभूषण भी उनके यहा प्रचलित था। हथियारो में भारी वजन का धनुष, बाण, लम्बी तथा सीधी तलवार प्रधान थी। बाण तीन धारा होता था। चाङ-क्यान् अपनी यात्रा (१३८-१२६ ई० पू०) में दो बार आकर वू-सुनों के देश मे रहा था। उसीने इस घुमन्तू जाति को चीन की ओर खीचा। आगे बहुत से वू-सुन सामन्तो ने चीन की राजकुमारिया व्याही। एक चीनी राजकुमारी के मुह से किसी जन-कवि ने घुमन्तुओ के नीरस जीवन का गीत गवाया है[1]—

> बन्धुओ ने मुझे दिया, दूर देश में,
> वू-सुन के राजा को देकर, भेजा पराये राज्य मे।
> रहते नमदा ढँकी गोल कुटिया में,
> खाते मास और पीते दूध।

२ इतिहास

वू-सुनो के तीन विभाग थे, जिनके अवशेष निम्न स्थानो मे मिले है—(१) चू उपत्यका में करावलती, (२) त्यानशान् मे कराकोल, त्युप और कोचकोर तथा (३) इली-उपत्यका में अलमाअता जिले के कई स्थान। २०६ और २०१ ईसा पूर्व में हूणो ने वु-सुनोको बुरी तरह से

---

[1] क्रितिक० सोओव्० XIII, 112 (बेर्नश्तमका लेख)

ध्वस्त किया था। माउदुन और ची-उचु ने जब (१७४ ई० पू०) यूचियो को बुरी तरह नष्ट-भ्रष्ट करके उन्हें मातृभूमि छोडने के लिये मजबूर किया, तो तरिम-उपत्यका में आकर लघु-यूची वू-सुनो के पडोसी बन गये और महा-यूची इली और चू-उपत्यकाओ के वू-सुनो का भारी नुकसान करते एसिया, वक्षु-उपत्यकाकी ओर गये। इस समय वू-सुनोने हूणोकी अधीनता स्वीकार की, जिसका अन्त चाङ्-क्यान्के आनेके बाद चीनका पक्षपाती होनेके साथ हुआ।

वू-सुन्के पश्चिममें कक (कग) और फर्गानाके शासक थे, दक्षिणमे उनके नये पडोसी लघु-यूची (तुषार) थे, किंतु इनसे उनको डर नही था। इनकी अपेक्षा व-सुन् कह्, सबल थे। उनके भयका कारण पूव और पूर्वोत्तरमें था। वहा पूरबसे आते अन्तर्राष्ट्रीय वणिक्-पथको हाथमें रखनेके लिये चीन अपनी सारी शक्ति लगा रहा था, और पूर्वोत्तरमें हूणोका शान्-यू यह देखनेके लिये तैयार नही था, कि उसकी अधीनता स्वीकार करनेवाले वू-सुन् चीन को अपना स्वामी माने। वू-सुन् समझते थे, कि उनकी भलाई चीनके साथ रहनेमें है। हूणोका जीवन वू-सुनो जैसा ही था। दोनो ही घुमन्तू पशुपाल थे, और कृषि-जीवनसे उनको कोई मतलब नही था। हूणोके आनेका मतलब था, उनकी चरभूमियोका छिन जाना और हूणोकी गुलामी स्वीकार करना। चीनकी कूटनीतिक चालोमें अपनी राजकुमारियोसे दूसरे शासकोके साथ ब्याह करना भी सम्मिलित था। माउदुन्के समयसे ही हूण शान्-यू राजकुमारिया पाते रहे। तिब्बती शासक ८वी-९वी शताब्दी तक चीन-राजवशके दामाद होते थे। राजकुमारीका यह मतलब नही, कि वह सम्राट्की अपनी लडकी या बहिन हो। मालूम होता है, जैसे भेंट-इनाम देनेके लिये और बहुत सी चीजे राजकीय भडारमें रक्खी जाती थी, वैसे ही अन्त पुरमें जहा तहासे जमा की हुई सुन्दरिया भी रहती थीं। चाऊ-चुन्की घटना हम कह चुके हैं। इससे कितने ही वर्षों पहले ७३ ई० पू० में चीनी राजकुमारीका बहाना लेकर हूणोंने वूसुनोके ऊपर आक्रमण किया। एक चीन राजकुमारी वू-सुन् सरदारसे ब्याही थी। उत्तरी शान्-यू देख रहा था, कि चीनके साथ मिलकर ये नीली आखो, लाल दाढ़ी वाले वानर हमारे जूयेको उठा फेंकना चाहते हैं। शान्-यूने क्रोधाध होकर मागकी "अपनी हान-राजकुमारीको हमारे पास भेज दो, नही तो हम तुमसे लडाई करेंगे।" वू-सुनोने हान सम्राट् स्वेन्-ती (७३-८८ ई० पू०)से सहायता मागी और तुरन्त एक बडी चीनी सेना आ भी गई। चीनियो और वू-सुनोंने मिलकर हूणोको बहुत बुरी तरहसे हराया। कितने ही राजकुमारो और मशहूर सेना-पतियोके साथ ४० हजार हूण मारे गये, ७ लाख घोडे, गायें, भेडें, खच्चर और ऊट विजेताओंके हाथ लगे। ११वा शान्-यू हू-यन्-ती (७७-६८ ई० पू०) उस समय उत्तरी और दक्षिणी ओर्दूका भेद न होनेके कारण सभी हूणोका सयुक्त शासक था। यह सघर्ष इली-उपत्यकामें हुआ था। चीन की एक लाख सेना ६०० मील पश्चिम चलकर मददके लिये आई थी। कुलजाके वू-सुन् राजाने ५० हजार सेना लेकर पश्चिमसे आक्रमण किया था। चीनी सेना हामी और बर्कुल तक पहुची, लेकिन घुमन्तू हूणोंको पहले ही से पता लग गया था, इसलिये उन्होने अपने परिवारो तथा बहुतसे पशुओंको उत्तरमें दूर भेज दिया था। पराजयके साथ शान्-यूका चचा, दामाद आदि विजेताओंके बदी बने थे। जैसा कि अभी हमने कहा, उसी जाडेमें हूणोने वू-सुनोंसे बदला लेना चाहा, लेकिन उस साल बर्फ इतनी पडी, कि आक्रमण करनेवाली हूण सेनामेंसे दशाश ही मरनेसे बच पाये। इसी समय हूणोके उत्तरी पडोसी तिङ्-लिङ् (किरगिज या प्राग्-उइगुर) ने भी उनकी कमजोरीसे फायदा उठाना चाहा और उन पर धावा बोल दिया। मचूरियाके वू-ह्वान् भी चुप नही

उत्तरी चीन पर ४ थी शताब्दी के अन्त तक अपने शासन को कायम रक्खा। स्यान्-पी के उत्तराधिकारी उन्हीके वंश के तोवा थे, जिनका तृतीय राजा ताउ-वू-ती (३८६-४०९ ई०) बहुत बड़ा विजेता तथा उत्तरी वेई वंश का संस्थापक था। तोवा की एक शाखा उनकुरन ने ज्वेन्-ज्वेन् साम्राज्य को ३५४ ईस्वी के आसपास स्थापित कर उसका विस्तार त्यानशान् से कोरिया तक किया। इन्हींके लौह कमकर तथा उत्तराधिकारी तुर्कों ने तुक-वंश और तुक-संसार की स्थापना की, जिसका वर्णन आगे आयेगा।

स्रोत ग्रंथ

1 A Thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai 1895)

२ आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिज़िइ (अ न बेर्न्श्ताम् फ्रुन्जे १९४१)

३ हुन्नु इ गुन्नी (क इनस्त्रान्त्सेफ, लेनिनग्राद १९२६)

४ इज़ इस्तोरिइ गुन्नोफ़ १ वेका दो नाशे एरा (अ न बेर्न्श्ताम्), सोव्येत् वोस्तोक वेदेनिये II (1941) पृष्ठ ५१-५७

५ मिरिडस्किये इस्नोच्निकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ़ (न पि गुलेव्स्कया, लेनिनग्राद १९४१)

6 Histoire des Huns (Desqugue, Paris 1756)

७ पेर्वोनचाल्निख ऋतोफ क बुग इज़ नोइन-उला (लेनिनग्राद १९४७)

8 Excavation in Northern Mongolia (C Trever, Leningrad)

9 The Story of Chang Kien (J of American Oriental Society, Sep 1917 p 77)

१० ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्य (बरतोल्द, १८९८)

11 Histoire d' Attila et de ses successures (Am Thierry, Paris 1856)

12 History of the Hing nu in their Relations with China (Wylie, Journal of Anthropological institute, London, vol III 1892, 3)

13 Sur l'origine des Hiung-nu (Shiratori, Journal Asiatigus CC II no I, 1923)

अध्याय ३

१. वू-सुन (३००-१०० ई० पू०) अवार

§ १ वू-सुन्

हम शको के इतिहास के बारे मे कह चुके है। वू-सुनो के इतिहास के विशेषज्ञ डाक्टर अ० न० बेर्नश्तामका कहना है[1] "वू-सुनो की सस्कृति वही है, जो कि शको की, अन्तर है केवल उसमें पीतल का अभाव"। इससे साफ है, कि कारपेथियन से कोकोनोर तक फैली हुई पित्तल-युग के आरभ से चली आती, महान् शक-जाति की बहुत सी शाखाओ में वू-सुन् भी एक थे। वू-सुनो के शरीर-लक्षण के बारे में चीनी कहते है "नीली आखें, लाल दाढी और वानर जैसा साधारण चेहरा।" कू-चा (सिङकियाङ) के पीछे के निवासी भी नीली आखो और लाल बालवाले थे। ओरेल स्टाइन् तथा लेकाक को तरिम उपत्यका में नीली आखो और लाल बालो वाले नर-नारियो के चित्रपट भी मिले है, जिससे मालूम होता है, ईसा की ४थी ५वी शताब्दी में अब भी तरिम-उपत्यका में इस तरह के लोग निवास करते थे।

११ वूसुन्‌भूमि (१ ई०)

ईसापूव तीसरी और दूसरी शताब्दी मे वू-सुन जाति बहुत शक्तिशाली थी, यद्यपि यही समय था, जब कि हूण एक विजेता के तौर पर प्रकट हुये थे, जिनका शिकार कभी कभी वू-सुनो को भी होना पडता था। इन शताब्दियो में भी चीन के रेशम को पश्चिम देशो की

[1] आर्खे० ओचेर्क० (बेर्नश्ताम) पृष्ठ ३७

ओर पहुचानेवाला मध्य-एसिया का वाणिज्य-मार्ग वू-सुनो की भूमि मे इस्सीकुल के किनारे से जाता था। यही उनका केन्द्र ची-गू था। हूण और चीन दोनो वू-सुनो को अपनी अपनी ओर खीचना चाहते थे। इली-उपत्यका, चू-उपत्यका और त्यान्शान् पवतस्थली वू-सुन भूमि थी, जो कि उन्हें अपने शक-पूवजो से मिली थी। उनके दक्षिण में पहाडो से उतरते ही तरिम-उपत्यका थी, जहा वमनेवाली हू-मा जाति से उनका व्यापारिक सबध था। पश्चिम मे तलस्-उपत्यका में कग जाति का सीमात उनके साथ आ मिलता था। पश्चिम और दक्षिण में फर्गाना (तावान) की सुन्दर उपत्यका का राज्य उनका पडोसी था, जो कि रेशम-पथ के कारण वहुत समृद्ध तथा अपनी उत्तम जाति के घोडो के लिये अति प्रसिद्ध था। १२६ ई० पू० में चाङ्-क्यान् ने लौटकर जव तावान के घोडो की प्रशसा की, तो राजी खुशी से काम न निकलते देख सम्राट् वू-ती को वहा सैनिक अभियान भेजना पडा, जिसके कारण चीनी साम्राज्य की सीमा वहा तक पहुच गई। वू-सुन लोग घुमन्तू पशुपाल थे। चीनी लेखक उनके वारे मे कहते हैं—"वू-सुन् न खेती जानते है न वागवानी। वह अपने पशुओ के साथ तृणजल सुलभ एक स्थान से दूसरे स्थान में घूमते रहते ह। धनी वू-सुनो के पास चार-चार पाच-पाच हजार घोडे रहते है।"

१ सस्कृति

वू-सुन यद्यपि अपने पूवज शको की तरह अव पीतल नही लौह युग मे आ गये थे, किंतु अभी उनकी अवस्था आदिम समाज जैसी थी। १९२९ ईस्वी में किर्गिजिस्तानमें जो पुरातात्विक खुदाई हुई थी, उससे पता लगता है, कि मृत्पात्र कला में वह वडे चतुर थे। धातु, काष्ठ, चम और मृत्पात्र का हस्तशिल्प उनके यहा अच्छा विकसित था। उनके काष्ठ या मिट्टी के वर्तन तीन प्रकार के मिले ह—अन्न रखने के, खाने के और भोजन पकाने के। सोने का आभूषण भी उनके यहा प्रचलित था। हथियारो मे भारी वजन का धनुष, वाण, लम्बी तथा सीधी तलवार प्रधान थी। वाण तीन धारा होता था। चाङ्-क्यान् अपनी यात्रा (१३८-१२६ ई० पू०) में दो बार आकर वू-सुनो के देश म रहा था। उसीने इस घुमन्तू जाति को चीन की ओर खीचा। आगे बहुत से वू-सुन सामन्तो ने चीन की राजकुमारिया व्याही। एक चीनी राजकुमारी के मुह से किसी जन-कवि ने घुमन्तुओ के नीरस जीवन का गीत गवाया है[1]—

> वन्धुओ ने मुझे दिया, दूर देश मे,
> वू-सुन के राजा को देकर, भेजा पराये राज्य में।
> रहते नमदा ढँकी गाल कुटिया में,
> खाते मास और पीते दूध।

२ इतिहास

वू-सुनो के तीन विभाग थे, जिनके अवशेप निम्न स्थानो मे मिले ह—(१) चू उपत्यका में करावलती, (२) त्यानशान् मे काराकोल, त्युप और कोचकोर तथा (३) इली-उपत्यका में अल्माअता जिले के कई स्थान। २०६ और २०१ ईसा पूव मे हूणो ने वु-सुनोको वुरी तरह से

---

[1] क्रत्कि० सोओवू० XIII, 112 (वेर्नूश्तमका लेख)

पुराने शको का ही वशज होना चाहिये, किंतु कितने ही ऐतिहासिक इनका सबध सोग्दोसे बतलाते है। कगोको कद्ध-ली (गाडीवाले) मगोलायित जातिसे मिला नही देना चाहिये। दोनो का एक समय पता लगता है और आगे चलकर कगोंका स्थान कद्द्नी और उनके दूसरे हूण-वशज साथी कबीले लेते है, इसलिये इस तरहका भ्रम होना बहुत सम्भव है। कग दक्षिणापथके इतिहासमें काफी पीछे तक पाये जाते है और उनका विनाश ५वी ६ठी सदीमें ही हो पाता है, अथवा यह कहिये, कि अन्तमें वह तुर्कों तथा मोग्दियोमें विलीन हो जाते है।

कगोके पश्चिममे शकोकी सरमात् जाति दोनके तट तक फैली हुई थी, यह हम बतला चुके हैं। इन्हीके उत्तराधिकारी आगे आलानके नाममे प्रसिद्ध हुए। डाक्टर वेनादस्कीने अलानो और अन्तोको एक बतलाया है। उन्होने पुराने इतिहासकारो का मत देते हुए सिद्ध किया है, कि "स्क्लाव (शकलाव या शकराव) और अन्ती पहले एक ही नामधारी थे तथा यह दोनो बबर जातिया प्राचीनकालसे एक ही तरह की जीवन-चर्या और रीतिरवाज रखती थी। दोनो ही जातियोकी एक ही भाषा थी, जो एक अत्यन्त बर्बर बोली थी। वह शकल-सूरतमें भी एक दूसरेमे भेद नही रखते है। बिना किसी अपवादके दोनो ही जातियोके पुरुप दीर्घकाय और हट्टे-कट्टे होते। उनके शरीर और केश बहुत साफ या पाण्डु-श्वेत नही बल्कि वह कुछ कुछ मैले रगके होते थ। उनका जीवन बडा कठोर था, मसागेतो (महाशको) की तरह वह भी शारीरिक आरामकी परवाह नही करते।"[१] वर्नाद्स्कीने अन्तोको सरमतियोसे जोडते हुए कहा है, कि सरमात वतमान कजाकस्तानसे पश्चिमकी ओर चलकर दक्षिणी रूसमें ईसा-पूर्व दूसरी या प्रथम शताब्दीमें आये। उधरसे आनेवालोंमें यही आलान सरमाती कबीलोमें अत्यन्त शक्तिशाली थे। इन्होने ईसाकी प्रथम शताब्दीमें निम्न दोन-उपत्यका और उत्तरी काकेशस्को अपना निवास-स्थान बनाया। अन्तके लिखनेमें चीनी लिपिमें जो सकेत है, उसका उच्चारण अन्-चै होता है। यह भी बतलाते है कि अन्तीसे ही अस् या असी शब्द निकला है। १२४६-४८ ई० में पोपके दूत प्लानो कार्पिनीने भी मगोलोके द्वारा पराजितोको "अलानी सिवे अस्सी" बतलाया है, और यह भी कि अलानी और

बैठे रहे। इस प्रकार हूण चीन राजकुमारीको वू-सुनोमे कहा छीनते, स्वय उनके शक्ति अत्यन्त क्षीण हो गई। चीनी इतिहासकार लिखते हैं, कि इस मानवीय और प्राकृतिक सघर्षमें एक तिहाई हूण जन मारा गया, जिनमें युद्धमे भूखसे मरे भी शामिल थे, उनके पशुओमेंसे भी आधे खतम हो गये।

१९२९ में वू-सुनोकी भूमिसे एक वडा महत्वपूर्ण आविष्कार हुआ था। अल्ताई के ध्वसा वशेषकी खुदाईमें भी एक वूसुन् राजाकी कब्र निकल आई, जिसको ईसा पूर्व ३री शताब्दीका वतलाया जाता है। हूण सरदारोकी जैसी कब्रें उत्तरी काकेशसमें मिली है, वैसी ही यह कब्र भी बडी वैभवपूर्ण थी। लेकिन जान पडता है, कब्र वननेके थोडे ही समय बाद कवर-चोरोको पता लग गया, इसलिये इसका वहुमूल्य सामान उसी समय निकाल लिया गया। यह स्थान अल्ताईके ऐसे भागमें है, जहा नीचे धरती सदा हिमीभूत रहती है। जिस छेदके द्वारा चोर भीतर घुसे, उसी छेदमे पीछे पानी भी भीतर घुस कर वर्फ वन गया। इसलिये २२ शताब्दियो तक हिमके नीचे सभी चीजें दवकर सुरक्षित रह गई। १० हाथ (४ मीतर) गहरे गड्ढे में पुराने चमडे, लकडी और १० घोडे सुरक्षित मिले। घोडे वडी जातिके और सुन्दर थे। जान पडता है, वह मृत सरदारकी अपनी सवारीके घोडे थे। घोडोके सजानेके कुछ जेवर और दूसरी चीजें भी मिली। भरसक चोरोने किसी मूल्यवान् चीजको न छोडना चाहा, लेकिन तव भी पुरातत्वकी कितनी ही महत्वपूण चीजें प्राप्त हुईं। उरसुला नदीके किनारे शिवेमें भी दो शव मिले, जिनमें १४ घोडे, ५०० भिन्न भिन्न प्रकारके सोने और दूसरी तरहके आभूपण, घोडो और आदमियोके ओढ़ने, पहननेकी कितनी ही चीजे मिली। अल्ताईका अर्थ ही है सुवर्णगिरि, जिस समयकी यह कब्र है, उस समयका सारा एसिया अल्ताईके सोनेमे सोनेवाला वनता था। पाजिरिक्सकी कब्र के वारे में हम लिख चुके हैं।

३. वू-सुनोके पडोसी

उत्तरापथमे वू-सुन् अल्ताईसे त्यान्शान और तलस-नदी तकके स्वामी थे, जिनके भीतर धीरे धीरे हूण प्रवेश करने लगे और ईसवी प्रथम सदीमें केवल त्यान्शान (इस्सीकुल) का पहाडी इलाका वू-सुनोका रह गया। इली और चूकी उपत्यकाय जब हूणोकी चरभूमि हो गई, तव भी वहा कोई कोई शक-वशीय कबीला उनकी कृपा से रहने पाता था। ४३६ ई० में वू-सुन राजाने चीनको भेंट भेजी थी, जिससे उस समय तक वू-सुन जातिके बने रहनेका पता लगता है। उत्तरके यह घुमन्तू हिम-कन्दुककी तरह दूसरे कबीलोको अपनेमें हजम कर बढते जानेकी क्षमता रखते थे। हूणोकी प्रभुताके दिनोमें हू-ह्वान्, तिङ्-लिङ्, तुङ्-गुस् आदि कबीले उनमे हजम हो गये। यह सभी मगोलायित जातिके थे, इसलिये चेहरेमोहरेमें कोई अन्तर नही था, हा भाषा भेदको वह भलते गये। दक्षिणी हूण ओर्दू किस तरह अन्तमें चीनियोमें हजम हुआ, इसे हम अभी कह चुके है। वू-सुन भाषा ही नहीं आकृतिमे भी दूसरी जातिके थे, उनके हजम होने में कुछ अधिक समय जरूर लगा, किंतु वह अन्तमें हजम होकर ही रहे। आज भी इस भूमिके निवासी कज्जाकोमें सरी-उइ-शुन् नामका एक वश मिलता है, जो शायद वूसुन् वशका परिचायक है।

वू-सुनोके पश्चिम उत्तरापथ (सिरदरिया और अराल समुद्रके उत्तर) में कग जाति रहती थी, जिसका नाम महाभारत और सस्कृतके और कितने ही ग्रथोमें मिलता है। इनको

पुराने शको का ही वशज होना चाहिये, किंतु कितने ही ऐतिहासिक इनका मवध सोग्दोसे वतलाते ह्। कगोको कङ्-ली (गाडीवाले) मगोलायित जातिसे मिला नही देना चाहिये। दोनो का एक समय पता लगता है और आगे चलकर कगोका स्थान कङ्-ली और उनके दूसरे हूण-वगज साथी कबीले लेते है, इसलिये इस तरहका भ्रम होना वहुत सम्भव है। कग दक्षिणापथके इतिहासमे काफी पीछे तक पाये जाते है और उनका विनाश ५वी ६ठी सदीमें ही हो पाता है, अथवा यह कहिये, कि अन्तमें वह तुर्को तथा सोग्दियोमें विलीन हो जाते है।

कगोके पश्चिममें शकोकी सरमात् जाति दोनके तट तक फैली हुई थी, यह हम वतला नुके हैं। इन्हींके उत्तराधिकारी आगे आलानके नामसे प्रसिद्ध हुए। डाक्टर वेनादस्कीने अलानो और अन्तोको एक वतलाया है। उन्होने पुराने इतिहासकारो का मत देते हुए सिद्ध किया है, कि "स्क्लाव (शकलाव या शकराव) और अन्ती पहले एक ही नामधारी थे तथा यह दोनो ववर जातिया प्राचीनकालसे एक ही तरह की जीवन-चर्या और रीतिरवाज रखती थी। दोनो ही जातियोंकी एक ही भाषा थी, जो एक अत्यन्त बर्वर बोली थी। वह शकल-सूरतमें भी एक दूसरेमे भेद नही रखते है। विना किसी अपवादके दोनो ही जातियोके पुरुष दीर्घकाय और हट्टे-कट्टे होते। उनके शरीर और केश वहुत साफ या पाण्डु-श्वेत नही वल्कि वह कुछ कुछ मैले रगके होते थ। उनका जीवन वडा कठोर था, मसागेतो (महाशको) की तरह वह भी शारीरिक आरामकी परवाह नही करते।"[1] वर्नादस्कीने अन्तोको सरमतियोसे जोडते हुए कहा है, कि सरमात वतमान कजाकस्तानसे पश्चिमकी ओर चलकर दक्षिणी रूसमें ईसा-पूव दूसरी या प्रथम शताब्दीमें आये। उधरसे आनेवालोंमें यही आलान सरमाती कवीलोमें अत्यन्त शक्तिशाली थे। इन्होने ईसाकी प्रथम शताब्दीमें निम्न दोन-उपत्यका और उत्तरी काकेशसको अपना निवास-स्थान वनाया। अन्तके लिखनेमें चीनी लिपिमें जो सकेत है, उसका उच्चारण अन्-चै होता है। यह भी वतलाते ह कि अन्तीसे ही अस् या असी शब्द निकला है। १२४६-४८ ई० में पोपके दूत प्लानो कार्पिनीने भी मगोलोके द्वारा पराजितोको "अलानी सिवे अस्सी" वतलाया है, और यह भी कि अलानी और आस् एक ही जाति थी। १२५३-५४ ई० में फ्रेंच राजाने रुकरुकको अपना दूत वनाकर मगोल खानके पास भेजा था। वह भी कार्पिनीके शब्दोको दुहराता है। अन्तमें वर्नादस्की इस निष्कर्ष पर पहुचते है, कि अन्त, असु या यासु एक ही जाति है, जिसके वशज काकेशसके आधुनिक ओस्-सेती ह और पूर्वी स्लावों (आधुनिक रूसियो) के निर्माणमें इस अस् जातिका वहुत हाथ है। घुमन्तू होनेकी वजहसे यदि इनका पता अराल समुद्रसे निम्न दन्यूव (दुनाई) के पास तक मिले, तो कोई आश्चर्य नही। कालासागरके उत्तर-पूर्वमें अवस्थित अजोफ या असोफ सागरका नाम वस्तुत इन्हीके नामसे पडा, जिसका अर्थ है अस-सागर। जान पडता है, पूरबसे हूणोंका जैसे-जैसे धक्का इनपर लगता गया, वैसे वैसे आगे वढते हुए वह या तो काकेशस् और रूसमें भगे अथवा उनका वहुत सा भाग हूणो में हजम हो गया।

---

[1] प्रोकोपियस्

वूसून्-राजा (मेन्-चू)

गुन्-मो	१०५ ई० पू०
ग्युन्-च्युइ-मी-के	
नीमी	
ग्वान्-वान्	६० ई० पू०
चुइ-ली-मी	
इ-ची-मी	११ ई० पू०-८ ई०

चीनी अभिलेखोमें उपरोक्त वू-सुन् राजाओका पता लगता है। उनके नामका उच्चारण समान चीनी शब्दोके उच्चारणमे लिखा गया है, इसलिये मूल उच्चारण क्या था, इसका समझना आसान नही है। सप्तनद उनकी मुख्य भूमि थी, यह उसी समयसे चीनी ग्रथोमें लिखा जाने लगा, जबकि ईसापूर्व २री शताब्दीके मध्यमे हूणोके विरुद्ध शकोको उभाडनेके लिये चाङ क्यान् दूत बनाकर भेजा गया। हूणो द्वारा जो वू-सुन् राजा मारा गया, उसके पुत्रको हूण राजा पकडकर अपने साथ ले गया। पीछे उसे वू-सुन् जनमें लाकर बापकी जगह पर बैठाया। अपनी मूल भूमिसे भागते हुए महायूची वू-सुनोकी सप्तनद भूमिमे गुजरे थे, यह हम बतला आये हैं। हूणोके प्रहारसे त्यानशानमें अपनेको सिकोड लेनेमे पहले वूसुन् जन सप्तनदकी समतल सी भूमिमें रहा करता था। ईसापूर्व २री शताब्दीमें वू-सुन् जनमें १२००० परिवार या ६३०००० व्यक्ति थे। वह युद्धमें १८८८०० सैनिक जमा कर सकता था। इनकी राजधानी चि-गु इस्सीकुलके दक्षिण-पूर्वी तट पर थी, जो अक्सू (सिङ क्याङ)मे ६१० ली उत्तर-पश्चिम, फर्गाना की राजधानी (खोजन्द) से २००० ली उत्तर-पूर्व और कग-भूमि की सीमासे ५००० ली पूव, कगोकी राजधानी फर्गाना (तावङ) से २००० ली उत्तर-पश्चिम थी। रूसी इतिहासकार अरिस्तोफके अनुसार चि-गू इस्सीकुलके तट पर नही, वल्कि किजिल्-सू (लोहित नदी)के तट पर था। वू सुन राजाओके वारेमें निम्न बातोका पता लगा है —

गुन्-मो—(१०५ ई० पू०)—इसे ही वह चीनी राजकुमारी मिली थी, जिसके नीरस जीवन-गीतको हम पहले उद्धृत कर चुके है। फर्गानाके राजाके श्रेष्ठ घोडोकी बात सुनकर चीन-सम्राट् ने जब माँग की, तो राजाने देना नही चाहा, जिसका परिणाम हुआ १०२ ई० पू० म फर्गाना पर चीनकी चढाई। इस चढ़ाईमे गुन्-मो ने २००० सैनिक महायताके लिये दिये थे, लेकिन उन्होने युद्धमें भाग नही लिया।

ग्युन् च्युइ-मी—गुन्-मो का पोता था। इसके समय चीनी रानीके कारण चीनी अफसरोका प्रभाव ज्यादा बढ़ा था।

उङ-गुइ—पिछले सेन-चू के बाद हूण राजकन्यासे उत्पन्न उसका एक छोटा पुत्र नी-मी बच रहा था, जो थोडे समय तक ही गद्दी पर बैठ सका, और जल्दी ही उसे हटाकर सौतेले भाई उङ-गुइ-मी ने राज्यको अपने हाथमें कर अपने पूवके राजाकी रानी (चीनी राजकुमारी) को व्याहा। पूव राजाकी पूर्वोक्त विधवा रानी पहले मर गई थी, और यह दूसरी चीन राजकुमारी थी, जिसे उङ-गुइ-मीने अपनी रानी बनाया। उङ-गुइ-मीकी मृत्यु ६० ई० पू० के आसपास हुई थी। वू-सुनोका यह बडा शक्तिशाली और प्रतिभाशाली राजा था। देशके भीतर और बाहर सभी

जगह इसने अपने प्रतापका प्रदर्शन किया। ७१ ई० पू० में इसने चीनकी सहमतिसे हूणोके खिलाफ अभियान किया, और ४० हजार हूणो को मार कर ७० हजार पशुओको छीना। अपने पूर्वी और पूव-दक्षिणी पडोसी तरिम-उपत्यकाके लोगोके साथ भी इसने छेड-छाड की और अपने द्वितीय पुत्रको यारकन्दका शासक नियुक्त किया। कूचा के राजा पर भी इसका प्रभाव था, जिससे इसने अपनी वडी लडकी व्याही थी। इसके मरने पर गद्दीसे उतारा भाई नीमी, क्वान्-वान् की उपाधिके साथ गद्दी पर बैठा।

क्वान्-वान् (६० ई० पू०)—अपनी रानी (चीनी राजकुमारी) और प्रजासे इसका विवाद खडा हो गया। इसने अपने भाईकी विधवा (चीन राजकुमारी) को अपनी रानी वनाया था। चीनी राजदूतने मारनेका पड्यन्त्र किया। राजा घायल होकर वच गया। इसके लिये जव शिकायत की गई, तो चीनने अपने दूतको वुलाकर उसे दण्ड दिया। अन्तमे हूणोने वू-सुनो पर आक्रमण किया, जिसमे क्वान्-वान् मारा गया और चीन उसकी कुछ मदद नही कर सका।

उह्र-त्सी-मी—उसकी जगह वू-च्यू-तूने कनिष्ठ गुन-मो की उपाधि धारण करके राज सम्हालना चाहा। उह्र-गुइ-मीके पुत्र युवान-गुइ-मी भी महागुन्-मो की उपाधिसे अलग राजा वना। ज्येष्ठ गुन्-मो कें हाथमें ७०००० वू-सुन परिवार थे, जव कि कनिष्ठ गुन्-मोके पास ४०००० थे। कनिष्ठ गुन्-मो (ऊ-च्यू-तू) ने चीनकी सहायतासे हूणोके साथ लडाई की।

(ज्येष्ठ गुन-मो) युवान-गुइ-मीका पोता था। इसका समय अपेक्षाकृत शांतिका था। पर यह स्वाभाविक मृत्युसे नही मरा।

इ-ची-मी—(११ ई० पू० और ८ ई०)—यह पिछले राजाका पोता तथा एक चीन राजकन्या का पुत्र था। ज्येष्ठ और कनिष्ठ गुन्-मो के सघपके समय चीनियोंने ज्येष्ठ गुन्-मोका पक्ष लिया था। कनिष्ठ गुन्-मो अन्-लि-मी चीनकी शहसे गद्दीसे उतार दिया गया। हूणोने जव उसे मार डाला, तो उसकी जगह इ-ची-मी को चीनने राजा वनाया। ११ ई० पू० में इसका चचा वी-क्वान्-ची ८०००० आदमियोके साथ उत्तरकी ओर चला गया और वहाँसे दोनो ही गुन्-मोके ऊपर आक्रमण करने लगा। १ ई०पू० में इसने चीनके साथ अच्छा सवध स्थापित किया। इ-ची-मी चीन दरबारमें गया, राजधानीमें उसका अच्छा स्वागत हुआ। अन्तमें वी-क्वान्-ची चीनियो द्वारा मारा गया।

प्राय ८ ई० में तरिम-उपत्यका हूणोके हाथमें चली गई और चीनसे व-सुनोका सवध विछिन्न हो गया, जो ७३ ई० में ही पुन स्थापित किया जा सका। इस समय भारत और मध्य-एसियामें कुषाण राजा कनिष्क का शासन था। तरिम-उपत्यका भी कनिष्कके हाथमें थी, लेकिन उसने चीनको अपना अधिराज मान लिया था। ९७ ई० में पश्चिमी वणिक्पथको पूरी तौरसे अपने हाथमें करनेके लिये धाङ्चाऊके नेतृत्वमें एक वडी सेना पश्चिमकी ओर चली, जो विजय करती कास्पियन समुद्र तक पहुँच गई। इस समय वू-सुन राजा, फर्गानाके राजा और कगोने भी चीनको अधीनता स्वीकार की थी, यह स्पष्ट ही है। ईसाकी २री शताब्दीके चतुथ पादमें उत्तरी चीनमें स्यान्-पी वशका दृढ शासन था। स्यान्-पी नुगुस् जातिके थे, यह कह आये हैं। १८१ ई० में स्यान्-पी राजा ता-शी-हुईने पश्चिममें वू-सुन भूमि तक अपने राज्यका विस्तार किया। ४थी

शताब्दीके आरभमें एक दूसरे स्यान्-पी वशने पुरानी वू-सुन भूमिके कुछ भागको अपने हाथमें किया। ४थी शताब्दीके अन्तमें से ६ठी शताब्दीके मध्य तक मध्य-एसिया पर तू-तान् वशकी प्रभुता थी, जिन्हे भी तुगुस् जातिका बतलाया जाता है। इन्हीके आक्रमणके समय वू-सुनोका सप्तनदकी समतल भूमि परसे अधिकार उठ गया और वह त्यान्-शान्के पहाड़ोमें ही रह गये। ४२५ ई० में पश्चिमके बहुतसे शासकोने अपने अपने दूत स्यान्-पी सम्राट्के दरबार (उत्तरी चीन) में भेजे थे, इस वक्त उत्तर चीनमे *युवान्-वेई और वेई-वेई (उत्तरी वेई और पश्चिमी वेई)* दो राज्य थे। इन दूतोंमें एक वू-सुनो का भी था। ४३६ ई० मे वू-सुनोके पास चीनका दूत आया। अवतक वू-सुन प्रतिवर्ष भेंट भेजते रहे। इसके बादमें वू-सुनोका नाम चीनी अभिलेखोमें नहीं मिलता। आज केवल किर्गिज-कजाक महा-ओर्दूमें ही उइ-सुन् नामका एक कबीला मिलता है।

§ २ अवार (४००-५८२ ई०)

हूण फैलते फैलते एक युरेसियाई जाति के रूप में परिणत हो गये। इनके वशधर हुंगरीके मग्यार आज भी मौजूद हैं। प्रागैतिहासिक कालमे हिंदी-युरोपीय जाति भी इसी तरहकी एक युरेसियाई जाति बनी थी। ऐतिहासिक कालमे हूणोके बाद तुर्क युरेसियाई जातिके रूपमे परिणत होकर, एक समय मचुरियासे काकेशश और क्रिमिया तक फैले, बादमे यद्यपि उनके पूर्वी भूभागको दूसरी मगोलायित जातियोने ले लिया, किंतु तब भी वह पूर्वी युरोप तक छाये रहे। आज भी पूर्वी मध्य-एसिया, पश्चिमी मध्य-एसिया, आजुबाईजान और तुर्कीमें किसी न किसी रूपमें तुर्की-भाषी जाति ही निवास करती है।

१ अवार (जू-जुन्, ज्वान-ज्वान)

तुर्कोके इतिहासमे पदार्पण करनेसे पहिले अवार हूण देशके अधिकारी थे, जिनका ही स्थान तुर्कों ने लिया है पहले हमने सकेत किया था कि हूणोके ध्वसके बाद स्यान्-पी (तुङ्ग हू) कबीले) ने मचूरिया, मगोलिया और चीनके कुछ भागो पर अपना साम्राज्य स्थापित किया। इन्हींका एक प्रभुताशाली राजवश तो-वा था, जिसकी स्थापना ३१५ ई० के आसपास और समाप्ति ५वी सदीमें हुई। इसी तोवा वशमे अवारोंका सबध था, जिन्हें मुकुरु-तोवा भी कहते है। इस हूण-जनका निवासस्थान तिङ्-लिङ् (ककाली) के निवास बैकाल सरोवरके नजदीक तथा गोबीके रेगिस्तानसे उत्तर था। तातुङ्के तोवा राजकुमार इलू को एक बच्चा दास मिला, जो अपना नाम भूल गया था और उसके स्वामीने उसे मुकुरु नाम दे दिया। युद्धमें बहादुरीका काम करनेके लिये मुकुरु को दासता से मुक्त हो स्वतत्र सैनिकका अधिकार प्राप्त हुआ। पर, किसी सैनिक सेवाके समय उपस्थित न हो सकने के कारण उसे मृत्यु दण्ड मिलनेवाला था, इसलिये वह गोबी के उत्तरकी ओर भाग गया। वहाँ धीरे धीरे लोगोको जमा करके वह लुटेरोंका सरदार बन गया। इसके पुत्र शरुकने अपने पिताकी जमातको और बढाकर एक छोटा-मोटा ओर्दू कायम कर लिया, जिसका नाम अवार पड़ा। पहले चीनीमे अवार कबीलेका नाम जू-जुन था, जिसे तोवा सम्राट् ताई-हू-ती (४२४-४५२ ई०) ने ४५१ ई० में बदल कर ज्वान-ज्वान कर दिया। मुकुरुकी ७वीं पीढ़ीमें शक्तिशाली नेता शे-लून् हुआ। इसने काउ-शे (ककाली) कबीलेको जीता और अपनी सैनिक शक्तिको मजबूत और सुसगठित करके कगान (खान) की उपाधि धारण की।

कोरियासे अल्ताई तक फैले इसके राज्य में कुछ चीनका भाग भी था। शे-लून् मध्य-एसियाके वणिक्‌पथके कुछ भागका भी स्वामी था। जहाँ तक चीन-साम्राज्यका सवाल था, अवारोंने अब अपने पूर्वज हूणोंका स्थान लिया था। उन्हींकी तरह यह भी कभी चीनको लूटते और कभी अवश्यकता पड़ने पर उसे सैनिक सहायता देते थे। अवारोंकी शक्तिकी समाप्ति ५४६ ई० के आसपास तुर्कोंने की। इनके एक राजाका नाम आमन भी था।
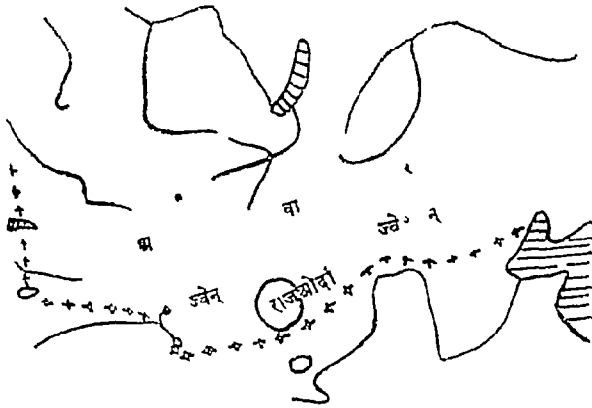
१५ अवार साम्राज्य (४२० ई०)

अवारों पर चीनी संस्कृतिका प्रभाव पड़ा था, साथ ही बौद्ध धर्म भी उनमें बहुत फैला था। तोबा भी बौद्ध सम्राट् थे। अन्तमें अवारोंमें आपसी फूटने भयकर रूप धारण किया, जिसका लाभ उनके अधीनस्थ तुर्क लोहकारोंने उठाया। अल्ताईके दक्षिणी सानू पर तुर्क अपनी खुशीसे लोहेका काम नहीं कर रहे थे। वह इस गुलामीसे निकलना चाहते थे और इस वक्त उन्हें ऐसा मौका मिल गया।

स्रोत-ग्रंथ

१ क्लि० सोओव्० XIIIpp ११२ (वेर्नश्ताम् का लेख)

२ आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोई किर्गिजिया (वेर्नश्ताम्, फ्रुन्जे १९४१)

३ वोस्तोको वेदेनिये II (१९४१) p 2।

अध्याय ४

तुर्क (५४६-७०४ ई०)

हूण कालमे काउ-शे (ककाली, तिङ्ग-लिङ्ग तिकालिक) नामकी एक जाति रहती थी। काउ-शे का अर्थ है बडी गाडी। बहुत बडी पहियोवाली गाडियोमें अपना सामान लादे यह एक जगहसे दूसरी जगह घूमा करते थे, जिसके कारण उनका यह नाम पडा। ऐसी गाडियोका रवाज तुर्कों और मगोलोंके काल तक पाया जाता है। काउ-शे का पता पहले पहल ईसाकी ५वी सदीमें मिलता है। इनका ज्वान-ज्वानसे बराबर सघर्ष होता रहा। अवार (ज्वान-ज्वान) को पराजित करते समय एक बार तोबा सम्राट् ताइ-वू-ती (४२४-५२ ई०) ने इनके ऊपर भी आक्रमण किया और ५० हजार नरनारियोको बदी बनाया। लूटके मालमें कई हजार बडी गाडियाँ तथा १० लाखसे ऊपर पशु उसके हाथ आये। अवारो (ज्वान-ज्वान) की तरह काउ-शे भी चीनको हैरान करते थे। जब सीधे चीन पर आक्रमण नही कर पाते, तो उसके अत्यन्त मूल्यवान वणिक्पथका अपना शिकार बनाते। एक समय तोबा सम्राट्ने इन्हें गोबी रेगिस्तानके दक्षिणमें लाकर बसा दिया। वह समझता था, इस प्रकार हम उन पर काबू रख सकेंगे। लेकिन जल्दी ही वह फिर विद्रोह करके उत्तरकी ओर चले गये। तोबा वश घुमन्तुओंके दबानेमें अधिक सफल हुआ था। उसकी कोशिश यही थी, कि ज्वान-ज्वानको दूसरे घुमन्तुओके साथ सबध जोडनेका मौका न मिले। तिङ्ग लिङ्ग सरदार पीछे रुरुमृचीके पास छोटे छोटे राजा या सरदार बनकर रहने लगे। तिङ्ग-लिङ्ग भी अपना बडा राज्य कायम करनेमें सफल होते, लेकिन उनमें कभी इस तरहका सगठन नही हो पाया। हाँ, खतरेके समय सब एक हो जाते थे। युद्ध करनेकी कोई सुसगठित व्यवस्था नहीं थी, हर एक व्यक्ति अपना हथियार ले जहाँ चाहता, वहाँ आक्रमण कर देता। अपना पल्ला भारी रहने पर तो कोई हरज नही था, किंतु इस व्यवस्थाके कारण न वह डट कर लड सकते थे, और न पराजयके समय अपनेको अच्छी तरह सम्हाल सकते थे। ब्याहमें इनके यहाँ ढोरो और घोडोका दहेज दिया जाता, अनाजका कोई उपयोग नही था और न किसी तरहका नशेवाला पेय ही इस्तेमाल होता था। चमडा पहनना, मास खाना तथा अत्यन्त ठण्डी जगहमे रहना उन्हे और भी गदा बनाये हुए था। घोडो और ढोरोका पालना यही उनकी जीविका थी। आगे चलकर तिङ्ग-ली तुर्कोंमें हजम हो गये।

१ तुर्क साम्राज्यकी स्थापना

चीनी स्रोतसे[1] पता लगता है, कि तुर्क हूणोका ही एक कबीला था, जिसका पुराना नाम अस्सेना था। ४३३ ई० मे तोबा-सम्राट्ने इनके स्थानको छीनकर इन्हें अपने भीतर हजम

---

[1] A Thousand years of Tatars, pp 365,

कर लेना चाहा। इसी समय ५०० असेना परिवार भागकर ज्वान-ज्वानके राज्यमे चले गये, जहाँ उन्हें अल्ताई (अल्तुनइइश) के दक्षिणी सानू पर लोहा बनानेका काम मिला,[1] इसे हम कह चुके हैं। ये लोग शिरस्त्राण जैसी नेकीली टोपी पहना करते थे, जिसके कारण इनका नाम दुर्-म्पो (तू-मू, टोपी) पडा, जिसका ही अपभ्रश तिर्कू (तुर्कू, तुक, त्युरेक या तुरुक) है।[2] इससे पहले तुर्क ल्याङ जैसे चीनके अत्यन्त सुसस्कृत क्षेत्रमें काफी समय तक रह चुके थे, किंतु जान पडता है, उससे इनको बहुत लाभ नही हुआ। ज्वान-ज्वानकी शक्तिके निबल होते ही अपनी दासताका अन्त कर जल्दी ही इनके सरदार तुमिनने अपनेको स्वतत्र घोषित किया। ५४६ई० के आसपास तू-मिनने अपनेको इल्-खाकान घोषित किया। ज्वा-ज्वानके राजा अनाक्वेने व्याहके लिये कन्या देनेसे इन्कार करने पर इनके हाथो प्राणोसे हाथ धोया। इल्-खान, एल-खान या एल-खाकानसे बना है। खाकान, खगान, खअान, खान वस्तुत शान्-यूका ही पर्याय है। पहले हम लिख चुके है, कि 'शान्-यू' चीनी शब्दानुकरण है। मूल हूण शब्द शायद चिङ्-गिम् या जिङ्-गिस् रहा हो, जिसे किसी किसी ने जगी बना देनेकी भी कोशिश की है। पहले ज्वान-ज्वानने खान या खकानकी उपाधि धारण की थी, पीछे तो राजाके लिये तुर्कोंमें यही शब्द बहु प्रचलित हो गया। मगोल-वशने भी इसी उपाधिको अपनाया और उन्हीका अनुसरण करते मध्य-एसियामें १९१७ ई० तक खानकी उपाधि केवल राजाके लिये ही सुरक्षित थी और साधारण कुलीन परिवारका मुखिया भी अपने नामके साथ खान नही लगा सकता था। लेकिन, मुगलोके समयसे हिन्दुस्तानमें यह पदवी टके सेर हो गई। यद्यपि आरभही में इसका मोल इतना नीचे नही गिराया गया था, बल्कि खान-खाना (खानोका खान) तो मुगल दरबारकी एक बडी उपाधि थी। अकबरका सरक्षक और प्रधान-मत्री वैरम खा खाने-खानाँ कहा जाता था। मुगलोने जब राजाके लिये शाह, शाहशाह या पादशाह की उपाधि स्वीकार कर ली, तो उन्हें खानकी क्या परवाह हो सकती थी? बाबरके पूवज तैमूरने इस पदवीको इतना उच्च समझा, कि उसे चगेज-वशज अपने गुडिया राजाके लिये ही सुरक्षित रहने दिया, और अपने लिये 'अमीर' (सामन्त) की उपाधिको पर्याप्त समझा।[3]

तू-मुन्को इलि-खान तू-मिन कहा जाता है। इलि या एल जनका परियाय है, इल-खान, (एल-खान) का अर्थ है, जनोंका राजा। पहले पहल इसका ओर्दू ह्वाइ-ह्वाङके उत्तरमें था। अपने को एल्-खान घोषित करनेके साथ इसने और भी कई उपाधिया प्रारभ की। हूणोके समय रानीको येङ्-ची कहा जाता था, अब उसे उसने खो-हो-तुन् की उपाधि प्रदानकी, जो पीछे खो-तुन या खा-तुन बन गया। आज भारत और बाहरके मुसलमानोंमें कुलीन महिलाओंके साथ खातूनकी उपाधि आम तौरसे लगायी जाती है। तू-मिन्ने अपने जीवनमें ही तुर्क-शक्तिको बहुत बढ़ा दिया था। जब मार्च ५५३ ई० में वह मरा, तो उसका शक्तिशाली वश और कबीला, जिसे चीनी पुस्तकोमें तू-क्यु या तुरुकू कहा जाता हैं, बहुत प्रसिद्ध हो चुका था। तुर्कोंमें प्रचलित कुछ पद थे—

---

[1] त्युरोक पृष्ठ ९
[2] वहीं पृ० ३६५
[3] त्युरोक (वेर्नश्ताम) पृ० ८२-८३

दे-ले (ते-ले)-मगोल देरे,	राजकुमार
कुइ-लुइ-चुइ (किलिच या खिलिज)	एक उच्च-पदाधिकारी
अ-पो (अ-पा)	" " "
घे-रे-फा (श्या-लि-फा)	"
तू-तुन्	" " "
जि-गिन् (सू-चिन्)	" " "

नाम रखनेमें तुर्कोंमें वैयक्तिक गुणका ध्यान रक्खा जाता था। जैसे शा-वौ-लि-यो (शा पो-रो) का अथ है विक्रम या पराक्रमी, सन्-द-लो का अर्थ है मोटा, द-लो-बियान=बहुत पीनेवाला। कुछ पुराने तुर्की शब्द हैं—

को-ली (कारी)—वृद्ध
घो-रन्—घोडा (यह भारतमें बहु प्रचलित शब्द तुर्की है)
घो-रन्-सुली—सैनिक अफसर
करा—काला (कृष्ण) इसे काल या (मृत्यु)से मिलाकर भारतीय बना दिया गया।
करा-शू—अति उच्च अधिकारी
सो-को—केश
सू-दुन्—उच्च अधिकारी, राज्यपाल
सो-को तू-दुन— प्रदेशिक राज्यपाल
जे-खान्—एक उच्च अधिकारी
अन्-अन्—मास
मन्-जन्-कुनी—राज्य-प्रतिहार
लिन्—भेडिया
लिन्-खाकान—उपराज
यब-गू (जे-गू)—राजकुमार
ई-खकान—गृह-राजा (ई=घर)

२ शव-क्रिया[1]

बहुत जल्दी ही तुर्क घुमन्तू बौद्ध धर्ममें दीक्षित हो गये, जिसका उनके जीवन पर बहुत प्रभाव पडा और मुसलमान होनेसे पहले तक बौद्ध धर्म आजके मगोलोंकी तरह तुर्कोंका भी जातीय धम रहा। उनके कितने ही जातीय रीति-रिवाज थे, जिनमें अपनी साधारण नीतिके अनुसार बौद्ध धर्मने हस्तक्षेप करना पसद नही किया। मरनेके बाद आदमीकी लाश उसके तम्बूके सामने रक्खी जाती थी। मृत सरदारके बेटे-पोते तथा उसके दूसरे सबधी एक एक घोड़ा या भेड तम्बूके सामने खड़ा करते थे। परिवारके लोग शोक प्रकट करनेके लिये छुरीसे अपने चेहरेको घायल करते, जिसमें रोते समय आसुओंके साथ रुधिर भी मिश्रित हो जाये। बसत और पतझडके समय

[1] A Tthousand years of Tatars

कब्रमें मुर्दे दफनाये जाते। कब्रके ऊपर पत्थरोंको खड़ाकर उनपर शोक-प्रकाशक चिह्न लगा दिये जाते। मृत योद्धाने अपने जीवनमें जितने शत्रुओंको मारा, उतने ही पत्थर गिनकर कब्रके ऊपर खड़े किये जाते। उस दिन कुटुम्बके सारे स्त्री-पुरुष सुन्दर-सुन्दर वस्त्राभूषणसे सज्जित हो, उसी तरह कब्रपर एकत्रित होते, जैसे तिङ-लिङ लोगोमें। जमा हुओमें यदि कोई पुरुष वहा उपस्थित किसी लडकीको पसन्द करता, तो घर लौटने पर मागनेके लिये सदेश भेजता, और आमतौरसे लडकीके माता-पिता उसे स्वीकार करते। यह रवाज स्यान्-पी लोगोमें भी था।

तुर्क घुमन्तू पशुपाल थे। हूणो की तरह इनकी भी अपनी चरभूमि होती थी। खाकान की चरभूमि तू-चिन पर्वत था। हूणो ही की तरह प्रतिवर्ष वहाँ वह अवश्य जाता और देव-पितर के लिये बलि और श्राद्ध करता। चान्द्र पचमी (शुक्ल पक्ष) को देव और प्रेतात्माओ के लिये बलि देने के समय ओर्दू के दूसरे लोगो को भी वहा जमा होना पडता। तू-चिन् से १५० मील पश्चिम पू-नेङ्वे (पृथिवी-आत्मा) नामक वृक्ष-वनस्पतिहीन पहाड था। चीनी लेखको के अनुसार तुर्कों की लिपि हू (सुरियानी) थी। उनका अपना कोई पचाग नही था। तुर्क पुरुष पाशा खेलने के बडे प्रेमी थे और स्त्रियाँ पादकदुक (फुटबाल) खेलने की। वह कूमिश (घोडी के दूध से बनी शराब) पीते और पीते-पीते मस्त होकर गीत गाते।

३ तुर्क-राजावलि—

१ तू-मिन इलिखान	मृ मार्च ५५३ ई०
२ इसि-गी, तत्पुत्र	५५३
३ यू-यू	५५३-६४ "
४ तोबा, तत्पुत्र	५६६-८० "
५ शेतू शबोलियो, तत्पुत्र	५८२-८७ "
६ दूलन, तत्पुत्र	५८८-६०० "
७ दातू बुगा	६००- "
८ खेली	
९ तुली, तद्भ्रातृव्य	६२८-३१ "
१० सिबिली तत्पुत्र	६३१-४७ "
११ चेबी	६४७-८२ "
(१) गुदुलू	६८२-९३ "
(२) मोचो	६९३-७१६ "
(३) मोगिल्यान	७१६-३५ "
(४) ईजान्या	७३५-३९ "
(५) बिग्या गुदुलू	७३९-४२ "
(६) ओज़मिशि	७४२-४४ "
(७) वाइमेइ	७४४-४७ "

[1] A Thousand years of Tatars, pp 365

(१) इल-खान तू-मिन[1] (मार्च ५५३ ई०)

(मृ-मार्च ५५३ ई०)—६ठी शताब्दी मे घुमन्तू तुर्को का नया साम्राज्य अल्ताई से आरभ होकर थोड़े ही समयमें प्रशान्त महासागर से काला सागर तक पहुँच गया। पश्चिमी तुर्क साम्राज्य का केन्द्र वू-सुनो की पुरानी भूमि सप्तनद थी। उसमें मध्य-एसिया भी शामिल था। चीन से पश्चिमी एसिया और युरोप की ओर जानेवाला वणिक्पथ इनके राज्य से होकर जाता था। यह वणिक्पथ ताशकन्द, औलिया-अता होते सप्तनद में चू-नदी के तट पर पहुँच, वहाँ से इस्सिकुल के दक्षिणी तट से होते वेदेल डाँड़े को पारकर अक्सू (तरिम-उपत्यका) में पहुँचता था। स्वेन्-चाङ अक्सूसे इसी रास्ते पश्चिमी मध्य-एसिया में पहुँचा। चू-उपत्यका उस समय कृषि-प्रधान थी, जिसके अग्रदूत खोजन्द (फर्गाना राज्य) से आये सोग्दी थे। स्वेन् चाङ के पहले वक्षु से चू-नदी तक की सारी भूमि संस्कृति, वस्त्राभूषण, निवास, लिपि और भाषा में एक थी। इनकी लिपि सुरियानी से निकली हुई ३२ अक्षरो की थी। यह मगोली की तरह ऊपर से नीचे की ओर लिखी जाती थी। सोग्दियो मे मानी के धर्म के मानने वाले बहुत थे। निवासियो में आधे कृषक और आधे व्यापारी थे। सुई नदी के तट पर अवस्थित कास्तेक डाँड़े से दक्षिण में अवस्थित सुयाब नगर उनका बड़ा वाणिज्य-केन्द्र था। ७ वीं शताब्दी में भी इस नगर में बहुत से विदेशी व्यापारी रहते थे। सुयाब के दक्षिण बहुत से नगर थे, जिनके अपने अपने शासक थे, किंतु सभी तुर्क-कगान को अपना अधिपति मानते थे।

पीछे पश्चिमी कगान का ओर्दू सुयाब के पास ही रहता था।

(२) इसि-गी या इस-ते

वंश-स्थापनक तू-मिनका पुत्र था, किंतु तुर्क घुमन्तू जन अपने पूर्वज हूणो और दूसरे घुमन्तूओ की तरह उत्तराधिकारी चुनने में जनतंत्रता का अधिक ख्याल करता था। इसीलिये इसिगी ज्यादा दिनो तक नही रह सका और तू-मिनका छोटा भाई कि-गिन मू-यू-खानके नाम से तुर्कों का खाकान बना। इसि-गी की संतान ने आगे चलकर पश्चिमी तुर्क राजवंश को स्थापित करने में सफलता पाई, इसलिये इसिगी खान को तुर्क-इतिहास से भुलाया नही जा सकता।

(३) मू-यू-खान (५५३-६४ ई०)—

इसने तुर्क साम्राज्य को काफी मजबूत किया। विशाल राज्य की समृद्धि से लाभ उठानेवाले तुर्क-सामन्तो में अब नागरिक विलासिता जड पकड़ने लगी। महान् वणिक्पथ इनके राज्य के भीतर से जाता था, और अपने हूण पूर्वजो की तरह यह हरदम चीन के भीतर घुसकर लूटपाट करने के लिये तैयार थे। अपनी पुरानी नीति के अनुसार चीन बराबर भेंट और राजकन्या देकर इन्हें शांत रखना चाहता था।[1]

---

[1]वहीं पृष्ठ ३६७

(४) तोबा खान[1] (५६९-८० ई०)—

मू-यु-खान के मरने के बाद इसका पुत्र दालो-ब्यान नही बल्कि भाई तोबा तुर्कों का खाकान बना। दालोब्यान ने चचा के राज करते समय छेडछाड नही की। तोबा के मरने के बाद ५८० ई० में उत्तराधिकार को लेकर जो झगडा हुआ, उसमें तुर्क साम्राज्य पूर्वी और पश्चिमी दो भागो में विभक्त हो गया। पश्चिमी तुर्क-साम्राज्य का सस्थापक दालोब्यान था। हमारे विषय से यद्यपि दालोब्यान और उसके उत्तराधिकारियो का ही विशेष सबध है, लेकिन हम पूर्वी तुर्कों को छोड नही सकते, क्योकि वह भी अप्रत्यक्ष रूप से पश्चिमी मध्य-एसिया की सस्कृति और इतिहास को प्रभावित करते थे।

तोबा पहले साम्राज्य के पूर्वी भाग का लघु-खाकान तथा लाखो सेनाओ का नायक था। वह स्यान-पी सम्राट् की नाक में दम किये रहता था, जो भय के मारे प्रतिवर्ष एक लाख रेशमी थान और दूसरी भेंटें भेजता था। चीन की पश्चिमी राजधानी में तुर्कों की बडी आवभगत होती थी। कभी कभी तीन-तीन हजार तुर्क रेशम पहने मास की दावत उडाते वहाँ डटे रहते थे। लेकिन तोबा इसके लिये चीन का कृतज्ञ न होकर कहता था—"जब तक मेरे दो पुत्र (चीन के राजा) अपने कर्तव्य का पालन करते रहेंगे, तब तक मुझे किसी चीज की कमी नही रहेगी।"

(बौद्ध धर्म का प्रवेश)—

चाङ-क्यान् की यात्रा के समय (१३८-१२६ ई० पू०) तरिम-उपत्यका में बौद्ध धर्म पहुच चुका था। उसके बाद उत्तर के घुमन्तू यद्यपि इस भूमि पर विजयी होते रहे, किंतु बौद्ध धर्म उनके ऊपर धर्म-विजयी होता रहता था। कहा जाता है, बौद्ध धर्म पहले ईसापूर्व २ री ही शताब्दी में चीन पहुँच चुका था, किंतु इस का ठीक प्रमाण पूर्वी हान वश के सम्राट् मिङ (५८-७५ ई०) के समय में मिलता है। इस सम्राट् ने बौद्ध पुस्तको और बौद्ध भिक्षुओ को लाने के लिये अपने दूत भारत भेजे, जिसके साथ काश्यप मातङ्ग और धर्मरत्न दो भिक्षु बहुत सी धर्म-पुस्तको और मूर्त्तियो के साथ चीन-राजधानी लोयाङ पहुचे। काश्यप मातङ्ग द्वारा अनुवादित "द्वाचत्वारिंशत्-सूत्र" चीनी भाषा में अब भी मौजूद है। हान्-वश के बाद चीनी राजवशो तथा उनके पडोसी घुमन्तूओं पर बौद्ध धर्म बराबर प्रभाव डालता रहा। जहाँ चीन अपने रेशम और विलास सामग्रियो को देकर घुमन्तू सामन्तों को चाल-व्यवहार में सभ्य बनाता, वहा उनकी अध्यात्मिक भूख को तृप्त करने के लिये बौद्ध धर्म आगे बढता। ५७० ई० में तोबा खाकान ने बौद्ध धर्म स्वीकार किया। उसके बाद क्रूर घुमन्तुओ को बौद्ध धर्म ने कोमल बनाना शुरू किया। कहते हैं युद्ध-बदियों में एक बौद्ध भिक्षु था, जिसने खाकान को उपदेश करते हुये बतलाया, कि स्यान्-पी राजवश की समृद्धि का कारण धर्म है। तोबा को बौद्ध धर्म बहुत अच्छा लगा। उसने एक विहार बनवाया। यह स्पष्ट है ही, कि विहार घुमन्तू शिविर नही हो सकता था। यह भी याद रखने की बात है, कि इसी समय से कुछ पहले कोरिया के रास्ते बौद्ध धर्म जापान में पहुँचकर फैलने लगा। तोबा ने बौद्ध ग्रथो को लाने के लिये ची-वश की राजधानी (वर्तमान होनान्) मे

[1] वहीं पृ० ३६७

दूत भेजा। तोवा ने अपने को बहुत शीलवान् बौद्ध उपासक बनाने की कोशिश की। उसने कितने ही स्तूप बनवाये, बहुत से धार्मिक अनुष्ठान कराये। उसको इस बात का बहुत अफसोस था, कि मैं चीन जैसे बौद्ध देश में नही पैदा हुआ। चि-वश का नाश होने लगा, तो वहा का राजा तोवा की शरण में आया। उसकी ओर से तोबा आधुनिक पेकिङ पर आक्रमण करना चाहता था, किंतु चीके प्रतिद्वन्दी चाउ-वश ने जब अपनी कन्या प्रदान की, तोवा ने उसे उसके शत्रु के हाथ में दे देने में भी आनाकानी नही की।

तोवा के मरने पर मू-यू खान का पुत्र दालोब्यान अपने को उत्तराधिकारी समझता था, लेकिन पलडा तोवा के पुत्र ने-तू (शे-तू) का भारी हुआ, जो शाबो-लियो की उपाधि के साथ तुर्कों का खाकान बना। अबसे सयुक्त तुर्क साम्राज्य नष्ट हो गया और तोवा की सतान ने पूर्वी साम्राज्य को अपने हाथ मे ले लिया। तोवा के दूसरे भाइयो तू-मिुन और मू-यू खान की सतानों ने दालोब्यान के नेतृत्व में पश्चिमी तुर्क-साम्राज्य स्थापित किया।

तू-मिुन् राजा का पुत्र नहीं था। उसने अपने तुर्क ओर्दू और भाइयों की मदद से राज्य कायम किया था। तुर्क ओर्दू अभी जन-जातीय अवस्था में था, इसलिये एकतन्त्रता को पसन्द नहीं कर सकता था। सभी घुमन्तूओ की तरह तुर्क भी नेता या खाकान को चुनने का अधिकार रखते थे। इसीलिये तुर्कों में पहले कितने ही समय तक उत्तराधिकारी पुत्र नहीं बल्कि वह व्यक्ति होता था, जिसे ओर्दू निर्वाचित करता था। यद्यपि इसका यह अर्थ नही, कि खाकान की इच्छा का कोई प्रभाव नही पडता था। इतनी जनतांत्रिकता रखते हुये भी उत्तर के यह घुमन्तू यह मानने के लिये तैयार थे, कि जिस परिवार में उनके खाकान पैदा होते आये है, वह कुलीन है। तू-मिुन् के कार्य में उसके भाइयो ने सहायता की थी, इसलिये नेपाल के राणा जगबहादुर की तरह एक के बाद एक उसके भाइयो को उत्तराधिकारी माना गया। तू-मिुन का पुत्र इसिगी कुछ महीनो ही के लिये खाकान रहा और अन्त में जन (ओर्दू) की राय सर्व-मान्य हुई और भाई मू-यू को खाकान बनाया गया। उसके बाद भी उसका भाई तोवा उत्तराधिकारी चुना गया। तोवा ने अपने मरने के समय (५८० ई०) से पहले अपने पुत्र यन् लो को कहा था—"वस्तुत सबसे नजदीक का सबध पिता-पुत्र का होता है, किंतु मेरे बडे भाई ने अपनी सतान को गद्दी नही देना चाहा और गद्दी मुझे मिली। मेरे मरने पर तू दालोब्यान की अधीनता स्वीकार करना।" लेकिन तोवा के पुत्र इसे क्यो मानने लगे?

(५) शेतू शबोलियो[1] (५८२-८७ ई०)—

अपने मृत खाकान की इच्छा के अनुसार जन (ओर्दू) ने दलोवियान को खाकान बनाना चाहा, लेकिन आपत्ति उठाई गई, कि उसकी मा उच्च-वश की नही है। तो भी तोवा का पुत्र यन्-लो उत्तराधिकारी नही माना गया और तोवा का दूसरा पुत्र इलि-गुई-लू से-मोखे शबोलियो के नाम से खाकान हुआ, इसे ही ने-तू या शे-तू शबोलियो भी कहते हैं। इसका शिविर तूकिन् पवत के पास रहा करता था। हूणो की तरह तुर्कों में भी राजवंशिक उप-खाकान हुआ करते थे। वह अपने प्रदेश के प्रधान सेनापति और प्रधान शासक माने जाते थे। तोवा का दूसरा

[1] वहीं पृ० १६७

पुत्र अमरो तुला-उपत्यका (मगोलिया) में द्वितीय खाकान था। दलोवियान यद्यपि खाकान पद से वचित कर दिया गया था, और उसे अ-पो-खाकान वनाके शात रखने की कोशिश की गई, लेकिन इसमें सफलता नही हुई। शबोलियो के शासन के आरभ के साथ-साथ तुर्क साम्राज्य दो भागो में बँट गया, और शवोलियो पूर्वी तुर्क साम्राज्य का खाकान रह गया। शवोलियो वीर और अपने ओर्दू का वहुत प्रिय नेता था। सुदूर उत्तर के सभी कवीले उसको मानते थे। शवोलियो का अपने सौतेले चचा दातूसे झगडा हो गया। उसे मारकर दातू ने वूगा-खा के नाम से अपने को स्वतत्र खाकान घोषित किया।

शवोलियो के खून में भी अपने पूवजो की स्वातत्र्य-प्रियता भरी हुई थी, लेकिन वह मानता था, कि जिस तरह आकाश में दो सूय नही हो सकते, उसी तरह दुनिया में दो सम्राट् (चक्रवर्ती) नही हो सकते। इसीलिये शिष्टाचार के नाते वह चीन के देवपुत्र को अपना सम्राट् मानने के लिये तैयार था। चीन सम्राट् विन्-ती (५८१-६०५ ई०) ने गलती की। उसने यूइ-किङ्-जे को अपना दूत बनाकर भेजा, कि खाकान को अधीनता स्वीकार करने के लिये कहे। शबोलियो ने पूछा, अधीन किसे कहते हैं? किसी सरदार ने कह दिया—"जिसे हमारे यहाँ दास कहते हैं।" तुर्क खाकान का खून गरम हो गया। उसने कहा—"क्या जैसा हम अपने दास के साथ करते है, वैसा ही सुइ-कुल के देवपुत्र भी मेरे साथ करेंगे?" उसने अधीनता स्वीकार करने से इनकार कर दिया। सुइ-वश ने कुल ३७ वर्ष राज्य किया, किंतु चीन की शक्ति और समृद्धि वढाने में जितना काम इस वश के पिता-पुत्र दो सम्राटो विन्-ती और याङ-ती ने किया, वैसा किसी एक वश ने नही कर पाया। इसकी वनवाई विशाल नहरो और मार्गों द्वारा देश कृषि और व्यापार से मालामाल होने लगा, जिसका कि पूरा फायदा सुइ के उत्तराधिकारी थाङ-वश (६१८-६६० ई०) ने उठाया। सुइ जैसे शक्तिशाली राजवश को नाराज करके शवोलियो कैसे सुखसे रह सकता था? उसके विरुद्ध चीनी सेना (६८० ई०) भेजी गई। तुर्क-खाकान को अपनी समृद्ध चर-भूमि को छोड कर उत्तर की ओर भागना पडा। इसी वक्त तुर्कोंमें अकाल पडा। लोग खाकर फेंकी पशुओ की हड्डियो को पीस पीसकर खाने लगे। चीन दलोवियान की सरकशी को सहन नही कर सकता था। उसे चढ़ा आते देख दलोवियान भागकर पश्चिमी तुर्कों के स्वनिर्वाचित खाकान दातू-बुगा-खान के पास चला गया। बुगा खान के पक्ष में तुर्कों के अतिरिक्त कितने ही दूसरे घुमन्तू कबीले थे, जिनमें से तिङ-लिङ एक था। तिङलिङ ने शबोलियो के परिवार को पकड कर चीन-सम्राट् के पास भेज दिया था, लेकिन विन्-ती क्षुद्र हृदय नही था। वह स्वय अपनी वीरता से एक राजवश का सस्थापक वना था, और वीरो की कदर करना जानता था। उसने परिवार को सम्मान-सहित शबोलियो के पास भेज दिया। शबोलिया उसके लिये वहुत कृतज्ञ हुआ और उसने मरुभूमि को चीन और तुर्क साम्राज्य की सीमा मान लिया। शवोलियो की पूरी उपाधि थी "महातुर्कके इलिकु-इ-लू ओर्दू के मो-गो खाकान शे-तू शवोलियो।"

मू-यू खान से रोमन-सम्राट् का दूत ५६८ ई०में मिला था। उस समय खाकान का शिविर अल्ताई पहाड में था। यह दलोवियान की फूट से १२ वप पहले की वात है। रोमन इतिहासकार उस समय के तुर्क-साम्राज्य के वारे में लिखते है, "अपने शस्त्र-वल तथा हेप्ताल सरदार कतुल-फुस के विश्वासघात के कारण हेपताली महाराज्य को लेते तुर्क नये (सासानी) साम्राज्य की

सीमा की ओर बढ रहे हैं। पहले के हेफ्तालो (श्वेत हूणो) के अधीन वक्षु अन्तर्वेद के कबीलो ने तुर्कों की अधीनता स्वीकार कर ली है।"[1]

शबोलियो को चीन-सम्राट् विन्-ती कितनी आदर की दृष्टि से देखता था, इसका पता इसीसे मिलेगा, कि उसकी मृत्यु पर सम्राट् ने तीन दिन दरबार बन्द करके मातम मनाया।

६ दूलन खान[1] (५८८–६०० ई०)

शबोलियो के बाद उसका पुत्र दुलन खानके नाम से गद्दी पर बैठा। उसने ५८८ ई० में १० हजार घोडे, २० हजार भेडें, ५०० ऊँट सम्राट् के पास भेंट के रूप में भेजे। घुमन्तू तुर्कों की पशु ही सम्पत्ति थे। भेंट के बदले चीन-सम्राट् की ओर से लाखो थान रेशम और दूसरी बहु मूल्य चीजें मिलती थी, इसलिये यह कोई घाटे का सौदा नही था। विलासिता की चीजो को भेजकर तुर्क सामन्तो को नरम और विलासी बनाने का भी अवसर मिलता था। दूलन खानने भेंट भेजकर सम्राट् से प्रार्थना की, कि सीमात पर हमारी चीजो के बेंचने के लिये हाट लगाई जाय। सम्राट ने इसे स्वीकार किया और पुरानी प्रथा के अनुसार नये खाकान के पास एक राजकन्या भी भेजी। दूलन का शिविर उत्तरी शान्शी मे नातिदूर तू-किन् की पहाडियो मे था। प्रतापी हूण शान्-यू मा-दुन का भी शिविर यही रहा करता था। दूलन के खाकान बनने में शेतू का दूसरा पुत्र अपने अधिकार की हानि समझता था। उसने दातू बूगा खान मे मिलकर भाई के ऊपर आक्रमण किया। दूलन को भागकर चीन में आश्रय लेना पडा। सम्राट् विन्-ती ने उसके लिये शान्सी में एक नगर बसा दिया और पहली स्त्री के मर जाने पर उसके लिये दूसरी राजकुमारी भेजी। दूलन को यह स्थान पसन्द नही आया, तब उसे ओर्दुस् प्रदेश (ह्वाङ्हो मुड़ाव) में रहने के लिये स्थान मिला, जहा लाखो आदमियो को बेगार में लगाकर एक बडी नहर बनवा दी गई। चीन ने दूलन का पूरा पक्ष लिया और शे-तू शबोलियो के पुत्र के विरुद्ध एक विशाल चीनी सेना भेजी। अपनी सारी विपत्तियो का उसे ही कारण समझ कर शे-तू-पुत्र को उसके अपने कबीलेवालो ने मार डाला। दूलन के दूसरे शत्रु तू-मिन्-पुत्र और शे-तू-भ्राता इन दोनो सामन्तो को चिङलिङ ने बुरी तरह हराया और तिङ-लिङ तथा दूसरे कितने ही स्यान्-पी कबीले दूलन के झडे के नीचे चले गये। सम्राट् विन्-तीने दूलन को ची-ज़ेन् की उपाधि दी। उसके उत्तराधिकारी सम्राट् याङ्-ती (६०५-१७ ई०) ने दूलन का सम्मान और भी बढ़ाया। उत्तर शान्सी प्रदेश मे दूलन ने सम्राट् से भेंट की। उसे सभी सामन्तो के ऊपर स्थान मिला और माउदुनकी बात को स्मरण करके याङ्-ती ने भी दूलन को कोर्निश करने से ही मुक्त नही कर दिया, बल्कि जूता पहने तलवार लटकाये दरबार मे आने की भी स्वतत्रता दी। उसका वैयक्तिक नाम भी दरबार में नहीं लिया जाता था। सम्राट् ने दूलन के २५०० सरदारो में २ लाख रेशमी थान बटवाये। यही नहीं, सम्मान प्रदर्शन में अति करते हुये यह सनकी सम्राट् स्वय दूलन के शिविर में गया। दूलन ने मद्य चषक हाथ में ले घुटने टेककर सम्राट्-भक्ति की शपथ ली। दूसरे साल जब दूलन दरबार में आया, तो उसका स्वागत पहले साल से भी अधिक हुआ। दूलन ६०० ई० म मरा।

---

[1] वही १६७

७ दा-तू बुगा खान (६००-)—

दा-तू के खान बनने के साथ तुर्कों में जनतन्त्रता का अन्त हो गया। दातू को जनने निर्वाचित करके खाकान नही बनाया था। यही परिपाटी आगे भी चल पडी। तुर्क अब जनशाही से सामन्तशाही जीवन में प्रविष्ट हो गये। शबोलियो का एक पुत्र दातूसे विद्रोह करके ७ वर्ष (६००-६०७ ई०) तक लडता रहा। इस खान के शासन में कई महत्त्वपूण घटनायें घटी। इसीके समय (६१८-१९ ई०) सुइ-वश को हटाकर ६१८-१९ ई० में चीन का सबसे प्रतापी थाङ-वश (६१८-९०७ ई०) स्थापित हुआ, जिसका सस्थापक काउ-चू एक बडा दूरदर्शी पुरुष था। थाङ सम्राटो के समय चीनी साहित्य और कला की बडी उन्नति हुई। इन सम्राटो में कितने ही स्वय लेखक और कवियो के सरक्षक थे। साथ ही उनकी राजनीतिक शक्ति भी खूब बढ़ी। थाङ-वश की राजधानी छाङअन् (सियान्) अपने समय की दुनिया की सबसे समृद्ध नगरी थी। थाङ-वश ने सुइ-वश के निर्माण-कार्य तथा चीन की एकता को सुरक्षित रखा। बूगा खानने कतनूक-देले (आनद कुमार) को दूत वनाकर चीन दरबार में भेजा।

अतिम ७५ वर्षों में खे-ली खान दू-बी, तुली खान, इमी-नीश सि-वि-ली खान सिक-मो (६४१ ई०) और चे-बी खान (६४७-८२ ई०) पूर्वी तुर्कों के शासक हुये। यद्यपि इनके समय मे चीन थाङ-वश के नेतृत्व में बहुत शक्तिशाली था, किंतु तुक घुमन्तू लडाकू थे, इसलिये उन्हें दानसे सतुष्ट रखने की कोशिश की जाती थी। खे-ली से पहले के चूलो खान की एक घटना है। चू-लोने थाङ सम्राट् ताइ-सुङ (६२७-५० ई०) की सहायता के लिये २००० सैनिक भेजे थे। वह किसी प्रतिद्वदी से उस समय लड रहा था। चू-लो सीमात नगर पर गया, तो सम्राट् की ओर से उसकी बडी आवभगत हुई, जिसका प्रतिदान उसने सडक पर मिलने वाली सभी सुन्दरियो का अपहरण करके किया।

८ ख-ली खान

यह पिछले सम्राट् का भाई था, जिसकी पटरानी चीन राजकन्या थी। पटरानी ने स्वय अपने पुत्र को अत्यन्त दुर्बल और कुरूप कहकर गद्दी से वञ्चित कर दिया और उसके समर्थन तथा प्रभाव से देवर खे-ली खान के नाम से गद्दी पर बैठा। भाभी नये खान की भी पटरानी बनी। पहले खे-लीने कुछ स्वतत्र नीति बरतनी चाही, किंतु जल्दी ही उसे थाङ-वश के फौलादी पजे का पता लग गया। उसकी भूलो को माफ करके खे-ली को बहुत सत्कृत किया गया। बडी बडी भेंट और सम्मान को तुक खाकान अपना हक समझते थे। वह इसके लिये क्यो कृतज्ञ होने लगे? थाङ के प्रतिद्वद्वियो की कमी नही थी। एक प्रतिद्वदी के ६००० सैनिकों के साथ अपने १० हजार सवारो को लेकर खे-लीने उत्तरी शान्शी में लूटपाट मचानी चाही। थाङ सेनाने उसे बुरी तरह हराया और "नई मित्रता को दृढ़तापूर्वक जोडने" के सकेत के रूप में खानने गोंद का एक टुकडा भेज कर शाति की प्रार्थना की। लेकिन चीनी तुर्कों की बात पर इतनी जल्दी विश्वास करने के लिये तैयार नही थे। कभी न कभी छोटी बडी छेड-छाड होती रहती। ६२२ ई० में तुर्क जनो म अकाल पडा हुआ था। इसी समय चीनियो ने धोके से उनपर आक्रमण कर दिया, किंतु वह हार गये। अब खे-ली तु-ली खान को ले कई सालों तक चीन के सीमात-प्रदेश पर लूटपाट मचाता रहा।

एक बार थाङ राजकुमार ताइ-सुङ ने तुर्क सेना के सामने जाकर खे-ली को ललकारा और कहा, कि लूटपाट करके लोगो को सताने की जगह आओ हम द्वन्द्व-युद्ध या डटकर युद्ध करके फैसला करलें। खे-ली मुस्कुरा कर चुप रह गया। इ-मुङ (थाङ-युवराज) ने अपने सामन्तको भेजकर तुली खान (उपखाकान) को भी ललकारा, किंतु वह भी चुप रहा। इस तरह काम बनते न देख उसने भेद-नीतिसे काम लेना चाहा और तुलीको फोड लिया। इसकी वजहसे खे-ली कुछ झुका, किंतु फिर दो साल (६२३-२४ ई०) तक कितनी ही बार चीनमें घुसकर लूटपाट मचाता रहा, जिससे राजधानी छाङ-आन् खतरेमें पड गई। खे-लीके दूतने चीन दरवारमें जाकर अपने खानकी शेखी बघारते हुए खरी-खोटी कहनी शुरू की। थाङ कुमारने डाटकर कहा—"शायद मुझे सबसे पहले तुझे मारना पडेगा" इसपर वह ठंडा हो गया। राजकुमार घोडे पर सवार हो बिना अधिक शरीर-रक्षकके चल पड़ा। राजधानीके पास छोटी सी छिछिली नदी वेई बहती है, वहीं थाङ राजा और तुर्क सेनाके बीचमे व्यवधान थी। राजकुमारने खे-लीसे सीधे बात की। तुर्क सेनापति राज-कुमारकी हिम्मत से इतना रोबमें आ गये, कि उन्होने घोडेसे उतर कर उसका अभिवादन किया। इसी बीच चीनी सेना आगे बढ आई। खे-ली घवडाया। लोगोंके मना करने पर भी राजकुमारने आगे बढ़कर खे-लीसे बातचीत की। दोनो सेनाये देखती रहीं। इस प्रकार ६२६ ई० में खे-लीने सधिका प्रस्ताव किया। अब राजकुमार ताइ-सुङके नामसे सम्राट् बन चुका था। सम्राट्ने तुर्कोंकी हिम्मत बढनेका कारण बतलाते हुए कहा था—"तुर्क जो अपनी सारी सेना के साथ वेईके तटपर बढते चले आये, उसका कारण यहीं था, कि वह जानते थे, हमारा वंश भीतरी कलहके कारण इस समय कठिनाइयोमें है, और मैं अभी अभी मुकुटका अधिकारी हुआ था। प्रश्न था, आजकी परिस्थिति पर कैसे काबू पाया जाय। मैंने सोचा, मेरा अकेले आगे जाना उन्हें आश्चर्यमें डाल देगा, और यह सोचकर उन्हें बडी परेशानी होगी, कि वह अपने अड्डेसे बहुत दूर हैं। यदि हमको अवश्य लडना ही है, तो अवश्य जीतना भी चाहिये। यदि हमारी घुडकी काम कर गई, तो हमारी स्थिति बहुत मजबूत हो जायेगी।"

हूण शान्-यूके समयका अनुकरण करते कुछ दिनो बाद सम्राट् खे-लीको लिये नगरके पश्चिम वाले एक पुल पर गया, जहा एक सफेद घोडेकी बलि दी गई। खे-ली और सम्राट्ने सधि न तोडनेके लिये शपथ ली। छाङ-आन् बाल-बाल बच गया, खे-लीकी सेना लौट गई। कुछ सप्ताह बाद खे-लीने बहुत से घोडो और भेडोकी भेंट भेजी। सम्राट् ताइ-सुङने उसे न स्वीकार कर राजाज्ञा निकालकर लौट जानेका हुक्म दिया।

६२७ ई० में खे-लीको उत्तरमें भी हानि उठानी पडी। तिङ-लिङ कबीलो—से-यन्-दा, वैकाल और उइगुर्—ने खे-लीके अत्याचारसे तंग आकर तुर्क अफसरोंको मार भगाया। हूणोके पतनके बाद ईसाकी २री शताब्दीसे ही यह कबीले दूसरे कितने ही हूण-कबीलोंके साथ वैकाल-सरोवर, बल्काश-सरोवरसे कास्पियन तक फैल कर शकों और उनके उत्तराधिकारियोका स्थान ले चुके थे। उइगुर् और वैकाल तुला नदीके उत्तरमें रहते थे, और से-यन्-दा केरुलोन नदीके दक्षिणमें। उक्त तीनो कबीलोके विद्रोहको दबानेके लिये खे-लीने अपने उप-खाकान तुलीको भेजा। तु-लीकी सेना पूर्णतया पराजित हुई और उसने किसी तरह घाडे पर भागकर जान बचाई। खे-ली ने उसकी कायरतासे नाराज होकर उसे गिरफ्तार कराया। तु-लीने सम्राट्के पास सदेश भेजा।

उन्हें अपने रीति-रवाजोंको कायम रखनेकी इजाजत दे और उनकी सैनिक सेवाओंका उपयोग करे, तो कोई हरज नही होगा। इसके विरुद्ध यदि हम तुर्कोंको वास्तविक चीनी पुरुष बनादें या बनाने की कोशिश करें, तो यह भूल होगी, क्योकि इस तरहका दबाव उनके मन में सदेह पैदा करेगा।"

११ चे-बी खान (६४७-८२ ई०)

खेलीके बाद तुर्क साम्राज्य उच्छिन्न हो गया। उस समय चे-बी ईतिश्-उपत्यकाका एक स्थानीय खाकान था। इसके राज्यमें ईतिश् नदीके उत्तर और दक्षिणके किरगिज सम्मिलित थे। चे-बीने अपने पुत्र दे-ले (कुमार) शबोलियोको चीन दरबारमें भेजा और स्वय भी सलामी देनेके लिये आनेकी बात कही, लेकिन वह खुद नही गया। इसपर चीनने नाराज होकर ६४९ ई० मे उसके विरुद्ध सेना भेजी। वह पकडकर दरबारमें लाया गया। तीनो करलोक कबीलोने तर्बगताई प्रदेश पर अधिकार कर लिया। कभी वह पूर्वी तुर्कोंको अपना अधिराज मानते थे और कभी उत्तरी तुर्कोंको। अब उन्होंने चीन की अधीनता स्वीकार कर ली थी। इसी साल ताइ-सुङ मर गया और उसके स्थान पर कौ-सुङ थाङ सम्राट् हुआ। कौ-सुङ नाबालिग था, इसलिये राज्यकी बागडोर भूतपूर्व भिक्षुणी तथा ताइ-सुङ की प्रेयसी वूके हाथोमें चली गई। २० साल तक चीनमें शाति रही। ६७९ ई० में तुर्कोंने चीनके विरुद्ध जबदस्त विद्रोह किये।

तुर्क राजकुमार हू-पेइ ने अपनेको सि-बि-ली खानका उत्तराधिकारी घोषित किया। यद्यपि वह खेली खानके रक्तका था, मगर उसका रग और तुर्कोंकी भाँति साफ न होकर श्याम था, इसीलिए ओर्दू (उर्त) ने उसे सच्चा असेना न स्वीकार कर हू (सुरियानी, ईरानी या हिंदू) जातिका माना। उसे ह्वाङ-हो नदीके उत्तरी मुडाव और गोबीके बीचकी जगह मिली। हूपेइके उर्तकी सख्या एक लाख बतलाई जाती है, जिसमें ४० हजार सैनिकोंका काम कर सकते थे।

गोवीके बीच भगा दिया था। प्रथम तोबा सम्राट् अपनी विजय-यात्रा (३८८ ई०) में आमूर नदी तक पहुँचा था, जिसके विजयोपहारके लाख जानवरोंमें सुअरोंका भी वर्णन आता है। अगली दो शताब्दियो तक शिर्-वी और मत्स्य-चर्म जातियोके साथ कुमुक् खे-ली (कुमुक् घेइ) चीन दरबारमें अपनी भेंट लाते थे। चीनी लेखानुसार उस समय यह सभी जातियाँ "गदे सूअर पालने वाले शिकारी जगली' थी और उनका सास्कृतिक तल तुर्कों और खिताइयोंसे बहुत नीचा था। ५वी सदीके बाद कुमुक्-खेलियोंने अपने नामसे कुमुक् शब्द हटा दिया और हर बातमें वह तुर्कों जैसे हो गये, लेकिन वे अपने मुर्दोको लपेटकर पेडोके ऊपर खिताइयोके भाँति अब भी टागते थे। खेली और खिताई सरदार खाकान उपाधि धारण करनेसे पहिले तुलीके अधीन थे। तुलीको एक सैनिक राज्यपालका दर्जा मिला था। वह आधुनिक पेकिङ्के पास सुन्-चान्में रहता था, जहाँ उसकी मृत्यु २९ सालकी उम्रमें ६३१ ई० में हुई। चीन-सम्राट्ने उसे अपना रक्तभाई बनाया था, और उसपर बहुत स्नेह रखता था। सम्राट्ने उसकी समाधि पर स्मृति-वाक्य लगवाये। सिव् और खेली (घेई) कबीले अब खिताइयोके साथ जुट गये और उन्हीके साथ चीन दरबारमें अपना कर भेजा करते थे।

१० सि-बु-ली खान (६३१-४७)

इ-वि-नी-शू (तुलीका पुत्र) सु-वि-ली खान[1] सीमा (हो-लो-हू) के नामसे पूर्वी तुर्कोंका खाकान बना। ६३४ ई० मे अपने छोटे चचा और दूसरे सरदारोके साथ षड्यत्र करके सम्राटके शिविर पर धावा बोलकर वह स्वतत्र खाकान बननेमें करीब-करीब सफल हो गया था। किंतु इसी समय चीनी सेना आ गई और सब पकडे गये। चीनसे स्वतत्र होनेका प्रयास विफल हुआ। चचा और दूसरोको प्राण दण्ड हुआ और सि-वि-ली खानको ह्वाङ्होके उत्तर निर्वासित कर दिया गया।

चीनमे महापराजयके बाद खानके कुछ आदमी तुर्किस्तान भाग गये, कुछ से-येन् दाके पास चले गये और कितने ही चीनमें ही रह गये। चीनके लिये तुर्क एक बडी समस्या थे। नष्ट कर दिये जानेपर भी कुछ सालोमें ही वह लाख-दो-लाख हो जाते। उन पर नियत्रण नही रखा जा सकता था। विश्वासघातको वह नीति समझते थे। वह घुडकी देने तथा पूछ हिलाने दोनोके लिये तैयार रहते थे। चीनके उस समयके अत्यन्त प्रभावशाली राजनीतिज्ञ वेइ-चाङ्ने इस समस्याको हल करनेके लिये सलाह दी, कि उन्हे ह्वाङ्होके उत्तर भेज दिया जाय। बहुतोंने इसका समर्थन किया। लेकिन ताइ-सुङ् चीनका असाधारण सम्राट् था। इतिहासकार उसके बारेमें कहते हैं, कि सभी त्रुटियोके रहते हुए भी वह चीनके सभी सम्राटोमें सबसे अधिक उदार और न्यायप्रेमी था। उसने इस सलाहको नही स्वीकार किया और कहा[2], "तुर्क चाहे जैसे भी हो, किंतु मानव-अधिकार और सत्यके सिद्धात सार्वदेशिक हैं, उनमें जाति और वर्णका भेद नही डाला जा सकता। एक पराजित जातिके अवशेष यह बेचारे अभागे अपनी चरम विपदावस्थामें हमारे पास प्रार्थना कर रहे है। अगर हम उन्हें शरण दें और उचित तथा उपयुक्त मानसिक स्थिति रखनेकी शिक्षा देनेका प्रयत्न करें, तो ये सभी हमारे लिये खतरनाक नही हो सकते। ५० ई० में चीनके सीमात पर हमने हूणाको स्थान दिया, किंतु उससे हमें कोई हानि नही हुई। इसी तरह यदि हम

---

[1] वही पृ० ३६६, [2] वही पृ० ३६८

उन्हें अपने रीति-रवाजोंको कायम रखनेकी इजाजत दे और उनकी सैनिक सेवाओका उपयोग करें, तो कोई हरज नही होगा। इसके विरुद्ध यदि हम तुर्कोंको वास्तविक चीनी पुरुप बनादें या बनाने की कोशिश करें, तो यह भूल होगी, क्योकि इस तरहका दबाव उनके मन में सदेह पैदा करेगा।"

११ चे-बी खान (६४७-८२ ई०)

खेलीके बाद तुर्क साम्राज्य उच्छिन्न हो गया। उस समय चे-वी ईतिश्-उपत्यकाका एक स्थानीय खाकान था। इसके राज्यमें ईतिश् नदीके उत्तर और दक्षिणके किरगिज सम्मिलित थे। चे-वीने अपने पुत्र दे-ल्ले (कुमार) शबोलियोको चीन दरबारमें भेजा और स्वय भी सलामी देनेके लिये आनेकी बात कही, लेकिन वह खुद नही गया। इसपर चीनने नाराज होकर ६४९ ई० में उसके विरुद्ध सेना भेजी। वह पकडकर दरबारमें लाया गया। तीनो करलोक कबीलोने तर्वगताई प्रदेश पर अधिकार कर लिया। कभी वह पूर्वी तुर्कोंको अपना अधिराज मानते थे और कभी उत्तरी तुर्कोंको। अब उन्होने चीन की अधीनता स्वीकार कर ली थी। इसी साल ताइ-सुङ मर गया और उसके स्थान पर कौ-सुङ थाङ सम्राट् हुआ। कौ-सुङ नाबालिग था, इसलिये राज्यकी बागडोर भूतपूव भिक्षुणी तथा ताइ-सुङ की प्रेयसी वूके हाथोमें चली गई। २० साल तक चीनमे शाति रही। ६७९ ई० में तुर्कोंने चीनके विरुद्ध जबदस्त विद्रोह किये।

तुर्क राजकुमार हू-पेइ ने अपनेको सि-बि-ली खानका उत्तराधिकारी घोपित किया। यद्यपि वह खेली खानके रक्तका था, मगर उसका रग और तुर्कोंकी भाँति साफ न होकर श्याम था, इसीलिए ओर्दू (उर्त) ने उसे सच्चा असेना न स्वीकार कर हू (सुरियानी, ईरानी या हिंदू) जातिका माना। उसे ह्वाङ-हो नदीके उत्तरी मुडाव और गोबीके बीचकी जगह मिली। हूपेइके उतकी सख्या एक लाख बतलाई जाती है, जिसमें ४० हजार सैनिकोका काम कर सकते थे। भीतरी विद्रोह अब भी दबा नही था। थाङ-वश कोरियाको जीतनेकी कोशिश कर रहा था। उसके प्रति अपनी भक्ति दिखलानेके लिये हू-पेइ स्वय युद्धमें शामिल हुआ। कोरिया पर यह चीनकी पहली विजय थी। हू-पेइ घायल हुआ। ताइ-सुङने स्वय उसके घावसे खन चूसकर फेंका, लेकिन तुर्क सरदारके प्राण बच नही सके। सम्राट्ने अपने बापकी समाधिके पास उसकी समाधि बनवाई और उसके पहलेके राज्यमें पे-ताउ नदीके किनारे एक स्मारक निर्मित कराया। हू-पेइ तोबा खाकानके वशजोका अतिम खाकान था।

यह सारे पूर्वी तुर्कोका खाकान नही माना जाता था, बल्कि जैसा कि ऊपर बतलाया, ईतिश उपत्यकाका एक स्थानीय खाकान था।[1]

४ अशेना-निशी

इस समय तुर्कोकी हालत कहाँ तक पहुँच गई थी, इसका कुछ पता हमें अशिना वशकी नई शाखा अशाना-निशीके तृतीय खाकान मो-गि-ल्यान् और उसके भाई क्युल-तेगिनके शिलालेखसे लगता है, जिसमें तुर्क जातिकी हीनावस्थाका चित्र खींचा गया है—

---

[1] वही पृ० ३७०

"उस (तुमिन)के बाद उसके छोटे भाई (मू-यू और तोबा) कगान हुए, फिर उसके पुत्र। (तुर्कोंमें) चूंकि हरेक छोटा भाई बडेको पसद नही था, पुत्र पिताके अनुकूल नही था और सभी कगान बेसमझ थे, सभी कगान भीरु थे, उनके सभी बू-यू-रुख बेसमझ थे, भीरु थे, जिसका परिणाम हुआ बेगो और जनताका कगान पर अविश्वास। परिणाम हुआ चीनी लोगोको भडकाने और भेद लगानेका सुभीता, तथा परिणाम हुआ सदेहमें पडना, तथा उसका परिणाम यह हुआ, कि उन्हो (चीनियो)ने छोटे भाइयोको बडेसे लडवाया और जनता तथा बेगो से एक दूसरेके खिलाफ हथियार उठवाया। तुर्क जनताने अपने जन-जातीय सघकी वतमान अव्यवस्थाका स्वागत किया, जिसके द्वारा अपने ऊपर तथा तत्कालीन कगानोके राज्यके ऊपर महानाशको बुलाया। वे (तुर्क) अपने सुदृढ पुत्रो और विशुद्ध पुत्रियोके साथ चीनियोके दास हो गये। तुर्क बेगोने अपना तुर्क नाम छोड चीनी बेगोका नाम अपनाया, तथा चीनी कगान (सम्राट्) की अधीनता स्वीकार की। ७५ वर्षों तक उन्होने चीनियोको अपना श्रम और बल प्रदान किया।

"ऐसा हो गया था हमारा जनजातीय सघ और ऐसी दिखाई देती थी हमारी शक्ति। ओ तुर्की बेगो और जनता! सुनो तुम्हे ऊपरके आकाशने क्यो दाब नही दिया, नीचेकी भूमि तुम्हारे लिये फट क्या नही गई? ओ तुर्क लोगो, किसने तुम्हारे शासन और कानूनको नष्ट किया? तुमने स्वय अपराध किया। ऊपर उठानेवाले गुणो और कामोमें अपने मनीषी कगानोंके साथ तुमने मूर्खता की। *कहाँसे आये वे शस्त्रधारी, जिन्होने तुम्हे छिन्न-भिन्न किया? कहाँसे आये* भालादार, जिन्होने तुम्हारा अपहरण किया? हे जनता　तू पूव गई, पश्चिम गई और ऐसे देशोमें जहाँ भी गई, तेरा भला क्या हुआ? तेरा खून पानीकी तरह बहा, तेरी हड्डियाँ पहाडकी तरह पडकर खडी दिखाई पडी, तेरे बेगो सामन्तोके पुरुष-सतान दास बने, तेरी कुलीन स्त्री-सताने दासियाँ बनी। तेरी बेसमझी और तेरी नीचतासे मेरा चचा (मो-चो) खाकान उड (मर) गया।"

१२ गु-दु-लू कगान (६८२-९३ ई०)

इलतेरेस अशेना वशी राजकुमार था। खाकानो (कगानो)के वश अशेनाका होनेके कारण उसकी कुलीनतामें क्या सदेह हो सकता था? वह खेलीका दूरका सबधी और एक बहुत बडा सरदार था। तुर्कोंके असतोपसे उसने फायदा उठाया। चीनके प्रति जहा रोष था, वहा तोबा वशके खाकानोके प्रति भी लोगोंकी आस्था नही रह गई थी, जैसा कि ऊपर उद्धृत अभिलेखके वाक्योसे मालूम होता है। इलतेरेस गरम दलका नेता बन कर, रिश्वत और अपनी राजनीतिक चालोके कारण कई तुर्क कबीलोको अपने साथ मिलानेमें सफल हुआ। तुर्क घुमन्तू दुनियाके अन्य लडाकू घुमन्तूओंकी तरह लूटको अपना उचित पेशा समझते थे। इलतेरेसने अपने उतके साथ कई सफल अभियान किये। तुर्कोंके तम्बुओमें लक्ष्मी आकर फिर वास करने लगी। जल्दी ही उसने अपनेको कगान घोषित कर एक भाईको शाह, दूसरेको जेव्-गूकी उपाधि दे उप-कगान बना दिया। इलतेरेसका नाम अब गु-दु-लू (कुतुलुक) कगान हुआ। गु-दु-लूकी बढती हुई शक्ति खतरेकी बात थी। सम्राज्ञी वूने उसके विरुद्ध १३ हजारकी सेना भेजी, गुदुलूने सबको नष्ट कर दिया। फिर पश्चिमी तुर्कोंकी एक शाखा तुर्‌गिसकी ओर उसने मुह किया, जो कि सूजिया, इली और इस्सिकुलमें रहती थी। इन्हीके साथ लडते हुए वह मारा गया। उस समय पश्चिमी तुर्कोंकी राजधानी चू नदीके किनारे सू-जी थी। गुदुलू कगानका विश्वस्त सलाहकार तोन्-यू-कुक

तुर्कोंके पुराने दिनके लौटा लानेका स्वप्न देख रहा था। चीनियोने शर्तके साथ उसे जेलसे मुक्त करके आशा रक्खी थी, कि अब वह तुर्कोंके खिलाफ जाकर अपना पराक्रम दिखलायेगा। लेकिन तोन्-यू-कुक्ने वहा जाकर चीनको छोड गुदुलूका साथ दिया। तोन्-यू-कुक्का प्रभाव गुदुलूके उत्तराधिकारीके समय नही रहा।

(१)मो-चो (६९३-७१६ ई०)

गुदुलूके भाई मो-चोके शासनमें तुर्क-साम्राज्य फिर एक वार उन्नतिके शिखर पर पहुचा। गुदुलूने तुर्कोंकी सैनिक जनतन्त्रताके सहारे सफलता प्राप्त की थी, लेकिन मो-चोको जनतन्त्रता नही तानाशाही पसद थी। नये कगानने उसी साल शान्सीमें घुसकर लूटपाट की। सम्राज्ञी वूने मो-चोके खिलाफ एक, बौद्ध भिक्षुको सेनापति और उसके अधीन १८ सेनापतियोको भेजा। अभियान असफल रहा। बहुतसे सैनिक और सेनापति पकडे गये, । मो-चोने भिक्षुको कोडे मरवाते मरवाते मौतके घाट उतारा। चीनियोको बहुत आश्चर्य हुआ, जब ६९४ ई० मे मो-चो स्वय दरबारमें पहुचा। सम्राज्ञी बहुत प्रसन्न हुई। उसने कुद (ड्यूक) बना, उसे ५ हजार बहु-मूल्य रेशमी थान देकर विदा किया। इसके बाद मो-चोने सधि करनेके लिये अपने दूत भेजे। इस प्रकार अब थाङ्वशको एक सबल सहायक मिला। ६९६ ई० मे खिताई शासकने विद्रोह कर अपनेको "सर्वोपरि कगान" घोषित किया। उसके विरुद्ध भेजी गई चीनी सेनायें हार कर लौट आई। मो-चोने बीडा उठाया। उसने चीनके शत्रु खिताइयोको पूरी तौरसे नष्ट-भ्रष्ट कर दिया और उनके राज्यको—जो कि भयकर बनता जा रहा था—अपने राज्यमें मिला लिया। उइगुरोके अधिकाश कबीले मो-चोके अधीन थे। जिन्हें यह स्वीकार नही था, वह उससे बचनेके लिये गोबीके दक्षिणमें चले गये। मो-चोके प्रहारसे पश्चिमी तुर्क साम्राज्य खतम हो गया। उनका अतिम खाकान असिन्-सिन् ७०८ ई० में कुलान (आधुनिक तर्मी स्टेशन के पास) मारा गया। आगे उनका स्थान तुरगिस् शाखाने लिया। चीन में मोचोका बडा सम्मान और रोबदाब था। दरबारमें उसके दूतको सबसे ऊपर स्थान मिलता था। उसके उत्तराधिकारी मोगिल्यानके दूतने झगडा किया, जब तुरगिस कगानके दूतको उससे प्रथम रखनेकी कोशिशकी गई। मो-चोको साम्राज्ञीने "महा शान्-यू, धार्मिक कगान" की उपाधि दी थी[1]।

७९८ ई० में राजमाताके पास मोचोने प्रार्थनाकी, कि मुझे अपनी कन्या प्रदान कर अपना दत्तक पुत्र स्वीकृत करें, चीनमें जितने तुक रह गये हैं, उन्हें मेरे पास भेज दे और खेती करनेके लिये बीज और हथियार देनेकी कृपा करें। तुक अभी तक घुमन्तू जीवन ही पसन्द करते थे। मोचोकी दूरदर्शिता उसे बतला रही थी, कि बिना खेतसे चिपकाये इन बेनकेलके ऊटोको काबूमें नही रक्खा जा सकता। राजमाताने अपना दूत भेजा। हिचकिचाहटकी बात जानकर मो-चो आग-बगूला हो गया और चीनी दूतको मारनेकी भी धमकी देने लगा। सम्राज्ञीको मजबूर होकर मो-चोकी बातें माननी पडी। उसके पास कई हजार तुर्की परिवारोको जबदस्ती भेजा गया और बीजके लिये एक लाख मन अनाज तथा तीन हजार खेतीके हथियार भेजे गये, जिनके कारण मो-चोकी शक्ति और सपत्ति और बढ गई। मो-चोने अपनी कन्या किसी थाङ्-राजकुमारसे व्याहनेकी

[1] वही पृ० ३७०

इच्छा प्रकट की। साम्राज्ञीने अपने सौतेले भतीजेको व्याह करनेके लिये भेजा। मोचो उसे देखकर जल भुन गया और साथ आये महासेनापतिसे कहा—"मैंने ली-कुलके थाङ्ग-सम्राट् वंशज राजकुमारसे अपनी कन्याका व्याह करनेका प्रस्ताव किया था, और तुम मेरे पास लाये हो वू-परिवारकी पौधको। हम तुर्कोंने कुछ पीढ़ियोसे ली-कुलकी श्रेष्ठताको स्वीकार किया है और मुझे मालूम है, कि ली सम्राट्का कोई पुत्र अब भी जीवित है। इसलिये मैं अब अपनी सेनाके साथ कूच करके ऐसे राजकुमारको ढूढनेमें सहायता कर उसके उचित सिंहासन पर बैठाऊँगा।" उसने वू-कुमारको गिरफ्तार करा लिया और कलगन तथा पेकिङ्ग प्रदेश पर चढ़ाई कर दी। उसके विरुद्ध साढे ४ लाख चीनी सेना भेजी गई, लेकिन सब बेकार। मो-चोने शान्सीके कितने ही नगरोको जला डाला और बिना दया-मायाके अपने रास्तेमें आई हरेक वस्तु हरेक जीवित प्राणीको नष्ट किया या लूटा। साम्राज्ञीने धार्मिक खाकानकी जगह उसका नाम चन्-चुच (कसाई, रक्त-चूषक) रख दिया। लेकिन इससे मो-चोकी आबी थोड़े ही रुक सकती थी ? उसने और भी नगर लूटे, और भी अफसर मारे। राजमाताने अपने बकलोल सौतेले पुत्रको—जिसे राजकुमारका दर्जा देकर नीचे गिरा दिया गया था—सेना देकर लड़नेके लिये भेजा, किंतु नये प्रधानसेनापतिके अभियानके पूर्व ही मो-चो ६० हजार बूढे जवान, नर-नारियोको मौतके घाट उतार चुका था। वह सेनाके सामनेसे साफ निकल गया। जाते वक्त भी रास्तेमें सभी लोगोको बड़ी निर्दयतापूवक मारता गया। अगले साल मो-चोने अपने दो पुत्रो तथा गुदुलूके एक पुत्रको उच्च सेनापति बना ८० हजार सेना दे लगातार चीनमे लूटपाट करनेका हुक्म दिया। वह पूर्वी कान्‌सूकी अश्वपालनभूमिसे १० घोड़े लूटकर ले गया। तुरगिसोके भीतर घुसकर मो-चोने पश्चिममें भी अपने राज्यको बढ़ाया।

७३० ई० में मो-चोने दूत भेजकर राजमातासे अपनी लड़कीसे व्याह करनेके लिये फिर एक थाङ्ग राजपुत्र मागा। राजमाता भीगी बिल्ली बन गई। उसने दोनो राजकुमारोको दूतके सामने खड़ा कर दिया, जिनमेंसे एक मो-चोका दामाद बना। राजमाताके दिन अब खतम हो रहे थे। उसके विरुद्ध षड्यन्त्र हुआ, जिसके फलस्वरूप सम्राट् चौउ-चुङ्ग (६५०-८४ ई०) ने सीधे राजशासन सभाला। मो-चो इसी समय चीनी सेनाको हराकर लिङ्ग-चाउ (आधुनिक निङ्ग-ह्या) को लूटता, शाही चरभूमिसे १० हजार घोडे छीन ले गया। ७११ ई० में तुर्गिसोको हराकर उसके कगान सकाको उसने मारा। अब उसका राज्य कोरियासे मध्य-एसिया तक ३००० मील लम्बा था। उनके पूर्वज स्यान्-पी जिस तरह तुर्कोके पूर्वज हूणोको कर देते थे, उसी तरह खिताई और घेई (खे-ली) मो-चोको कर देने लगे। ८वी शताब्दीके आरभमें मो-चोकी शक्ति अद्वितीय थी, चीन उसकी दयाका पात्र था। अरबोकी शक्ति अवश्य इसी वक्त बड़ी तेजीसे बढ़ी थी, जिस साल मो-चोने सकाको मारा, उसी समय अरब साम्राज्य सिंधसे स्पेन तक एसिया, अफ्रीका और यूरोपके तीन महाद्वीपोमें फैला हुआ था। लेकिन इन दोनो महाशक्तियोंको कभी बल-परीक्षाकी अवश्यकता नही पड़ी। दोनोके अतिरिक्त इस समय कोई उतनी बड़ी राज्यशक्ति युरोप और एसियामें नही थी। मो-चोकी सेनामें ४ लाख घोड़सवार धनुर्धर सदा तैयार रहते थे। ७१४ ई० में उसे उरुम्-ची (सिङ्क्याङ्ग) पर सेना भेजनी पड़ी थी। आजकी तरह उरुम्ची (पी-तिङ्ग) उस समय भी सिङ्क्याङ्गका शासन-केन्द्र था, जहा चीनी महा-आयुक्तक रहता था। उरुम्ची उत्तरके घुमन्तुओंके केन्द्रमें पड़ती थी, जिसपर नियन्त्रण रखने और रेशम-पथको सुरक्षित रखनेके लिये

चीनने उसे शासन-केन्द्र बनाया था। यहासे तुर्गिस् राजधानी सू-जि-या ७०० मील पश्चिम थी, किरगिज ओर्दू १२०० मील उत्तर, उइगुर ओर्दू १००० (४० दिन ऊटकी यात्रा) उत्तर-पूरब था। हामी यहासे ३०० मील दक्षिण-पूरब और कराशर ४०० मील दक्षिण-पश्चिम था।

मो-चो अत तक अपराजित रहा। घर और बाहर सब जगह वह पहले ही सा उद्दण्ड था। लगातारकी विजयोने उसके दिमागको फिरा दिया, जिससे पहलेके कई हित-मित्र उसे छोडकर भाग गये, जिनमें स्वय उसका एक दामाद भी था। चीन ऐसे भगोडोको अपनी शरणमें लेके ओर्दुस्-प्रदेशमें बसाता रहा। ७१५ ई० में मो-चोका सफल अभियान गोबीके उत्तर नौ-भाई (नौ कबीले) तिङ लिङके विरुद्ध हुआ था। साइबेरियाके पास रहनेवाले यह दुर्धर्ष कबीले मो-चोके लिये भी समस्या थे। ७१६ ई० में बैकाल घुमन्तूओके साथ लडनेके लिये उसने उत्तरकी यात्राकी और उन्हें करारी हार दी। विजयके नशेमें मत्त उसे आत्मरक्षाकी भी परवाह नही रहती थी। कुछ ऐतिहासिकोंका कहना है, कि जब उन पर विजय प्राप्त करके मो-चो लौट रहा था, तो एक जगलमे बैकालोंने उसे घेर लिया और उसका शिर काटकर चीन राजधानीमें भेज दिया। दूसरे स्रोतोसे पता लगता है, कि उसके भतीजे बैगूने उसे मारा। मोगिल्यानके अभिलेखमें चचाके मारे जानेका कारण तुर्क जनकी पारस्परिक ईर्ष्या मालूम होती है। शायद बैकालोने ही मारा हो, और उसमें मो-चोके भतीजे बैं-गूका भी हाथ रहा हो। मो-चोके पुत्र वो-गू (वी-गा) के गद्दी न पानेकी बात भी कही जाती है और कोई कोई इतिहासकार मो-चोके बाद वी-गाको तुर्कोंका कगान मानते हैं।

क्युल-तेगिन्ने चचाको मार या मरवाकर अपने बडे भाई गुदुलूके पुत्र को मोगिल्यानके नामसे ७१६ ई० में तुर्कोंका कगान बनाया। गु-दु-लूके कालमें सैनिक जनतत्रताका मान था। बल्कि, इसीका जो अभिमान तुर्कोंमें पाया जाता था, उसको उभाडकर गुदुलूने सफलता पाई थी। मो-चो इस तरहकी जन-तत्रताके साथ सहानुभूति नही रखता था। वस्तुत तुर्क समाज जनयुगसे सामन्त-युगकी ओर बढनेके लिये परिपक्व हो गया था और मो-चोके महान् साम्राज्यकी स्थापनाके बाद तो शासन-सबधी कठिनाइया और बढ गई, जब कि हर एक तुर्क जनतत्रताकी दुहाई देनेके लिये तैयार हो जाता था। सेनामें भले ही तुर्कोका प्राधान्य हो, किंतु शासनमें समुन्नत शासित जातियोमेंसे योग्य व्यक्तियोको आगे बढानेके लिये मो-चो मजबूर था। उनपर वह जितना विश्वास कर सकता था, उतना स्वच्छन्दता-प्रेमी तुर्कोंपर नहीं कर सकता था। तुर्क जनका घुमन्तू जीवन बिताना खतरे का कारण था, इसीलिए म चो उन्हे कृषिजीवी बनाकर बसा देना चाहता था। लेकिन सैनिक जीवन सैनिक लूटके सामने कृषि जीवन कैसे किसी तुर्कको पसन्द आता? साधारण लोगोमेंसे कितने ही इसे पसन्द भी करते, किंतु बेगो (सरदारो) को क्यो यह पसन्द आने लगा? इन सैनिक लूटोमें लाखोंकी तादादमें दास-दासी भी हाथ आते थे, जो जहा तुर्कोंके पशुपालन और दूसरे कामोमें सहायता देते, वहा खेती में भी काम करते थे। तुर्कोंकी सुख और समृद्धिके बडे स्रोत ये युद्ध-बदी दास थे। मो-चोके २३ सालके तूफानी शासनमें फिर सैनिक जनतत्रता दब गई, फिर तुर्क बेग अपनेको खुशामदी दरबारीके रूपमें परिणत होते देख रहे थे। मो-चोके भतीजे गुदुलू-पुत्र, क्युल-तेगिन् ने फिर उसी हथियारको अपने चचाके विरुद्ध उठाया, जिसे की उसके पिताने तोबा-कुलके विरुद्ध उठाया था।

(२) मो-गि-ल्यान्[1] (७१६-३५ ई०)

मो-चोकी हत्याके बाद राज-विधाता क्युल्-तगिन्ने तुर्क ओर्दू (तुर्क सरदारोंकी सभा) बुलाया, उसमें मो-चोके सभी अपराधोंको बढा चढ़ाकर कहते हुए लोगोंको उसके खानदानके विरुद्ध कर दिया। इस प्रकार वह मो-चोके पुत्रों, उसकी पुत्र-वधुओं, बहुतसे सबधियो तथा अनुचरोंको मरवानेमें सफल हुआ। क्युल-तेगिन्का बडा भाई मोगिल्यान (मेरक्रिन) "छोटा शाह"के नामसे एक प्रदेश-शासक था। वह बहुत नरम स्वभावका आदमी था। वह अपने भाईके पक्षमें कगान-पदको छोड उप-कगान ही रहना चाहता था, लेकिन परिस्थितिया ऐसी थीं, जिनके कारण क्युल-तेगिन् स्वय गद्दी सभालना नही चाहता था। लाचार हो मोगिल्यान्को खान बनना पडा। इसी समय पश्चिमी तुर्कोंकी शाखा तुरगिसके सुलू कगानने अपनेको मो चोके कुलसे स्वतत्र घोषित किया। मो-चोका सबल हस्त न रहनेके कारण पूरब (मचूरिया)के खिताइयों और घेरियोंने भी तुर्कोंकी अधीनता छोड चीनको कर देना शुरू किया। यही नही तुर्गिसकी शक्ति इतनी आगे बढ़ गई थी, कि उसके दूतको चीन दरबारमे प्रथम स्थान दिया गया, मोगिल्यानके दूतने जिसका विरोध किया। इसके बाद तुर्क फिर कभी पूबकी जातियोंके ऊपर अपना आधिपत्य नही जमा सके।

गुदुलूके पहले तुर्कोंकी जो भारी हत्या चीनियोंने की थी, उस समय एक तुर्क राजकुमार तोन-यू-कुक् (तुरु गू) बच गया, किंतु वह चीनका बदी बना। चीनने उसे गुदुलूसे लडनेके लिये जेलसे निकालकर भेजा था, और उसने पक्ष परिवर्तनकर गुदुलूका प्रभावशाली सलाहकार बननेमें सफलता पाई थी, यह बात हम कह आये हे और यह भी, कि मो-चोके जमानेमें उसकी पूछ नही रह गई थी। मोगिल्यान्के शासनारभके समय वह ७० वर्षका बूढा था। वह नये कगानका ससुर भी था। मोचोके समय भागकर उसने चीनमें शरण ली थी। लोगोंने उसे बुलानेकी माग की। भागे हुए तुर्कोंको ओर्दूस् प्रदेशमें बसाया गया था। अब चीनने हथियार छीनकर उन्हें ह्वाङ्हो (व्हु हुइ) पार भेज दिया। हथियार बिना वह बेचारे न शिकार करके जीविका पैदा कर सकते थे, न आत्मरक्षा ही। जब उन्होंने विरोध प्रदर्शित करना चाहा, तो चीनी सैनिकोंने उनमेंसे बहुतोंको मार डाला। उनमेंसे कुछ मोगिल्यानके राज्यमे भाग जानेमें सफल हुए। मोगिल्यान (छोटे शाह)ने इस अत्याचारका बदला चीनमे लूट मार मचाकर लेना चाहा, लेकिन वृद्ध तोन्-यू-कुकने उसे समझाया "फसल इस साल अच्छी है। चीन महाबलशाली राज्य है। हमारे नये एकत्रित हुए ओर्दूको विश्रामकी अवश्यकता है।" वह मोगिल्यानको रोकनेमें सफल हुआ। मोगिल्यान (बुद्धके प्रधान शिष्य) नाम ही बतलाता है, कि नये कगान पर बौद्ध धर्मका बहुत प्रभाव था। शायद उसी कारण उसका स्वभाव इतना नरम था। कगानने कुछ दुर्गबद्ध नगर और बौद्ध विहार बनानेकी इच्छा प्रकट की, तो तोन्-यू-कुकने कहा—"नही, तुर्कोंकी जनसख्या बहुत कम है, वह चीनकी जन-सख्याकी शताश भी नही है। हम चीनके मुकाबिले जो अभी तक अपनेको दृढ साबित कर सके, उसका एक ही कारण है, कि हम सब घुमन्तू है, हम अपनी रसदको अपने साथ अपने पैरोंपर ले जा सकते हैं, और हमारे सभी लोग युद्धकलामें निपुण है। जब हम अपनेमें क्षमता

---

[1] वही पृ० ३७२

देखते है, तो लूट मार मचाते है, जब नही देखते, तो ऐसी जगह भागकर छिप जाते है, जहा चीन हमें पकड नही सकता। यदि हम नगर बसाने लगे और जीवनके पुराने ढर्रेको हमने बदल दिया, तो एक समय हम अपनेको बिलकुल पराधीन पायेंगे। विशेष कर इन बौद्ध विहारो और मदिरोका मुख्य सार है आदमीके स्वभावको नरम बनाना। लेकिन मनुष्य जातिपर वही आधिपत्य कर सकता है, जो भयकर और लडाकू है।" तोन्-यू-कुकके इस भाषणकी सारी तुर्क राजसभा और स्वय छोटे शाहने बहुत तारीफ की। तोन्-यू-कुक तुर्कोकी सनातन रीति—सैनिक जनतत्रता और बर्बरता—का परम पक्षपाती था।

मोगिल्यान चाहे कितना ही शाति-प्रेमी हो, लेकिन वह उन तुर्कोका कगान (राजा) था, जिनके खूनमें युद्धकी भावना बसी हुई थी। उनके कारण चीनको नीद हराम हो गई थी। ओर्दूसूके चीनी महाआयुक्तकने ७२० ई० में सलाह दी, कि हामी नगरके नजदीक केरा नदी (चौला हो) के तटपर अवस्थित तुर्क ओर्दूपर आक्रमण किया जाय। इस अभियानमें पूरबके खिताई और घेई तथा पश्चिमके बसिमिर (पशिमी) ने भी सहयोग दिया। बसिमिर नजदीक थे, इसलिये वह पहले पहुचे। उधर उरुमचीसे ७५ मील पर पहुच कर तुर्कोने अपनी सेनाके एक भागको शहर पर अधिकार करनेके लिये भेजा और दूसरेको बसिमिर पर आक्रमण करनेके लिये। लेकिन परिणाम प्रतिकूल निकला। शत्रुके ओर्दूके नर-नारी बदी बने। उन्होने ल्याङ चौको भी लूटा। इस सफलतासे मोगिल्यान् मो-चोके राज्यके बहुतसे भागको लौटानेमें सफल हुआ। उसने थाङ दरबारमें दूत भेजा, कि मुझे सम्राट् अपना पुत्र स्वीकार करें तथा ब्याहके लिये एक राजकन्या दें। दरबारने पहली बात स्वीकार की, दूसरी बातका कोई जवाब नही दिया।

स्वेन्-चाङकी भारत-यात्रा इससे प्राय एक शताब्दी पहले हुई थी, जब कि खे-ली खकान (मृत्यु ६२८ ई०) पदच्युत हो चुका था और उसके साथ ही पूर्वी तुर्कोकी शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई थी। पश्चिमी तुर्कोके सबध में कहते हुए हम स्वेन-चाङकी यात्राके बारेमें आगे लिखेंगे। स्वेन्-चाङकी यात्राकी भूमिका चीनके एक प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ और लेखकने लिखी थी। उसने ७५५ ई० में सलाह दी, कि तुर्कोसे खबरदार रहनेके लिये सेना बढानी चाहिये और यह भी कि गुदुलूका स्वार्थहीन लडाकू ज्येष्ठ पुत्र, बुद्धिमान तोन-यू-कुक और उदाराशय छोटा शाह, इन तीनोकी गुट चीनके लिये बडे खतरेकी चीज है। ऐसे समय सम्राट् स्वेन्-चुङ (७१३-५६ ई०) को थाई-शान् शिखरपर बलि-पूजाके लिये पूरबकी ओर जाना अच्छा नही हैं। दूसरे मत्रियोंने सलाह दी, कि प्रमुख तुर्क नेताओको भी इस यात्रामें सम्मिलित करके उन्हें फसा लिया जाय, तो सब ठीक होगा। चीनी राजदूत उनके पास सदेश लेके गया। उसके साथ बातचीत करते छोटे शाह मोगिल्यान, उसकी खातून (रानी), ससुर, गुदुलू-पुत्र सब तम्बूमें बैठे थे। उन्होने चीनको उलाहना देते हुए कहना शुरू किया—"चीनने उन दुष्ट तिब्बतियोके साथ विवाह सबध किया है। घेई और खिताई एक समय तुर्कोके आज्ञाकारी सेवक थे, उन्हें भी चीनी राजकुमारियोंसे ब्याह करने दिया जाता है। क्या बात है, कि बारबार प्रार्थना करने पर भी हमारे साथ ब्याह सबध नही करने दिया जाता।" चीनी दूतने जवाब दिया—"खाकानने सम्राट्से पुत्र बननेकी प्रार्थना की थी। भला पिता और पुत्र कैसे एक दूसरेके परिवारमें शादी कर सकते है ?" इसका उत्तर था "घेइयो और खिताइयोके लिये भी तो यही बात है। फिर हम यह भी जानते है, कि ब्याह में सम्राट्की अपनी पुत्रिया नही दी जातीं।"

यहां तिब्बत' (थुबुन) के साथ चीनी राजकन्याके व्याह ७१० ई० का जो सकेत है, वह चीन-सम्राट् जुइ-मुड्की एक पोष्य पुत्री थी, जिसे तिब्बतके राजाको देना था। उसीका उत्तराधिकारी यही म्वेन्-चुङ था, जिसके दूतमे बात हो रही थी और जिसने अपने वशकी कन्यायें घेई और खिताई राजाओंको दी थी।

दूतने विश्वास दिलाया कि, मै सम्राट्मे जाकर सब बाते कहूँगा। लेकिन उसका कोई परिणाम नही निकला।

तिब्बतवाले भी चीनकी दोहरी चालसे सतुष्ट नही थे। उन्होने तुर्कोंके सामने प्रस्ताव रक्खा, कि दोनो मिलकर चीनपर आक्रमण करें, लेकिन मोगिल्यानने इस प्रस्तावको ठुकरा ही नही दिया, बल्कि तिब्बती पत्रको सम्राट्के पास भेज दिया। यह याद रखना चाहिये, कि इस समय तरिम-उपत्यका (सिङक्याङ) पर तिब्बतवालोका दृढ़ अधिकार था। सम्राटने बहुत प्रसन्नता प्रकट करते हुए व्यापार-सबध स्थापित करनेका हुक्म दिया और वार्षिक पैसा भी देना स्वीकार किया। इमी समयके अभिलेखमें पहले पहल घोडोके बदले चाय देनेकी बात लिखी मिलती है, अर्थात् ८वी शताब्दीके प्रथम पादमें चाय पीनेका रवाज चीनसे बाहर इन घुमन्तू तुर्कोंमें भी हो चुका था।

सब तरहसे देखनेपर मोगिल्यानका शासनकाल तुर्कोंके लिये बुरा नही कहा जा सकता। मो-चोके साम्राज्यकी पूवकी मचूरिया और पश्चिमकी इलि-चू उपत्यका तुर्कोंके हाथसे निकल गई थी, तो भी अभी तुर्क-शक्ति क्षीण नही हुई थी। छोटे शाहके मरनेके बाद उसका बहुत शीघ्रतासे ह्रास होने लगा। उसके बाद साम्राज्यके पतनके काल में निम्न खाकान हुए—

(४) ईजान्या (७३५-३६ ई०) मोगिल्यानका पुत्र।
(५) विग्य गुडुलू (७३९-४२ ई०) इजान्याका भाई।
(६) ओजमिश (७४२-४४ ई०) पूर्वी शाहका पुत्र।
(७) बाइमेइ खान खूनुग्-फू (७४४-४७ ई०)

जैसा कि शीघ्र पतिष्णु राजवशमें अक्सर देखा जाता है, यह समय खानोकी हत्याओ और षड्यत्रोसे भरा था। विलासी सामन्तशाहीके खिलाफ "सीधे सादे, काले लोगों" (जनसाधारण) को फिर उभाडा जाने लगा। उइगुर, करलोक और बसिमिर कबीले एक साथ उठ खडे हुए, जिनका नेतृत्व एक उइगुर सरदार मोयुन्-चुराने किया। उइगुरोने बाइमेइको मार डाला। कुतुलुक-पुत्र जो इतने दिनों तक पीछे रहकर खानोको बनाता बिगाडता रहा, अब भी तुर्कोंके अतिम दिनोके देखने और सघर्षमे भाग लेनेके लिये बचा था। बसिमिरके कगानकी कुछ ही समय तक प्रधानता रही, उसके बाद उइगुरोका पलडा भारी हुआ। मोगिल्यानकी खातूनने भागकर चीनमें शरण ली।

इस प्रकार अपने स्वामी आवारो (जुजनों) से स्वतन्त्र हो, तुर्कोंने दो शताब्दियो तक एक विशाल साम्राज्यपर शासन किया। ७४३ ई० में उनके पतनके बाद उइगुरोने उनका स्थान लिया, किंतु इससे जहा तक जनसाधारणका सबध है, कोई भेद नही हुआ, बल्कि वही ओर्दू, जो पहले तुर्क कहा जाता था, अब उइगुर-ओर्दू के नाम से पुकारा जाने लगा। वस्तुत भाषा और जातिके तौरपर तुर्कों और उइगुरोंमें बहुत भेद नही था।

तुर्क एल (कबीले)का सगठन निम्न प्रकार था—
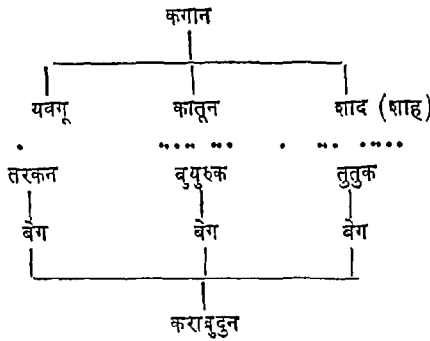
स्रोत-ग्रथ

१ सोत्सिअल्नो एकोनोमिचेस्किइ स्त्रोइ ओर्खोनो-येनिसेइस्किख त्युरोक VI-VIII वेकोफ (अ बेर्नश्ताम्, लेनिनग्राद १९६४)

2 A Thousand years of Tatars (Parker)

3 Inscription de l'Orkhon recueillies par l' expedition Finnoise 1890 S F O,, Helsingfors 1892

4 Dechiferment des inscription de l' Orkhon et de l'Ienissei Bull de l' Acad Royal des sciences et de lettre de Dannemark, No 3, Copenhague, 18, pp 285-299 (V Thomsen)

५ पाम्यात्निक व् चेस्त् क्युल्-तेगिना, जावाओ, XII, 2-4

6 Die Kokturkischen Grabins chriften aus dem Tale des Talas in Turkistan Zf IFuVGKCsA, Bd II, Lief 12, Budapest, 1926(J Nemeth)

७ द्रेव्ने सुरेत्स्किये नाद्ग्रोविया स् नाद्पिस्यामि बास्सेइना र तलस् (स० ये० मालोफ इ० अ० न० १९२९)

८ किर्गिजी (व० वर्तोल्द, फ्रुन्जे १९२७)

9 Histoire générale des Huns, des Turcs, des Mongoles et de Autre Tartares Occidentaux (J De Guignes, Paris 1756-1758)

10 Migration des Peoples et Perticulerement celles Touraniens (Ujfaly, Paris 1873)

था, जिसमें तिङ लिङ सहायता देनेके लिये आये, किंतु चूलो तैयार नही हुआ। यही कारण था, जो याङ्तीने ६०५ ई० म चूलोको परास्त करनेकी कोशिश की। तलसमें तुर्कोकी भारी पराजय हुई। चुलो कगानने चीनकी अधीनता स्वीकार की और आगेका अपना जीवन चीनमें बिताया, जहाँ कोरियाके साथ चीनकी ओरसे लडते हुए मारा गया। उसकी अनुपस्थितिमें शे-गुइ (शे-क्वी) स्थानापन्न कगान था। शेगुइने यब्गू रहते चीनसे राजकन्या माँगी थी। कहते हैं, चीनने इस शतपर इसे स्वीकार किया, कि वह चूलोको दबाये। शेगुइने अचानक उस पर आक्रमण कर दिया और उसे अपने परिवारके साथ कराहोजाकी ओर भागना पडा। सेनापति जूमेनके साथ जो तीन लाख सेना भेजी गई थी, उसम चूलोने भी शामिल होकर अच्छा काम किया। वही पूर्वी तुर्कोके सिबिर (सूबिली) कगानके भेजे हुए हत्यारे ने चूलोको मार डाला। चूलोके साथ चीन दरबारमे देरे दमो और होस्मना उप-कगान भी आये थे। इन दोनोने भी कोरियामें चीनकी सैनिक सेवा की। सुई वशके समाप्तिके बाद सेनापति कौ-सू द्वारा थाङ-वशकी स्थापनामें भी इन दोनोका काफी हाथ था। देरे दमो ६३८ ई० में मरा, लेकिन होस्सनाको सनकी सम्राट् याङ्तीने जाने नही दिया, इसलिये पश्चिमी तुर्कोने शेगुइको अपना कगान चुना।

४ शे-गुइ (६१८-१९ ई०)

शे-गुइ पश्चिमी तुर्कोका पहला कगान था, जिसने साम्राज्यके विस्तारमें भारी काम किया। इसके समयमें राज्यकी उत्तरी सीमा अल्ताई-ताग और पश्चिमी सीमा कास्पियन समुद्रसे मिलने लगी। पूरबमें चीनकी महादीवारके पश्चिमी छोरपर अवस्थित प्रसिद्ध सीहाउ घाटी तक उसका साम्राज्य फैल गया। पश्चिमकी सारी घुमन्तू जातियाँ उसकी अधीनता स्वीकार करती थी। शे-गुइका ओर्दू कूचासे उत्तर शायद कुल्जा प्रदेश की सनूमी पर्वतमालामें रहता था। वह अधिक समय तक राज नही कर पाया।

५ तुन्-शे-खू' (६१९- ई०)

शे-गुइका छोटा भाई तथा पहले का एक महा-यब्गू अपने बडे भाईकी जगह गद्दीपर बैठा। इसने पश्चिमी तुर्क-साम्राज्यके विस्तारमें अपने बडे भाईसे भी ज्यादा काम किया। ६१८ ई० में सुइ-वश खतम होकर थाङ-वशकी स्थापना हुई, जिससे यह कभी सुलह और कभी लडाई करता रहा। इसके बारेमें इतिहासकारोने लिखा है, कि वह बडा बहादुर महान् सेनासचालक था। इसका शिर बहुत लम्बा था। उसने उत्तरमें तिङ लिङोको अधीनता स्वीकार करनेके लिये मजबूर किया, पश्चिममें ईरानियोको मार भगाया और श्वेत-हूणो (हेफ़तालों) के विस्तृत राज्यको लेकर अपने राज्यकी सीमा काबुल (अफगानिस्तान) तक पहुँचा दी। ईरानमें इसका समकालीन शाह खुसरो द्वितीय था, जो अवारोके कगानसे मेल करके पतनोन्मुख सासानी साम्राज्यकी रक्षाका जबदस्त प्रयत्न कर रहा था। ईरानके प्रतिद्वन्द्वी बिजन्तीय (ग्रीको-रोमक) सम्राट् हेराक्लियस खजारोके शक्तिशाली कगानसे साठ-गाठ करके ईरानको परास्त करनेकी कोशिश कर रहा था। हूणोके वशज अवार और खजार उस वक्त वोल्गा और कास्पियनके पश्चिम तटके शक्तिशाली शासक थे। तुन्शेखूसे पहले ही ५८९-५९९ ई० में बलख और हिरातके कुषाण और श्वेत-हूण शासकों ने तुर्कोकी अधीनता स्वीकार कर ली थी और वह तुर्कोकी सहायतासे अमनियो और

ईरानियो पर आक्रमण करते थे। ६४२ ई० में ईरानका अरबोके हाथो पतन अब नजदीक था। पहिले शेखू कुल्जामें रहकर पश्चिमी प्रदेशका शासन करता था। पीछे उसने शी-कू (ताशकद) से ३०० मील उत्तर (तरस नदी पर) अपना केन्द्र बनाया। तुर्किस्तानके सारे राजा उसके अधीन थे। पश्चिमी तुर्कोंका इतना उत्कर्ष कभी नही हुआ। थाङ वशकी स्थापना होने पर उसने मसोपोतामिया (ताउ-ची) से शुतुरमुगका अडा मगवाकर चीनके पास भेंटके रूपमें भेजा था, जैसा कि उससे ८०० साल पहले पार्थियोने किया था। सम्राट्ने खेली खाकानके विरुद्ध उसकी सहायता चाही। तुन् शेखूने ६२२ ई० के जाडोमें सेना तैयार करनेका वचन दिया। खेलीने घबडाकर तुन्शेखूको अनुनय विनय करके तटस्थ रखा। पूर्वी तुर्कोंके कगान खेली और थाङ-सम्राट् सुङसे जिस वक्त घोर सघप हो रहा था, उस समय तुन्शेखूका सबध चीनसे टूट गया था। ६२७ ई० में थाङ-सुङके अभिषेकका निमत्रण देनेके लिये आये चीनी दूतके साथ तुन्-शेखूका अधिकारी महाजिगिन सम्राट्के लिये १० हजार सुवर्ण मेखोसे जटित कटिबध और ५ हजार घोडे ले गया। खेली नही चाहता था, कि पश्चिमी तुर्क कगानका चीनी राजवशसे विवाह-सबध हो। उसने रास्ता काट देनेकी धमकी दी।

स्वेन-चाङ[1] (६००-६४ ई०)—इस महान् पर्यटकने अपनी यात्रा ६२९ ई० में आरभकी थी और ६४५ई० में १६ वर्ष बाद वह चीन लौटा। अपने यात्रा-विवरणका पहला मसौदा उसने ६४६ई० में लिखा, ६४८ ई० में वह तैयार हुआ। सभवत इस सारे समयमें तुन्शेखू जीवित रहा। स्वेन्-चाङ अपनी यात्रामें उसके राज्यसे गुजरा था। कराशर (अकिनी) में वह ६३० ई० के आसपास पहुँचा था। अभी वह चीनके हाथमें नही था और ६४३-४४ई०में ही चीनकाउसपर अधिकार हो सका। कराशरसे २०० ली दक्षिण-पश्चिम कूचा (कूची) का प्रसिद्ध नगर था, जो कि तुन्शेखूके राज्यमें था। स्वेन्-चाङ लिखता है वहा गेहू, चावल, अगूर और अनार बहुत होते हैं। नास्पाती और खूबानी भी काफी होती है। इस प्रदेशमें सोने, ताबे, लोहे, सीसे और रागेकी खानें है। कुछ परिवर्तनके साथ भारतीय (गुप्त-ब्राह्मी) लिपि यहा प्रचलित थी। कूचाके लोग वीणा, वेणु जैसे वाद्य-यत्रोमें बडे चतुर थे। उनके चोगे ऊनी कपडोके होते थे। शिरपर वह पगडी बाधते थे। वहा सोने, चादी और ताबेके सिक्के चलते थे। कूचाके लोगोमें अपने बच्चोके शिरको चिपटा करनेका रवाज था। स्वेन्-चाङके समय कूचा प्रदेशके सौ बौद्ध बिहारोमें ५ हजार सर्वास्तिवादी भिक्षु रहते थे, जो त्रिकोटि-परिशुद्ध मास खानेमें परहेज नही करते थे। तुन्शेखू शासित कूचाके बारे में बतलाते हुए स्वेन्-चाङने लिखा है—"राजधानीके पश्चिमी द्वारके बाहर ९० फुट ऊची दो खडी बुद्ध-मूर्तिया सडककी दोनो बगलमें अवस्थित हैं। यह इसी स्थानपर स्थापित हैं, जहा बौद्ध अपना पचवर्षीय समागम करते हैं। यही पर भिक्षु और उपासक शरदके अतमें महाप्रवारणा की वार्षिक सभा किया करते हैं। यह महाप्रवारणाका मेला दस दिनोंतक रहता है, जबकि देशके सभी भागोके भिक्षु उपस्थित होते हैं। जिस वक्त भिक्षु अपना सघ-सन्निपात करते हैं, उसी वक्त राजा-प्रजा उत्सव मनाते हैं। इस समय वह काम नही करते, उपोसथ रखकर धर्मोपदेश श्रवण करते हैं। उत्सवके समय सभी विहार अपनी अपनी बुद्ध-मूर्तियोको मोती और

---

[1] वही पृ० ३७५

[1] On Yuan Chwang's Travel in India (Thomes Watters,)

रेशमी कमखावसे सजाकर जलूस निकालते हैं। मूर्त्तियाँ रथोंपर रखी रहती हैं। पहले जो जलूस हजारसे शुरू होता है, वह मिलन स्थानपर पहुच कर भारी मेलेमें बदल जाता है। इस मिलनस्थानसे उत्तर पश्चिम तथा नदीके दूसरी पार 'अद्भुत विहार' है। इस विहारमें कई विशाल शालायें और बहुत ही कलापूर्ण बुद्ध मूर्तिया हैं। यहाके भिक्षु विनय-नियमोको बडी दृढताके साथ पालन करते तथा शिक्षा और बौद्धिक योग्यतामें बहुत बढ-चढकर होते हैं। इस विहारमें दूर-दूर देशोंके प्रसिद्ध विद्वान् आकर रहते हैं, जिनका राजा उसके अधिकारी तथा जनता बहुत स्वागत-सत्कार करते हैं।"

स्वेन्-चाङ यहासे पामीर (चुङलिङ, पलाण्डुगिरि) की ओर चला। वह लिखता है "पो-लू-का (अक्सू) से ३०० ली उत्तर-पश्चिम लिङशान् (हिमगिरि) है। यहाँसे चुङलिङ (पामीर) का उत्तरी भाग आरम होता है। यहाँकी अधिकाश नदियाँ पूरबकी ओर बहती हैं। भाग खतरनाक है। बडे जोरकी ठडी हवा बहती है। ४००ली जानेपर महासरोवर तप्तसागर (इस्सिकुल) मिला, जिसका घिरावा १००० ली है। यह पूरबसे पश्चिम लम्बा है और इसके चारो ओर पहाड खडे हैं। सरोवरका पानी खारा है। इसमे मछलियाँ बहुत हैं।"

यहाँसे स्वेन्-चाङ सभवत चू-नदी (शू न्सें) की उपत्यकासे होकर आगे बढ़ा। ५०० ली उत्तर-पश्चिम जाने पर उसे शू-से नगर मिला (शूसे नगर ६७९ ई० से पहले नही था, जान पडता है, यात्राके सम्पादकने इसे पीछेसे जोड दिया)। यहाके निवासी अधिकाश भिन्न-भिन्न देशोंके व्यापारी थे। पैदावार गेहूँ, अगूर आदि होती है। वृक्ष कम और हवा सद है। लोगोकी पोशाक ऊनी होती है। इससे पश्चिम दसियो नगरियाँ है, जिनके अपने-अपने राजा है, किंतु सभी तुर्कोंके आधीन हैं।

"शूसे (चू नदी) तट से कासन्ना देश तकके लोग सूली (सोग्दी) कहे जाते है। इनकी लिपिमें २० अक्षर होते हैं, और वह ऊपरसे नीचेकी ओर पढ़ी जाती है। इनके चोगे पट्टू या जमाऊ ऊनी कपडोके होते है, जिसके भीतरकी ओर चमडा या कपास रहता है। (सोग्दी लोग) बाल कटाकर शिरके ऊपरी भागको नगाकर देते है, कोई कोई सारे बाल मुडा लेते है। अपने ललाटपर वह एक रेशमी पट्टी बाँधते है। कदमें लम्बे होते है, किंतु वह कायर, विश्वासघाती, धोखेबाज होते हैं। वह बडे झगडालू बडे लोभी होते हैं। लोभके पीछे पिता और पुत्र एक दूसरेको ठगनेकी कोशिश करते हैं।" धन ही यहाँ बडप्पनका चिह्न है, इनमें कुलीन और नीच-वणिकका कोई भेद नही। इन लोगोंमें आधे व्यापारी और आधे खेतीपर गुजारा करते हैं। अत्यन्त धनी होनेपर भी वह बिल्कुल साधारण भोजन खाते तथा मोटे-झोटे कपडे पहनते है।-

वहाँसे ४०० ली पश्चिम जानेपर पिङ-यू (बिङ्गुल) सरोवर मिला। यहाँ केवल दक्षिण की ओर हिम-पवतमाला (अलेक-सान्दरगिरि) है, बाकी तरफ मैदानी भूमि है। वसतमें यहाँ तरह-तरहके फूल खिले हुए थे। "यहाँकी भूमि बडी उर्वर है, चारो तरफ वृक्ष ही वृक्ष दिखाई देते हैं। वसतके अतिम भागमें यह स्थान, मालूम होता था, जैसे फूलोका कसीदा काढ़ा हुआ है। यहाँ १००० चश्मे और पुष्करिणियाँ हैं, इसीलिए इसका नाम लिङ-यू (सहस्रधारा) पडा।" तुर्कोंका खाकान गर्मी से बचनेके लिये हर साल गर्मियोमें यहाँ आया करता था। घण्टी और छल्ला पहने पालतू हिरन कगानको बहुत प्रिय थे, जिनको मारनेवाले अपराधी को प्राणदण्ड मिलता था।

गद्दीपर बैठते ही तुनुशेखू अपना शासन-केंद्र यहाँ लाया। स्वेन्-चाङ उससे ६३१-३२ ई० में मिला था। मुलाकातके बारेमें चीनी पर्यटकने अपने यात्रा-वर्णनमें लिखा है—"येहू-कगान

उस समय शिकारमें जा रहा था। उसके सैनिक सामान बहुत ही विशाल थे। कगान हरे शाटनका चोगा पहने हुए था। उसके बाल खुले हुए थे। उसके ललाटपर चारो ओर बँधी सफेद रेशमकी पट्टी पीठेकी ओर लटकी हुई थी। उसके २०० से अधिक अमात्य वहाँ उपस्थित थे। सबके ही चोगे कसीदेदार और वाल पट्टेदार थे। वह कगानके दाहिने बायें खडे थे। बाकी सैनिक अनुचर समूर, पट्टू या बारीक ऊनी कपडे पहने हुए हाथोमें भाले, ध्वजा और धनुप लिये ऊटों या घोडो पर सवार हो दह बहुत दूर तक फैले हुए थे। कगान चाङसे मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपनी अनुपस्थितिमें—जो कि दो तीन दिन ही की थी—अपने शिविरमे रहनेको निमत्रित किया। उसने अपने हजूरी-मत्री हा-मी-सी-चीको स्वेन्-चाङकी सेवाका काम सौपा। तीन दिन बाद खाकान लौटा और स्वेन्-चाङ उसके तम्बूमें ले जाया गया। विशाल तम्बूपर कढे सोनेके कमीदेको देखकर आँखें चकाचौंध हो जाती थी। दरबारी दोनो बगल दो लम्बी पातियोमे कालीनपर बैठे हुए थे। सबके चोगे बडे सुन्दर कमखाँबके थे। बाकी परिचारक पीछेकी ओर अपने काममें मुस्तैद खडे थे। खाकान अपने तम्बूसे निकल ३० कदम आगे बढकर स्वेन्-चाङ से मिलने आया। (पर्यटक) लगातार प्रणाम करते हुए तम्बूके भीतर गया। चूकि तुर्क अग्निपूजक (जर्थुस्त्री या मानी धर्मी) थे, इसलिए काष्ठका आसन नही इस्तेमाल करते, क्योंकि काष्ठ अग्निका आधार है। उसकी जगह वह दोहरे कालीन या दरीको आसनके तौरपर इस्तेमाल करते हैं। लेकिन तीर्थाटकके लिये कगानने लोहेके ढाचेवाले बेंचपर कालीन बिछवा रक्खा था। उसने अपने लिये मद्य और सगीतकी आज्ञा दी और यात्रीके लिये द्राक्षारस मंगवाया। इसके बाद सभी परस्पर मद्य चषक भरने, आगे बढ़ाने और उडेलनेमें व्यस्त हो कोलाहल मचाने लगे। इसी समय भिन्न-भिन्न यत्रोके स्वरसे मिश्रित सगीत ध्वनित होने लगा। दूसरोके लिये भुना हुआ ढेरका ढेर गोमास और मेषमास परोसा जा रहा था, और यात्रीके सामने रोटी, दूध, मिश्री, मधु और अगूर परोसे गये।" कगानकी भारतके प्रति अच्छी धारणा नही थी। उसने स्वेन्-चाङ को काले असभ्य घृणास्पद लोगोके देशमें जानेसे मना किया। उसकी सेनामें घोडसवार ही नही बल्कि हाथीसवार सैनिक भी थे।

कुछ इतिहासकारोने शेहू खानको तुली खानका सबधी बतलाया है, जिसकी मृत्यु ६३५ ई० में हुई थी, लेकिन शेहू तुनशेखूका ही नाम मालूम होता है।

अन्तमें तुनशेखू भी प्रभुता पाकर बौराये बिना नही रहा, इसपर करलोक जैसे कितने ही घुमन्तू कबीले उसके विद्रोही हो गये। स्वय उसके अपने चचा मो-खे-दूने ही उसे मार डाला।

६ क्यू-ली सि-बि खान[1]

चचाको तुर्क ओर्दू कगान माननेके लिये तैयार नही हुआ और जिसको वह कगान बनाना चाहता था, वह काटोका ताज लेनेके लिये तैयार नही था, इसलिये तुनशेखूके पुत्रको कगान बनाया गया, जिसने कि समरकन्द में भागकर शरण ली थी। उसे बुलाकर क्यू-ली सि-बि-खान (अथवा इल्बी शापोरो चतुर्थ जेवगू खकान) के नामसे गद्दीपर बैठाया गया। फिर भी गृह-युद्ध नही रुका।

---

[1] A Thousand years of Tatars p 376

तिङलिङो और तुर्किस्तानकी रियासतोंने विद्रोह किया। सेयेन्द्रा और तिङ लिङो (ककालियों) से हार खानी पड़ी। इसीके समय किप्चक (अराल समुद्रमे उत्तरका प्रदेश), अफगानिस्तान तथा ईरानी इलाके पश्चिमी तुर्कोंके हाथसे निकल गये। निशूमोखे खान (शाद)? और तुनशेखूका पुत्र शिली देले (तेगिन्) कगोमें जाकर सि-विका विरोध करने लगे, जिसमें उसके प्रतिद्वंद्वी सिशेखूका सफलता मिली और क्रोधी, क्रूर, हठी सि-वि खानको फिर समरकन्द भागना पड़ा।

७ सि शे-खू

सि शेखू तुन् शे-खूका पुत्र था। इसके समय तलसके सेयन्दोसे युद्ध हुआ। इसके घर प्रतिद्वंद्वियोंकी कमी नहीं थी, जिनमें सेनि-शूके साथ जबदस्त सघर्ष हुआ। उसने कराशरकी हरितावलीमें जाकर पनाह ली थी, लेकिन अन्तमें उसीकी विजय हुई।

८ निशू दुलु-खान, ९ शबोलो खिलिश खान (६३४-३७ ई०)

निशू दुलू खानके राज्यशासन-कालका निश्चय नहीं है। ६३४ ई०के आसपास यह रहा होगा। इसका छोटा भाई तुन्-बो-शे उसके बाद (६३४-३८ ई० में) शबोलो खिलिश् खानके नामसे गद्दीपर बैठा। उसने अपने शासित प्रदेशमें कुछ शासन संबंधी सुधार किये, और चू-नदीसे पूर्वमें पाच और पश्चिममें पाच—दस ऐमकोमें अपने राज्यको विभक्त किया। इसे ही "दस शे और दस वाण" कहते हैं। चीनी लेखकोंके अनुसार दुलू-खान जनप्रिय नहीं था, उसके शासनमें बहुत गड़बड़ी रही। पारस्परिक कलहके कारण अवस्था अनिश्चित थी। दुलू खानके अनंतर एकके बाद एक तीन कगान हुए।

१० इबी दुलू-खान (६४१ ई०)

इसे अराल समुद्रके पासके कगोसे कई लड़ाइया लड़नी पड़ीं, पर यह उनकी शक्तिको छिन्न-भिन्न करनेमें सफल हुआ। पराजित कग बहुत भारी संख्यामें दास बने। दास जंगम संपत्ति थे। घरमें रखकर उनसे काम लिया जा सकता था, बाहर या घरके खरीदारोंके हाथ उन्हें अच्छे दामोंमें बेचा जा सकता था। दुलूने सभी दासोंको अपने लिये रखना चाहा, जिससे उसका सेनापति निशू-चो नाराज हो गया और उसने अपना हिस्सा ले लिया। इसपर इबीने सबके सामने उसका शिर कटवाकर लोगोंके देखनेके लिये टाग दिया। इबीका सारा समय भीतरी कलहमें बीता।

११ इबी शबोलो शे-खू[1] (६५१- ई०)

शायद इसे ही खे-लू शबोलियो या अशिना खे-लू (शे-गुइ) कहते है। चीनकी सहायतासे यह खान बना था, इसलिये चीनकी हर एक मांगको पूरा किये बिना कैसे रह सकता था? पहिले ही ६४६ ई० मे इसने कूचा, काशगर, खोतन, चू-जुई-त्रो और चुङ-लिङ (पामीर) को चीनको दे दिया था। ६५१ ई० में बाइ-सुन्-खू सहित दुली खानकी सारी भूमिको हस्तगत कर यह

---

[1] वही पृ० ३७८

बाकायदा शबोलो नाम से तुर्कोंका कगान बना। थाङ-सम्राट्की राज्यविस्तार लिप्सा कम नही हो रही थी। वह चाहता था, कि शबोलो एक छोटा सा सामन्त होकर रहे, लेकिन तुर्क अभी भी घुमन्तू थे, अत सैनिक जीवनको छोड नही सकते थे। उनका कगान कितने दिनो तक दबता रहता ? शबोलोका चीनसे सघर्ष छिड गया, जिसका परिणाम चीनके अनुकूल हुआ और कुछ समयके लिए तुर्कोंका राज्य चीनका प्रदेश बन गया। जो प्रदेश अवशिष्ट रहा, वह भी गरलोक (ग्लेलोलू), खुवू और सुनिशी इन तीन वशोमें विभक्त हो गया।

१२ अशिना-शिन् (-७०७ ई०)

यही तुमिन वशका अतिम कगान था। यह मालूम ही है कि पश्चिमी और पूर्वी दोनो तुर्क राजवशोका मूल कुल अशिना था। इस वशके कगानोने इधर अपनेको बिल्कुल अयोग्य साबित किया था, इसलिये वश अन्तमें देर नही हो सकती थी। ७०८ ई० में कुलान (तर्ती स्टेशन) में अशिना-शिन मारा गया और उसके प्रतिद्वद्वी सोगेने तुर्गिस शाखा की स्थापना की।

१३ सोगे (७०८-७०९ ई०)

एक तरफ तुर्कोंकी शक्ति इस तरह क्षीण हो रही थी, दूसरी तरफ अरबोकी शक्ति बढ़ती जा रही थी। कुछ ही समय पहले पश्चिमी तुर्कोंके राज्यमें सारा अफगानिस्तान और ईरानके कितने ही भाग सम्मिलित थे, जिनमें अब अरब घुस रहे थे। ६८६ ई० में वक्षु (आमू-दरिया) से उत्तर बढकर अरब सेनापति मूसा बिन्-अब्दुला बिन्-हाज़िम्ने तिरमिज़को अपना शासन-केंद्र बनाया, जहाँ ७०४ ई० तक वह सर्वेसर्वा रहा। ७०५ ई० में पामीरके पहाडोसे आनेवाली सुर्खान नदीकी उपत्यका पर भी अरबोका अधिकार हो गया। ७१२ ई० में उसके पासके प्रदेश सगानियानको ही अरबो ने नहीं ले लिया, बल्कि ख्वारेज्मके प्राचीन देश पर भी इस्लामकी ध्वजा फहराने लगी। ७१२ ई० में समरकन्दपर तुर्गिस वशका अधिकार था, किंतु अगले साल सोग्द् देश छोडकर वह चले गये। अरब सेनापति कुतैबने और आगे बढ उनके प्रदेश शाश (ताशकद) और फर्गाना पर आक्रमण किया। इसी साल बुखारामें उसने पहली मस्जिद बनवाई।

तुर्गिम् (त्युर्गेम्) पूर्वी तुर्कोंका ही एक कबीला था, जो पहले दुलूके ओर्दू (उर्त)में शामिल था। इसकी चरभूमि चू और इली नदियोके बीचमें थी—बडा कबीला सुयाबमें और छोटा इलीके किनारे रहता था। पहले इसका सरदार वू-चिनु-पुत्र था, जिसके अत्याचारोसे तग आकर इन्होने उसे छोड दिया। वूचिनु-पुत्र अपने पुत्र सोगाके साथ चीन दरबारमें चला गया। बीचमें कबीलेने अपना एक और सरदार बना लिया। इनके उत्तर-पूरबमें उत्तरी तुर्क, पश्चिममें दूसरे बहुतमें तुर्क-कबीले और उत्तरमे किर्गिज रहते थे। पश्चिमी प्रदेशका चीनी राज्यपाल उरूमचीमें रहता था, सोगाने चीन दरबारमें रहकर अपनी शक्तिको बिल्कुल खो नही दिया था। उसने काशगर प्रदेशको लौटा देनेके लिये कहा। चीन दरबार शायद इसे मान लेता, लेकिन तुर्गिसोके भाईबद ओचिर् कबीलेवालोने चीनके युद्ध मत्रीको १७०० तोला सोना रिश्वत देकर सोगाको काशगरसे वचित करना चाहा। सोगाको जब यह भनक लगी, तो उसने ओचिर्के आदमीको मरवा दिया। सोगाने अशिना-शिनको पराजित कर अब पश्चिमी तुर्कोंका स्थान लिया। लेकिन अधिक

दिनो तक शासन नही कर पाया, और अगले ही साल ७०६ ई० में पूर्वी कगान मो-चो द्वारा मारा गया, जिसम उसके भाईका भी हाथ था।

१४ सू-लू (७१६-३८ ई०)

इसे तुर्कोंका अतिम तथा बहुत शक्तिशाली कगान कहना चाहिये। अरबोने इसे अबू मुज्राहिम् (झगडेका बाबा) नाम दिया था। सू-लूको अपनी शक्तिके अतिरिक्त एक और अच्छा मौका यह मिला था, कि ईरान और मध्य-एसियाके स्वामी अरब उत्तरी-दक्षिणी दो दलोंमें विभक्त होकर आपसमें लडने लगे थे। ७२४ ई० मे बल्कानमें उनका घोर सघर्ष हुआ। उमैया वश (६७३-७४८ ई०) की शक्ति पहले जैसी मजबूत नही थी। वह अपने अनुयायियोंको खुलकर लडनेसे मना न कर सका। इतना अच्छा मौका सु-लूको कब मिल सकता था? लेकिन उससे जितना फायदा उठाना चाहिये, उतना उसने नही उठाया।

सुलू जानता था, कि उसके पूरबमे चीनकी प्रबल शक्ति है और दक्षिणमें अरब कालकी तरह बढते चले आ रहे हैं। उसके पूवके भाईबध मो-चो और बगू खानके नेतृत्वमें अपने पुराने प्रतिद्वंद्वी पश्चिमी तुर्कोंको फूटी आखो भी देखना नही चाहते। ऐसी अवस्थामे उसे बडी सावधानीसे कदम रखना था। उसने चीनके साथ मित्रताका हाथ बढाया। सम्राट् स्वेन्-चुङ (७१३-५६ ई०) ने प्रसन्न होकर उसे "चुङ-सुङ"की उपाधि (राजकुमारका पद) दे बू-चिन्की प्रपौत्रीको वधूके लिये भेजा। वधु चीन राजवशका अभिमान रखती थी और साथ ही अपने पतिके बलका भी उसे कम गर्व नही था। उसने अपने एक अफसरके साथ हजार घोडे दूसरी चीजोसे बदलनेके लिये कूचाके वार्षिक मेलेमें भेजे। किसी बातमें विगडकर चीनी महाआयुक्तको "सबोधित करते समय अशिना स्त्रीने जो भाव दिखलाया" उसे वह बर्दाश्त नही कर सका। उसने अफसरको बहुतसे कोडे लगवा राजकुमारीके घोडोको भूखे रखवाया। जब यह समाचार सुलूको मिला, तो वह अपनी सेना ले आ धमका और चतुर्दुर्ग नगर (शू-चेन्)—काश्गर, खोतन, कूचा और सू-ज्या (शायद कराशर)—में जो भी आदमी या वस्तु हाथ लगी, सबको लूटकर ले गया। ये चारो शहर पिछले कगान अशिना खेलूने चीनको दे दिये थे। चीनमें इतनी ताकत नहीं थी, कि सूलूसे बदला लेता। सूलू अपने लोगोमें बडा प्रिय था। उसे चीजोका लोभ नही था। युद्धकी लूटमें जो कुछ मिलता, उसे ठीक तौरसे लोगोमें बाट देता। जनतासे बहुत अच्छा सबध होनेके कारण वह पूरी तौरसे उसकी सहायता करती थी। अरबोके खतरेको समझता था। तिब्बतियो और पूर्वी तुर्कोंसे मिलकर उसने अरबोके विरुद्ध समरकन्द पर आक्रमण किया। तिब्बत, पूर्वी तुर्क और चीनकी राजकुमारियोंसे उसने ब्याह किया था। यह बडा महगा सौदा था, क्योकि तीन रनि बासोंके ठाटबाटको कायम रखनेके लिये बहुत धनकी आवश्यकता थी। सुलू कितने दिनो तक उदारता दिखलाता? उधर उसका एक हाथ भी बेकार हो गया था, जिससे युद्धमें पहले जैसी क्षमता नहीं रखता था। हूण जाति कमजोरोके लिये दया नही दिखलाती, इसलिये धीरे धीरे वह अपनी जनप्रियता खोता गया। तो भी ७३० ई० में अभी उसका प्रताप सूर्य ढला नही था, जब कि उसका दूत चीन दरबारमें प्रथम स्थान पानेके लिये झगड पडा। दरबारने पूर्वी तुर्कोंके प्रतिनिधिको पूर्वी महलमें और तुर्गिस दूतको पश्चिमी महलमें स्थान दे कर झगडा निपटाया। पीत (तुर्क) और कृष्ण (किर्गिज) कबीलोकी लडाईमें सुलू (७३८ ई० में) मारा गया।

उसके पुत्रों (१५) तुखो-सुन-गेचो और (१६) मोखे दगानके साथ तुर्गिस (अशिना) वंशकी ७६६ ई० में समाप्ति होगई।

७४२ ई० में फिर तुर्गिस् और किर्‌गिज ओर्दू उरुम्‌चीके क्षत्रपके आधीन हो गये, तो भी कृष्णों (किर्‌गिजो) और पीतों (तुर्कों) का झगडा रुका नही। चीन इस वक्त एक विशाल साम्राज्य था, जिसकी सीमा दक्षिणमें इन्दोचीन और पश्चिममें पामीर तक फैली हुई थी। लेकिन उसके सीमातोपर तिब्बत और शान (प्राचीन स्यामी) जैसी शक्तिशाली जातियाँ रहती थीं, जिन्होने खास चीनकी शातिको खतरेमें डालकर उसे परेशान कर रक्खा था। ऐसी अवस्थामें चीन कहाँ तक अपने पश्चिमी सीमातकी जातियोमें शाति स्थापित करनेका प्रयत्न करता ?

७८० ई० तक किर्‌गिजो और तुर्कोंको पीछे छोडकर कर्‌लोक आगे बढ गये और उन्होने तुर्कोंको अपने अधीन बना लिया। बूकिन् (सुलूके पूर्वज) के ओर्दूके अवशेषको उइगुरोने हजम कर लिया। उइगुर राज्यके छिन्न-भिन्न होनेपर बूकिन्‌के अवशेषोने हूराशरको दखल किया और थाङ-वंश को अंतिम समय (९०७ ई०) तक आराम नही लेने दिया।

(तुर्क जातियां)[1]—

७६६ ई० में पश्चिमी तुर्कोंका स्थान कर्‌लोक और ७४७ ई० में पूर्वी तुर्कोंका स्थान उइगुरोने लिया, इस प्रकार ८वी सदीके उत्तरार्धमें सारा तुर्क-साम्राज्य लुप्त हो गया। वैसे पश्चिमी तुर्क साम्राज्यकी स्वतंत्र सत्ता ७५७ ई० में ही खतम हो गई, जब कि उन्होने चीनकी अधीनता स्वीकार कर ली।

बुक्कू, पुकू, तरङकल (तोलङको), तुङलो, बैकाल, गुसेर, अदिर, किबिर (चिपियू), कुक (चू), उगइ (यबी), सिबू, घेइ, खिताई कबीले तुर्किसोसे संबंध रखते थे, जिनका अस्तित्व पीछे भी रहा। इनके बारेमें निम्न बातें मालूम हैं—

बुक्कू—यह सबसे उत्तरमें रहते थे। एक समय ये १० हजार सैनिक प्रस्तुत कर सकते थे। सामाजिक स्थितिमें बहुत पिछडे हुए थे। पहले घेरीके अधीन रहे, फिर सेयेन्‌दाके, अन्तमें ७२५ ई० के करीब चीन राज्यमें मिल गये।

तरङकल—बुक्कूसे पश्चिममें रहते थे। इनके पास भी १० हजार जवान तैयार रहते थे। ६४८ ई० से पहिले ये चीन दरबारमें कभी नहीं आये थे।

थुङलो—सेयेन्‌दाके उत्तर पूरबमे रहते तथा १५००० भटोंकी शक्ति रखते थे। पहले घेरीके आधीन थे, अन्तमें उइगुरोने इन्हें अपनेमें मिला लिया। तुला-उपत्यका इनकी विचरण भूमि थी।

बैकाल—इन्हीके नामपर साइबेरियाका प्रसिद्ध महासरोवर है, किंतु उस समय वह बुक्कूसे पूरब शायद अगारा नदीके आसपास रहते थे। इनकी ३०० मील लम्बी भूमिके बारेमें यह चमत्कार देखा जाता था, कि वहा लकडी दो वर्षमें पथरा जाती थी। इनकी भाषा दूसरे तिङलिङोंमे बहुत कम अन्तर रखती थी।

गुसेर् और अदिर् तरङकलसे उत्तरमें रहते थे और किबिरस तरङकलके दक्षिणमें। कुक

---

[1] वही ३८२

वैकालोसे १७० मील उत्तर-पूरवमें रहते वारहसिंगे पालते तथा काई-सेवार खाते थे। इनके मकान लकडीके वे सूलसाल वनाये जाते थे।

उ-गइ कुर्कोसे १५ दिनके रास्तेपर पूरवमें रहते थे।

सिब्, घेई और खिताई इनसे और भी पूरव (आधुनिक मचूरिया) में रहते थे।

उपसहार—

उत्तरापथके ऐतिहासिक रगमचपर किस तरह शक, हूण और चीन इन तीन जातियोंके सघर्ष द्वारा इतिहासने प्रगतिकी, इसे हमने इस भागमें वतलाया। जहाँ तक उत्तरापथ और सिक्ष-कियाङ्का सवध है, आरभमे वहाँ शक जाति रहती थी। उन्हीके वशज यूची, तुखार, सहवङ और बू-सुन् थे। कग, अलान या उनके पूर्वज सरमात और मसागेत सभी शक-वशी थे। ई० पू० द्वितीय शताब्दीमें शकोकी भूमिपर हूण फैलने लगे और जैसे-जैसे शताब्दिया वीतती गई, उनके वशजो—अवारो, जूजुनों और तुर्को—के अनेक कवीले शक-वशजोका स्थान ले इस विशाल भूमिको तुर्क भूमिमें परिणत करने लगे। तो भी अभी उसे शुद्ध तुर्क-भूमि नही कह सकते थे। तरिम-उपत्यका अब भी शकवशी तुखारो और भारतीय उपनिवेशिकोकी भूमि थी। इस समयके वहुतसे अभिलेख तकला मकानकी मरुभूमिमें मिले हैं, जिनसे पता लगता है, कि अभी वहा तुखारी, प्राकृत भाषा तथा भारतीय लिपिकी प्रधानता थी। शताब्दियोसे चला आया वौद्ध धर्म अव भी प्रधानता रखता था, यद्यपि वहा आकर वसे सोग्दियो तथा दूसरे व्यापारियोमें नस्तोरी ईसाई और मानीके जर्थुस्ती धर्मोंका भी प्रचार था। ये तीनो धम मतभेद रखते हुए भी आपसमें वडे प्रेमसे रहते थे, इसे लेकाक और ओरेल स्टाइनकी खोजोंने सिद्ध कर दिया है। इस्लामी तलवारके सामने इन भिन्न-भिन्न धर्मवाले साधुओंने एक जगह प्राण दिये, और जव तरिम-उपत्यकाका छोडना अनिवाय हो गया, तो वहाके वौद्ध अपने साथ नेस्तोरी साधुओको भी लिये लदाख पहुचे।

लेकिन यह काफी पीछेकी वात है। तरिम-उपत्यकाके नगरोको पहिले तुर्कोके आधीन रहना पडा। ६९२ ई० मे वह तिव्वतके आधीन हो गये। काशगर, खोतन, अक्सू तक तरिम-उपत्यकाके सारे ही अष्ट नगरो पर तिव्वतका शासन था। इस समय अक्सू और काशगरसे नेपाल और कश्मीर तक तिव्वतकी विजयध्वजा फहरा रही थी। आज जो तरिम-उपत्यकामें मगोलायित मुख-मुद्राकी प्रधानता है, उसका आरभ इसी कालमें हुआ।

सप्तनद—जो किसी समय शको और उनकी सतानोकी विचरण भूमि थी, अव पूरी तरह तुर्कोके हाथमें चला आया था, यद्यपि वहाँकी जनतामे कृषि और व्यापारमे जीविका करनेवाले अव भी शको-सोग्दियोकी सतानें थी। ७वी शताव्दीके अन्त तक शक वहा वस्तुत नामशेष हो गये थे। स्वेन्-चाङ ७वी शताव्दीके मध्यमें सप्तनद और चू-उपत्यकासे आमू-उपत्यका तक एक ही सोग्दी भाषा और लिपिके प्रचारका उल्लेख करता है, जिसका यही अथ है, कि शक भाई अपना अलग अस्तित्व नही रखते थे। सप्तनदमें वौद्ध धर्म भी इस समय प्रचलित था और कुछ नेस्तोरी ईसाई भी रहे होंगे, किंतु जर्थुस्ती धम, उसमें भी मानी धमका प्रचार सवसे अधिक था। पश्चिमी तुर्क कगान भी अग्निपूजक थे। स्थिर-निवासवाले लोगोंमें शक-मिश्रित सोग्द जातिही अधिक थी, किंतु तुर्कोके घुमन्तू ओर्दू भी नगण्य नही थे, जोकि आगे चलकर इस भूमिका पूरी तौरसे मगोलायित वनाकर यहाके लोगोको आधुनिक कजाक और किर्गिज जातियोंमें परिणत करनेमें सफल हुए।

सप्तनदसे पश्चिमके उत्तरापथका भाग (पीछे किपचक भूमि) पहले मसागतों-सर मातोंकी भूमि थी, जहाँ उनके वशज कग और अलान रहते थे। आधुनिक पश्चिमी कजाक-स्तान (किप्चक) भूमि भी हूणो तथा उनके वशजो (अवारो और तुर्कों) के हाथमें चली गई। धीरे-धीरे वहाँके प्राचीन निवासी तुर्क जातियोमें विलीन होने लगे। कग और अलान हूणो और तुर्कोंकी तरह ही घुमन्तू थे, इसलिये उनमेंसे कितने ही चोट खा कर अन्यत्र भागनेके लिये भी तैयार हो गये। किप्चक-भूमि के निवासी तुर्कोंके साम्राज्यके अन्त होते समय वहुत कुछ मगोलायित हो गये थे। तुर्क यहा इतने प्रवल हो गये, कि पहले के चले हूणिक ओर्दू और पश्चिम भागनेके लिये मजबूर हुये। किप्चककी पडोसी भूमिमें वुल्गार, अवार और खज़ार तीन हूण-जातिया रहती थी। खज़ारोने कास्पियन समुद्रको अपना नाम दिया, जिसे मुसलमान लेखकोंने पीछे खज़ार समुद्रकी जगह खिजिर समुद्र (वहीरा खिज्र) वना दिया। वुल्गारोका नाम रूस की वडी नदी वोल्गासे जुड गया। प्रथम हूण लहर दन्यूव (इट्तिल) के किनारे ४थी सदी ही में पहुँच गई थी, जिसने सरमाती कवीलों (स्लावो) और गाथोको कालासागर तटसे उत्तरकी ओर भागनेके लिये मजबूर किया। पीछे अवार भी अपने वधुओके पास हुगरीमें जा पहुँचे।

इस प्रकार हम देखते हैं, कि ७वी सदीके मध्यमें तुर्क-साम्राज्यके अन्त होते समय तक सारा ऐसियाई शक द्वीप (प्राचीन शकस्तान) तुर्क द्विपी या तुर्किस्तान बनने के लिये तैयार हो गया।

स्रोत-ग्रन्थ

1 A Thousand Years of Tatars (Parker)

2 Histoire générale des Huns, des Turcs , (J De-Guignes)

3 Altturkische Studien, IV S 310 (W Radloff)

4 Introduction à l' Histoire de l'Asie Turks et Mongols des origines à 1405 (L Cahun, Paris 1896)

5 The Turks of Central Asia in History and at the Present Day (M Czaplicka, Oxford 1918)

6 Oughous-Name (Riza Nour, Alexandrie, 1928)

7 Westturken, "Turcica" p 9 (V Thomsen)

8 Manuscripts in turkisch 'runic' Script from Miran and Tunhuang, J RAS, 1912 January (Dr M A Stein)

9 Documents sur les Tou-Kiue (Turcs) Occidentaux सबतओए, सपव, १६०३

10 A Study on the titles Kaghan and Katun (Shiratori Kurakichi, Memoirs of the research department, Tokyo 1926,)

भाग ४

दक्षिणापथ (५५०ई० पू०—६७३ ई०)

अध्याय १

अखमनी (ई० पू० ५५०-३२६)

ई० पू० छठी शताब्दीसे हम मध्य-ऐसियाके दक्षिणापथ (हिंदूकुश पर्वतमालासे सिर-दरिया तथा पामीरसे कास्पियन समुद्र तकके भूभाग) के ऐतिहासिक कालमें आ जाते हैं, यद्यपि इसका यह अर्थ नही कि हमें इस समयकी ऐतिहासिक सामग्री काफी परिमाणमें मिलती है। इतना अवश्य है, कि जहाँ हम भारतके इतिहासपर प्रकाश डालनेवाले शिलालेख को ई० पू० ३री शताब्दी में अशोककी धर्मलिपियोके रूपमें पाते है, वहाँ मध्य-ऐसिया के दक्षिणापथका प्रथम स्मरण बुद्धके समकालीन दारयवहुके शिलालेखोमें मिलता है। इस प्रकार यद्यपि जनश्रुति तथा समय-समयपर परिवर्तित परिवर्धित ग्रथोके आधारपर भारतके इतिहासको और पहिले ले जा सकते है, किंतु उसकी ठीक पुरातात्त्विक सामग्री ई० पू० तृतीय शताब्दी से ही निश्चित रूपसे मिलने लगती है, जबकि यहा उससे ढाई शताब्दी पूर्वके दक्षिणापथसे सबध रखनेवाले अभिलेख मिलते है। दक्षिणापथ भारतकी तरह ही बराबर बाहरसे आनेवाले जातियोका रणक्षेत्र और क्रीडाक्षेत्र रहा है। दोनोमें फर्क इतना ही है, कि जहा भारतमें पुरानी सस्कृतिया तहपर तह जमनेके बाद भी ऐसी स्थितिमें पडी हैं, कि उनको पहचाना जा सकता, वहाँ मध्य-ऐसियाके इस भागमें सस्कृतियाँ इतनी मिल-जुल गई है, कि उनका अलग-अलग परिचय मिलना मुश्किल है। और स्पष्ट करते हुए कहना पडेगा, भारतमें पिछले ५००० वर्षो की सस्कृतिया, तिल-तडुलकी तरह मिली-जुली मौजूद हैं, जब कि मध्य-ऐसिया में वह नीर-क्षीरकी तरह घुल-मिल गई। जातियोका सम्मिश्रण भी वहा इसी तरह हुआ।

धातुयुगके आरभसे हम देखते है पहले सिर और वक्षु (आमू) दरिया के द्वाबामें भूमध्यीय जातिका आर्योके साथ समागम हुआ। दोनों जातियोकी सस्कृतियाँ मिल गई, पीछे उस समयकी भूमध्यीय जाति और उसकी सस्कृतिका वहाँ पता मुश्किलसे मिलता है। आर्योने दो सहस्राब्दियों तक वहाँ अपनी प्रधानता रक्खी। आखामनी कालमें जिस सोग्द जातिकी यहाँ प्रधानता थी, वह ईरानी आर्योकी ही एक शाखा थी। आगे ग्रीक और शक आये, किंतु अब पुरानी ईरानी जातिने अपने अस्तित्वको खो नही दिया, वल्कि इन दोनो हिन्दू-यूरोपीय जातियोको वह अपनेमें हजम कर गई। ईसाकी ५वी-६वी शताब्दीमें हूण वशज तुर्क आये। उन्होने अपने मगोलायित रक्तको देकर वश-परिवर्तन करना शुरू किया, जो समयके साथ बढ़ता ही गया। यद्यपि द्वाबेकी तुर्क जातिने ईरानी सस्कृतिको स्वीकार किया, किंतु उसने साथ ही स्थायी तौरसे लोगोकी मुख-मुद्राको बदलना भी शुरू किया। तुर्कोंके दो शताब्दी बाद इस्लाम आया। उसने प्रयत्न किया, कि पुरानी सस्कृतिका चिह्न भी न रह जाये। हाँ, तुर्कोके साथ उसने यह समझौता अवश्य किया, कि राजनीतिक शक्ति वह अपने हाथमें रख सकते हैं। आज मध्य-ऐसियामें इस्लामिक सस्कृति और मगोलायित जाति ही देखनेमें आती है। पुराने अवशेषोको ढूढ़नेके लिये धरातलके भीतर

घुसनेकी अवश्यकता है। साम्यवादी होनेसे पहले मध्य-ऐसियाकी सभी तुर्क-जातियां (तुर्कमान, उज्बेक, किरगिज, कजाक) प्राग्-इस्लामिक जगतसे अगर कोई अपना सबंध स्वीकृत करती थी, तो वह था तुर्की खून। सोवियतकालमें बड़े व्यापक परिमाणमें मध्य-ऐसियामें पुरातात्विक अनुसंधान हुए हैं। इसके कारण प्राग्-इस्लामिक कालके पुराने नगर, हस्तलेख तथा कलाके नमूने प्राप्त हुए हैं। अब वहांकी जातिया अपने सारे लंबे इतिहासके लिये अभिमान करती हैं।

यहा ई० पू० छठी शताब्दीमें पड़ोसी जातियोके सांस्कृतिक विकासपर एक दृष्टि डाल लेना अच्छा होगा। भारत और ईरानमें आर्योंकी दो शाखायें करीब-करीब एक ही समय (ई० पू० २री सहस्राब्दीके मध्यमे) पहुची थी। घुमन्तू होते हुए भी कृपिका थोड़ा सा ज्ञान उनके पास था। भारतमें सिंधु-उपत्यकाकी पुरानी संस्कृति के घनिष्ठ संपर्क में आकर आर्योंका सांस्कृतिक विकास तेजीसे हुआ। १२०० ई० पू० के आसपास की सप्त सिंधु उपत्यकाओ (पंजाब) में पहुँचकर एक समृद्ध जातिके रूपमें परिणत होते हुए उसने अपने जनयुगके अवशेषोको छोड़कर सामन्त युगमें प्रवेश किया, गणतंत्रकी जगह राजतंत्रको अपना लिया। इसी समय राजा दिवोदास और सुदासके समयमें वेदोंके प्राचीनतम ऋषियो (भरद्वाज, वसिष्ठ, विश्वामित्र,) ने वेदकी ऋचायें रची। आगे विकास होते-होते ई० पू० ७वी-८वी शताब्दीमें हम प्राचीन उपनिषद्के तत्वज्ञानियो (प्रवाहण, यज्ञवल्क्य आदि) को होते पाते हैं। इतने समयमें भारतीय आर्य प्राकृतिक शक्तियो तथा मृतपितरोको देवता मानकर पूजनेकी अवस्थासे सर्वान्तर्यामी एक ब्रह्मकी ओर बढ़ते हैं, उसीके अनुसार गणोकी बहुतंत्रतासे वह राजाकी एक-तंत्रताको भी स्वीकार करते हैं—वस्तुत बाहरके राजनीतिक परिवर्तनका ही प्रतिबिम्ब हम उनके धर्म और दर्शनमे पाते है।

कुरव[1] (कौरोश) ने जिस समय (ई० पू० ५५० ई० मे) गद्दीपर बैठकर संसारके सर्वप्रथम महान् साम्राज्यकी स्थापना की, उस समय १३ वर्षके सिद्धार्थ गौतम (बुद्ध) शाक्योंके गणमें बाल्य बिता रहे थे। उस समय वर्तमान उत्तर-प्रदेश और बिहारकी सीमाओ और पंजाबमें गणराज्योकी प्रधानता थी। मध्य-एसियाके द्वावोमें किस तरहका शासन था, इसके बारेमें इतना ही कह सकते हैं, कि कुरवके शासन-कालमें वह बहुत कुछ राजतंत्रके प्रभावमें था। हो सकता है, तत्कालीन शकोकी अथवा भारतीय गणोंकी भांति वहाँ भी गण-शासन रहा हो। अगली दो शताब्दियोंमें मध्य-ऐसियाका जो इतिहास हमें मिलता है, वह अखामनी इतिहासके एक अंगके तौरपर ही। मध्य-ऐसियाई और ईरानी जातिके रूपमें उत्तरके विशाल शकद्वीपके मुकाबले हम भूमिका आर्यद्वीप कह सकते हैं। अवस्तामें आर्योंकी प्रथम भूमिको ऐर्यानम्वैजा कहा गया है। इसके बारेमें ऐतिहासिकोंके भिन्न-भिन्न मत हैं। कोई उसे वक्षु और दक्ष तके बीचकी भूमि मानते हैं, कितने ही पामीरको और कुछ ख्वारेज्मको ही ऐर्यानम्वैजा कहते हैं। ईरानमें जो आर्योंकी शाखा गई थी, भारतकी तरह धीरे-धीरे उससे कई जन हो गये, जिनके नामपर उनके अनेक जनपद बने। मद्र या मिद जाति काकेशसके पहाड़ोंसे दक्षिणकी ओर गई पर्वत श्रेणियामें बसी, जिससे उसका नाम मिदिया पड़ा। इस जातिका सीधा संबंध बवेरु (बाबुल) की संस्कृति और

[1] Histoire Ancienne (G Maspero) pp 649-95), इस्तोरिया द्रेव्नेओ वोस्तोका (व० व० स्त्रूवे, लेनिनग्राद १९४?) पृ० ३६८-७५

साम्राज्यसे हुआ, जिसके कारण ईरानी आर्यों को जन-अवस्थासे सामन्तवादी अवस्थाकी ओर बढनेका अवसर मिला। अभी भी यह जाति पहाडी लडाकुओकी थी। अपनी बिखरी हुई स्थितिमें यद्यपि उसने बवेरुके जुयेको मान लिया, किंतु धीरे-धीरे उसे पता लगने लगा, कि जब तक भिन्न-भिन्न जनोमें विभक्त मद्र लोग एक सूत्रमें सबद्ध नही हो जाते, तब तक हम स्वतत्र नही हो सकते। अपनी एकताका परिचय उन्होने ७८८ ई० पू० में बवेरु की राजधानी निनवेको पराजित करके दिया। इसी समय मद्र-राज्यकी स्थापना हुई। ७०८ ई० पू० में मिदिया और भी एकताबद्ध हो गई और जब कि फरवत-पुत्र देइओक् (देवक) मिदियाका राजा हुआ। उसने अपनी जाति को बवेरुओ से बिलकुल स्वतत्र ही नही कर लिया, बल्कि सभी ईरानी जनो को मिलाकर एक शक्तिशाली राज्य की स्थापना करने में सफलता पाई। देवकने अखबतन (वर्तमान हमदान) मिदियाकी राजधानी को विशाल प्रासादो और सुदृढ़ दुर्ग से सुसज्जित कर निनवे का प्रतिद्वन्दी बना दिया। देवक का शासन सोग्द (आमू और सिरदरिया के द्वाबे) तक था, इसका कोई प्रमाण नही है। ६५५ ई० पू० में उसके मरने के बाद फरवर्त उसका उत्तराधिकारी हुआ। मिदिया का राज्य ५५० ई० पू० तक कायम रहा, लेकिन आगे उसने कोई विशेष प्रगति नही की। इसी मिदियाका स्थान अखामनी (अखामनशी) वश ने लिया।

१ कुरव (५५०-५२९ ई० पू०)

अखामन दक्षिणी ईरान (पारस) के कबीलोमेंसे एक का मुखिया था, जिसके कारण उसका जन अखामनी या अखामनशी कहा जाने लगा। इसीकी ७वी या ८वी पीढी में कुरव पैदा हुआ। कुरव पिता की ओर से पारसीक था, किंतु माता की ओर से मद्रो का खून उसकी नसो में बह रहा था। देवक के उत्तराधिकारी धीरे धीरे विलासप्रिय होकर कमजोर होते गये। कुरव को अच्छा मौका मिला और उसने अतिम मद्र राजा को हराकर ५५० ई० पू० मे अपने को सारे मिदिया का राजा घोषित किया। इससे पहले कुरव अनशन का शासक था। यद्यपि अब मद्रो के स्थान पर पारसीको की प्रधानता हो गई, किंतु कुरवने मद्रकुल को नीचे करना नही चाहा। कुरवके विशाल साम्राज्य में शासक जाति के तौर पर पारसीको और मद्रो दोनो का स्थान था—मद्र पारसीको से कुछ ही कम समझे जाते थे, दूसरी जातियो के सामने मद्रो और पारसीको में कोई अतर नही था। कुरवने अखबतन को ही अपनी राजधानी रखा। मिदिया के राज्य को हस्तगत करके कुरवने सतोषन कर ५४६ ई० में लिदिया (क्षुद्र-एसिया) को जीत अपनी पश्चिमी सीमा भूमध्यसागर तक पहुँचा दी। लिदिया बहुत ही समृद्धदेश था। वहाँ पर रहनेवाली जाति ईरानियो से कुछ समानता रखती थी। उसके मिल जाने पर कुरवकी शक्ति और बढ़ गई और उसने बवेरु पर हाथ फेरना चाहा। वह जानता था, कि बवेरु का जीतना उतना आसान नही होगा, इसलिये उसने बडी तैयारी के साथ आक्रमण का श्रीगणेश किया और तिग्रा तथा फ्रात की विशाल नदियो के वणिक्पथ को छेंक दिया। सघर्ष जबर्दस्त हुआ, लेकिन ५३८ ई० पू० में कुरवने बवेरु पर पूर्ण विजय प्राप्त की। कुरव और दारयवहु दोनो महान् विजेतओ की नीति थी, कि हर एक विजित जाति की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये उसके धर्म, रीति-रिवाज, सस्कृति को छेडा न जाय। यही नही, बल्कि कुरव अहुरमज्द का परमभक्त था, पर बवेरू जीतने के बाद वह वहाँ के देवता मर्दुक का भी पूजा सम्मान किये बिना नही रहा। उसके अभिलेख में लिखा

है'—"देवातिदेव मर्दुक ने मुझे यह राज्य प्रदान किया।" अपने दिग्विजय के बारे में यह लिखता है "मैं कुरव विश्वराज, बृहत् राज, महाराज, ववेरु, शुमेर, अक्कदका राजा, चतुर्दिशाओ का राजा हूँ। जब मैं शाति-पूर्वक ववेरु नगरी मे पहुँचा, तो वहाँ के राज्य-निवास पर अधिकार किया। उस समय महान् प्रभु मर्दुक ने मेरे हाथ में ववेरु निवासियो को समर्पित कर दिया।" ववेरु जीतने के वाद कुरव का अगला कदम मिस्र (मुद्रिक) था। फिर उसने पूरव में अपनी सीमा वढ़ाते हुये सिंधु तटतक पहुँचायी। इसी समय सबसे पहले सप्तसिंधु (हफ़्त-हिंदू) का उल्लेख मिलता है। अव नील और भूमध्यसागर से सिंधु-तट तक कुरवका साम्राज्य विस्तृत हो चुका था, इसी समय सोग्द भी उसके हाथ में आ गया, लेकिन दन्पृव (दुनाई) से लेकर ह्वाङ्हो तक फैले उत्तर के घुमन्तू पशुपाल शक कुरवका रोव मानने के लिये तैयार नही थे। वह पशुपालन के साथ साथ पडोसी बस्तियो की लूट-पाट करना अपना अधिकार समझते थे। कुरवको शको से लडने के लिये मजबूर होना पडा, और इसी लडाई में महान् विजेता को अपना प्राण देना पडा। काकेशस के उत्तर के शकोसे भी छेडछाड़ होती रही। काकेशस पवतमाला जहाँ कास्पियन समुद्र के अति नजदीक पहुँच जाती है, उस जगह दरबद (द्वारबध) को दुगबद्ध करना पडा था, किंतु मुख्य सघर्ष अराल समुद्र से कास्पियन समुद्र तक के घुमन्तू मसागेत (महाशक) जातिसे हुआ। इसमें पहले ही कुरवने एक्सर्त तट पर कुरेखत नगर और दुर्ग वसाया। शको के राजा अर्मोग ने जवर्दस्त मुकाबला किया, लेकिन अत में वह मारा गया। उसकी रानी ने अधीनता नही स्वीकार की। शका में स्त्रियोका स्थान उतना नीचा नही था, यह हम कह आये है। शकरानीने हथियार नही रखा। ५२९ ई० में कुरवने मसागत की रानी तोमुरी से व्याह करने की माग की। उसने बनावटी स्वीकृति देदी। कुरव एक्सर्तकी ओर वढ़ा। सघर्ष आरभ हुआ। रानीका लडका बदी बनाया गया, जिसे किसीकी असावधानी के कारण मार डाला गया। इसपर उसकी मा तोमुरीने अपने सारे कबीले के योद्धाओ को जमा कर कुरवकी सेना पर आक्रमण कर दिया। माँ बेटेका बदला लेनेके लिये तुली हुई थी, उसने अत तक लडने का निश्चय कर लिया था। शको और हूणो की एक पुरानी युद्ध नीति थी, हार का बहाना करके भाग पडना और जब दुश्मन असावधानी के साथ पीछा करे, तो चुनी हुई सेना के साथ उसपर आक्रमण कर देना। तोमुरी की सेना ने ऐसा ही किया। ईरानी सेना ने पीछा किया और मसागेतो के हाथो बुरी तरह पराजित हुई। कुरव मारा गया।' रानी ने उसकी लाश को खुजवाया, लेकिन ईरानी सेना उसे पहले ही हटा चुकी थी।

इस प्रकार मिस्र और भारत तक विजय-पताका फहरानेवाले कुरव का अन्त हम मध्य-एसिया की इसी भूमि में होते देखते है। तो भी इसमे शक नही, कि ख्वारेज्म और कास्पियन तट के शक घुमन्तुओ को छोडकर बाकी प्रदेश के निवासी सोग्दियो पर कुरव की विजय ने स्थायी प्रभाव डाला। वह उसी नागरिक सस्कृति में आगे बढे और उसी कला-कौशल की वहाँ दृढ़ नींव पडी, जो महान् कुरवके विशाल साम्राज्य की देन थी। इस प्रभाव को पीछे तुर्क और अरब विजेता भी मिटा नही सके।

---

[1] इस्तोरिया देवृनओ वोस्तोका पृ० ३७१

[2] Historic Ancienne (G Maspero) p 672)

२ दारयबहु (५२९-४८५ ई० पू०)

कुरब का पुत्र कम्बुज (५२९-२१ ई० पू०) उसके विशाल साम्राज्य का उत्तराधिकारी हुआ। मिस्र में विद्रोह हो गया, जिसको दबाकर उसने फिर से मिस्र-विजय किया। उसने अपने पिता के विजयफल को कायम रखने का प्रयत्न किया। उसके मरने के बाद विरोधी शक्तियो ने जोर पकडा। मद्र अपने पुराने जमाने को भूले नही थे। उनके जातीय-धर्म के पुरोहित मग पसद नही करते थे, कि उनका शाहशाह दूसरी जातियो के धर्मों का सम्मान करें, और उनके देवताओ को अहुर-मज्द के बराबर मानें। सबसे जबर्दस्त विरोध मद्रो की ओर से हुआ। उनका नेता गौमाता छ महीने तक कुरब के सिंहासन का स्वामी रहा। अखामनी खानदान के भी कितने ही राजकुमार झगड रहे थे, लेकिन अत में सफलता हुर्कनिया के क्षत्रप तथा विस्तास्प के पुत्र दारयबहु को मिली। १० रगयादिस (मार्च-अप्रैल) ५२१ ई० पू० में अखबतन के सिख्यावती राजप्रासाद के भीतर उसने गौमाता को मारा। दारयबहु ने अपने बहिस्तून के शिलालेख में इसी घटना की ओर इशारा करते हुये लिखा है

"अहुरमज्द ने मुझे शाह बनाया। हमारे वश के हाथ से राज निकल गया था। मैंने लौटाकर उसे जैसा पहले था, वैसा स्थापित कर दिया। मगो द्वारा ध्वस्त पूजा-स्थानो को मैंने पुन स्थापित किया। गौमाता द्वारा उत्पीडित जनता को मैंने पूर्ववत् बनाया। उन्हें उसी पहली परिस्थिति में लौटाया, जिसमें कि वह पारस में थी, जिसमें मिदिया में थी, जो मेरे दूसरे देशो में थी। मैंने अहुरमज्द की इच्छापर चलने का इस तरह प्रयत्न किया, मानो गौमाता ने हमारे कुल को ध्वस्त ही नही किया हो।"

गौमाता के अतिरिक्त उसे और भी कितने ही प्रादेशिक क्षत्रपो से लडना पडा। मिदिया और अरमेनिया शासक फ्रावातस ने क्षत्रिय उपाधि धारण कर अपने को राजा घोषित किया। मरगिया (मर्ग या मेर्व) का फाद स्वतत्र शासक बन गया। हुर्कानिया में भी स्वतत्र शासन घोषित किया गया था। दारयबहु के पिता विस्तास्प ने जुलाई ५१६ ई० पू० में हुर्कानिया को अपने पुत्र की ओर से जीता। उससे अगले साल दारयबहु के क्षत्रप दार्दशिश (जो कि बाख्तरी का क्षत्रप था) ने फ्राद को परास्त कर मर्गपर अधिकार किया। ५१२ ई० पू० तक दारयबहु के साम्राज्य की सीमा थी—उत्तर में कालासागर, काकेशस, कास्पियन और चीन की सीमा तक फैला शक प्रदेश, पूर्व में हफ्त-हिंदू (सप्त-सिंधु), पश्चिम में भूमध्यसागर और मिस्र की पश्चिमी सीमा, दक्षिण में अरब और अफ्रीका का सहरा।

एसिया और अफ्रीका में अपने राज्य का विस्तार करके दारयबहु को यूरोप में ग्रीस की ओर ध्यान देने को लिये मजबूर होना पडा। शायद उसे इधर ध्यान देने की अवश्यकता न पडती किंतु यूनानी राजनीति इसके लिये मजबूर कर रही थी। एसिया के तटपर बसे यूनानी उपनिवेश ईरान के अधीन थे। आपसी झगडो के कारण अथेंस गणराज्य के भगोडे इन बस्तियों में आकर शरण लेते थे। ईरान को उनके कारण एकका समर्थन करना था। उधर ईरानियोके विरोधी एसिया से भागे यूनानियो की अथेंस में पीठ ठोकी जा रही थी। ईरानी क्षत्रप इसे यूनान के क्षुद्र गणराज्य की भारी गुस्ताखी और अपमान समझता था। वस्तुत यूनान के साथ युद्ध की जिम्मेवारी शाहशाह की अपेक्षा उसके क्षत्रप पर अधिक थी। दारयबहु ग्रीस (यूरोप) को अवश्य अपने हाथ में

करना चाहता था। उसने थ्रेस पर आक्रमण किया। थ्रेसकी रक्षा के लिये उत्तर के लडाकू शको को दवाना आवश्यक था, जिसके लिये वह उनकी ओर वढ़ा। ५०८ ई० पू० में उसने दन्यूव नदी को पार कर शको के इलाके पर आक्रमण किया। ईरान की भारी सेना का वह डटकर मुकावला नही कर सकते थे, इसलिये अपनी जिन चीजो को वह साथ नही ले जा सकते थे, उन्हें फूक-जलाकर भीतर की ओर भागते गये। दारयवहु को इन भागते शको के ऊपर आक्रमण करके कोई लाभ नही हुआ। यह वही प्रदेश है, जिसे वहुत पीछे रूस कहा जाने लगा। घर-फूक युद्ध नीति रूसियो ने अपने पूर्वज इन्ही शको से सीखी। रूस की दुर्दम्य प्रकृति ने दारयोश के विजय को ही पराजय में नही परिणत कर दिया, वल्कि उसीने नवें चार्ल्स तथा नेपोलियन के विजय को भी घोर पराजय में परिणत किया। हिटलर की पराजय का आरभ भी उसी भूमि में हुआ, यद्यपि उसमे केवल-घर-फूक नीति ही नही, वल्कि रूसियो की अद्वितीय वीरता और युद्ध-कौशल का भी हाथ था। ५०६ ई० पू० में थ्रेस और मकदूनिया दारयवहु के करद राज्य थे।[1]

जैसा कि पहले वतलाया, यूनानियो की छेड-छाड के कारण दारयवहु को उनकी ओर ध्यान देना पडा। पहले ईरान को कुछ सफलता मिली। ४९४ ई० पू० में लेदके सामुद्रिक युद्ध मे यूनानी बुरी तरह से हारे। एसिया तट के यूनानी उपनिवेशो ने जो विद्रोह किया था, उसे भी दवा दिया गया। लेकिन मुख्य ग्रीस भूमि अपने पडोसी मकदूनिया की हालत को देखकर भी ईरान के सामने झुकने के लिये तैयार नही थी। ४९० ई० पू० में दारयवहु को उस ओर मुह फेरने के लिये मजवूर होना पडा। छोटी-मोटी लडाइयो का कोई निर्णयात्मक फल नही मिला। अत में सवसे वडी लडाई मराथोन में हुई, जिसमें ईरानी सेना हार गई। दारयवहु ने ४९० ई० पू० के वाद के अपने अंतिम पाच वर्षों को शासन और सुव्यवस्था में लगाया और ३६ साल के सुदीर्घ शासन के वाद अपने मरने के समय (४९५ ई० पू० में) उसने एक सुव्यवस्थित और समृद्ध साम्राज्य छोडा, यद्यपि इसका यह अथ नही, कि उसका सुफल सभी वर्गों और जातियों को समान मिला। दासो की दयनीय दशा के वारे में तो कुछ कहना ही नही—यह ऐसा समय था, जव कि विश्व के सभी सभ्य देशो में दासता की क्रूर प्रथा का अकटक राज्य था।

(१) शासन-व्यवस्था

दारयवहु को कुरव का महान् साम्राज्य प्राप्त हुआ था, जिसमें उसने भी वृद्धि की थी। सिंध से लेकर नील तट तक विस्तृत कुरवके साम्राज्य का प्रवध पहले से भी केन्द्रित रूप में होता चला आया था, इसलिये यह कहना मुश्किल है, कि शासन-व्यवस्था में कितनी नई वातें कुरवने कीं और कितना दारयवहु ने उसमें सुधार किया था। ईरानी साम्राज्य से पहले भी ववेरू और मिस्र के विशाल वहुजातिक राज्य मौजूद थे। इतने वडे राज्य के प्रवन्ध के लिये कितनी ही नई वातें अवश्य हुई होगी। दारयवहु ने शासन का नये ढग से केन्द्रीकरण किया। पहले के महाराज्यो में अधीन जातियो के ऊपर प्राय उन्ही में से वश-परपरा मे चला आता कोई राजा (शासक) वना दिया जाता था, जो केंद्रीय शक्ति के निवल होते ही स्वतत्र हो जाता था। दारयवहु ने खानदानी राजाओ को माडलिक वनाना पसद नही किया। उसने अपने क्षत्रप

[1] वही पृ० ६९७-७१०

नियुक्त किये, जो कि शाही या तत्सबधी खानदानों के होते थे और शाह की इच्छा रहने तक अपने पद पर स्थित रहते थे। क्षत्रप के हाथ में बहुत ज्यादा ताकत न हो जाय, इसलिये हर एक प्रदेश का सेनापति क्षत्रप से अलग होता था, जिसकी नियुक्ति भी शाह करता था। इन दोनो के अतिरिक्त एक राजामात्य शाह की आख था, जो कोश तथा दोनो के कामो को देखता रहता था। एक ही प्रात में तीन-तीन स्वतत्र अधिकारियो का रहना क्षत्रप को इस योग नही रहने देता था, कि वह केन्द्र के विरुद्ध स्वतत्र होने की हिम्मत करे। इनके ऊपर भी केन्द्र से समय समय पर शाही महामात्य घूमा करते थे, जिनके अधिकार बहुत अधिक होते थे। शिकायत ही नही, बल्कि वह स्वय प्रातीय पदाधिकारी को पदच्युत कर सकते थे। शाही हुकुम के आने पर तुरत क्षत्रप का शिर उतारा जा सकता था, यह पहले कह चुके है। भिन्न-भिन्न जातियो के धार्मिक अनुष्ठानो और रीति-रिवाजो में ईरानी शाह कोई दस्तदाजी नही करते थे। वह प्रियदर्शी अशोक की तरह हर पापड (धर्म) की मान्यताओ को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। बल्कि अशोक की उदारता से भी ईरानी सम्राट् आगे बढ़ अहुरमज्द के भक्त होते भी बबेरु (बाबुल) वालो को खुश करने के लिये उनके महान् देवता मर्दुकको भी देवातिदेव कहते और अपने अपार वैभव को मर्दुकका का प्रसाद बतलाते थे।

दारयवहु के समय सारा राज्य निम्न २३ प्रदेशो में बँटा था, जिनके शासक क्षत्रप कहे जाते थे[1] —

१ पर्शा—दक्षिणी ईरान अर्थात् आधुनिक फारसका सूबा,
२ ऊवजा (एलम)—इसीमें दारयवहु की एक राजधानी सूसा थी,
३ बबीरु (कलदान)—उत्तरी मसोपोतामिया,
४ अथुर (असिरिया)—जिसमें जगरोस पर्वत और खबुर (दजला) थे
५ अरबया—मसोपोतामिया का वह भाग जो कि खबुर और हुफरात (फुरात) के बीच में पडता है,
६ मुद्र (मिस्र)—नील उपत्यका,
७ सागरजन—जिसमें सिलिसिया और विशरिओत जैसे द्वीप थे,
८ यवुना (यवन)—इनमें युनियन, एवलियन और दोरियन आदि जातिया शामिल थी,
९ स्पर्दा—लिदिया और मुसिया आदि क्षुद्र-एसिया के प्रदेश,
१० मिदिया—हमदान के पास का प्रदेश, जो ईरानी जाति का सर्वप्रथम नेता बना,
११ अरमेनिया,
१२ कत्पतूक—क्षुद्र-एसिया का मध्य भाग तौरस आदि,
१३ पाथव—पार्थिया और हुर्कानिया,
१४ जरगिया,
१५ हरेयव (आर्य),

---

[1] Historic Ancienne (G Maspero) pp 704-5

१६ उवरज्मिया—ख्वारेज्म,
१७ वाख्त्रिया—वाह्लीक (वल्खका प्रदेश),
१८ सुग्दा—जरफशां-उपत्यका,
१९ गदार—पेशावर और तक्षशिला का प्रदेश,
२० शक—चीन की सीमा से काकेशस के उत्तर तक फैल। शकद्वीप
२१ सप्तगिद—थतगुस, हेलमन्द उपत्यका का ऊपरी भाग,
२२ ह्रउवती—(ग्रीक अर्खोशिया),
२३ मक—ओर्मुज्द के पास का प्रदेश

दारयवहु विश्वका पहला शासक है, जिसने राजा की मूर्ति (रूप) के साथ सिक्के चलाये। इससे पहले भिन्न-भिन्न चिन्हो से अकित धातु के टुकडे सिक्के की तरह चलते थे। मुद्राकला को पराकाष्टा तक ग्रीक राजाओं ने पहुचाया—चाहे सिकदर के सिक्को को ले लीजिये या ग्रीक-वाख्तरी राजाओके सिक्को को, सवमें ही वडी भावपूर्ण, सुन्दर वास्तविक आकृति मिलती है। मिनांदर आदि ग्रीक राजाओ ने भी अपने भारतीय राज्य के लिये रूपलाछित सुन्दर मुद्रायें चलाईं। शको और पार्थियो ने ग्रीक-सिक्को की नकल की। शको की नकल हमारे यहाँ गुप्तो और पीछे के राजवशों ने की। गुप्तकालीन मूर्तिकला और चित्रकला वहुत उन्नत थी, लेकिन जब हम उस समय के सिक्कोको ग्रीक सिक्कोसे तुलना करते है, तो वह बहुत दरिद्र मालूम होते हैं। इसका कारण हमारे यहाँ पोर्त्रेत चित्रकलाका अभाव है। दारयवहुका सोनेका सिक्का दरिक कहा जाता था, जिसपर हाथ में हथियार लिये राजाकी मूर्ति होती थी। दरिकका सोना विल्कुल खरा होता था। शुल्क या भूमिकरका हिसाव जहाँ दरिकमें होनेसे आसानी होती थी, वहा व्यापारमें भी इसके कारण वहुत सुभीता हुआ।

दारयवहुकी शासन-व्यवस्था इतनी अच्छी सावित हुई, कि उसकी वहुत सी वातोको सिकदर और उसके उत्तराधिकारियोने अपनाया। पश्चिमी एसियामें तो वह आदश व्यवस्था मानी गई। भारतका मौय साम्राज्य उसके वाद स्थापित हुआ, जिसके पहले नदोंका विशाल साम्राज्य स्थापित हो चुका था। उसने अपने केन्द्रीकृत शासनके लिये कितनी ही नई वातें वनाई होगी। ईरानी साम्राज्यके उत्तराधिकारी ग्रीक-राज्योसे सीधे सवध रखनेवाले मौय साम्राज्य ने यदि दारयवहुकी शासन-प्रणालीसे कुछ वातें ली हो, तो कोई आश्चर्य नही। शासनकी सुव्यवस्थाके लिए सचार और यातायानका अच्छा प्रवन्ध अनिवाय है। मौर्यकालमें पटनासे तक्षशिला, उज्जयिनी और दूसरे शासन या व्यापार-केंद्रोको राजपथ गये थे, जिनपर पाथशालाये तथा छायादार वृक्ष भी लगे हुए थे। सवसे पहले यह व्यवस्था वडे विस्तृत रूपमें दारयवहुने की। उसके राजपथ राजधानी पर्शूपुरी (पर्सेपोलि) से मकदूनिया, मिस्र, भारत और मध्य-एसिया तक गये हुए थे, जिनमें डाकके घोडे वरावर तैनात रहते थे। साधारण जनताको चाहे इस डाक-व्यवस्थामे लाभ न हो, किंतु केन्द्रको राज्यके भिन्न-भिन्न भागोंमें क्या हो रहा है, इसका समाचार वहुत जल्द लग जाता था। ग्रीक लेखक वतलाते हैं, कि राजपथमें यातायातका वहुत सुभीता था, २५ किलोमीतर (चार योजन) पर अतिथिशालायें थीं, जहाँ ठहरनेका इतिजाम था।

२ धर्म[1]

ईरानी शाह मज्दयस्नी अर्थात् भगवान् अहुरमज्दको माननेवाले थे। जर्थुस्त्रको कोई-कोई विद्वान् ६६० ई० पू० अर्थात् बुद्धसे प्राय १०० वर्षपूर्व काकेशसके आजुरवाइजान प्रदेशमे पैदा हुआ मानते हैं और कुछ विद्वानोका मत है कि दारयवहुका पिता विस्तास्प जर्थुस्त्रका सरक्षक और अनुयायी था। ऐसा होनेपर वह और बुद्ध समकालीन हो जाते है। जर्थुस्त्रसे पहलेके ईरानी धर्ममें क्या-क्या विशेषतायें थी और उनमेंसे किन-किन बातोको जर्थुस्त्रने छोड दिया, इसे बतलाना मुश्किल है। इतना तो कहा जा सकता है कि जर्थुस्त्रके सुधारके पहले का ईरानी धर्म, और उसके क्रियाकलाप ऋग्वेदिक धर्मके बहुत समीप थे। सारे शतम्-वंशमें ही नही, बल्कि हिंदू-यूरोपीय वाङ्मयमें 'देव' शब्द अच्छे अर्थोमे प्रयुक्त होता रहा। उसको राक्षसका पर्यायवाची बनाना जर्थुस्त्रका काम था। कितने ही अशोमें फर्क रखते हुए भी यज्ञ, सोम आदि कर्मकाडोमे मज्दयस्नी और वैदिक धर्ममें समानता थी। अहुरमज्द और अग्रमेन्यू (अह्लेमान) के नामसे येहोवा और शैतानकी तरहके भलाई और बुराईके दो स्रोतोकी कल्पना शायद जर्थुस्त्रने यहूदियोसे ली। जर्थुस्त्रके उपदेश पहले बहुत रहे होंगे, लेकिन उनमेंसे थोडी सी गाथाये ही आजकल अवेस्तामें मिलती है। सामीय पैगबरोकी तरह जर्थुस्त्रका भी दावा था, कि अहुरमज्दाने मुझे लोगोका पथ-प्रदर्शक बनाकर भेजा है। जहा जर्थुस्त्रके (पार्सी) धर्मकी कुछ बातें सामीय धर्मसे मिलती है, वहा उसकी मुख्य शिक्षा हुमत (सुमत), हुख्त (सूक्त) और हुर्स्त (सुकृत) सम्यग ज्ञान, सम्यग्-वचन और सम्यक् कर्म अथवा मनसावाचा, कर्मणा सत्य पर कायम रहना पुरानी परपराको ही बतलाती है। कहते हैं, जर्थुस्त्र को अपनी जन्मभूमि (आजुरबाइजान) मे धर्मप्रचारमें सफलता नही मिली, तब वह पूर्वी ईरानके खुरासान प्रदेशमें चले गये, जहाँका राजा या क्षत्रप उस समय विस्तास्प (शाहनामाका गुस्तास्प) नये धर्ममें दीक्षित हुआ।

शाह, क्षत्रप, राजकर्मचारी और पुरोहित ये सब आरामका जीवन बिताते थे। साहित्य और कलाका आनद वही ले सकते थे। साधारण जनता दास और कर्मकरके तौरपर पशुवत् जीनेका अधिकार रखती थी। दासताका तो उस वक्त सारे सभ्य जगत्में अखड राज्य था।

३ क्षयार्श[2] (४८५-४६६ ई० पू०)

दारयवहुकी मृत्युके बाद उसका पुत्र क्षयार्श प्रथमने १९ वर्षो तक राज्य किया। वह अपने सुदर रूप और सुपुष्ट शरीरके लिये बहुत प्रसिद्ध और प्रशसित था, किंतु उसमें अपने पिता जैसी प्रतिभा और योग्यता न थी। तो भी उसकी महत्वाकाक्षा पितासे कम न थी। पिताने ग्रीक लोगोसे पराजय प्राप्त की थी। क्षयार्श चाहता था कि उस कलकको धो दिया जाय। वह उसके लिये तैयारी करने लगा। ग्रीसपर आक्रमण करनेसे पहले मिस्रमें बगावत हो गई और क्षयार्श उसे दबानेके लिये स्वय वहाँ गया। उसकी दबा देनेके बाद ४८१ ई० पू० में उसने ग्रीसपर अभियान किया। कहते हैं, इस अभियानमें १२०० जगी जहाज तथा २३,१०,००० सैनिक (१७,००,००० पैदल १,००,

---

[1] हिस्तोरिया (स्त्रूवे) पृ० ३८४-४५

[2] Histoire Ancienne (G Maspero) pp 721

०००सवार बाकी नौसैनिक) थे। युरोपके भिन्न-भिन्न भागोसे जो सहायता मिली थी, उसे शामिलकर लेने पर सेना-सख्या ५० लाख पहुँच जाती है। उस समय तक दुनियामें इतनी बडी सेना किसी अभियान में नहीं शामिल हुई। इतनी बडी सेना को रसद-पानी पहुँचाना और सचालन करना आसान काम नही था। जरूरतसे अधिक सेना भी अपनी कमण्यताको खो देती है, यह इस युद्धमे पता लगा। ग्रीस जातिने भी ईरानके आक्रमणको अपने जन्म-मरणका सवाल समझा और मुकावला करनेके लिये सारी हेलेनिक (ग्रीक) जाति एक हो गई। अथेसवालोने जाना, हम अपने नगरकी रक्षा नही कर सकते, इसलिये उन्होने अपने वाल-बच्चोको दूसरी जगह भेज दिया और वह स्वय भी नगरको खाली कर गये। शाही सेनाको मकदूनिया और थेसेली होकर गुजरनेमें कही वाधा नही हुई। उत्तर और मध्य ग्रीसके सभी हेलेनिक राज्योने पहली ही मुठभेडमें ईरानकी अधीनता स्वीकार कर ली। थर्मापोलीमें पहला जवदस्त सघप हुआ, जिसमें ग्रीक योद्धाओने अपनी वीरताका अद्भुत परिचय दिया। ईरानी इस रास्ते पहाडी घाटीको पार कर नही बढ सके। लेकिन उन्हें दूसरे रास्तेका पता लग गया और वह उधरसे आगे वढ़ गये। कितने ही छोटे मोटे युद्धोम यूनानियोको परास्त करते हुए ईरानी सेनाने अतमें अर्थेमको विजय कर लिया। अथेसके काष्ठ प्राकार और उसकी मुट्ठी भर सेना ईरानियोका क्या मुकावला कर सकती थी? अत्तिका और अर्थेसके विजयसे शाहने समक्ष लिया कि अतिम विजय उसके हाथमें आना ही चाहती है, किंतु अथमवालोने हथियार नही रखा। वह सलामी द्वीपमें लडनेके लिये तैयार वैठे थे। अतिम निर्णय सामुद्रिक युद्धम होनेवाला था। सलामीकी तग खाडीमें दोनो पक्षोका युद्ध हुआ। यहाँ जगह वहुत कम थी, जिसमें ईरानके भारी भरकम सैनिक पोत फुर्तीसे काम नही कर सकते थे। यूनानी युद्धपोत हल्के और फुर्तीले थे। दिन भरकी लडाईमें ईरानके २०० जहाज डुवा दिये गये। ईरानियोको विजयकी आशा नही रह गई। यूनानी शकित हृदयसे सबेरे के वक्त आक्रमणकी प्रतीक्षा कर रहे थे, किंतु देखा, समुद्रमें शत्रुका एक भी पोत नही है। क्षयाश खुद विजयका मुख देखे विना लौट गया। लेकिन अभी उसने आशा नही छोडी थी, और अपने सेनापति मर्दोनियमको ग्रीस-विजयका भार सौंपा था। मर्दोनियसको एक दो सफलतायें मिली, जिनमें अर्थेस पर फिर एक वार ईरानी ध्वजाका गडना था, किंतु वह स्थायी नही रही। अतमें पलातियाके मैदानमें ग्रीक सेनाने ईरानी सेनाको वहुत बूरी तरह परास्त किया। मर्दोनियसको मरा देखकर शाही सेनामें भगदड मच गई।

इस असफलताके वाद १३ वर्ष और क्षयार्श जीता रहा, किंतु उसका वह जीवन बहुत ही जघन्य और विलासितापूर्ण था। अतमें अपने महाप्रतिहार (शरीर-रक्षक अफसर) के हाथो उसे अपना प्राण खोना पडा। क्षयाशके वाद और आठ अखामनी शाहशाह हुए, जिन्होने जैसे-तैसे नील तट तक फैले साम्राज्यको कायम रखनेकी कोशिश की। अखामनी शाहशाहोके नाम और काल निम्न प्रकार है —

१७. दारयवहुका पारसीक साम्राज्य (४८५ ई० पू०)

१ कुरष ५५०-५२९ ई० पू०
२ कम्बुज ५२९-५२१ ई० पू०
३ गौमाता ५२१
४ दारयवहु (१) ५२१-४८५ ई० पू०
५ क्षयार्श (१) ४८५-४६६ ई० पू०
६ अर्तक्षथ्र (१) ४६६-४२५ ई० पू०
७ क्षयाश (२) ४२५-४२४ ई० पू०
८
९ दारयवहु (२) ४२४-४०५ ई० पू०
१० अर्तक्षथ्र (२) ४०५-३५९ ई० पू०
११ अर्तक्षथ्र (३) ३५९-३३३ ई० पू०
१२
१३ दारयवहु (३) ३३३-३३० ई० पू०

यद्यपि क्षयार्श (१) के बाद ही से आखामनी साम्राज्यकी वृद्धि रुक गई, किंतु अलिकसुन्दर से पहले उसका कोई सबल प्रतिद्वदी नही हुआ। अतक्षथ्र (२) के समय (४०५-३५९ ई० पू०) मिस्रमें विद्रोह हुआ। ईरानके प्रतिद्वद्वी ग्रीक मिस्रका समर्थन कर रहे थे, किंतु आपसी विरोधके कारण उतनी मदद नही कर सकते थे। मिस्रको दवना पडा, । अतक्षथ्र (३) (३५९-३३३ ई० पू०) ने राजवशके सभी राजकुमारोको मरवा डाला। इसके समय फिर मिस्रने स्पार्ता और अथेंसकी मददसे ईरानी जूयेको उतार फेंकना चाहा, किंतु फिर उसे दवना पडा। ईरानी शासन-केंद्रके एक छोरपर अवस्थित इस प्राचीन देशको यदि अभी भी ईरान दवा सकता था, तो सोग्दके भी ईरानी शासनसे स्वतत्र होने की आशा नही करनी चाहिये, क्योंकि वह जातित ईरानी था। समवत गधार भी ईरानकी परतत्रता किसी न किसी रूपमें स्वीकार करता रहा। ख्वारेज्म के लडाके अर्ध-घुमन्तू कग ईरानकी शक्ति क्षीण होते ही स्वतत्र हो गये—यही ममागेतोंके वशज अव ख्वारेज्मके निवासी थे।

४ दारयवहु (३) (३३३-३३० ई० पू०)

यह अखामनी वशका अतिम और १३ वा शाह था। कुलवध होते होते कुलोच्छेद सा हो गय था, जब कि इसे गद्दीपर वैठाया गया। इसे वीर और उदार वतलाया जाता है, लेकिन सवा दो सौ वर्षोंके पुराने राजवशम वहुत सी खरावियां आ गई थी। शासनयत्रमें ताजगी नही रह गई थी, उसके पुर्जे इतने निकम्मे हो गये थे, कि दारयवहुकी वीरता और उदारता वहुत मदद नही कर सकती थी और उसका मुकाबिला भी हुआ विजयी अलिकसुदर से।

५ अलिकसुदर (३३६-३२३ ई० पू०)

दारयवहु (१) ने थ्रेस आर मकदूनिया जीत लिया था, यह हम पहले कह आये हैं। मकदूनिया कुछ समय पीछे तक ईरानी साम्राज्यका सग रहा, किंतु ग्रीक के अभियानमें जो करारी

हार खानी पडी, उससे मकदूनियाको हाथमें रखना सभव नही हो सका। ३५६ ई० पू० में जब कि अर्तक्षत्र (३) भारी कुलबधके बाद गद्दीपर बैठा, मकदूनियाका राजमुकुट फिलिपके शिरपर रक्खा गया। बडे ही योग्य सेनानायक और अच्छा शासक होने के साथ ही वह बहुत महत्वाकाक्षी भी था। उसने राज्यशासन और सेना-सगठनमें ग्रीस और ईरान दोनोसे बहुत सी बातें सीखी। यद्यपि मकदूनीय भी ग्रीस जाति ही के थे, लेकिन अथेंस और स्पार्तावाले अपने इन उत्तरी भाइयोको बर्बर और असभ्य समझते थे। फिलिपका २३ वर्षका शासन भारी तैयारीका था। ३३६ ई० में घरेलू झगडेके कारण उसे प्राणोसे हाथ धोना पडा, नही तो दो वर्ष बाद उसके पुत्रका ईरानपर महाभियान शायद पिता ही द्वारा होता। अथेंसको जीतते समय उसने ऐसे राजनीतिक कौशलका परिचय दिया, कि अभिमानी अथेनीय उसे हेलेनिक वीर मान उसके सहायक बन गये। अथेंस के महान विचारक अरिस्तातलको अपने साथ ला उसे उसने अपने पुत्र अलिकसुन्दरका शिक्षक बना दिया। ३३६ ई० पू० में पिताके मरनेके बाद २० वषकी उम्रमें अलिकसुन्दर मकदूनियाकी गद्दीपर बैठा। इस छोटी उम्रमें भी वह दो युद्धोमें वीरता दिखा चुका था। ईरानी ढगपर शिक्षित घुडसवार सेना और अथेंसके ढगपर शिक्षित पैदल सेना बापके दायभागमें उसे मिली थी।

पिताके बाद उसके उत्तर और दक्षिणके पडोसी शिर उठाने लगे, जिसके कारण अलिकसुन्दरको दो वर्ष तक उन्हें दबानेमें लगा रहना पडा और ३३४ ई० पू० में ही वह अपने महान् दिग्विजयके लिये प्रस्थान कर सका[1]। उसका लक्ष्य ईरानी साम्राज्य था, जो सिंध तक फैला हुआ था। अलिकसुन्दरकी सारी विजितभूमिको देखनेसे मालूम होगा, कि पजाबमें थोडासा आगे बढने की बात छोडकर, उसने केवल ईरानी साम्राज्यको ही ग्रीक-साम्राज्यमें परिणत किया, इसलिये उसे कुरुव और दारयबहुसे भारी विजेता नही कहा जा सकता। हा, यदि ईरानी साम्राज्यके जन-धनसे मुकाबिला किया जाय, तो प्रस्थानके समय वह ईरानके सामने कुछ नही था। एसियाके सारे यूनानी ईरानके साथ थे। ईरानका समुद्री बेडा भी बहुत विशाल और सुदृढ़ था। यद्यपि भीतरी कमजोरियोंके कारण ईरानको हारना पडा, किंतु ईरानी सेना जिस बहादुरीके साथ लडी, उससे उसकी प्रशसा उसके शत्रु भी करते थे। ईरानकी सबसे बडी गलती यह थी, कि उसने अलिकसुन्दरके एसियामें घुसनेके समय ही मुकाबला नही किया। वह बिना रोकटोक समुद्र पार हो एसियाकी भूमिमें आ गया। प्रस्थानके समय अलिकसुन्दरके पास ३०,००० पैदल और ५००० सवार सेना थीं। ईरानने पहली लडाई ग्रनिकुसके तटपर की। ईरानी सेनाका सेनापति तथा शाहका दामाद मिथ्रदात अलिकसुन्दरके हाथों मारा गया। ईरानी सेनामें भगदड मच गई। पहली ही हारसे शाही सेनाकी हिम्मत इतनी टूट गई, कि सारे क्षुद्र-एसियामें अलिकसुन्दरको सगठित सघर्षका मुकाबला नही करना पडा। देशको उसके कायर क्षत्रपने बिना विरोधके अपण कर दिया। दारयवहुने जो तीन तीन प्रकारके अधिकारी क्षत्रप, सेनापति और राजामात्य हर प्रदेश में नियुक्त किये थे, केंद्रीय शासनके निर्बल होते ही बाकियोंको हटाकर क्षत्रपोने दूसरे दोनो पद भी अपने हाथमें कर लिये। क्षत्रपके निर्बल होनेपर कोई दूसरा बचावका सहारा नही रह गया था। ईरानी साम्राज्यके प्रदेशोको जीतनेके साथ अलिकसुन्दरके सामने भी शासनकी समस्या आई। उसने तीनकी जगह हर प्रदेशमें सैनिक और नागरिक दो प्रधानअधिकारी नियुक्त किये,साथ ही हर जगह सैनिकछावनियाँ

---

[1] वही पृ० ७५६-६१

कायम की, जिनमेंमे कितने ही उसीके नामपर अलिकसन्दरिया (अलसन्दा) नामसे विख्यात हुई। दिग्विजयका पहला साल अलिकसुन्दरने भूमध्यसागर-तटवर्ती प्रदेशोंको जीतने तथा क्षुद्र-एसियाको अकटक बनानेमे लगाया। वह जानता था, अभी ईरानकी असली शक्तिसे मुकाबला नही हुआ है, इसलिये पृष्ठभूमिको मजबूत करके ही आगे बढ़ना उचित है। ३३३ ई० पू० में वह फिर आगे चला। दारयवहु (३) छ लाख सेनाके साथ इसुसमे उससे लडनेके लिये तैयार था। युद्ध-क्षेत्र छ लाख सेनाके लडनेके लिये पर्याप्त नही था, जिसके कारण ईरानी अपने सख्या बलका लाभ न उठा घाटेमें रहे। इसुसका युद्ध अलिकसुन्दरके लिये निर्णायक साबित हुआ। दोनों ओरकी सेनाओमे भीषण सघर्ष हो रहा था। अभी यह नही कहा जा सकता था कि जीत किसकी होगी, इसी समय दारयवहु भयभीत हो युद्ध-क्षेत्रसे भगा। उसे भागते देख सेनाकी हिम्मत टूट गई और चारो तरफ भगदड मच गई। ग्रीक सेनाने भगोडोंके साथ जरा भी दया-माया नही दिखलाई। इस लडाईमें एक लाख ईरानी सैनिक काम आये। युद्ध-क्षेत्रमें भी अपनी शानके साथ ही ईरानका शाह जा सकता था। उसके साथ रनिवास और नौकर-चाकरोकी भारी पलटन रहती थी। भागते वक्त शाहको इतना होश-हवास कहाँ था, कि अपने रनिवासको साथ ले जाता। यवनोको दारयवहुके सारे हरमके साथ शाही खजाना भी हाथ लगा। अलिकसुन्दरने रनिवासके साथ बडा ही सहानुभूतिपूर्ण वर्ताव किया।

अलिकसुन्दरने इस विजयके बाद मिस्र और पश्चिमी एसियाके दूसरे प्रदेशोको विजय करके आगे कदम बढ़ाया। अरबेला (ममोपोतामिया) में दारयवहुने फिर एकबार मुकाबला करना चाहा। यहाँ उसके साथ दस लाखसे ऊपर सेना थी। यहाँ भी निपटारा होनेसे पहले ही दारयवहु भाग खडा हुआ। उसे जमकर लडनेकी फिर कभी हिम्मत नही हुई। अलिकसुन्दरने दो दिन उसका पीछा किया, किंतु उसे पकड नही सका। स्थान-स्थानपर अच्छी तरह नागरिक और सैनिक व्यवस्था करते वह राजधानी सूसामें दाखिल हुआ, जहा उसे शाही खजाना हाथ लगा। आगे अब ईरानके गर्भमें उसने प्रवेश किया। पहाडी इलाके के दर्रों और सकरे मार्गोमें ईरानियोंने थोडा बहुत मुकाबिला किया, किंतु अब ग्रीकोंकी चारों ओर धाक जम गई थी। अपने दिग्विजयके चौथे साल (३३० ई० पू०) अलिकसुन्दर मुख्य राजधानी पर्शुपुरी (परसेपोलि) में दाखिल हुआ। यहाँ उसे अकूत खजाना हाथ लगा, जिसके ढोनेके लिये दस हजार खच्चर-गाडियो और पाँच हजार ऊँटोकी जरूरत पडी। विजय मदोमत्त अलिकसुन्दरने राजधानीमे कत्लआम जारी कर दिया। दारयवहु (१) के बनाये विशाल स्तम्भोवाले भव्य प्रासाद तथा दूसरी इमारते जलने लगी। क्षणभरमें वह वैभवपुरी अपनी अद्भुत कलाकृतियोके साथ भस्मावशेष रह गई। पर्शुपुरीका यह निष्ठुर ध्वस बतलाता है कि मकदूनिया सचमुच ही अभी बबर युगसे आगे नही बढी थी। इस नृशसताके ऊपर टिप्पणी करते हुए एक पश्चिमी इतिहासकारने लिखा है "जो कलाके विरुद्ध युद्ध करता है, वह कुछ राष्ट्रोके विरुद्ध ही नही, बल्कि सारी मानवताके विरुद्ध युद्ध करता है।"

अलिकसुन्दरको मालूम हुआ, कि दारयवहु हयतान (हम्दान) में युद्धकी तैयारी कर रहा है। वह तुरत उधर दौड पडा। दारयवहु अपनी जान बचाता इधरसे उधर भागने लगा। अलिकसुन्दर जानता था, कि जब तक अखामनी शाह जिन्दा है, तब तक खतरा दूर नही होगा। शाह के मध्य-एसियाकी ओर भागनेका पता पाकर वह उस ओर बढा। दमगानके पास रास्तेमें।

दारयवहुकी परित्यक्त ताजी लाश मिली। अलिकसुन्दरने शवको बड़े सत्कारके साथ पर्शुपुरीमें दफनाया, दारयबहुकी कन्या रोक्सानासे विवाह किया, जिससे एक पुत्र भी हुआ, किंतु जीते हुए देशोको भोगनेका भाग्य उसके सेनापतियोके सतानोको प्राप्त हुआ।

स्रोत ग्रथ

1 Persia (P M Sykes, 2 vols)

2 Histoire ancienne de peuples de l' Orient 3 vols (G Maspero Paris 1905)

3 The Ancient History of Near East (H Hall, 1936)

4 Cambridge Ancient History (1928)

5 Histoire de l' Orient, 2 vols (A Moret)

६ इस्तोरिया व् द्रेव्यानि फिनगाख हेरोदोतस, अनुवादक फ० मिश्रेंको I, II (1885-1856), G Rawlinson· Herodotus,

7 Ancient Empires of the East (P M Syckes)

8 The Five great Monarchies (G Rawlinson)

9 Eranische Alterthumskunde (Spiegel on the rock at Behistun)

10 Inscription of Darius, (H Rawlinson,)

11 Le Peuple et la langue de Medes (Oppert)

अध्याय २

कंग[१] (ई० पू० ५वीं शती—ई० १ली शती)

अलिकसुन्दरके मध्य-एसिया विजय और वहाके ग्रीक शासनके बारेमें कहनेके पहले ख्वारेज्म पर एक दृष्टि डालनेकी आवश्यकता होगी। कुरव और दारयवहुके समय (५५०-४८५ ई० पू०) वहाँ मसागेत (महाशक) रहते थे, यह हम पहले कह आये है। यद्यपि सिर(एवसत) दरिया, अराल समुद्र और कास्पियन समुद्र एक स्वाभाविक सीमा है, जिसके दक्षिण मध्य-एसियाका दक्षिणापथ है। लेकिन इस दक्षिणापथके पश्चिमी भागको भी रेगिस्तान ने स्वतत्र प्राकृतिक प्रदेशका रूप दे दिया है। ख्वारेज्मके उत्तर तरफ सिरदरिया और अराल समुद्र प्राकृतिक सीमा हैं। उसके पूरबमें किजिलकुम (रक्तमरु) का महान् रेगिस्तान है, जो शत्रुके लिये किसी दुरारोह पर्वत-शृखलासे कम कठिन नही है। ख्वारेज्मको दक्षिणमें कराकुम (कृष्ण मरु) मर्ग (मेव) प्रदेशसे अलग करता है। यद्यपि दक्षिणकी ओरसे वक्षु (आमूदरिया) ख्वारेज्ममें प्रवेश करती है, और जोही इसकी समृद्धिका कारण भी है, किंतु एक जगह नदीके दोनो किनारोपर पहाड और रेगिस्तानके कारण मार्ग इतना सकरा हो जाता है, कि वहा शत्रुको आसानीसे रोका जा सकता है। इस प्रकार ख्वारेज्म राजनीतिक तौरसे ही नही वल्कि प्राकृतिक तौरसे भी एक अलग इकाई है, जिसे हम इसी रूपमें कुरवके राज्यारभसे पहले भी पाते है। वहुत कम अपवादोके साथ वह सोवियत क्रातिके समय (१९१७ ई०) तक अपनी अलग सत्ता को कायम रक्खे रहा। आज वह उज्वेकिस्तान गणराज्यका एक भाग है।

१ केल्तमीनार सस्कृति (ई० पू० ४-३ सहस्राब्दी)

यदि हम ख्वारेज्मके पुराने इतिहासपर एक वार फिर दृष्टि डालें, तो नवपापाण और अनवपापाण युग (ई० पू० चौथी और तृतीय सहस्राव्दी) में यहाँ एक सस्कृतिको पाते हैं, जिसे सोवियत इतिहासवेत्ताओने 'केल्त मीनार' सस्कृति नाम दिया है। केल्त मीनार निम्न वक्षु नदीसे उत्तरकी ओर जानेवाली पुरानी नहरोमेंसे एक है, जिसके नाम पर इस सस्कृतिका नाम पडा। आजकल किजिलकुम (लाल रेगिस्तान) में इमी परित्यक्त नहरके उत्तरमे 'जाँवासकला' का ध्वसावशेप है, जहाँ नवपापाणयुगीन पापाणास्त्र और मिट्टीके वर्तन मिले हैं। पुरातात्विक वस्तुओसे तुलना करने के वाद सोवियत पुरातत्त्वज्ञ इस परिणामपर पहुँचे हैं, कि उस काल में जो सस्कृति यहाँ पर थी, उसके अन्दर दक्षिणी उराल, सिरदरियासे पूर्वी तुर्किस्तान मे लेकर

---

[१] "नोविये मतेरियली पो इस्तोरिइ कुल्तुरि द्रेव्नओ खोरेज्मा" (स० प० तास्तोफ) वस्तुनिक द्रेव्नेइ इस्तोरिइ १९४६ (१) पृ० ६०-१००

दक्षिण में हिन्द महासागरके तट तक अेक ही प्रकारकी संस्कृति मौजूद थी। भाषाके विचारसे मुण्डा-द्रविड भाषा जहाँ एक ओर इस संस्कृतिवाले लोगोकी भाषा रही, वहाँ दूसरी ओर उइगुर भाषाकी मातृस्थानीया प्राचीन बोली बोली जाती रही।
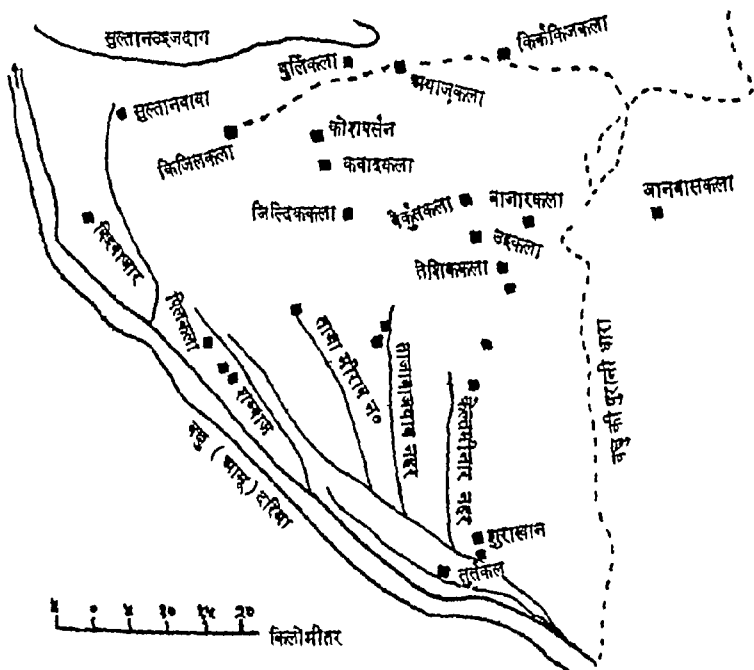
१८ ख्वारेज्म मरुभूमि की पुरानी संस्कृतियाँ

२ ताजाबागयाब संस्कृति (ई० पू० २ सहस्राब्दी)

द्रविड या केल्तमीनार संस्कृतिके बाद ई० पू० दूसरी सहस्राब्दी में ख्वारेज्ममें उसका स्थान एक दूसरी संस्कृति लेती है, जो उसी नामकी एक परित्यक्त नहरके पास होनेके कारण ताजाबागयाब संस्कृति कही जाती है। यह संस्कृति उसी तरह अपने पहलेकी द्रविड संस्कृतिका स्थान लेती है, जैसे सिंधु-उपत्यकामें पुरानी संस्कृतिवालों का स्थान आर्य लेते है। अेक तरह कहा जा सकता है, कि द्रविड संस्कृतिका स्थान-विनिमय पहलेपहल ख्वारेज्मकी भूमिमें आर्यो ने किया था। केवल हिंदू-आर्य और ईरानी-आर्य यही दो जातिया अपनेको आर्य कहती हैं, शक अपने लिये आर्य शब्द का प्रयोग करते थे, इसका कोई प्रमाण नही मिलता। हो सकता है, ख्वारेज्ममें शक नही उनके भाईबंध आर्य ही द्रविडोका स्थान लेनेमें सफल हुए हों। पुरातात्त्विक अवशेषों की तुलना करनेसे पता लगा है, कि ताजाबागयाब संस्कृति ताम्रयुगकी अंद्रोनोफ संस्कृतिसे घनिष्ठ संबंध रखती थी, जो कि सिबेरियाके दक्षिणमें वोल्गासे अल्ताई तक फैली हुई थी। इस संस्कृतिके लोग

कुछकुछ आदिम कृषि भी जानते तथा, अधिकतर नदीके किनारे रहते और ताबे के हथियारो का प्रयोग करते थे। मध्य-ऐसियामें आया यह पहला हिंदू-युरोपियन जन था। जिस वक्त यह लोग ख्वारेज्ममें रहते थे, उस वक्त कराकुम रेगिस्तानके पार दक्षिणमें अनौकी सस्कृति मौजूद थी। इसके लोग शिकारी, मछुवाही और कुछ आदिम ढग की खेती करते थे। शायद उनका सबध ताजाबा गयाब सस्कृतिके लोगोसे न होकर भमध्यसागरीय जातियो अर्थात् केल्तमीनारसे अधिक था, जब कि ताजाबागयाब सस्कृतिके लोगोंका सबध पूर्वी यूरोप में थ्रेस और किमेरी तथा क्षुद्रएसियामें हित्ताइत जातिसे था।

३ ताजामीराबाद सस्कृति (ई० पू० १ सहस्राब्दी)

ताजामीराबादकी परित्यक्त नहरके उत्तरमें जांबास-कला मे इस सस्कृतिके अवशेष मिले है। पहले लोगोंके बारेमें हम नही कह सकते, कि वह शकोंसे सबध रखते थे या आर्यों से, किंतु ताजामीराबाद सस्कृतिके लोगोका सबध शकोसे था। इनकी सताने आगे आलान और फिर ओसेतीके नामसे प्रसिद्ध हुई। ओसेती जाति आज भी अपनी भाषाके साथ काकेशसकी एक घाटीमें मौजूद है। ताजामीराबाद सस्कृति भी ताम्रयुगकी सस्कृति थी। यह लोग मिट्टीकी दीवारोवाले लबे घरोंमें रहते और आजीविकामें ताजाबागयाब सस्कृतिसे बहुत ज्यादा आगे नही बढ़े थे।

४ आदिम कग (७००-५५० ई० पू०)

ई० पू० प्रथम सहस्राब्दीके प्रथम पादसे जब द्वितीय पादमें हम बढते हैं, तो ख्वारेज्मकी भूमिमें नहरोका एक जाल सा बिछा देखते हैं—यह नहरोका युग था। छोटी-छोटी इकाइयोंमें बँटे कबीले ऐसी प्रगति नही कर सकते थे। ५५० ई० पू० में कुरव अखामनी साम्राज्य कायम करने में सफल हुआ, लेकिन दो दशाब्दियो बाद उसे यहाके मसागेतोको पराजित करने में आधिक ही सफलता मिली और आगे भी शताब्दीसे अधिक अखामनी शासनको कगोने नही माना। नहरोके युगके प्रवर्तक कगोके पूवज मसागत (प्राचीन कग) ही रहे होगे। ई० पू० ७वी सदीमें उनका केंद्रीय शासन स्थापित हो चुका था। नहरोके युगमें बहुत से नगर बसे थे, जो कि आजकल किजिलकुमकी मरुभूमिके पेटमें पडे हुए है। केल्तमीनारसे उत्तर कुमबसनकला, तेशककिला, बेकुतकला और उइकला, तथा ताजाबागयाब के उत्तरमें उलूलीगुलदरमुन, किचिकगुलदरसुन, नारीजानबाबा भी उसी कालके नगरोके ध्वस है। जान पडता है, ताजाबागयाब नहरका पानी जिलिदककला तक जाके खतम होता था।

पिछले १३-१४ वर्षोंसे लगातार सोवियतके पुरातात्विक अभियान हर साल किजिलकुमके ध्वसावशेषोकी जाँच-पडताल कर रहे ह। वहा बहुत भी महत्वपूण सामग्री प्राप्त हुई हैं, लेकिन इसे अभी खोजका आरभ ही समझना चाहिए।

५ कग (५-१ सदी ई० पू०)

कुरवकी विजय ख्वारेज्मपर स्थायी नही हुई थी। वह यदि राजनीतिक विजय न भी हो, तो भी अखामनी युगकी ईरानी सस्कृतिकी विजय तो अवश्य हुई। यदि मोग्द किसी न किसी

रूपमें अलिकसुन्दरके मध्यऐसिया-विजय तक अखामनी साम्राज्यका अग था, तो ख्वारेज्म ईरानके सास्कृतिक साम्राज्यका भी अग अवश्य रहा। ई० पू० चौथी सदीके आरभमे उवारेज्म (ख्वारेज्म) के कग स्वतंत्र हो गए, और कितने ही समय तक दुर्बल अखामनी साम्राज्यके प्रदेश पार्थिया (मेवसे कास्पियन तक), आरियन (हिरात प्रदेश) और सोग्द कगोके लूटमारके क्षेत्र बने रहे। आगे जब अखामनी साम्राज्यको अलिकसुन्दरने नष्ट करके विशाल यवन-राज्यकी स्थापना की, और बाख्त्रियाको लेते हुए सोग्दपर अपनी विजय-ध्वजा गाडनी चाही, तो अपने वीर नेता स्पिता-माके नेतृत्वमें सोग्दियोने ग्रीकोके साथ सघर्ष किया। उस समय कग उनके सहायक थे। ख्वारेज्म यवन-साम्राज्यके विरोधियोका केन्द्र अलिकसुन्दरके समय ही नही रहा, बल्कि उसके उत्तरा-धिकारियो सेलूकियो और ग्रीक-बाख्त्रियोके साथ भी कगोका सघर्ष बराबर जारी रहा। इन्हींके नेतृत्व और सहायतासे ई० पू० तृतीय शताब्दीके मध्यमें शकोके एक जन पार्थियोको आगे बढनेका मौका मिला। १६० ई० पू० के आसपास तो कग इतने दृढ हो गये थे, कि उन्होने सोग्दसे बाख्त्रिया-का प्रभाव हटा दिया। लेकिन उनकी सफलता देर तक नही रही, क्योकि थोडे ही समय बाद यूची शक अपनी जन्मभूमिसे भागते हुए इस ओर आये। यूची सैलाबमें सोग्द और बाख्त्रिया बह गये और १३० ई० पू० के बाद हम ग्रीको-बाख्त्री राज्यका पता नही पाते। इस कालमें ख्वारेज्म स्वतंत्र रहा। कग भी उसी तरह शकोकी एक शाखा थे, जैसे कि यूची और पार्थिय। साथ ही उनपर विजय प्राप्त करना आसान काम नही था, इसलिए ई० पू० प्रथम शताब्दीके अन्त तक वह स्वच्छन्द बने रहे।

कग-कुषाण (ई० १-३ सदी)

ईसाकी प्रथम शताब्दीके आरम्भमे कुषाणोने अपने भाई-बधु यूचियोके राज्यको ले जहाँ पूरबमे पजाबसे पूर्वी भारत तक अपना राज्य विस्तार किया, वहाँ पश्चिममें वह कगोको लेते हुए अराल समुद्र तक पहुँच गये। इस समय ख्वारेजमकी समृद्धि अक्षुण्ण रही, यह उस कालकी नहरो और बढे हुए नगरोसे पता लगता है। कुषाण समय म शकवशी होनेके कारण, जान पडता है, अधीन करनेके बाद भी कगोके साथ कुषाणोका बर्ताव बहुत कुछ समानताका था। अखामनी साम्राज्यके कायम होनेपर मिदियावालोके साथ जैसा बर्ताव अखामनियोने किया, वही बात यहा भी मालूम होती है। कोई आश्चर्य नही, यदि भारत के लोग भारतमें आये कगोको कुषाण-शासकोमे ही गिनते हो। पोशाक, रीति-रवाज और खान-पान में सभी शक जातियाँ समानता रखती थी। गोरा रगरूप भी कगोका कुषाणो जैसा ही था, जिसे कि हमारे वैद्य उनके अधिक पलाडु-भक्षणके कारण बतलाते थे।

ईसा की ३-४ थी शताब्दीमें कग फिर स्वतंत्रसे हुए दीख पडते है। इस समय वह कुषाण और सासानी साम्राज्योके मध्यवर्ती तटस्थ राज्यका पार्ट अदा करते है। पाचवी शताब्दीमें हेफताल (एफताल, श्वेत हूण) कुषाण-राज्यको मध्य-एसिया और पजाबसे खतम करते हैं। इसी समय एफताल-राजा पेडकद कगोको दबानेमे सफल होता है। एफतालोके लिये लडाकू कग बडे सहायक साबित हुए, इसलिए एफताल घुमन्तुओका—जिन्हे लोग शकोका वशज न समझ हूण कहनेकी गलती करते है—बर्ताव कगोके साथ अच्छा था। जान पडता है, कुषाणो और दूसरे शक

शासकोंका जब नेतृत्व बदला, तो एफ्तालो (हेफ्तालो) ने उनका स्थान लिया। तभी उनका कुषाणों, कगों और दूसरे शकोंकी भारी घुमन्तू सेना अनायास मिल सकी।

जानबासकला, कोई-क्रिलगानकला, लवुक्रिकिज, क्यूनेर्ली-कला, अकतेपे कगोंके ई० पू० ४-५ सदी और प्रथम शताब्दीके बीचके ध्वसावशेप है, जिनमे उनकी सस्कृतिका पता लगता है। कललीगिरके ध्वसावशेपोमे बहुतसी मूर्तियाँ, सिक्के और तरह-तरहके मिट्टीके बतन मिले हैं। मिट्टीके वर्तनोमें सिंहमुख वाले हत्थे लगे हुए हैं। जानबास-कलाके ध्वसावशेपसे पता लगता है, कि ई० पू० चौथी सदीमें कग सस्कृति बहुत उन्नत थी। ई० पू० तृतीय शताब्दीमें तो उनके सिक्कोमें ग्रीक सिक्कोंकी नकल करनेकी कोशिश की गई और उनपर ग्रीक अक्षर अकित किये गए। कुषाण कालीन अयाजकला, जिल्दिक, तोप्रककला जैसे ध्वसावशेष और भी अधिक समृद्ध है। कुषाणोका शासन भारतमें भी था, और वहाँ उनके लेख तथा मूर्तियाँ भी मिली है, लेकिन कुषाण वास्तुकलाके अच्छे नमूने हमें हालकी ख्वारेज्मकी खुदाइयोमे मिले ह। ग्युरकला (चैमेनपाब नहरके ऊपर) और बाजारकला इस समयके वडे सुन्दर नमूने हैं। अभी भी, जान पडता है, पीतलके तिकोने शर-फल कग लोग इस्तेमाल करते थे। ई० पू० छठी शताब्दीमे अखामनी सेनामें होकर लडनेवाले शक पीतलके हथियारोको इस्तेमाल करते थे, यह हमें मालूम है।

६ कुषाण-अफ्रीग (ई० ३—५ सदी)

ईसाकी ३री से ५वी शताब्दीकी ख्वारेज्मकी सस्कृति कुषाण-अफ्रीग सस्कृति कही जाती है। इस सस्कृतिके आरभके साथ कगोका वैभव नष्ट हो जाता है। एक तरहसे इसे प्राचीन तथा अर्वाचीन ख्वारेज्मका सधिकाल कह सकते हैं। इस समय नहरें टूटने लगती है, नगरोको रेगिस्तान निगलने लगता है और धीरे धीरे बालूमे अन्तर्धान होती सी उनकी मिट्टीकी मोटी दीवारें बनी रहती है। वर्षाके नाममात्र होनेके कारण डेढ हजार साल बाद भी किजिलकुमकी मरुभूमिने इन नगरोकी ऐतिहासिक महत्वकी बहुत सी चीजोको सुरक्षित रक्खा, जिनसे उस समयके मानव-जीवनपर बहुत प्रकाश पडता है। इन पुराने नगरोकी पिछली १३-१४ सालोकी खुदाईमें बहुतसे सिक्के और मूर्तिया ही नही, बल्कि चमपत्रपर लिखे कग भाषा के अभिलेख मिले हैं। अफ्रीग कालके आरभिक समयके ध्वसावशेपो—तोप्रककला, यक्केपसन और लघु-कवादकला—ने कितनी ही ऐतिहासिक महत्वकी चीजे दी ह। कवादकलाके ध्वसावशेपकी खुदाईसे ताल्स्तोफ के सहायक पावलोफने उसकी असली आकृतिका जो चित्र अकित किया है,[१] उससे मालूम होता है, कि इस समय के ख्वारेज्मकी सस्कृति पिछडी नही कही जा सकती। यक्के-परसन[२] में एक पुराने अग्नि मदिरका ध्वसावशेप मिला है, जिससे प्राचीनकालकी जर्थुस्त्री अग्निशालाका परिचय मिलता है। तोप्रककलाके नगर को देखनेसे कुषाणकालीन नगरो का अच्छा ज्ञान होता है।

७ अफ्रीग सस्कृति (६—५ सदी)

अफ्रीग सस्कृतिके अवशेष बेर्कुत-कला तथा तेशिक-कलामें मिले है। ख्वारेज्मकी सस्कृति

---

[१] वेस्त० द्रे० १९४६ पृष्ठ० ८३,

[२] वही पृष्ठ ७७,

[३] वही ७३

अपने इसी रूपमें सबसे पहिले अरब विजेताओके सपर्कमें आती है, लेकिन ख्वारेज्मका दुर्गम मार्ग मोग्द-विजयके बाद भी कितने ही समय तक अरबोको अपने भीतर घुसने नही देता। इस्लामिक प्रभाव अतत सामानी कालमें ही ख्वारेज्ममें पहुँच पाता है। दसवी सदीके अतमें ख्वारेज्मका प्रसिद्ध विद्वान् अबूरेहाँ अलबेरूनी पैदा हुआ। वह भारतकी विद्या और सस्कृतिका इतना सम्मान क्यो करता है? इसीलिए कि वह कग और अफ्रीग सस्कृतिका उत्तराधिकारी था। अरबो और वादमें गजनवियोके हाथमें पराधीन होनेके बाद भी उसे ख्वारेज्मके प्राचीन वैभवका स्मरण था। ११वी शताब्दीके आरभ में भारतके नगरों और वैभवपूर्ण देवालयोको ध्वस्त होते देखकर उसे प्राग्-इस्लामिक ख्वारेज्म याद आता था।

स्रोत ग्रथ

१ खोरेज्म्स्कया एक्स्पेदित्सिया १६३६ (स० प० तालस्तोफ)

२ नोविये मतेरिअली पो इस्तोरिइ कुल्तुरि द्रेव्नओ ख्वारेज्मा (स० प० ताल्स्तोफ,

३ वेस्त० द्रे० इस्तोरि, १६४६ (१) पृ० ६०-१००

४ इस्तोरिया द्रेव्नओ वोस्तोका (व० व० स्त्रूवे, १६४१)

5 Greeks in Bactria and India (W W Tarn, Cambridge 1938)

6 Les Scythes (F G Bergrmann)

अध्याय ३

ग्रीक-बाख्त्री (३३०-१३० ई० पू०)

यद्यपि अलिकमुदर ने गगमेला (अरबेला) के युद्ध में ईरानियों की कमर तोड दी, तो भी अखामनी साम्राज्य को पूर्णतया विजय करने में उसे तीन साल (३३४—३३१ ई० पू०) लगाने पड़े। वह पर्शुपुरी और पसरगर्द के भव्य नगरों की होली जलाकर अख्वतन की ओर होते दारयवहु (३) को पकडने के लिये उसका पीछा कर रहा था। इसी समय बाख्त्रिया का क्षत्रप-सेनापति बेस्सुस नामक एक राजवंशी पुरुष था। अभागा दारयवहु अपने भाईबंद के पास शरण लेने जा रहा था। बेस्सुस ने उसे भेंट दे अलिकसुदर का कृपापात्र बनना चाहा। वह शाह को बाधकर एक ढके रथ पर बैठा अखबतन की ओर चला। उस समय अलिकसुदर कास्पियन के किनारे पहुँचा था। जब उसे खबर लगी, तो वह इस कारवा की ओर दौड पडा। रथ धीरे-धीरे चल रहा था, इसलिये बेस्सुसने दारयवहु को घोडे पर चढाकर जल्दी ले जाना चाहा। शाह ने उसकी बात मानने से इन्कार कर दिया। बेस्सुस ने आखिर में उसे घायल करके मरता छोड दिया। मरने से कुछ ही क्षण पहले अलिकसुदर वहा पहुँचा। उसने अपने शत्रु के दुर्भाग्य पर आसू बहाया, और उसके शरीर को मोमियायी बना बडे सम्मान-प्रदर्शन के साथ पर्शुपुरी में दफनाया। बेस्सुस ने बाख्त्रिया लौट कर अतक्षत्र चतुर्थ के नाम से अपने को प्राची का शाह घोषित कर चार वर्षो तक (३३३—३२९ ई० पू०) शासन किया।

१ अलिकसुदर (३३४-२३ ई०पू०)

अलिकसुदर ने क्रमश आजकल के खुरासान, सीस्तान, बिलोचिस्तान, कधार और काबुलिस्तान को जीता। काबुल से ३२९ ई० पू० में वह अन्दराप पर चढा। फिर २५०० सवारो के साथ जा उसने ओरनो (गोरी या खुल्म) और बाख्तर (बलख) को ले लिया। बेस्सुस के विश्वासघात से बाख्त्री लोग इतने चिढे हुए थे, कि उन्होने उसका साथ छोड दिया। उसने वक्षु पार भागकर नदी की नौकायें नष्ट कर दी, कि अलिकसुदर पार न हो सके, लेकिन यवनोंने चमडे की मशको और बोरो में पुवाल भर कर उन्हे नावो की तरह इस्तेमाल किया और फिर अपने शत्रु का पीछा किया। बेस्सुस ने अपने को बिल्कुल कायर साबित किया। पहले सोग्दीय नेता स्पितामा उसका प्रधान सहायक था, लेकिन जब उसकी कायरता देखी, तो उसे बाधकर

---

[1]Histoire Ancienne des Peoples de l'orient (G Maspero) pp 759 61
इस्तोरिया द्रेव्नेओ वोस्तोका (व० व० स्त्रूवे) पृ० ३८७-३८८

अलिकसुदर के पास ले गया। अलिकसुदर ने इस विश्वासघाती को दड देने के लिये ईरानियों के पास अखवतन भेज दिया, जहा उसे कतल कर दिया गया।

अलिकसुदर की विजयिनी सेना वक्षु के दाहिने तट से आगे बढती गई। स्पितामा के भक्ति दिखलाने पर भी जब सोग्दो को यवनों की बुरी नीयत का पता लगा, तो उन्होंने भी तलवार म्यान से निकाल ली। अलिकसुदर ने अपने घोर पशुरूपका परिचय दिया और आसपास के इलाको को लूटमार कर वर्वाद कर दिया। ग्रीक सेना मरकदा (समरकद) को जीतती यक्सत (सिरदरिया) के किनारे पहुँची। उन्हे युरोप से ही मालूम था, कि शको के देश में तनाई (दोन) नामक वडी नदी है। यहा उन्हे सोग्द से उत्तर शको की भूमि का पता लगा, तो उन्होंने यक्सतको भी तनाई समझ लिया। सिरदरिया के तट पर शायद खोजन्द (वतमान लेनिनावाद) के पास उसने अलिकसुदरिया के नामसे नगर वसाना चाहा। सोग्दियो ने इसे अपनी चिर-दासताकी वेडी समझकर भीषण विद्रोह कर दिया, जिसमें वाह्लीक (वाख्तरी) भी उनके सहायक हुए। थोडे ही दिनोमें लोगोने कुरवपुरी (किरोपोलिस) और दूसरी जगहकी ग्रीक छावनियोपर अधिकार कर लिया, लेकिन अलिकसुदरने बडी क्रूरता दिखलाते हुए कुछ ही दिनोमें विद्रोहको दबा दिया। इसी समय उसने सुना, कि यक्सर्तके पार शक लोग आक्रमण करनेके लिये इकट्ठा हो रहे है और मरकदाकी ग्रीक छावनीको स्पितामाने घेर लिया है। उसने एक बडी सेना मरकदाके उद्धारके लिये भेजी और स्वय यक्सत नदीके तटपर जा १७ दिनोमें अलिकसुन्दरिया नगरी वसाई। नगरीका घेरा ६० स्तदिया (१२००० या ६ ८२ मील) था। उस समय अलिकसुदर शत्रुओंसे घिरा था बीमारीने उसे दुवल बना दिया था, लेकिन तो भी उसने हिम्मत नही छोडी और नदी पार होकर शकोसे लडना चाहा, किंतु ग्रीक सेना नदी पार जानेके लिये तैयार नही हुई। इसीलिये नदीके बायें तटपर अलिकसुन्दरिया नामक नये नगरको वसानेकी अवश्यकता पडी। नगरके बस जानेपर बेडेसे नदी पार हो ग्रीक सेनाने शकोको पूर्ण पराजय दी और उन्होंने दूत भेजकर अधीनता स्वीकार की। ये शक कग और वू-सुन रहे होगे—इस समय फर्गाना और ताशकन्द इलाकेमें शकोकी आवादी थी।

मरकदाके उद्धारके लिये जो सेना भेजी गई थी, उसे स्पितामाने पोलितिमेतस् (बहु-रत्न) उपत्यकामें नष्ट कर दिया। खवर मिलते ही अलिकसुन्दर दौडा और चार दिनमें मरकदा (समरकद) पहुच गया। स्पितामा वाख्तरकी ओर भगा। अलिकसुन्दरने खिसियानी विल्ली की तरह सारे सोग्द देशको वर्वाद कर दिया। स्पितामाका पीछा करते हुए जारिअस्पा (हजारास्प, वकद) में उसने ई० पू० ३२९-३२८ का जाडा विताया। स्पितामा के रक्षक ख्वारेज्मके शक्तिशाली कग थे, इसलिये उसको परास्त करना आसान नही था। वसतमें १६००० नई ग्रीक सेनाकी कुमक अलिकसुन्दरके पास पहुच गई, जिसकी मददसे उसने ३२८ ई० पू० के वसतमें मर्गियाना (मेव) प्रदेशको जीता। मरुगणसियामें अलिकसुन्दरको दुधर्ष शत्रुओसे मुकावला पडा था। पेत्रा-ओक्सियाना (मराहृदमें उत्तर-पूरब कलानादरी,) इतना सुदृढ साबित हुआ कि उसे अलिकसुन्दर दो साल तक सर नही कर सका। यहाका सोग्दीय सेनापति अरिमज उसके लिये लोहेका चना सावित हुआ। अतमें इस वीर दुर्गपालने आत्मसमर्पण किया। अलिकसुदर वीरोका कितना सम्मान करता था, इसका पता उसने अरिमजको नही वल्कि उसके सवधियो तथा दूसरे प्रधान सरदारोको दारपर खिचवा करके दिया। अलिकसुदरकी रानी रोक्सानाको कोई कोई
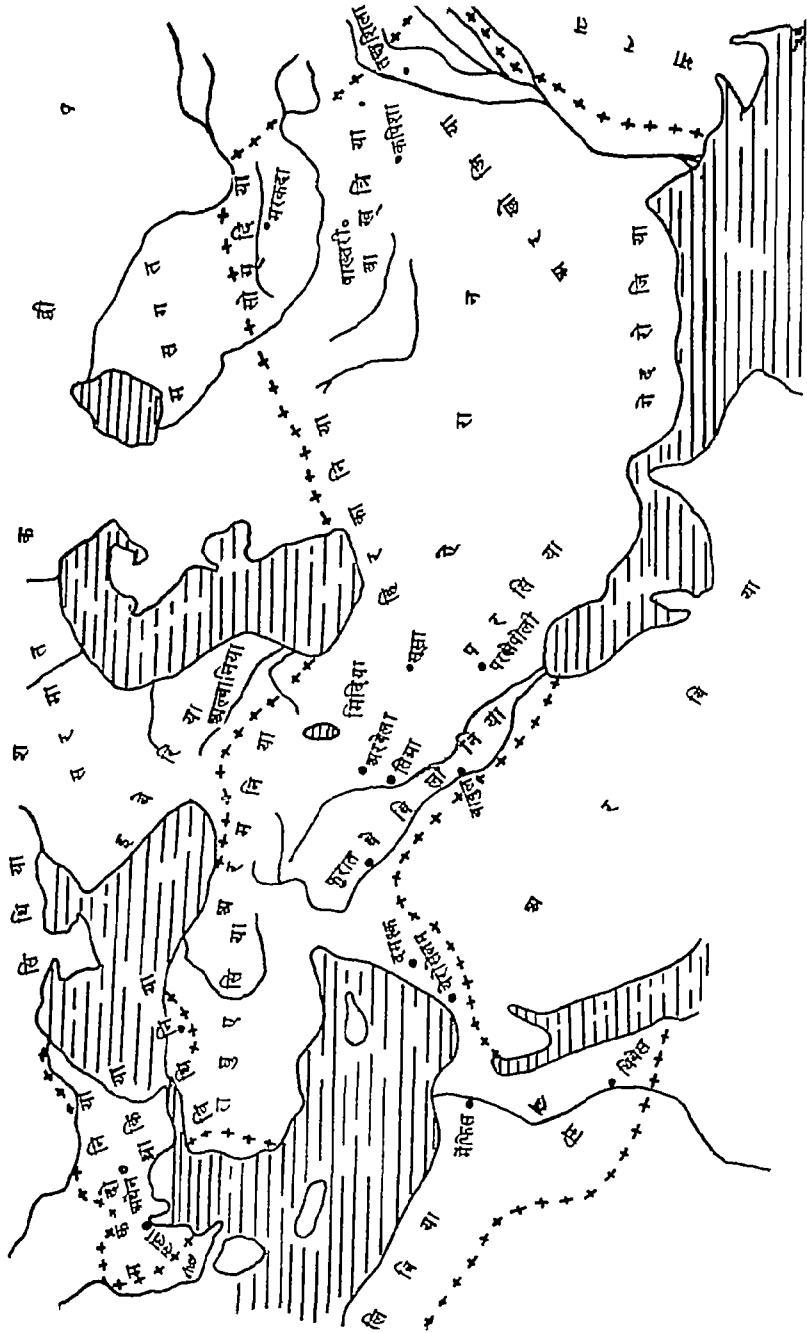
२० अलिकसुन्दर का साम्राज्य (३२३ ई० पू०)

इतिहासकार दारयवहूकी कन्या बतलाते हैं और किसी किसीका कहना है कि वह सोग्दीय सामन्त ओक्सातकी दुहिता थी, जिसे यहींपर अलिकसुदरने पाया। मरयाना (मेर्व) नगरके दक्षिणमें उसने दो छावनिया या दुर्ग बनाकर वहा अपनी सेना रक्खी। शायद यह छावनिया सरक्स (हरी-रुदके किनारे) और मेरुचक (मुर्गाब तटपर) में थी।

इस विजयके बाद अलिकसुदर बाख्त्रिया पहुचा। वहा उसने चार यवन छावनिया स्थापित की, जो सभवत मेमना, अदकुई, गाबृरगान और सरीपुलमें थी। वहासे वह फिर मरकदा लौट आया। स्पितामा अब भी बहादुरीसे लड रहा था, लेकिन धीरे धीरे यवनोका पल्ला भारी हो रहा था। अलिकसुदर भी अपने शत्रुको न पाकर देशवासियोसे बदला ले रहा था, इसलिए घुमन्तुओने स्पितामाका सिर काटकर अलिकसुदरके पास भेज दिया। ३२८-३२७ ई० पू० के जाडोको अलिकसुदर नौतकामें बिता रहा था। इसी समय उसे अपने वीर तथा विश्वासपात्र सेनापति क्लेइतकी हत्याकी खबर मिली। ख्वारेज्मके सिवाय अलिकसुदर सारे पश्चिम मध्य-एसिया (यक्षसतके दक्षिण) को जीत चुका था। अब उसका ख्याल भारत-विजयके लिये हुआ। ३२७ ई० के वसतमें भारतकी ओर प्रयाण करते समय उसके साथ १०००० पैदल और ३०००सवार सेना थी। गधार-विजय करते व्याम तटपर वह नदसाम्राज्यके पास पहुच रहा था, जब कि उसकी सेनाने आगे बढनेसे इन्कार कर दिया और ३२६ ई० पू० में उसे वहासे लौटना पडा। उसने सेनाके एक भागको समुद्रपथसे बाबुल भेजा, और दूसरेको साथ लिये स्थल मार्गसे लौटा। ३२४ ई० पू० में वह ओपिस (बगदादके पास) पहुचा। यूनानी वैसे भी अलिकसुदरके शाहाना ठाटको पसद नही करते थे, । पूर्वी लोगोको यूनानियोके बराबरका स्थान देनेसे वह और असन्तुष्ट हो गये। यहा सभी यूनानियोने पचायत कर घर जानेकी माग पेश की। अलिकसुदर सरगनोंको उसी समय प्राणदड दिलवा सेनाको खूब फटकार कर महलमें चला गया। अब उसने खुलकर ईरानियोको शरीररक्षक, दरबारी तथा दूसरे बडे बडे पद देने शुरू किये। यूनानियोने अन्तमें उससे क्षमा मागी। अलिकसुदर फिर विजययात्रा की धुनमें लगा, किंतु ३२३ ई० पू० में जब वह बबेरु (बाबुल) में पहुचा, तो बीमारीने धर दबाया और ३३ वर्षकी उमरमें उसका देहात हो गया।

अलिकसुदरकी मृत्युके समय बाख्तर और सोग्दका यवन राज्यपाल (स्त्रतेगोस) अमिन्तस था। मृत्युकी खबर बाख्तर पहुची, तो यवन-सेनाने विद्रोह कर दिया, मगर उसे जल्दी दबा दिया गया। अमिन्तस्की जगह फिलिप (एलिमेयसीय) साल भर राज्यपाल रहा। फिर उसे पथियाका राज्यपाल बनाकर भेज दिया गया और उसकी जगह स्तपनोर आया, जिसने २१ साल (३२१-३०१ ई० पू०) तक बाख्तर-सोग्दका शासन किया।

२ सेल्युक १ (३१२-२८१ ई० पू०)

अलिकसुदरकी मृत्यु (३२३ ई० पू०) के होते ही विशाल ग्रीक साम्राज्यके बटवारेके लिये उसके सेनापतियोमें ४२ वर्ष (३२३-२८१ ई० पू०) व्यापी सघर्ष छिड गया। अलिकसुदरने अपने सेनापति सेल्युकत्सलूकको सिरिया (शाम), बबेरु और पूर्वी देशोका शासक बनाया था, जो अलिकसुदरके मरनेके बाद उसीके हाथमें रहे। अलिकसुदरके स्थानपर उसके भाई अलिकसुदर (२) को सिंहासनपर बैठाया गया। वह ३२३ ई० पू० से ३१२ ई० पू० तक सेनापतियोकी प्रति-

द्वन्द्वितामें नाममात्रका शासक रहा। ३१२ ई० पू० के बाद तो दूसरोंकी तरह सेल्युक बिल्कुल स्वतंत्र शासक हो गया। अन्तिगोनकी सहायतासे उसने अपने पहलेके शासित प्रदेशमें सूसियानाको भी मिला लिया। अन्तिगोनसे झगड़ा होनेपर सेल्युकसको ३१६ ई० पू० में मिस्र भाग जाना पड़ा, लेकिन चार वर्ष बाद (३१२ ई० पू० में) वह फिर बाबुलका स्वामी बन गया। इस सफलताके उपलक्ष्यमें तभी (३१२ ई० पू०) उसने सेल्युकीय संवत् चलाया। तो भी अभी तक उसने सेनापतिकी उपाधि ही रक्खी और राजा (बसीलेउस्) की उपाधि ३०६ ई० पू० में ही धारण की। बल्खिया और सोग्दको उसने फिरसे जीतकर अपने राज्यमें मिलाया। अलिकसुदरकी मृत्युके बाद जो अव्यवस्था हुई, उसमें पंजाब और काबुल स्वतंत्र हो गये। सेल्युकसने फिरसे इस भागको जीतना चाहा, जिसके कारण ३०५ ई० पू० में चंद्रगुप्त मौर्यसे उसकी मुठभेड़ हो गई जिसमें "विजेता, राजा, सेल्युकस" को बुरी तरहसे हारना पड़ा। सिंधु और परोपनिसदै (हिंदूकुश) के बीचका सारा प्रदेश चंद्रगुप्तने ले लिया और सेल्युकसको अपनी लड़की देकर भीषण पराजयपर मोहर लगानी पड़ी। यवन विजेताओं की यह पहली भीषण पराजय थी। २८० ई० पू० में सेल्युकस अपने एक अफसरके हाथ मारा गया और उसका उत्तराधिकारी अंतियोक प्रथम (२८१-६२ ई० पू०) हुआ। सेल्युकसका तीसरा उत्तराधिकारी उसका पौत्र अंतियोक द्वितीय (२६२-२४७ ई० पू०) था। सेल्युकी वंशकी राजधानी दजला (तिग्रा) नदीके किनारे थी, जिसे सेल्युकसने अपने नामपर बसाया था। यह पीछे सासानी (२२६-६४२ ई०) राजधानी तस्पोन का एक भाग रही।

३ ग्रीको-बाख्तरी (२४५-१३० ई० पू०)

अंतियोक (२) के शासनकाल (२६२-२४७ ई० पू०) में बाख्तर सहस्रनगरीका राज्यपाल दियोदोत था, जिसने केंद्रीय शक्तिको क्षीण देखते हुए २५६ ई० पू० में धीरे धीरे स्वतंत्र होना चाहा। मगर उसके सिक्कोंसे साबित नहीं होता, कि उसने बसेलियुसकी पदवी धारण की। उसके नामके सिक्के वस्तुतः उसके पुत्र दियोदोत (२) (२३०-२२५ ई० पू०) ने चलाये।

तुलनात्मक बाख्तरी ग्रीक वंश

ई० पू०	भारत	चीन	दक्षिणापथ	उत्तरापथ
	(मौर्य)			
२५०	अशोक २७२-२३२	स्याउवेन् वेङ्	दिवोदात I २४५-२३०	१ तूमन २५०
२३०	दशरथ २२४		दिवोदात II २३०-२२५	
			एउथुदिम २२५-१८९	
२१०		(हान् वंश)		
		काउ-नी २०६		
१९०	बृहद्रथ १९१-१८५	हुइ-ति १९४	देमित्रि १८९-१६७	
	(शुंग) पुष्य मित्र १८५-१४८			
		वेङ्ती १७९		२ माउदुन १८३
१७०			एउक्रतिद १६७-१५९	३ चीयू १६२
			(मेनान्दर १६६-१४५)	४ चुनचेन १६२-१२७
		चिङ्ती १५६	हेलियोकल १५९-१३०	
१५०	अग्निमित्र १४८-१४०			
		वूती १४०		
१३०	वसुमित्र १२३-११३		अतियालिकद १३०	५ इशीज्या १२७-१७
				६ अच्वी ११७-१०७
११०				७ चान्सीलू १०७-१०४
				८ शूतीहू १०४-१०३
				९ शूलीहु १०३-९८
				१० हूलीहू ९८-८७
९०	देवभूति ८२-८७ (कण्व)	चाउनी ८६	(मोग ७७-५८)	हूहान् ये ८२-५२
७०	वसुदेव ७२—	स्वेन्-नी ७३	(मोग ७७-५८)	

१. दिवोदोत[1] प्रथम (२४५-२३० ई० पू०)

इसीको ग्रीको-वाख्तरी राज्यका सस्थापक माना जाता है, लेकिन इसमें सदेह है, कि दिवोदोतने अपनेको राजा सेल्युक (२) (२४७-८० ई० पू०) से स्वतत्र राजा (वसीलेउस्) घोपित किया। इसका सिक्का मिलता है, लेकिन कुछ विद्वानोका मत है, कि उसे इसके पुत्र दिवोदोत (२) ने वापके नामसे ढलवाया। दिवोदोत केवल सेल्यूकीय राज्यपाल (स्त्रतेगो) ही नही था, वल्कि अन्तियोक (२) (२६२-४७ ई० पू०) की पुत्री भी इसे व्याही थी, जिससे हुई पुत्रीको एउथुदिमने व्याहा था। पीछे वेटा-दामादका जो सघप हुआ, उसमें दामादको सफलता मिली। अन्तियोक (२) के मरनेके वाद उसका पुत्र सेल्यूक (२) राजा वना। उसने अपनी बेटी दिवोदोत (१) के पुत्र दिवोदोत (२) को दी। वहन-वेटी देकर शक्तिशाली सामन्तोको अपने पक्षमें करना कोई नई नीति नही है।

जिस वक्त यह ग्रीको-वाख्तरी नया वश स्थापित हो रहा था, उसी समय शकोकी एक शाखा दहे (ता-हि-या) भी अपना राज्य स्थापित करनेके प्रयत्नमे थी, जिसमें कगोका पूरा सहयोग था, यह हम कह आये है। मूलत दहे यक्सर्त नदी (सिरदरिया)के पासके रहनेवाले थे। पीछे इन्होने कास्पियन समुद्रके पास तक फैली दारयवहुकी पुरानी क्षत्रपी पार्थिया पर अधिकार कर लिया, इसीलिए आगे चलकर यह पार्थिव (पार्थियन) नामसे प्रसिद्ध हुए। २५६ ई० पू० में एक प्रदेशके शासक होनेके वाद धीरे धीरे १४१ ई० पू० में मिथ्रदात (१)ने सेल्युकीय वशको खतम कर दिया। पार्थियोने प्राय ४०० वर्षों (२४९ ई० पू०—२२६ ई०) तक ईरान पर शासन किया। इस वशका स्थापक अशक (१) (२४९-२४७ ई० पू०) दिवोदोत (१) (२४५-२३० ई० पू०) का समकालीन था। उसके वाद अर्शक (२) तीरदात (२४७-२१४ ई० पू०) शासक हुआ, जो कि दिवोदोत (२) (२३०-२२५ ई०पू०) और एउयुदिम (२२५-१८९ ई० पू०) का समकालीन था। सेल्यूकीय सम्राट् यह आशा रखता था, कि दिवोदोत (१) तीरदातके पक्षमें नही जायेगा। दिवोदोत (१) ने ऐसा ही किया भी। पार्थिव वशमें आगे अशक (३), अतवान (२१४-१८१ ई० पू०), फ्रात (१) (१८१-१७० ई० पू०) के वाद ५वा राजा मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०) वडा मनस्वी शासक था, इसीने सेल्युकीय वशका उच्छेद किया। तवसे पार्थिव वश ईरान और मसोपोतामियाका शासक तथा रोम और शक साम्राज्यका प्रतिद्वद्वी वना।

२ दिवोदोत[2] द्वितीय (२३०-२२५ ई० पू०)

प्रथम दिवोदोतका पुत्र दिवोदोत (२) पिताका प्रतिनिधि वनकर सेल्युकीय दर्वारमे गया। सेल्युक (२) उससे इतना प्रभावित हुआ, कि उसने अपनी लडकी उसे व्याह दी। लेकिन दिवोदोत (२) अपने पिताके राज्यको अधिक दिनो तक नही सभाल सका। उसका वहनोई एउयुदिम उसका भारी प्रतिद्वद्वी था। सेल्युक (२) ने अपनी स्थिति मजवूत करनेके लिये जहा

---

[1] Greeks in Bactria and India (W W Tarn)

[2] वही, पाम्यालिकि ग्रेको वाक्त्रिइस्कओ इस्कुस्स्त्वा (क० व त्रेवर) पृ० ५-७

एक लडकी दिवोदोत (२) को दी थी, वहा दूसरी दो लडकिया पोन्त और कपादोकियाके राजाओको दे रक्खी थी। इन दोनो दामादोमे वह आशा करता था, कि वह पश्चिमके सीमातकी रक्षामें सहायता करेंगे। अलिकसुन्दरके साम्राज्यके भिन्न-भिन्न भागोके उत्तराधिकारी एक दूसरेके राज्यकी छीना-झपटी करते ही रहते थे। मिस्रके राजा तालमी (तुरमाय) (३) ने २४६ ई० पू० में राजधानी सेलूकियाको छीन लिया और सेल्युक (२) को भाग जाना पडा। ऐसी डावाडोल स्थितिमें बडे सावधान रहनेकी अवश्यकता थी। दिवोदोत (१) ने उत्तरके दहे को मदद नही दी, लेकिन उसके पुत्रने इस नीतिको छोड दिया और सेल्यूकीय साम्राज्यपर आक्रमण करनेवाले तीरदातके साथ मेल कर लिया। सेल्यूकीय विधवा रानीने अपने पक्षको मजबूत करनेके लिये अपने प्रभावशाली स्त्रतेगस (क्षत्रप) एउथुदिमको अपनी कन्या व्याह दी। एउथुदिमने दिवोदोत (२) को मार डाला, जिसपर अन्तियोक (३) उससे बहुत प्रसन्न हुआ।

३ एउथुदिम[1] (२२५-१८९ ई० पू०)

एउथूदिम और उसके पुत्र दिमित्रियका शासन ग्रीको-बाख्तरी राजवशके वडे वैभवका समय है। उस समय राज्यमें बाख्त्रिया, सोग्दियाना, मर्गियाना, फर्गाना, द्रगियाना, अरखोसिया, परोपनिसदके प्रदेश तथा भारतके कितने ही भाग थे। आजकल ये प्रदेश ताजिकिस्तान, उज्बेकिस्तान, तुर्कमानिस्तान, किर्गिज़िस्तान और कजाकस्तानके सोवियत गणराज्यो, सीस्तान (पूर्वी ईरान), अफगानिस्तान, पाकिस्तान और भारतमें है। एउथुदिम मैन्दर नदीके तटपर अवस्थित मग्नेसिया महानगरीके युद्धमें १८९ ई० पू० मे मारा गया। उसके मारे जानेके बाद बाख्त्रियाका राज्य दिवोदोत (२) के हाथमें आया। उसने भी अपने सरक्षक सेल्युकीय वशके साथ वही बर्ताव किया, जो कि उसके मृत प्रतिपक्षीने किया था। उत्तरके घुमन्तू दाहे से सेल्यूकीय राज्यको वडा खतरा था, जिससे रक्षा पानेके लिये एउथूदिमको प्रसन्न रखना आवश्यक था, लेकिन एउथुदिम अपने प्राप्त राज्यसे सतुष्ट रहनेवाला नही था। उसकी इस महत्वाकाक्षासे अन्तियोक (३) भी अपरिचित नही था। उसने इसे रोकनेके लिए २०८ ई० पू० में एउथुदिमपर आक्रमण किया। इस समय बाख्त्रिया राज्यकी सीमा पूवमें हिंदूकुश और पश्चिममें निम्न आर्यू (हरीरूद) नदी तक थी। अन्तियोकके आक्रमणको रोकनेके लिए एउथुदिम १०००० सवारोके साथ आर्यू नदीपर गया, किंतु उसे हार खाकर लौट आना पडा। इसके बाद अन्तियोकसे एकके बाद एक हार खाते अतमें उसे बाख्तर (बलख) की अपनी दुगबद्ध राजधानीमे शरण लेनी पडी। अन्तियोक (३) ने उसे दो साल तक घेरे रक्खा। दुग बहुत दृढ़ था, तो भी अधिक साल तक डटे रहना सभव नही था। एउथुदिमने जब उत्तरके घुमन्तुओ (कगो) को बुलानेकी धमकी दी, तब अन्तियोक उससे सधि करके लौट गया। एउथुदिमने कुछ हाथी प्रदान किये। अन्तियोकने अपने प्रतिद्वन्द्वीके पुत्र दिमित्रियको अपनी कन्या देनेका वचन दिया। अन्तियोकके लौट जानेपर एउथुदिमने सेना और कोश बढाते अपने राज्यको शक्तिशाली बनाना चाहा। पश्चिममें अन्तियोक (३) के होनेसे वह उधर बढ नही सकता था। उत्तरमें उसका राज्य सोग्द

---

[1] Greeks in Bactria

और फर्गाना तक था। (यही फर्गानाकी उपत्यका पीछे बाबरकी जन्मभूमि हुई, जिसने १५वीं सदीके अन्तमें वहा की जो समृद्धि देखी थी, उसे भारतका सम्राट् होनेके बाद भी वह भूल नही सकता था।) फर्गाना उपत्यका फलो और खेतीके लिए बहुत प्रसिद्ध थी, लेकिन इससे भी अधिक उसकी समृद्धिका कारण चीनका रेशमपथ था, जो कि इसके भीतरसे गुजरता था।

वाख्त्रिया (वाह्लीक) आजकी तरहका मरुकातार जैसा देश नही था। अपनी उवरताके कारण इसे "पोलितिमेतस" (बहुमूल्यवान्) कहा जाता था। अपनी हजारो नहरो से सहस्रभुज और हजारो नगरोके कारण सहस्र नगर भी इसका नाम था। राज्यके भीतर बदख्शाकी लाल (पद्मराग)की खानें, खुरासानमें फीरोजेकी खानें और यमगानमें वैडूय जैसी मूल्यवान् खाने थीं। बदख्शामें तावा और लोहा भी निकलता था।

चीनसे पश्चिमकी ओर आनेवाला रेशमपथ इसी राज्यसे होकर गुजरता था, इसके कारण भी एउथुदिम बहुत सपत्तिशाली था। रेशमपथ तरिम उपत्यकासे पामीर पार करनेके बाद इर्किश्तामसे एक रास्ता तेरक डाडा पार हो फर्गाना पहुचता, और दूसरा अलई उपत्यका होते वाख्त्रिया मे। फर्गाना और वाख्त्रियाका स्वामी तरिम-उपत्यकाकी ओर जानेवाले रास्तेका भी स्वामी था। हा, तब भी एक रास्ता तरिम-इस्सिकुल (सरोवर) रह जाता था, जिसके स्वामी वू-सुन (सेरेस) थे।

एउथुदिमके समय अभी हूण अपनी पुरानी भूमिमें थे, यूची शक भी कन्सूकी अपनी जन्मभूमिमें चीनके पडोसी थे। इस रास्ते होने वाला चीनका व्यापार आयका भारी स्रोत था। अफगानिस्तान (कपिशा-उपत्यका) होकर भारतका व्यापार भी वास्तरसे बहुत होता था। चीनी दूतने १२८ ई० पू० में जहा भारतकी बहुत सी पण्य वस्तुयें वहाँ देखी, वहा भारतके रास्ते आई चीनकी भी कितनी ही चीजें पाइ।

व्यापारके इतने विकाससे एउथुतिम सोनेके महत्वको समझता था। सोना प्राप्त करनेकी ओर उसका ध्यान गया। उसके राज्यके उत्तर-पूरबमें वूसुन (शक) रहते थे, जिनका प्रदेश अल्ताई तक फैला हुआ था। अल्ताई स्वय अपने नामके अनुसार सुवणगिरि है। उसके उत्तरमें पुरानी सोनेकी खानोमें आज भी काम होता है। उनके और उत्तरमें कई खानें ह, जिनमें साइबेरियामें लेनाकी सोनेकी खानें दुनियामें अत्यन्त प्रसिद्ध है। पहले अल्ताई और साइबेरियाकी खानोका सोना ही मध्य-एसिया, भारत और ईरानमे आता था। लेकिन, दारयवहु (५२१-४८५ ई० पू०) के समय और उसके वादसे वहासे सोना आना वद हो गया। एउथुदिमने चाहा, कि तीन शताब्दियोमें रुके इस सुवणपथको फिरसे खोला जाय, जिससे रेशमपथकी तरह सुवणपथ भी वाख्त्रियाकी समृद्धिको और बढ़ा सके। सिवेरियाके सुवणपथके ऊपर आकर किसी घुमन्तू जातिने रास्तेको काट दिया। ऐसी जाति हूणोके कबीले ही हो सकते थे, जिनका सबध चीनसे अधिक घनिष्ट था। उन्होने सिवेरियाके सोनेकी धाराको उधर फेर दिया। ई० पू० द्वितीय सहस्राब्दीमें लेना नही भी हो, तो भी अल्ताई और कजाकस्तानकी दूसरी सोनेकी खानोमें शकोंके पूवज काम करते थे, लेकिन, अब शक-वशज वूसुन—जो विचवई होकर सोनेको मध्य-एसिया पहुचा सकते थे—हूणोके हस्तक्षेपके कारण असमय थे। एउथुदिमने सोचा, यदि अपने इन उत्तर-पूर्वी पडोसियोको अधीन कर लिया जाय, तो सोनेका रास्ता खुल जायेगा। रोमन इतिहासकार प्लीनीने

सिंहलवालोंसे सुनकर सेरेस (वूसुन) लोगोके बारेमें लिखा है—"यह बडी कद्दावर जाति है। इनके बाल लाल और आखें नीली होती हैं। यह हेमोदो (हिमवान्) पर्वतके उत्तरमें रहते हैं।" पीछे चीनियोंने भी इन्हें रक्त-केश और नील-नेत्र लिखा है। एउथूदिम फर्गानासे त्यानशान्की पहाडियोंमें घुसकर इस्सिकुल सरोवर तक गया, किंतु स्वर्णपथको खोल नही सका।

सेरेस् (वूसुन) स्वय सुवर्णके उद्गमके साथ सबध नही रखते थे। येनीसेईके ऊपरी भाग तथा दूसरी जगहोकी सोनेकी खानोके स्वामी हूण थे। उत्तरके घुमन्तुओका विजय करना सदा टेढी खीर थी, इसलिए एउथूदिमको खाली हाथ लौटना पडा। यह अभियान २०६ ई० पू० में हुआ था। यह याद रखनेकी बात है, कि ग्रीको-बाख्तरी राजाओके सिक्के सोनेके नही थे। उनके वडे ही सुन्दर तेत्राद्राख्म चादीके होते थे। मुद्रामें सुदर रूप अकित करना एउथूदिमके समय जहा पहुचा, वहा फिर नहीं पहुच सका। २०६ ई० पू० के बाद उत्तरसे लौटकर उसने पार्थियोको परास्त कर उनके कुछ प्रदेश छीन लिये। मर्गियाना और निम्न आर्यू (हरी रुद) उपत्यकाका उपराज उसने अपने द्वितीय पुत्र अन्तिमाखूको बनाया, मग (मेव) उसकी राजधानी बनी। अन्तिमाखू जिस तरह बापका उपराज रहा, उसी तरह अपने वडे भाई दिमित्रिका भी था। सेल्युकियोंमें गद्दीके उत्तराधिकारीको उपराज कहते थे। उपराज बनानेकी यह प्रथा ग्रीको-बाख्त्रियोने भी स्वीकार की। हमे मालूम है, कि हूणो और दूसरे घुमन्तू कबीलोमें भी प्रदेशोके राज्यपालोको उपराजकी अधिक सम्मानित उपाधि दी जाती थी। दाहे (पार्थियो) में भी यह प्रथा थी। शायद उनसे ही एउथूदिमने इस को लिया। उपराज अपने सिक्के भी चलाते थे। बहुधा उनकी साधारण प्रजाको यह मालूम नही होता था, कि हमारे राजाके ऊपर और भी कोई राजा है। इस तरहका भ्रम ग्रीको-बाख्त्री राजाओके ही सबधमें नही, बल्कि यूची, कुषाण, एफ्ताल (श्वेतहूण) और तुर्कोंके बारेमें भी देखा जाता है। हम यह निश्चित तौरसे नही बतला सकते, कि तोरमान अधिराज था, या उपराज। अन्तिमाखूने अपने सिक्कोपर 'थेव' खुदवाया। थेव या देव राजाको कहते हैं, यह हमे सस्कृत साहित्यमें मालूम है। पार्थिव राजा अतवानु (२१४-२८१ ई० पू०) अपनेको थेव-पातुर (देवपुत्र) लिखता था।

इस कालमें उत्तरी घुमन्तू फिर जोर पकडने लगे। अलिकसुन्दरके समय बाख्त्रिया और सोग्दके गाव-नगर खुले होते थे, लेकिन ग्रीको-बाख्त्रिय शासनके अतमें, जब चाङक्यान् (१२८ ई० पू०) इस प्रदेशमें आया तो उसे समरकद और बाख्तर जैसे महानगर ही दुर्गबद्ध नहीं मिले, बल्कि वहाके गाव भी प्राकार-बद्ध थे। उत्तरके घुमन्तूओका बहुत डर जो था।

४ दिमित्रि (१८९-१६७ ई० पू०)

यह एउथूदिमका ज्येष्ट पुत्र था। इसके दूसरे भाई अन्तिमाखूके बारेमें कह चुके है। शायद अपोलोदोत भी इसका छोटा भाई था। बापके अपूर्ण कामको इसने पूरा करना चाहा। इसकी भारत में विजय-यात्रा हमारे इतिहासके लिए विशेष महत्व रखती है। समकालीन व्याकारणकार पतजलिने "अरुणद् यवन साकेत" (यवनने अयोध्याको घेर लिया) कहते हुए दिमित्रिकी ओर ही इशारा किया। बाख्त्रियाके ग्रीक शासकोका भारतसे घनिष्ठ सबध था। सेल्युक (१) (३२३-२८१ ई० पू०) ने चद्रगुप्तको पुत्री देकर जो सबध स्थापित किया था, उसे उसके वशजोने भी

कायम रक्खा। सेल्युक (१) का राजदूत मेगस्थनी मौर्य-राजधानी (पाटलिपुत्र) मे वर्षों रहा, और उसने भारतका जो वर्णन छोडा, उसका उपलब्ध भाग आज भी हमारे इतिहासकी ठोस सामग्री है। सेल्युक (१) के पाचवें उत्तराधिकारी अन्तियोक (३)—ने एउथूदिमको
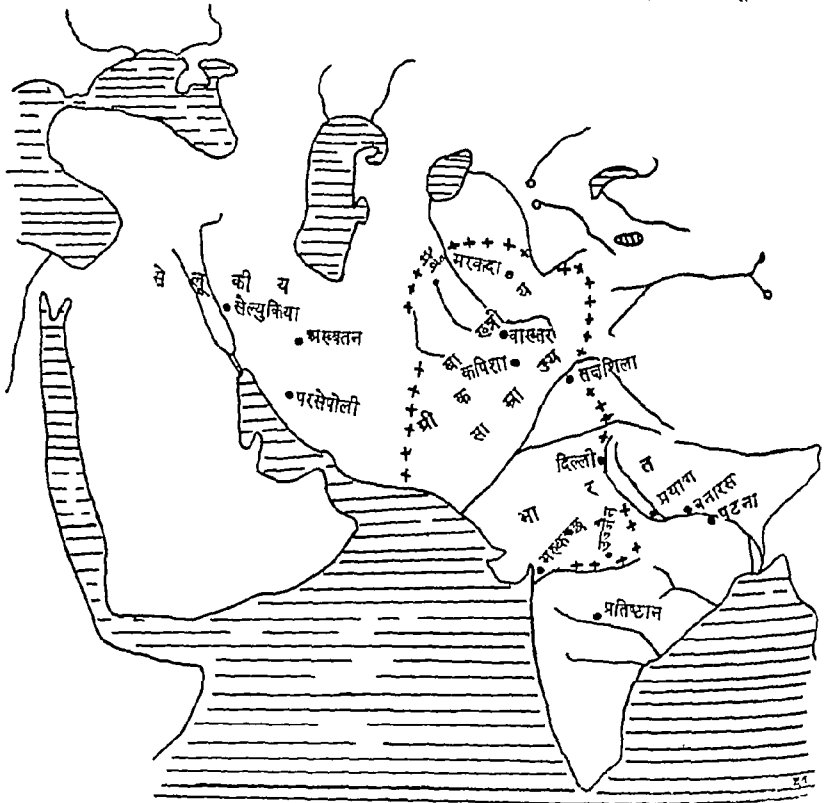
२१ देमित्रिका ग्रीक साम्राज्य (१६० ई० पू०)

दो साल (२०८-२०६ ई० पू०) तक बलखम घेरे रक्खा, और स्वय मौर्य राजा सुभगसेन मे परोपनिसदके कपिशा-उपत्यकामें आकर मिला तथा अपनी वशागत मित्रताको फिरसे दृढ किया।

(भारत-विजय[1] १७३-१६७ ई० पू०)

कुरु और दारयवहु (१) के सिंधु-विजयकी बात हम कह चुके है। जान पडता है अत्तक्षत्र (२) (४०४-३५८ ई० पू०) के समय सिंध और गधार अखामनी राज्यमे निकल गये।

[1] Greeks in Bactria, पाम्यालिकि० पृ० ६

इसके बाद पजावमें छोटे-छोटे गणराज्य तबतक मौजूद रहे, जबतक कि अलिकसुन्दर कपिशा से पजावकी ओर बढते ब्यासके तट तक नही पहुँचा। अलिकसुन्दरकी विजययात्राका फल स्थायी नही हुआ। इसमे चद्रगुप्त मौर्य (३२१ २९७ ई०पू०) भारी बाधक हुआ। अब मौर्यवश खतम हो रहा था। अतिम मौर्य राजा को मारकर सेनापति पुष्यमित्रने राज्य अपने हाथ मे कर लिया। दिमित्रि उसी सेल्यूक के नाती का दामाद होने का अभिमान रखता था, जिसका सबध मौर्य वशसे भी था। अभी तक ग्रीक शासक स्थानीय लोगो से अलग रहकर अपना शासन करना चाहते थे। दिमित्रि ने स्थानीय सामन्तो को भी सहभागी बनाना चाहा। मौय वश के उच्छेत्ता पुष्यमित्र के विरुद्ध जो भाव देश में फैला हुआ था, उसने उससे लाभ उठाना चाहा और १८३—१८२ ई० पू० मे हिन्दूकुश को पार किया। अन्तिमाखू अपने प्रदेश का उपराज था, दिमित्रिने अपने ज्येष्ठ पुत्र अेउथुदिम (२) को बाख्तर और सोग्दका शासन सौंपा, और अपने द्वितीय पुत्र दिमित्रि (२) छोटे भाई अपोलोदोत तथा सेनापति मेनान्दर के साथ भारत-विजय के लिये प्रस्थान किया। सभवत परोपनिसदै (कपिशा) बाप के समय से ही उसके हाथ में था।

आगे बढते गधार (पेशावर और तक्षशिला) प्रदेश को विजय करना था। मौर्य साम्राज्य के उत्तरा-धिकारी पुष्यमित्र को अकटक राज्य नही मिला था। कलिगराज खारवेल उसके विरुद्ध पाटलि-पुत्र तक चढ आया और पुष्यमित्र को राजधानी छोडकर मथुराकी ओर भागना पडा था। दक्षिण में शातवाहन भी उसके प्रतिद्वदी थे। मौर्य साम्राज्य के पश्चिमी भाग को वह कभी अपने हाथ में नही कर सका। उस समय अभी दर्रा खैबर का रास्ता खुला नही था। इसके खोलनेवाले कुषाण थे, जिनके आने में अभी प्राय दो शताब्दियो की देर थी। दिमित्रि को आलिकसुन्दरवाला रास्ता लेना पडा, जो कि कुनार-उपत्यका से होकर बाजोर, स्वात, बुनेर, युसुफजई और पेशावर होकर सिधु तटपर पहुचता था। सिधु नदीके पश्चिम पुष्कलावती (आधुनिक चारसद्दा) एक प्रसिद्ध नगर था, जिसे ग्रीक राजाओंकी राजधानी बन-नेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। कश्मीर और गधार अब तक बौद्ध देश बन चुके थे। तक्षशिलाका व्यापारिक और सास्कृतिक गौरव अभी नष्ट नही हुआ था, बल्कि मौर्य उपराजकी राज-धानी रहनेसे उसका महत्व और भी बढ गया था। दिमित्रिने तक्षशिला में एक नये नगर की स्थापना की, जिसे आजकल सिरकपका ध्वसावशेप कहते हैं। कपिशाका शासन उसने अपने पुत्र दिमित्रि (२) को दिया, शायद गधार को भी उसीके हाथमें दिया। इसकी राजधानी अलक सन्दारिया-कपिशा थी, जिसके ध्वसावशेष आज भी काबुलसे थोडा पश्चिम कोहदामन-उपत्यकामें बेग्रामके नामसे मौजूद हैं। दिमित्रि के सिक्केपर उसका जो रूप अकित है, उसमें शिरके ऊपर हाथीके सूड और दात जैसा मुकुट उसके भारत-विजेता होनेका सूचक है। उसने ही अपने सिक्के पर पहली बार ग्रीक भापाके साथ प्राकृत भापा और पश्चिमी भारतमें चालू खरोष्ठी लिपिको अपनाया। दिमित्रिने बतमान सिंध को जीता और वहापर अपने नामकी नगरी बसाई, जिसे हमारे सस्कृत लेखकोने दत्तामित्रि बना दिया। शायद इससे पहले वह वक्षुके किनारे भी अपने नामका नगर बसा चुका था, जो दिमित्रिमे तेरमिज बनकर आज भी मौजूद है। यवन सेना मेनान्दरके नेतृत्वमें गधारसे सागल (स्यालकोट) लेते ब्यास और सतलुज पार हो मथुरा पहुची, वहासे पचालको लेते उसने साकेतको जा घेरा (अरुणद् यवन साकेत)। फिर जाकर राजधानी

पाटलिपुत्रपर भी आक्रमण किया। उधर दिमित्रिके भाई अपोलोदोतने सिंधके डेल्टा पाटलाको ले सौराष्ट्र-विजय किया, फिर मरुकक्षको अपनी राजधानी बना चित्तौड़के पास माध्यमिका नगरी को जा घेरा (अरुणद् यवन माध्यमिका)। शायद अपोलोदोतने उज्जैनको भी ले लिया। इस प्रकार दिमित्रिके दो सेनापतियोमें मेनादर पाटलिपुत्र तक विजय करनेमें सफल हुआ और अपोलोदोत अपनी विजय यात्रामें उज्जैन तक पहुचा। दिमित्रि स्वय तक्षशिलामें था। वह समझ रहा था, अब मै फिर मौर्य साम्राज्यके वैभवको पुनर्जीवित कर सकता हूँ। अलिकसुन्दरके लिये---और वही बात अखामनी राजाओके बारेमें भी है---वह इन्दु या हिंदु का अर्थ सिंधु-उपत्यकावाला देश समझते थे। ग्रीक राजाओने उसे मौर्य साम्राज्यका पर्याय माना था। दिमित्रि जिस इन्दु या इन्दियाका राजा था, वह यक्सत नदी (सिरदरिया) से सौराष्ट्रके तट तक और ईरानी मरुभूमिसे पाटलिपुत्र तक फैली हुई थी। भारतमें दक्षिणी कश्मीर, पजाब, उत्तर-प्रदेश, बिहार, मालवा, राजस्थान, उत्तरी गुजरात, काठियावाड़, कच्छ और सिंध उसके अधीन थे।

दिमित्रि केवल आक्रमण द्वारा धन जमा करनेके लिये नही आया था, बल्कि उसकी मनसा इस देशका स्थायी शासक बननेकी थी। मध्य एसिया और मगध के बीचमें होनेसे तक्षशिलाको उसने अपनी राजधानी बनाया। प्रदेशोमे उसके उपराज (राज्यपाल) शासन करते थे। उसका पुत्र अगथोकल परोपमिसदे (कपिशा) का उपराज था। इसने भारतके पुराने चौकोर (पचमार्क) सिक्कोकी नकलपर अपना सिक्का चलाया था, जिसमें ग्रीक लिपि और भाषाको बिल्कुल हटाकर केवल भारतीय (ब्राह्मी) लिपि और भारतीय भाषा (पालि) का प्रयोग किया। यही एकमात्र ग्रीक राजा है, जिसने अपने सिक्केका पूर्णतया भारतीकरण किया। उसके चौकोर सिक्केकी एक ओर मौर्य सिक्कोकी तरह पर्वत बना रहता और दूसरी ओर पाषाण वधनीके बीचमें खड़ा वृक्ष है, जो सभवत बोधि वृक्षका सकेत है। साथ ही उसने अपने सिक्के पर "दिकइओस्" (धार्मिक) लिखा है। "धम्मिको धम्मराजा" पालीमें एक प्राचीन प्रशसावाचक शब्द है। कपिशा (परोपमिसदे) उस वक्त बौद्ध प्रधान देश था। अगथोकलके बड़े भाई तथा अपने तृतीय पुत्र पन्तलेओनको दिमित्रिने सीस्तान और अरखोसिया (बलोचिस्तान) का उपराज बनाया था, और अपने छोटे भाई अपोलोदोतको गधारका, जो साथ ही अपोलोदोत भरुकच्छ (गुजरात) का भी शासक था। जान पड़ता है, पेशावर-तक्षशिलासे सिंध डेल्टा (पाटला) होते गुजरात तक इसके हाथमे था। एक समय इसने उज्जैनको भी ले लिया था, लेकिन जल्दी ही पुष्यमित्रने उसे खाली करवा लिया। झेलम (वितस्ता) नदीके पूरबमें मिनान्दरका शासन था। गर्गसहितामे दिमित्रिके विजयका वर्णन करते हुए लिखा है---

ततः साकेतमाक्रम्य पचालान् मथुरास्तथा।
यवना दुष्ट-विक्राता प्राप्स्यन्ति कुसुमध्वजम्॥

ग्रीक राजाओके सुन्दर सिक्कोमें दिमित्रिके पिताका सिक्का और भी सुन्दर माना जाता है।[1] अनुमान किया जाता है, कि इसके पिताके समयका कलाकार इस वक्त भी मौजूद था। इसके तेत्राद्राख्म चादी के सिक्कोमें एक ओर गजमुख-मुकुट धारण किये गभीर-आकृति दिमित्रिका

---

[1] पम्यारिनिकि ग्रीको-बाकत्रिइ इस्कओ इन्कुस्त्वा, फलक २६

अर्धदेह है, और दूसरी ओर बायें हाथमें दण्ड और सिंह चर्म लिये दाहिने हाथ को कानके पास रखकर हेरकल खड़ा है। मूर्तिकी दाहिनी ओर "वसिलेउस्" अंकित है और दाहिनी तरफ पैरोंके पास "कं" तथा "दिमित्रिओस्" अंकित है। उसके भारत-विजयके उपलक्षमें निकाले सिक्कोंमें अंकित है "वसिलेउस् अनिकितोस् दिमित्रिओस्" (राजा अजेय दिमित्रि)। उसके ताबेके सिक्को पर भारतका प्रतीक गजमुण्ड बना रहता है, और दूसरी तरफ "वसीलेउस् दिमित्रिओस्"। यह उल्लेखनीय बात है कि यद्यपि ग्रीक राजाओंका शासन ईरान, बबेरु और मिश्रमें रहा, किंतु उन्होंने कही भी स्थानीय लिपि और भाषाका प्रयोग अपने सिक्कोंपर नहीं किया। भारतका सपर्क होते ही मुद्रा-नीतिमें यह परिवर्तन विशेष महत्व रखता है। दिमित्रि (२) ने अपने पिता दिमित्रि (१) के सिक्कोंपर ग्रीक अभिलेखके साथ खरोष्ट्री लिपिमें पाली भी लिखवाया।

ग्रीक और भारतीय दोनो उल्लिखित परपराओंसे पता लगता है, कि पाटलिपुत्र और उज्जैन तक एक वार पहुंचकर, मथुरा और भरोच तक अपनी स्थिति को मजबूत करके भी स्वदेश पर सकट उपस्थित होनेके कारण दिमित्रिको भारतसे जाना पड़ा। जिस शत्रुके कारण दिमित्रि (धममित्र) को भारत छोड़कर बाख्त्रियाकी ओर दौड़ना पड़ा, वह था सेल्यूकीय जेनरल एउक्रतिद। इसकी मा लओदिका सेल्यूक (२) (२४७ ई० पू०) और सेल्यूक (३) (२२६-२२३ ई० पू०) की भी पुत्री थी। दिमित्रि और सेल्युकियोंका झगड़ा चला जा रहा था। सेल्यूकीय राजा अन्तियोक (४) बाख्त्रियाको अपनी क्षत्रपी मानता था, और बाख्त्रिया शासक अपनेको स्वतत्र। परिणाम सैनिक सघर्ष के रूपमें होना आवश्यक था। अन्तियोक (४) (१७५-६३ ई०पू०) का सघर्ष अपने पश्चिमी पड़ोसियोंके साथ भी था। उसके सेनापति अेउक्रतिदने मिस्रको जीता-था। अब युरोप में एक और भी नई दुर्धर्ष शक्ति पैदा हो गई थी—रोमन साम्राज्यका विस्तार हो रहा था। १८६ ई०पू० मे रोमने धमकी दी, जिसपर सेल्यूकियों को जीते हुए मिस्रको छोड़कर चला आना पड़ा। उत्तरमें पार्थिव मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०) भी बड़ा ही प्रबल और महत्वाकांक्षी शासक था। तो भी उसने अन्तियोक (४) की मृत्यु तक अपनेको रोके रक्खा। सेल्युकीय राजपरिवारमें आपसी सघर्ष भी चल रहा था। अन्तियोक (४) के मरने के समय (१६३ ई०पू०) उसके पूर्वाधिकारी अन्तियोक (३) (मृत्यु १५३ ई० पू०) का तृतीय पुत्र रोम-दरबारमें ज़ामिन के तौरपर रह रहा था। जब उसका भाई सेल्युक (४) १७५ ई० पू० मे मरा, तो उसने अन्तियोक (४) के नामसे प्रतिद्वद्वियोंको हराकर स्वय शासनसूत्र अपने हाथमें सभाला और अपने भतीजे बालक राजाकी मा अन्तियोक (३) की पत्नी लओदिका से व्याह किया। लओदिकाने क्रमश अपने तीनो भाइयोंसे शादी की थी—पहले ज्येष्ठ अन्तियोक (३) (मृत्यु १६३ ई० पू०) से, फिर द्वितीय भाई सेल्युक (४) से, फिर तीसरे भाई अन्तियोक (४) से। उस समय बहिन भाईका व्याह ईरानियोंकी तरह ग्रीक राजाओंमे भी होता था। शायद यह अंतिम व्याह उसने अपने पुत्रको गद्दीका हकदार बनाये रखनेके लिए किया। १७०-१६६ ई० पू० में उसके लड़केकी हत्या हो गई। अब तक अन्तियोक (४) राज का साझीदार भर था, अब वह अपने भतीजेके हत्यारेको प्राणदड दे स्वय एकाधिप राजा बन गया। १८९ ई० पू० में अन्तियोक (३) और रोमका मगनेसियामें भीषण युद्ध हुआ, जिसमें रोमकी विजय हुई और क्षुद्र-एसियाके सभी राजा रोमके करद हो गए।

अन्तियोक (४) ने अपने आरम्भिक जीवनके बहुत से वर्ष रोममें बिताये थे, इसलिए रोमकी शक्तिसे वह अच्छी तरह परिचित था और बडे भाईकी गलतीको दोहराना नही चाहता था। उसके राज्यके उत्तरमें मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०) था, जिसे छेडा नही जा सकता था। ईरानी रेगिस्तानके पूवके भाग (सीस्तान और वलोचिस्तान) को दिमित्रिने ले लिया था। यदि अन्तियोक (४) राज्यविस्तार कर सकता था, तो इसी ओर। इस समय दिमित्रि भारत-विजयमें लगा अपने पश्चिमी सीमातसे दूर था। यह मौका वडा अच्छा था। अन्तियोकने मिस्र-विजय करके १६९ ई० पू० में उसकी राजधानी मेम्फीमें अपना अभिषेक कराया था, लेकिन रोमकी लाल-लाल आखोको देखते ही (१६८ ई० पू०) उसे मिस्रको छोड देना पडा।

५ एउक्रतिद (१६६-१५९ ई० पू०)

एउक्रतिद[1] अन्तियोक (४) (१७५-१६३ ई० पू०) का फुफेरा भाई था। उसके जिम्मे अन्तियोकने दिमित्रिके राज्यको जीतने का काम सौपा और स्वय पश्चिमके विजयके लिये प्रस्थान किया। पश्चिममे उतनी सफलता नही मिली, लेकिन एउक्रतिदने १६७ ई० पू० तक हिंदूकुशके पश्चिमके प्रदेशको जीत लिया। सीस्तान, अरखोसिया (वलोचिस्तान), अरिया (हिरात), वाख्त्रिया और सोग्द एउक्रतिदके हाथमे चले गये। अब दिमित्रि कैसे तक्षशिलामे चैन के साथ वट सकता था? वह फौरन भारतसे अपनी सेना ले वाख्त्रियाकी ओर दौडा। उसने अपने सेनापति मिनान्दरको भी ऐसा करनेके लिये हुक्म दिया, जिसे उसने नही माना। एक जगह दिमित्रिने एउक्रतिदको घेर लिया था, लेकिन वह निकल भागनेमें सफल हुआ। हिंदूकुशके पास ही एक युद्ध म दिमित्रि मारा गया। अलिकसुन्दरकी तरह दिमित्रिने भी ग्रीक और अग्रीक के भेदको अपने शासन और सेनासे मिटाना चाहा था। शायद इसीके कारण ग्रीक सैनिक उससे प्रसन्न नही थे। उधर सेल्यूकीय राजा शुरूसे ही ग्रीक रक्त के पक्षपाती थे।

१६६ ई० पू० में एउक्रतिदका कोई प्रतिद्वद्वी नही रह गया था। अन्तियोक (४) उसका कुछ विगाड नहीं सकता था। १६६ ई० पू० मे एउक्रतिदने अपनेको राजा (वसीलेउस्) ही नहीं, "महाराज" (वसीलेउस् मेगलोस्) घोषित किया। एउक्रतिदने वाख्त्रिया म अपने नामकी एक नगरी (एउक्रतिदेइया) बसाई। उसके पुत्र हेलिओकलने अपनी राजधानी वाख्त्रिया ही रक्खी। एक चादीके सिक्केमें एउक्रतिदका एक तरफ हैट पहने चेहरा है। ग्रीक वाख्त्री राजाओम इसे और उपराज अन्तिमाखूको छोड किसीने हैट सहित चित्र नही वनवाया। उसके सिक्केकी दूसरी ओर ग्रीक लिपिमें दो दौडते घोडो पर हाथम लवे भाले और पत्तेवालीशाखा लिये दो सवार दौड रहे ह। इसके ऊपरकी ओर अर्धगोलाकार पांतीमें लिखा है—"वसीलेउस् मेगलोस्" और नीचे "एउक्रतिदोस्"। एक दूसरे सिक्के (चादी के तेत्राद्रास्मा) पर एक ओर उसका फीता बधा नग्नशिर है और दूसरी ओर ग्रीक देवता अपोलोन दाहिने हाथमें धनुप और वायेंमें वाण लिये खडा है। उसके तीन तरफ गोल पक्तिमें लिखा है "वसीलेउस् मुतिरोस् एउक्रतिदोस्" (राजा त्राता एउक्रतिद)।

---

[1] Greeks in Bactria

एउक्रतिदने १६६ ई० पू० को बाख्त्रियामें बिताया, फिर १६५ या १६४ ई० पू० में उसने भारतकी ओर अभियान किया। एउक्रतिद जिस समय बाख्त्रियामें अपनी दिग्विजय कर रहा था, उसी समय ग्रीको-बाख्त्री शासनके उच्छेत्ता यू०ची० हूणोके प्रहारके कारण अपनी मूल भूमि कान्सू को छोड बालबच्चो, घोडों-भेडो और तम्बुओको लिये चल पडे, शायद फर्गानामें वह तब तक पहुच भी चुके थे। एउक्रतिद हिंदूकुश पारकर पहले कपिशा पहुचा, जहा दिमित्रिके पुत्र अगथोक-लसे उसकी भिडन्त हुई। अगथोकल युद्धमे मारा गया और कपिशा नये ग्रीक शासकके हाथोमे आई। अगथोकलके गिलट के सिक्केपर एक ओर राजाका शिर है और दूसरी ओर सामने वृक्षकी ओर मुह किये एक सिह खडा है। सिहके ऊपरकी पातीमें "वसीलेउस्" लिखा है और नीचे "अगथोक्लेओउस्"। जिस समय एउक्रतिद भारतकी दिग्विजयमे लगा था, उसी समय (१६३ ई० पू० में) अन्तियोक (४) अपने पश्चिमके अभियानमें क्षयरोगसे मर गया। अब एउक्रतिद सवस्वतत्र था। एउक्रतिदकी विजयके बारेमे अनुमान किया जाता है, कि उसने गधार जीता। उसी युद्धमें वहाका राजा अपलोदोत (१६३ या १६२ ई० पू० मे) मारा गया। झेलम तक उसे बढनेमें रुकावट नही हुई। शायद अपलोदोनके प्रदेश सिधको भी उसने ले लिया। झेलमसे मिनान्दरकी सीमा शुरू होती थी। मिनादरने उसे आगे बढने नही दिया। अपने भार-तीय सिक्कों-पर एउक्रतिदने "रजतिरज" लिखवाया है। १६० ई० पू० में दिमित्रिकी तरह एउक्रतिदको भी घरपर सकट आनेकी खबर पाकर भारत छोडना पडा।

अन्तियोक (४) के मरने (१६३ ई० पू०) के बाद उसका बडा भाई देमित्रि (१), जो रोममें जामिनके तौरपर रहता था, भागकर स्वदेश लौटा। इस बीच अन्तियोक (१) का पुत्र अन्तियोक (५) गद्दीपर बैठ गया था। चचाने उसे हटाकर स्वय राजगद्दी सभाली। एउक्रतिदने उसे राजा स्वीकार नहीं किया। अब सेल्यूकीय साम्राज्यके नाशका समय आ गया। मिदियाका स्त्रतेगोस (राज्यपाल) तिमार्खुशने (१६२ई०पू० में) अपनेको "वसीलेउस् मेगलोस्" (महाराज) घोषित कर दिया, लेकिन पार्थिव राजा मिथ्रदात (१) ने १६१-१६० ई० पू० में उसे हराकर मारी मिदियाको अपने राज्यमें मिला लिया। इसके बाद मिथ्रदातने एउक्रतिदके राज्यके हिरात नदीके पश्चिमके भागको छीन लिया। यही खबर सुन कर एउक्रतिद भारतको छोडकर लौटनेके लिये मजबूर हुआ। १५६ ई० पू० में मिथ्रदात तथा तत्सहायक दिमित्रि (२) से लडते हुए एउक्रतिद मारा गया। दिमित्रि (१) के पुत्र दिमित्रि (२)ने अपने पिताके शत्रुको मारकर वदला लिया, लेकिन इससे वह अपने वशकी राजलक्ष्मीको लौटा नही सका। अब पार्थिवोंका सितारा ओज पर था।

६ हेलियोकल (१५९-१३० ई० पू०)

प्रतापी विजेता एउक्रतिदका पुत्र हेलियोकल अपने ही नही ग्रीको-बाख्त्रीय राजवशके भाग्यसूर्यको डूबनेमे बचानेके लिए बाख्त्रियाका शासक बना। इस समय तक सोग्दका ऊपरी भाग यूचियोके हाथ में चला जा चुका था। शायद उसका निचला भाग और मेर्व भी अभी हेलियोकलके हाथमे था। मिथ्रदातने सीस्तान, अरखोसिया और गेदरोसियाको यवनोसे छीन लिया था। फ्रात

---

[1] वही

सीस्तानका गवनर था। पार्थिव शक-वंशी थे, इसलिए उन्होने सीस्तानमे हेलमन्द नदीके निम्न भागमें शक घुमन्तुओको ले जाकर वसा दिया। इसीके कारण इस प्रदेशका नाम ११५ ई० पू० के आसपास से शकस्तान (सीस्तान) पड गया। पीछे शकोके भारतकी ओर बढनेके समय सीस्तान उनके अड्डेका काम करने लगा। थोडे समय बाद ये शक पार्थिवोसे स्वतन्त्र हो गए। मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई० पू०) ने अपने सेनापति सूरेनको इन्हे दवानेके लिये भेजा। वह ११५ ई० पू० के आसपास सीस्तानको पार्थिव साम्राज्यमें मिलानेमें सफल हुआ। ११५ ई० पू० में पार्थिवोमे स्वतन्त्र होकर अपना राज्य स्थापित करनेके उपलक्षमें शकोने अपना एक (पुराना) शक-संवत चलाया और प्रथम शक राजा ने "रजतिराज" (राजाधिराज) की पदवी धारण की।

हेलियोकल वाख्त्रियाका अतिम ग्रीक राजा था। उसने भी पिताका अनुकरण करते हुए दिग्विजय करना चाहा। उसके राज्यमे शायद परोपमिसदै (कपिशा) थी। पिताको मिनादरके सामने जिस तरह असफल होना पडा था, उसके कारण वह मिनादरकी मृत्यु तक चुप रहा। इसके बाद उसने गधार पर चढाई की। मिनादर-पुत्र स्त्रात (१) मे सघर्ष हुआ। हेलियोकलने झेलम तक ले लिया और अब स्त्रातके पास सागल (स्यालकोट) से मथुरा तकका राज्य वच रहा। हेलियोकलने अपने भाई एउक्रतिद (२) को अपने स्थानपर शासक नियुक्त किया था। उसने अपने सिक्केपर "वसीलेउस् सूतिरोस एउक्रतिदोस्" (राजा त्राता एउक्रतिद) उत्कीर्ण करवाया। जिस समय हेलियोकल भारतकी ओर दिग्विजयमे लगा हुआ था, इसी समय मिथ्रदात (१) ने अपना राज्य कास्पियन तटसे फारसकी खाडी तक फैला दिया। १४२ ई० पू० में वह वावुलका स्वामी था। १४१ ई० पू० मे सेल्यूकीय राजा देमित्रि (२) हेलियोकलसे मिलकर मिथ्रदातपर चढाई करना चाहता था। शायद वह अभी भी हेलियोकलको अपना सामन्त समझता था। दोनोका प्रयत्न विफल गया। मिथ्रदात ने दोनो पार्श्वोपर लडनेकी नीतिको अच्छा नही समझा और दिमित्रिके सेनापति को ववेरु ले लेने दिया, फिर भारतमे लौटकर पार्थियापर आक्रमण करने वाले हेलियोकलकी ओर बढा और दिसवर १४१ ई०पू० म हुर्कानियामें उसे पराजित कर ववेरुकी ओर लौटा। १४०-१३९ ई०पू० में दिमित्रि पराजित होकर वन्दी वना और उसके ही साथ ईरान और मसोपोतामियामें सेल्युकी वंश का स्थान पार्थिव वशने लिया। हेलियोकल राजा वाख्त्रका अंतिम ग्रीक राजा था। उसके सिक्कोकी नकल यूची-शकोने की, इससे मालूम होता है, कि इसीसे यूचियोने वाख्त्रियाको छीना था।

हेलियोकलका चतुष्कोण तावेका सिक्का मिलता है, जिसकी एक तरफ ग्रीकमें "वसीलेउस दिकइओस एलिओक्लेओस" (राजा धार्मिक हेलियोकल) और, दूसरी तरफ हाथी है जिसके तीन पार्श्वो में खरोष्ठी लिपिमे "महरजस ध्रमिकस हेलियक्रेयस" लिखा हुआ है।

७ अन्तियलिकिद

यह कहना मुश्किल है, कि इसका हेलियोकलसे क्या सबध था। मालूम होता है, यह कपिशा और गधार (हिंदु कुश) मे झेलम तकका राजा था। शायद वाख्त्रियासे भी इसका कुछ सबध रहा। इसके सिक्केपर लिखा रहता है "वसीलेउस निकिफोरस अन्तिअलकिदास्" (राजा विजयी अन्तियलिकिद)।

१४१ ई०पू० मे बाख्त्रियाके इतिहास पर जो अंधकार छा जाता है, वह १२८ ई०पू० में ही हटता है, जब कि चीनी जेनरल और पर्यटक चाङ्कयान् बाख्तरमें पहुंच वहा यूचियोंको सर्वप्रभुत्वसंपन्न पाता है।

४ भारतमें

१ मेनान्दर (१६६-१४५ ई० पू०)

अच्छा होगा यदि मेनान्दर और उसके उत्तराधिकारियोंके बारे में भी कुछ कह दिया जाय, क्योंकि वस्तुत यह बाख्त्री राज्यके ही भारत-दिग्विजयके अवशेष थे। भिक्षु नागसेन और राजा मिलिन्दका जो प्रश्नोत्तर, "मिलिन्दप्रश्न" में मिलता है, वह यही राजा मेनान्दर है। इस ग्रंथ से पता लगता है, कि उस समय मेनान्दर की राजधानी सागला (स्यालकोट)थी। उससे यह भी मालूम होता है, कि मिलिन्दका जन्म अलसन्दामें हुआ था। अलसन्दा या अलेक-सन्दरिया बहुत सी थी, इसका जन्म कौन सी अलकसन्दरियामें हुआ था, यह नही कहा जा सकता। यह तो निश्चित है, कि वह अलकसन्दरिया कपिशा नही हो सकती, क्योंकि सागल से उसकी जो दूरी बतलाई गई है, उतनी दूर कपिशा (कोहदामन-उपत्यका) नही है। मेनान्दर किसी प्रभावशाली कुलमें पैदा हुआ था, या अपने सैनिक कौशलसे ऊपर उठा, इसे भी जानने के लिये हमारे पास साधन नही है। उसने देमित्रि[1] की पुत्री अगथोक्लेइयाको व्याहा था और इस प्रकार राजजामाता था। पहिले वह झेलमसे पूरबके ग्रीक-राज्यका शासक बनाया गया था, लेकिन एउक्र-तिदके देशकी ओर भागनेपर यह गांधार, सिंध और गुजरात तकका भी शासक बन गया। इसकी राजधानी सागला थी, लेकिन मथुरा और भरौच में भी उसके स्त्रेतोगोस (राज्यपाल) रहते थे। मेनान्दरने "सोतेरोस (त्राता)" और "दकिइओस्" (धार्मिक) की उपाधि धारण की थी।

२ स्त्रात (१)

मेनान्दरकी मृत्यु (१४५ ई०पू०) के बाद स्रात सिंहासनपर बैठा, लेकिन जैसा कि ऊपर कहा, उसे हेलियोकलसे मुकाबला करना पड़ा, जिसके कारण गंधार (खैबर से झेलम) उसके हाथसे निकल गया। तो भी स्यालकोटमे मथुरा तक की भूमि अबभी उसकी थी। उसके आरंभिक शासनकालमें उसकी मा अगथोक्लेइया अभिभाविका रही, जिसका नाम सिक्को पर भी मिलता है। स्त्रातका शासन दीर्घकाल-व्यापी था।

३ स्त्रात (२)

पौत्र सिंहासनपर बैठा। सिक्केपर यह एक दाढीवाला मध्यवयस्क पुरुष दिखलाई पड़ता है। आगेके अपोलोदोत, फिलोपातोर, दियोनिमिलोउम्, जोइलुस् (२), सोतेर, और लिक्मेनुस इन पाच यूनानी राजाओंके सिक्के मिलते है, जिन के शासन काल, शासित भूभाग या राजधानीके बारेमें कहना मुश्किल है। यह ग्रीकराजा भारतीय हो गये थे, और शकोंसे भी इनका वैवाहिक संबंध था। उन्होंने अपोलोदोत (२) के सिक्कोकी नकल की है, शक

राजा अजेसूने भी अपोलोदोत (२) के सिक्केपर अपना ठप्पा लगाया, जिससे अपोलोदोत (२)के तुरन्त बाद ही उसका होना मालूम होता है। अपोलोदोत (२) ३० ई०पू० के आसपास मौजूद था। हमें मालूम हैं, कि मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई०पू०) के सेनापति सोरेनने शकोंको सीस्तानसे भगाया था, जिसके कारण उनमेंसे कितने ही बोलन (मुल्ला) दर्रेसे भारतकी ओर आये। इन्होंने सिंध ,कच्छ और सौराष्ट्र ले लिया। सिंधका वह भाग अभीरिया कहा जाता था, जिसे शको ने पहले लिया। आभीर भी यवन विजेताओंके साथ आये मध्य-अेसियाके घुमन्तू शकोंकी ही एक शाखा थी। प्रथम शक मिव, गुजरानमें ११०-८० ई०पू० के बीच शासन करते थे।

५ राज्य-व्यवस्था[1]

वाख्त्रियाके ग्रीक शासनका ढाचा वही था, जो कि अलिकसुन्दरने दारयवहु (१) द्वारा निर्धारित ईरानी शासन व्यवस्यामें कुछ सुधार करके लिया था। दारयवहुने क्षत्रप, सेनापतिके अतिरिक्त उन्हीके समान राजामात्यका एक तीसरा पद भी क्षत्रपियोमें स्थापित किया था, किंतु अलिकसुन्दरने राजामात्यका पद हटा दिया था। क्षत्रपीका शासक अब स्त्रतेगोस् कहलाता था दारयवहुकी क्षत्रपिया बहुत बडी थी। सेल्यूकीय साम्राज्यसे कहीं बडा होनेपर भी दाराके साम्राज्य मे वह तेतीस ही थी, जबकि सेल्यूकीय राज्यम उनकी सख्या ७२ हो गई। क्षत्रपीके नीचे एपारर्ची थी और उसके नीचे हिपारची। एपारचीको जिला और हिपारचीको तहसील या सब-डिवीजन कह सकते हैं। वाख्त्रियाने एपारची ही को उपराज द्वारा शासित प्रदेश वना दिया। एपा-रचिया प्राय प्राकृतिक विभाजनके आधारपर बनी थीं। इनके अतिरिक्त कितनी ही ग्रीक वस्तिया (पुरिया) थी, जिनमें ग्रीस की पोलियोके अनुकरण करनेकी कोशिश की जाती थी। अलिकसुन्दरने ७० के करीब पोलिस (पुरिया) बसाई थी। सेल्यूकीय पोलिस सैनिक उपनिवेश जैसी थी। ग्रीक पोलीका प्रबंध एक परिषद् और एक सभा द्वारा होता था। तिग्रा तटपर अवस्थित सेलूकियाकी परिषद्के ३०० सदस्य होते थे, सभामें और भी अधिक सदस्य होते थे। इनकी मासिक और वार्षिक बैठकें हुआ करती थी। नगर सभाका काम केवल नगरकी व्यवस्था ही करना नही बल्कि नागरिकोंके शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्यके विकासको भी देखना था। इसके लिए क्रीडा-क्षेत्र, अखाडे, नाट्यशालायें हुआ करती थी। पोलियो तथा देशकी राजकीय भाषा ग्रीक थी। नगरके देवता भी ग्रीक देवावलीसे लिये गये होते थे। पोलीके मजिस्ट्रेटको एपसितल कहते थे। एपसितलका नाम परिषद् पेश करती थी। नगरका एक जननिर्वाचित कोषाध्यक्ष भी होता था। निर्वाचन प्राय तीन सालो बाद होता था। वाख्त्रिया (वलख) और पुष्पकलावती (गधार) की गणना प्रधान ग्रीक पोलियोंमें थी। सेल्यूकीय साम्राज्य म ग्रीक और अग्रीकका बहुत भेदभाव रक्खा जाता था, इसलिए वहाकी पोलियोमें शासितो और शासकोका सबन्ध कुछ कुछ वैसा ही था, जैसा कि अंग्रेजी शासनकालमें हमारी छावनियामें गोरा और कालोका। इसका यह अर्थ नहीं, कि दोनो जातियोंमें विवाह-सबध नहीं होता था। दिमित्रि (१) जैसे राजाओने अनुभव किया, कि इस तरहका भेद-भाव अच्छा नही है। उनके समय

---

[1] Greeks in Bactria

पोलियोंके भेदभावमें कुछ कमी अवश्य हुई। दिमित्रिने अपने उच्च पदोंके लिये भी स्थानीय लोगो को लिया था और पार्थिवों (पह्लवों) और शकोंके लिये भी क्षत्रप बननेका रास्ता खोल दिया था। मौर्योने विदेशियोंको अपना राज्यपाल तक बनाया था, जैसा कि सौराष्ट्रके मौर्य गवर्नरके उदाहरणसे मालूम होता है। सौराष्ट्र, अवन्ती, मथुरा और तक्षशिलाके शक (पल्लव) क्षत्रपोंकी परपराका आरभ ग्रीक राजाओंके समयमें हुआ। ग्रीक शासनके अवशेष के तौरपर दशपुर और दूसरे भारतीय नगरोंमें ग्रीकोंका होना ईसाकी पहली-दूसरी शता-ब्दियोंके उनके अभिलेखोंसे मालूम होता है, वही अवस्था बाख्त्रिया और सोग्दमें भी रही होगी। समव है, ग्रीक लोगोका भारतीकरण हमारे यहा जितनी तेजीसे हुआ, उतना मध्य-एसियामें न हुआ हो। वहाके घुमन्तू शक भी अपनी मूलभूमिके सभी समाजिक रीति-रवाजोंको कायम रखना चाहते थे। कुछ पश्चिमी विद्वानोंका विचार है, कि यवन (ग्रीक) के नामसे जिन दाताओंके अभिलेख नासिक, कार्ला आदिकी गुफाओंमें मिलते है, वह वस्तुत यवन जातिक नहीं, बल्कि यवन नागरिक हो सकते है। हम देख चुके है, कि अपोलोदोत जैसे ग्रीक राजाने अपने सिक्कोंका इतना भारतीकरण किया, कि उनसे ग्रीक लिपि और भाषा तकको हटा केवल भारतीय लिपि और भारतीय भाषा ही को रहने दिया। ई० पू० द्वितीय शताब्दी में भारतीय ग्रीक राजाओंने भारतीय देवताओंको अपने सिक्कोंमें स्थान दिया। मिनान्दरने खुलकर भारतीय (बौद्ध) धर्मको अपनाया, दिमित्रि (१) (१८९-१६७ ई० पू०) से ही बहुतसे ग्रीक राजाओंने "धार्मिक धमराजा" बननेका प्रयत्न किया, इसलिए जहा तक भारतका सबध है, यहा यवन-जातिक और यवन-नागरिककी कल्पना निराधार मालूम होती है। यहाके यवन कहे जानेवाले नागरिक वस्तुत यवन-जातीय थे। भारतमे भेदभाव हो भी नही सकता था, क्योंकि अलिकसुन्दरके मरनेके थोड़े ही दिनों बाद ग्रीक छावनिया नही रह गई थीं, और उसके बाद जब दिमित्रि (१) भारत में शासन करनेके लिये आया, तो उसकी नीति बदल चुकी थी।

ग्रीको-बाख्त्रीय राजाओंके सिक्कोंसे मालूम होता है, कि वहाकी पोलियोंके प्रधान देवता ग्रीक देवावलीमेंसे ही लिये गये थे। जिस तरह ग्रीस देशमें नगर देवता होते थे, वैसे ही एसियाई पोलियोंमें भी उन्होंने देवता स्थापित किये थे। ये ग्रीक देवता भारतमें भी आये थे, जिनकी कितनी ही मूर्तिया हमें गधार कलाके सुन्दर नमूनोंके रूपम मिली ह। हेरेकल एक प्रधान ग्रीक देवता था। पौरुषको प्रकट करनेके लिये इस देवसेनानीका बहुत सम्मान था। एउतिदिमके सिक्को पर इसकी सुदर मूर्ति मिलती है। दूसरे ग्रीक देवताओंमें जेउस् दिवोदात (१) और दिवोदात (२), हेलियाकेल के सिक्को पर मिलता है। यह देवताओंका पिता (देउस्पितर) माना जाता था, लेकिन सैनिक प्रभुत्वपर अधिक श्रद्धा रखनेवाले ग्रीक शासकोंके सिक्कोपर उसकी उतनी प्रधानता नही देखी जाती। पोलियोंमें इसकी पूजाका विशेष स्थान रहा होगा, इसमें सदेह नही। अपोलोन तीसरा ग्रीक देवता था, जिसका चित्र एउक्रतिदके सिक्के पर मिलता है। इस सगीत-प्रिय देवता की मिट्टीकी भी मूर्तिया मिली है। अथिना अथेन्सकी महान् देवी दिवो दात (२) के सिक्केपर मिलती है। दिमित्रि, अपोलोदोत, मेनान्दर और दूसरे ग्रीक राजाओने भी अपने सिक्कोपर स्थान देकर अथिना का सम्मान किया है। ग्रीस देशकी सबसे सम्माननीय पुरीकी अधिष्ठात्री का ज्यादा सत्कार होना ही चाहिये। पल्लदा अथिना ही का दूसरा नाम है।

विजय की देवी निका अन्तिमाख, एउक्रतिद, मिनान्दर और दूसरे राजाओके सिक्कोपर मिलती है। दिवोनिस् देवताकी भी पूजा होती थी। वाख्त्रिया, फर्गाना और कपिशाकी द्राक्षावलय भूमिमें इस द्राक्षाके देवताको कैसे भूला जा सकता था? कपिशामें दिवोनिसूका विशेष सम्मान था, यह अगथोकलके सिक्केसे मालूम होता है। मेगस्थेनके कथनानुसार भारतमें पहाडोमें दिवोनिस और मैदानोमें हेरेकलकी पूजा होती थी, किंतु जान पडता है, मेगस्थेनने शिव और वासुदेवको दिवोनिस और हेरेक्ल समझ लिया। ई० पू० द्वितीय शताब्दीके आरभमे भारतमें इतने ग्रीक लोग कहा थे, कि पहाडो और मैदानोमें देवानिस और हेरेकलकी पूजा होती?

ग्रीक देवताओके अतिरिक्त ईरानी देवी अनाहिता भी ग्रीक पूजामें स्थान पा चुकी थी। कहा जाता है, मूलत जिस तरह सोग्द (जरफशा) नदीकी अधिदेवता दइतूई, यक्सत (सिर दरिया) की अधिदेवता तनइस् थी, उमी तरह वक्षुकी अनाहिता। अखामनी कालमें भी अनाहिता की महिमा थी। कुछ विद्वानोका मत है, कि यह मूलत वाबुली देवी थी, जिसे ईरानियोने स्वीकार कर लिया। सामानी कालमें तो अनाहिता परमेश्वरी वन गई। रोमन इतिहासकार क्लेमेन्त अलेकसन्द्रीय (ईसाकी दूसरी-तीसरी शताब्दी) से पता लगता है, कि उसके समय वाख्त्रिया नगरीमें अफ्रोदिता तनइसकी पूजा होती थी। रॉलिन्सनने तनइका ईरानी नामोच्चारण तनना बतलाया है। मित्रके नामसे सूर्यदेव ग्रीक भक्तोको अपनी ओर ज्यादा खीचनेमें सफल हुए थे। कहा जाता है, ईसाकी आरभिक सदियोमें मित्र-सम्प्रदायने ग्रीसदेशपर इतना प्रभाव डाला था, कि वहा यह सवाल पैदा हो गया था कि ग्रीस और रोमका धर्म मित्रवाद होगा, या ईसाइयत। मित्र जान पडता है, शतम्-परिवारका एक जातीय देवता था। ईरानी-आर्य भी मित्रके नामसे सूर्यकी पूजा करते थे। यद्यपि जर्थुस्त्र के सुधारने अहुरमज्दको प्रथम स्थान दिया, लेकिन मित्र को वह पदच्युत नही कर पाया। भारतीय आर्य भी मित्र नाममे सूर्यकी पूजा-प्रार्थना करते थे। यह ऋग्वेदके प्रधान देवताओमें हैं। आरभिक समयमें ईरानी या भारतीय आर्य मूर्ति बनानेकी आवश्यकता न समझ प्रत्यक्ष सूर्यकी ही पूजा करते थे, लेकिन पीछे सूर्यकी मूर्तिया भी बनने लगी। वाख्त्रियामें ई० पू० तृतीय और द्वितीय शताब्दीमें मिथ्र और अनाहिताका बहुत ऊचा स्थान था। इसी समय उसकी मूर्ति बनी, जो सिक्कोपर मिलती है। शकोके समयसे मिथ्र (मिहिर) की पूजा भारतमें भी बहुत बढी। शकोने जल्दी ही भारतके धर्म और सस्कृतिको अपना लिया। एक दो शताब्दियो तक ही वेषभूषा, खानपान आदिमे अपने पृथक् अस्तित्वको कायम रखते पीछे भारतीय जनसमुद्रमें इतना घुल-मिल गये, कि उनका पता लगना तक मुश्किल हो गया, किंतु, अपनी सूर्यकी मूर्तियोके रूपमे उन्होने भारतमे अपना स्थायी चिन्ह छोडा। इनके सूर्य देवता द्विभुज और शकोकी तरह ही घुटने तक बूट पहनते थे। वही बूट, जिसे आज भी रूसी लोग जाडोमें पहनते हैं, और जिसे हम कनिष्ककी मूर्तिमें भी देख सकते हैं। ई० पू० ५वीं ६ठी शताब्दीमें भी इसी तरहके बूट अल्ताईसे लेकर कार्पेथीय पर्वतमाला तकके शक पहना करते थे।

भारतीय देवताओमें धिषणा देवीको वाख्त्रिय-ग्रीक राजाओके पूज्य देवताओमें बतलाया जाता है। लेकिन धिषणा देवी भारतमे उतनी प्रसिद्ध नही थी। वैदिक देवी होने वह केवल किसी प्राकृतिक शक्तिकी प्रतिनिधित्व करती होगी, इसलिए उसकी मूर्तिका यहा पता नहीं लगता। धिषणा देवीकी द्विभुज तथा अधनग्न मूर्ति एक धातुके कटोरेपर मिली है। इसमें दाना

तरफ दो पुरुष (अश्विनी कुमार द्वय) दिखलाये गये हैं। बुद्धकी मूर्ति गंधार-कलासे ही शुरू होती है, जिसका उद्‌गम ग्रीक और भारतीय कलाका समिश्रण है। ई० पू० द्वितीय शताब्दीमें अभी बुद्धकी मूर्तिया बन नही पाई थी, इसलिए भरहुतकी तरह ग्रीक और मिनान्दर, अगथोकलके सिक्को पर बौद्ध चिह्न, स्तूप या बोधिवृक्षको ही रखकर सन्तोष कर लिया गया। शिवको भी नादियाके सकेतसे चित्रोपर प्रकट किया गया है। ग्रीक लोग अपने उत्तराधिकारी शकोकी तरह धर्मके वारेमें बडे उदार थे। वह ईरानी अहुर-मज्दको भी पूज सकते थे, और उसके विरोधी भारतीय इन्द्रको भी। जेउस, बुद्ध, अनाहिता, पल्ला, वृत्रेघ्न, हेरेकल सभीसे वह वरदान मांगनेके लिए तैयार थे।

६ कला[1]

ग्रीको-बाख्त्रीय कलाका एसियाकी कलामें बहुत ऊँचा स्थान है। ग्रीक कला सेल्यूकीय पोलियोमें भी बहुत आदृत थी, किंतु वह वहाँ बँध्या ही रह गई। बाख्त्रियामें पहुँचकर उसने भारत, अफगानिस्तान और उभय मध्य-एसियाकी कलापर बहुत महत्वपूर्ण प्रभाव छोडा। भारतके सपर्कमें आकर यही कला गधार कलाके नामसे प्रसिद्ध हुई। हम बतला चुके है, कि एउथुदिम, दिमित्रि और एउक्रतिदके सिक्कोके रूपमें पोर्त्रेत कला इतनी ऊँची उठी, जहाँ पीछे उसका प्रतिद्वद्वी कोई नही हुआ। भारतमें उसके बाद मथुराकी कुषाणकला विकसित हुई, जिसकी उत्तराधिकारिणी गुप्त-कला है, जिसके रूपमें भारतीय कला अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची। यद्यपि मथुराकी कला गधार कलाकी नकल नही है, किंतु उसकी उन्नतिमें उस कलाका हाथ अवश्य रहा है। मथुरा-कलाके पैदा होने और फलने-फूलनेका वही समय है, जब कि मथुरा ग्रीक और शक क्षत्रपोकी राजधानी रही। ग्रीक और शक क्षत्रपोकी छत्रछायामें ही उसकी उन्नति हुई, फिर वह गधार-कलासे कैसे प्रेरणा लेनेसे रुकती? लेकिन ग्रीक कलाने भारतीय कलाके लिए जो कुछ किया, प्रेरणा देनेमें जितना हाथ बँटाया, वही बात मध्य-एसियाके वारेमें नही कही जा सकती। कग लोगोके सिक्को और कलापर उसका कुछ प्रभाव ख्वारेज्ममें अवश्य देखा जाता है—ख्वारेज्ममें मिले कलाके नमूनोपर उसका प्रभाव देखा जाता है, यद्यपि जहाँ तक राजनीतिक प्रभावका सबध है, ख्वारेज्म न अलिकसुन्दरके अधीन हुआ, न उसके उत्तराधिकारियो—सेल्यूकीय तथा ग्रीको-बाख्त्रीय राजाओके। मध्य-वक्षु-उपत्यकामें उसके अवशेष तेरमिज आदिकी खुदाइयोंमें मिले हैं, लेकिन उसका प्रसार जल्दी ही खतम हो गया। ७ वीं शताब्दीके अतमें पहुचते-पहुचते इस्लामसे इस भूमिका सबध होने लगा, ८ वी, ९ वी, १० वी—इन तीन-शताब्दियोंमें तो मूर्ति-ध्वसकोका प्राधान्य हो जानेके कारण मूर्तिकलाके पनपनेकी गुंजाइश नही रही। अब वहा ही भारतकी गधार कला और उसकी उत्तरवर्ती कलाओ की तरह मध्य-एसियामें कोई प्रवाह प्रचलित नही रह सका। तुर्फान और दूसरे स्थानोसे मिले नमूनोसे पता लगता है, कि ग्रीको-बाख्त्रीय कलाने पूर्वी मध्य-एसिया और चीनके पश्चिमी भागमें अपना प्रभाव फैलाया था।

---

[1]वही, पाम्यातिनिकि० फलक १-५०, इस्कुस्स्त्वो स्रेद्‌निइ आज़िइ (व० व० वेइमार्न, मास्को १९४०) पृ० ९-१८।

स्रोत ग्रथ

१ पाम्यत्निकि ग्रेको-वाक्त्रिइइस्कओ इस्कुस्स्त्वो (फ० व० त्रेवर, लेनिनग्राद १६४०

2 Greeks ın Bactrıa and Indıa (W W Tarn, Cambrıdge 1938)

३ इस्कुस्स्त्वो स्रेद्नेइ आज़िइ (व० व० वेइमान, मास्को १६४०)

4 Memoıre Sur l' Asıe Centrale (Gırard de Rıalle, Parıs 1875)

५ आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेक मेवेर्नोइ किर्गिज़िइ (अ० न० बेनश्ताम्, फ्रुन्जे, १६४१)

6 L'Asıe Ancıenne Centrale et Sud-Orıentale d'apre's Ptolome'e (A Berthelot, Parıs 1930)

7 Catalogue of Coıns ın the Brıtısh Museum (P Gardner 1886)—Greek and Scythıan Kıngs of Bactrıa and Indıa

8 Coıns of Ancıent Indıa (J Allen, 1936)

9 The Story of Chang Kıen (Fr Hırth, J A O S 1917 xxxvıı) pp 89

10 Hellenıstıc Cıvılıasatıon (W W Tarn, 1930)

11 Selucıd-Parthıan Studıes (W W Tarn 1937 Proc Brıt Acad 1930)

12 Heart of Asıa (E D Ross, London 1899)

अध्याय ४

शक (ईसा पूर्व १३०–४२५ ईसवी)

१ यूची

१७६ (या १७४) ई० पू० मे चीनके प्रहारके कारण भगे हूणोने अपने पश्चिमी पडोसी यूचियोके स्थानको छीननेके लिये उनपर आक्रमण किया[1], जिससे उन्हें अपनी भूमि छोड पश्चिमकी ओर भागना पडा। सङ्वाङ शकोकी भूमिमें प्रवेश करनेपर उनका एक भाग—लघु-यूची —तरिम-उपत्यकामें जाके बस गया, और दूसरा—महायूची—सप्तनद और त्यानशानके वू-सुनोको पीटता-पाटता पश्चिमकी ओर वढते यक्सर्त (सिरदरिया) की उपत्यकामें पहुँचा। इस महाप्रवासमें उन्होने अपने रास्तेमें पडनेवाली सभी बाधाओको कठोरतापूर्वक हटाया, यह वू-सुनोके साथके उनके सघर्षसे मालूम होता है। त्यान्‌शान्‌के पहाडोसे हो कर वह फर्गाना की भूमिमें पहुचे, जहा उस समय ग्रीको-बाख्त्री राजा क्रमश एउक्रितिद (१६६-१५९ ई० पू०) और हेलियोकल (१५९–२३०ई० पू०) का शासन रहा। सभव है, हेलियोकलके आरभिक शासनमें उन्हें फर्गानाको हडपनेका मौका मिला। १४१ ई० पू० में ग्रीको-बाख्त्री इतिहासपर परदा पड जाता है। १७४ ई० पू० के आसपास अपनी मूलभूमि कन्सूको छोडनेके बाद वू-सुनोके साथके सघर्षकी थोडी सी भनक मिलनेके सिवा यूची शकोका अतमे पता १२४ ई० पू० में ही लगता है जबकि चाङ क्यान् उन्हें यक्सर्त और वक्षु नदीकी उपत्यकाओकी भूमिका स्वामी पाता है। चाङ-क्यान्‌को हान् सम्राट् वू-तीने १३८ ई० पू० में यूचियोको इस बातके लिए राजी करनेको भेजा था, कि वह हूणोको ध्वस्त करनेमें पश्चिमकी ओरसे आक्रमण करके चीनका हाथ वँटाये। चाङ-क्यान्‌की यात्राके बारेमें हम पहले बतला चुके हैं। जब वह फर्गाना (तावान) पहुँचा, तो वहा शकोका शासन था। उन्होने चाङ-क्यान्‌को अच्छी तरह यूची शासकोके पास पहुचा दिया, जो कि उस समय सोग्द (जरफशाँ) और वक्षु (आमूदरिया) के बीचमें रहते थे। चाङ-क्यान्‌के लेखसे मालूम होता है, कि काङ-किन् (यक्सत, सिरदरयि) के उत्तरमें हूणोका राज्य था और दक्षिणमें यूचियोंका। चाङ-क्यान्‌ने यूचियोको उर्वर और समृद्ध ग्राम-नगरोकी भूमिमें घुमन्तू जीवन विताते देखा। यूची कृषि और वाणिज्यको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे और सैनिक तथा तदनुरूप घुमन्तू जीवनको ज्यादा पसद करते थे। चाङ-क्यान्‌के पहुचने तक वह बाख्त्रियाको जीत चुके थे। अपने पशुओ और तम्बुओको लिए हुए यूची लोग ता-वान (फर्गाना), ताहिया (बाख्तर) और अन्-सी (पार्थिया) में घूमा करते थे।

---

[1] Greeks in Bactria and India (W W Tarn), Memoire sur l' Asie Centrale (Girard de Rialle, Paris 1875)

स्रोत ग्रंथ

१ पाम्यत्निकि ग्रेको-बाक्त्रियइइस्कओ इस्कुस्स्त्वो (क० व० ग्रेवर, लेनिनग्राद १९४०

2 Greeks in Bactria and India (W W Tarn, Cambridge 1938)

३ इस्कुस्स्त्वो स्रेद्नेइ आजिइ (व० व० वेइमान, मास्को १९४०)

4 Memoire Sur l' Asie Centrale (Girard de Rialle, Paris 1875)

५ आर्खेआलोगिचेस्किड ओचेक सेवेर्नोइ किर्गिजिइ (अ० न० वेनश्ताम्, फ्रुन्जे, १९४१)

6 L'Asie Ancienne Centrale et Sud Orientale d'apre's Ptolome'e (A Berthelot, Paris 1930)

7 Catalogue of Coins in the British Museum (P Gardner 1886) —Greek and Scythian Kings of Bactria and India

8 Coins of Ancient India (J Allen, 1936)

9 The Story of Chang Kien (Fr Hirth, J A O S 1917 xxxvii) pp 89

10 Hellenistic Civiliasation (W W Tarn, 1930)

11 Selucid-Parthian Studies (W W Tarn 1937 Proc Brit Acad. 1930)

12 Heart of Asia (E D Ross, London 1899)

स्रोत ग्रंथ ·

१ पाम्यत्निकि ग्रेको-वाक्त्रिइइस्कओ इस्कुस्स्त्वो (क० व० त्रेवर, लेनिनग्राद १६४०

2 Greeks in Bactria and India (W W Tarn, Cambridge 1938)

३ इस्कुस्स्त्वो स्रेद्नेइ आजिइ (व० व० वेइमान, मास्को १६४०)

4 Memoire Sur l' Asie Centrale (Girard de Rialle, Paris 1875)

५ आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेक सेवेर्नोइ किर्गिजिइ (अ० न० वेनश्ताम्, फ्रुन्जे, १६४१)

6 L'Asie Ancienne Centrale et Sud Orientale d'apre's Ptolome'e (A Berthelot, Paris 1930)

7 Catalogue of Coins in the British Museum (P Gardner 1886) —Greek and Scythian Kings of Bactria and India

8 Coins of Ancient India (J Allen, 1936)

9 The Story of Chang Kien (Fr Hirth, J A O S 1917 xxxvii) pp 89

10 Hellenistic Civiliasation (W W Tarn, 1930)

11 Selucid-Parthian Studies (W W Tarn 1937 Proc Brit Acad 1930)

12 Heart of Asia (E D Ross, London 1899)

असिई, (२) पसिउनी, (३) तोखारी और (४) सकरौली। इनमें असिई या अर्सी यूची मालूम होते हैं। कुछ लोग तोखारियोको यूची बतलाते हैं। कुषाण-वश तोखारी था, इसलिए लघु-यूचीके अन्तर्गत था। पीछे कदफिस् (१) के रूपमें पाच शक-जातियोके सघर्षमें हम कुषाणोको सफलता प्राप्त करते देखते हैं। हो सकता है, रोमन इतिहासकारोकी चार शक जातियाँ भी इन्हीके अन्तर्गत हो। पूर्वी मध्य-एसियामें तुखारी भाषाकी ए और बी दो बोलियोके अभिलेख मिले है, जिनमें ए बोली कराशर (तुर्फान) की थी और बी बोली कूचाकी। बी बोली के साथ कुषाणोका सबंध स्थापित किया जा सकता है, लेकिन इन दोनो बोलियोके कराशर और कूचाके जो नमूने मिले हैं, वह शकोके वाख्तर-विजयके कई शताब्दी पीछेके है। कूचाकी भाषामें केन्तमका प्रभाव देख कर यहाके लोगोको यूरोपसे आई जाति साबित करनेकी जो कोशिश की गई है, वह विचारणीय अवश्य है, किंतु हम यह भी जानते है, कि भाषा सवत्र रक्तकी परिचायिका नही होती।

यूची लोगोमें शकोकी परपराके अनुसार स्त्रियोका स्थान काफी ऊँचा था, पति घरसे वाहरके काम-काजमें भी पत्नीकी राय लिया करता था। हमें मालूम है, कि कुरव जिस लडाईमे मरा, उसकी सचालिका एक शक-स्त्री थी। ऐसे दुर्धर्ष शत्रुके सामने, जिसके घोडसवार-धनुधरोकी सख्या एक लाख बतलाई जाती है, यवनोके लिये ठहरना मुश्किल था। तब भी उनमें दिग्-विजयकी एक सनक सवार थी। अपनी शक्तिको छिन्न-भिन्न होते देखकर भी हेलियोकल हिंदूकुश पार दिग्विजयके लिये जानेसे अपनेको नही रोक सका। उसके सामने जहाँ यूची उत्तरसे सैलाब की तरह बढते चले आ रहे थे, वहाँ उत्तर-पूर्वमें पार्थिव शक्तिशाली हो गये थे। पार्थिव जैसी एक छोटी सी शक जाति सेल्यूकीय और वाख्त्रीय प्रतिद्वन्द्विता तथा कगोकी सहायतासे ईरानके उत्तरमें कास्पियन तटवर्ती (पार्थिया) प्रदेशको हाथमें करके अब एक विशाल राज्यका रूप ले चुकी थी। उसने सेल्यूकियोको दबाते हुए एक और काम यह किया, कि यूची शकोमेंसे कुछको ले जाकर पूर्वी ईरान (सीस्तान) में बसा दिया। लेकिन स्वच्छन्दता-प्रिय घुमन्तू शक भला किसके होते? छठें पार्थिव राजा फ्रात (२) (१३८-१२४ ई० पू०)—जो कि प्रतापी मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०)का उत्तराधिकारी था—इन्ही शकोकी एक बडी सेना लेकर अन्तियोक (सेल्यूकी) से लडने गया था। किसी बात पर शकोसे पार्थियोंका झगडा हो गया और युद्ध क्षेत्र हीमें शक बिगड उठे। फ्रात इसी लडाई में मारा गया और तब (१२६ ई० पू०) से शको (यूचियो) और पार्थियो (पह्लवियो या पल्लवो) का झगडा स्थायी हो गया। फ्रातका उत्तराधिकारी अर्तबान मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई० पू०)भी इन्हींके कारण युद्धमें मारा गया। मिथ्रदात (२) ने अतमें समझ लिया, कि शकोसे मध्य-एसियाको छीना नही जा सकता, इसलिए मसोपोतामियासे वाख्त्रिया तक एक पार्थिव साम्राज्यको स्थापित करनेके स्वप्नको उसे छोड देना पडा। लेकिन इसका यह मतलब नही कि पार्थिवोंने अपने दो शाहोकी मृत्युका बदला यूचियोसे नही लिया। वाख्त्रियाके यूचियोका वह बहुत बिगाड नही सके, किंतु सीस्तान के शको पर मिथ्रदात (२) के सेनापति सोरेन ने १२४ ई० पू० से ११५ ई० पू० तक लगातार जबर्दस्त प्रहार किये और ११५ ई०पू० के आसपास अर्थात् जब कि यूची वाख्त्रिया पर अपने शासन को मजबूत कर चुके थे, शको को शकस्तान छोडकर भागने के लिये मजबूर किया। शक ११५ ई०पू० के आसपास वह बलोचिस्तान और सिंध की ओर भागे। वहाँ उन्होने अपना शासन स्थापित किया। उनके पश्चिमी भाइयो की समृद्धि जिस समय बढ रही थी, उसी समय

अपोलोदोतके वाख्त्रीय राज्यके विजेता यूचियोके चार कबीलोमें एक था असि-ई (यूची, अर्सी), जो किसी किसीके मतमें तोखारी (थोगुरोई) है। इनका केंद्रीय स्थान थोगोरा नगर रेशम-पथपर था। चीनी लेखकोंके अनुसार ई० पू० द्वितीय शताब्दीमे यूचियोकी मूलभूमिमें तोगारा का अवशेष मौजूद था। वाख्त्रिया-विजयके समय चारो कबीलोमें असिई अधिक शक्तिशाली थे। कुषाण इन्हीका एक प्रभुताशाली भाग बतलाया जाता है, यद्यपि इसकी भी सभावना है, कि कुषाण लघु-यूचीसे सबध रखते हो। तरिम-उपत्यका का कूचा नगर उसी कुषाण नाम को बतलाता है। तोखारी भाषाके नमूने हम मध्य-एसियाकी मरुभूमिसे मिले हैं, यद्यपि वह उस समयके नही हैं, जब कि यूची वाख्त्रियाके स्वामी थे। वाख्त्रियाका नाम पीछे जो तोखार पडा, वह इन्ही तोखारियोके प्रभुत्वके कारण ही। स्वेन्-चाङने भी दरबदसे हिंदूकुश पर्वत-मालातक वक्षुके दोना तरफकी भूमिको तुखार (तुषार) कहा। अरब इसके कितने ही भागको तुखारिस्तान कहते थे। पीछे तुर्कोकी प्रधानताके कारण अफगानिस्तान और ईरानवाले इसे तुर्किस्तानका एक अग मानने लगे। तोखारी भाषा, जो मध्य-एसियाके हस्तलेखोमें मिली है,कुषाणोकी भाषा थी, जिसका सबध शक-भाषासे था। इसमें हिंदी-युरोपीय भाषाके केन्तम परिवारकी (पश्चिमी यूरोपीय) भाषाका कुछ कुछ रूप मिलता है, जब कि ईरानी, सस्कृत और पुरानी शक भाषा शतम-परिवारसे सबध रखती थी। कुछ युरोपीय पुरातत्ववेत्ताओने तो कूचाकी स्त्रियोमें अपनी पुरानी नारियोकी वेष-भूषा और चित्रोमें उनकी नीली आखोको देखकर यह निर्णय कर डाला, कि यह यूरोपसे आई कोई जाति थी, जो एसियाटिक शक समुद्र के भीतर एक द्वीपकी तरह कूचा और उसके आसपासमें बस गई। केंतम भाषाके लक्षण कितनी मात्रामें है, यह एक विचारणीय बात हैं, नही तो नीली आखे और भूरे बाल शकोमें ही नही, बल्कि वैदिक आर्योमें भी पाये जाते थे। बुद्धकी आँखें अतिसी (अलसी) के फूलकी तरह नीली थी। महाकवि अश्वघोषकी माँ सुवर्णाक्षी (पीली आखोवाली) थी। मेनान्दरके समकालीन पतजलि ब्राह्मणके शरीर लक्षण कपिल वर्ण और पिंगल केश बतलाते हैं। कूचाकी स्त्रियोसे कुछ मिलता-जुलता कोट हिमालयमें जौनसार और जौनपुरकी स्त्रियोमें आज भी देखा जाता है (यहाँ जौन शब्दका ग्रीक यवनोसे कोई सबध नही है, यह यमुनाकी उपत्यकाका परिचायक है)।

१२८ ई० पू० में चाङ-क्यान्ने[1] यूचियोको समरकद और वक्षु नदीके बीचमें डेरा लगाये देखा था। ता-वान् (फर्गाना) में उस समय शकोका शासन था। सभव है, पहिलेसे ही यहाँ शक-शासन रहा हो, और उन्होने यूचियोको अपना अधिराज स्वीकृत कर लिया हो। यह हमे मालूम ही है, कि उनके पूरब और उत्तरके पर्वतोमें वू-सुनोका निवास था। हेलियोकल जिस समय भारत-विजयमें लगा हुआ था, उसी समय यूचियोको मौका मिला और उन्होने ग्रीको-वाख्त्रीय शासनका खातमा कर दिया। यूची शक-भाषा-भाषी थे। वू-सुन्, सद्द-चाङ, कग और पार्थिव (पार्थियन या पह्लव) यह सभी भाषायें शक-भाषाकी ही भिन्न-भिन्न बोलिया थी। इसीलिए चाङ-क्यान् लिखता है,[1] कि फर्गानासे पार्थिया तक एक सी ही भाषा बोली जाती है। रोमन इतिहासकार स्त्राबो जब शकोके वाख्तर जीतनेकी बात करता है, तो उसका अभिप्राय यूचियोसे है। ग्रीक लेखकोने वाख्तर-विजेता चार घुमन्तू जातियोका नाम लिया है—(१)

---

[1] The story of Chang Kien (Fr Hirth, J A O S 1917, pp 89)

असिई, (२) पसिउनी, (३) तोखारी और (४) सकरौली। इनमें असिई या अर्सी यूची मालूम होते हैं। कुछ लोग तोखारियोको यूची बतलाते है। कुषाण-वश तोखारी था, इसलिए लघु-यूचीके अन्तर्गत था। पीछे कदफिस्(१) के रूपमें पाच शक-जातियोके सघर्पमें हम कुषाणोको सफलता प्राप्त करते देखते है। हो सकता है, रोमन इतिहासकारोकी चार शक जातियां भी इन्हीके अन्तर्गत हो। पूर्वी मध्य-एसियामे तुखारी भाषाकी ए और बी दो बोलियोके अभिलेख मिले है, जिनमे ए बोली कराशर (तुर्फान) की थी और बी बोली कूचाकी। बी बोली के साथ कुषाणोका सबंध स्थापित किया जा सकता है, लेकिन इन दोनो बोलियोके कराशर और कूचाके जो नमूने मिले हैं, वह शकोके बाख्तर-विजयके कई शताब्दी पीछेके है। कूचाकी भाषाम केन्तमका प्रभाव देख कर यहाके लोगोको यूरोपसे आई जाति साबित करनेकी जो कोशिश की गई है, वह विचारणीय अवश्य है, किंतु हम यह भी जानते हैं, कि भाषा सर्वत्र रक्तकी परिचायिका नही होती।

यूची लोगोमे शकोकी परपराके अनुसार स्त्रियोका स्थान काफी ऊँचा था, पति घरसे बाहरके काम-काजमें भी पत्नीकी राय लिया करता था। हमे मालूम है, कि कुरव जिस लडाईमें मरा, उसकी सचालिका एक शक-स्त्री थी। ऐसे दुर्धर्ष शत्रुके सामने, जिसके घोडसवार-धनुधरोकी सख्या एक लाख बतलाई जाती है, यवनोके लिये ठहरना मुश्किल था। तब भी उनमे दिग्-विजयकी एक सनक सवार थी। अपनी शक्तिको छिन्न-भिन्न होते देखकर भी हेलियोकल हिंदूकुश पार दिग्विजयके लिये जानेसे अपनेको नही रोक सका। उसके सामने जहां यूची उत्तरसे सैलाब की तरह बढते चले आ रहे थे, वहाँ उत्तर-पूर्वमें पार्थिव शक्तिशाली हो गये थे। पार्थिव जैसी एक छोटी सी शक जाति सेल्यूकीय और बाख्त्रीय प्रतिद्वन्द्विता तथा कगोकी सहायतासे ईरानके उत्तरमें कास्पियन तटवर्ती (पार्थिया) प्रदेशको हाथमें करके अब एक विशाल राज्यका रूप ले चुकी थी। उसने सेल्यूकियोको दबाते हुए एक और काम यह किया, कि यूची शकोमेसे कुछको ले जाकर पूर्वी ईरान (सीस्तान) में बसा दिया। लेकिन स्वच्छन्दता प्रिय घुमन्तू शक भला किसके होते? छठे पार्थिव राजा फ्रात (२) (१३८-१२४ ई० पू०)—जो कि प्रतापी मिथ्रदात (१) (१७०-१३८ ई० पू०)का उत्तराधिकारी था—इन्ही शकोकी एक बडी सेना लेकर अन्तियोक (सेल्यूकी) से लडने गया था। किसी बात पर शकोसे पार्थियोका झगडा हो गया और युद्ध क्षेत्र हीमें शक बिगड उठे। फ्रात इसी लडाई में मारा गया और तब (१२६ ई० पू०) मे शको (यूचियो) और पार्थियो (पह्लवियो या पल्लवो) का झगडा स्थायी हो गया। फ्रातका उत्तराधिकारी अतवान मिथ्रदात (२) (१२४-८८ ई० पू०)भी इन्हीके कारण युद्धमें मारा गया। मिथ्रदात (२) ने अतमें समझ लिया, कि शकोसे मध्य-एसियाको छीना नही जा सकता, इसलिए मसोपोतामियासे बाख्त्रिया तक एक पार्थिव साम्राज्यको स्थापित करनेके स्वप्नको उसे छोड देना पडा। लेकिन इसका यह मतलब नही कि पार्थिवोने अपने दो शाहोकी मृत्युका बदला यूचियोसे नही लिया। बाख्त्रियाके यूचियोका वह बहुत बिगाड नही सके, किंतु सीस्तान के शको पर मिथ्रदात(२)के सेनापति सोरेन ने १२४ ई० पू० से ११५ ई० पू० तक लगातार जबर्दस्त प्रहार किये और ११५ ई०पू० के आसपास अर्थात् जब कि यूची बाख्त्रिया पर अपने शासन को मजबूत कर चुके थे, शको को शकस्तान छोडकर भागने के लिये मजबूर किया। शक ११५ ई०पू० के आसपास वह बलोचिस्तान और सिंध की ओर भागे। वहां उन्होने अपना शासन स्थापित किया। उनके पश्चिमी भाइयो की समृद्धि जिस समय बढ रही थी, उसी समय

इन शको ने सिंध को लेकर सौराष्ट्र, अवन्ती और मथुरा तक अपने राज्य का विस्तार किया और इन्होने क्षहरात वशी अपने नेता मोग के नेतृत्व में ७७ ई०पू० के आसपास गधार से कपिशा तक को भी विजय करने में सफलता पाई।

(१) क्षहरात वश

यूची बाख्त्रिया के शासक थे, और मोग तथा उनका कबीला धीरे धीरे बलोचिस्तान, सिंध, सौराष्ट्र, अवन्ती, मथुरा, कपिशा और गधार तक का शासक बन गया। इन दोनो का आपस में क्या सबध था, इसका स्पष्ट पता नही लगता। बहुत से कबीले होने के कारण, हो सकता है, वह अलग अलग शासन करते हो। हूणो के समय से ही हम जानते हैं, इन कबीलो का सघ उतना मजबूत नही होता था। इनके उपराजो को यदि साधारण शासित प्रजा स्वतत्र राजा समझती हो, तो इसमें आश्चय की बात नहीं। बाख्त्रिया के यूची के शासको के बारे में भी हमें मालूम नही है। पहिले आनेवाले यूचियो का पता उनके सिक्को से कुछ स्पष्ट हो जाता है। तक्षशिला मोग की राजधानी थी और बाख्त्रिया की राजधानी शायद बामियान मे थी। मोग क्षहरात वश का था। अवन्ती सौराष्ट्र का शासक इपान भी क्षहरात-वशी था। मथुरा का शक रजूबुल भी क्षहरात वशी था, इसलिये हम कह सकते है, कि यूचियो की जो शाखा भारत की ओर आई, उनके सामन्तो का वश क्षहरात था।

(२) मोग (७७-५८ ई० पू०—

भारत में आये शको (क्षहरातो), बल्कि सारे यूचियो में भी मोग प्रथम शक राजा था, जिसका हमें पता है। और जगहो में भी इसके उपराज रहते थे, मथुरा और उज्जैन मे क्षहरात वशी क्षत्रपो का होना इसी बात को साबित करता है। शायद मोग उनका प्रधान था। मोग ने सिंध से उत्तर की ओर बढकर गधार (तक्षशिला) को जीत उसे अपनी राजधानी बनाया। इसके सिक्को पर पहले राजा मोग लिखा रहता था, किंतु पीछे अधिक राज्यवृद्धि के कारण "रजति-रजस महतस मोअस" '(राजाधिराज महान् मोग) लिखा जाने लगा। "महत" का अलग प्रयोग केवल ग्रीक राजाओ के सिक्को के 'मेगोलस' का ही अनुकरण जान पडता है। मोग झेलम तक ही ले सका। इसके आगे मिनान्दर के वशज अब भी शासन करते रहे। मिनान्दर-पुत्र स्त्रात (१) उसका पौत्र स्त्रात (२) और तद्वशी दूसरे राजा भी पजाब की कुछ भूमि पर अपने अस्तित्व को कायम रक्खे रहें। हा, पश्चिमी सीमात पर मोग जैसे प्रबल शत्रु को देखकर रावी से यमुना तक के भाग पर कुणीद्र, आर्जुनायन, यौधेय आदि जातियो ने स्वतत्र हो गणराज्य कायम कर लिये। यवनो के शासन से पहले भी यहाँ की जातियो के अपने गणराज्य थे, जो कि मिनान्दर और उसके पुत्र के शासन में दब से गये थे। मथुरा ६० ई०पू० के आसपास शका की हो गई। सौराष्ट्र और अवन्ती के विजय के बाद मोग ने मथुरा को जीता होगा। यहाँ के क्षत्रप पहले हगाम और हगान थे, जिनके बाद महाक्षत्रप रजुबुल (राजुल) हुआ। मोग के मर जाने

---

[1] Greeks in Bactria, प्राचीन भारत का इतिहास (भगवत शरण उपाध्याय) पृ० २०५।

के कारण शकराज्य छिन्न-भिन्न हो गया, इसी समय रजुवुलने महाक्षत्रप वनकर अपने को स्वतत्र घोपित किया। क्षहरातवशज हगाम का शासन ५८ ई०पू० अर्थात् विक्रम सवत का आरभ समय था। हगाम ४० ई० पू० और रजुवुल ४० ई०पू० के वाद शासन करता रहा। उसके उत्तराधिकारी सोडास का शासन १० ई०पू० आसपास खतम हुआ।

मोग के सिक्को पर ग्रीक लिपि में पहले "वसीलेउस् मउओस्" लिखा रहता था। जिस सिक्के पर मोगका नाम है, उसी पर हर्मेयस का भी नाम मिला है। हरमेयम् शायद ग्रीको-वाल्त्रीय राजा कपिशा (कावुल) का भी राजा था, जो कि गधार (मोग के राज्य) के पश्चिममे थी। शायद गधार लेने के वाद मोग ने इसे भी ले लिया। मोग की मृत्यु (५८ ई०पू०) के वाद भारत में शक राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। मध्य एसिया मे स्थिति क्या थी, इसका पतानही लगता। भारत में विशेप कर कपिशा और गधार में उनका स्थान पह्लवो ने लेलिया। वाख्त्रिया मे सभवत पह्लवो (पार्थियो) का वल उतना नही वढा। यह हमें मालूम है, कि पह्लवो के साथ के सघर्प के कारण सोरेन पह्लव ने शको को सीस्तान से भगाया था। पह्लवो के वारे मे याद रखना चाहिये कि ईसा की ३री से ७वी सदी तक यद्यपि शाही वश ईरानी (सासानी) था, किन्तु कई शताब्दियो तक शासन करने में पह्लव (पार्थिव) इतने स्वदेशी और सम्मानित हो गये थे, कि सासानियो ने पार्थिवो के जिन सामन्त-वशो की शक्ति और सम्मान को वनाये रक्खा। उनमे सोरेन पह्लव वश प्रमुख था। सोरेन पह्लवो की भूमि रे (वतमान तेहरान) के आसपास थी। पह्लवो ने सीस्तान से शको को भगाने में सफलता पाकर ही सतोप नही किया, वल्कि उन्होने अपने प्रति-द्वदियो को भारत में आके फूलते-फलते देख उनपर वरावर आख रक्खी। घुमन्तू यूची अपने कितने ही वर्षों के पार्थिव सवघ तथा सीस्तान के निवास से पार्थिवो अर्थात् ईरानी सस्कृति और शासन व्यवस्था से इतने प्रभावित थे, कि उन्होने अपने शासन में वहुत सी वातें ईरानियो से ले ली, जिनमें क्षत्रप और महाक्षत्रप की उपाधि भी है। मोग के मरने के वाद क्षत्रप उपाधि के ही नही, वल्कि स्वय पह्लवो को भारत में आने का मौका मिला और आगे करीव पौन शताब्दी (५८ ई०पू०-२५ ई०) तक हम पश्चिमोत्तर भारत पर पह्लवो का शासन देखते हैं।

(३) पह्लव[1] (४८ ई०पू०-२५ ई०)—

मोग और दूसरे शक राजाओ के शासन का पता जिस तरह उनके सिक्को से ही लगता है, उसी तरह पह्लवो का पता भी हमें उनके सिक्के ही देते है। पह्लव, पल्लव, पार्थिव और पार्थियन एक ही जाति के वाचक शब्द है। पह्लव वशने ईरानपर २४९ ई० पू० से २२६ ई०) तक शासन किया। इसके राजाओ की सख्या २९ थी। ईरान में इन्होने सेलूकीय (ग्रीक) राज्य का स्थान वडे सघप के वाद लिया। ईरानी सस्कृति के वाद जिस सस्कृति का सवसे अधिक प्रभाव पह्लवो पर पडा था, वह थी ग्रीक सस्कृति। शक, पह्लव, ग्रीक (यवन) आरभिक काल में भारत और वाहर आपस में राजशक्ति के लिये चाहे कितने ही लडे हो, किंतु वह शान्ति के समय अपने को भाई-भाई समझते रहे। ई० सन् के वाद इन्होने भारत के वहुत से राजवशो को

---

[1] यहाँ हिन्दू-पार्थिव, श्री भा० श० उपाध्याय के अनुसार (प्राचीनभारत का इतिहास पटना १९४९)

दिया, यहा के राजाओ के साथ विवाह सबध किया, बडे बडे नागरिक और सैनिक पदो को प्राप्त किया और अत में राजपूत बनकर भारत की पुरानी क्षत्रिय जाति में मिल गये। विवाह-सबध के कारण पह्लव सातवाहनो के सबधी बने। सातवाहनो की एक शाखा (इक्ष्वाकु) जो धान्य कटक ((जि गुन्तूर) से शासन कर रही थी, जिसके बनवाये (ईसा की २री-३री शताब्दी के) स्तूप और विहार श्रीपवत (नागार्जुनी कोण्डा) और दूसरे स्थानो में अब भी मिलते है। इनके शिला-लेखो और मूर्त्तियो से पता लगता है, कि उज्जैन के शको के साथ इनका वैवाहिक सबध था। इन्हीके उत्तराधिकारी दक्खिन के पल्लव राजा थे, जो ३री शताब्दी में काची मे अपना एक शक्तिशाली राज्य स्थापित करने में सफल हुये हैं। काचीके पल्लव राज्यने चार शताब्दियो तक दक्षिण में एक सबल और समृद्ध शासन का ही रूप नही लिया, बल्कि भारतीय कला और साहित्य के विकास में उसने वही पाट अदा किया, जो कि उत्तर में गुप्तो ने किया। यही नही, जावा, कम्बोज आदि में भारतीय सस्कृति और कला के विस्तार मे सबसे अधिक हाथ पल्लव सस्कृति का है। इस प्रकार हम जान सकते है, कि पौन शताब्दी का पह्लव शासन भारत के लिये कोई नगण्य घटना नही है। स्वतत्र पह्लव शासको की राजधानी तक्षशिला थी। इनके सिक्को से हमें निम्न पह्लव राजाओ का पता लगता है [1]—

वोनान ७-१६ ई०
स्पलहोर
स्पलरिश १५ ई०
स्पलगदम
अय १६-१७ ई०
अयिलिस १७-१८ ई०
गुदफर २५ ई०

दूसरा और कोई साधन न होने के कारण हमें सिक्को की सूचना पर निभर रहना पडता है, किंतु उससे वश-परपरा साफ तौर से नही जानी जा सकती। एक बात तो स्पष्ट मालूम होती है, कि हमारे इतिहासकार वोनान को जो प्रथम पह्लव शासक मानते है, उसमें वह ईरान के पार्थिव राजवश के इतिहास को देखने का प्रयत्न नही करते। वोनान या वनाना १६ वा पार्थिव राजा था, जिसने ७ ई० से १६ ई० तक शासन किया था। जान पडता है, उसीके समय मे पह्लवा का शासन एक स्वतत्र राज्य के तौर पर स्थापित हुआ। स्पलहोर वानान का पुत्र था। वोनान के सिक्के, मालूम होते है, भारत के लिये नही, बल्कि सारे पार्थिव-राज्य के लिये ढाले गये थे। स्पलहोर के सिक्के की एक तरफ लिखा रहता है "वसीलेउस् वसीलेउन" और दूसरी ओर "महाराज भ्रातस ध्रमिअस स्पलहोरस। इससे मालूम होता है, कि स्पलहोर वोनान का भाई था। "धार्मिक" का अथ है, बौद्ध धम का अनुयायी। लेकिन मोग के मरने (५८ ई० पू०) और वोनान (१) के राज्यारूढ (७ई० होने के बीच में ६५ वर्षों का अन्तर है। यदि हम वोनान को पार्थिव सम्राट् न मानें, तो मोग की मृत्यु के बाद ही इसको हम शको का उत्तराधिकारी मान सकते हैं। वोनान के सिक्के में एक ओर ग्रीक

---

[1] भारतीय सिक्के (श्रीवासुदेवशरण उपाध्याय, प्रयाग १६४८ पृ० ११६-२५)

लिपि में "राजाओ का राजा वोनान" लिखना सारे पार्थिव साम्राज्य की दृष्टि से है, और दूसरी ओर उसके भाई स्पलहोर का केवल महाराज-भ्रात लिखा जाना यही बतलाता है, कि वह पार्थिव सम्राट् का उपराज मात्र था। भारतीय पह्लवो ने अपने सिक्को में उसी तरह ग्रीक-लिपि, देवताओ और पदवियो का अनुकरण किया, जैसा कि मोग ने किया था। इनके कुछ सिक्के चौकोर भी है, जिनमें एक ओर ग्रीक देवता हेरकल की मूर्ति और ग्रीक लेख होता है, और दूसरी ओर ग्रीक देवी पल्लस की मूर्ति। कुछ सिक्कोमें स्पलहोर और उसके पुत्र स्पलगदम का भी नाम प्राकृत भाषाम अकित मिलता है। स्पलगदम को भी "ध्रमिअ" लिखना उसके बौद्ध होने का परिचायक है। इन सिक्को में प्राकृत भाषा खरोष्ठी लिपि में लिखी हुई है, जो कि पश्चिमोत्तरीय भारत में अशोक के समय से ही प्रचलित लिपि चली आती थी। पह्लवो और शको का पश्चिमोत्तर भारत में सबध और ग्रीको के अनुकरण की प्रवृत्ति इतनी प्रबल थी, कि उन्होने सौराष्ट्र और अवन्ती जैसे ब्राह्मी-लिपि के क्षेत्र में पहुँच कर भी ग्रीक लिपि का उपयोग अपने सिक्को में किया। वोनान का एक दूसरा भाई स्पलरिश था, जो शायद स्पलहोर के बाद शासक बना। इसके एक सिक्के मे अयका नाम भी मिलता है, जिससे मालूम होता है, कि जिस तरह वोनान और स्पलहोर, स्पलगदम, और वोनान से स्पलरिश का सबध था, उसी तरह का सबध अय से स्पलरिश का भी रहा होगा। स्पलरिश के सिक्के पर त्रिशूलधारी राजा की खडी मूर्ति है। सिक्के की एक ओर ग्रीक अक्षरो मे राजा की उपाधि और स्पलरिश नाम लिखा हुआ है, दूसरी ओर ग्रीक देवता जेउस की सिंहासन पर बैठी मूर्ति तथा खरोष्ठी लिपि में लेख "महरजस महतस स्पलरिश।" स्पलरिश जान पडता है, वोनान की अधीन नही बल्कि अब स्वतत्र शासक बन गया था। इस अकेले नामवाले सिक्के के अतिरिक्त उसका दूसरा भी सिक्का मिलता है, जिसमें एक ओर ग्रीक लिपि मे स्पलरिश का नाम खुदा रहता है, और दूसरी ओर खरोष्ठी में अय का नाम। इन सिक्को में एक ओर राजा घोडे पर सवार और दूसरी ओर उसकी मूर्ति के साथ अय का नाम रहता है। यह बतलाता है, कि अय अभी स्पलरिश के उपराज या क्षत्रपकी तरह शासन करता था। जब अय स्वतत्र शासक हो जाता है, तो एक ओर उसकी घोडसवार मूर्तिके साथ ग्रीक लिपिमें उसकी राजोपाधि और नाम रहता है, और दूसरी ओर किसी ग्रीक देवी देवता की मूर्ति के साथ खरोष्ठी लिपि में "'महरजस रजरजस महतस अयस" लिखा रहता है। किसी सिक्के पर एक ओर मोअका नाम और दूसरी ओर अय का नाम भी उत्कीर्ण देखा जाता है, जिससे सदेह होने लगता है, कि अय मोअ के बाद शासनारूढ हुआ। लेकिन साथ ही हम अय की अधिराजी परपरा अय-स्पलरिश-वोनान को भी ज नते ह, इसलिये इस सिक्के के बारे में कहा जा सकता है, कि अय ने मोअ के सिक्के की एक ओर अपन नाम का ठप्पा लगवा दिया। यदि हम अय को प्रथम मानें, तो स्पलरिश के साथ उसके लघुशासक होने की सगति नही स्थापित कर सकते। स्पलहोर वोनान का भाई था और स्पलरिश भी, लेकिन स्पलगदम, स्पलहोर और स्पलरिश का अय के साथ किस प्रकार का रक्त-सबध था, इसे जानने का हमारे पास कोई साधन नही है।

पह्लव (विशेपकर अय के) सिक्को पर पीछे कुछ भारतीय देवताओ की भी मूर्त्तियाँ मिलने लगती है। अय के दस प्रकार के चादी के और कई प्रकार के ताबे के सिक्के मिले है। दोनो में यूनानी देवी-देवताओ की प्रधानता पार्थियो के "फिलहेल" (यवन-पुत्र) के भाव को प्रगट करती है। कुछ और सिक्कों के कारण अय का उत्तराधिकारी अयलिश बतलाया जाता है, जिससे ही

दिया, यहा के राजाओ के साथ विवाह सबध किया, बडे बडे नागरिक और सैनिक पदो को प्राप्त किया और अत में राजपूत बनकर भारत की पुरानी क्षत्रिय जाति में मिल गये। विवाह-सबध के कारण पह्लव सातवाहनो के सबधी बने। सातवाहनो की एक शाखा (इक्ष्वाकु) जो धान्य कटक ((जि गुन्तूर) से शासन कर रही थी, जिसके बनवाये (ईसा की २री-३री शताब्दी के) स्तूप और विहार श्रीपवत (नागार्जुनी कोण्डा) और दूसरे स्थानो में अब भी मिलते ह। इनके शिला-लेखो और मूर्त्तियो से पता लगता है, कि उज्जैन के शको के साथ इनका वैवाहिक सबध था। इन्हीके उत्तराधिकारी दक्खिन के पल्लव राजा थे, जो ३री शताब्दी में काची में अपना एक शक्तिशाली राज्य स्थापित करने में सफल हुये है। काचीके पल्लव राज्यने चार शताब्दियो तक दक्षिण मे एक सबल और समृद्ध शासन का ही रूप नही लिया, बल्कि भारतीय कला और साहित्य के विकास में उसने वही पाट अदा किया, जो कि उत्तर मे गुप्तो ने किया। यही नही, जावा, कम्बोज आदि में भारतीय सस्कृति और कला के विस्तार मे सबसे अधिक हाथ पल्लव सस्कृति का है। इस प्रकार हम जान सकते है, कि पौन शताब्दी का पह्लव शासन भारत के लिये कोई नगण्य घटना नही है। स्वतत्र पह्लव शासको की राजधानी तक्षशिला थी। इनके सिक्को से हमें निम्न पह्लव राजाओ का पता लगता है [1]—

वोनान ७-१६ ई०
स्पलहोर
स्पलरिश १५ ई०
स्पलगदम
अय १६-१७ ई०
अयिलिस १७-१८ ई०
गुदफर २५ ई०

दूसरा और कोई साधन न होने के कारण हमें सिक्का की सूचना पर निर्भर रहना पडता है, किंतु उससे वश-परपरा साफ तौर से नही जानी जा सकती। एक बात तो स्पष्ट मालूम होती है, कि हमारे इतिहासकार वोनान को जो प्रथम पह्लव शासक मानते है, उसमे वह ईरान के पार्थिव राजवश के इतिहास को देखने का प्रयत्न नही करते। वोनान या वनाना १६ वा पार्थिव राजा था, जिसने ७ ई० से १६ ई० तक शासन किया था। जान पडता है, उसीके समय में पह्लवो का शासन एक स्वतत्र राज्य के तौर पर स्थापित हुआ। स्पलहोर वोनान का पुत्र था। वोनान के सिक्के, मालूम होते है, भारत के लिये नही, बल्कि सारे पार्थिव-राज्य के लिये ढाले गये थे। स्पलहोर के सिक्के की एक तरफ लिखा रहता है "वसीलेउस् वसीलेउन" और दूसरी ओर "महाराज भ्रातस ध्रमिअस स्पलहोरस। इससे मालूम होता है, कि स्पलहोर वोनान का भाई था। "धार्मिक" का अथ है, बौद्ध धम का अनुयायी। लेकिन मोग के मरने (५८ ई० पू०) और वोनान (१) के राज्यारूढ (७ई० होने के बीच में ६५ वर्षो का अन्तर है। यदि हम वोनान को पार्थिव सम्राट् न माने, तो मोग की मृत्यु के बाद ही इसको हम शको का उत्तराधिकारी मान सकते है। वोनान के सिक्के में एक ओर ग्रीक

---

[1] भारतीय सिक्के (श्रीवासुदेवशरण उपाध्याय, प्रयाग १९४८ पृ० ११९-२५)

लिपि में "राजाओ का राजा वोनान" लिखना सारे पार्थिव साम्राज्य की दृष्टि से है, और दूसरी ओर उसके भाई स्पलहोर का केवल महाराज-भ्रात लिखा जाना यही बतलाता है, कि वह पार्थिव सम्राट् का उपराज मात्र था। भारतीय पह्लवो ने अपने सिक्को मे उसी तरह ग्रीक-लिपि, देवताओ और पदवियो का अनुकरण किया, जैसा कि मोग ने किया था। इनके कुछ सिक्के चौकोर भी है, जिनमें एक ओर ग्रीक देवता हेरकल की मूर्ति और ग्रीक लेख होता है, और दूसरी ओर ग्रीक देवी पल्लस की मूर्ति। कुछ सिक्कोमें स्पलहोर और उसके पुत्र स्पलगदम का भी नाम प्राकृत भाषाम अकित मिलता है। स्पलगदम को भी "ध्रमिअ" लिखना उसके बौद्ध होने का परिचायक है। इन सिक्कों में प्राकृत भाषा खरोष्ठी लिपि में लिखी हुई है, जो कि पश्चिमोत्तरीय भारत मे अशोक के समय से ही प्रचलित लिपि चली आती थी। पह्लवो और शको का पश्चिमोत्तर भारत से सबध और ग्रीको के अनुकरण की प्रवृत्ति इतनी प्रबल थी, कि उन्होने सौराष्ट्र और अवन्ती जैसे ब्राह्मी-लिपि के क्षेत्र में पहुँच कर भी ग्रीक लिपि का उपयोग अपने सिक्को मे किया। वोनान का एक दूसरा भाई स्पलरिश था, जो शायद स्पलहोर के बाद शासक बना। इसके एक सिक्के में अयका नाम भी मिलता है, जिससे मालूम होता है, कि जिस तरह वोनान और स्पलहोर, स्पलगदम, और वोनान से स्पलरिश का सबध था, उसी तरह का सबध अय से स्पलरिश का भी रहा होगा। स्पलरिश के सिक्के पर त्रिशूलधारी राजा की खडी मूर्ति है। सिक्के की एक ओर ग्रीक अक्षरो मे राजा की उपाधि और स्पलरिश नाम लिखा हुआ है, दूसरी ओर ग्रीक देवता जेउस की सिंहासन पर बैठी मूर्ति तथा खरोष्ठी लिपि में लेख "महरजस महतस स्पलरिश।" स्पलरिश जान पडता है, वोनान की अधीन नही बल्कि अब स्वतत्र शासक बन गया था। इस अकेले नामवाले सिक्के के अतिरिक्त उसका दूसरा भी सिक्का मिलता है, जिसमे एक ओर ग्रीक लिपि मे स्पलरिश का नाम खुदा रहता है, और दूसरी ओर खरोष्ठी में अय का नाम। इन सिक्को में एक ओर राजा घोडे पर सवार और दूसरी ओर उसकी मूर्ति के साथ अय का नाम रहता है। यह बतलाता है, कि अय अभी स्पलरिश के उपराज या क्षत्रपकी तरह शासन करता था। जब अय स्वतत्र शासक हो जाता है, तो एक ओर उसकी घोडसवार मूर्तिके साथ ग्रीक लिपिमें उसकी राजोपाधि और नाम रहता है, और दूसरी ओर किसी ग्रीक देवी देवता की मर्ति के साथ खरोष्ठी लिपि में "'महरजस रजरजस महतस अयस" लिखा रहता है। किसी सिक्के पर एक ओर मोअका नाम और दूसरी ओर अय का नाम भी उत्कीर्ण देखा जाता है, जिससे सदेह होने लगता है, कि अय मोअ के बाद शासनारूढ हुआ। लेकिन साथ ही हम अय की अधिराजी परपरा अय-स्पलरिश-वोनान को भी ज नते ह, इसलिये इस सिक्के के बारे मे कहा जा सकता है, कि अय ने मोअ के सिक्के की एक ओर अपन नाम का ठप्पा लगवा दिया। यदि हम अय को प्रथम मानें, तो स्पलरिश के साथ उसके लघुशासक होने की सगति नही स्थापित कर सकते। स्पलहोर वोनान का भाई था और स्पलरिश भी, लेकिन स्पलगदम, स्पलहोर और स्पलरिश का अय के साथ किस प्रकार का रक्त-सबध था, इसे जानने का हमारे पास कोई साधन नही है।

पह्लव (विशेपकर अय के) सिक्को पर पीछे कुछ भारतीय देवताओ की भी मूर्त्तियाँ मिलने लगती हैं। अय के दस प्रकार के चादी के और कई प्रकार के ताबे के सिक्के मिले है। दोनो में यूनानी देवी-देवताओ की प्रधानता पार्थियो के "फिलहेल" (यवन-पुत्र) के भाव को प्रगट करती है। कुछ और सिक्को के कारण अय का उत्तराधिकारी अयलिश बतलाया जाता है, जिससे ही

एक नये पह्लव राजा द्वितीय अयस का अनुमान किया जाता है। इसके राज्यपाल अस्पवर्मा के सिक्केकी एक ओर घोड़े पर सवार चाबुक लिये राजाकी मूर्ति तथा अत्यन्त भद्दे यूनानी अक्षरोमें उपाधि के साथ अय का नाम है और दूसरी ओर यूनानी देवी पल्लस की मर्त्ति तथा खरोष्ठी लिपि में "इद्रवमपुत्रस अस्पवमस स्त्रतगस जयतस" लिखा है। हम जानते है, कि ग्रीक शासनकाल में क्षत्रपी (प्रदेश) के शासक को "स्त्रतेगोस" कहते थे। सेलूकीय साम्राज्य में ७२ स्त्रतेगोस थे। पह्लव सिक्को के देखने से पता लगता है, कि उनके सिक्के का प्रथम पार्श्व अधिराज की मूर्ति उसके नाम और उपाधि के लिये सुरक्षित था और दूसरा पार्श्व उसके स्त्रतग (उपराज, राज्यपाल) के लिये। अस्पवर्मा मे अब भी ईरानी शब्द का रूप "अस्प" मौजूद है, किंतु उसका पिता इन्द्र-वर्मा शुद्ध भारतीय नाम रखता है। दक्षिण के पह्लवो मे तो आगे चलकर वर्मा सभी राजाओ की साधारण उपाधि हो गई, जो अभी भी त्रिवाकुर और कोचीन के राजाओ के नाम के साथ देखी जाती है।

जिस अतिम पह्लव राजा को कुपाण कुजुल ने हराकर अपने वश की स्थापना की, उसका नाम पकारे कहा जाता है। ईरानी पार्थिव वश का २२वा राजा पकोर २७७ ई० के आसपास हुआ था, जिसका और अर्दवान (४) का सघर्ष रहा। इसके पहले पकारे (पाकुर) प्रथम हुआ, जो अर्दवान (१६-४२ ई०) का ही दूसरा नाम या प्रतिद्वद्वी रहा होगा। गुदफर का भी एक विशेष स्थान है। कितने ही लोग गुदफर को गदभिल्ल राजा बनाना चाहते है। यूनानियो के काल से अब ईरान और भारत इतने दूर हो गये थे, कि उनके सिक्को पर लकीर पीटते हुये यूनानी लिपि और भाषा का उपयोग बहुत ही भद्दे और अशुद्ध रूप में ही होता था। प्रो० राखालदास बनर्जी का मत है, कि गुन्दरफर कनिष्क और हुविष्क के समय (७८-१५२ ई०) राज करता था। गुन्दरफरके सिक्को की एक तरफ घुड़सवार राजा की मूर्ति, ग्रीक लिपि में उपाधि और नाम तथा दूसरी ओर जेउस या पल्लसकी मूर्ति तथा खरोष्ठी अक्षरो में "महरजस रजतिरस त्रतरस देवव्रतस गुदफरस" (महराज राजाधिराज त्राता देवव्रत गुदफरका) होती है। बाद के सिक्को से यह भी पता लगता है, कि उसके भाई अयग्नि और भाई के पुत्र अवगद ने भी गुन्दरफर के उपराज के तौर पर शासन किया था। गुदफर के एक सिक्के पर जहा एक ओर घोड़सवार मूर्ति और ग्रीक लिपि में उत्कीर्ण राजाकी नामोपाधि मिलती है, वहा दूसरी ओर विजय देवी को हाथ में लिये जेउस की मूर्ति तथा खरोष्टी में "महरजस रजतिरजस गुदफर भ्रतपुत्रस अवगदस" (महाराज राजाधि राज गुदफर के भाई के पुत्र अवगदका) [1] इनके अतिरिक्त सनवर तथा पकुर आदि पह्लव शासको के और भी सिक्के मिलते हैं, जो इस वश के अतिम शासक रहे।[1]

---

[1]भारतीय सिक्के (वासुदव शरण उपाध्याय) पृ० १२७

२ तुलनात्मक शक-पह्लव-वंश

ई०	भारत	चीन	दक्षिणापथ	ईरान
१	(शातवाहन)	पिङती १-६	वोनान ७-१६	(पार्थिव)
			वोनान ७-१६	उरुद II २-६
			अय १६-१७	अर्दवान् १६-४२
			गुदफर १८-२५	
२०		क्वाङ्वूती २५-५८	कुजुल I २५-५०	
४०	हाल			वारदान४२-४६
			वीम ५०-७८	वलाश (I) ५१ ७७
६०		मिङ्ती ५८-७६		
		चाङ्ती७६-८९	कनिष्क ७८-१०१	पाकुर ७७-१०५
		होती ८९-१०६		
१००	गौतमीपुत्र-१०६-१३०	अन्ती १०७-१२६	वसिष्क १००-१०६	खुस्रव१०५-११३
			कनिष्क II १११	
१२०		शुन्ती १२६-१४५	हुविष्क १२०-५२	
				वलाश II, III १३३--१९१
१४०	पुडुमावि १५५	ह्वान्ती १४७-१६८	वासुदेव १५२-१८६	
१६०	यज्ञश्री १६६-१९६	लिङ्ती १६८-१८९		
१८०		स्यान्ती १८९-२२०		वलाश १९१-२०८

२ कुषाण (२५-४२५ ई०)

यूची (ऋचीक) जन के मध्य-एसिया पर अधिकार करने की बात हम कह चुके हैं, और यह भी, कि पार्थिवो (पह्लवो) के प्रहार के कारण उनके एक कबीले को सीस्तान प्रदेश में कुछ वर्षों तक रह वहाँ अपना नाम छोड़ भारत की ओर भागने के लिये मजबूर होना पड़ा। इस कबीले का नाम मालूम नही। उसे केवल शक कह देने से बात और भी अस्पष्ट हो जाती है, क्योंकि ईसा की प्रथम शताब्दी में बहुत सी शक-शाखायें थी—त्यानशान् और सप्तनद में वू-सुन, उनके उत्तर में खड्वाङ, और दक्षिण (तरिम-उपत्यका) में लघु-यूचियो के वंशज, तुषारके पश्चिम (वर्तमान ख्वारेज्म कराकल्पकिया और उज्बेकिस्तान) में कग, जिनके पश्चिम में वोल्गा की ओर अलान (ओसेत), जिनके दक्षिण-पश्चिम में पार्थिव (पुराने दहे, जो पारस की खाड़ी तक के स्वामी

थे), वाख्त्रिया के यूची वंशज, और शकस्तान (सीस्तान) से निकलकर विलोचिस्तान, सिंध, पंजाव, सौराष्ट्र और अवन्ती में फैले शक। सीस्तान से आनेवाली पहली शक वाढ़ के सरदारों का वंश क्षहरात था। यह तक्षशिला, सौराष्ट्र, अवन्ती और मथुरा के शक-शासको के वंश के नाम से सिद्ध होता है। हम इस पहली वाढ को उनके सरदारों के कुल के नाम पर क्षहरात कह सकते हैं। घुमन्तू जातियो का नाम अपने शासक के कुल या प्रतापी शासक के नाम पर पड जाना अक्सर देखा जाता है। मध्यएसिया के आजकल के उज्वेको का नाम मंगोल-वंशीय एक पुराने राजा उज्वेक खान[1] के नामपर पडा, जो कि सुवर्ण-ओर्दू मंगोलोंका खान था, जिसने सबसे पहिले इस्लामको स्वीकार किया। क्षहरात वंशकी राजलक्ष्मीको लूटनेवाले उनके पुराने शत्रु पह्लव थे, जिनकी वात हम कह चुके। इसके वाद जो इतिहासमें अत्यन्त प्रतापी शकवंश आता है, उसे कुषाण कहा जाता है। कितने ही ऐतिहासिको का मत है, कि यह मूलत लघु-यचियोके वंशज तरिम उपत्यकाके तुखारोकी ही एक शाखा थी, जिनका नाम वहांके कूचा नगरमें अव भी मिलता था। जिस वक्त उनके वडे महायूची वाख्त्रिया और कपिशा-गंधार-सिंधके शासक वने, उसी समय इन्होने पामीर और गिल्गितकी पर्वतमालाओमें अपने पैर फैलाये। यह याद रखनेकी वात है, कि पहलेके हूणो और तुर्कोकी भाँति शक घुमन्तू भी तम्वुओमें रहते घुमन्तू जीवन विताना अपना धर्म समझते थे। गृहवासी लोग उनकी दृष्टिमें कायर और दव्वू थे। पाँच शक-कवीलोमें शक्तिके लिए प्रतिद्वन्द्विता हुई, जिसमें कुषाण कवीलेने अपने सरदार कुजुलके नेतृत्वमें सफलता प्राप्त की। उस समय सभी कवीले गंधार और कपिशाके उत्तरके पहाडोमें रहते थे। कुजुलने अपने वाकी चार कवीलोको ही ढकेलकर अपने कवीलेको आगे नही वढ़ाया, वल्कि उसीने भारत में पह्लव वंशका उच्छेद किया।

कुषाण राजा—

१	कुजुल कदफिस	२५-५० ई०
२	विम कदफिस	५०-७४ ई०
३	कनिष्क (१)	७४-१०१ ई०
४	वाशिष्क	१०१-६ ई०
५	कनिष्क (२)	११९ ई०
६	हुविष्क	१२०-५२ ई०
७	वासुदेव	१५२-८६ ई०
	पिरो	चौथी सदीका अन्त

(१) कुजुल कदफिस्[2] १ (२५-५० ई०)

कुजुलके विजय प्राप्त करनेके समय कपिशा (कावुल) में ग्रीक राजा हर्मेयसका शासन था, जो संभवत पह्लव शक्तिके निर्वल होनेके समय कपिशाका स्वामी वन गया था। उसने

[1] देखो मध्यएसिया का इतिहास (२) पृष्ठ ३०-३२ (१३०३-६० ई०)

[2] प्राचीन भारतका इतिहास (भ० श० उपाध्याय, पटना १९६८ ई०) पृ० २१३ भारतीय सिक्के (वा० श० उपाध्याय) पृ० १२६, Coins of Ancient India (J Allan 1936), Coins of ancient India (Rapson)

कपिशाको जीता, या पुराने यवन-वंशकी किसी शाखाने पह्लवोकी निर्बलतासे लाभ उठाया और उसी वंशका अंतिम राजा हरमेयस था, यह निश्चित तौरसे नही कहा जा सकता। इतना मालूम है, कि हरमेयसके सिक्के में उसके साथ कुजुलका भी नाम मिलता है। कुजुलके एक सिक्केपर जिस ओर ग्रीक अक्षरोमें "वसिलेउस कुषानो कोजोलो कदफिजोयुस" लिखा रहता है, उसी तरफ हरमेयस का आधा शरीर भी चित्रित है, दूसरी ओर ग्रीक देवता हेरकलकी आकृति तथा खरोष्ठी लिपिमें "कुजुलकसस कुषाण यवगस ध्रमठिदस" रहता है। हम पह्लवोके उदाहरणसे जानते है, कि उस वक्त सिक्केकी एक तरफ अधिराजका चित्र और नाम होता, और दूसरी ओर शासकका खरोष्ठी लिपि तथा प्राकृत भाषा मे नामोपाधि उत्कीर्ण होती। यदि यह बात यहाँ भी ठीक है, तो हो सकता है, हरमेयस अधिराज था और कुजुल उसका क्षत्रप या अधीन-शासक था। कुजुल कुषाण-वंश का यवगू था। यवगू या जेब्बू पीछे मध्य-एसियाके तुर्कोंमें उपराजकी एक प्रचलित साधारण उपाधि थी। इस उपाधि का सबसे पहला उल्लेख इसी कुजूल कदफिसके सिक्के में मिलता है। ध्रमठित (धर्मस्थित) पाली धम्मिय (धार्मिक) का ही पर्याय है और जो आम तौरसे बौद्ध राजा ही अपने लिये इस्तेमाल करते थे। ईसाकी प्रथम शताब्दीमें तरिम-उपत्यकामे निश्चय ही बौद्ध धर्म का प्रचार था। इस प्रदेशके दक्षिणी भाग में उस समय भारतीय लिपि और भारतीय भाषा का प्रयोग होता था। नाम आदिसे मालूम होता है, कि भारतसे जाकर बस गए लोगोका वहाँ प्राधान्य था। तरिम्-उपत्यकाके उत्तरी भागमें शक-जातियो (तुषारो) का निवास था। यद्यपि भाषा, जाति और रीति-रिवाजमें उत्तर दक्षिणका अन्तर था, तो भी वहाँ दक्षिण में कराकुरम और क्वेनलन पर्वतमालाके अन्तरमें बढा हुआ भारत मान सकते थे। वहाँ से उत्तर शक-तुषारोका देश था। जहाँ तक बौद्ध धर्मका संबंध है, दोनो प्रदेश एकही धर्म और संस्कृतिके माननेवाले थे। इसलिये कुषाणोंके यवगु कुजुलका बौद्ध राजा होना कोई असाधारण बात नही थी। आगे सिक्को परसे हरमेयसका नाम हट जाता है, और उसकी जगह शिरस्त्राण पहने राजाका सिर या दूसरे संकेत के साथ ग्रीक भाषा और लिपिमें कुजुलका नाम मिलता है और दूसरी ओर बैठे हुए राजा, ऊंट या देवता आदि की मूर्तिके साथ "कुषाण यवुगस ध्रमठिदस" या "महरयस रयरयस देवपुत्रस", अथवा "महरजस महतस कुषाण" के साथ "कुजुल-कुश महरयस रजतिरजस यवगुस ध्रमठिदस" मिलता है। हरमाउसके अधीन शासकके तौरपर कुजुल अपना शासन आरंभ करता है। यह भी हमें मालूम है, कि यूचियो द्वारा बाख्त्रियासे यवन-शासनके उच्छेद होनेके समय पुराने यवन राजवंशके लोग दुर्गम पहाडो की ओर भाग गये, जहाँ उन्होने अपनी प्रजाकी श्रद्धा और भक्ति का लाभ उठाकर अपने छोटे-छोटे राज्य कायम कर लिये। पामीर (इमाओस), और चित्रालके पहाडो में ऐसे बहुतसे छोटे-छोटे राजवंशोका अभी हालतक अस्तित्त्व था, जो अपनेको सिकन्दर अर्थात् ग्रीक राजाओका वंशज मानते थे। कुजुलको कुछ इतिहासकार मोगका वंशज मानते हैं, किंतु ऐसा होनेपर फिर वह न तुषारी रहेगा और न क्षहरात छोडकर कुषाण वंश नाम देनेकी उसे आवश्यकता रहेगी। चीनी ग्रंथोमें भी कुजलका नाम आता है। जान पडता है, कुजुलको कुषाण वंशकी नींव डालने के लिये अपने सारे जीवन भर संघर्ष करना पडा। चीनी लेखकोंके अनुसार वह ८० वर्षकी आयु में मरा।

(२) विम कदाफिस[1] (५०-७८ ई०)

विमके ओएम और दूसरे उच्चारण भी मिलते हृ । चीनी लेखकोके अनुसार यही भारतका विजेता था। इसने अपने राज्यको कपिशा-गधारसे और आगे बढाया। सभवत इसने ही यमुनाके पूरब भी अपनी राज्य सीमा पहुँचाई और वाख्त्रियाको भी अधीन किया। विहारसे ख्वारेज्म तक फैले कनिष्कके विशाल राज्यके विस्तारमें उसके पूर्वाधिकारी विमका बहुत हाथ था, इसमें सदेह नही। विमके शासनकी एक सवसे महत्वपूर्ण घटना यह है, कि इसीने भारतमें सवसे पहले सोनेका सिक्का चलाया। यवनोके पहले हमारे यहाँ तावे या चाँदीके चौकोर (पचमार्क) सिक्के चलते थे यवनोने अपने सिक्कोको गोल तथा राजाकी मूर्ति या दूसरी आकृतियोके साथ अलकृत करके निकाला, जिसका भद्दा अनुकरण क्षहरात और पार्थिव भी करते रहे, किंतु,इनमेंसे किसीने सोनेका सिक्का नही चलाया। विमने अपने सोनेके सिक्केमें रोमन सिक्केकी तौल आदि का अनुकरण किया है, और उसीकी तरह यह १२८ ग्रेनका होता है। अतर्राष्ट्रीय वाणिज्यमे सोनेके सिक्केका वडा महत्व है, शायद इसीलिए विमने भारतमे सोनेके सिक्कोका प्रचार किया। भारतका अतर्राष्ट्रीय व्यापार इससे पहले भी ग्रीस, रोम, अफ्रीका, जावा, चीन और मध्य-एसिया तक था। उस वक्त जल या स्थलका साथ (कारवा) अपने साथ भारतीय माल ले जाता और वदलेमें दूसरा माल ले आता था। अव भी इस तरहका व्यापार होता था,किंतु माल ढोकर लेजानेकी जगह व्यापारी थोडेसे सोनेके सिक्कोको ले जाकर वहुतसा माल खरीदकर ला सकते थे। विमके सोनेके सिक्के पर एक ओर शिवकी मूर्ति होती है। किसी किसीपर राजाके नामके साथ "महिश्वर" भी लिखा है, जिससे मालूम होता है, कि कुजुल जहाँ धर्मस्थित (बौद्ध) था, वहाँ विम माहेश्वर (शव) था। इसके सिक्कोपर एक ओर मुकुट-शिरस्त्राणधारी राजा हाथमें गदा और शूल लिए खडा है, तथा वही ग्रीक लिपिमे "वसिलेउस विमकदफिसस" उत्कीर्ण होता है, और दूसरी ओर "महरजस राजाधिरजस सर्वलोग इश्वरस महिश्वरस विमकदफिसस"। 'ईश्वर' और "महीश्वर" राजा और महाराजाके पर्याय है, इसलिए हो सकता है, "महीश्वर" (माहेश्वर) शैवका द्योतक न हो। इसके दूसरे तावेके सिक्केकी एक ओर लवी टोपी और लवा लवादा पहने राजा खडा है। उसकी दाहिनी ओर हवन कुड है। राजाके वाये हाथमें परशु है। इसी तरफ ग्रीक लिपिमें "वसिलेउस वसिलेउन सेतरमेगस विमकदफिस" लिखा हुआ है। सिक्केकी दूसरी ओर नदीके साथ त्रिशूलधारी शिवकी मूर्तिके पास खरोष्ठी लिपिमें लिखा रहता है "ईश्वरस महीश्वरस विमकदफिस"। "ईश्वर महीश्वर" ग्रीक "वसिलेउस वेसिलियोन" (राजाओका राजा) का अनुवाद मालूम होता है। कुषाणोको बौद्ध या शैव आदि धर्मोके साथ सवद्ध देखकर उन्हें भारतमे आकर हिंदू-सस्कृति और धर्मको ग्रहण करनेवाला समझनेकी गलती इसी कारणकी जाती है, कि हम यह नही जानते, कि उनका मूल-स्थान (तुषार-देश, तरिम-उपत्यका) इसमे पहिले ही से ही धर्म और सस्कृतिमें हिंदू था।

---

[1] वही

(३) कनिष्क (७८-१०६ ई०)

विमक उत्तराधिकारीके रूपमे हम भारत ही नही एसियाके एक महान् शासक, महान् निर्माता कनिष्कको पाते है। जिस तरह विम और कुजुलका पारस्परिक सबध हमे नही मालूम है, उसी तरह कनिष्क और विमका भी सबध भी अज्ञात है। कुजुल कुषाणोका यवगू (जवगु) था, इससे वह घुमन्तुओकी प्रथाके अनुसार विम कुजुलका भाई भी हो सकता है और बेटा भी। वही बात विम और कनिष्कके सबधमे भी कह सकते ह। विमने जहाँ गगासे वक्षु तक फैले अपने राज्यको कनिष्कके लिये छोडा, वहाँ सोनेकी मुद्राकी प्रतीकवाली विशाल व्यापार लक्ष्मीका भी उसे स्वामी बना दिया। कनिष्कके सिंहासनारूढ होनेके समयसे वह सन् आरभ होता है, जिसे हम आजकल शक-शालिवाहन सवत् कहते है। शालिवाहन सातवाहनका रूपातर है, जो आध्र राजाओकी पदवी सा बन गया था। सातवाहनोका शकोके साथ सघर्ष और विवाह-सबध भी बहुत रहा है, शायद इसी कारण पीछे शक-शालिवाहन (शकसातवाहन) जोडा शब्द बोला जाने लगा। कनिष्क जहाँ अशोककी तरह एक उदार "धार्मिक धर्मराजा" बौद्ध था, वहाँ दूसरी ओर वह एक बडा बहादुर योद्धा और कुशल शासक भी था। सारनाथमें उसके तीसरे राज्यवर्ष (८१ ईस्वी) का एक अभिलेख मिला है, जिससे जान पडता है, कि गद्दीपर बैठनेके तीन वर्षके भीतर ही वह सारे उत्तर-प्रदेशका स्वामी बन गया था। ख्वारेज्मकी मरुभूमि (करा-कुम) मे कनिष्कके समयके नगर मिले है और उसीके कारण ईसाकी आरभिक तीन शताब्दियोकी वहाँकी सस्कृतिको कुषाण-सस्कृति कहा जाता है। अयस-कला, जिल्दिक और तोप्रक-कलाके ध्वसावशेष इसी कालके हैं। वहाँ जो चीजे उस कालकी मिली हैं, उनमें कनिष्कके सिक्के भी है। अभी भी वहाँकी खुदाई जारी है। जो चीजे वहाँ मिली हैं, उनके बारेमें अभी ग्रथ नही लिखे गये हैं। कुछ छोटे-मोटे लेख रूसी अनुसधान-पत्रिकाओमें ही छपे हैं, जो भाषाके कारण ही बाहरवाले विद्वानोके लिए ज्ञात नही है, बल्कि पत्रिकायें बाहर मिलती नही। हमारे दूतावास जितनी शान शौकतसे अपने कमरोको सजाने और ठाट-बाटसे रहनेकी फिकर करते है, उतना वहाँ साइन्स, कला और इतिहास-सबधी जो खोजे हो रही है, उनके बारेमें ध्यान देनेकी अवश्यकता नही समझते। १९४९ ई० की खुदाईमें वहाँ तीसरी शताब्दीके महत्वपूर्ण भित्ति-चित्र मिले है। एक कमरेमे तो इतने अधिक कुशल कारीगरोके बनाये हुए धनुष, बाण और दूसरे हथियार मिले है, जिसके कारण उसे उस कालका शस्त्रसग्रहालय कहा जा सकता है। इन पुराने कुषाणकालीन नगर-ध्वसोमे सभव है उस समयके अभिलेख भी मिलें। हाल ही में उससे कुछ ही पीछेके चर्मपत्रपर लिखे पुरानी भाषाके बहुतसे अभिलेख मिले है। यदि कनिष्कके मनो सिक्के हमें उत्तर प्रदेशके आजमगढ जैसे एक जिलेमें मिल जाते है और कनिष्कके लेख पेशावर, रावलपिंडीके जिलो, बहावलपुर रियासत, मथुरा, श्रावस्ती, कौशाम्बी, सारनाथ आदिमें मिले है, तो सभव है, कि कराकुम, किजिलकुम की मरुभूमि कनिष्क कालके बारेमे जाननेके लिये विशेष सहायक हो।

कनिष्कके राज्यकालका निर्णय उसके और उसके उत्तराधिकारियोके अभिलेखो द्वारा ही

Notes on Indo Scythian Chronology, (Sten-Kono), Early History of India (V Smith)

किया गया है। कनिष्कका सबसे अंतिम अभिलेख उसके राज्यके २३वें वर्ष (१०१ ई०)का मिला है। मथुरा और साचीमें शक-सवत् २४ और २८ के दो अभिलेख मिले है, जिनमें वसिष्कका नाम आता है, जिसका अर्थ हुआ—१०२ और १०६ ई० में वसिष्क कुषाणोका राजा था। वैसेपेशावर जिलेके आरा स्थानमें शक-सवत् ४१ (११९ ई०)का भी एक लेख मिला है, जिसमें "वसिष्क पुत्र महाराज राजातिराज देवपुत्र कनिष्कके राज्यका ४१ वर्ष" लिखा हुआ है। जिससे सदेह होता है कि कनिष्कने ४१ वर्ष राज किया। लेकिन वसिष्कका पुत्र कनिष्क था, इसका कोई पता नहीं है।

(१०१)
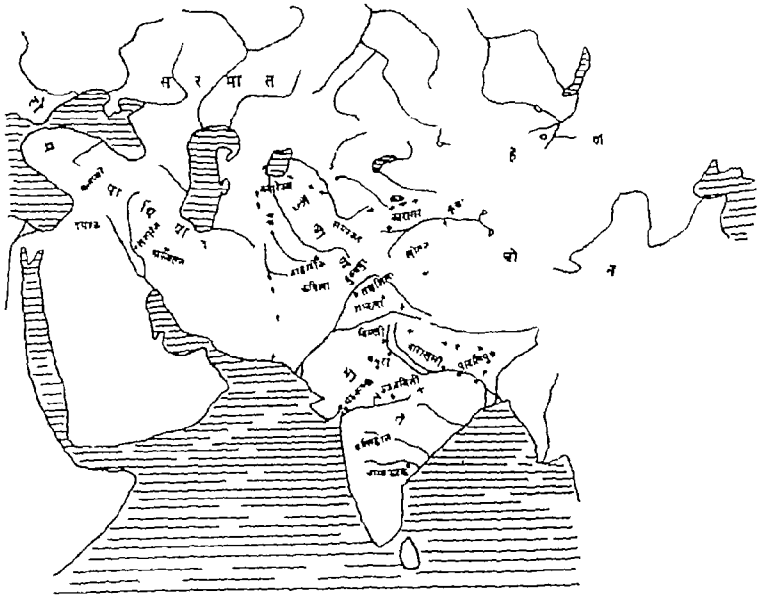
और दूसरे २४वें और २८वें शक-सवत्में वसिष्क और ३१वें से ६०वें (१०९,१४८ई०)म हुविष्कके अभिलेख मिले है,जिसके कारण हमें यह मानना पडेगा कि वसिष्क और हुविष्क या तो कनिष्कके क्षत्रप थे, अथवा यह वसिष्क-पुत्र कनिष्क दूसरा कनिष्क था, जिसने वसिष्क और हुविष्कके बीचमें राज्य किया। अस्तु। यह तो निश्चित ही मालूम होता है कि कनिष्कने २३ साल (७८-१०१ ई०) तक अवश्य शासन किया था। ख्वारेज्मकी खुदाईसे मालूम होता है कि कनिष्कका शासन मध्य-एसियामें आजके सारे उज्बेकिस्तान और ताजिकिस्तानमें फैला हुआ था। साथ ही कनिष्क अपनी पितृ-भूमि पुरानें तुषार-देश (तरिम-उपत्यका) को भूला नहीं था। चीनने १११ ई० में तावान (फर्गाना) तकको जीतकर सारी तरिम-उपत्यका लेते हुए फर्गाना तकके रेशमपथको अपने हाथमें कर लिया था। तरिमके उत्तरके वू-सुन चीनके बडे विश्वासपात्र अधीन शासक थे, जिन्हें विवाह-सबधसे भी चीनने अपने साथ घनिष्ट सूत्रमें बाध रक्खा था। हम अन्यत्र देख चुके है, किस तरह वू-सुन राजा चीन राजकुमारियोंका ब्याह लाते थे, जो बेचारी

घुमन्तू जीवनके कष्टको वर्दाश्त करते अपने नैहरके सुखोके लिये आसू बहाया करती थी। कनिष्क अपनी अपार अजेय सेनाका नेतृत्व करते हुए चारो ओर अपनी विजय-दुन्दुभी बजा रहा था, उस समय चीनमें लोयाङ के हान-वश (२५-२२० ई०) का शासन था। वू-ती (२५-५८ ई०) चाङ्ग ती (७६-८६ ई०) और हो-ती (८६-१०६ ई०) इस वशके प्रतापी सम्राट् कनिष्कके समकालीन थे। इस वशका सस्थापक वाई याङवान् (२३-२५) ई० था। पुराने हान-वशकी राजधानी छाङ-आन्में २०८ ई० पू० से २५ ई० तक शासन किया था। तरिम-उपत्यकाकी ओर वढनेमे कनिष्कके लिये सबसे वाधक चीन था, जिसके सेनापति पान्-चाउकी वीरता और रणकुशलताकी वडी धाक थी। उसने तरिम-उपत्यकाको ही अपने हाथमे नही कर रक्खा था, वल्कि उसके कारण कनिष्कका कश्मीर और उसके उत्तरका प्रदेश भी खतरेमें पड गया था।

कनिष्ककी यह कोई गुस्ताखी नही थी, यदि उसने चीन सम्राट्से राजकन्या मागी। हम जानते है वू-सुन राजा, जो पीढ़ियोसे चीन सम्राट्के दामाद होते आये थे, वल और वैभवमे कनिष्कके मथुराके क्षत्रप खरपल्लान या काशीके क्षत्रप वनस्पर क्या इन क्षत्रपोके तीसरा श्रेणीके सरदारोके वरावर भी नही थे। लेकिन जव कनिष्कका दूत पान्चाउके पास अपने राजाके लिये चीनी राजकुमारी मांगने गया, तो उसने कनिष्कके दूतको जेलमें डाल दिया। इस तरह पान्-चाउने कनिष्कको युद्धके लिये आह्वान किया। वगालसे ख्वारेज्म तकके प्रतापी सम्राट्के लिये यह वडे अपमानकी वात थी। कनिष्क एक वडी सेना लेकर पान्-चाउसे वदला लेनेके लिये गया, किंतु उसे पामीर और हिमालय के दुर्गम मार्गोको पार करके अपनी सेनाको लेजाना था, जब कि चीनी सेना अपने हूण और वू-सुन सहायकोंके साथ वहा पहलेसे मौजूद थी। फलत कनिष्कको बुरी तौरसे हारकर चीन सम्राट्का करद वनना पडा। खूनके घूट पीकर उस वक्त तो वह रह गया, लेकिन कुछ वर्षों वाद उसने फिर उस पराजयके कलकको धोना चाहा। उस समय पान्-चाउ मर चुका था और उसका पुत्र पान्-चाङ चीनकी पश्चिमी सेनाका सेनापति था। कनिष्कने चीनी सेनाको वुरी तरह पराजित किया और तरिम-उपत्यका के अपने पूर्वजोके देशको प्राप्त करनेमें सफलता पाई। तरिम-उपत्यका और उसके उत्तर तथा उत्तर-पूव मे बहुतसे चीनके करद राज्य थे। हूण भी अव दो भागोमें वट गये थे, और उनका एक शक्तिशाली (दक्षिणी) भाग चीनके साथ था। इसमें सदेह नहीं, कनिष्क की सेनाको इन सवकी सम्मिलित शक्तिसे भुगतना पडा होगा। कनिष्कने चीनको हराकर ही सन्तोष नही किया, वल्कि मध्य-एसियाई या चीनी राजकुमारोको जामिन (युद्धके लाभ) के रूपमें अपने साथ ले आया। इन राजकुमारोके आराम की ओर उसने बहुत ध्यान दिया। इससे एक वडा उपकार यह हुआ, कि उन्होने भारतमें नासपाती और आडूके फल पहले पहल लगाये। हमारे यहां पहिले से ही कपिशाका अगूर मशहूर था। उनके रहनेके लिये उसी कपिशा (कोहदामन) उपत्यकामें स्थान वनवाया गया था, जिसे शे-लो-क-विहार कहते थे। स्वेन्-चाङने अपनी यात्रामें ७वीं शताब्दीके पूर्वार्द्धमें उसे देखा था। पूर्वी पजाव (जलन्धर) के जिस इलाकेमें उन्हें जागीर मिली थी, उसका नाम ही चीनभुक्ति (चीन जिला) पड गया था। स्वेन्-चाङके जीवन चरित्रके लेखक हुइ-लीने लिखा है, कि राजकुमारोने विहार वनवाकर उसकी मरम्मतके लिये इतना रुपया गाडके रख दिया था, कि उसे प्राप्त कर स्वेन्-चाङने विहारकी फिरसे मरम्मत करवा दी।

कनिष्क वौद्धोकी परिभाषाके अनुसार सचमुच ही "धम्मियधम्मराजा" (धार्मिक धर्म-

राज) था। उसकी राजधानी पुरुषपुर (पेशावर) थी। इसके पहले गधारके इस नगरको कोई प्रधानता नही मिली थी। गधारकी प्रसिद्ध नगरी और राजधानी तक्षशिला थी, जो कि सिधु नदीके पूरवमे रावलपिंडी जिले में कालासरायले स्टेशनके पास शाहजीदीढेरीके नामसे मौजद है। गधारका प्राचीन देश (पख्तूनिस्तान) पाकिस्तान और स्वतत्र कबीलोमे बटा हुआ था। लेकिन आजकल पख्तून (पठानोका देश) रावलपिंडी तक नही है। पश्चिमी गधारमे

चित्र २३—कनिष्क

पुष्कलावती (चारसद्दा) को ग्रीक राजाओने कुछ समय अपनी राजधानी जरूर बनाया था। गधारके महत्वका बढानेवाला कनिष्क था। उस समय राजधानी पुरुषपुर बहुत समृद्ध रही होगी, यह तो उससे तीन और पाच शताब्दिया पीछे आनेवाले फा-शीन और स्वेन् चाङके यात्रा-विवरणोसे मालूम होता है। कनिष्कके समय पाटलिपुत्रका वैभव पुरुषपुरको मिल गया था। बाख्त्रिया भी एक क्षत्रपकी राजधानीसे अधिक महत्व नही रखती थी। फर्गानाकी उर्वर और समृद्ध उपत्यका ही नहीं कनिष्कके हाथमें थी, बल्कि सिङक्याङकी पश्चिमी सीमासे लेकर पार्थिव

(ईरानी) सीमा तक का रेशमपथ कनिष्क के हाथ में था। फर्गाना तथा सोग्द के समरकन्द आदि व्यापारिक नगर, उसके हाथ में थे। सोग्द नदी के किनारे आज भी कुशानिया कस्बा है, जो बतला रहा है, कि कुषाणोने इस भूमि को और समृद्ध करने की कोशिश की थी। ख्वारेज्म में निम्न-वक्षु की उत्तर तरफ किजिलकुम के रेगिस्तान में तोप्रक-क्लाका नगरध्वस हाल में खोदकर निकाला गया है, जिसके आकार-प्रकार को देखने[1] ही से मालूम होता है, कि घुमन्तू शक अब नागरिकता मे आगे बढ़ गये थे। कश्मीर में भी कनिष्क ने कनिष्कपुर नामसे एक नगर बसाया था, जिसका उल्लेख कल्हण ने राजतरगिणी में किया है। तक्षशिला में उसका बसाया नगर आजका सिरसुख है।

व्यापार के महत्त्व को, तो जान पडता है, कुषाणो ने खास तौर से समझा था, इसीलिये उन्होने व्यापार-पथो की ओर विशेष तौर से ध्यान दिया था। बडी नदियाँ ही नही, बल्कि ऐसी नदियो का भी उन्होने इस्तेमाल किया था, जिनमें वर्षा के दो ढाई महीनें ही नावें चल सकती है। इसका उदाहरण आजमगढ जिले के दक्षिण में अवस्थित मँगई (मार्गवती) नदी है। छोटी नदी होने पर भी वह गाजीपुर जिले में सीधे गगामें जाकर मिलती है। इसी छोटी नदी के दाहिने किनारे पर मेरे पितृग्राम (कनैला) से मील भरपर ही सिसवा का विस्तृत ध्वसावशेष है, जहाँ वर्षों से ढेरो कनिष्क के सिक्के मिलते आ रहे है, । शिंशपा ग्राम कुषाणो के वक्त एक अच्छा व्यापारिक केन्द्र रहा। मगई नदी मे वर्षा खतम होतें ही इतना कम पानी रह जाता है, कि लोग जगह-जगह बाँध बाँधकर पशुओ के लिये पानी जमा करते है । कनिष्क के विशाल साम्राज्य में ऐसी न जाने कितनी मगइयो को व्यापारपथ के रूप में इस्तेमाल किया जाता रहा होगा।

तोप्रक-कला का निर्माण कुषाणो की सुरुचि और उपयोगिता दोनो को प्रदर्शित करता है। यह चौकोर दुर्गबद्ध बस्ती चारो ओर मजबूत प्रकार से घिरी थी। इसकी एक तरफ दक्षिण में दुर्ग का सुदृढ द्वार था। द्वारके भीतर एक प्रशस्त पथ उत्तरसे दक्षिण चला गया था। दक्षिण के छोर पर जान पडता है, शासक का महल (अत पुर) था। प्रधान सडक से दाहिने और बायें समकोण पर चार और सडकें निकली थी, जिनके किनारे बाजार और घर बसे हुये थे। नगर की लबाई प्राय हजार गज और चौडाई ६०० गज थी। खुदाई के सचालक प्रोफेसर न स ताल्स्तोफ का कहना है, कि क्लासिकल प्राची की वस्तुकला का यह सुदर नमूना है। भारत में शको के शासन और कला का स्थान भारशिवो और बाद में गुप्तो ने लिया।

कुषाणो से पहले बाख्त्रीय ग्रीको ने कला को बहुत प्रोत्साहन दिया, लेकिन वह भारतीय रग में तब तक रग न पाई, जब तक कि कनिष्क के सर्वतोमुखीन प्रगति वाले शासन ने उसे वैसा नही कर दिया। बुद्ध की प्रथम मूर्ति कनिष्क के समय में बनी, जिसके चीवर के चुन्नट और केश-विन्यास पर ग्रीक प्रभाव दिखाई पडता है, यद्यपि बहुत ही सूक्ष्म और मधुर रूपमें ही। बाख्त्रीय ग्रीक कला को गधार-भारतीय शैली में परिणत करने का काम कनिष्क के शासन में हुआ। ग्रीक और पह्लव शासन काल से ही मथुरा क्षत्रपो की राजधानी चली आई थी। शासन के समय मथुरा समृद्ध रही होगी, इसमें सदेह नही। तक्षशिला, पाटलिपुत्र और दक्षिणापथ के

---

[1] वे द्रे १९४६ १ पृष्ठ ७१, ७२, ७३

व्यापारपथ भी यहीं पर मिलते थे। उस समय के राजस्थान का भी मार्ग यहीं से फूटता था। आज यह सारा-सुभीता आगरा को प्राप्त है। बहुत सभव है, इसीके कारण अकबर अपनी राजधानी दिल्ली से आगरा ले गया। १९४७ ई० के बाद भी बिना पहले से सोचे-समझे ऐसी घटना घटित होती देखी गई। पहले थोडे से सिंधी या पजाबी शरणार्थी आगरा में पहुँचे। कितने ही विस्थापित सिंधी राजस्थान के जोधपुर आदि नगरो मे बसना चाहते थे, क्योंकि सिंध के वह समीप थे, लेकिन जल्दी उन्हे मालूम हो गया, कि यदि ऐसे स्थान मे रहना है, जहाँ जीविका के साधन भी आसानी से प्राप्त हो सक, तो आगरा ही वैसा स्थान है। आज आगरा मे बहुत बडी सख्या में सिंधी आकर बस गये हैं। आगरा आज जहाँ कानपुर, लखनऊ, प्रयाग, बनारस तथा पूरब के नगरो के साथ रेल द्वारा सबद्ध है, वहाँ बम्बई, दिल्ली, अमृतसर, जयपुर अजमेर आदि से भी वह रेल द्वारा सयुक्त है। अकबर की दूरदर्शिता ने पहले ही आगरा को महत्व दे दिया था, इसलिये अग्रेजो ने रेल का चतुष्पथ भी वहीं बनाया। कुषाणो के वक्त ये सारे सुभीते मथुरा को प्राप्त थे। इनके अतिरिक्त मथुरा मे बुद्ध जाकर रहे थे, बौद्धोका एक प्रसिद्ध सम्प्रदाय सर्वास्तिवाद—जिसका कि कनिष्क अनुयायी था—का तत्कालीन प्रधान केन्द्र भी यहीं था। इस धार्मिक सबध को लेकर मथुरा कुषाण वास्तुकला और मूर्तिकला की अति समृद्ध नगरी बन गई। मथुरा को वासुदेव कृष्ण के जन्मस्थान होने से उतना महत्व नही मिला था, यह बुद्धकालीन जनपद और उसकी राजधानी मदुरा के उपेक्षापूर्ण वर्णन से मालूम होता है। बुद्ध के समय सूरसेन जनपद का राजा अवन्तिनाथ चडप्रद्योत का एक दौहित्र सामन्त था।

मथुरा जैसे कितने ही और समृद्ध नगर कनिष्क-शासित उभय मध्य-एसिया और भारत के बहुत से भागो में मौजूद थे।

कनिष्क और बौद्ध धर्म—बौद्ध धर्म के इतिहास मे अशोक के बाद ऊंचा स्थान जिस राजा को है, वह कनिष्क है। पाटलिपुत्र जीतने पर वह अपने साथ अश्वघोष को ले गया। अश्वघोष कालिदास के पहलेके महान कवि है। इनकी कविताकी कितनी ही समानता कालिदास के काव्य में भी मिलती है। उनके "बुद्धचरित" और "सौदरनद" दो महाकाव्य है। सस्कृतमे "बुद्धचरित" खडित मिलता है, किंतु उसके चीनी और तिब्बती अनुवाद पूर्ण है। "सारिपुत्र प्रकरण" (नाटक) की खडित सस्कृत प्रति तरिम-उपत्यका के रेगिस्तान से मिली है, और उनके एक दूसरे नाटक "राष्ट्रपाल" का पता भी लगता है, यद्यपि वह अभी तक कही अनुवाद या मूलरूप मे नही मिला है। अश्वघोष हमारे पहले नाटककार है, जिन्होंने पर्दो और दृश्यो के साथ नये ढग के अभिनय और रगमच का सूत्रपात किया। मथुरा की कला के रूप में जैसे गधार-कला भारतीय रूप धारण कर विकसित हुई, उसी तरह और उसी समय अश्वघोष के नाटको के रूप में ग्रीक नाटको का सुन्दर भारतीकरण हुआ। यह हम बतला चुके है, कि एसिया की ग्रीक पुरियो (पोलिस) के नागरिक जीवन और प्रबध में भी ग्रीस की भांति नाट्यकला का एक विशेष स्थान था। इसलिये भारत की ग्रीक पुरियो में रगमच अवश्य रहे होगे, जो ग्रीको-बाख्त्री नगरो की तरह बिलकुल ग्रीक रूप और ग्रीक भाषा में होगे।

कनिष्क के सम्माननीय आचार्यो मे अश्वघोष से भी प्रमुख स्थान पार्श्व और वसुमित्र का था। वसुमित्र की अध्यक्षता में कनिष्क ने बौद्धो की एक बडी सभा (सगीति) बौद्ध पिटक के सशोधन और सग्रह के लिये बुलाई थी। यह सगीति कश्मीर-उपत्यका (कुडलवन विहार) मे बैठी

थी, जिसके प्रमुख पार्श्व, वसुमित्र और अश्वघोष थे। इसी समय सर्वास्तिवाद के अंतिम रूप मूल-सर्वास्तिवाद के त्रिपिटकका पाठ-निर्णय और संग्रह हुआ था। इससे भी बढ़कर इस संगीति का काम था, तीनों पिटकों की विभाषाओं (भाष्यों) की रचना। इन विभाषाओं में से एक भी अब मूल संस्कृत में नहीं मिलती। मूल-सर्वास्तिवाद के विनयपिटक का अनुवाद तिब्बती संग्रह (कन्जूर) में मिलता है, चीनी भाषा में मूल तथा उसका भाष्य (विनय-विभाषा) भी प्राप्य है। विनयपिटक भारत के बुद्धकालीन सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक जीवन पर बहुत प्रकाश डालता है। उसके भाष्य के रूप में बनी विनय-विभाषा तो और भी अधिक ज्ञातव्य बातों की खान है। इन्हीं विभाषाओं के कारण सर्वास्तिवादी पीछे वैभाषिक कहे जाने लगे। कश्मीर और गंधार कुषाण-वंश की समाप्ति के बाद भी वैभाषिकों के केन्द्र बने रहे, यह हम वसुबंधु के लेखों से जानते हैं। कनिष्क की राजधानी पुरुष-पुर को ही चौथी सदी में वसुबंधु तथा उनके अग्रज असंग को पैदा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। यह दोनों भाई अद्वितीय बौद्ध दार्शनिक हैं। इस समय काव्य-कला, मूर्तिकला, नाट्यकला में ग्रीक और भारतीय धारा का सुंदर समागम हुआ, इसी तरह ग्रीक और भारतीय विचारों के मिलनका भी यही समय है। भारतीय न्याय, वैशेषिक, ज्योतिष आदि अनेक शास्त्रों में ग्रीक विचारकों की देन जो हमें स्वीकृत करनी पड़ती है, उसका भी समय कनिष्ककाल है। कनिष्कके समकालीन और सम्मानित आचार्यों में आयुर्वेदशास्त्र के विधाता चरक भी हैं। मातृचेट बौद्धों के एक सुंदर साहित्यकार थे, जिनका "अध्यर्घ-शतक" जहां एक ओर बुद्ध की स्तुति का काम देता था, वहां साथ ही उसके द्वारा तरुण विद्यार्थी को बुद्ध के मुख्य-मुख्य सिद्धान्तों का ज्ञान सरलता से हो जाता था। मातृचेट और अश्वघोष को तिब्बती परंपरा एक बतलाती है। मातृचेट का अर्थ है माता का सेवक। अश्वघोष अपनी कृतियों में हर जगह अपने नाम के साथ "सुवर्णाक्षीपुत्र साकेतक" लगाते हैं। माता सुवर्णाक्षी और मातृनगरी साकेत (अयोध्या) के साथ अश्वघोष का बहुत प्रेम था, यह तो स्पष्ट है। मातृचेट का मुख्य नाम क्या था, यह हमें मालूम नहीं है। पर, अश्वघोष और मातृचेट को एक कहना ठीक नहीं है। कनिष्क ने और आचार्यों को बुलाने के समय मातृचेट को भी बुलाया था, किंतु बुढ़ापे के कारण न आ उन्होंने 'अध्यर्घ-शतक" को अपनी सेवा के रूप में भेजा। वस्तुतः उस समय कला और विद्या के नवरत्नों का कनिष्क की राजधानी में जो समागम हुआ था, उसीका अनुकरण तीन शताब्दी बाद चंद्रगुप्त विक्रमादित्य ने किया।[1]

सिक्के[2]—कनिष्क के सिक्के बिहार से लेकर अराल समुद्र तक बहुतायतसे मिलते हैं। भारतीय मुद्रा के विद्वान् तथा पुरातत्व वेत्ता श्री परमेश्वरीलाल गुप्त (आजमगढ़) ने उन्हें घड़ियों जमा किया है। इसके सिक्के के अग्रभाग पर लम्बा चोगा, नुकीली टोपी, घुटनों तक का शकीय जूता पहने भाला, अंकुश लिये कनिष्ककी मूर्ति अंकित रहती है, जिसमें ग्रीक लिपि और भाषामें "वेसीलियोस वेसीलियोन शाओननो शाओ कनिष्को कुषाणो" (राजाओं का राजा शाहानुशाह कनिष्क कुषाण) लिखा रहता है। इसके पृष्ठ भाग पर हेरकल, सेरापी आदि ग्रीक देवताओं, अतशो

---

[1] Coins of Ancient India (J Allen, Rapson),

[2] भारतीय सिक्के (वा० श० उपाध्याय)

(अग्नि) जैसे ईरानी देवताओ, मीरो (मित्र), सूय जैसे शक देवताओ या बोदो (बुद्धकी मूर्ति) के साथ ग्रीक मे देवताओ के नाम अंकित होते हैं। हम कह चुके है, कि कनिष्क के लिये बौद्ध धम या भारतीय सकृति कोई नई चीज नही थी,क्योंकि उसके पिता-पितामहके समयसे ही नही, वल्कि कुषाणो के मूल स्थान तरिम-उपत्यका मे रहते समय भी बौद्ध धम और भारतीय संस्कृति की प्रधानता थी। उसने अपने पूर्वगामी राजाओ का अनुकरण करके खरोष्ठी लिपि और प्राकृत भाषा को यदि सिक्को पर स्थान नही दिया, और ग्रीक भाषा और लिपि का ही उपयोग किया, तो उसका कारण ग्रीक सस्कृति के प्रति अव भक्ति नहीं कहा जा सकता, जैसा कि उसके समकालीन ईरान के पार्थिव राजा अपने को "फिलहेलन" कहकर करते थे। सिक्को और कनिष्क के पुरुषपुर (पेशावर), तक्षशिला में वनवाये स्तूपो से भी उसकी बौद्ध धम मे भक्ति स्पष्ट है। चौथी सगीति कश्मीर के कुडलवन-विहार में हुई थी, वहाँ पर उसने विहार और स्तूप वनवाये। विभाषाओ को ताम्रपत्रो पर खुदवाकर वही के स्तूप में कनिष्क ने रखवा दिया था, किंतु अभी तक न कुडलवनविहार का पता लगा है, न विभाषा-स्तूप का ही। कनिष्क के समय बौद्ध धम में महायान कोई मुख्य स्थान नही रखता था। वैपुल्य (वेथुल्ल), रत्नकूट आदि वग के सूत्रो की रचना गाधार में नही वल्कि धान्यकटक और श्रीपवतके (आन्ध्र) प्रदेश मे हुई। उसका प्रभाव गाधार पर तब पडा, जबकि ४थी सदीमें वसुवधु के अग्रज असग गाधार मे उसके प्रवल पक्षपाती हुये और प्लातोनके विज्ञानवाद में क्षणिकवाद की पुट देकर उन्होने योगाचार दार्शनिक सप्रदायका प्रवर्त्तन किया। योगाचार से अनुप्राणित हो ८वी सदी में शकराचार्य ने वेदात का महल खडा किया। लेकिन जहाँ तक कनिष्क के काल या राज्य का सवध है, अभी महायान ने प्रधानता नही प्राप्त की थी। तक्षशिला मे अपने स्तूप का दान कनिष्क ने सर्वास्तिवाद के आचार्यों को दिया था, यह भी इसी वात को पुष्ट करता है।

कनिष्क के ४१वें राजवष का भी अभिलेख मिला है, इसका हम जिक्र कर आये ह, लेकिन वह शायद द्वितीय कनिष्क का है, जो उसके उत्तराधिकारी वसिष्क और तदुत्तराधिकारी हुविष्क के वीच में कुछ समय स्वतत्र शासक रहा। अधिकतर यही ठीक लगता है, कि कनिष्क ने २३ वष तक शासन किया। यह भी कहावत मात्र है, कि वरावर के दिग्विजयो से तग आकर शक सरदारो ने कनिष्क को मार डाला। कनिष्क के शिर को हम उसके सिक्को पर देख सकते ह। उसकी खडी मूर्ति प्राय पुरुषमात्र मथुरा जिलेके माट नामक स्थानमें पाई गई और आजकल मथुरा-म्युजियम में रक्खी है (चित्र २३)। इस मूर्ति मे कनिष्क अपने दाहिने हाथ का एक सीधे दड से हथियार पर और वायें हाथ को अनग्न खड्ग की मुट्ठी पर रक्खे हुये है। उसके पैरो में वही लवा शक वूट है, जो भारत की अनगिनत द्विभुज सूय-प्रतिमाओ मे देखा जाता है और जिसे आज भी शको के वशज रूसी लोग जाडो मे पहनते ह। उसके शरीर पर घुटना से नीचे तक लटकनेवाला एक अगरखा है, जिसके ऊपर उससे भी नीचे तक जानेवाला चोगा है। मूर्ति के पैरो पर कनिष्क का नाम खुदा हुआ है, इसलिये उसके कनिष्क की होने मे सदेह नहीं किया जा सकता।

(४) वशिष्क (१०१-१०६ ई०)

वशिष्क या वशुष्कके बारेमे इतना कम मालूम है, कि कितने ही विद्वान् उसे कनिष्क और हुविष्कके बीचमें हुआ राजा नही गिनते, किंतु शक-सवत् २४और २८के उसके दो अभिलेख मथुरा और साची में मिले हैं। इसमें सदेह नही, उसने थोडे ही समय तक राज्य किया, जिसीके कारण उसके सिक्के नही मिले। यह भी हो सकता है, कि वह सिंहासनकी विवादास्पदताके समय मे शासक बना। कनिष्क का साम्राज्य राजधानी पुरुषपुरसे जितना पूरबमे फैला हुआ था, उससे कम उसका विस्तार पश्चिममें नही था। सभव है, हुविष्कका जोर पहले गाधारसे ख्वारेज्म तक रहा, उसी समय कुछ सालो तक वशिष्कने शासन किया, अथवा कनिष्कके उपराज होते हुए भी उसके शासित प्रदेशमे उसे अधिराज लिख दिया गया। इस समय करीब करीब सारा मध्य एसियायी दक्षिणापथ कुषाण-राज्यमे था, चाहे उस समय कनिष्कके बाद वाशिष्क और कनिष्क, (२) वहा शासन करते रहे या हुविष्क।

(५) कनिष्क (२) (११९ ई०)

पेशावर जिलेमें अर्थात् कुषाण राजधानीसे नातिदूर आरा गाँवमे सवत् ४१ (११९ई०) का निम्न अभिलेख मिला है—

"२, महरजस रजतिरजस देवपुत्रस क(इ)सरस वझेष्कपुत्रस कनिष्कस सवत्शरअे अेकचपर (ई)शई सम् २० २० १ "[१]

इस लेखसे मालूम होता है, कि कनिष्क (२) वशिष्कका पुत्र तथा स्वय महाराज राजातिराजदेवपुत्र था। वशिष्कका पुत्र कनिष्क [१] नही हो सकता। इसलिये यह शक सवत् ४१ का कनिष्क दूसरा है। इसके बारेमे भी यही कहा जा सकता है, कि या तो हुविष्कके शासनारूढ होनेपर राज्यके लिये झगडा चला, उसमे यह स्वतत्र हो गया था, अथवा हुविष्कका क्षत्रप था।

(६) हुविष्क (१२०-१५२ ई०)

हुविष्क निश्चयही कनिष्कका शक्तिशाली उत्तराधिकारी था। वह कनिष्कके प्राय सारे साम्राज्यको अपने हाथमें कायम रख सका। इसका एक शिला-लेख शक सवत् २८ (१०६ ई०) का गिरधरपुर (जिला मथुरा) के एक कूये (लाल कुआ) से मिले खभे पर उत्कीर्ण है। यह कुआ ८४ जैन मन्दिर और गिरधरपुरके डिहके बीचमे पडता है। आजकल खभा मथुरा म्युजियम में है। अभिलेख इस प्रकार है[१]—

१ सिद्ध सवत्सरे २०८ गुरुप्पिय दिवसे १ अय पुण्या
२ शाला प्राचीतीकनस रुकमानपुत्रेण खरासले
३ र पतिन वकनपतिना अक्षयनोवि दिन्न गुतो वृद्धे
४ तो मासानुमास क्षुद्धवस्य चातुदिशे पुण्यशाला

---

[१] प्राचीन भारत का इतिहास पृ० २२२ हि० २

५ य ब्राह्मणशत परिविपितव्य दिवसे दिवसे
६ च पुण्यशलाये द्वारमूले धारिये सव सवसत्वना आ
७ ढका ३ लवुण प्रस्था १ शक्र प्रस्था १ हरितकलापक
८ घटक ३ मल्लक ५ अेत अनाधना कृतेन दतव्य
९ वुभक्षितान पिवसितान य च तु पुण्य त देवपुत्रस्य
१० पहिस्य हुविष्कस्य ये च देवपुत्रो प्रिय तेपामपि पुण्य
११ भवतु सर्वापि च पृथिवीये पुण्य भवतु आक्षयनिवि दिन्न
१२ क श्रेणीये पुराणशत ५०० ५० सस्तिकर श्रेणी
१३ पुराणशत ५०० ५०"

इस लेखमें अेक दानका उल्लेख है, जिसमें देवपुत्रशाही हुविष्क तथा जिनके वह प्रिय हैं, उनके पुण्यके लिये रुकमानपुत्र खरासलेरपति वकनपतिने ११०० पुराण (सिक्का) की अक्षयनीवि इसलिये स्थापित की, कि प्रतिमास शुक्ल चतुर्दशीके दिन पुण्यशालाम १०० ब्राह्मणो को भोजन कराया जाय। जान पडता है, ११०० पुराण (+५६ ग्रेन चादी) के सूदसे प्रतिमास अेक भोजके लिये तीन अढइया[१] सत्तू, एक प्रस्थ नमक, एक प्रस्थ शक्कर, तीन घटक और पाच मल्लक हरितकलापक (अरहर) मिल जाता था। इस लेखसे यह पता लगता है, कि २८ वें शक सवत् (१०६ ई०) मे हुविष्कका मथुरापर शासन था, और मथुरा की क्षत्रपी (जो कि प्राय सारे उत्तर प्रदेशकी क्षत्रपी थी) हुविष्कके हाथमें थी। हुविष्कका शासन उत्तर प्रदेश, पजाव, कश्मीर, गाधार, कपिशा, तक ही नहीं, वल्कि वाख्त्रिया और ख्वारेज्म तक था। शायद अभी मूल तुखार देशभी कुषाणोंके हाथ से गया नही था। हुविष्कने मथुराम अेक बौद्ध विहार और चैत्य वनवाया था। कश्मीरमें उसने अपने नामसे एक नगर वसाया था, जो हुष्कपुर, या उष्कुर (जुकुर)के नामसे मौजूद है। उसके अभिलेख २८ से लेकर ६० वें शक सवत् तकके मिलते हैं, जिससे जान पडता है कि वह ईसवी सन् १०६ से १३६ ई० तक अवश्य शासन करता रहा। ऐसी अवस्थामें कनिष्क (२) स्वतत्रशासक नहीं रहा होगा। ख्वारेज्ममें कुषाण कालके नगर और वहुतसी चीजे निकली हैं, लेकिन अभी उनका पता रूसी विशेषज्ञो के अतिरिक्त और किसी को नहीं है। ख्वारेज्मपर कनिष्कके भी वहुत समय वाद तक कुषाणोका प्रभाव रहा, यह रूसी विद्वान् स्वीकार करते, और ईसाकी २री ३री शताब्दीके ख्वारेज्मकी सस्कृतिको "कुशान्स्कया कुलतुर"[१] (कुषाणीय सस्कृति) कहते है।[१]

हुविष्कके भिन्न भिन्न प्रकारके ताबे और चादीके सिक्के मिलते है, जिसके अग्रभागपर राजाका चित्र, ग्रीक लिपि में नाम और उपाधि सहित अकित होता हैं। सिक्केके पृष्ठभाग पर ग्रीक, ईरानी या भारतीय देवी देवताओकी मूर्तियाँ ग्रीक लिपिमे लिखे नामके साथ होती हैं। केवल ग्रीक लिपि का स्वीकार करना वतलाता है, कि अभी कुषाण राज्य केवल भारत तक ही

---

[१] अल्वेरूनी (ग्यारहवी सदी के पूर्वार्द्ध) के अनुसार—४ कष (सुवर्ण, ताला) = १ पल, ४ पल (= १६ तोला) = १ कुडव, ८ कुडव (= १८ तोला) = १ प्रस्थ, ४ प्रस्थ (२५६ तोला, ३ सेर २६ तोला = आढक (अढइया) ७३।२ क० सो० XIII पृ० १८८।

सीमित नही था। हुविष्कके एक ताबेके सिक्केके अग्रभागपर हाथीपर सवार, शिरपर मुकुट पहने, हाथमें शूल-अकुश लिये देवपुत्रकी तस्वीर है, और पृष्ठभाग पर किसी देवताकी खडी मूर्ति। इसके सोनेके सिक्कोमें ताबे के सिक्कोंसे कुछ भेद पाया जाता है।

हुविष्कके शासनकालमे साम्राज्यकी समृद्धिमे कोई अतर नही पडा। उस समय फर्गाना सोग्द, बाख्त्रिया और ख्वारेज्म बहुत समृद्ध थे। पश्चिममें पार्थिव साम्राज्य भी बहुत विशाल और, शक्तिशाली था। इच्छा होनेपर कुषाण अपने वणिक्पथ को कास्पियनके उत्तरी तट से आलानो और सर्मातोंके भीतरसे रोम-साम्राज्य और युरोपमें अपनी वस्तुओको पहुँचा सकते थे।

(७) वासुदेव (१५२-१८६ ई०)

जैसा कि नामसे प्रकट होता है, अब कुषाण केवल भारतीय सस्कृतिसे प्रभावित नही रह गए थे, बल्कि पूरी तौरसे भारतीय हो गए थे। कुजुल, वीम, कनिष्क, वशिष्क, हुविष्क यह सभी शक नाम है, और वासुदेव शुद्ध भारतीय तथा ब्राह्मणिक नाम है। इसके पूर्वाधिकारी हुविष्कका कोई ऐसा सिक्का नही मिला है, जिसपर बुद्धकी प्रतिमा हो, इसके विरुद्ध शिव विशाख आदि की मूर्त्तियाँ उसके अनेको सिक्कोपर मिलती है, जिससे यही जान पडता है कि उसकी आस्था ब्राह्मण-धर्मपर अधिक थी, इसीसे उसके उत्तराधिकारीका नाम वासुदेव पड़ा। वासुदेवके अभिलेख सवत् ७४ (१५२ ई०) से लेकर ९८ (१७६ ई०) तकके मिले है, जिससे मालूम होता है, कि उसने कमसे कम २४ वर्ष तो अवश्य शासन किया। उसके लेख केवल मथुरा जिलेमें और सिक्के पजाब और उत्तर प्रदेशमें मिले है। शायद अब उसका शासन केवल भारतमें ही रह गया था। कपिशा, बाख्त्रिया, सोग्द, ख्वारेज्म आदिमें नाना देवी की पूजा होती थी, जिसकी मूर्ति पहलेके सभी कुषाण-सिक्कोपर मिलती है, किन्तु वासुदेवके सिक्कोपर वह बहुत कम मिलती है। इसके सिक्कोपर शिव और नदीकी प्रधानता बतलाती है, कि अब कुषाण-राजवश ब्राह्मण धर्मी हो चला था। वासुदेवका शासन मध्य-एसियामें नही था, लेकिन अब भी मध्य-एसिया कुषाणोका था। वासुदेवके किसी-किसी सिक्केपर नानाकी मूर्ति मिलती है। उसके सिक्के अधिकतासे नही मिलते, जिससे जान पडता है, कि भारतमे भी कुषाण-शक्ति निर्बल होती जा रही थी। मध्यएसियाके कुषाणोसे सबध रखनेवाली सामग्री अभी-अभी मिलने लगी है। यह निश्चित मालूम होता है, कि ३री शताब्दीके अतमें ख्वारेज्म तक कुषाणोका शासन था। ३री से ५वी शताब्दीमें अफ्रीग उनका स्थान लेते है, जिनके नगरावशेष तोप्रककला, यक्केपरसान और लघु कवात-कलाके ध्वसावशेषोके रूपमें शताब्दियो तक किजिलकुमके बालूमे ढके रहकर अब बाहर आये है। बाख्त्रिया, सोग्द और पामीर (ईमाओस्) मे भी कुषाणो ही का शासन था। कुषाण अपने मूल स्थानके नामसे तुखारी भी कहे जाते थे, अब इनका प्रधान स्थान मध्य-वक्षुके दोनो तरफकी विस्तृत भूमि थी, जिसे इसी समय तुखारिस्तानका नाम मिला। इस प्रदेशको आरभिक अरब लेखक इसी नामसे याद करते है।

भारतमें वासुदेवके बाद द्वितीय वासुदेव, द्वितीय या तृतीय कनिष्क भी हुए, जिनका पता उनके सिक्कोसे मिलता है। अतिम कुषाण शासक किदारके नामसे पुकारे जाते थे। ये कुषाण शाहके नामसे सासानियोके में अधीन थे। प्रथम किदार कुषाण शाहकी राजधानी पेशावरमें थी। किदारने कश्मीर तथा मध्य पजाबको जीतकर अपनेको शक्तिशाली बनाया, और सासानी

जूयेको अपने ऊपरसे उठा फेंका। लडाईमे विजयी हो किदारने अपने स्वतंत्र सिक्के चलाये। यह सिक्के सासानी ढगके है। इनके अग्र भागपर राजाका आधा शरीर तथा ब्राह्मी अक्षरोमे राजाका नाम खुदा मिलता है। राजाके शिरपर पगडी मुकुटकी तरह बँधी रहती है। वाल शिरपर बिखरे तथा मुखपर दाढीका अभाव देखा जाता है। लेख ब्राह्मी अक्षरोमे "किदार कुषाण" होता है। सिक्केके पृष्ठभागपर अग्निकुडके दोनो तरफ दो परिचारक खडे दिखाई पडते है।

पिरो (४ थी शताब्दीका अन्त)

किदार अतिम प्रभावशाली कुषाण राजा था। अब समुद्रगुप्त और चद्रगुप्तका समय आ गया था, जिनके विक्रमके कारण कुषाणोको वहुत धक्का लगा। चद्रगुप्त (२) (३७५-४१४ ई०) ने पिरोको हराया। पश्चिममें शापूर(३) (३८३-८८ ई०)से भी हार खाकर उसे सासानी अधीनता स्वीकार करनी पडी। इस प्रकार ५वी शताब्दीके आते आते कुषाण शक्ति वहुत क्षीण हो गई। मध्य-एसियामें भी उमकी वही हालत हुई। किंतु, जिस प्रकार कुषाणोका स्थान हेफतालो (श्वेत हूणो) ने लिया, इसके जाननेका हमारे पास साधन नही है। हमें यह भी मालूम नही है कि वह कौन सा श्वेत-हूण सरदार था, जिसने मध्य-एसियासे कुषाण-शासनको उठाया।

स्रोत-ग्रथ

1 Greeks in Bactria India (W W Tarn)

२ प्राचीन भारतका इतिहास (भगवतशरण उपाध्याय, पटना, १९४९)

३ भारतीय सिक्के (वासुदेव शरण उपाध्याय, प्रयाग, स० २००५)

4 Coins of Ancient India (J Allen, London 1936)

5 Coins of Ancient India (Rapson, London)

6 Catalogue of Coins in the British Museum, Greek amd Scythian kings of Bactria and India, History of Ancient India (V Smith)

7 History of Ancient India (v Smith,

8 History of Ancient India (R S Tripathi)

9 Memoire Sur l' Asie Centrale (Girarard de Rialle, Paris 1875)

10 The Story of Chang Kien (F Hirth J A O S 1917, p 89)

11 Notes on Indo-Scythian chronolgy, (Sten Kono)

१२ क्लिं० सोओव्, XIII पी० १४८,

१३ किताबुल्-हिन्द (अबूरैहाँ अल्बेरूनी, अनुवादक सं० असगरअली, दिल्ली १९४१)

अध्याय ५

हेफताल (४२५-५५७ ई०)

१ राजा

भारत और ईरानमे भी हेफताल हूण कहे जाते थे, किंतु वह वस्तुत हूण नही थे। हूणो के साथ उनका इतना ही संबध था, कि हूण-प्रहारके बाद मध्य-एसियाकी अपनी भूमि को छोडकर जहाँ यूची और दूसरे शक दक्षिणकी ओर चले आये थे, वहाँ पश्चिमी छोर पर कुछ शक-सताने अब भी रह गई थी, जो हूण संस्कृतिसे काफी प्रभावित हुईं, इसलिए उन्हें हूणिक शक कहा जा सकता है। उत्तरापथ अब भी घुमन्तुओ और अर्ध-घुमन्तुओका देश था। घुमन्तू चाहे शक हो या हूण, उनके रहन-सहन और कितनी ही और बातोमें समानता होती है। फिर देर तक हूणोके शासनमें रह जाने वालो पर अधिक प्रभाव पडना ही चाहिये। जान पडता है, जिस प्रहारके कारण हूण वशजोको उत्तरापथ छोड धीरे-धीरे पश्चिममें दन्यूबकी-उपत्यकता तक भागना पडा, उसी तरहके प्रहारसे हेफ्ताल भी दक्षिणकी ओर भागनेके लिये मजबूर हुए। हेफताल (एफताल) पश्चिमी शकोकी सतान तथा अलानोके भाई-बंध थे। सभवत वर्तमान ताशकद प्रदेशके उत्तरमें वही इनका कबीला रहता था, जहाँ पर कि वू-सुनो और कगोकी सीमायें मिलती थी। ईस्वी ५वीं शताब्दीमें ख्वारेज्ममें अफ्रीगोकी प्रधानता हुई। यह अफ्रीक (अफ्रीग) ५वीसे ६वी शताब्दी तक ख्वारेज्ममें अपनी स्वतत्रता बनाये रखे। अरब विजेता उसी तरह इनकी स्वाधीनताका अपहरण नही कर सके, जिस तरह इनसे पहले वाख्त्रीय ग्रीकोने कगोकी। श्वेत-हूण (हेफताल) अपनी दक्षिणाभिमुख विजय-यात्रा ताशकदके द्वारसे सोग्द और वाख्त्रियाकी ओर कर सके। एक बार बाख्त्रिया और सोग्दसे कुषाणो के शासनको हटाकर अपनी प्रभुता जमा लेनेपर कपिशा और गाधारके कुषाण राजाओको वह छोड नही सकते थे। इस प्रकार हेफ्ताल भारत तक चले आये। हेफतालोका मूल-निवास वक्षु-उपत्यका नहीं थी। इनके आनेके समय वक्षु तुषारो (कुषाणो) के हाथमें थी। भारतमें वह अवश्य ६० वर्ष पीछे आये, जब कि वाख्त्रिया इनका केंद्र बन गया था। बाख्त्रीय कुषाण संस्कृतिमें दीक्षित होनेके बाद भारतकी ओर आनेसे उनका प्रथम निवास वक्षु-उपत्यका कहा जाता था। सोवियत विद्वानोकी हालकी खोजोसे पता लगता है, कि हेफ्तालो (श्वेत हूणो) का शासन-केंद्र वाख्त्रिया नही, सोग्द-उपत्यका थी। बुखाराके पास वरखशामें इनकी राजधानीके अवशेष मिले हैं। बालूसे ढँके ध्वसावशेषोकी दीवारोपर कितने ही भित्ति चित्र मिले है, जिनपर भारतीय चित्रकलाका काफी प्रभाव है।

३ तुलनात्मक हेफताल-अवार वश

ई०	भारत	चीन	दक्षिणापथ	उत्तरापथ
		(चिन्)		
३००		हुइ-ती २९०-३०७	(कुषाण-४२५)	(हूण)
	(गुप्त)	मिन्ती ३०७-१३		

३२०	चद्र I ३१९-३४०	मिङ ती ३२३-२६		
		चेङ ती ३२६-४३		
३४०	समुद्र ३४०-७५	खङ ती ५३०		
		मु-ती २७५-६२		(आवार)
३६०		ऐं-ती ३६२-६६		गुकुरु
		ती-ई ३६६-७१		
		स्याङ्-वू-ती ३७३-९७		
३८०	राम गुप्त ३७५	(तोवा) ताङ्-वू-ती		चारुक
	चद्र II ३७६-४१४	३८६-४०९) अन्-ती ३९७-४१९		
४००		(तोवा)		
		मिङ्-स्वान ४०९-२४		शे-लुन्-३९४
४२०	कुमार I ४१५-५५	ताइ-कू ४२४-५२	(हेफताल ४२५)	दादर-४२९
४४०				
४६०	स्कन्द ४५५-६७	वेन्-चेङ ४५२-६६		
	नरसिंह ४६८	स्यान्-वेन् ४६६-७१		तुगोचिर
	कुमार II ४७३	स्याङ्-वेन् ४७१-५००		तुगोचिर-पुत्र ४६-७०
४८०				
५००		स्वान्-वू ५००-१६	तोरमान ५१०	
	भानु ५१०-	स्याङ् मिङ ५१६-२८	मिहिरकुल-	चेउना-५१६-
५२०		स्याङ् च्वाङ् ५२८-३०		प्रह्मन्
		स्याङ् वू ५३०-३५		
५४०	(मौखरी)			
	ईशान वर्मा ५५५			अनक्के-५४६-

ग्रीक और अरमनी लेखक इन्हे हेफताल, अेप्नालित, या अेफथाल कहते हैं[1]। साथ ही इन्हें हूण और श्वेतहूण भी कहा जाता रहा। इतिहासकार प्रोकोपने इन्हें "श्वेतपारसीक" भी कहा है। श्वेतहूण कहनेका कारण पुराने इतिहासकार यही वतलाते है, कि इनकी सस्कृति हूणासे अधिक उन्नत और रग अधिक सफेद था। ६ठी शताब्दीमें यह चीन और सासानी साम्राज्यके विभाजक थे। हेफ्ताल वशीय राजा तोरमान और मिहिरकुलका शासन भारतम भी रहा,और यहाँ उनके सिक्के भी मिले है। उनके सिक्कोंके देखनेसे ही पता लग जाता है, कि वह हूण जातिके नही थे। मगोलायित होने मे हूणोको दाढ़ी और मूछ नही-सी होती थी, जब कि सिक्कोपर तोरमान और मिहिरकुलके चेहरे दाढीसे भरे मिलते है। तोरमानके सिक्केके अग्रभागमें राजा का शिर तथा गुप्तलिपि में "विजितावनिरवनिपति श्रीतोरमान" लिखा रहता है, और दूसरी ओर पख सहित मोरकी आकृति। तोरमानके सिक्केमें गुप्तमुद्राका पूणतया अनुकरण किया गया है, जिससे स्पष्ट है, कि भारतमें वह अपनेको गुप्ताका उत्तराधिकारी मानता था। उसके पुत्र मिहिरकुलके सिक्कोंके अग्रभागपर राजाकी खडी मूर्ति तथा "शाही मिहिरकुल" अथवा घोडेपर सवार राजाकी मूर्तिके साथ मिहिरकुल अकित रहता है। पृष्ठभागपर लक्ष्मीकी मूर्ति रहती है।

तोरमान और मिहिरकुल दो ही हफ्ताल शासकोंके नाम हमें मालूम हैं। जिस वक्त तोरमान का शासन भारतमें था, उसी समय सासानी कवाद (१) (४८७—४९८,५०१—

[1] सिरिइस्क्रियें इस्तोचनिकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ़ ससर (न० पिगुलेव्स्क़या)

कि सारे हेफ्तालोका प्रधान नेता तोरमान था। हेफतालोका संघर्ष केवल भारतमेंही (गुप्तोंसे) नही हुआ, बल्कि वह सासानियोंके भी भयंकर शत्रु थे। कवादका पिता पीरोज (४५६—८३ई०) हेफतालोंसे लडते मारा गया। इससे पहले वह अपनी पुत्री हेफ्ताल राजाको देकर संधि कर चुका था। ईरानी साम्यवादी मज्दक के प्रभावमें आनेके कारण कवाद को विस्मृति-दुर्गमें बंदी होने और फिर वहाँसे भागनेका जब मौका मिला, तो वह अपने बहनोई श्वेत-हूणोंके राजाके पास गया। इस हेफताल राजाका जो नाम (अखशुनवर) अरबी लिपिसे होकर हमारे पास पहुंचा है, उसे तोरमान नही पढा जा सकता।

वरख्शा (बुखारासे नातिदूर) को सोवियतके विद्वान् हेफतालोकी राजधानी बतलाते हैं।[1] इसकी खुदाई १९३७ ई० में प्रोफेसर व० अ० शिश्किनने कराई थी। वहा ५०० घन-किलोमीतरके क्षेत्रमें पुराने नगरके बहुतसे ध्वंसावशेष मिले है। यह अवशेष उस समयके है, जब कि अभी बुखारा को प्रधानता नही मिली थी। खुदाईमें एक बडा हाल मिला है, जो शायद दरबार-हाल या मंदिर रहा हो। इसकी दीवारोमें मनुष्य, पशु आदिके बहुतसे चित्र (शिकारके दृश्य, भारतीय वेषभूषामें किसी भारतीय राजाका चित्र आदि) मिले है। प्रोफेसर शिश्किनका ख्याल है, कि इन हेफ्तालो पर भारतीयताका बहुत प्रभाव पडा था, जो तोरमानके ग्वालियरमे बनवाये सूर्य मंदिरके अभिलेखसे भी मालूम होता है।

२ ईरानी और हेफताल[2]

मध्य-एसियाके रंगमंचपर आरंभ ही से बराबर एकके बाद एक घुमन्तू जातियाँ लूट मार करती राजा बन जाती रही, फिर कुछ दिनो तक पास-पडोसमे उथल-पुथल मचाती कभी कभी हिंदूकुशके पार हो भारत तक चली आती, यह हम अनेक बार देख चुके है। हेफतालोकी शक्ति इतनी बढ़ी चढी थी, कि ईरानके सासानी शाह कितनीही बार उनके दयाके भिखारी बने। बहराम गोर (४२१-४३८ ई०) के समय कुषाणोको हटाकर वह ईरानके पडोसी बने। बाख्त्रिया लेकर उन्होने खुरासानमें लूटमार मचाई। बहराम ७००० सवारोको लेकर उनके ऊपर चढा और उसने युद्धमें हेफताल राजाको अपने हाथो मार वक्षु पार जा शत्रुको अपनी शर्तो पर संधि करनेके लिये मजबूर किया। लेकिन हेफताल घुमन्तुओपर इसका स्थायी प्रभाव नही पडा। बहरामके पुत्र यज्दगर्द (२) (४३८-४५७ ई०) के १९ सालके शासनमे भी संघर्ष जारी रहा। उसके उत्तराधिकारी होरमुज्द (३) (४४७-४५८ ई०) और उसके भाई पीरोज (४५९-४८४ ई०) गद्दीके लिए झगड पडे। पीरोज भागकर हेफतालोके राजा अखशुनवरके पास वक्षु पार गया और हेफताल सेना लेकर लौटा। होरमुज्दने राज्य और प्राण दोनो खोये। हेफताल पीरोजको अपने हाथमें रखना चाहते थे। उनसे मुक्ति पानेके लिये पीरोजने ४८० ई० में हेफतालोसे युद्ध ठाना। हेफतालोको अपने पडोसी अवारो (जुनजुन) और सासानियोसे बराबर संघर्ष करनेके लिए तैयार रहना पडता था। उसी तरह ईरानके भी दोनो ओर हेफताल (येथा) और रोमन

---

[1] क्रतिकिये सोओवृश्चेनिया x p 3

[2] ईरान दर जमान सासानियान (अर्थर क्रिस्तियान्सन, फारसी अनुवादक रशीद यासमी तेहरान १३१७) पृ० २०४, ४८, २९२, २९२

५३१ ई०) ईरानपर शासन करता था। हेफ्तालोकी शक्ति दुर्धर्ष थी। यह नही कहा जा सकता, दो शक्तियाँ थी। रोमन सम्राट हेफतालोको प्रेरित करते रहते और हेफताल भी ईरानको लालच भरी दृष्टिसे देखते रहते थे। पीरोजने अखशुनवरके पुत्रपर आक्रमण किया, जो कि शायद वाख्त्रियाका उपराज था। पीरोजको कई बार बुरी तरह हारना पडा और अन्तमे बडी अपमानपूर्ण शर्तों के साथ सधि करनी पडी—अपने पुत्र कवादको हेफताल दरवारमें जामिनके तौरपर रखना और राजाको अपनी कन्या दे, वार्षिक रुपया स्वीकार कर हेफतालोका करद बनना पडा। रुपयोको पीरोज अदा नही कर सका, इसपर हेफतालोने ४८० ई० मे पीरोजपर आक्रमण किया। इसी लडाईमे वह मारा गया। अब सासानी साम्राज्य पूरी तौरसे हेफतालोकी दया पर निर्भर था। राजधानी तस्पोन (मसोपोतामिया) तक को खतरा हो गया।

आमनिया राजनीतिक ही तौरसे नही, बल्कि धार्मिक और सास्कृतिक तौरसे भी ईरानका भाग चला आता था, लेकिन पडोसी रोमन उसे उकसाया करते थे, जिसके कारण ईरानको आर्मेनिया के लिए बरावर सघर्ष करना पडता था। इस राजनीतिक सघर्ष का एक यह भी कारण हुआ, कि आर्मेनियाने जर्थुस्त्री धर्म छोडकर ईसाई धर्म स्वीकार कर रोमके साथ और भी घनिष्ठता स्थापित की। जिस समय पीरोज मारा गया, उस समय ईरानी सेनापति जेरमेहर (सुखरा) आर्मेनियाके ऊपर अभियानके लिये गया हुआ था। हेफ़ताली खतरेको सुनकर वहासे जल्दी जल्दी राजधानीमें लौट उसने पीरोजके भाई बलाश (४८४-४८७ ई०) को गद्दीपर बैठाया। तीन ही सालके शासनके वाद उसे उतारकर पीरोज-पुत्र कवाद (४८७ ई०) गद्दीपर बैठाया गया। कवाद हेफताल राजाका साला और दामाद दोनो ही था। मज्दकके साम्यवादी तथा कुछ-कुछ धर्म-विरोधी विचारोको स्वीकार करनेके लिये पीरोजको गद्दीसे उतार दिया गया (४९८ ई०)। अपने बहनोई के पास जा हेफ्ताल सेनाकी मदद ले वह फिर (५०० ई०) सिंहासनपर बैठा। इससे स्पष्ट है, कि हफ्तालोका ईरान पर भारी प्रभाव था। कवादके उत्तराधिकारी खुसरो अनौशिर्वान (५३१—५७९ई०) को भी हेफ्तालोंसे कम सघर्ष नही करना पडा। लेकिन छठी शताब्दीके मध्यतक पहुँचते-पहुँचते अपने सवासौ वर्षोके राजत्वकालमें हेफ्ताल अधिक सभ्य और नागरिक बन गये, जिसमें भारत और ईरान दोनोंने सहायता की। मध्य-एसियाके सनातन नियमके अनुसार अब उन्हें किसी दूसरे घुमन्तू वशके लिये अपना स्थान खाली करना था। अवारो (ज्वेज्वेन) को हटाकर ५४० के आसपास तुमिन इलीखान (मृत्यु ५५३ ई०) ने अवार साम्राज्यकी जगह तुर्क साम्राज्यकी स्थापना की। उसने पूरबमें चीनके कारण आगे बढनेका स्थान न पा, पश्चिमकी ओर विजय-यात्रा आरभ की। उसका उत्तराधिकारी इस्सिगी थोडे ही समय तक शासन कर सका, फिर इलीखानका भाई मुयूखान गद्दीपर बैठा, जिसने अपने ज्येष्ठ भाई के अपूर्ण कामको पूर्ण करना चाहा। मुयूखानने सिर और सोग्दकी उपत्यकाओंसे हेफ्तालोको खदेडनेके लिये ईरानी शाह अनौशेरवान के साथ सबध स्थापित किया। अनौशेरवान और मुयूखानने मिलकर हेफ्तालोको खतम करनेका निश्चय किया। दोनोंने हेफ्तालोपर आक्रमण कर दिया। इस लडाई का परिणाम था हेफ्तालोंके राज्यकी समाप्ति और ५५७ ई० के आसपास उनके राज्यका तुर्कों और सासानियो द्वारा बाट लिया जाना—बलख (वाख्त्रिया), तुखारिस्तान ईरानियोंके हाथ आये और वक्षुपारका हिस्सा तुर्कोंने ले लिया। अनौशिरवानने मुयूखानकी लडकीसे व्याह किया। रोमन नही

चाहते थे, कि तुर्क और सासानी मिल जायें, इसलिये उन्होंने तुर्क खाकानके पास दूत भेजकर उसे सासानियोंके खिलाफ भड़काना चाहा।
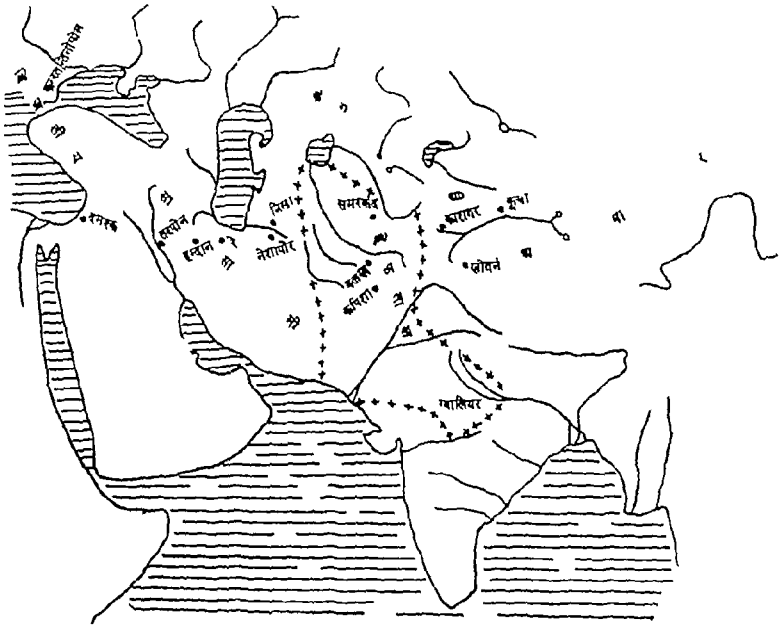
१५ हेफ़ताल (श्वेतहूण) साम्राज्य (५१० ई०)

स्रोतग्रंथ

1 Heart of Asia (E D Ross)

२ सिरिइस्किये इस्तोच्निकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ़ ससर (न० पिगुलेव्स्काया, मास्को १९४१)

3 Memorie Sur l' Asie Centrale (G de Rialle, Paris 1875)

4 Sur les Huns Blanc ou Ephtalites (Vivien de Saint-Martin)

5 Histoire generale des Huns, des Turcs, des Mongols et des autres occidenteux (J Degingnes')

६ क्लि० सोओव्० vII

7 Terracottas From Afrasiab (C Trever, Leningrad 1936)

८ ईरान दर जमान सासानियान (अथर क्रिस्तियान्सन, अनुवादक रशीद यासमी, तेहरान १३१७)

अध्याय ६

तुर्क (५५७-७०४ ई०)

तुर्कोंका तृतीय खान मुयू (मृत्यु ५५३ ई०) जिस समय दक्षिणापथका स्वामी बना, उस समय तुर्क साम्राज्य अभी पूर्व और पश्चिम दो राज्योमें नही विभक्त हुआ था। उसके भाई तथा उत्तराधिकारी तोवाखान (५६९-५८० ई०) के राजगद्दी सभालनेके समय मुयू खानके पुत्र दलोबियानने उत्तराधिकारके लिये झगडा किया, जिसमें उसे सफलता नही हुई। उसने चचाके मरनेके वाद (५८० ई० में) तुर्क-साम्राज्यको दो भागोमे विभक्त कर पश्चिमी तुर्क-साम्राज्यकी नीव डाली, यह हम कह आये है। तोवा कगानके समय तुर्कोपर वौद्ध धर्मकी छाप पडी, जो आगे बढती ही गई। इसके पहलेके हेफतालोपर बौद्ध धर्मका कितना प्रभाव पड़ा, यह नही कहा जा सकता। जहाँ तक तोरमानका सबंध है, ग्वालियरमें सूर्य मदिरके बनवानेसे जान पडता है, वह शकाके पुराने देवता सूर्यका भक्त था। उसके पुत्र मिहिरकुलको बौद्धोका शत्रु बतलाया जाता है। अपने पूर्वगामी कुषाणोकी तरह हेफतालोका बौद्ध धर्मसे विशेष अनुराग नही था, किंतु तुर्कोंके समय फिर बौद्ध धर्मकी प्रतिष्ठा बढी।

(१) दालोबियान (५८०-   )

तोवाके समय तक अविभाजित तुर्क साम्राज्यका ही अंग दक्षिणापथ भी था, किंतु उसके भतीजे दालोबियानने पश्चिमी तुर्क साम्राज्यकी नीव डाली। इसीके राज्यमें पश्चिमी मध्य-एसिया था, किंतु इसके समयमें साम्राज्यकी सीमा और आगे नही बढ़ी। उसके उत्तराधिकारी नीलीने थोडे ही समय तक शासन किया।

(३) चुलोकगान (६०५ ई०)

नीलीके पुत्र दामो (धर्म) का नाम ही बतलाता है, कि उसका वश बौद्ध धर्मसे कितना प्रभावित था। वह अधिकतर कुल्जा (इली-उपत्यका)में रहा करता था। प्रदेशोका शासन यवगू (उपकगान) करते थे। कुषाणोके सिक्कोपर भी इस उपाधिको हम देख चुके है। चुलो कगानका एक यवगू शाश (ताशकद) के पास रहता था, जो दक्षिणमें वक्षु तट (सासानी सीमात) तकका शासक था। नौशेरवानका पुत्र और उत्तराधिकारी होर्मुज्द (४) (५७९-९० ई०) मुयू खानका नाती था। लेकिन इससे क्या सघर्ष मिट सकता था? कभी उसे रोमसे लोहा लेना पडता था और कभी तुर्कोंके दबावसे छुटकारा पानेके लिये उनसे भिडना पडता था। चुलो कगानका यवगू शाव (शवोलियो) तीन लाख सेना लेकर सासानी साम्राज्यके भीतर घुसकर हिरात तक पहुच गया। उधर रोमन सम्राट्ने ८० हजार सेनाके साथ सिरियापर चढाई कर दी। कास्पियनके पश्चिम ईरानी साम्राज्यकी सीमा पर हूणोके वशज खजार उत्तरसे प्रहार कर रहे थे, जिसके

१ तुलनात्मक तुर्क वश

ई०	भारत (कन्नाज)	चीन (लियाङ्)	पू० तुक	प० तुक	ईरान (सासानी)
			तूमिन-५५३	तूमिन-५५३	
५४०	यशावर्मा-५३२-				खुस्रो नौशेरवां ५३१-७८
		वू-ती ५०३-४९			
		च्यान्वेन्५४९-५५१	इसिगी ५५३	इसिगी ५५३	
५६	हरिवर्मा	वेङ् ती ५६०-६७	मुयू-५५३-६९	मुयू	
		स्वेन् ती ५६९-८३	तोवा ५६९-८०	तोवा	होर्मुज्द ५७८-५९०
		(मुइ)	शेतू ५८२-८७	दालोव्यान ६८०-	खुस्रो पर्वेज ५९०-६२८
५८०		वेङ्ग ती ५८१-६०५	दूलन ५८७-६००		
६००	हप ६०६-६४८	याङ् ती ६०५-१७	दालू वुगा ६००-६०५	चूलो-६०५	
		कुङ्ग ती ६१७-१८	खेली-६२८	शेङगुइ६१८-६१९	
६२०		(थाङ्ग)		तुनशेखू ६१९-	कवाद II ६२८-६९२
		काउचु ६१८-२७	तुली ६२८-६३१		यज्दगर्द III ६३४-४
		ताइचुङ्ग ६२७-५०	सिविली ६३१-६४७	निशिदुलू-६५१	(अरब)
६४०					उमर ६४२-४४
	अर्जुन ६४९	काउचुङ ६५०-८४	चेवी ६४७-८२	इवीशवोलो ६५१	उस्मान ६४४-५६
					अली ६५६-६१
					म्वाविया ६६१-८०
६६०					यजीद I ६८०-७१७
६८०		वूहू (रानी) ६८४-७०५	गुदलू ६८२-६९३		
			मोचो ६९३-७१३	अशिनाशिन-७०८	
७००		चुङ् चुङ् ७०५-१०		सोगे ७०८-७०९	
		स्वेन् चुङ् ७१३-५६	मोगिल्यान ७१६-७३३	मुलू ७०९-७३८	उमर II७१७-२०
७२०	यशोवर्मा ७२५-५२				

२८

होने से बचाया नही जा सका। इसका एक सबूत यही है, कि इसीके शासनकाल (७०४ ई०) में सिर, जरफशा और आमूदरिया की उपत्यकाये तुर्कों के हाथ से निकलने लगी।

तुर्कों में हूणो, अवारो, कुषाणो, हेफ्तालो की तरह ही घुमन्तू कबीलाशाही शासन-प्रथा चली आती थी, जिसके कारण कगान के भाई-भतीजे यवगू होकर अपने प्रदेश में बहुत कुछ स्वतन्त्रता-पूर्वक शासन करते थे। जिस वक्त कगान कमजोर होता, उस वक्त प्रदेशो में यवगुओ और तेगिनो (राजकुमारो) का शासन इतना स्वच्छन्द होता, कि वहा की साधारण जनता उनके सिवा कगान को जानती ही नही थी। शवोलो शेखू और असिनासिनकी कगानता ऐसी ही थी। अरवो से इनके यवगुओ का सघर्ष था, इसीलिये अरब लेखक कगानको नही, बल्कि उसके प्रादेशिक शासक (तेगिन) को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझते थे।

(स्वेन्-चाङ का देश-वर्णन[1])

स्वेन्-चाङ ६३१-६३२ ई० में तुर्कों द्वारा शासित दक्षिणापथ से गुजरा था। इस भूमि में प्रविष्ट होने से पहले ही वह तुर्क कगान तुन्-शे-खूसे मिल चुका था। तुर्क कगान ने उसकी बडी आवभगत की थी। मिलन-स्थान से आगे (तरस से वामियान तक) का उसका वर्णन तत्का-लीन दक्षिणापथ के परिचय के लिये विशेप महत्त्व रखता है, इसलिये हम यहाँ उसके वर्णन का सक्षेप देते हैं।

तरस्—यह बिङ-गुल (सहस्रधारा) से पश्चिम १४० या १५० ली (आजकल औलिआता से दक्षिण-पश्चिम में कुछ दूर) पर है। तरस से १० ली दक्षिण चीनी वदियो का एक गाँव था। इनका वेप तुर्कों जैसा था, किंतु भाषा अब भी वह चीनी वोलते थे।

मनकन्द——आधुनिक चिमकेंत से १५ मील उत्तर-पूरब, जिसे स्वेन् चाङ ने पाङ्-शुङ्-शेङ (फारसी इस्फिद-याव = श्वेत जल) है। यह चीनी बदियों के नगर से २०० ली दक्षिण-पश्चिम था। स्वेन्-चाङ ने इसकी भूमि को तरस से अधिक उर्वर बतलाया है।

नूजकद—मनकद से ४० या ५० ली दक्षिण नू-ची-कान की अत्यन्त उर्वर भूमि थी। यहाँ वहुत प्रकार के फल फूल होते थे। अगूर बहुत ही अधिक थे। यहाँ का एक अलग शासक था, जिसके अधीन सौ से ऊपर ग्राम-नगर थे।

ताशकद—नूजकद से २०० ली पश्चिम चेसी (ताशकद) का इलाका पडा। (तुर्की भाषा में ताश पत्थर को कहते है।) यहाँ भी एक अलग तुर्क शासक था।

फर्गाना—ताशकद से हजार ली दक्षिण-पूरब फइ-हान का प्रदेश था, जहाँ स्वेन्-चाङ स्वय नही गया। लोगो से पूछने पर उसे मालूम हुआ "वह चारों ओर पहाडो से घिरा है। भूमि बडी ही उपजाऊ है। वहा बहुत तरह के फल-फूल पैदा होते है। लोग भेडें और घोडे पालते है। सर्दी और हवा का बहुत जोर है। लोग दिल के मजबूत होते हैं। इन की भाषा दूसरे देशो से भिन्न है। दस साल से इसका कोई राजा नही है। स्थानीय सरदार प्रधान बनने के लिये आपस में लड रहे है। इस जिले और नगरो की प्रतिरक्षा और सीमा नदिया तथा प्राकृतिक वस्तुये हैं।"

---

[1] On Yuan chwang's Travel (Thomas Watters,) vol I p p 71-122)

कारण वहाके दरवन्दपर खतरा हो गया था। खुद राजधानीके पास दक्षिणकी ओर से अरब सरदारोने फुरात-उपत्यका (इराक) पर चढाई कर दी थी। तुर्क सेनापति शावने होरमुज्दके पास धृष्टतापूर्ण सदेश भेजा "देखना पुल और सडकें ठीक-ठाक रहे। मै रोमनोमें मिलनेके लिये ईरानको पार करना चाहता हू"। होरमुज्दने अपने प्रसिद्ध सेनापति (तेहरान के) सामन्त वहराम चोवी को १२००० चुने हुए योद्धाओके साथ तुर्कोंका मुकाबिला करनेके लिये भेजा। वहरामने तुर्कोंको बुरी तरह हराया और उसीके वाणसे शाव मारा गया। शावका पुत्र वदी हुआ। वहरामको तुर्क-ओर्दूसे अपार सपत्ति मिली, जिसे ढाई लाख ऊटोके साथ उसने शाहके पास भेज दिया। वहासे वहराम रोमनोके विरुद्ध भेजा गया, लेकिन वहा उसकी पूर्ण पराजय हुई। होर्मुज्दने गुस्सेमें आकर बहरामको पदच्युत कर दिया, जिसके कारण उसे विद्रोही बनना और होरमुज्द को तख्तसे हाथ धोना पडा। उसके उत्तराधिकारी खुसरो II परवेज (५९०-६२८ ई०) के समय भी तुर्कोंसे सघर्ष चलता ही रहा, जिसमे उसका विद्रोही चचा छ साल तक तुर्कों (चुलो कगान) की मददसे लडता रहा। लेकिन खुसरोको रोमके विरुद्ध कुछ सफलतायें प्राप्त हुई। ६१३ ई० में उसने दमश्क ले लिया। ६१४ ई० में येरुशिलम उसके हाथमें था, जिसे १६ वर्ष वाद ६२९ ई० मे ही हिराक्लियस लौटा पाया।

४ शे-गुइ (६१८-६१९ ई०) और ५ तुन-शे-खू (६१९ ई०)[1]

इन दोनो भाइयोके कगान होनेके समय तुर्क साम्राज्यका विस्तार अधिक हुआ, यद्यपि उनका समकालीन खुस्रो परवेज (५९०-६२८ ई०) भी निर्वल शासक नही था। शे-गुइने अपनी पश्चिमी सीमाको कास्पियन समुद्रतक पहुँचा दिया, पूरवमें वह चीनकी महादीवारके पश्चिमी छोरपर अवस्थित प्रसिद्ध सीहै घाटा तक थी। उसके छोटे भाई तुन-शे-खूने भी अपने सैनिक कौशलका परिचय देते सासानियोको मार भगा तथा अफगानिस्तान तक अपनी सीमा पहुँचा दी। इस समय ईरानके तीन शक्तिशाली प्रतिद्वन्द्वी थे पूरवमें तुन-शे-खू कगान, काकेशसके उत्तरमे खजार कगान और पश्चिममें विजन्तीय सम्राट् हिराक्लियस्। ये चारो शक्तियाँ जिस वक्त आपसमे गुत्थम-गुत्था कर रही थी, इसी समय अरवके रेगिस्तानमे एक नई शक्ति पैदा हो रही थी। जिस समय (६२९-६४५ ई०) स्वेन्-चाङ भारत यात्रा करते तुन्-शे-खूसे ६३१-६३२ ई० में मिलकर नालदा निवास और सम्राट् हर्षवर्धनका स्वागत प्राप्त कर रहा था, उसी समय खुस्रोके तृतीय उत्तराधिकारी यज्दगद III (६३४-६४२ ई०) को खतम कर अरवोने विशाल सासानी साम्राज्यको अपने हाथमें कर लिया, और तुन्-शे-खू के शासनकालम ही अरब उसके पडोसी हो गये।

तुन्-शे-खूके उत्तराधिकारियो में उसका पुत्र तुन-वो-शे (६३४-६३८ ई०) शवोलो खिलिश खान के नाम से गद्दी पर वैठा। इसके नाममें खिलिश शब्द वही है, जो कि भारत के खिलजी सुलतानो के वश के साथ सवद्ध है। अभी तुर्को की शक्ति उतनी क्षीण नही हुई थी, और न अरव अपने को उतना मजवत देखते थे, कि वह तुर्कों से छेड-छाड करते। ११वे पश्चिमी तुर्क कगान इवी शवालो शेखू (६५१-) या असिना खेलू चीन के सामने वरावर दवनेवाला कगान था। उसके उत्तराधिकारी असिनासिन (मृत्यु ७०८ ई०) के समय भी तुर्क साम्राज्य पतनोन्मुख

होने से बचाया नही जा सका। इसका एक सबूत यही है, कि इसीके शासनकाल (७०४ ई०) में सिर, जरफशा और आमूदरिया की उपत्यकाये तुर्कों के हाथ से निकलने लगी।

तुर्कों में हूणो, अवारो, कुषाणो, हेफ्तालो की तरह ही घुमन्तू कबीलाशाही शासन-प्रथा चली आती थी, जिसके कारण कगान के भाई-भतीजे यवगू होकर अपने प्रदेश में बहुत कुछ स्वतत्रता-पूर्वक शासन करते थे। जिस वक्त कगान कमजोर होता, उस वक्त प्रदेशो मे यवगुओ और तेगिनो (राजकुमारो) का शासन इतना स्वच्छन्द होता, कि वहा की साधारण जनता उनके सिवा कगान को जानती ही नही थी। शवोलो शेखू और असिनासिनकी कगानता ऐसी ही थी। अरबो से इनके यवगुओ का सघर्ष था, इसीलिये अरब लेखक कगानको नही, बल्कि उसके प्रादेशिक शासक (तेगिन) को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझते थे।

(स्वेन्-चाङ का देश-वर्णन[1])

स्वेन्-चाङ ६३१-६३२ ई० में तुर्कों द्वारा शासित दक्षिणापथ से गुजरा था। इस भूमि में प्रविष्ट होने से पहले ही वह तुर्क कगान तुन्-शे-खुसे मिल चुका था। तुर्क कगान ने उसकी बडी आवभगत की थी। मिलन-स्थान से आगे (तरस से वामियान तक) का उसका वर्णन तत्का-लीन दक्षिणापथ के परिचय के लिये विशेष महत्त्व रखता है, इसलिये हम यहाँ उसके वर्णन का सक्षेप देते हैं।

तरस्—यह बिङ-गुल (सहस्रधारा) से पश्चिम १४० या १५० ली (आजकल औलिआता से दक्षिण-पश्चिम में कुछ दूर) पर है। तरस से १० ली दक्षिण चीनी बदियो का एक गाँव था। इनका वेष तुर्कों जैसा था, किंतु भाषा अब भी वह चीनी बोलते थे।

मनकन्द——आधुनिक चिमर्केत से १५ मील उत्तर-पूरब, जिसे स्वेन् चाङ ने पाइ-शुङ्-शेङ (फारसी इस्फिद-याब = श्वेत जल) है। यह चीनी बदियो के नगर से २०० ली दक्षिण-पश्चिम था। स्वेन्-चाङ ने इसकी भूमि को तरस से अधिक उर्वर बतलाया है।

नूजकद—मनकद से ४० या ५० ली दक्षिण नू-ची-कान की अत्यन्त उर्वर भूमि थी। यहाँ बहुत प्रकार के फल फूल होते थे। अगूर बहुत ही अधिक थे। यहाँ का एक अलग शासक था, जिसके अधीन सौ से ऊपर ग्राम-नगर थे।

ताशकद—नूजकद से २०० ली पश्चिम चेसी (ताशकद) का इलाका पडा। (तुर्की भाषा में ताश पत्थर को कहते है।) यहाँ भी एक अलग तुर्क शासक था।

फर्गाना—ताशकद से हजार ली दक्षिण-पूरब फङ-हान का प्रदेश था, जहाँ स्वेन्-चाङ स्वय नही गया। लोगो से पूछने पर उसे मालूम हुआ "वह चारो ओर पहाडो से घिरा है। भूमि बडी ही उपजाऊ है। वहा बहुत तरह के फल-फूल पैदा होते है। लोग भेंडें और घोडे पालते है। सर्दी और हवा का बहुत जोर है। लोग दिल के मजबूत होते हैं। इन की भाषा दूसरे देशो से भिन्न है। दस साल से इसका कोई राजा नही है। स्थानीय सरदार प्रधान बनने के लिये आपस में लड रहे हैं। इस जिले और नगरो की प्रतिरक्षा और सीमा नदिया तथा प्राकृतिक वस्तुयें हैं।"

---

[1] On Yuan chwang's Travel (Thomas Watters,) vol I p p 71-122)

चीनियो ने चाङ क्यान् के समय (ई० पू० १३६–१२४) में ही फर्गाना के बारे में परिचय प्राप्त कर लिया था, लेकिन उस समय चीनी भाषा मे इसका नाम शा-वाङ और राजधानी उइ-शान् (कुषाण) थी। ७७४ ई० में चीनी इसे निङ्य्वान कहते थे, और आजकल हुवो-हान् (फोक्-हान)

सुलुलिसे—ओश्रूशनाका यह चीनी नामातर है। आजकल इसे उरात्यूवे कहते हैं। फर्गाना से एक हजार ली पूरव शे (सिर) नदी के पूव में यह स्थान अवस्थित है। शे नदी को स्वन्-चाङ सुङ-लिङ (पामीर) से निक्ली वतलाता है। उस समय इसकी धारा मटमैली थी। इसीलिये स्वेन् चङाने इसे मटमैली द्रुतगामी महान् धारा लिखा है। यहाँ का राजा भी तुर्क कगान के अधीन था।

समरकद—सम-जी-कान के उत्तर-पश्चिम मे जल-वनस्पतिहीन एक रेगिस्तान (किज़िल-कुम) का होना स्वेन्-चाङ ने वतलाया है। वह लिखता है "यह विल्कुल निर्जन भूमि है, जहा केवल पहाडो का अनुगमन करते तथा ककालो को देखते चला जा सकता है।" इस प्रदेश का पुराना नाम सू-ही (सोग्द) था। स्वेन्-चाङ के समय भी यह प्रदेश वडा उवर था। वृक्ष और फूल वहुतायत से होते थे। यहा वडे सुन्दर घोडे पाये जाते थे। यह वहुत वडा व्यापारिक नगर था। लोग शिल्प-चतुर, उद्योगपरायण और चुस्त थे। सारा तुर्क-राज्य इसे अपने देश का केन्द्र मानता था और सभी लोग यहा के सामाजिक रीति-रवाजो को आदर्श मानते थे। यहा का राजा वडा हिम्मती और उदार था। पडोसी राजा इसके आज्ञाकारी थे। इसके पास वडी अच्छी सेना थी। यहाँ के योद्धा इतने वहादुर थे, कि मृत्यु को वधुओ के पास जाने से वढ़कर नही समझते थे। युद्ध में शत्रु इनके सामने खडा नही हो सकते। यह अवस्था दक्षिणापथ की उस समय थी, जव कि अरव ईरान की ओर वढने की तैयारी कर रहे थे। धर्म के वारे में स्वेन्-चाङ ने लिखा है, कि समरकद के लोग अग्निपूजक हैं। ६वी ७वी सदी में हमें मालूम है, कि वौद्ध दूसरे स्थानीय देवताओ को भी पूजते थे। स्वेन्-चाङ के समय समरकद में वौद्धो के साथ विद्वेष और अत्याचार भी होता था। स्वेन्-चाङ के समय दो विहार थे। स्वेन्-चाङ के साथी तरुण भिक्षु पूजा करने के लिये गये, तो लोगो ने उन्हें मार भगाया और विहार मे आग लगा दी। समरकद के राजा ने उन्हे दड दिया और स्वेन्-चाङ को वुलाकर धर्मोपदेश सुना। स्वेन्-चाङ लिखता है, कि यहा का राजा शौ-वू खानदान की वेन् शाखा का है। रानी एक तुर्क राजकुमारी है। ६३१ ई० में यहा के राजा ने चीन सम्राट् ताइ-सुङ (६२७-६५० ई०) के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये अपना दूत भेजा था, लेकिन जान पडता है, वैमनस्य मोल न लेने के ख्याल से उसने स्वीकार नही किया।

मेमेग्—समरकद से दक्षिण-पूव यह इलाका था, जिसे स्वेन-चाङ ने मि मो-हा लिखा है। यहा के लोग समरकद जैसे ही थे।

मी-तान् (कि-पू-ता-ना)—मी-मो-हा मे उत्तर यह स्थान मिला। रमीतान् वस्तुत समरकद से ३० मील उत्तर-पश्चिम है।

कुशानिया (कुशोडहिका)—कुपाण शासको का यह चिह्न आज भी मौजूद है। इसे स्वेन्-चाङ ने मितान् से ३०० ली (६० मील) पर वतलाया है।

हो-हान् (कर्मीना)—कुशानिया से २०० ली (४० मील) है।

पू-हो (वुखारा)—४०० ली (८० मील) पश्चिम।

फा-ती (पैकद ?)—वुखारा से ४०० ली (८० मील) पश्चिम।

ह्वो-ली-सी-मी-का (ख्वारेजमिया)—फा-ती से ५०० ली (१००मील) दक्षिण-(? उत्तर) पश्चिम, वक्षु नदी के दोनो किनारो पर यह प्रदेश २० या ३० ली(४ या ६ मील) चौडा तथा उत्तर मे दक्षिण ५०० ली (१०० मील) लम्बा है।

समरकद से ख्वारेज़म तक की बातें स्वेन्-चाङ ने सुनकर लिखी हैं। वह सीधा समरकद से केश (शहरशब्ज) गया था।

का-श्वाङ्-ना (केश)—समरकद से ३०० ली (६० मील) दक्षिण-पश्चिम यह प्रदेश है। यहाँ की भूमि बडी उपजाऊ और निवासी समरकद जैसे (सोग्दी) हैं। (शहरशब्ज जिस नदी के किनारे है, उसका नाम आज भी कश्क-दरिया है।

दरबन्द (लौहद्वार)—केश से २००ली (४० मील) दक्षिण-पश्चिम जाने पर स्वेन्-चाङ पहाडियो में घुसा। "पगडडी बहुत सकरी तथा खतरनाक है। बस्ती नही है। घास पानी भी बहुत कम है। पहाडों के भीतर दक्षिण-पश्चिम की ओर ३०० ली (६० मील) से अधिक जाकर आदमी लोहघाटे में प्रविष्ट होता है। लोहघाटे की दोनो तरफ बिल्कुल सीधे खडे ऊँचे पर्वत है। चट्टानें लोहे के रग की हैं। यहाँ फाटक लगाये गये हैं, जो लोहे से मजबूत किये गये और उनके ऊपर बहुत सी छोटी छोटी लोहे की घटियाँ लटकाई गई हैं। अपनी दुर्धर्षता के कारण ही इस घाटे का यह नाम (लौहद्वार) पडा।" यह आजकल का बुज़गल्ला (अजगृह) है जिसकी चौडाई प्राय दो मील तक ४० से ६० फुट तक है। इसके बीच मे एक नदी (सुलाख) बहती है। इसमें एक गाँव है।

तारीख रशीदी में लिखा है "प्रसिद्ध लौहद्वार की नदी ऊचे पहाडो के बीच से टेढी-मेढी होकर दर्बन्द से पश्चिम प्राय १२ फसख जाती है। यह सकरा मार्ग ५ मे ३६ कदम तक चौडा और दो फर्सख लबा है।" बुज़गला खाना के इस दर्रे का पूर्वी छोर समुद्र तल से ३५४० फुट और पश्चिमी छोर ३७४० फुट ऊचा है।

तुखार (तु हु ओ-लो)-लोहद्वार के बाहर आते ही तुखार देश आ जाता है। इसकी सीमा पूर्व में चुङ्-लिङ (पामीर) पर्वत, पश्चिम में ईरान, दक्षिण में महाहिमवत (हिंदूकुश) पर्वत और उत्तर मे लोहद्वार है। तुखार देश के बीच में पूरब से पश्चिम की ओर वक्षु नदी बहती है। यह देश २७ सामतो में बँटा है, जो सभी तुर्कों के अधीन ह। गर्मियो में यहाँ बहुत बीमारी (मलेरिया) होती है। जाडे के अन्त और बसत के आरभ में लगातार वर्षा होती रहती है। यहाँ के भिक्षु लोग बारहवें मास की सोलहवी तिथि से तीसरे मास की पन्द्रवी तिथि तक वर्षावास मनाते हैं। इस प्रकार वह अपने धार्मिक नियमो को ऋतु के अनुकूल मानते हैं। यहाँ के लोग विश्वास-पात्र होते ह, धोखेबाज नही। यहाँ की एक विशेष भाषा और २५ अक्षरो की वर्णमाला है, जो कि ऊपर से नीचे तथा बायें से दाहिने लिखी जाती है। ऊनी कपडो की अपेक्षा यहाँ सूती अधिक पहने जाते ह। यहा के सोने चादी और दूसरी धातु के सिक्के दूसरे देश से भेद रखते है। यह देश गर्मी में गरम होता है, लेकिन गर्मियो के इस्तेमाल के लिये जाडो में बर्फ को जमा कर लेते हैं।

तेर्मिज (ता-मी)—"तुखार देश की यह राजधानी चौडी की अपेक्षा अधिक लबी, २० ली (८ मील) के घेरे में बसी है। यहाँ दो विहार है, जिनमें हजार से अधिक भिक्षु रहते ह। यहाँ के स्तूप और मूर्त्तियाँ बहुत सुन्दर हैं।

शुग्नान (शी-गा-येन्-ना)—यह तेर्मिज से पूरब है, जहा पाच विहार ह, किंतु भिक्षु बहुत कम हैं।

हू-लू-मो (ख्वुल्म ?)—यह प्रदेश शुग्नान से पूरव मे है। यहा का राजा एक हि-सू तुर्क है। यहा दो विहार और सौ से ऊपर भिक्षु रहते है।

सू-मान (   )—हु-लू-मोमे पुरव में है, जहा दो विहार और थोडे से भिक्षु रहते है।

कू-येन्-ना (   )—यह प्रदेश वक्षु से दक्षिण-पश्चिम अवस्थित है, जहा तीन विहार और सौ से अधिक भिक्षु रहते ह।

हू-शा (   )—पूर्वोक्त से पूव में अवस्थित है।

को-तू-लो (खुत्तल)—पूर्वोक्त से पूरव मे है, जो पूरव में चुङ-लिङ (पामीर) के भीतर कु-मि-तो प्रदेश तक पहुचता है।

कु-मि-तो (   )—यह चुङ-लिङ (पामीर) पवत-माला में उसके दक्षिण पूव में वक्षु के पास अवस्थित है। इसका दक्षिणी पडोसी देश शि-कि-नी है।

वक्षु के दक्षिण में निम्न प्रदेश ह —त-मो-सि-तिये-ति, पो-तो-च्वाङ-ना, यिन्-पो-कान्, कु-लङ-ना, हि-मो-त-ला, पो-लि-हो, कि-लि-सो-मो, को-लो-हू, अलि-नि, मेङ-कान्।

हु-ओ (कुदुज) से दक्षिण-पूव मे कु-ओ-सि-तो, और अन्त-ल-फा (अदराव) है। हु-ओ से दक्षिण-पश्चिम फो-क-रङ देश है। इससे दक्षिण कि-लु-सि-मिन्-किन् है, जिसके उत्तर-पश्चिम हू-लिन् देश है, जहा दस विहार और ५०० भिक्षु रहते हैं।

हु-ओ (कुदुज)—यहा शे-हू खान का ज्येष्ठ पुत्र तथा सेनापति (क्षत्रप) तादू (तर्दुश, तर्दू) रहता है, जो कि काउ-शाङ्ग (कुपाण) राजा का साला भी है। सेनापति को उसकी स्त्री ने जहर दे दिया। उसका पुत्र ते-मिन् (ते-किन्) और सौतेली मा राज्य के मालिक हैं।

फो-हो (बलख)—हु-लिन् से पश्चिम "लघु राजगृह" नामक प्रसिद्ध राजधानी प्राय २० ली (५ मील) के घेरे में बिखरी हुई बस्तियो का नगर है। यहा १०० विहार तथा ३००० हीनयानी भिक्षु रहते हैं। "राजधानी के बाहर दक्षिण-पश्चिम में नव (नफो) विहार है, जिसे इस देश के एक पुराने राजा ने बनवाया था। महाहिम (हिंदूकुश)-पवत के उत्तर यही एक बौद्ध विहार है, जहा लगातार अविच्छिन्न परपरा से ऐसे आचाय चले आते ह, जो कि त्रिपिटक के व्याख्याकार होते हैं। विहार के सघाराम मे एक बडी कलापूण रत्नजटित बुद्ध-मूर्ति है। इसकी शालायें बडी मूल्यवान् वस्तुओ से सजाई हुई हैं, इसलिये भिन्न-भिन्न राजाओ ने बार-बार इसे लूटा। तुर्क शे-हू (शे-खू) या एक राज्यपालके पुत्र स्वय राज्यपाल स्सू-जा ने सघारामको लूटनेकी कोशिश की। विहारकी बुद्धशालाके दक्षिणमें बुद्धका प्रक्षालनपात्र है, जिसमें प्राय २८ मन (एक टन) की जगह है। यह बडा ही चमकीली ह। नहीं कहा जा सकता, कि वह धातुका है या पत्थरका। ८/१० इच लबी सवा अगुल चौडी बुद्धकी दाढ़ (दात) और दो फुट लबा तथा ७ इच मोटा भूरे रगका काशा (दड) भी यहा है, जिसकी मूठ मुक्ता-जटित है। इन वस्तुओकी दर्शन-पूजा उत्सवके दिनामें होती हैं।

नवविहारके उत्तर २०० फुट ऊचा एक स्तूप है, जो वज्रलेपमे गच किया तथा बहुमूल्य वस्तुओसे सजाया है। नवविहारसे दक्षिणमें एक सघाराम है, जिसे बहुत पुराने समयमें

अर्हत् और आर्य भिक्षुओके लिये बनाया गया था। यहा रहते हुए जितने भिक्षु अर्हत् पदको प्राप्त हुए, उनकी सख्या (गिनी) नही जा सकती। सौसे ऊपर अर्हतोके यहा स्तूप बने हुए है। इस स्थानमे जो भिक्षु रहते है, कहा नही जा सकता, इनमे कौन अर्हत् है कौन नही।

यु-मेइते (युमेद)—बलखसे दक्षिण-पश्चिम हिमपर्वतके एक कोनेमें यह प्रदेश है।

हु-शि-कान (अशगान्)—यूमेघइसे दक्षिण-पश्चिम यह पर्वतीय प्रदेश है, जहा बहुत-सी उपत्यकायें है। यहाके घोडे अच्छे होते है।

तलकान (त-ल-कान्)—अशगानसे उत्तर-पश्चिममे तलकान है, जिसके पश्चिममे पो-ल-सू (पर्शु, ईरान) है।

का-शी (गज)—बलखसे सौ ली (२० मील) दक्षिण यह देश है। यह बहुत पहाडी इलाका है। फल-फूल कम होता है, लेकिन गेहू और मटर बहुत होती है। बहुत गर्म जगह है। लोग कठोर और रूखे है। यहाके दस विहारोमें ३०० सर्वास्तिवादी भिक्षु रहते हैं।

बामियान (फान्-सेन्-ना)—महाहिमगिरि (हिंदूकुश) में गजसे दक्षिण-पश्चिम यह ऊचे तथा गहरे खड्डोका प्रदेश है। यहा आधी और बरफ एकके बाद एक आती रहती है। गर्मीके मध्यमें भी सर्दी रहती है। लुटेरोके दल यहा बने रहते है, जिनका पेशा है नर-हत्या। (गजसे) ६०० ली (१२० मील) चलनेपर तुखार देश पार हो बामियान देशमें पहुचा जाता है। यह महाहिमगिरिके भीतर है। राजधानी एक खड्डके पार सीधे खडे पहाडोके घेरेमें है, जिसके उत्तर ओर एक ऊची चट्टान है। देश बहुत सद है। यहाकी उपज गेहू और थोडा सा फल-फूल है। यहा भेडो और घोडोके लिये अच्छी चरागाहें हैं। लोग कठोर और रूखे होते हैं। वह घरके बने ऊनी पट्टू और पोस्तीन पहनते है। यहाके रीति-रवाज और सिक्के तुखार जैसे है। लोगो की आकृति भी वैसी ही है, किंतु भाषामें कुछ अन्तर है। अपने पडोसियोसे ये कही अधिक ईमानदार है। इनमे त्रिरत्नके उपासक (बौद्ध) और देवताओके पूजक (हिंदू) भी है। यहाका राजा शक वशी है। यहाके दस विहारोमें हजारो लोकोत्तरवादी भिक्षु रहते हैं।

अरब भूगोलवेत्ता इब्नहौकल (दसवी सदी) ने लिखा है "बामियान शहर बलखसे आधा एक पहाडपर अवस्थित है। इसके पहले एक नदी मिलती है, जो बहकर गुर्जिस्तान प्रदेश में जाती है। यहा कोई बाग-बगीचा नही है।"

राजधानीके उत्तर-पूर्वमें सुनहले रगकी खडी बुद्धमूर्ति (सुखबुत) है, जो १७३ फुट ऊची है, जिसके पूरबमें एक बौद्ध विहार है। इसके पूरबमें शाक्यमुनि बुद्धकी १२० फुट ऊची खडी मूर्ति (सफेद बुत) है। यह मूर्ति पहलीसे सवा मील दूर है। इससे १२ या १३ ली (दो ढाई मील) पूरब एक हजार फुट लबी निर्वाण बुद्धमूर्ति (अज्दहा) है, जो कि एक अकेली सी शिलाके चौरस तलपर बनी है। इसी विहारमें बुद्ध-शिष्य आनदके प्रशिष्य शाणवासकी सघाटी रखी है।

स्वेन्-चाङ बामियानसे अन्-त-लो-फो (अदराब) होते अफगानिस्तान और भारतकी ओर आया। हिंदूकुशके उत्तरके कुछ और स्थानोके बारेमें उसने लिखा है—

कुओ-सि-तो (खोस्त)—अदराबसे ३०० ली (६० मील) उत्तर-पश्चिम यह स्थान है, जो पहले तुखारदेशमे था, किंतु अब तुर्कोंके हाथमें है। यहा की भूमि समतल है, जहाँ खेती बाकायदा होती है। फल-फूल बहुत होते है। जलवायु नरम है। यहा के लोग ईमानदार हैं, लेकिन

जल्दी उत्तेजित हो जाते ह । इनकी पोशाक ऊनी कपडोकी होती है। अधिकाश निवासी बौद्ध ह। यहा दस विहार है, जिनमे महायान और हीनयान दोनो यानो के भिक्षु रहते ह । राजा तुर्क है, जोकि लोहद्वारके दक्षिणके छोटे-छोटे राज्योपर शासन करता है। उसके स्थायी निवासका कोई नगर नही हैं। वह एक जगहसे दूसरी जगह घूमता रहता (घुमन्तू) है। इससे पूवमे चुङ-लिङ (पामीर) है, जो कि जबूद्वीपके केन्द्रमे ह। दक्षिणकी ओर इसकी पवतश्रेणी महाहिमगिरि (हिंदुकुश) से मिली हुई है। उत्तर मे यह तप्तमागर (इस्सिकुल)और सहस्रधारा (बिङ-गुल) तक पहुचती है। पश्चिममे यह हु-ओ (कुदूज) देश तक तथा पूरबमे वू-शा (वोलारताग) तक फैली है। यहाकी भूमिमें प्याज बहुत पैदा होती है, इसीलिये चुङ लिङ (प्याजका पहाड) नाम पडा, अथवा इसकी चट्टानोंके प्याजी रग होने के कारण यह नाम दिया गया।

मेन-कान् (मेङ-कान्, मुन्-जान्)—वोश्तमे १००ली (२० मील) पूरब ह। यहाके लोग हू-ओ (कुदुज) जैसे हैं ।

अ-लि-नी ( )मेङ-कान् से उत्तरमे यह प्रदेश वक्षु नदीके दोनो तरफ अवस्थित है, लोग कुदुज जैसे ह ।

हो-लि-हू ( )वक्षुके उत्तर तरफ अलि-नि से पूरबम यह प्रदेश ह, जहाके लाग कुदुज जैसे है ।

कि-लो-शे-मे- (कृष्णनिम्न, वखान)—मेन्-कानसे ३०० ली (६०मील) पूरबमे यह प्रदेश है, जो पहिले तुखार देश मे था। लोग मेन्-कान जैसे ह ।

पो-लि-हो—उपरोक्तमे उत्तर-पुरब है, जहा के लोग भी पहले ही देश जैसे ह ।

हि-मो-तोलो (तुखार)—कि-ली-शे-मोसे ३०० ली (६०मील)पूरबमे यह प्रदेश है, जहा लगातार पहाड और उपत्यकाए चली गई है। भूमि उपजाऊ है। गेहू पैदा होता है, वनस्पति बहुत देखी जाती है, फल प्रचुर परिमाणमें पैदा होते है, जलवायु बहुत ठडा है। लोग बडे क्रोधी तथा चचल होते हैं, आचार-विचारका ख्याल नही रखते। वह कदमें छोटे तथा कुरूप होते ह। इनका परिधान तुर्कोकी तरह मोटाझोटा ऊनी कपडा, नम्दा, पास्तीन और पट्टू का होता है। इनमें विवाहिता स्त्रिया शिरपर तीन फुटमे अधिक ऊची लकडी की सींग टोपीके तौरपर पहनती है, जिसकी दो शाखाय एकके ऊपर एक सामनेकी ओर होती है। ऊपरी की ओर निकली शाखा सासकी मानी जाती है। उसके मर जानेपर शाखा हटा दी जाती ह। सास ससुर दोनो के मर जानेपर सीगकी टोपी नही पहिनी जाती। पहले यहा शक-वशी राजा थे, जिनके हाथम चुङ-लिङ (पामीर) के पश्चिमके अधिकाश भाग थे। पीछे यह तुर्कोंके हाथम चले गए। लोगो पर तुर्कोंके रीति-रवाजका प्रभाव बहुत है। लूटपाट सदा होती रहती है, इसलिए लोग जाकर दूसरे देशोमें घुमक्कडी करने लगे। यह लोग नम्देके तम्बुओमे रहते ह, और एक जगहसे दूसरी जगह घूमते पश्चिममे कि-लि-शेमो (कृष्ण) देश तक जाते हैं।

पो-तो-शङ्ना (बदख्शा)—२०० ली (४० मील) और पूरब जानेपर यह प्रदेश मिलता है, जो कि पूर्वी तुषार देश है। पहाडियो और घाटियोवाला यह प्रदेश अधिकतर बालू और पत्थरोका ह। मटर, गेहू, अगूर, अखरोट, नास्पाती, खूबानी जसे मेवे यहा पैदा होते ह। देश बहुत ठडा है। लोग शिष्टाचारहीन और शिक्षाहीन होनेपर भी बहादुर होते ह। नम्दा

या पट्टूका कपडा पहनते हैं। यहा तीन-चार बौद्ध विहार ह, जिनमे थोडेसे भिक्षु रहते ह। राजा बौद्ध हैं।

यिन्-पो-क्यान् (इन्वकान्, वखान)—बदख्शासे २०० ली (४० मील) दक्षिण-पश्चिम प्राचीन तुखार देशमें यह इलाका है। इसके पहाडोकी उपत्यकाये सकरी हैं, जिनमे खेतीकी भूमि है। जलवायु तथा लोग बदख्शाकी तरह है, लेकिन भापा भिन्न है। यहाका राजा दुष्ट और क्रूर है।

कु-लङ-ना (कोरन, कोक्चा उपत्यकाका उपरी भाग)—३००० ली (६० मील) दक्षिण-पूरवम प्राचीन तुखार देशका यह भाग है। थोडेमे बौद्ध भी हैं। यहा पत्थरोको तोडकर सोना निकाला जाता है। थोडेमे विहार और भिक्षु हैं। राजा भी यहाका त्रिरत्न-भक्त (बौद्ध) है।

त-मो-सी-नी (वमस्थिति, वखान)—कुलङनासे ६०० ली (१०० मील) उत्तर-पूरव यह प्रदेश प्राचीन तुखारका ही एक भाग पो-शू (वक्षु) पर अवस्थित है। पहाडी जगह है। वर्फीली ठडी हवा चलती रहती है। मटर और गेहू पैदा होता है। वनस्पति नाममात्र है। यहाके घोडे अच्छे होते हैं। लोग नाटे और झगडालू होते हैं। पोशाक नम्दा और पट्टूकी है। "इनकी आखें दूसरे लोगोंसे भिन्न फीरोजेकी तरह नीली होती हैं।" यहा दस विहार हैं, जिनमें थोडेसे भिक्षु रहते हैं। राजधानी हुन्-ते-तोमें एक विहार है, जिसमे एक पत्थरकी बुद्ध-मूर्ति है। मूर्तिके ऊपर स्वत घूमनेवाला छत्र है।

शि-किन (शगनान)—उत्तरी पहाडोको पार करने पर यह प्रदेश मिलता है। यहा मटर और गेहू बहुत होता है, दूसरी फसलें बहुत कम होती हैं। वृक्ष दुलभ हैं, और फल-फूल भी बहुत कम होते हैं। जलवायु बहुत ठडा है। लोग लुटेरे और हत्यारे है, सामाजिक या आचारिक भेदभाव नही मानते। इनकी पोशाक पोस्तीन और पट्टूकी होती है। भापा भिन्न है, लेकिन लिपि तुखार जैसी है।

शाङमीर (　　　　)—शगनानमे दक्षिणमे है, यहा मटर, गेहू और अगूर बहुत होता है। जलवायु ठडा है। लिपि तुखारी, किंतु भापा भिन्न है। यहाका राजा बौद्ध तथा शाकवशी है।

पो-मी-लो (पामीर)—शङमीमे ७०० ली (१४० मील) उत्तर-पूरव, दो हिमपवत-मालाओके बीचमें यह उपत्यका अवस्थित है। वसत और गर्मियोमें यहा हाड चीरनेवाली भयकर हवा तथा वर्फीले तूफान आते ह। मिट्टी नमकीन तथा बहुत ककरीली है। खेती नही होती, मुश्किलमे कही वनस्पति देखनेको मिलती है। बिलकुल निर्जन तथा केवल बेकार पडी भूमि ह। यहा एक बडा नाग सरोवर ह, जो पूरबमे पश्चिम ३०० ली (६० मील) लबा और उत्तरसे दक्षिण ५० ली (१० मील) चौडा है। सरोवर चुङ-लिङ (पामीर) के भीतर एक बडे ऊचे स्थानपर है। इसका जल बहुत ही निमल और शुद्ध ह। पानी अथाह और नीले रगका है, स्वाद भी अच्छा है। जलतलपर बहुत जातिके जलपक्षी रहते हैं। इस सरोवरसे एक धारा पश्चिमकी ओर जाती है, जो वमस्थितिमें जा पूरबमें वक्षुसे मिलती है। सभी धारायें यहासे पश्चिमकी ओर बहती ह।

क्या-पान्-तो (सरिम्-गोल)—ताश कुर्गानके पास ह।

जल्दी उत्तेजित हो जाते ह । इनकी पोशाक ऊनी कपडोकी होती है। अधिकाश निवासी बौद्ध ह। यहा दस विहार ह, जिनम महायान और हीनयान दोनो यानो के भिक्षु रहते ह । राजा तुक है, जोकि लोहद्वारके दक्षिणके छोटे-छोटे राज्योपर शासन करता है। उसके स्थायी निवासका कोई नगर नही ह। वह एक जगहसे दूसरी जगह घूमता रहता (घुमन्तू) है। इससे पूवमे चुङ्-लिङ (पामीर) है, जो कि जबूद्वीपके केन्द्रम है। दक्षिणकी ओर इसकी पवतश्रेणी महाहिमगिरि (हिंदुकुश) से मिली हुई है। उत्तर में यह नप्तमागर (इस्सिकुल) और सहस्रधारा (विङ-गुल) तक पहुचती ह। पश्चिममे यह हु-ओ (कुदूज) दश तक तथा पूरवमें वू-शा (वालारताग) तक फैली है। यहाकी भूमिम प्याज बहुत पैदा होती है, इसीलिये चुङ लिङ (प्याजका पहाड) नाम पडा, अथवा इसकी चट्टानोंके प्याजी रग होने के कारण यह नाम दिया गया।

मेन-कान् (मेङ्-कान्, मुन्-जान्)—वोरतसे १००ली (२० मील) पूरव है। यहाके लोग हू-ओ (कुदुज) जैसे है।

अ-लि-नी ( )मेङ-कान् से उत्तरमे यह प्रदेश वक्ष् नदीके दोनो तरफ अवस्थित है, लोग कुदुज जैसे है।

हो-लि-हू ( )वक्षुके उत्तर तरफ अलि-नि से पूरवमे यह प्रदश है, जहाके लाग कुदुज जैसे है।

कि-लो-शे-मे- (कृष्णनिम्न, वखान)—मेन्-कानसे ३०० ली (६०मील) पूरवमे यह प्रदेश है, जो पहिले तुखार देश मे था। लोग मेन्-कान जैसे हैं।

पो-लि-हो—उपरोक्तसे उत्तर-पुरव है, जहा के लोग भी पहले ही देश जैसे ह।

हि-मो-तोलो (तुखार)—कि-ली-शे-मोसे ३०० ली (६०मील) पूरवम यह प्रदेश है, जहा लगातार पहाड और उपत्यकाए चली गई है। भूमि उपजाऊ है। गेहू पैदा होता है, वनस्पति बहुत देखी जाती है, फल प्रचुर परिमाणमें पैदा होते हैं, जलवायु बहुत ठडा है। लाग बडे क्रोधी तथा चचल होते ह, आचार-विचारका ख्याल नही रखते। वह कदमे छोटे तथा कुरूप होते हं। इनका परिधान तुर्कोकी तरह मोटाझोटा ऊनी कपडा, नम्दा, पास्तीन और पट्टू का हाता है। इनमें विवाहिता स्त्रिया शिरपर तीन फुटसे अधिक ऊची लकडी की सीग टोपीके तौरपर पहनती है, जिसकी दो शाखायें एकके ऊपर एक सामनेकी ओर होती है। ऊपरी की ओर निकली शाखा सासकी मानी जाती है। उसके मर जानेपर शाखा हटा दी जाती है। सास ससुर दोना के मर जानेपर सीगकी टोपी नही पहिनी जाती। पहले यहा शक-वशी राजा थे, जिनके हाथम चुङ-लिङ (पामीर) के पश्चिमके अधिकाश भाग थे। पीछे यह तुर्कोंके हाथम चले गए। लोगो पर तुर्कोंके रीति-रवाजका प्रभाव बहुत है। लूटपाट सदा होती रहती है, इसलिए लोग जाकर दूसरे देशोमें घुमक्कडी करने लगे। यह लोग नम्देके तम्बुओमे रहते है, और एक जगहसे दूसरी जगह घूमते पश्चिममे कि-लि-शेमो (कृष्ण) देश तक जाते हं।

पो-तो-शङ्ना (वदख्शा)—२०० ली (४० मील) और पूरव जानेपर यह प्रदेश मिलता है, जो कि पूर्वी तुषार देश है। पहाडियो और घाटियोवाला यह प्रदेश अधिकतर बालू और पत्थरोका है। मटर, गेहू, अगूर, अखरोट, नास्पाती, खूबानी जैसे मेवे यहा पैदा होते ह। देश बहुत ठडा है। लोग शिष्टाचारहीन और शिक्षाहीन होनेपर भी बहादुर होते हं। नम्दा

या पट्टूका कपडा पहनते हैं। यहा तीन-चार बौद्ध विहार है, जिनमे थोडेसे भिक्षु रहते है। राजा बौद्ध है।

यिन्-पो-क्याए् (इनुवकान्, वखान)—बदख्शामे २०० ली (४० मील) दक्षिण-पश्चिम प्राचीन तुखार देशमे यह इलाका है। इसके पहाडोकी उपत्यकाय मकरी है, जिनमे खेतीकी भूमि है। जलवायु तथा लोग बदख्शाकी तरह है, लेकिन भाषा भिन्न है। यहाका राजा दुष्ट और क्रूर है।

कु-लङ्-ना (कोरन, कोक्चा उपत्यकाका उपरी भाग)—३००० ली (६० मील) दक्षिण-पूरवमे प्राचीन तुखार देशका यह भाग है। थोडेमे बौद्ध भी है। यहा पत्थरको ताडकर सोना निकाला जाता है। थोडेमे विहार और भिक्षु है। राजा भी यहाका त्रिरत्न-भक्त (बौद्ध) है।

त-मो-सी-नो (धर्मस्थिति, वखान)—कुलङ्नासे ६०० ली (१०० मील) उत्तर-पूरब यह प्रदेश प्राचीन तुखारका ही एक भाग पो-शू (वक्षु) पर अवस्थित है। पहाडी जगह है। बर्फीली ठडी हवा चलती रहती है। मटर और गेहू पैदा होता है। वनस्पति नाममात्र है। यहाके घोडे अच्छे होते हैं। लोग नाटे और झगडालू होते है। पोशाक नम्दा और पट्टूकी है। "इनकी आखें दूसरे लोगोसे भिन्न फीरोजेकी तरह नीली होती है।" यहा दस विहार है, जिनमे थोडेसे भिक्षु रहते है। राजधानी हुन्-ते-तोमें एक विहार है, जिसम एक पत्थरकी बुद्ध-मूर्ति है। मूर्तिके ऊपर स्वत घूमनेवाला छत्र है।

शि-किन (शगनान)—उत्तरी पहाडोको पार करने पर यह प्रदेश मिलता है। यहा मटर और गेहू बहुत होता है, दूसरी फसलें बहुत कम होती है। वृक्ष दुलभ है, और फल-फूल भी बहुत कम होते हैं। जलवायु बहुत ठडा है। लोग लुटेरे और हत्यारे है, सामाजिक या आचारिक भेदभाव नही मानते। इनकी पोशाक पोस्तीन और पट्टूकी होती है। भाषा भिन्न है, लेकिन लिपि तुखार जैसी है।

शाङ्मीर ( )—शगनानसे दक्षिणमे है, यहा मटर, गेहू और अगूर बहुत होता है। जलवायु ठडा है। लिपि तुखारी, किंतु भाषा भिन्न है। यहाका राजा बौद्ध तथा शकवशी है।

पो-मी-लो (पामीर)—शङ्मीसे ७०० ली (१४० मील) उत्तर-पूरब, दो हिमपवत-मालाओके बीचमें यह उपत्यका अवस्थित है। वसत और गर्मियोमें यहा हाड चीरनेवाली भयकर हवा तथा बर्फानी तूफान आते है। मिट्टी नमकीन तथा बहुत ककरीली है। खेती नही होती, मुश्किलसे कही वनस्पति देखनेको मिलती है। बिलकुल निजन तथा केवल बेकार पडी भूमि हैं। यहा एक बडा नाग सरोवर है, जो पूरबसे पश्चिम ३०० ली (६० मील) लबा और उत्तरसे दक्षिण ५० ली (१० मील) चौडा है। सरोवर चुङ्-लिङ् (पामीर) के भीतर एक बडे ऊचे स्थानपर है। इसका जल बहुत ही निर्मल और शुद्ध है। पानी अथाह और नीले रगका है, स्वाद भी अच्छा है। जलतलपर बहुत जातिके जलपक्षी रहते हैं। इस सरोवरसे एक धारा पश्चिमकी ओर जाती है, जो धर्मस्थितिमें जा पूरबमें वक्षुसे मिलती है। सभी धारायें यहासे पश्चिमकी ओर बहती है।

क्या-पान्-तो (सरिम्-गोल)—ताश कुर्गानके पास है।

पो-लु-लो ( ) पामीर-उपत्यकाके दक्षिणमें यह इलाका है, जहा बहुत सोना-चादी निकलता है।

६ अंतिम तुर्क

जब ६३१-६३२ ई० म स्वेन्-चाङ इस प्रदेशमें घूम रहा था, बलख, बामियान, महाहिमगिरि (हिंदूकुश), बदख्शा और बखान ही नही बल्कि मेव भी तुर्कोंके हाथमें था। इस समय पश्चिमी तुर्क कगान तुन्-शे-खूका शासन था, तो भी हूण पूर्वजोकी तरह तुर्क राजवशी अपने अपने शासित प्रदेशमें स्वतंत्रसे थे। तुन्-शेखूके बाद केंद्रकी शक्ति क्षीण हो गई, और सामन्त स्वतत्र हो गये। सोगे (७०८-७१७ ई०) और सूलू (७१७-७५७ ई०) ने तुर्क राज्यको पुन दृढ़ अवश्य किया, किंतु मध्य-एसियाका दक्षिणापथ अब उनके हाथसे निकल गया। अरब शक्ति वहा प्रबल होती जा रही थी। तुखारिस्तानमें तुर्कोंने अरबोसे बहुत जबदस्त मुकाबिला किया, उसी तरह बुखारा और सोग्दमे भी मुकाबिला हुआ। तुर्कोंके ही समय उनकी बौद्ध-धर्म-भक्तिका प्रतीक एक विशाल विहार सोग्द (जरफशा) नदीके किनारे बना। विहारको तुर्की और मगोल भाषामें बुखार कहते है। उक्त बौद्ध विहारके कारण वहा बना नगर बुखारा कहा जाने लगा। इससे पहले हेफतालोके समय वरख्शा प्रधान केंद्र था, लेकिन अरबोके आक्रमणके समय बुखारा प्रसिद्ध नगर बन चुका था। यहा का शासक बुखारा (वर्दन)-खुदात कहा जाता था। तुर्कोंके कुछ सामन्त इससे पहले तकमख्द, वेर्वाने, अस्वाने और नूरमे बस गये थे। केंद्रसे स्वतत्र होनेके बाद इन सरदारोने अवेरजी को अपना राजा चुना, जो कि वेद्दकन्द (राज्य-नगर) में रहता था। उस समय अभी बुखारा नहीं बसा था। अवेरजी बहुत ही अत्याचारी शासक था, विशेषकर धनी व्यापारियो और देहकानो (ग्रामपतियों) को बहुत लूटता था। इसके कारण बहुतसे धनी व्यापारी वहासे तुर्कोंके प्रदेशोमें चले गये, जहा उन्होने जेमकेत (चिमकद ?) नगर बसाया। राजा कराजुरिन गरीबोका पक्षपाती था। मदद मागनेपर उसने अपने पुत्र शेरे-किश्वरको भेजकर अवेरजी को वदी बना काटोसे भरे बोरेमें बद करके बुरी तरहसे मरवाया शेरेकिश्वर ने राजा बनकर देश छोड़कर भागे लोगोको बुलवा मगाया।

(१) शेरेकिश्वर, सेकेजकेत

शेरेकिश्वर (देशसिंह) ३० साल तक राज्य करता रहा। उसके उत्तराधिकारी सेके जकेतने समीतन और दूसरे नगर बसाये। फेरख्शा (वरख्शा) पहिले ही श्वेत-हूणाकी राजधानी थी। सेकेजेत उस तुर्क खानवशका था, जिसको चीन राजकुमारिया व्याहके लिये मिला करती थी। कहते है एक चीन राजकुमारी व्याह करके आई, जो अपने साथ बुद्ध-मूर्ति लाई थी। इसी मूर्तिके लिये विहार (बुखार) बनाया गया, वही बुखारा नगरके नामका कारण हुआ। शायद यह घटना स्वेन्-चाङकी यात्राके पहिलेकी है, अर्थात् ६३० ई० मे पहिले विहार बना।

(२) बेनदून

यह मुस्लिम सवत्के आरभ (६२२ ई०) के आसपास था। इसके समय बुखाराकी और उन्नति हुई। इसने लोहेकी तख्तीपर अपना नाम लिखवाकर अपने बनवाये महलके द्वारपर लटकवा

दिया था, जो पाच शताब्दियो बाद तक भी वहा मौजूद रहे जबकि ११ वी शताब्दीके अरब ऐतिहासिकोने उसका जिक्र किया।

(३) तुग्शादे[1]

यह बुखाराका अतिम तुर्क राजा था। नाबालिक होनेके कारण राज्यका कारबार उसकी मा करती थी, जिसे अरब इतिहासकार खातून कहते है—तुर्कीमे खातूनका अर्थ रानी है, इसलिये यह वैयक्तिक नाम नही हो सकता। खातूनने ५० सालतक शासन किया। जान पडता है, पुत्रके वयस्क हो जानेके बाद भी मा का प्रभाव बहुत अधिक रहा। प्रतिदिन सूर्योदयके समय उठकर वह घोडेपर चढ अपने महलसे निकल रेगिस्तान (बुखाराके एक मैदान) के फाटकपर आ सिंहासनपर बैठती। नगरके व्यापारी, सार्थवाह और छोटे-मोटे दूकानदार दर्बारमे हाजिर होते। उसके अफसर और सामन्त चारो ओर घेरे रहते। खातून यही राजकाज तथा न्याय करती। जिस वक्त वह दरबारमे रहती, सुनहले कमरबद, कीमती चोगा पहने तलवार लिये २०० तरुण शरीर-रक्षक सेवामे तैयार रहते। उन्हें एक दिन ही ड्यूटी देनी पडती, दूसरे दिन दूसरे २०० जवान आ जाते। हर एक तुर्की कबीला एक-एक दिनके लिये अपने तरुणोको इस कामके लिये भेजता। कबीलोकी सख्या इतनी अधिक थी, कि सालमे प्रत्येक कबीलेकी बारी एक बार पडती थी। इन कबीलोमे ६० परिवार ऊंचे समझे जाते थे।

अतमे तुगशादेको अरबोकी अधीनता स्वीकार करनी पडी और वह मुसलमान होकर ३० साल तक बुखाराका शासक बन अपने पडोसी वदनके राजासे अरबोके लिये लडता रहा।

सोग्द (समरकद) और भी अधिक महत्व रखता था। वहाका तर्खून आखिरी समयतक लडता रहा। जबतक उसे परास्त नही कर दिया, अरबोको चैनसे शासन करनेका मौका नही मिला। तरखूनने चीनसे मदद मागी थी, अपने जाति-भाई तुर्कोसे भी सहायता पाई थी, किंतु आखिरमें उसे देश छोडकर भागना पडा। समरकदसे पूरबमे अपने दुग मग पर्वत में उसने अपने बहुतसे चर्मपत्रपर लिखे अभिलेखोको छोडा, जिनमेंसे अधिकाश (७वी सदीकी) सोग्दी भाषामें तथा कुछ अरबी और चीनीमें भी हैं। सोवियत पुरातत्त्ववेत्ताओने इन्हे हाल में खोद निकाला।

---

[1] History of Bokhara (A Vambery, 1973)

स्रोत ग्रन्थ

1 Heart of Asia (E D Ross, (London 1899)

२ सिरिइस्कियें इस्तोच्निकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ सससर (न पिगुलेस्कया, मास्को १९४१)

3 Turkistan down to the Mongol Invasion (W Barthold), 1928

4 On yuan Chwangs Travel in India (Thomes Watters, 1904)

5 Memoir Sur les Contre'es Occidentales (Hiuen Tsang, अनुवादक Julien)

6 The Turko-Scythien Tribes (E Parkar in China Review, XX 1892, 3, pp 125)

7 History of Bokhara (Arminus Vambery, London 1873)

8 Introduction a l' histoire de l' Asie (Paris 1895)

9 Early History of the Turks (Washborn, Contemporary Review, LXXX, pp 249 63)

१० सोग्दिइस्कया कलोनिजात्सिया सेमिरेच्या (अ० न० वेर्नश्ताम)

भाग ५

उत्तरापथ (७६६–९४० ई०)

अध्याय १

आगूज़, उइगुर

१ आगूज़

आगूज एक पुरानी तुर्क जाति थी, जिसका स्मरण मोगिलियानके अभिलेखमे आया है। मोगिलियानने आगूजोको हराकर चीनकी ओर भगा दिया था। मोइनचुरा (उइगुर खान) के सहायक किपचकोंके पूर्वज आगूज़—आगूजोंके पाच विभागोमें एक किपचक थे। किपचकका अर्थ वृक्षकोटर है। शायद किसी समय किसी पूर्वजने वृक्ष कोटरमे छिपकर प्राण बचाया हो। गूज या आगूज़ तुर्कोंके तीन विभाग थे—किपचक, ककाली और करलुक (गरलाक)। किपचकोंके ही वशधर सलजूक, तथा आधुनिक तुर्कमान, उसमानली और कजाक हैं। कोई कोई आगूजोंके उत्तराधिकारी किपचकोंको ककालियोका पूर्वज मानते हैं। इन्ही ककालियोंके उत्तराधिकारी वायन तुर थे। ककाली (कङ्कली) यायिक (उराल) नदीके पूर्वमें अपनी गाडियोंके साथ घूमा करते थे, इसीलिये इनका नाम कङ्कली या तिङ्ली (गाडीवाला) पडा। ६ वी सदीके अतमे किपचक वोल्गाके पश्चिममें पहुँच गये थे, और १२ वी सदीमे आधुनिक रूसियोंके पूर्वज स्लावोंको परेशान कर रहे थे। किपचकोंसे ही सलजूक-वंश निकला, जिसने कितनेही समय तक मध्य एसिया और ईरानपर शासन किया। आजकलकी तुर्की के तुर्क उसमानली शाखाके वशधर हैं। ७वी ८वी सदीमें कालासागरसे उत्तर पेचनगा घुमन्तु घूमते थे, जिनके पूर्वोत्तरमे किपचक, दक्षिण-पश्चिममे खजार, पूर्वमें गूज और पश्चिममे स्लाव रहते थे। गूज या आगूज ७वी ८वी सदीमे चीन की सीमासे लेकर कास्पियन तक फैले घूमन्तु जीवन बिताते थे। सामानियोंके सारे शासनकाल (८९२-९९३ई०) में ये उनके उत्तरी पडोसी थे। खोकन्द और पूर्वी तुर्किस्तान से वक्षु तटकी ओर इनका प्रवाह चल रहा था। सामानियोंकी शक्ति के पतनके बाद बुखारा प्रदेशमे भी ये घुस आये और वहा एक सरदार तकमक पुत्र सलजूक के कारण एक शाखा सलजूक कही जाने लगी। सलजूक पहलेपहल मुसलमान बना। उसके पहले गूज अधिकतर बौद्ध या ईसाई धर्मोंके माननेवाले थे। सल्जूक और सुवास एक गूज सरदार पेगूके सेनापति थे। उसका पेगू नाम ही बतलाता है, कि वह बौद्ध था। पेगू बोगू (भगवान) का ही रूपान्तर है, पारसी बुद्धको पेगू कहते थे।

आगूज जब मगोलियामें थे, तब ही वह इस नामसे प्रसिद्ध थे। पश्चिममे आनेपर उनमेसे कुछको तुर्कमान कहा जाने लगा। दूसरी सदी ई० पू० के चीनी यात्री आन-साई (आलान्-या) की भूमिको जानते थे, जहा के निवासी ईरानी जातिसे संबध रखते थे। ग्रीक लोग आलान (आवोर-

सोग) को दोन नदी और कास्पियनके बीचके निवासी जानते थे। पीछे भी अलान वोल्गाके पूरबमे रहते थे। ३७८ ई० आसपास के हूण अलानोके ऊपर पडे, जिसके कारण वह अपनी भूमि छोडनेके लिये मजबूर हुए। ८वी सदीमे तुर्क खाकानने अपने अभिलेखमे आगूजो अथवा ताकुज-आगूजोके खानका जिक्र किया है। नौकी गिनती में आगूज कहनेका मतलब यही है, कि उनके नौ कबीले थे—कभी कभी तुर्क और आगूज दोनो शब्द साथ साथ आते हैं। आगूज वही तुर्क जनता थी, जो कि छठी सदी ई० में चीन की सीमासे ईरान और बिजतीन (पूर्वी रोम) की सीमा तक घुमन्तू जीवन बिताती थी। रूसी विद्वान व० व० वर्तोल्द के कथनानुसार[१] तुर्क उनका राजनीतिक नाम था और आगूज नृवंशीय। अरब भूगोलज्ञ आगूजो का रहना पूर्वी कास्पियनसे इस्फिजाब तक और ताकूज-आगूजोका तरिम-उपत्यकामे कूचा और तुर्फान तक बतलाते ह—तुर्फान उनका केंद्र था। १३ वी सदीके भूगोलज्ञ इब्न-असीरने लिखा है, कि आगूज कभी भी ताकूज-आगूजोके नीचे नही रहे। अरब ताकूज-आगूजोका रहना जहाँ बतलाते हैं, चीनी वहीपर उमी समय उइगुरोका निवास बतलाते हं। ८६६ ई० मे तुर्फानको उइगुरोने लिया था। इससे जान पडता है कि अरब जिनको ताकूज-आगूज कहते ह, चीनी उन्हीको उइगुर नाम देते हे। अरबोके अनुसार ८२० ई० (२०८ हिं०) में तोगुज उश्रूसनाको ले खोजदसे जीजक तकके स्वामी बन गये। बिजतीय (रोमक) ऐतिहासिकोके अनुसार छठी सदीमे वोल्गासे पश्चिमका इलाका तुर्क राजाके हाथमें चला गया। ५७६ ई० में बिजतिया द्वारा ध्वस्त होनेपर किमेरियाके वासपोर (केच) को तुर्कोने ले लिया।

५९० ई० मे वहा बिजतीय शक्तिसे विद्रोह हुआ। तुर्कोकी इस अल्पकालिक सफलताके समय ६२५ ई० मे इस प्रदेशपर खजारी कगानका अधिकार था। ८वी और ९ वी सदीके मध्यमें निम्न वोल्गोमे खजार और बोल्गार रहते थे। इन्ही तुर्कोसे आत्मरक्षाके लिये सासानी ईरानियोने छठी सदीमे दरबद और गुर्जीके रक्षा-प्राकार बनवाये। छटी सदीमें तुर्क (चोल, सुल) के राज्यमे कास्पियनसे पूव के प्रदेश तथा गुर्गानमें जर्थुस्ती देहकान रहते थे। अब्बासी खलीफाके ऊपर आगूज जाजिया से चिमकद (सिर-उपत्यका) तक प्रहार करते थे। वोल्गा (इतिल) के ऊपरी और निचले भागमे आगूज रहते थे, जिनके उत्तरी पडोसी किमाक थे। अरब भूगोलज्ञ इब्न फज़लान ने अपनी यात्रा के समय (९२२ ई० के वसत में) आगूजो को केवल उस्तउद मे पाया था, उस समय एम्बा नदी से पूव में तुर्कवशी बाशकिर रहते थे। इस समय कस्पियन के पश्चिम में खजार, पूव मे आगूज, जिनके पूव में करलुक घुमन्तू रहते थे। आगूजो के सरदार को खान नही यबगू कहा जाता था, यही बात करलुको में भी थी। यबगू को मोगोलियान के शिला लेख म जबगू कहा गया है—११वी शताब्दी के लेखक महमूद काशगरी ने भी ज की जगह य का प्रयोग किया है। यब्गू जाडा मे निम्न सिर-उपत्याका में रहता था। सामानी सीमात सैराम से सिर के मुहाने तक उसकी गोचर-भूमि थी। आगूजो की भूमि से जाते वणिक्पथ पर जहा-तहा मुसलमानो के भी नगर थे। इन्ही में एक यगीकेंत (देहनव) था, जो कि सिरदरिया से छ-सात किलोमीतर हटकर बसा था। फारेलसे १० दिन और फराब मे १२ दिन में वहा पहुचा जाता था। यहा आगूजो का एक राजा रहता था।

---

[१]"ओचेक इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्कवो नरोद", History of Bokhara (A Vambery)

इसी के पास दो और नगर जद और तमरउत्कुल थे। इन-खल्दूनके अनुसार आगूज बडे समृद्ध थे किन्ही किन्ही के पास एक-एक लाख भेडें थी। वह ख्वारेज्म व्यापार करने जाते थे। जब माग्द और तुखारिस्तान म शाति रहती, तो आमू-दरिया के दक्षिण तट पर अवस्थित पारानगिन नगर में भी हो जाते थे, जो कि अराल से एक दिन के रास्ते पर था। गुर्गंच (उर्गंज) वणिक्पथ पर था। वहाँ सामान की ढुलाई और व्यापार दोनों काम आगूज करते थे। ९२२ ई० म इन-फज्लान ने आगूजो को काफिर पाया था, वैसे ही जैसा कि वह ८वी सदी में मगोलिया म थे। फज्लान ने एक आगूज राजा का नाम कुचुक यनाल बतलाया है, जो कि मुसल्मान होकर फिर काफिर हो गया था। आगूजो में इस्लाम के अतिरिक्त ईसाई धर्म का भी प्रचार था, यह १३ वी सदी के लेखक जकरिया कजवीनी के लेख से मालूम होता है।

२ उइगुर

(१) उइगुर—यह बतला चुके है, कि अरबो के ताकुज-आगूज और चीनियो के उइगुर वस्तुत एक ही है। उइगुर शुरू म आधुनिक मगोलिया मे ओरखान नदी की उपत्यका मे रहते थे। इनका पहला राजा बुकू खा बतलाया जाता है। कहते है, बुकूखा ने स्वप्न म देखा, कि वह सारी दुनिया का राजा होगा। उसने अपने पडोसियो—किरगिज, चीन, तगुत (अम्दो) के विरुद्ध अभियान किया और अपार सपत्ति के साथ लौटा तथा उदवालिक नगरी बसाई। दूसरे स्वप्न मे उसे एक जेड (अकीक पत्थर) का टुकडा मिला, जिसके पास रहने तक ससार पर उसका शासन रहेगा। इस पर उसने पश्चिम की ओर अपनी सेना चलाई और तुर्किस्तान (सप्तनद) में दाखिल होकर बलाशगून (सूजिया) नगर बसाया। चीनी इतिहास बतलाता है, कि उइगुर ७वी सदी मे मगोलिया के उत्तर-पश्चिम मे रहते थे। ८वी सदी म उनका स्थान वही प्रदेश था, जहा पर कि उर्गा (उलानबातुर) के पास पीछे मगोल राजधानी कराकारम नगर बसाया गया। ९वी सदी में उनके राज्य को किरगिजो ने ध्वस्त कर दिया, और वह दो भागो में विभक्त हो गये, जिनमें पूर्वी भाग का सपर्क पीछे चिंगीस से हुआ। इन्ही को पीछे वेइ-वूर या (हुइ-हो, पूर्वी तुर्क) कहा जाने लगा। मुस्लिम इतिहासकारो ने उइगुर नाम पहले पहल १३वी सदी में लिया, इससे पहले वह उन्हे ताकुज-आगूज कहते थे।

मगोलो के राजनीतिक और सास्कृतिक गुरु उइगुर थे।[1] चिंगिस और उसके उत्तराधिकारियो के समय वह बडे बडे पदो पर थे, यह हम देखेंगे। उइगुर नाम आज भी उज्बेको के चार विभागो म मिलता है —उइगुर-नइमन, कङ्-ली-किपचक, कियत-कुग्रद, नोखुस-मगित। इनमे चौथा विभाग बुखारा के आखिरी राजवश का था।

(२) उइगुर उत्पत्ति—पुराने हूणो ने अपने उत्तर की तिङलिङ (गाडी वाली) जाति को जीता था। सियन्-पी शासनकाल (३८६-५३४ ई०) मे तिङलिङ चीन की ओर से लडे थे। चीनियों को पीछे यह सुनकर आश्चर्य हुआ, कि पश्चिम में भी इस जाति के लोग रहते है। तिङलिङ और सभी किरगिज ऊचे पहियेवाली गाडिया इस्तेमाल करते थे। ककालियो की भी यही बात

---

1 A thousand years of Tatars (Parker)

2 Turkistan Down to Mongol Invaison

थी। चीनी लेखको ने साफ लिखा है, कि उइगुर और किरगिज एक ही भाषा बोलते ह। जब तिङलिङ्ग शब्द लिखने का रवाज नही रहा, तो चीनी लेखक उनके लिये चिर-के अथवा तेरक (चीले, हीले) लिखने लगे। ६४८ ई० में तुर्कों और खित्तनो की भूमियो के बीच में रहने वाली जातियो ने थाङ्ग सम्राट् ताइ-सुङ्ग (६२७-६५० ई०) की अधीनता स्वीकार की, वह इसी तेरक (तुक) नाम से पुकारी जाती थी। तुर्क से तेरक मे इतना ही अतर वतलाया जाता है, कि विवाह के समय तुक पुरुष अपनी स्त्री के पास चाहे तब तक रहता था, और उसी समय लौटता था, जब कि एक पुत्र पैदा हो जाता था। लेकिन, तेरको के वारे में कहा जाता है, कि वह ऊची गाडीवाले लाग थे। तेरको का ही एक छोटा कवीला उइगुर था, ऐसा किन्ही-किन्ही विद्वानो का मत है। तेरक कास्पियन तक फैले हुये थे, जहा पर कि मगोल-विजय के समय ककालियो को रहते पाया गया। तुर्की भाषा मे ककाली गाडी को कहते है, चगेज (चिंगिस) काल में इसी का चीनी उच्चारण कङ्गली हो गया—छठी सदी में कङ्गली सिविर खकानका एक देरे भी था। इस प्रकार गोवी के रेगिस्तान, इस्सिकुल और सिर्-दरिया के उत्तर गाडी रखनेवाले हूण और तुर्क तिङ्गलिङ्ग कहे जाते थे। यही जाति प्रधानता प्राप्त कर उइगुर के नाम से मशहूर हुई। हूणो की शासक जाति (राजवशी कबीले) पश्चिम की ओर चली गई, जो वच रहे, वह आसेना तुर्को और किरगिजो को छोड उइगुर कहे जाने लगे। ये अपने पूवजो की तरह ही वडे साहसी और मजबूत घुमन्तू थे, लूटपाट इनका पेशा था, और घोडे पर बैठे तीर चलाने में वडे कुशल होते थे। चूला खाकान ने जवदस्ती तेरको को आधीन करके अपने और उइगुरो के वीच शत्रुता का वीज वोया और क्रुद्ध होकर उनके कितने ही सरदारो को मार डाला। इस पर उइगुर, कुकित, तुला और बैकाल जातियो ने विद्रोह कर औ अपने अलग अलग जिगिन स्थापित किये। इन्हीके जिगिनो का समिलित जातीय नाम उइगुर पडा। मुख्य उइगुर कवीले को योकर कहा जाने लगा। उस समय ये सेयन्दा नदी के उत्तर में रहते थे। सेलिगा नदी पर उनका एक लाख ओर्दू था, जिसमें आधे लडाई मे भाग ले सकते थे।

३ उइगुर-खाकान[1]

१ **जिकेन, जिगिन या जिकेन** उइगुरो का प्रथम राजा था।

उइगुरो के दो भाग थे नैमन उइगुर (आदि उइगुर) जो चिंगिसखा के समय जुगारिया में रहते थे, तोगुज़-उइगुर (नव-उइगुर) जो ओरखोन और तुला की उपत्यकाओ मे रहते थे। यह स्मरण रखना चाहिये, कि ८वी शताब्दी के उत्तराध से ९वी शताब्दी के अत तक पूर्वी-एसिया में उइगुर वहुत शक्तिशाली रहे और एक आधुनिक लेखक के अनुसार "पुराने समय म पूर्वी-एसिया के यह सवसे अधिक सस्कृत जाति थी।" इनकी राजधानी कराकारम (मगोलिया) थी, किंतु इनका ओर्दू घूमा करता था। पीछे इनका केन्द्र विशवालिक हुआ। इनमें वौद्ध धम का वहुत प्रचार था। इनकी भाषा में अनुवादित कितने ही वौद्ध ग्रथ तकलामकान की मरुभूमि में प्राप्त हुये हैं। वौद्धो के साथ साथ नेस्तोरीय (ईसाई) धम का भी इनमें वहुत प्रचार था। ८४० ई० म इनके खान खैसा का शिर काटा गया, और ८४८ ई० मे यह अपनी जन्मभूमि आधुनिक मगोलिया छोडने के लिये मजवूर हुये। नेस्तोरियो के सपक में आ उइगुरो ने सुरियानी लिपि से अपनी वण-

---

[1] वहीं

माला तैयार की, जो कि उनके द्वारा चगिस खा के समय म जाकर मगालो म आज भी प्रचलित है।

(उइगुर-राजावलि)

जिगिन उइगुरो का प्रथम राजा था, किन्तु उगुरो को प्रधानता तब प्राप्त हुई, जब कि पूर्वी-तुर्कों को समाप्त कर मोइनचुर ने मध्य-एसिया में अपनी शक्ति का विस्तार किया। मोइनचुर से पहिले उइगुरो के नौ राजा हो चुके थे, आगे आठ राजाओ के समय तक उइगुर शक्तिशाली रहे। इनकी राजावली निम्न प्रकार है—

(१) जिगिन
(२) वोसत (वोधिसत्व) ६२९- ई०
(३) सुमेत
(४) वोरुन
(५) वीरुत
(६) तुख्खेली
(७) वुल्तेवर ७१७
(८)
(९) कुतलुक विगा—७५६ ई०
१ (१०) मोइनचुरा (मोयुनचुर ७५९-६०)
२ (११) यितिकिन ७६०-७८
३ (१२) दुरमोगो ७७८-७९
४ (१३) तरस ७८९
५ (१४) आचो —७९५
६ (१५) कुतलुग—७९५—
७ (१६) कौसग ८०८—२१
८ (१७) गुदलुग जिगिन ८२१-२४
९ (१८) ८२४-३२
१० (१९) ८३२—
११ (२०)
१२ (२१) आन्के
१३ (२२) आनेन।

२ वोसत् (६२९-)

वोसत वोधिसत्व का अपभ्रंश है, जिससे पिता लगता है कि वंश के आरम्भ में ही बौद्ध धर्म का उसमें कितना प्रचार हो चुका था, इसलिए उनके राजा ने बौद्धधम के आदर्शवाद के प्रतीक बोधिसत्व का नाम अपने लिये स्वीकार किया। वह जिगिन का पुत्र था। उइगुरो से दक्षिण मे

रहने वाले सेइदो के सहयोग से उसने अपनी शक्ति को बढ़ाया। उइगुरो को आगे वढते देखकर तुक कगान (खान) खेली के उपराज जेली ने एकाएक सेना लेकर आक्रमण किया, लेकिन उइगुरो ने बहुत बुरी तरह से हराया, और उसे सजीव पकड कर घेरेफा (हुवोसी-ली-फा) की उपाधि पाई। बोधिसत्व का उर्दू (सेना) तुला नदी की उपत्यका मे रहता था। उसने ६२९ ई०से पहिले चीन-सम्राट के पास भट भेजी थी। यह थाङ वश के आरम्भ और समृद्धि का समय था। बोधिसत्व के साथ साथ सेइदा का सरदार भी इस भूभाग में शक्तिशाली था।

३ तुमेत

बोधिसत्व के बाद उइगुरो का एक सरदार तुमेत उनका खाकान हुआ। इसने सेइदा का हराकर उनके उर्दू को अपने मे मिला लिया, किन्तु कुछ ही समय बाद वह फिर स्वतत्र हो गये। तुमेत की शक्ति को वढते हुए देखकर दूसरी तेरक जातियो—उइगुर, तरकल, बैकाल, बुक्कू, तुला, गुसार, आदिर, किविर, घेई, किर, स्वतेसिर, शेकिर और किरगिज़—ने चीन की अधीनता स्वीकार की, यह चीनी अभिलेखा से मालूम होता है। इसी समय किर्गिजो का नाम पहिले पहल तेरेक जातियो मे गिना गया है। इनके सरदारो (राजाओ) की थाङ्-सम्राट ने वडी आवभगत की, और वह सम्राज्य के सहायक वन गये। इन घुमन्तू जातियो की प्रार्थना पर चीन ने डाकगृहो के साथ साथ अच्छे रास्ते बनवाये। छाङआन (चीन राजधानी) से उइगुरो और दूसरी तुर्की-जातियो के राजनीतिक केन्द्रो तक रास्ते तैयार किये गये। उइगुरो का कगान तुमेत यद्यपि वाहर से अपने को चीन के अधीन दिखलाता था, किन्तु अपने राज के भीतर वह नायक कागान (स्वतत्र राजा) के तौर पर ही प्रसिद्ध था। उसके वारह मत्री थे, जिनमे छ भीतरी भू-भाग के शासन म सहायता करते और छ वाहरी भूभाग के। यह सगठन तुक-सरकार के नमने पर किया गया था। किसी कारण से उइगुरो ने तुमेत से नाराज हो उसे मार डाला।

४ बोरुन, ५ बीरुत (पीली), और ६ तु-खे-ली

यह तीनो कगान तुमेत के पुत्र, पौत्र और प्रपौत्र थे। यह उस समय हुये, जवकि असेना तुक की एक शाखा तेकिश का प्रतापी कगान मे-चो शासन कर रहा था। उसने पुरानी तुक भूमि को जीत लिया, जिसके कारण उइगुर, सिविर, सिकिर आदि हूणीय जातिया दक्षिण की ओर भागकर पुरानी तुक भूमि में खाङ-चउ-फू के पास चली गई। इसी समय तिब्बतिया का भी वहुत जोर वढा। वह तरिम उपत्य का को लेकर चीन के ऊपर भी आक्रमण किया करते थे। उइगुर लोग चीन के सहायक होते थे।

७ वुखतेवर (७१७)

७१७ ई० म तुखेली के पुत्र वुखतेवर ने मे-चो के युद्ध म चीन की सहायता की और इसी सघप में मे मोचो मरा। मोचो के पुत्र पर झूठा अपराध लगा कर उसे दक्षिण चीन म निर्वासित कर दिया गया।

८ पुत्र

उसके स्थान पर उसका पुत्र बैठा। उस समय इन घुमन्तू जातियो पर काबू रखने के लिये उइगुर भूमि (उरुमची) मे चीन का एक राजामात्य रहता था, जिसकी शिकायत पर मोचा-पुत्र ना दक्षिण में निर्वासित कर दिया गया, और वही जाकर वह मर गया। इस पर उइगुर जाति के नेता राजामात्य के विरुद्ध हो गये और उन्होंने उसको मार डाला। इसके कारण राजामात्य के स्थान (वकुल) से राजपथ द्वारा चीन का सबंध टूट गया। विद्रोहियो का सरदार तुर्कों के राज्य में भाग कर वही मरा। मरकिरिन के शासन के बाद तुर्कों की राजशक्ति छिन्न-भिन्न हो गई यह कह आये है। उससे उइगुर लाभ उठाये बिना कैसे रह सकते थे?

९ कुतुलिग बिगा (-७५६ ई०)

तुर्कों की इस अवस्था से फायदा उठानेवाला तथा पिछले विद्रोही सरदार का पुत्र कुतुलिग बिगा था। इसे करलिक, बीरा, बसिमिर, और करलुग से मुकाबिला करना पड़ा। बसिमिर राजा होने का दावा करता था, जिसपर बिगा ने उसका सिर काट लिया। सघर्ष में सफल होकर उसने चीन के पास दूत द्वारा सदेश भेजा, कि इस तरफ की शान्ति और व्यवस्था कायम रखने की जिम्मेवारी मैं लेता हू। उसने अपने राज्य को निष्कटक बनाकर कुतुलिग बिगा खान की उपाधि धारण की। चीन ने भी "राजकुमार" की उपाधि प्रदान की और उसे वहा भेज दिया, जहा पहिले ओर्खोन नदी के तट पर तुर्कों की राजधानी थी। यह चीन को अर्पित की गई तीन-नगरियो के पश्चिमी छोर से पाच सौ मील उत्तर मे थी। मरने से पहले यही पर मरचो (६९३-७१६ ई०) नौ कबीलो के जीतने मे सफल हुआ था। इन्ही कबीलो में से एक कस (खजार) भी थे, जिन्होंने पीछे कास्पियन के पश्चिमी तटपर अपना राज्य स्थापित किया था। कुतुलिग बिगा ने करलुको और बसमिरा को भी जीत लिया। इस सफलता पर चीन-सम्राट् ने बिगा को कगान की उपाधि स्वीकृत की। मरकरिन के वशजो के लिये तुर्क अब भी विरोध कर रहे थे, जिन्हें बिगा ने कई बार हराया। चीन-सम्राट् ने और भी सम्मान की आशा दी। बिगा ने अपने राज्य को बढाते हुए पूर्व मे पूर्वी मचूरिया के मत्स्यचर्मवाले तातारोकी भूमि से लेकर पश्चिम में अल्ताई तक बढा लिया। दक्षिण मे उसकी सीमा गोबी की महामरुभूमि थी—अर्थात् उसके मरने के समय ७५६ ई० में सारी पुरानी हूण-भूमि उइगिरो के अधीन थी।

१० मोइनचुरा (७५६-७६० ई०)

बिगा खान के बाद तेगिन काले उइगुरो का कगान हुआ, जो पुराने अभिलेखो में मोइन-चुरा के नाम से प्रसिद्ध है। तुर्कों से सघर्ष अब भी चल रहा था, जिसका नेतृत्व अमरोशर कर रहा था। अमरोशर पहिले चीन की ओर से खित्तनो के साथ लडता रहा, फिर अपने ही स्वामी के विरुद्ध हो गया। इसीके मुह की कहावत है—"तुर्क पिता से पहिले माता का ख्याल करते है।' मोइनचुरा के प्रसिद्ध सेनापति क्वो-जी (नेस्तोरीय) के सहायक के तौरपर भी अमरोशर ने अच्छा काम किया था। इस समय पुराने यू-ची देश के स्वामी तिब्बती थे और चीन की दोनो राजधानिया

(छाङ-आन, लोयाङ)विद्रोहियों के हाथ में थी। राजधानियों को फिर थाङ-वंश के हाथ में देने में उइगुरों ने भारी मदद की। पहिले उन्हें पूर्वी राजधानी लो-याङ (आधुनिक होनान्-फू) को लूटने का भी अधिकार दे दिया गया, किन्तु पीछे वार्षिक दस हजार थान रेशम भेंट देकर पिण्ड छुड़ाया गया। ७५८ ई० में चीन दरबार में अब्बासी खलीफा और उइगुरों के दूतों का बराबर के स्थान के लिये झगड़ा हुआ। सम्राट् किसी को नाराज नही करना चाहता था, इसलिये उसने दोनों दूतों को भिन्न-भिन्न दरवाजों से एक ही साथ आस्थान-मंडप (दरबार हाल) में आने का प्रबन्ध किया और दूत के निर्बंध पर भी सम्राट् के सम्मान के लिये काउ-तु (दण्डवत्) करने की अनुमति नही दी।

१९०९ ई० में ऊपरी सेलिंगा में रुनी-लिपि में एक शिलालेख मिला, जो सेलिंगा के नाम से प्रसिद्ध है। इसमें उइगुर राजवंश के प्रथम खान मोइनचुरा का नाम आता है। अभिलेख में तुकराजवंश के पिछले खान आज़मिश (७४५ ई०)की मृत्यु से लेकर मोइनचुरा की मृत्यु (७५९ ई०) तक की बात लिखी है। इससे मालूम होता है, कि क्युल बिलगा (कुतुलुग बिगा) कगान के मरने के बाद मोइनचुरा गद्दीपर बैठा। "उसके बाद मेरे पिता का अन्त हुआ, तो काली (साधारण) जनता ने (मुझे नेतृत्व)प्रदान किया, किन्तु कुछ लोग ताइ-बिलगा-कुतुग के समर्थक हुये, और उन्होंने उसे कगान बनाया। मैने सेना एकत्रित की, उसके विरुद्ध अभियान किया और उसे जीत लिया। मैं जब विजयी हुआ, मेरे हाथ में नभ (दैव) ने राज दिया। किन्तु मैंने उसके पक्षपाती काली (साधारण) जनता (कारा इगित) को नही सताया और न उसके उर्दू, घर को जप्त किया। मैंने केवल उसे दण्डित किया और पद से हटा दिया।"

इस अभिलेख से पता लगता है, कि मोइनचुरा साधारण जनता की सहायता से सफल हुआ था, उसने अपने प्रतिद्वन्द्वी को दबाया। उइगुर घुमन्तूओं में जनतान्त्रिकता प्रचलित थी, जिसके कारण साधरण (काली) जनता अपने अधिकारों को इस्तेमाल करने का मौका पाती थी। यद्यपि इस जनतान्त्रिकता का यह अर्थ नही था, कि युद्धबंदियों को उनके यहां दास नही बनाया जाता था। घुमन्तू सरदारों और उनके लड़ाकू उर्दू की समृद्धि तो बहुत कुछ इन्हीं दासों के श्रमपर निर्भर थी।

मोइनचुरा के समय उइगुर-वंश ने तुर्कों का स्थान लिया। उसका पिता तुर्कों का एक उच्चअधिकारी (शाद) था। उसने पहिले तुर्कों के विरुद्ध बगावत की, और मोइनचुरा को हजारपति का स्थान दिया। तुर्कों के विरुद्ध हुई बगावत में ताकूज़ आगूज़ ने भी सहायता की। ताकूज़-आगूज़ के बारे में मोइनचुरा कहता है "मैंने अपने सहायक नौ आगूज़ जनता को एकत्रित और संघटित किया। मेरा पिता क्युल बिलगा कगान सेना के साथ गया और मुझे भी उसने हजार का नेता बनाकर दक्षिण-पूर्व में भेजा।" तुर्कों के मोगलियान खान के अभिलेख में हम पढ़ चुके हैं, कि उसने तागुज़-आगुज़ जनता को उनकी भूमि और पानी से निकालकर चीन की ओर भेज दिया, जैसा कि उसी अभिलेख की सैंतीसवीं पंक्ति में लिखा है "मैंने (उनकी सेना को) ध्वस्त कर दिया बहुत से उनमें मरे। सेलिंगाके नीचे उन्हें धकेल कर मैंने (अपना मोर्चा बनाया,) और उनके घरों को नष्ट कर दिया। उइगुर उर्दू में सौ परिवार रह गये थे। तुर्की जनता उस वक्त भूखी थी, तब मैंने उस सामान को अपने लोगों की सहायता देने के लिये जमा किया। जब मैं चौंतीस वर्ष का था, तब आगूज़ भागे और चीन की ओर गये।"

मोगलियान खान के इस अभिलेख से मालूम होता है, कि आगूज (उइगुर) लोगों पर तुर्कों ने बहुत अत्याचार किया था, जिसका बदला मोइनचुरा ने लिया। उसने तुर्कों के अंतिम कगान अजमिश को लडाई में हराकर बंदी बनाया और उसके कथानुसार उसी के साथ "तुर्क राजवंश उच्छिन्न हो गया।"

११ यितिकिन (७६०-७७७ ई०)

मोइनचुरा के बाद उसका दूसरा पुत्र यितिकिन गद्दी पर बैठा। चीन का थाङ्-वंश उस वक्त बडी बुरी अवस्था में था। चीन को इस अवस्था में डालने में भारी कारण तिब्बती थे। उस समय सिंहासन के भी कई दावेदार थे, जिनमें से एक का पक्ष लेकर यितिकिन भी शान्सी तक लूटने के लिए गया। लोगों ने कुछ दे-दिवाकर अपनी जान बचाई, किन्तु यह सब तब जबकि उसने एक दो दूत-मंडलों को कोड़े लगवा कर मरवा डाला, क्योंकि दूतने उइगुर खाकान और खातून (रानी) के सामने ठीक सम्मान प्रदर्शन नहीं किया। थाङ्-वंश उइगुरों की मदद चाहता था। उन्हीं की मदद से ही सम्राट् की सेना ने शान्सी के दक्षिण-पश्चिम कोने में लड़कर विद्रोहियों को हटाया। फिर सेना वहां से पूर्वी राजधानी लोथाङ् को लेने के लिये उधर बढ़ी, जहां एक दूसरे विद्रोही को सी-चाइ-ई (पेकिङ्) के समीप हराया। उइगुर सेना और ठ सौ मील तक खून के समुद्र में कूच करती गई। अपमान की तो बात ही किया, वह रास्ते में सभी लोगों को लूटती, लडकियों को पकडती, प्रलय की लीला मचाती आगे बढ़ती गई। तो भी विद्रोह और दमन के सहायक उइगुरों को बहुत भारी भेंट, उपाधि और जागीरें दी गईं।

७६५ ई० में यितिकिन के एक सेनापति बुक्कू ने बनावटी विद्रोह का बहाना बना सेना ले तिब्बतियों को लूटने और तरिम-उपत्यका से तिब्बतियों के शासन को खतम करने का प्रयत्न किया। लेकिन बुक्कू अपने संकल्प को पूरा करने से पहले ही मर गया। यितिकिन ने क्वो-ज़ी से यह कह कर निपटारा किया, कि सब अपराध बुक्कूका था, उसने मेरी आज्ञा के बिना ही यह अत्याचार किये। साथ ही यितिकिन ने सम्राट् को यह भी वचन दिया, कि यदि बुक्कू के पुत्र (जो कि खातून का भाई भी था) को क्षमादान दिया जाय, तो मैं तिब्बतियों पर आक्रमण करूंगा। खातून ७६८ में मरी। उसके बाद उसकी छोटी बहन चीनी अन्तःपुर से भेजी गई, जिसने बड़ी बहन का स्थान लिया। यह हम देख ही आये हैं, कि मध्यएसिया के सफल घुमन्तू सरदार चीन-सम्राट् का दामाद बनना अपना हक समझते थे। खातून खाकान की भेंट के लिये सम्राट् की ओर से अपने साथ बीस हजार थान रेशम लायी। उइगुर अपनी शक्ति को जानते थे, फिर शान दिखाने से क्यों बाज आते? चीन के सीमान्तों की मंडियों में वह अपने घोड़ों और दूसरे जानवरों को बेचने के लिये ले गये। उन्होंने प्रत्येक घोड़े का ४० थान रेशम मांगा। बीस से तीस हजार तक घोड़े वहां आ चुके थे। यह मांग बहुत ही अन्यायपूर्ण थी, लेकिन चीन मजबूर था। उसे दस हजार और घोड़े लेने पड़े। अभागे सम्राट् ताइ-चुङ् ने पहिले ही से उत्पीड़ित प्रजा से अत्याचार-पूर्वक और अधिक पैसा जमा करना पसंद नहीं करना चाहा, इसलिये वह सुलह करने के लिये मजबूर हुआ। लड़ाई का सबसे बड़ा कष्ट तो लोगों को ही भुगतना था। उइगुर चीनी प्रजा और उनके शासकों को बड़ी नीची निगाह से देखते थे। एक उइगुर ने किसी चीनी को मार डाला। उसे उइगुरों के डर के मारे मुकदमा चलाये बिना ही माफ कर दिया गया, जबकि उसके दूसरे

साथी उसे जबदस्ती छुडा ले गये । ७७८ ई० में उइगुरो ने फिर लूट-मार मचायी। उनके विरुद्ध आई सेनाको हार खाना पडी । नाहक में १० हजार आदमी जबह हुये। दूसरी सेना भेजी गई, जिसे कुछ सफलता मिली। इसी समय सम्राट् ताइ-चुङ (७६३ ८०) मर गया। उइगुर कगान के पास सूचना देने के लिये एक हिजडा दूत भेजा गया। उस समय कगान अपनी सारी सेना लिये महाप्राकार की ओर जा रहा था। उसने दूतके सलामको भी लेने की परवाह नही की। कगान के एक मत्री दुर्मोगो ने इसका विरोध किया, किन्तु उसकी राय का भी यितिकिन ने ठुकरा दिया। इस पर दुर्मोगो ने नाराज हाकर कगान, उसके मवधिया तथा दो हजार दूसरे अनुयायियो को मारकर "सयुक्त कुतुलग विगा कागान" के नाम मे अपने का उइगुरो का राजा घोपित किया।

१३ दुर्मोगो सयुक्त कुतुलुग (७७७-७९ ई०)

नये कगान (खाकान) को नये चीन-सम्राट् तें-चुग (७८०-८०५ ई०) ने वडी खुशी से तुरन्त दूत भेज कर कगान स्वीकार किया। उइगुरा के नौ कवीले थे, जिनमें मुख्य उइगुर कहे जानेवाले कगान के सवधी अपने को वडा समझते थे। कुछ समय बाद कितने ही उइगुर और नौ कवीलो के सरदार चीन राजधानी में एकत्रित की हुई सपत्ति को ले उत्तर में अपने देश को लौट रहे थे। उनकी ऊटो की जमात में बडी चतुराई से कुछ लूटी हुई लडकिया छिपाई गई थी। सीमान्त के अफसर ने वरछी से कोंचकर छल को पकड लिया। अपराधी नौ कवीलो ने कुछ करना अच्छा नही समझा, क्योकि उन्होने अभी सुना था, कि दो हजार अनुयायियोके साथ पहिले कगान को मार कर दुर्मोगो कगान बना है। उधर जाने पर उनपर भी आफत आती, इसलिये अपने सभी उइगुर सरदारो को मार कर उन्होने ताइ-चाऊ मे स्थिति सीमान्त राज्यपाल चाङ-क्वाङ-सेंग के पास जाकर चीन की अधीनता स्वीकार की। सरदारो का यही कसूर था, कि वह उनका ऐसा करना पसद नही करते थे। राज्यपाल ने इसे पसद किया और सम्राट् के पास स्वीकृति के लिये सिफारिश करते लिखा—इन नौ कवीलोके हट जानेपर उइगुरोकी शक्ति मजबूत नही रह जायगी। साथ ही उसने दुर्व्यवहारके साथ पेश आनेके लिये अपने एक अफसरको उइगुर-कगानके चाचाके पास भेजा। चचाने उसे मारनेके लिये कोडा उठाया। चीनी सेना घात लगाये तैयार थी। उसने उइगुरो और दूसरे तातारो (तुर्कों) को मार डाला, और एक लाख थान रेशम, कई हजार ऊट और घोडे अपने हाथमें कर लिये। अफसरने सम्राट्को सूचित किया—"कि उइगुरोने एक अफसरको कोडे मारे। उन्होने सएर (आधुनिक उलान्चेप, मगोलिया) की भूमि लेनी चाही, इसलिये मजबूरन हमको ऐसा करना पडा। अव मैं लौट आ रहा हूँ।" सम्राट्ने तुरन्त उस अफसरको बुला लिया और राजधानीमे वरावर रहनेवाले उइगुर-दूतके पास सब बात समझाने के लिये एक दूत भेजा।

खाकानके पास खाकान पदकी स्वीकृति ले जानेके लिये एक खास दूत भेजा गया, किन्तु वह दूसरे साल पहुच सका। खाकानने दूतको पचास दिन तक बिना देखे ही नजरवन्द रखा। इस बीच मत्रियासे सलाह होती रही। अन्तमे दुर्मोगाने सदेश भेजा—"मेरे सारे लोग तुम्हारी जान लेना चाहते हैं, मैं ही केवल अपवाद हूँ। लेकिन मेरा चचा और अब मर चुके हैं, इसलिए तुम्हें मारना केवल खूनसे खून धोना होगा, जो कि सदा भी मलिनता पैदा करनी होगी। मैं पानीसे खून धोना अच्छा समझता हूँ। मेरा

मेरे अफ़सरोंके छीने गये घोडे बीस लाख (थान रेशम) के मूल्यके बराबरके है। अच्छा है कि तुम इस क्षति-पूर्तिको तुरन्त भेज दो।" इस संदेशके साथ दुर्मोगोने चीनी दूतको उसके आदमियोंके साथ लौटा दिया। सम्राट्ने कडवी घूंट पी ली और चुपचाप क्षतिपूर्ति भेज दी।

तीन साल बाद (७८३ ई०) खाकानने चीन-सम्राट्से राजकन्या मांगी। सम्राट्ने इनकार करना चाहा, इस पर महामंत्रीने समझाया—"निश्चय ही परमभट्टारक हमारे राजदूतोंके कोडे लगानेके बादकी घटनाको ध्यानमें नही ला रहे है, जो कि युक्कूकी रानी (खातून) के सामने हुई थी?" आखिर राजकन्या भेजी गई। वह ऐसी सौभाग्यवती निकली, कि उसने चार खाकानोकी सेवा की। राजकन्याके आनेपर खाकानने कृतज्ञता प्रकाशित करते पश्चिमी तुर्कोंके
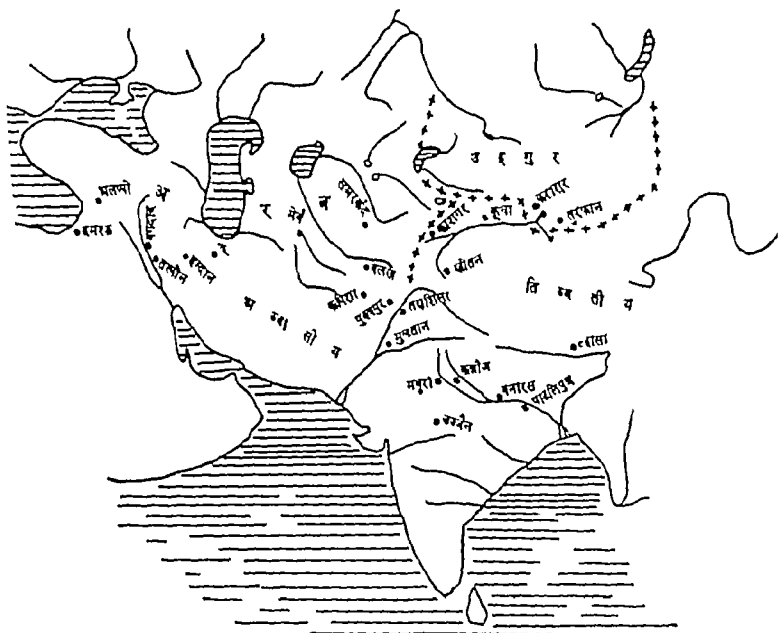
२४ उइगुर राज्य (७६० ई०)

विरुद्ध अपनी सेवायें अर्पित की। इस समय पश्चिमी तुर्कोंके कुछ कबीले उइगुरोंके साथ थे। इसी समय करलोग बालाशगून (सूजिया) में छाये हुए थे। दुर्मोगोने सम्राट्से आज्ञा लेकर अपनी जातिका नाम बदल हुइहू (उइगुर) रख दिया। कुछ दिनो बाद तातारोंमें मुसलमानोको उइगुर कहा जाने लगा, संभवत इसका कारण यही था कि उन्होने अपने यहा सर्वप्रथम उइगुरो को ही मुसलमानके रूपमें देखा। इस तरहकी घटना और जगहोपर भी हुई है, सर्वप्रथम ईसाई बने एक छोटेसे फ्रेंच कबीलेके नामसे देशका नाम फ्रान्स पड गया, फ्रेंकोकी प्रजा कैल्टो को फ्रेंक, फिर भारतमें अंग्रेजोको भी फिरंगी कहा जाने लगा। ७८९ ई० में दुर्मोगो मर गया।

४ तरस (७८९ –)

दुर्मोगोके वाद उसका भाई तरस कगान हुआ। ७५१-७६६ ई० म तिव्वती भी इतने शक्ति-सपन्न थे, कि उन्होने कासू से उरुमची और वकुल लेते हुए सारी तरिम-उपत्यकाको अपने हाथमे कर लिया। इस समय रेशमपथ उनक हाथमे चला गया और चीनसे पश्चिमका सवध उइगुर भूमिके रास्ते रह गया। उइगुर मनमानी कर वसूल करके काफिलोंको जाने देते। शादो तिव्वतियोके हाथमे चला गया था। उइगुरोने उरुमची लेनेकी वहुत कोशिश की, लेकिन सफल नही हुए। उनके पश्चिममे करलुग सप्तनदमें वलवान होते जा रहे थे, इसलिए उइगुराका दक्षिणकी ओर ही वढ़नेका रास्ता था।

५ आचो (-७९५ ई०)

तरसके मरने पर उसका भतीजा आचा गद्दीपर वैठा। करलोग इस वक्त वहुत सवल हो गये थे। चूनदी के ऊपरी भागम उनकी राजधानी इसिवालिक थी, जहा उनके यवगूकी गोचर-भूमि थी। आचो करलुगो ओर दक्षिणम तरिम-उपत्यकाके स्वामी तिव्वतियासे भी सघप करता रहा। ७९५ ई० में वह निस्सतान मरा।

६ कुतुलग (७९५-८०८ ई०)

हूणो, तद्वशज अवारो, तुर्को, उइगुरों तथा दूसरी घुमन्तू जातियामे राजशक्ति व्यक्तिमे नही उर्दू (जन) मे केन्द्रित हाती थी, इसलिए उनके कगान (खान) के मरने या पकडे जानेसे जातिका सवनाश नही हो सकता था। चीनने कितनी ही वार उन्हे उच्छिन्न सा करके छोडा, किन्तु वह चरी हुई दूवकी तरह कुछ ही समयमे फिर हरे-भरे हो जाते थे। आचोकी जगहपर उर्दूने उसके मत्री कुतुलुगको कगान चुना। इस कगानका चीनमें अच्छा स्वागत हुआ। इसके समय मानी-धर्मके प्रचारक राजधानी कराखोजामें आये। कगानने उनका अच्छा स्वागत किया। दो सौ वरस वाद भी राजधानीमें मानी-धमके मदिर मौजूद थे।

थी। ऐसी कन्यायें अधिकतर सम्राट्की पुत्री क्या सम्राट्-वंश की भी नही होती थी। इसके लिये सारे देशमे सुन्दर तरुणिया एकट्ठा करके रखी जाती थी। किंतु अबके राजकन्या असली सम्राट्-पुत्री थी। इसके लिये धन्यवाद देने और राजकन्याको लानेके लिये अभूतपूर्व साज-सज्जा के साथ दूत-मडल भेजा गया। इस स्वागत-मडलीमें कबीलोंके दो हजार सरदार सम्मिलित थे। वह अपने साथ बीस हजार घोडे एक हजार ऊट भेटके लिये लाये थे। इतनी बडी पल्टनको राजधानीमें आनेकी इजाजत नही मिली, केवल पाच सौ बराती पहुचे, बाकी ताइयुवान फू (शानसी) में रह गये। कगानको सम्राटने एक और भी ऊची पदवी 'महामहिम धार्मिक' की दी। खित्तन अभी इतने शक्तिशाली नही हुए थे। उनपर चीन और उइगुरो की सयुक्त शक्तिका दवाव पडा और अन्तमें उन्होने दोनोकी अधिराजता स्वीकार की। थोडे समय बाद फिर सीमान्तके लिये खित्तनोंमे झगडा हुआ, पर, सम्राट् को फिर उइगुर सेना की महगी मदद लेनेकी इच्छा नही हुई। सम्राट् और कगान दोनो ८२४ई० में मर गये—कगान हत्याने।

१९ भाई (८२४-३२ ई०)

मृतकगान के स्थानपर उसका छोटा भाई गद्दीपर बैठा जिसकी ८३२ ई० में हत्या हो गई।

२० भतीजा (८३२　　　　　)

निहत कगानकी जगह पर उसका भतीजा गद्दीपर बैठा, किन्तु एक उइगुर सरदारने शादो सरदार गिजिया (सत्यवादी) से मिलकर कगानपर हमला करना चाहा, इसपर कगान ने आत्म-हत्या कर ली। अब उइगुर राजवशके अतिम दिन आ गये थे, जल्दी जल्दी कगानो के मारे और बदलते जानेसे उसकी शक्ति बहुत निबल हो गई।

२१　　　(८४० ई०)

इस कगानका नाम और समय मालूम नही। सभवत वह ८४० के आसपास रहा। यह पिछले कगानका सबधी नही था। उइगुरोकी राजशक्ति शीघ्रतासे क्षीण होती जा रही थी, दूसरी ओर उस साल भारी हिमवर्षाके कारण उनके पशु मारे गये, फिर सूखा पडा, जिससे पशुओंके चरने के लिये काफी तृण नही रह गया। अन्तमें महामारीने अपना काम शुरू किया। उनका सबसे बडा धन घोडा, ऊट भेड-बकरिया-अधिकाश मर गये। इसी समय किर-गिजोंसे मिलकर एक उइगुर सरदारने सेना ले राजकीय उर्दू पर आक्रमण कर कगानको मार डाला और सारे उर्दू को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। चीन-राजकन्या (कगानकी खातून) विजेताके हाथमें पडी। एक देरे (राजकुमार) बचे-खुचे पन्द्रह कबीलोके साथ अपने पच्छिमी पडोसी करलुकोकी शरणमें चला गया, बाकीमेंसे कुछ तिब्बतियोके साथ मिल गये और कुछ करकुलके आस-पास बिखर गये। राजकीय उर्दूके पासवाले तेरह कबीले दक्षिणमें शानसीकी ओर चले गये और उन्होने देरे ओकेको अपना कगान चुना।

४ तरस (७८९ –)

दुर्मोगोके बाद उसका भाई तरस कगान हुआ। ७५१-७६६ ई० म तिब्बती भी इतन शक्ति-सपन्न थे, कि उन्होंने कासू से उरुमची और वकुल लेते हुए सारी तरिम-उपत्यकाको अपने हाथम कर लिया। इस समय रेशमपथ उनके हाथमें चला गया और चीनसे पश्चिमका मयध उइगुर भूमिके रास्ते रह गया। उइगुर मनमानी कर वसूल करके काफिलाको जाने देते। शादो तिब्बतियोंके हाथम चला गया था। उइगुराने उरुमची लेनेकी बहुत कोशिश की, लेकिन मफल नहीं हुए। उनके पश्चिममें करलुग सप्तनदमे बलवान होते जा रहे थे, इसलिए उइगुराका दक्षिणकी ओर ही बढ़नेका रास्ता था।

५ आचो (-७९५ ई०)

तरसके मरने पर उसका भतीजा आचो गद्दीपर बैठा। करलोग इस वक्त बहुत सबल हो गये थे। चूनदी के ऊपरी भागम उनकी राजधानी इसिबालिक थी, जहा उनके यवगूकी गोचर-भूमि थी। आचो करलुगो और दक्षिणमें तरिम-उपत्यकाके स्वामी तिब्बतियासे भी मघर्ष करता रहा। ७९५ ई० में वह निस्सतान मरा।

६ कुतुलग (७९५-८०८ ई०)

हूणो, तद्वशज अवारो, तुर्कों, उइगुरों तथा दूसरी घुमन्तू जातियोंमें राजशक्ति व्यक्तिमें नहीं उर्दू (जन) मे केन्द्रित होती थी, इसलिए उनके कगान (खान) के मरने या पकडे जानेसे जातिका सवनाश नहीं हो सकता था। चीनने कितनी ही बार उन्हें उच्छिन्न सा करके छोडा, किन्तु वह चरी हुई दूबकी तरह कुछ ही समयमें फिर हरे-भरे हो जाते थे। आचोकी जगहपर उर्दूने उसके मन्त्री कुतुलुगको कगान चुना। इस कगानका चीनमे अच्छा स्वागत हुआ। इसके समय मानी धमके प्रचारक राजधानी कराखोजामें आये। कगानने उनका अच्छा स्वागत किया। दो सौ वरस बाद भी राजधानीमें मानी-धमके मदिर मौजूद थे।

७ काउ-साङ (८०८-८२१ ई०)

८०८ ई० म उइगुरोका यह नया खाकान था, जिसने चीनसे व्याहके लिये राजकन्या मागी। चीन-दरबार ने सोचा, इस तरहके सबधसे हमारे लाभ की बात यह होगी, कि उइगुरो और तिब्बतियोका झगडा चलता रहेगा, और तिब्बती हमारी तरफ मुह उठाकर नहीं देख सकेंगे। लेकिन इस सलाहको सम्राट् स्यान्-चुङने नहीं माना। ८२१ में राजकन्याके लिये और दबाव पडा, इसपर नये सम्राट् मू-चुङ (८२१-२५ ई०) ने राजकन्या भेजी, किन्तु तबतक काउ-साङ मर चुका था, इसलिए यह भेट उसके उत्तराधिकारीको मिली।

८ गुदुलग जिगिन (८२१-२४ ई०)

घुमन्तुओको हाथमें रखनेके लिये जहा चीन-दरबार उनके पास रेशमके थान और सोना भेजता था, वहा राजकन्या देकर दामाद बनाना भी उसकी एक पुरानी नीति

थी। ऐसी कन्यायें अधिकतर सम्राट्की पुत्री क्या सम्राट्-वंश की भी नहीं होती थी। इसके लिये सारे देशसे सुन्दर तरुणिया एकट्ठा करके रखी जाती थीं। किंतु अबकि राजकन्या असली सम्राट-पुत्री थी। इसके लिये धन्यवाद देने और राजकन्याको लानेके लिये अभूतपूर्व साज-सज्जा के साथ दूत-मडल भेजा गया। इस स्वागत-मडलीमें कबीलोंके दो हजार सरदार सम्मिलित थे। वह अपने साथ बीस हजार घोडे एक हजार ऊंट भेटके लिये लाये थे। इतनी बडी पल्टनको राजधानीमें आनेकी इजाजत नही मिली केवल पाच सौ बराती पहुचे बाकी ताइयुवान फू (शानसी) मे रह गये। कगानको सम्राटने एक और भी ऊंची पदवी 'महामहिम धार्मिक' की दी। खित्तन अभी इतने शक्तिशाली नहीं हुए थे। उनपर चीन और उइगुरो की संयुक्त शक्तिका दबाव पडा और अन्तमें उन्होंने दोनोकी अधिराजता स्वीकार की। थोडे समय बाद फिर सीमान्तके लिये खित्तनोंसे झगडा हुआ, पर, सम्राट् को फिर उइगुर सेना की महगी मदद लेनेकी इच्छा नही हुई। सम्राट् और कगान दोनो ८२४ई० मे मर गये—कगान हत्यासे।

१९ भाई (८२४-३२ ई०)

मृतकगान के स्थानपर उसका छोटा भाई गद्दीपर बैठा जिसकी ८३२ ई० में हत्या हो गई।

२० भतीजा (८३२)

निहत कगानकी जगह पर उसका भतीजा गद्दीपर बैठा, किन्तु एक उइगुर सरदारने शादो सरदार गिजिया (सत्यवादी) से मिलकर कगानपर हमला करना चाहा, इसपर कगान ने आत्म-हत्या कर ली। अब उइगुर राजवंशके अंतिम दिन आ गये थे, जल्दी जल्दी कगानो के मारे और बदलते जानेसे उसकी शक्ति बहुत निर्बल हो गई।

२१ (८४० ई०)

इस कगानका नाम और समय मालूम नही। संभवत वह ८४० के आसपास रहा। यह पिछले कगानका संबंधी नही था। उइगुरोकी राजशक्ति शीघ्रतासे क्षीण होती जा रही थी, दूसरी ओर उस साल भारी हिमवर्षाके कारण उनके पशु मारे गये, फिर सूखा पडा, जिससे पशुओंके चरने के लिये काफी तृण नही रह गया। अन्तमें महामारीने अपना काम शुरू किया। उनका सबसे बडा धन घोडा, ऊंट भेड-बकरिया-अधिकाश मर गये। इसी समय किर-गिजोंसे मिलकर एक उइगुर सरदारने सेना ले राजकीय उर्दू पर आक्रमण कर कगानको मार डाला और सारे उर्दू को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। चीन-राजकन्या (कगानकी खातून) विजेताके हाथमें पडी। एक देरे (राजकुमार) बचे-खुचे पन्द्रह कबीलोके साथ अपने पच्छिमी पडोसी करलुकोंकी शरणमें चला गया, बाकीमेंसे कुछ तिब्बतियोंके साथ मिल गये और कुछ करकुलके आस-पास बिखर गये। राजकीय उर्दूके पासवाले तेरह कबीले दक्षिणमें शानसीकी ओर चले गये और उन्होंने देरे ओकेको अपना कगान चुना।

२२. ओके

उइगुरोंके इधर-उधर भटकनेका समय आगया विजेताके हाथमें आई चीन कुमारीको किरगिज चीन भेजना चाहते थे। इसी बीच ओकेने अवसर पा राजकुमारीको पकडनेमें सफलता पाई। इस सफलताके वाद आगे वढते वह कुकुखाते (तिया-न्ते अथवा क्वा ह्वाचङ वतमान तेंदुस) के पास गया, लेकिन उसका आक्रमण विफल गया। मन्त्रियोंकी इस सलाहको सम्राट्ने मान लिया कि किर्गिजोंको प्रोत्साहन न दिया जाय, और उसकी जगह जाचके लिये आयोग भेजा जाय। राजकुमारीने भी सदेश भेजा—चूँकि अव ओके कगान है,इसलिए मैं उसकी खातून (रानी) होना चाहती हूँ। चीनियोंमें शायद इसी समय स्त्रियोंके पैर वाधनेका रवाज हुआ, जिसमें चीनी स्त्रियोंको "तुर्कोंके साथ भागने" का मौका न मिले। सम्राट्ने नये कगानको अपना दामाद माना, फिर उसके उर्दूकी तकलीफ दूर करना भी आवश्यक था, इसलिये उसके पास पाच-हजार टन अनाज भेजा। ओकेने प्राथना की—हमें ताइ चू (तदुस और पेकिंगके वीच) में रहनेकी आज्ञा दी जाय, जिसे स्वीकार नही किया गया। उइगुरोंके कितने ही कवीले खित्तन कवीलोंमें जाके मिल गये। ओकेने अपने उर्दूको ता-तुग फूके उत्तरी पवतोंमें रक्खा। अव भी उसके पास लाख आदमीसे कम नही थे। अपनी गुजर-वसरके लिये कगानने सम्राटसे तदुस नगर उधारके तौर पर मागा। इन्कार करनेपर उसने सारे प्रदेशमें लूटमार मचा दी। लेकिन उइगुरोंमें अव पूरी फूट थी। एक उइगुर सरदार ऊमुजने ओकेको दवानेमें चीनकी सहायता की। रातको कगानके उर्दूपर आक्रमण कर तीस हजार वदी वनाये, जिसमें चीनी राजकुमारी भी थी। ओके ने निकल भागने में सफल हो जाकर करा-किरगिज कवीलेंमें शरण ली, जिसने रिश्वतके लोभमें उसे मार डाला।

२३ ओ-न्येयन (८४७)

यह ओकेके स्थानपर नया कगान हुआ, किन्तु उसके उर्दूमें सिर्फ पाच हजार लोग थे। घेई (खेली) ने धोखा दे उसे अपना कगान वनाना चाहा, लेकिन ८४७ ई० में चीनने घेइयाका तहस-नहस कर दिया। वचे-खुचे घेई अपने वधु खित्तनोंके पास चले गये, जो एक नये साम्राज्यकी नीव डाल रहे थे। अव इस प्रदेशमें वहुत कम उइगुर थे, उच्च वर्गके केवल तीन सौ परिवार वचे हुए थे। उन्होंने जाकर शिरवी कवीलेके पास शरण ली। सम्राट्ने शिरवियोंसे कगानको समर्पण करनेकी माग की, इसलिये कगान अपने लोगोंको उनके भागपर छोड स्वय अपनी खातून, पुत्र और दूसरे नौ सवारोंके साथ भाग कर करलुकोंमें चला गया। शिरवी वाकी वचे उइगुरोंका अपना दास वनाना चाहते थे, लेकिन किरगिज दावेदार सत्तर हजार सेना लेकर चढ आये और उइगुरोंको पकडकर गोवीके उत्तरकी ओर ले गये। वहाँसे वह दूसरे छोटे-मोटे कवीलोंकी लूट-मारसे जीते, छोटी-छोटी टुकडियोंमें वँट अन्तमें अपने कवीलेकी दूसरी शाखामें जा मिले, जो उस समय तुर्कोंकी पुरानी जन्मभूमि (खाङ-चाउ-फू) के आसपास रहती थी।

§४. अन्तिम उइगुर

पश्चिमी तुर्क जव छिन्न-भिन्न हो गये, तो वूक्निनके उर्दूके कुछ लोग भागकर उइगुरोंमें जा मिले। जव किरगिजोंने उइगुरोंका ध्वस्त किया, तो इन्होंने वरकुल के आसपासकी भूमिमें

जाकर शरण ली। यह कुछ समय हरामर (कराशर) में रहे। फिर अपने दर्गे (राजकुमार) के साथ फा-ते-ले ((खाङ्ग चाउ) पहुँचे। इनकी हीन अवस्था देखकर सम्राट् स्वेन-चुङ्ग (८४७-६०) को दया आई और उसने इनके सरदारको कगानकी उपाधि देनेके लिये दूत भेजा।

स्वेन्-चुङ्गके उत्तराधिकारी ई-चुग (८६०-७४ ई०) के समय यह पश्चिमी उइगुर इतने मजबूत हो गये, कि ८६६ ई० मे इनके सेनापति पुक्कूने उइगुर तथा दूसरे कबीलोंको मना ले तिब्बतियोको कान्सू और कूचा आदि नगरोको छोडकर भागनेके लिये मजबूर किया और तिब्बती राज्यपाल (क-लोन) के सिरको काटकर सम्राट्के पास चीन भेज दिया। लेकिन अब थाङ्ग-वश भी समाप्तिपर आया था, और ९०४ ई० मे उसकी जगह पाच राजवश लेनेवाले थे। यद्यपि ८६६ ईसवीमे कूचा और उसके आसपासके नगरोमे तिब्बती भगा दिये गये किन्तु काकानोर प्रदेशमें वह कई सदिया पीछे तक रहे।

८६६ की इस भारी विजय—जिसमे उन्होने दीर्घकालसे तरिम-उपत्यकाके शासक तिब्बतियोको हराकर भगाया—के बाद इतिहासमे उइगुरोका नाम बहुत कम सुनाई देता है। नवी सदीके अंतके चीनी अभिलेखोसे पता लगता है, कि वह इस सदीके अन्तमे सैनिक सेवा करते थे, कभी कभी चीनके सीमान्ती नगरोमे घोडो और बहुमूल्य रत्नोको चाय और रेशम आदिसे बदलनेके लिये आते थे। पचवशी कालमे वह कर भेट देनेके लिये दरबारमे आते थे और चीनको मामा कहते, क्योकि थाङ्ग-वशने अपनी कई कन्याये उइगुर कगानोको दी थी। नवी शताब्दीमें उइगुरोका प्रभुत्व तुरफानसे ह्वाङ्-होके मुडावके पास तक था, किन्तु अब इनके दो केन्द्र थे—(१) पीयाङ्ग जो कि तुर्फानके पास पूरबमे था और (२) खाङ्ग-चाउ, जो कोकनोरके उत्तरमें था। खाङ्चाउवाले नजदीक पडते थे, इसलिये वह चीनमें अधिक पहुचते थे। चीनी अभिलेखोसे पता लगता है, कि ९११ ई० मे उइगुरोने दरबारमे भेट भेजी थी। फिर एक उइगुर सरदारने भेट भेजी, जिसका चीनी नाम वाङ्ग-चेङ्ग-मे था। उसे कगानकी पदवी देनेके लिये चीनसे दूत भेजा गया, किन्तु पहुँचनेके समय तक वह मर चुका था और उसकी जगह उसका छोटा भाई चाङ्ग-नेगिन शासन कर रहा था।

आतुर्युक (९२६ ई०)

९२६ ई० में आतुर्युकको कगान देखा जाता है। ९२७ ई० मे एक दूसरा स्थानापन्न कगान वाङ्ग-चेन्-यू ने अपनी भेंट भेजी, जिसे माउ-किरे (द्वितीय शादो सम्राट् मागचुग ९२६) ने कगानकी उपाधि प्रदान की। यह स्थानापन्न ९६० ई० तक शासन करता रहा। ९६२ मे उसके पुत्रने भेंट भेजी थी। यह कगान जिस प्रदेशमे रहते थे, उसके बारेमें चीनियोने लिखा है, कि वहा बहुमूल्य पाषाण, जगली घोडे, एक कोहानी ऊँट, हरिन, सोहागा, हीरा, कपास, घोडेके चमडे, अनाज में गेहू, जौ, पीली भाग, (सोम) प्याज आदि होता है। वह लोग खेतकी जोताई ऊँटसे करते है। खान ऊँचे महलमें रहता है। उसकी पत्नीको देवी (दिव्य कुमारी) कहा जाता है और मन्त्रीका मेयलुक। दरबारमें सिर नगा करके जाना पडता है—हूणोमें भी यह रवाज था। इनकी स्त्रिया सिरके ऊपर पाच-छ इचका जूडा चादपर बाध लाल रेशमी थैलेमें समेटकर रखती है। विवाहिता स्त्रिया सिरपर नमदेकी टोपी लगाती है।

९६४, ९६५ में उइगुरोने चीन (सुङ्ग) दरबारमें भेंटके साथ दूत भेजा था। भेटमें रत्न, अम्बर, चमरीकी पूछ और समूर थे।

६७७ ई० मे उइगुर कगानका राज्य कोकोनार आर लोवनोर सरोवरोके उत्तरमे तुर्फानसे खङ-पा-चाउ तक था अर्थात् यूचियोकी पुरानी भूमि अब उइगुरोके हाथमे थी। चीन सम्राट्ने इसी समय हुक्म दिया था, कि हमारे दामाद उइगुर खाकान खान्-सा-चाउका पता भेजना चाहिये, जिसमे वह अच्छे घोडो और बहुमूल्य रत्नोको हमारे उपयोगके लिये भेजे।

६८८ ई० में कुछ उइगुर परिवार राजाको मार उच्च अफसरोके साथ आलाशान पवतके पास बसनेके लिये आये, किन्तु उनके पास उर्दू नही था।

६९६ ई० मे खान्-चान कगानने हिया के तगूतो(अमदुओ) के विरुद्ध लडनेके लिये अपनी सेवायें चीन-सम्राट्को पेश की। तोवा (मियन्पी) राजवशकी सतान हिया-राजवशने ८९० मे तव तक अपने स्वतत्र अस्तित्वको कायम रखा, जब तक कि चिङ्गिस खान्ने उसे १३ वी सदीके आरम्भमे वडी क्रूरताके साथ नष्ट नहीं कर दिया। ९९६ ई० के थोडे ही बाद हियाने खान्-चान्को खतम कर ले लिया।

१००१ ई० में उइगुर खाकानकी भट चीन आयी। उसके दूतने कहा था—हमारा राज्य ह्वाङ-होके पश्चिममे सुइ-साङ (इस्सिकुल मे पूरबके हिमपवत) तक अवस्थित है—अर्थात् पश्चिममे सुइ-सानसे पूरबमे ह्वाङ-हो तक उस वक्त उइगुर शासन करते थे, किन्तु उसका यह अर्थ नही कि इस विशाल प्रदेशमे सैकडा छोटी-छोटी अधीन रियासते नही थीं। शायद यह कगान बोगरा खान हारून रहा हो। उइगुरो, करलुको और कराखानियोका सबध ऐसा था, जिसके कारण कोई भी अपनेको उइगुर या गूज कह सकता था। बोगरा खानकी राजधानी बलाशागुन(सूजिया)थी। वह काशगरसे चीनके सीमान्त तक शासन करता था। १००४म भी चीन में भेंट पहुची थी। १००७ में भेट लेकर जो दूत-मडल गया था, उसके साथ एक बौद्ध भिक्षु भी था, जो चीन राजधानीमें सम्राट्की दीर्घायु-प्रार्थनाके लिये एक बौद्ध मदिर बनाना चाहता था। लेकिन आरम्भिक सुङ सम्राट् बौद्ध धमको प्रोत्साहन नही देना चाहते थे, इसलिये स्वीकृति नही मिली। इस समय सुङ-वशके उत्तरमें मगोलिया, मचूरिया और उत्तर-पूर्वी चीन लिये हुए खित्तनोका शक्तिशाली साम्राज्य कायम था। इसी वशके कारण चीनका दूसरा नाम खिताई पडा। खित्तनके लेखानुसार १००१ ई० में एक भारतीय भिक्षु फाङ-साङ(सस्कृत-भिक्षु)—जो एक प्रसिद्ध वैद्य भी था—को उइगुरोने खित्तन दरवारमे भेजा था। १००८ ई० में फिर भेंट आई और १०११ ई० की भेंट भेजते हुए उइगुरोने शानसी प्रदेशके आधुनिक ऊ-चाउ-फू(नगर) म एक बौद्ध मदिर बनानेकी प्रार्थना की थी। इससे पता लगता है कि ग्यारहवी शताब्दीके आरम्भमे पूर्वी मध्य-एसियामे बौद्धधम प्रभाव रखता था। १०१८ और १०२१ में भी उइगुर चीन दरवारमे भेंट भेजते रहते थे। सभवत ग्यारहवी सदीमें भी वह घुमन्तू जीवन बिताते थे। बारहवी सदीमें वह स्थायी निवासी बनकर रहने लगे और शानसी प्रदेश तथा आसपासमें व्यापार करनेके लिये अपना वणिक्-मडल भेजते थे। उन्हे तगूतो(अमदुओ) के राज्यमे गुजरना पडता था। खित्तन सम्राट् कचाऊ, शाचाऊ, हाचाऊ और असाला (अरसलन) के निवासी उइगुरोको अपनी प्रजा कहते थे।

स्रोत-ग्रन्थ

१ ओचेर्क इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्कवो नराद (ब० व० बरताल्द, १९२४)

२ ऋतिक० सोओव् श्चेनिये

३ ओचेक इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व०व० वरताल्द, वेर्नी १८६८)

4 A thousand years of Tatars (E H Parker, Shanghai 1895)

5 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)

6 Tibetan Documents concerning Chinese Turkistan, (F W Thomes J R A S 1934)

7 History of Bokhara (A Vambery)

अध्याय २

करलुक (७३६-६४० ई०)

१ करलुक (करलोग) जाति

करलुकका अर्थ है हिम-पुरुष[1] या हिमालका ,राजा। यह भी आगूज़ोके पांच तुर्कोंमेंसे एक तथा उइगुरोकी तीसरी शाखा थे,जो अल्ताई और त्यान्शान्के हिम-पर्वतोंमें रहनेके कारण इस नामसे मशहूर हुये। इनकी राजधानी अल्मालिक थी। ७६६ ई० में करलुकोंने सुयावका अपने हाथमें कर लिया। करलुकों और उनकी ज्येष्ठ शाखा उइगुरोंमें संघर्ष चलता रहता था,यह हम बतला चुके हैं। पश्चिमी तुर्क साम्राज्यके पतनके बाद तुर्कवंश छिन्न-भिन्न हो गया। इसी वक्त तुर्कोंके अलग अलग कबीलोंने अलग-अलग नाम स्वीकार किये, जिन्हें ही मोगिल्यानके शिलालेख में नौ आगूज़ कहा गया है। चीनके अभिलेखोंमें पश्चिमी तुर्कोंकी दस शाखायें बतलायी गई है। शाता वह तुर्क थे,जो पथरीली भूमिमें रहते थे। एक शाखाने पूर्वी-तुर्किस्तानमें स्थान ग्रहण किया था, इनको चीनियोंने तुर्क या दूसरे नामसे याद किया है, और इन्हीको अरब-इतिहासकार ताकुज़-आगूज़ कहते हैं। इनकी एक शाखाने दक्षिण में अपना राज्य स्थापित किया,जिसका केन्द्र निम्न-सिर-दरिया तक था। आज भी किरगिज़ोंमें याफेतके पुत्र त्युककी पौराणिक कथा मशहूर हैं, जो इस्सिकुलके किनारे रहता था। सप्तनदमें त्युर्गिश शाखाके दो वंश तख्ती और आज़ी रहते थे।

८ वी सदीके उत्तरार्धमें सप्तनदमें करलुकोंकी प्रधानता थी, जो कि अल्ताई की हिम-पर्वतमालासे यहां आये थे। ७६६ ई० में इन्होंने सुयावको लेकर वहां अपनी एक राजधानी बनाई। करलुकोंने अपने राजाकी उपाधि जबगू स्वीकार की थी, जो ही ओर्खोनके अभिलेखका यबगू है।

जिस वक्त तुर्क साम्राज्यका पतन हुआ, उस समय पूर्वमें चीनी और पश्चिम-दक्षिणमें अरब उसके ऊपर नजर गड़ाये हुए थे, किन्तु तुर्कोंका साम्राज्य इन दोनोंके हाथमें न जाकर तुर्क जातिके ही हाथमें रहा। इनके पूर्वी भागपर उइगुरोंका अधिकार हुआ,जिनके बारेमें हम अभी कह आये हैं,और पश्चिमी भाग करलुकोंके हाथ में चला गया। चीन और अरबके बीच तुर्कोंकी भूमिके लिये तलस नदीके तटपर जुलाई ७५१ ई० में भारी लड़ाई हुई। अरब सेनापति जियाद सालेह-पुत्रने तराज तक धावा मारा, जो कि अतलस (तलस)नदीके बायें तटपर था। चीनी सेनापति

[1] A thousand years of Tatar (Parker)

हाउ-स्यान्-चीनें तलस पर्वतपर अपनी छावनी डाली थी—आजकल तलस नदीके पुराने नगरों ध्वस किरगिजिस्तान गणराज्यमें पाये जाते हैं। चीनियोंकी हार हुई, जिसके कारण जहा चीनवा उभय मध्य-एसिया पर अधिकार न हो पाया, वहा अरबोंकी शक्ति भी इतनी क्षीण हो गई, कि वह तलससे आगे नही बढ सके। दोनोंके झगडेमे करलुक अपना राज्य स्थापित करनेमे सफल हुए। हा, इतना जरूर हुआ कि अरबोंने फरगाना-उपत्यकासे करलुकोंको भगा दिया। सोग्दियोंका व्यापारिक प्रभाव तब भी अक्षुण्ण रहा। उन्होंने पहिले से ही चीनके पश्चिमी सीमान्त से सारे रेशमपथपर अपना अधिकार जमा रखा था। जगह जगह उनके अपने उपनिवेश थे। तुर्क, उइगुर या करलुक लोग अरबोंकी तरह धर्मान्धताके शिकार नहीं थे, इसलिये उनके यहा सोग्दी लोग, जर्थुस्ती, मानी या दूसरे धर्मको स्वतन्त्रतापूर्वक मान सकते थे। मुसलमान प्रचारक भी वहा पहुचते थे। दसवी शताब्दीके एक फारसी भूगोलज्ञ के कथनानुसार कास्तिय जोत से उत्तरमे अवस्थित बेकलिग (बेकलीलिग) सोग्दियोंका एक अच्छा नगर था, जिसे सोग्दी भाषामें सेमिकना कहते थे।[1]

करलुक जबगुओंके नाम अधिकतर मालूम नहीं है। चीनके साथ इनका कोई सबध नही था। अरबोंसे प्रतिद्वद्विता जरूर थी, किन्तु वह स्थानीय शासक को ही करलुकोंका राजा मान लेते थे।

२ धर्म

करलुक भूमिमे करलुक तुर्कोंके अतिरिक्त सोग्दी भी रहते थे। वूसुन और शकोंके अवशेष सोग्दियोंको अपना नजदीकी समझकर उन्हींमें मिल गये और अब सभी सोग्दी नामसे प्रसिद्ध थे। सोग्दियोंके अतिरिक्त घुमन्तू करलुक और दूसरे तुर्क भी उनके राज्यमें रहते थे। तुर्कोंमें बौद्ध अधिक थे, पर नेस्तोरियों और मानी धर्मानुयायियोंकी भी कमी नहीं थी। उनके बहुतसे नगरोंमें ईसाइयों (नेस्तोरियों) का होना मुसलिम लेखकोंके ग्रन्थोंमे भी पाया जाता है। इस्सिकुलके पास जिकिलया घुमन्तू रहते थे, जिनमें ईसाई धर्मके अनुयायी काफी थे। वस्तुत इस्लामके पहुचनेसे पहिले इन जातियोंमें अपनी जातीयता और धर्मको एक नही किया गया था। मुसलमान लेखकोंके कहनेसे पता लगता है, कि तत्कालीन करलुक जबगूने खलीफा मेहदी (७७५-८५ ई०) के पास पहिले-पहल इस्लाम स्वीकार किया, लेकिन यह सदिग्ध है। तो भी दसवी सदीमें तलस नदीसे पूर्व अर्थात् करलुकोंकी भूमिमें जामामस्जिदें मौजूद थीं। करलुक पहिले पशुपाल, शिकारी घुमन्तू थे, अब कुछ खेती-किसानी भी करने लगे थे। दसवी सदीमे ताकुज-आगुजोंकी शाखाओंमें करलुक बड़े शक्तिशाली थे। उस समय उनके कगान (यबगू) सरदार तथा लोग अधिकतर मानीका धर्म मानते थे, किन्तु उनके भीतर नेस्तोरी, बौद्ध और मुसलमान भी थे। करलुकोंका नगर बसखान पीछे दसवी सदीमें ताकुज-आगुजो (कराखानियों) के हाथमें चला गया। उनके अतिरिक्त पेन्चुल (आधुनिक आकसू) भी करलुकोंके हाथमें, पीछे कमजोर होनेपर कराखानियोंके अधीन, पीछे इसे किरगिजोंने ले लिया। यह याद रखना

[1] ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्ये (व० बरतोल्द)

चाहिये कि इससे पहिले किरगिज़ ऊपरी एनेसेइ उपत्यकामे रहते थे, जहा आठवी सदीम भी उनके पूवज घुमन्तुओका निवास था। दसवी सदीमें हर तीसरे साल इनका कारवा रेशमके व्यापारके लिये कूचासे होकर गुजरता था। यही किरगिज, अरव, करलुक और तिब्वती व्यापारी इकट्ठा होते थे। आखिरमे किरगिज़ ताकुज़-आगुजोके विरोधी वन करलुकोंके साथ हो गये, जिसके फलस्वरूप सप्तनदका एक भाग किरगिज़ोको मिल गया। यदि कराखानियोंके समय किरगिज़ सप्तनदमें आये, तो दसवी या ग्यारहवी सदीमे उन्होने इस्लाम धर्मको स्वीकार कर लिया था, जिसके अनुयायी आज भी उनके वशज कजाक और किरगिज़ हैं। लेकिन सोलहवी सदीमें भी उनके भीतर काफिरोका होना मुस्लिम लेखक वतलाते हैं।

अन्तिम समयमें करलुकोका केन्द्र चू-उपत्यका ९४० ईसवी के आस-पास उनके दुश्मन "काफिर तुर्कों" (कराखानियो) के हाथमें चला गया, जिनका ग्यारहवी और वारहवी सदीमें वडा प्रभाव था। चू-उपत्यकामे वलाशागून (सूजिया) इनकी राजधानी रही।

३ करलुकोके नगर

करलुक शासक यद्यपि अधिकतर घुमन्तू जीवन विताते थे, किन्तु उनके लिये आमदनीके और भी रास्ते खुले हुए थे, विशेषकर वणिक्-पथपर बसे उनके नगर वडे ही महत्वके थे। चीनसे पश्चिमी एसिया और यूरोपकी ओर जानेवाला एक वणिक्-पथ सप्तनद होकर जाता था, जिसके ऊपर निम्न नगर करलुकोंके अधीन थे।

जुल्—यह आधुनिक पिसपकके आस-पास था। रेशम-पथ यहा तराज़ (तलश, जिला औलियाअता) और आसीकित (नमगान जिला) होते कराकुल डाडेसे आता था। चुल या जूल तुर्की भाषामें मरुभूमि को कहते हैं।

नेवाकित्—यह चू-उपत्यकाका सवसे वडा व्यापारिक नगर था। यहासे एक रास्ता जिल-अरिक होता इस्सिकुलके तटपर पहुचता था, और दूसरा उत्तर की ओर स्याव जाता था। जुलसे नेवाकित पन्द्रह फरमख[1] था। नेवाकित् वहा था, जहासे रास्ता चू-नदीके वायें किनारे हो करावुलकको जाता था। इस्सिकुल सरोवरके किनारे करलुक लोगोके निवास और गोचर-भूमिया थी।

किरमिनकित् (कुवैरकित्)—नेवाकित् और दर्रेके वीच यह वडा व्यापारिक नगर था। यहा करलुकोका लवान कवीला रहता था, जिसके शासककी उपाधि कु-तेगिन-लवान और दर्रेका नाम जुल (सकीर्ण दर्रा) था।

यार—जुलसे वारह फर्सख (प्राय सत्तर मील) दक्षिणम यह नगर था, जहा पर तीन हजार करलुक सैनिक रहते थे। यही शायद इस्सिकुलके दक्षिण तट पर जिकिल के शासक तैवसनकी राजधानी अवस्थित थी।

तोन्—यारसे पाच फर्सख (प्राय तीस मील) इसी नामकी नदीपर यह नगर अवस्थित था।

वरसखान—तोन्से तीन दिनके रास्तेपर यह वडा नगर था। इन दोनो नगरोंके बीचमें जिकिल

---

[1]फरमख = ६ वस्त = ६ मील = १६०० हाथ (?)

कवीलेके लोगोके तबू होते थे। इस नगरका नाम आज भी वरसकोन नदीके नामम सुरक्षित है। इस नगर के आस-पास चार वडे और पाच छोटे गाव थे। नगरमे ६ हजार सैनिक रहा करते थे। यहाके शासककी उपाधि मनक (तेविन) वरसखान थी। दसवी शताब्दीके अरव भूगोलज्ञोके अनुसार वरसखानका मनक करलुक-वशी था, किन्तु पीछे यह ताकुज-आगुजोके पक्ष म हो गया। पूर्वी और पश्चिमी तुर्किस्तानके वाणिज्यके लिये इस नगरका वडा महत्व था। उस खानके पुत्रका नाम भी वरसखान था। उजगेद (फरगाना) से वणिक्-पथ यासी (जासी) जोत पार हो अरपा और करा-कोइन, अतवास तथा नरिनकी उपत्यकाओमे होते यहा आता था। नेवाकत्से सुयाव होते हुए भी एक रास्ता यहा पहुचता था।

अतवास—कराकोइन और अतवास नदियोके सगमके पास पहाडम यह नगर अवस्थित था। आजकल इसे कोशोइ-कुरगान कहते है। यह फरगाना, वरसखान और पूर्वी तुर्किस्तानकी सीमासे छ दिनके रास्तेपर था। तिव्वती शासित इलाकेका रास्ता तुरुगर्त जोत पार होकर जाता था। अतवास और वरसखानके वीच कोई वस्ती नही थी। सप्तनदका दक्षिणी भाग ताकुज-आगुजोकी लडाईमें यागमा लोगोके हाथोमे चला गया, जिनके ही हाथमे काशगर भी था। करलुक और यागमा लोगोकी सीमा नरिन नदी थी।

सुयाव—यह करलुक-भूमिका वडा ही महत्वपूण नगर चू-नदीसे उत्तर नेवाकत्से तीन फरसख (१८ मील) पर अवस्थित, आजकलका करावुलक है। यहाका शासक करलुक कगानका भाई होता था, जिसकी पदवी यानाल्शा थी। उसके पास वीस हजार सैनिक थे।

पजीकत्—सुयावके रास्तेपर नेवाकत्से एक फरसख (६ मील) पर यह नगर अवस्थित था। यहा आठ हजार करलुक सैनिक रहते थे।

वैकलिग—इसे वैकलीलिग भी कहते हैं। कस्तिक जोतसे उतरकर यहा पहुचते थे। यहाके शासक की उपाधि वदान-शगु, दूसरी उपाधि यनल-तैमिना भी थी। इसके पास तीन हजार सैनिक और नगरके भी सात हजार सैनिक रहते थे। वणिक्-सार्थ (कारवा) सुयावसे वरसखान पन्द्रह और डाक तीन दिनमे पहुचती थी। कस्तिक द्वारा जानेवाला रास्ता इली पार होते अलाताउ और किज़िलकिया जोत से कराकोल, जहासे इस्सिकुलके उत्तरी तटसे होकर जिकलोकी भूमिमें पहुचता था।

सिकुल—करलुकोकी भूमिके सीमान्तपर यह वडा व्यापारिक नगर था। शायद यह तैमूरके समयका इस्सिकुल नगर हो।

स्रोत-ग्रन्थ

१ ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व० वरतोल्द, वेर्नी १८१९)

2 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Barthold' 1928)

3 A thousand years of Tatars (Parker)

४, आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ् किर्गिजिइ (अ० न० वेनश्ताम, फ्रुन्जे १९४१)

भाग ६

दक्षिणापथ (६७३–९०० ई०)

(आरम्भिक इस्लाम)

अध्याय १

अरब (६७३-८१८ ई०)

§१ पैगम्बर मुहम्मद

छठी सदी के अत मे अरब के लोग विल्कुल सस्कृति-शून्य नही थे। मक्का (वक्का) आर मदीना के नगर व्यापारियो और सामन्त-पुजारियो के निवासये। मक्का मे एक पुराना मदिर था, जिसे काबा कहते थे। मदिर की प्रधान पूजा-मूर्ति मूर्ति नही, बल्कि किसी समय आकाश मे गिरे उल्का-पाषाण का टुकडा था, जिसे हज्र-अस्वद (कृष्ण-पाषाण) कहा जाता है। इसकी उस समय बडी पूजा होती थी। जान पडता है, इसकी कीर्ति भारत तक पहुच चुकी थी, जहा के हिंदू इसे शिव का एक प्रसिद्ध लिंग मानते थे। इसके अतिरिक्त काबा के मदिर में लात, मनात, सूर्य (शम्श) आदि बहुत सी मूर्त्तिया थी। हर साल एक बहुत बडी यात्रा भरती थी, जिसमे अरब के कोने-कोने के लोग दर्शन-पूजा के लिये आते थे, और इसी समय एक बडा व्यापारिक मेला लग जाता था। मुहम्मद जिस कुलमें पैदा हुये, उसे हाशिमी खान्दान कहा जाता था, क्योकि मुहम्मद के पिता अब्दुला के पिता और दादा अबुल मोतल्लब और परदादा हाशिम थे। हाशिम के पिता का नाम अब्दुल-मनात (मनातदास) था, जिससे स्पष्ट है, कि पाच ही पीढी पहले मुहम्मद के पूर्वज एक काफिर देवता को परमपूज्य मानते थे। हाशिम के भाई का नाम अब्दुल शम्श (सूर्यदास) था।

कुरेश वश काबा के पडो में बहुत ऊचा स्थान रखता था। इसी वश मे ५७० ई० मे मुहम्मद का जन्म हुआ। उनके पिता का नाम अब्दुल्ला और मा का नाम आमना था। अभी मुहम्मद गर्भ ही में थे, कि उनके पिता मर गये। उनकी परवरिश का भार दादा अब्दुलमतल्लब के ऊपर पडा। मक्का के खानदानी परिवारो की रीति के अनुसार शिशु मुहम्मद को भी पालने के लिये एक बद्दू स्त्री हलीमा को दे दिया गया। मक्का मदीना जैसे शहरो के लोग नागरिक हो गये थे, पर आज की तरह उस समय भी बहुत से अरब कबीले घुमन्तू थे, जिन्हें बद्दू कहा जाता था। घुमन्तूओ के तम्बुओ मे पलना शायद पौरुष और हिम्मत बढाने वाली शिक्षा का अग समझा जाता था। कहा जाता है, मुहम्मद आजन्म अनपढ़ (उम्मी) रहे। यद्यपि इसपर विश्वास कम होता है, क्योकि वह कितने ही वर्षों तक अपनी भावी पत्नी तथा मक्का की एक बहुत धनी स्त्री खदीजा के कारवा के सरदार होकर दूसरे देशो में व्यापार करने जाते थे। उस समय यद्यपि अरब लोगो का धर्म मूर्तिपूजा था, किन्तु मक्का जैसे शहरों में मूर्तिविरोधी यहूदी और ईसाई भी रहा करते थे, और जिन देशो में व्यापार करने के लिये मुहम्मद को जाना पडा, वहा तो इन धर्मो

की प्रधानता थी। मुहम्मद को यहूदी और ईसाई धम के विद्वानो के सम्पर्क म आने का मौका मिला और मूर्तिपूजा पर उनकी श्रद्धा नही रह गई।

वह खदीजा के पति होकर अव मक्का के एक धनी व्यक्ति हो चुके थे, जब कि ४० वप के हो जाने पर उन्होने पैगवर होने का दावा किया। उन सप्रदायो में दीक्षित न होकर भी वह यहूदियो और ईसाइयो के धम मे श्रद्धा रखते थे। मुहम्मद का उद्देश्य केवल धार्मिक नही था। यहूदी पैगवरो के बारे में भी वह जानते थे, कि धम और शासन दोनो को वह अपने हाथ में रखते थे। इसके अतिरिक्त वह अपनी अरब जाति की दुदशा से भी खिन्न थे। अरब वीर और परिश्रमी होते हुये भी आपस मे खूनी लडाइया लडते अपने को तवाह करते रहते थे। अरब के रेगिस्तान में बिखरी हुई शक्ति के महत्व को उन्होने जल्दी समझ लिया, और यह भी देख लिया कि यहूदी पैगवरो की तरह ही एक धार्मिक-राजनीतिक व्यवस्था के आधीन एक उन्हे एकत्रित किया जा सकता है। ४० साल की उम्र तक पहुचते उन्हे मालूम हो गया था, कि यहूदी या ईसाई जैसे पराये धम की सहायता से अरबो को एकता के सूत्र में नही बाधा जा सकता, न अरबो की राजनीतिक और सामाजिक निर्बलताओ को दूर किया जा सकता। यह प्रधान कारण था, जो कि यहूदी और ईसाई धर्म को प्रमाण मानते हुये भी मुहम्मद ने एक नये धम (इस्लाम) का प्रचार किया।

उसकी मुख्य शिक्षा थी मूर्ति-पूजा के खिलाफ जहाद। मक्का के पडे भला इसे कैसे सहन करते? कावा का मदिर उनके लिये जीविका का साधन था। उनके देवताओ का बुरा-भला कहकर मुहम्मद उनकी श्रद्धा को ठेस लगा रहे थे। विरोध होने पर भी उन्हें सफलता मिलने लगी। उनके अपने हाशिम वश के नौजवान उनके साथ चलने के लिये तैयार हुये। मुहम्मद के चचेरे भाई तथा आबूतालिब के पुत्र अली विशेष तौर से उनके अनुरक्त थे। हाशिम के भाई अब्दुश् शम्श के पुत्र उमैया की सतानें भी मुहम्मद का साथ देने के लिये तैयार हुई। उनके खास चचा अब्बास के तीनों पुत्रों ने भी जल्दी ही इस्लाम को मान लिया। हाशिम वश के अनुकूल होने पर भी मक्का में विरोध इतना बढा, कि मुहम्मद और उनके मुट्ठीभर अनुयायियो को मृत्यु का डर लगने लगा और ६२२ ई० मे ५२ वप की उमर में उन्हे चुपके से हिजरत (प्रवास) करके मदीना मे शरण लेनी पडी। इसके बादका जीवन उनका मदीने से सबध रखता है।

मदीना का पुराना नाम यस्रिव था, किंतु नवी (पैगवर) के बस जाने के कारण उसका नाम मदीनतुन्ननवी (पैगवर का नगर) पडा, जिसका ही सक्षेप मदीना है। पैगवर मुहम्मद की कबर मदीना मे है। मक्का के कावा मदिर की मूर्तियो को यद्यपि तोड फाडकर फेंक दिया गया, किंतु वहा के कृष्णपाषाण के साथ अरब लोगो का इतना अधिक पूज्य भाव था, कि उसे तोडने या फेंकने की हिम्मत नही पडी और आज भी मुहम्मद का अनुकरण करते हुये हर एक हाजी मुसलमान उस काले पत्थर को चुम्बन देकर सम्मान प्रकट करता है। मदीना म रहने के अतिम दस वप धर्म-प्रचार के लिये ही महत्व नही रखते, बल्कि इसी समय मुहम्मदने उस राजनीतिक और सामरिक शक्ति का विकास किया, जिसने पौन शताब्दी के भीतर ही सिंधु तट से स्पेन तक, सिर दरिया से नील नदी तक फैले एक विशाल साम्राज्य की स्थापना कर दी। अपने जीवन में ही मुहम्मद अरब के भिन्न-भिन्न कवीलो को इस्लाम के झण्डे के नीचे लाने में सफल हुये थे।[1]

---

[1] दर्शन-दिग्दर्शन पृ० ८७-८६

(नई आर्थिक व्याख्या)[1]

चाहे तिब्बत हो या अरब, प्राय सभी कबीला-प्रथा रखनेवाली जातियों में पशुपालन कृषि या वाणिज्य के अतिरिक्त लूट की आमदनी (माले-गनीमत) भी वैध जीविका मानी जाती है। माले-गनीमत को बिल्कुल हराम कर देने का मतलब था, अरबों के पुराने भावपर ही नहीं, उनके आर्थिक आय के साधन पर भी हमला करना। चाहे इस तरह की आय से सभी परिवारोंको सदा फायदा न पहुंचे, किंतु जूये के पासे की भाति कभी अपनी किस्मत के पलटा खाने की आशा को तो वह छोड नही सकते थे। हजरत मुहम्मदने 'माले-गनीमत' नाम रखते हुये भी उसे छोटी-मोटी लूट से ईरान और रोम के देश-विजय की 'भेटो' जैसे विस्तृत अर्थ में बदलना चाहा, तो भी मालूम होता है, अरब प्रायद्वीप में यह प्रयत्न कभी सफल नही हुआ। वहा के लोगो ने माले-गनीमत का वही पुराना अर्थ माना, इसका ही परिणाम यह था, कि अरब से बाहर जहा-अरबी लोग जहा लूट और छापा मारी के धर्म को हटाकर शाति (इस्लाम) स्थापित करने म बहुत हद तक सफल हुये, वहा अरबी कबीले तेरह सौ वर्ष पहिले के पुराने दस्तूर पर हाल तक कायम रहे। जो भी हो, माले-गनीमत की नई व्याख्या थी—विजय मे प्राप्त होनेवाली आमदनी में से $\frac{1}{5}$ सरकारी खजाने (बैतुल-माल) को मिलना चाहिये, और बाकी योद्धाओ म बराबर बाट देना चाहिये। विस्तृत राज्य स्थापन करने की इच्छावाले एक व्यवहार-कुशल दूरदर्शी शासक की यह सूझ थी, जिसने आर्थिक लाभ की इच्छा को जागृत रखकर, पहिले अरबी रेगिस्तान के कठोर जीवन वाले बद्दू तरुणो और पीछे हर मुल्क के इस्लाम लानेवाले समाज में प्रताडित तथा कठोर जीवी लोगो को इस्लामी सेना में भर्ती होने का भारी आकर्षण पैदा किया, और साथ ही बढते हुये बैतुल्-मालने एक बलशाली सगठित सैनिक-नागरिक शासन की बुनियाद रक्खी। माले- गनीमत के बाटने मे समानता तथा खुद अरबी कबीले के व्यक्तियो के भीतर भाई-चारे और बराबरी के ख्याल ने इस्लामी "समानता" का नमूना लोगो के सामने रखा।

माले-गनीमत की इस व्याख्याने आर्थिक वितरण के एक नये रूप को पेश किया, जिसने कि अल्लाह के स्वर्गीय इनाम तथा अनन्त जीवन के ख्याल से उत्पन्न होने वाली निर्भीकता से मिलकर दुनिया में वह उथल-पुथल पैदा की, जिसे कि हम इस्लाम का सजीव इतिहास कहते है। यह सच है, कि माले-गनीमत की यह व्याख्या कितने ही अशो में दारयवहु, सिकन्दर, चन्द्रगुप्त मौर्य ही नही दूसरे साधारण राजाओ के विजयो में भी मानी जाती थी, किंतु वह उतनी दूर तक न जाती थी। वहा साधारण योद्धाओ में वितरण करते वक्त उतनी समानता का ख्याल नही रखा जाता था, और सबसे बढ़कर कमी यह थी, कि विजित जाति के साधारण नि स्व लोगो को उसमें भागीदार बनने का कोई मौका न था। अरबो ने विजित जाति के अधिकाश धनी और प्रभु-वर्ग को जहा पामाल किया, वहा अपनी शरण मे आनेवालो—खासकर पीडित वर्ग—को विजय लाभ में साझीदार बनाने का रास्ता बिल्कुल खुला रक्खा। स्मरण रखना चाहिये, इस्लाम का जिससे मुकाबिला था, वह सामन्तो-पुरोहितो का शासन था, जो सामन्तशाही शोषण और दासता के आर्थिक ढाचे पर आश्रित था। यह सही है, कि इस्लाम ने इस मौलिक आर्थिक ढाचे को बदलना

---

[1] वही पृ० ५१

अपना उद्देश्य कभी नही माना, तो भी उसके मुकाबिले मे अरब में अभ्यस्त कबीलाशाही भ्रातृत्व और समानता को अन्-अरबो के साथ भी जरूर इस्तेमाल किया, इसीसे उसने अल्पसख्यक शासक वर्ग के नीचे की साधारण जनता के कितने ही भाग को आकृष्ट और मुक्त करने में सफलता पाई। यद्यपि इस्लाम ने कबीले के पिछडे हुये सामाजिक ढाचे से यह बात ली थी, किंतु परिणामत उसने एक प्रगतिशील शक्ति का काम किया, और सडाद फैलाने वाले बहुत से सामन्त परिवारो और उनके स्वार्थों को नष्टकर, हर जगह नई शक्तियो को सतह पर आने का मौका दिया। यह ठीक है कि यह शक्तिया भी आगे उसी "रफ्तार-बेढगी" को अख्तियार करनेवाली थी। पर दासो-दासियों को मालिक की सम्पत्ति तथा युद्ध की लूट को उचित माल बताने के लिये अकेले इस्लाम को दोष नही दिया जा सकता, उस वक्त का सारा सभ्य ससार—चीन, भारत, ईरान, रोम—इसे अनुचित नही समझता था।

§२ आरभिक खलीफा

मक्का के निवास तक मुहम्मद एक धार्मिक प्रचारक या सुधारक मात्र थे, किंतु मदीना जाने पर उनको अपने अनुयायियो के लिये आर्थिक, सामाजिक व्यवस्थापक एव सैनिक नेता भी बनना पडा, इसका ही यह परिणाम हुआ, कि उनकी मृत्यु के समय (६२२ ई०) पश्चिमी अरब के कितने ही प्रमुख कबीलों ने इस्लाम को स्वीकार किया, तथा अपनी निरकुशता को कम करके एक सगठन मे बधना चाहा। उस समय तक सारे अरबी-भाषी लोगो में इस्लाम घर कर चुका था।

हजरत मुहम्मद स्वय राजतत्र के विरुद्ध न थे। ईरान और रोम के शाहशाहों की प्रसिद्धि उनके कानो तक ही नही पहुची थी, बल्कि व्यापार के सिलसिले में उनके राज्यो में वह जा भी चुके थे। मुहम्मद ने जर्थुस्ती ईरानी शाह और ईसाई रोमन कैसर को इस्लाम लाने के लिये दावत दी, लेकिन वह अरब के रेगिस्तान के सदेश को अवहेलना छोड और दूसरी दृष्टि मे देख ही कैसे सकते थे? अरब मे उस समय कबीलाशाही सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था चल रही थी, जिससे सादगी और जनतत्रता अरबो के नस-नस में इतनी व्याप्ती थी, कि मुहम्मद भी उसके आकर्षण को मानने के लिये मजबूर थे। एक देश (पश्चिमी अरब, हेजाज) के शासक हो जाने के बाद भी मुहम्मद का जीवन बहुत ही सरल था। वस्तुत मुहम्मद ने अरब के राजनीतिक विकास में यही काम किया, कि अरबीभाषी छोटे-छोटे कबीला को विश्रृखलित और सघर्ष-मय जीवन से उठाकर एक बडे कबीले के रूप मे परिणत कर दिया। लेकिन, यह सभव नही था, कि अरब से बाहर पैर रखने के बाद वहा की भिन्न-भिन्न भाषाओ और जातियो के लोगो को एक महान् कबीले के रूप में परिणत किया जाय, अथवा सामन्तशाही युग में बहुत आगे बढ गये लोगों को फिर से कबीलाशाही (जन-व्यवस्था) में लौटाया जाय। यह कैसे हो सकता था, कि सिंध से स्पेन तक फैले विशाल साम्राज्य पर उसके शासक बनी-उमैया कबीलाशाही शासन द्वारा राज्य करते?

पैगबर के मरने के बाद ही झगडा शुरू हो गया। हाशिम खानदान के लोग पैगबर के उत्तराधिकारी या खलीफा बनना अपना अधिकार समझते थे, लेकिन इस्लाम म तो केवल हाशिमी (अली आदि) लोग ही नही थे, इसलिये जिन चार खलीफो (पैगबर के उत्तराधिकारियो) के

समय प्राचीन इस्लाम अपने कबीलाशाही जनतान्त्रिक रूप को थोड़ा बहुत कायम रख सका, उनमे प्रथम अबूबकर अ-हाशिमी थे।

१ अबू-बकर (६३२-६४२ ई०)

मुहम्मद की कई बीवियो में से एक के यह बाप और अधिक वृद्ध भी थे। इन्ही को मुसल्माना के बहुमत ने खलीफा चुना। अबू-बकर दस साल तक शासन करते रहे। इन्हींके समय खालिद के नेतृत्व में अरब-सेना ने रोम को हराकर दमिश्क ले लिया और पहिली बार अरब के रेगिस्तानी लोगो को रोम जैसे समृद्ध और अत्यन्त सस्कृत राज्य के एक भाग पर शासन करने का मौका मिला। तभी से कबीलाशाही सादगी के स्थान पर विलासिता का आरभ हुआ। अबू-बकर के जमाने मे सिरिया (दमिश्क) ही नही, बल्कि फिलस्तीन भी अरबो के हाथ में आ गया। इसी काल (६३९ ई०) मे ईरान के साथ नहावद के युद्ध मे मुठभेड हुई, जिसमे ईरान की जबदस्त हार हुई। यज्दगद III सासानी वश का अतिम शाह उसी तरह अरबी सेना के सामने से भागता फिरा, जिस तरह हजार वर्ष पहले दारयवहु III अलिकसुन्दर की सेना से भागता रहा। वह सीस्तान गया, वहा से खुरासान की ओर भागा, फिर मेर्व में शरण लेनी चाही। मेर्व तुर्कों का था। खाकान ने सुना कि सासानी शाह उसके राज्यकी ओर भाग आया है, तो वह स्वय उसे पकडने या शरणमे लेनेके लिये आगे दौडा। शायद उसे भी अरबोका भय होगया। यज्दगर्दने मेर्वके बाहर एक पन-चक्की घरमें छिपकर जान बचानी चाही, लेकिन चक्कीवालेने उसके पास धन-जेवर देखा, उसके मुहमें पानी भर आया और उसने उसे मारकर पनचक्कीको धारमे फेंक दिया। उस वक्त मेर्वके लोग आजकी तरह तुर्क नही, बल्कि धर्म और भाषा दोनोसे ईरानी थे, जो तुर्कोंके राज्यमे रहते भी अपनेको सासानियोका सगा मानते थे। जब उन्हे चक्कीवालेके इस विश्वासघातका पता लगा, तो वह बिगड उठे और उन्होने उसकी बोटी-बोटी नोच कर मार डाला। यज्दगदके शरीरकी मोमियाई बनाकर इस्तख्र भेजा, जहा जरथुस्ती प्रथाके मुताबिक उसे दफनाया गया। नहावद और उसके बादकी दो एक झड़पोंसे ही ईरानकी कमर टूट गई। वस्तुत ईरानका सामाजिक ढाचा इतना निर्बल और राजनीतिक ढाचा इतना नीच स्वार्थपूर्ण था, कि वह जीनेपर राज्य और मरनेपर बहिश्तपरपूर्ण विश्वास रखनेवाले अरब-योद्धाओंका मुकाबिला नही कर सकता था। भारतकी तरह वहापर भी मुट्ठी भर पुरोहित और सामन्त सर्वेसर्वा थे, दूसरे लोग नीच समझे जाते थे और उन्हें दासता या अर्धदासताका जीवन बिताना पडता था। दासो और अर्धदासोंके लिये इस्लामकी सामाजिक समता बहुत ही आकर्षक थी। सामन्त इतने विलासी थे, कि उनमें योद्धाकी हिम्मत नही रह गई थी, अथवा आपसी फूटके मारे सगठित होकर अरबोका मुकाबिला नही कर सकते थे। अन्तमें उन्हें अरबोंके सामने हार स्वीकार करनी पडी, जिन्हें ईरानके लोग मानते थे, कि सभ्यता और सस्कृतिमें हमारे सामने गिरगिटखोर अरब निरे जगली है।

२ उमर[1] (६४२-६४४ ई०)

उमर इस्लामके दूसरे खलीफा थे। इनकी भी लडकी पैगबरको ब्याही थी।

[1] Heart of Asia (E D Ross), दर्शनदिग्दर्शन पृ० ५४, ५५

पगवरके धम और शासनको आगे बढानेमें इनका काफी हाथ था। इसीलिये पैगवरकी अत्यन्त प्रिय पुत्री फातिमाके पति तथा चचेरे भाई अली को फिर वचित कर उमरको खलीफा बनाया गया। अब इस्लामका शुद्ध धार्मिक रूप लुप्त हो चुका था, और वह विश्व-विजयिना एक जबदस्त सैनिक सगठनका रूप ले चुका था। हरेक अरब को पहले भी लडनेके लिये तैयार रहना पडता था। एक कबीलेके किसी आदमीके मारे जानेपर दोनो कबीलामें बदला
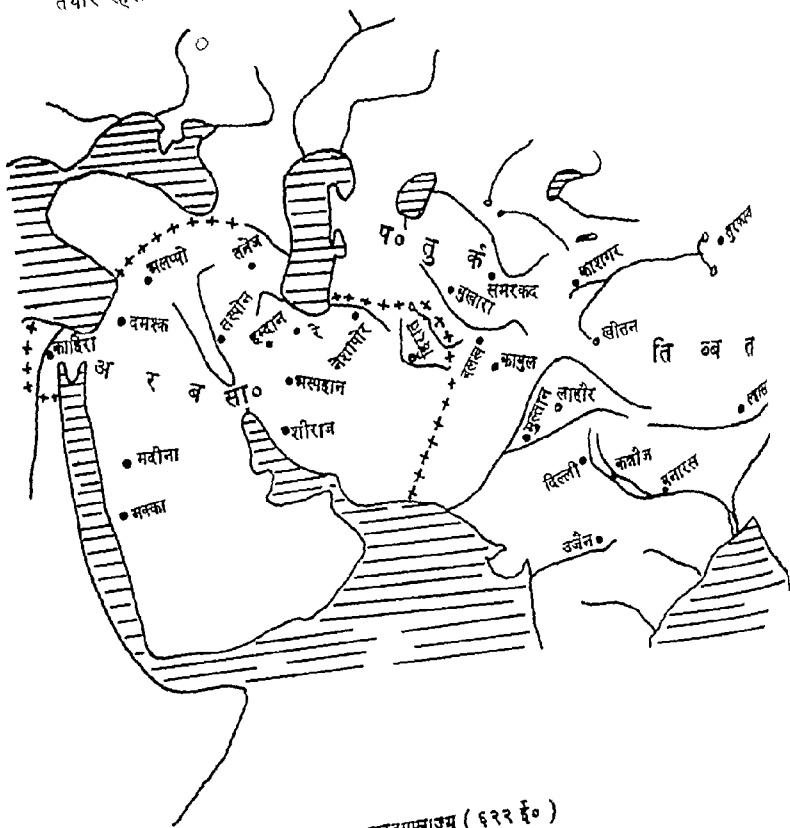
२६. अरबसाम्राज्य (६२२ ई०)

लेनेकी आग भडकती पीढियों तक चली जाती। इस्लामने उसी मरने-मारनेकी भावनाको एक नई धारामें प्रवाहित कर दिया था, जिसमें अरबोंका हर एक कबीला दिल खोलकर भाग ले रहा था। यह बतला चुके हैं, कि दुनियाके और घुमन्तू कबीलोंकी भांति अरब बद्दूने भी लूटना अपना धर्मसिद्ध अधिकार मानते थे, और यह उनकी जीविकाका साधन भी था।

इस्लामिक धर्म-विजयके नामसे वह और भी नफेम थे, क्योंकि अब उन्हे बडे-बडे धनी मुल्कोंको लूटनेका मौका मिलता था——उन्हे धन मिलता, युद्धकी बंदिनी स्त्रियां दासोंके रूपमे मिलती और गुलाम तो इतने मिलते थे, कि राजधानी मदीनामे जिधर देखो उधर ईरानी, तुर्क या रोमन गुलाम बडी भारी सख्यामे दिखाई पडते थे। उनमेसे बहुतसे मुसलमान भी हो जाते थे। अब इस्लाम पैगबरके जमानेका इस्लाम नही था, जब कि इस्लाम स्वीकार करते ही आदमी सामाजिक समानताका अधिकारी माना जाता था। यदि अरब योद्धा लडाईमे जीते दास-दासियोसे कलमा पढ लेने मात्रमे हाथ धो बैठते, तो भला वह गाजी और जहादी होकर प्राणोको खतरेमें डालना क्यो पसद करते? जिन जातियोंसे गुलाम आते थे, वह अरबोंसे बहुत अधिक सभ्य थी। पद-पदपर अपमानित होना उन्हे असह्य था, लेकिन तलवारके डरके मारे कुछ बोल नही सकती थी। उमर दो ही साल तक शासक रहे। इसी २४ महीनेके शासनकी बहुत सी कहानिया सुनी जाती है, जिनसे उमरके सादा जीवन और न्याय-प्रियताका परिचय मिलता है। लेकिन, वह सब केवल अरबोंके लिये था, विदेशी या विजातीय मुसलमान उसके अधिकारी नही थे। जिन जातियो और परिवारोके साथ अरब जहादियोंने घोर अत्याचार किया था, उनके खूनसे हाथ रगा था, उनके आदमी भला कैसे बदला लिये बिना रह सकते थे। एक ईरानी दासने अपने परिवार या अपनी जातिपर किये गए अत्याचारका बदला लेनेके लिये उमरको मार डाला। इसकी बडी घोर प्रतिक्रिया हुई। अरबोंने इसका बदला सारी ईरानी जातिसे लेना चाहा, लेकिन सारी जातिको तो मारा नही जा सकता था। हा, उन्होंने सारे ईरानसे जर्थुस्ती धर्मको मिटानेका सकल्प कर लिया, और उसमें बहुत दूर तक सफलता भी पाई। यह वही समय था, जब कि स्वेन्-चाङ् भारतकी यात्रा करके अभी अभी चीन लौटा था, और दस ही साल पहले अपनी यात्रामें मध्य-एसियाकी सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक समृद्धिको अपनी आखो देख चुका था।

३ उस्मान[1] (६४४-६५२ ई०)

ईरानी दास द्वारा मारे गये द्वितीय खलीफाका बदला लेना नये खलीफाके लिये जरूरी था। उसने ऐसे सेनापतिको राज्यपाल बनानेका इनाम घोषित किया, जो कि खुरासान (पूर्वी ईरान) में घुसनेमें सफल हो। उस्मानके समय सिरिया (भूतपूर्व रोमन-प्रदेश) का शासक बनाकर उमैया-वशी सरदार म्वाविया दमिश्क भेजा गया। दमिश्क रोमन क्षत्रपकी राजधानी थी। वहाका राज-प्रबध रोमक कानूनके अनुसार होता था। म्वावियाके सामने प्रश्न था—देशका शासन कैसे किया जाय? उसने देखा, वहापर कबीलोकी राज-व्यवस्था लागू नहीं की जा सकती, सामन्तशाहीसे कबीलाशाहीकी ओर लौटा नही जा सकता। यदि वह ऐसा करनेके लिये तलवारका सहारा लेता, तो भी सारे सामाजिक और आर्थिक ढाचेका बदलना सभव नही था। म्वावियाकी व्यावहारिक बुद्धिने समझ लिया, कि ऐसा करनेके लिये सिरियाके लोगोको पहले बद्दू या अर्ध-बद्दू के रूपमें परिणत करना होगा, जो असभव है। उसने रोमन सामन्ती ढाचेको रहने दिया,

---

[1] वही

और अरबी हुकूमतको मनवा तथा अधिकसे अधिक आदमियोंको मुसलमान बना अपने शासनको मजबूत करनेका प्रयत्न किया। म्वावियाने रोमक राज्य-प्रणालीको स्वीकार किया। इस्लाम और कबीलाशाही सादा जीवनको जो लोग एक समझते थे, उन्हें यह बुरा लगा। जिन्होंने पैगंबरके सादे जीवन, कबीलोंकी विलास-शून्य, भ्रातृत्वपूर्ण समानताको देखा था, उन्हें म्वाविया का शाही दबदबा और शान-शौकत बुरी लगी। यदि गाढ़ेकी चादर ओढ़े खजूरके नीचे सोने वाला अथवा दासको ऊटपर चढाये विजित येरुशिलममें दाखिल होनेवाला उमर अब भी खलीफा होता, तो म्वाविया ऐसा न कर सकता। समय बदल चुका था। पैगंबरके दामाद और परमविश्वासी अनुयायी अलीको जब यह बात मालूम हुई, तो उन्होंने इसकी सख्त निन्दा की। वह चाहते थे हमारी सल्तनत चाहे रोमपर हो या ईरानपर, वह अरबी कबीलाकी सादगी और समानताको कभी न छोडे। अलीकी आवाज अरण्यरोदन थी। सफल शासक म्वावियापर खलीफाको नाराज होनेकी जरूरत न थी। हा, म्वाविया और अलीमें स्थायी वैमनस्य हो गया।

६३९ ई० म नहावदके युद्धमें ईरानियोकी पराजय हुई थी, किंतु १३ वर्षो (६५२ई०) तक ईरानियोका विद्रोह शात नही हो सका। उसमानके शासनमें खुरासान ही नही, बल्कि तुर्कोंके राज्यपरभी अरबोने प्रहार किया। ६५२ई० में अब्दुल्ला अमीरपुत्रने ख्वारेज्म को हराया। इसी समय बलखके लोगोने अधीनता स्वीकार की। उसमानके शासनके समयसे इस्लामिक आदर्शवाद का रहासहा रूपभी खतम होने लगा। उसमानने अपने परिवारके धन-वैभवको खूब बढाया, जिससे अरबो में भीतर ही भीतर वैमनस्य होने लगा, जिसका परिणाम हुआ उसमान का कतल।

४ अली (६५२-६६१ ई०)

२४ वर्षोंकी प्रतीक्षाके बाद उस आदमीको खलीफा बननेका मौका मिला, जो शिया मुसलमानोंके अनुसार मुहम्मदका एकमात्र उत्तराधिकारी था। अली अपने गुणोंके कारण पैगम्बर के बहुत प्रिय थे। पैगम्बरकी कोई पुत्र-सतान नही थी। उनकी प्रिय पुत्री फातिमाके पति अली तथा नाती हसन-हुसेन पैगम्बरके बहुतही प्रेमपात्र थे, इसमें सदेह नही। अलीका बहुत दर करके पद मिला था, किंतु दमिश्कका राज्यपाल म्वाविया उन्हें फूटी आखोंभी नही देखना चाहता था। वह समझता था, अली हमें शाहशाही या कैसरी शानके साथ चैनसे नही रहने देगा। अली चाहे कितनाही म्वावियाको न पसद करते हो, किंतु म्वावियाका खान्दान बनी-उमैया एक शक्तिशाली अरब वंश था। म्वावियाके ऊपर प्रहार करनेका मतलब था, बनी-उमैयाको दुश्मन बनाकर गृह-युद्ध आरभ करना। अलीका सारा समय म्वावियाके विरोधमें ही बीता और उसीमें उन्हें बलि चढना पडा। यही नहीं, म्वावियाके षड्यत्रमें उनके बडे बेटे हसनको विष खाकर मरना पडा, और म्वावियाके पुत्र यजीदने अलीके दूसरे पुत्र हुसेन को करबलामें तडपा-तडपा कर मारा। करबलामें हुसेन और उनके ६९ साथियाकी मौत बडी दर्दनाक घटना है। इसने इस्लामके भीतरी फूटको सदाके लिये स्थायी बना दिया। इस्लामके पैगम्बरके प्रिय नातीका कटा हुआ शिर जब यजीदके सामने रखा गया, तो उसने उसको छडीसे ठोकर मारकर हिलाया। उस समय एक

---

[1] दर्शनदिग्दर्शन पृष्ठ ५७-५९

अरब बूढेके मुहसे ददभरी आवाज निकली—"अरे, धीरे-धीरे, यह पैगम्बर का नाती है। अल्लाहकी कसम, मैने खुद इन्ही ओठोको हज़रत के मुहसे चुवित होते देखा था।" लेकिन अरबोंके लिये अब इस्लाम या उसका पैगम्बर विश्व-विजयके साधन मात्र रह गये थे। उन्हे पैगम्बर और उनके नातीसे क्या लेना-देना था? अच्छा यही हुआ, कि अलीको अपने दोनो पुत्रोकी मृत्यु अपनी आखो देखनेका दुर्भाग्य नही मिला।

अली लडते हुए कही मारे गये थे। कौनसी जगह मारे गये, इसके दावेदार बहुतसे स्थान हैं। खुरासानमें तुब्रते-हैदरी आज भी एक अच्छा कस्बा है, जिसका अर्थ (अली) हैदर की कब्र। अफगानिस्तानके उत्तरी सूबे तुर्किस्तान में मजार-शरीफ एक शहर है, जिसका अर्थ है पवित्र-कब्र। इसके बारेमें भी बतलाया जाता है, कि यह हजरत अलीकी कब्र है, और इसीलिये उसकी बहुत पूजा होती है। दर्रा-खैबरमें भी अली-मस्जिद है, जिसके बारेमें बतलाया जाता है, कि अलीने काफिरोके साथ युद्ध करते समय वहा आकर स्वय नमाज पढी थी। अलीके समय अरब-राज्यको कुछ बढनेका मौका जरूर मिला, किंतु वह सफलता पहलेके तीन खलीफो तथा बनी-उमैयाके शासनके सामने अधिक नही थी। हा, अलीके अतिम समयतक मध्य एसियाके भीतर अरबोके पैर पहुच चुके थे। ६५० से ६५५ ई० तक लगातार समरकदसे दक्षिण-पश्चिममे अवस्थित मैमुग प्रदेशको अरब लूट-पाटकर बर्बाद करते रहे, यह चीनी अभिलेखोसे मालूम होता है।

स्रोत-ग्रन्थ

1 Heart of Asia (E D Ross 1999)
2 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
3 History of Bokhara (A Vambery, London 1873)
४ इस्कुस्त्वो स्रेद्नैइ आजिइ (ब य वेइमान, मास्को १९४०)
५ आर्खितेक्तुर्निये पाम्यात्निकि तुर्कमेनिइ (मास्को १८३९)
६ दर्शन दिग्दर्शन (राहुल साकृत्यायन, प्रयाग १९४७)
७ इस्लामकी रूपरेखा (")

अध्याय २

उमैया वंश (६६१-७४९ ई०)

अलीके मरनेके बाद उनक वडे वेटे हसनके उत्तराधिकारी वननेकी वडी सभावना थी। राज्यपाल म्वाविया मर्दानेमें जनप्रिय नही था। हसन और हुसैन दानोकी यज्दगद (सासानी शाहशाह) की दो राजकुमारिया व्याही गई थी, जिससे शाही तडक भडक पैगम्वर खान्दानके

१० अरब (उमैया) साम्राज्य (७१२ ई०)
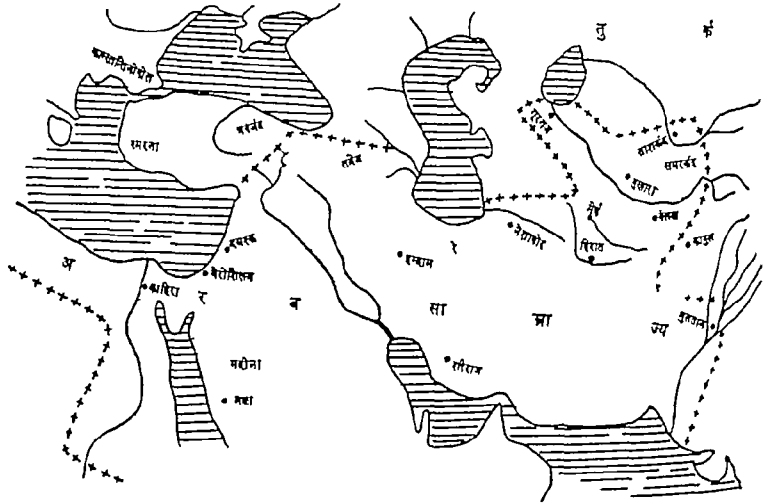
भीतर भी दाखिल होनेमे वाज नही आ सकती थी। पैगम्वरका नाती हाने के कारण लोगो का अनुराग हसन के प्रति अधिक था। म्वाविया हसनकी वीवीसे जहर दिलवा उन्हे मरवा कर स्वय खलीफा वन वैठा

१ खलीफा म्वाविया मेरवान I (६६१-६७० ई०)

अलीके वाद खलीफाका पद म्वावियाने लेकर अपने उमैया वशकी नीव रक्खी। इस वशमे निम्न १३ खलीफा हुए —

१	म्वाविया (I)	६६१-६८० ई०
२	यजीद (I)	६८०-६८३ ई०
३	म्वाविया (II)	६८३
४	अब्दुल मलिक	६८३-७०५ ई०
५	वलीद (I)	७०५-८१८ ई०
६	सुलैमान	७१८-७१७ ई०
७	उमर (II)	७१७-७२० ई०
८	यजीद (II)	७१९-७२३ ई०
९	हिशाम	७२३-७४२ ई०
१०	वलीद (II)	७४२
११	यजीद (III)	
१२	इब्राहीम	
१३	मेर्वान (II)	७४९ ई०

उमैया राजवशके समय खुरासान और सोग्दके निम्न वली (राज्यपाल) थे —

१	अब्दुल्ला अमीर-पुत्र	६६१ ई०
२	कैस हैसम-पुत्र	६६२ ई०
३	अब्दुल्ला खाजिम-पुत्र	६६३ ई०
४	जियाद	६६५ ई०
५	हकम अमीर-पुत्र	६६७ ई०
६	रबी जियाद-पुत्र हारिसी	६७० ई०
७	खुलैद अब्दुल्ला-पुत्र हनफी	६७३ ई०
८	सईद उस्मान-पुत्र	६७६ ई०
९	सल्म जियाद-पुत्र	६८१-६८३ ई०
१०	अब्दुल्ला जियाद-पुत्र	६८३-६९१ ई०
	(मूसा अब्दुल्ला-पुत्र)	६८९-७०४ ई०
११	मुहल्लव	७०० ई०
१२	उमैया अब्दुल्ला-पुत्र खालिद-पुत्र	६९६ ई०
१३	मुहल्लव	७०० ई०
१४	यजीद मुहल्लब-पुत्र	७०१ ई०
१५	मुफज्जल मुहल्लब-भ्रात	७०३ ई०
१६	कुतैव मुस्लिम-पुत्र वाहिली	७०५-७१४ ई०
१७	जर्राह अब्दुल्ला-पुत्र	७१७ ई०
१८	अब्दुर्रहमान	
१९	सईद अब्दुल्-अजीज-पुत्र	७२० ई०
२०	सईद अम्र-पुत्र हरसी	७२१ ई०
२१	असद अब्दुल्ला-पुत्र कसरी	७२५-७२७ ई०

२२	अशरश् अब्दुल्ला-पुत्र	७२७-७२९ ई०
२३	जुनैद अब्दुर्रहमान-पुत्र	७२९-७३३ ई०
२४	आसिम् अब्दुल्ला-पुत्र	७३४-७३५ ई०
	असद अब्दुल्ला-पुत्र (पुन)	७३५-७३७ ई०
२५	नस्र सैयार-पुत्र	७३७-७४८ ई०

तुलनात्मक अरब वंश

	भारत	चीन	अरब	उत्तरापथ
		(थाङ)		(पश्चिमी तुर्क)
६४०	अर्जुन	ताइ-चुङ		निशि दुलू
	६४८-	६२७-५०		६५१
			(उमैया)	
		काउ-चुङ		इश्री शबोलो
		६५०-८४		६५१-
६६०			म्वाविया I	
			६६१-८०	
६८०			यज़ीद I	
			६८०-८३	
		वूहु (स्त्री)		
		६८४-७०५		
			अब्दुलमलिक	
			६८३-७०५	
				अशिनाशिन
				-७०८
७००			वलीद I ७०५	सोगे ७०८-९
				सुलू ७०९ ३८
		स्वान् चुङ	सुलेमान ७१५-१७	
		७१३-५६		
			यजीद II ७१९-२३	(उइगुर)
७२०				
	यशोवर्मा ७२५-५२		हिशाम ७२३-४३	वुल्गेचर ७१३
७४०			(अब्बासिया)	कुतुलबिगा -७५६
		सुचुङ ७५६-६३	सफ्फाह ७५०-५४	मायुनचुर ७५६ ६०
			मंसूर ७५४-७५	

	भारत	चीन	अरब	उत्तरापथ
७६०	वज्र युध ७७०-	ताइचुङ ७६३-८०		
			मेंहदी ७७५-८३	दुर्मोगो ७७८-८९
७८०	(प्रतिहार)	नेइ्चुङ ७८०-८०५	हादी ७८३-८६	
	वत्सराज		हारून ७८६-८०९	
	७८३-८१५			आचो -७९५
				कुतुलुक ७९५-८०८
८००				
		स्यान्चुङ ८०६-२१		
			अमीन ८०९-१३	काउसङ ८०८-२१
	नागभट्ट ८१५-		मामून ८१३-३३	
८२०		मू-चुङ ८२१-२५		

जिस समय म्वाविया इस्लामका खलीफा बना, उस समय अब भी पूर्वी ईरानपर अरबोंका अधिकार स्थिर नही हो पाया था। अब्दुल्ला अमीर-पुत्रने ६६२ ई० में खुरासानपर सफल अभियान किया। उसी समय उसको वहाका वली (राज्यपाल) बना दिया गया। लूट-मार करना आसान था, क्योंकि ईरानके विजयके बाद खुरासान, बलख, मर्व सभी जगह अरबोकी धाक जम चुकी थी, लेकिन स्थायी सफलता न होनेसे वली (गवर्नर) बराबर बदलते रहते थे। अमीर म्वावियाके शासन-कालमें निम्न वली मध्य-एसिया भेजे गये—

(१) **अब्दुल्ला अमीर पुत्र** (६६१ ई०)—खुरासान-विजेता।

(२) **कैस हैसान-पुत्र** (६६२ ई०)—

(३) **अब्दुल्ला खाजिम-पुत्र** (६६३ ई०)—

(४) **जियाद** (६६५ ई०)—इसे पिछले साल खलीफाने अपना भाई घोषित किया था। यह दो साल तक वली रहा।

(५) **हाकिम अमीर पुत्र** (६६७ ई०)—खुरासानका वली (राज्यपाल) होकर आनेके बाद इसने तुखारिस्तानकी ओर अभियान किये और वहा साथ ही बलखसे दक्षिण-पूर्व हिंदूकुश तकका प्रदेश जीत लिया। यह पहला अरब सेनापति था, जिसने वक्षुको पार किया, यद्यपि वक्षु-पारके तुखारिस्तानपर वह स्थायी अधिकार कायम नही कर सका। ६७० ई० में मर्वमे इसकी मौत हुई।

(६) **खुलैद अब्दुल्ला पुत्र** (६७० ई०)—अल्हनफीने नये वलीके आने तक शासन सभाला।

(७) **रबी जियाद पुत्र अल्हारिसी** (६७० ई०)—यह नया राज्यपाल पहले वली जियादका सहायक था। बीसियो सालके शासनके बाद अब स्थिति अनुकूल हो गई थी, और कितने ही अरब-परिवार आकर खुरासानमे बस गये। यह आवश्यक भी था, क्योंकि इस

प्रकार खलीफाकी सेनाको पास ही में सैनिक भी तैयार मिलते थे। अरब योद्धा, नये जीते हुए देशकी सुख-सपत्तिको देखकर अरबके रेगिस्तानसे यहाके जीवनको अधिक पसद करते थे। रबीने बलखमें लगातार होते रहते विद्रोहोको बिना युद्ध ही दबानेमे सफलता पाई। दूसरे विजेताओसे अरब घुमन्तू विजेताओको कितने ही सुभीते भी थे। जहा अरब तलवार शत्रुकी शक्तिको छिन्न-भिन्न करती, वहा पराजितोका विजेताओके साथ एकता-बद्ध करनेका काम इस्लाम करता। सबसे पहले ईरानके दलित और उत्पीडित निम्नवर्गका इस्लामकी ओर आकृष्ट होना स्वाभाविक था, क्योकि उनका जातीय (जर्युस्ती) धर्म हिंदू-धर्मकी तरह ही छुआछूत और जातपातका पक्षपाती था, जिसके कारण मुसलमानोके सपर्क मात्रसे आदमी जातिच्युत हो जाता, और उसका वैयक्तिक तथा सामाजिक स्वार्थ अरब विजेताओसे मिल जाता। यद्यपि अरब मुसलमान अन्-अरब मुसलमानोको समानताका अधिकार नही दे सकते थे, किंतु काफिरोके मुकाबिलेमें मोमिनका बहुत ऊचा स्थान था, वह छोटी जातका होने पर भी बडीसे बडी जातके ईरानीसे ऊपर था। जिस समय अरब मध्यएसियापर विजय प्राप्त कर रहे थे, उस समय यहा गावका स्वामी देहकान होता था। भारतवर्षमें देहकान किसान को कहते हैं, लेकिन मूल देहकान शब्दका वही अर्थ और दर्जा था, जो कि प्राचीन हिंदू कालमें ग्रामणीका। देहकान देह (ग्राम) का राजा था। राजधानीके पासवाले प्रदेशोमें देहकानोकी निरकुशता पर शाह और पुरोहित (मोबिद)-वर्गका अकुश भी होता था, किंतु दूरके प्रदेशोमें वहाके क्षत्रपका दबाव देहकानोके ऊपर इतना नही था, कि उसे ग्रामीणोपर मनमानी करनेसे रोका जा सके। देहकान छोटे जमीदार नही, बल्कि तालुकदार या छोटे सामन्तकी हैसियत रखते थे। शाही अगरक्षक इन्हीके पुत्रोमेंसे लिये जाते थे। शाही नौकर (शाकिर या चाकिर) भी इनमेसे होते थे। बुखाराके खातूनके शरीर-रक्षकोके बारेमें हम बतला चुके है, कि वह देहकानोके लडके होते थे। ईरानमें शाही धर्म (राजधर्म) जर्युस्ती दीन था। किंतु खुरासान आदि जैसे दूरके प्रदेशोमें कोई राजधर्म नही था, क्योकि वहा बौद्ध, नेस्तोरी (ईसाई) और यहूदी धर्मके लोग भी काफी सख्यामे बसते थे। जर्युस्ती धर्मसे निकले हुए मज्दकी जैसे धर्मके माननेवाले अत्याचार से बचने के लिये इन प्रदेशोमें आकर बस गये थे, जिसके कारण भी जर्युस्ती धर्मकी यहा उतनी धाक नही थी। मावरा-उन्-नहर (वक्षु और सिरदरियाके बीचके प्रदेश, अन्तर्वेद) में बल्कि जर्युस्ती धर्मसे बौद्ध और नेस्तोरी धर्मके अनुयायी कम नही थे, तो भी ईरानी जातिका धर्म होनेके कारण जर्युस्ती धर्म अधिक प्रभाव रखता था (स्वेन्-चाङके समरकदमे रहते समय जर्युस्तियोने बौद्धोके एक विहारको जला दिया था)।

(अरब-विजयके समय[१])

सेठ—मध्य-एसियामे चीनके व्यापारके कारण सेठोका प्रभावशाली वर्ग व्यापारिक नगरोमें रहता था। यह मामूली सेठ नही थे, बल्कि इनके पास बहुत भारी जागीरें (जमी-

[१] Turkistan Down to the Mongol Invasion (K Bartold), History of Bukhara (A Vambery)

दारिया) होती, रहनेको भी अपने गढ़ होते थे। समाजमें इनका स्थान देहकानोंसे बहुत कम अन्तर रखता था।

मध्य-एसियामें सोग्द, फर्गाना और तुखारिस्तान वैसे तो नगरों और ग्रामोंके देश थे लेकिन अपने उत्तरी घुमन्तू लडाकू जातियोंसे बराबर संघर्ष रहनेके कारण यहाके लोग वीरताका मूल्य समझते थे। समरकदमें प्रतिवर्ष एक चाकीपर भोजन और एक मटकी अंगूरी शराब रक्खी जाती थी। यह हमारे यहाके पानके बीडा उठानेकी रस्म जैसी थी। जो आदमी उस भोजन और शराबकी ओर हाथ बढाना चाहता, वह मानो पिछले सालके निर्वाचित वीर (पहलवान)का लडनेके लिये ललकारता। दोनो वीरोंमें लडाई होती। जो अपने विरोधीका मार देता, वह देशका सबसे बडा वीर माना जाता। साल भर बाद फिर इसी रीतिके अनुसार वीर-परीक्षा होती।

देशवासियो में जहा इस प्रकार वीरोका सम्मान किया जाता, वहा यहाके तुर्क शासको की वीरता के बारेमे अरब भी सदेह नही कर सकते थे। ८६९ ई० में अरब इतिहासकार जहीज़[1]ने लिखा था "कला-कौशलमे चीनी, हिक्मत (दर्शन) में यूनानी, शासनमें सासानी और युद्धमें तुर्क" बढे है।

मध्य-एसियाके तत्कालीन शासक और सरदार तुर्क या अतुर्क हमारे राजपूतोंकी तरह मृत्युसे डरते नही थे। युद्ध उनके लिये खेल था, किंतु उनमे एकता नही थी। आपसी शत्रुताके कारण वह एक दूसरेके विरुद्ध अरबोंकी सहायता करनेसे भी बाज नही आते थे। खलीफा उमरने विधान बनाया था, कि मोमिन (मुसलमान) छोडकर किसीको हथियार चलानेका अधिकार नही है। रोम और ईरानके जीते हुए इलाकोंमें जिस तरह लोगोंने भीषण सघर्ष किया, उससे अरबोको विश्वास नही था, कि गैर-मुस्लिम उनके वफादार हो सकते है। यह ठीक भी था, क्योंकि अरब किसी देशको केवल राजनीतिक तौरसे ही परतत्र नही करना चाहते थे, बल्कि वह वहाके धर्म और सस्कृतिको इस्लामके लिये खतरेकी बात समझ उन्हे निर्मूल कर देना चाहते थे, जिसके ही कारण सघर्ष बहुत तीव्र होजाता था। मध्य-एसियामें तुर्क आये, उनसे पहले हेफताल, शक और यवन आये, किन्तु वह वहाकी सस्कृतिके दुश्मन नही थे। उन्होने स्थानीय देवी-देवताओको भी अपने लिये पूजनीय माना और यदि स्वय सस्कृतिमें पिछडे थे, तो यहाकी सस्कृतिसे बहुतसी बाते सीखकर अपनेको सस्कृत बनाया। अरबोकी नीति ऐसी नही थी। उन्होने इस्लाम धर्मके नामपर बिखरे हुए अरब कबीलोको एकताबद्ध किया था। चाहे देश-विजय ही प्रेरक रहा हो, किंतु उसने अपने योद्धाओको इस्लामके नामपर मर मिटने और दुनियासे कुफ्रको हटाकर पैगंबर-का धर्म फैलानेका बीडा उठाया था। इसीलिये यूनानियो, शको या तुर्कोकी तरह धर्म और सस्कृतिके साथ समझौता करनेकी गुजाइश नही थी। इसके विरुद्ध लोगोकी चाहे अपने अपने बहु-स्वीकृत जातीय धर्मके प्रति आस्था भले ही हो, लेकिन वह तब तक दूसरे लोगोके साथ बिगाड या अत्याचार करनेके लिये तैयार नही थे, जब तक कि उनके अपने धर्मपर खूनी हमले न हो। उमरका कानून उमैया खलीफोके समयमें ही नही माना गया और वली (राज्यपाल) कुतैब

---

[1] जहीज (इतिहासकार), "अहलुस् सीन फिस्-सनाआत वल्-यूनानियून् फिल्-हिक्मे व आले-सासान फिल्-मलके वल्-अतराक फिल्-हरूबे"—रिसाला "फजायलल्-अतराक"। (Turkistan Down to the Mongol Invasion में उद्धृत)

(७०५-७१५ ई०) ने अपनी लडाइयोमे दुश्मनोके साथ लडनेका अधिकार काफिरोको दे दिया। अरब बहुत दिनो तक देशपर अधिकार करना नही चाहते थे। उनका उद्देश्य था—लूटके मालको लेकर लौट जाना और अगले साल फिर आकर उसी तरह करना। अरबों का निवासस्थान विशेषकर खुरासान और बलख प्रदेशमें था। सलम जियाद-पुत्र (६८२-६८३ ई०) ही पहला राज्यपाल था, जिसने पहली बार वक्षु-पार जाडा बिताया। इन लूटो और आक्रमणोके प्रतिकारके लिये आपसमे झगडते छोटे-छोटे राजाओको भी कुछ करनेका ख्याल आया। इतिहासकार तबरीके अनुसार मध्य-एसियाके राजा खतरा होनेपर ख्वारेज्मके किसी शहरमे एकत्रित होते और आपसी झगडोको शातिपूर्वक तै करने एव मिलकर अरबोसे लडनेकी शपथ लेते थे। लेकिन व्यवहारत इसपर चलना उनके लिये मुश्किल था। अरबोके विजयका एक कारण यही कमजोरी थी। समरकदके राजा गोरकने ७१८ ई० मे चीन सम्राट्के पास लिखा था, कि हम ३५ सालसे अरबोमे लड रहे है। लेकिन, बिखरे हुए पचासो छोटे-छोटे राजा अरबोकी शक्तिसे मुकाबिला कैसे कर सकते थे?

(६) **रबी जियाद पुत्र हारिसी**—इसने बलखके विद्रोहको बिना युद्धके शात किया। कोहिस्तानके तुर्कोंने बहुत सख्त सघर्ष किया, जिनका नेता तर्खून नीजक था, जो पीछे कूतबके हाथो मारा गया। रबीने वक्षु पार आक्रमण किया, किंतु लूटमारसे ही सतोष करके लौट आया। ६७३ ई० में रबी और उसके मलिककी मृत्यु हो गई। खलीफा पूरबी प्रदेशका एक मलिक (उपराज) नियुक्त करता था, जो अपने भिन्न-भिन्न प्रदेशोके लिये किसीको वली बनाकर भेजता था। उसके पुत्र अब्दुल्लाने केवल दो महीना शासन किया।

(७) **खुलैद अब्बुलपुत्र हन्फी (६७३ ई०)**—जियादके मरनेके बाद खुलैदने अपने पुत्र उबैदुल्लाको कूफा बलख और खुरासानका मलिक (उपराज) बनाया। उबैदुल्ला जियाद पुत्र खुलैदको हटाकर गवर्नर बना।

उबैदुल्ला जियाद-पुत्रने इराक (मसोपोतामिया) में एक बडी सेना जमा की। फिर खुरासान होते वक्षुपार हो, बुखाराके पजतोमे दाखिल हुआ। वह स्वय ऊटपर सवार था। उसने रामतीन और बैकदको लूटा। बुखाराकी शासिका खातून अरबोके सामने लडनेकी हिम्मत न कर समरकद भाग गई। कहते है, जल्दीमें उसका एक जूता छूट गया, जिसका दाम दो लाख दिरहम (एक दिरहम=७५ ग्रेन चादी) था। अन्तमें खातूनने अरबोको वार्षिक कर देना स्वीकार किया। उबैदुल्ला लूटका माल लादे लौटा। हिरात आनेपर खलीफाने उसे बसराका गवर्नर नियुक्त किया।

(८) **सईद उस्मान-पुत्र (६७३ ई०)**—नये गवर्नरने उबैदुल्लाकी सधिको न मानकर बुखारापर आक्रमण कर दिया। उबैदुल्लाके साथ लडनेमें ही खातूनकी सारी शक्ति और सपत्ति खतम हो चुकी थी, फिर बेचारी अब क्या लडती? सेनाकी हिम्मत भी टूट गई थी, इसलिये उसपर भरोसा नही किया जा सकता था। अतमे खातूनने बुखारा खुदातका अरबोको दे देना स्वीकार किया। समरकद अब भी स्वतत्र था और सबमें धनी लोग वहा रहते थे। रानी (खातून) ने नेकचलनीके लिये बुखाराके ८० कुलपुत्र जामिनके तौरपर दिया, जिनको लिये सईद समरकद पर चढा। तूरानने मुकाबिला किया, किंतु अतमें समरकद अरबोके हाथमें गये बिना नहीं रहा। सईदका ३००००

युद्ध दास और अपार सपत्ति हाथ लगी। पहले दिन युद्धमे समरकदके सोग्दियोंको तैयार देखकर सईदने हमला नही किया, और दूसरे दिन उन्हें गाफिल पाकर आक्रमण कर दिया। जब सईद समरकद-विजयके बाद बुखाराके रास्ते लौटा, तो खातूनने अपने जामिन आदमियोंको मागा। सईदका उत्तर था—तुम्हारा विश्वास नही, इसलिये आमू-दरिया पार हुए बिना हम उन्हें लौटा नही सकते। आमू पहुचनेपर ने उसे लौटानेका बहाना किया। अतम उन्हे वह अपने साथ मदीना ले गया और देहकान (सामन्ती) की वेष-भूषाको हटाकर उन्हे गुलामोंकी पोशाक पहना दी। इस दासतामे मरना बेहतर समझ अस्सी "गुलामो" ने सईदके महलम घुसकर दरवाजा वद कर लिया और अपने धोखेबाज शत्रुको मारकर स्वय भी आत्म-हत्या कर डाली। यह घटना ६७९ ई० (६० हि०) की है।

२ खलीफा यज़ीद मेरवान-पुत्र (६८०-६८३)

म्वावियाका बेटा यह वही यजीद है, जिसने कूफाका राज्यपाल रहते समय करबलामे हुसेन और उनके साथियोकी निर्मम हत्या कराई थी। राज्यपाल सईदकी मदीनामें हत्या हो चुकी थी, और यज़ीदने सल्म ज़ियाद-पुत्रको खुरासानका वली बनाया।

(१) सल्म ज़ियाद पुत्र (६८१-६८३ ई०)—सल्मके अधिकार सभालते समय सोग्द में विद्रोह फैला हुआ था। गोरकने हथियार रख नहीं दिया था। सईदका परिश्रम व्यर्थ हो गया। उसकी धोखेबाजीसे अरबोकी बात पर लोगोंका विश्वास नही रह गया था। सल्मने पहले सोग्दको ठीक करना जरूरी समझा। उसने सेनापति मुहल्लबसे सलाह करके मेवमें सैनिक केंद्र स्थापित किया, और ६००० अरब सेनाके साथ वक्षु (आमू-दरिया) पार हो वह बडी तेजीसे बुखारापर चढ़ दौड़ा। खातूनने सोग्दके तरखून मलिक गोरकसे अपना पति बनानेका लालच दे सहायता मागी। तरखून १२०००० सेना साथ ले मददके लिये आया। अरबोने भेद लगानेके लिये जो टुकड़ी भेजी थी, उसके आधे आदमियोंको मारकर गोरक ने भगा दिया। फिर प्रधान सेनासे मुकाबिला हुआ, जिसमें तुर्कोकी जबदस्त हार हुई। सल्मको अपार सपत्ति हाथ लगी, प्रति-सैनिक २४०० दिरम (एक दिरम २५ग्रेन = १½ माशा चादी) अपना हिस्सा मिला। रानीको उसने क्षमा कर दिया। सल्म मेवके तो मुस्लिमोंमे बहुत प्रिय था, इसका पता इसीसे लगेगा, कि उसके दो सालके शासनमे नगरके २००० लडकोंके नाम सल्म रक्खे गये।[1]

---

[1] ओडोनोवनने अपनी पुस्तक "मेर्वकी कथा" (पृ० ३८९) में लिखा है "एक दिन नगरका डुग्गी पीटनेवाला एक दर्जन दूसरे तुर्कमानोंके साथ मेरे झोपड़ेमें आया। वह अपने नवजात शिशुओंको मेरे पास लाये थे। मै उनके शब्दोको अच्छी तरह पकड नही पाता था। मैंने जो कुछ समझा, वह यही था, कि उन शिशुओंमेंसे एक ओडोनोवन बेग था, दूसरा ओडोनोवन खान, तीसरा ओडोनोवन बहादुर । पता लगा कि तेक्के (तुर्कमान) लोग अपने नवजात लडकोंका नाम किसी प्रसिद्ध विदेशीके नामपर रक्खा करते है।"

३ खलीफा म्वाविया (II) (६८३ ई०)

यह वस्तुत खलीफाके पदके योग्य नही था। इस्लामके विश्वविजयका यह काल था, जिसमे खलीफाम वीरताके साथ धर्मांधताकी बहुत आवश्यकता थी। उसने शासनको अपने लिये भारी बोझा समझा और कुछ ही महीनोके बाद गद्दी अपने उत्तराधिकारी मेरवान-पुत्र अब्दुल मलिकके लिये छोड दी। उत्तराधिकारके लिये अब्दुल्ला जुबेरपुत्र और अब्दुल मलिकका झगडा हुआ, जिसके कारण इस्लामी साम्राज्यके दो भाग हो गये। अब्दुल्लाने यमन, सिरिया, फिलस्तीन और मिस्रको लिया। अब्दुल मलिकने राजधानी दमिश्कको अपने हाथमें करके शीघ्र ही अब्दुल्लासे सिरिया और मिस्र भी छीन लिया।

४ खलीफा अब्दुल-मलिक मेरवान-पुत्र (६७३-७०५ ई०)

मेरवान के पुत्र अब्दुल-मलिकने जिस समय शासनकी बागडोर सभाली, उस समय उसके प्रतिद्वन्द्वियोकी कमी नही थी। उसका एक प्रतिद्वन्द्वी मुहम्मद मक्का मदीनेमें खलीफा बन बैठा था। बिजतीन (रोम) साम्राज्य अभी भी शक्तिशाली था, यद्यपि उसके हाथसे सिरिया और फिलस्तीन निकल कर अरबोके राज्यमें चले गये थे। अरब खलीफा बिजतीनको भी ईरानकी तरह हडपना चाहते थे। अब्दुल-मलिकने देखा, कि बाहरके संघर्षके साथ वह घरू संघर्षको सफलतापूर्वक नही चला सकता, इसलिये बिजतीनसे सुलह करके उसने मुहम्मदको मक्का-मदीनासे मार भगाया। अब्दुल मलिककी खिलाफतम अरबोका मध्यएसियामें आगे बढनेमें बहुत सफलता मिली, जहा उसके निम्न वली हुए —

(१०) अब्दुल्ला जियाद पुत्र (६८३-६९१ ई०)—खिलाफतके लिये जो झगडा मलिक और अब्दुल्लामें हुआ था, उसम खुरासानके राज्यपाल (वली) अब्दुल्लाने विरोधीका समर्थन किया था, इसलिये अब्दुलमलिकने उसे हटाकर बुकैरको खुरासानका राज्यपाल बनाया।

(११-१२) बुकैर अब्दुल्ला-पुत्र, उमैया खालिद-पुत्र (६७६)—बुकैरपर विश्वास न रहनेसे खलीफाने उसकी जगह उमैयाको क्षत्रप बनाया। सेनापति मुहल्लब अब्दुल्ला जियाद-पुत्रका पक्षपाती था। नई व्यवस्थासे असंतुष्ट हो वह सब छोडकर केश (शहरसब्ज) चला गया। ७०० ई० म उसने अपने पुत्र हबीबको एक बडी सेनाके साथ बुखारापर आक्रमण करनेके लिये भेजा। राजाकी पराजय हुई। दो साल बाद घर लौटनेके समय मुहल्लब मर्व आया, जहा ७०१ ई० में उसकी मृत्यु हो गई।

(१३) यजीद मुहल्लब-पुत्र (७०१ ई०)—मुहल्लबके स्थानपर उसका पुत्र यजीद मर्वका राज्यपाल बनाया गया।

(१४) मुफज्जल मुहल्लब-भ्रात (७०३ ई०)—हज्जाज यूसुफ-पुत्र सरदारको यजीद पसद नहीं आया और उसने उसकी जगह उसके चचा तथा उपराज्यपाल मुफज्जलको वली बनाया। उसका शासन केवल ९ महीनेका था जिसम उसने शीमा और बादगीसमें लूटमार करके प्राप्त संपत्तिको अपने सैनिकों (अरबों) में बाट दिया।

५. खलीफा वलीद अब्दुलमलिक-पुत्र (७०५-७१४ ई०)

इसी खलीफाके समय ७११ ई० में अरब सेनापति मुहम्मद कासिम-पुत्रने सिंधको जीता। हमें मालूम ही है, कि सिंधके जीतनेमें घरेलू फूट शत्रुकी सबसे अधिक सहायक हुई।

(१५) कुतैब मुस्लिम-पुत्र वाहिली (७०५-७१४)—मेर्व सारे अरब-शासन-कालमें दक्षिणापथकी राजधानी रहा। मेर्वको शाहेजान (राजप्राण शाहेजहा) कहते थे। मेर्व का राज्यपाल खलीफाका पूर्वी उपराज नियुक्त करता था, जो कि इस समय हज्जाज युसुफ पुत्र था। हज्जाजने मुफ़ज्ज़लको हटाकर उसकी जगह कुतैबको मेर्वका राज्यपाल बनाया। मध्य-एसियामें अरब-शासन और इस्लामकी दृढ नीव डालनेमें सबसे अधिक हाथ कुतैबका था। इसके पहलेके राज्यपालोंका लक्ष्य प्रधानतया केवल लूटमार करते चौथ उगाहना था। यद्यपि बहुत वर्षोंसे अरब खुरासानके स्वामी थे, और मेर्व उनके राज्यपालकी राजधानी थी, किंतु वक्षु-पार उनका प्रभुत्व नाममात्रका था। बस, समय-समयपर उनकी सेनायें लूट मारके लिये वहा जाती थी। वक्षु और सिरके बीचकी भूमिपर इस्लामका झंडा गाडनेवाला कुतैब था। इसने वहासे जर्थुस्त और बुद्धके धर्म को मिटाकर इस्लामको स्थापित किया और अपने सैनिकोंको कुरानकी पातिया उद्धृत करते इस्लामके लिये जहादके लिये उत्तेजित किया। जहादियोंके जोशको और भी मजबूत करनेके लिये अभियानके समय तककी तनखाहें उन्हें पेशगी दे देना।

मूसा अब्दुल्ला-पुत्र हाजेन-पुत्र (६८९-७०४ ई०)—अब्दुला हाजेनपुत्र कैसी एक प्रसिद्ध अरब सेनापति था। पैगम्बर मुहम्मदने अरब कबीलोंकी शक्तिको बहिर्मुखीन करके उनके घरेलू खूनी झगडोंको रोक दिया था। अब वह आपस में लडनेकी जगह विदेशी काफिरोंसे लडते थे। लूट में जहा बहुतसा धन मिलता था, वहा ईरानी, रोमन, सोग्दी और तुर्क सुन्दरिया यदि दासी बननेसे बचती, तो बीबी बन जाती। युद्धकी लूटके बटवारेमें कभी कभी एक-एक सिपाहीपर पाच पाच स्त्रिया पडती। सबसे सुन्दरी और कुलीन स्त्रिया खलीफाके हरम के लिये चुनी जाती, उसके बाद उपराज (मलिक) का नंबर आता, फिर वली (राज्यपाल) की बारी आती। हा, किसी सेनापतिकी नजर पड गई और खतरा नही मालूम हुआ, तो उसे भी कोई अनिंद्य सुन्दरी मिल जाती। सिपाहियोंको छँटी-छुटी स्त्रिया ही मिलती। स्त्रियोंकी इस लूटसे इस्लामको बहुत फायदा हुआ। मुल्ला काफिरोंको धर्मोपदेश दे लौकिक प्रलोभनके साथ उन्हें अपनी जाति छोडा इस्लामी जमातमें भर्ती करते थे। निकाही या या दासी बीबीयोंका काम था मुसल्मान पुत्र पैदा करना। दोनोही तरहसे देशकी स्वतंत्रताके लिये लडनेवाले घाटेमें रहते। काफिर कभी कभी फिरसे अपने धर्ममें लौट जाते, किंतु मुसलमानोंकी यह संतानें ईरानी जात-पातके कारण अपनी जातिमें लौटनेकी गुंजाइश नही रखती। इस प्रकार इस्लाम ईरान और मध्य-एसियामें बडी तेजीसे बढता रहा। कितने ही अरब परिवार अरब छोडकर खुरासान, मेर्व या बलखमें बस गये थे। किंतु जनवृद्धिकी सामान्य-गतिसे वह उतनी जल्दी बहुसंख्यक नही हो सकते थे। इस वैध या अवैध स्त्री-प्रबंध ने उस गतिको बहुत तेज कर दिया, इसमें संदेह नही। तो भी यह ख्याल रखना चाहिये, कि ईरान और मध्य-एसियाको जब अरब जीत रहे थे, उस समय वहा असह्य सामाजिक विषमता का राज्य था। भारतके शूद्रों और अछूतों की तरह वहा भी बहुतसी जातिया थी, जो

इस्लामकी जमातमें दाखिल होकर कमसे कम अपने काफिर बन्धुओंसे नीच नही रह जाती थी।

अपार धनके लाभ और सुखी जीवनने अरबोंकी लडाकू प्रवृत्तिको जगा दिया था। उनके कई दल हो गये थे, जो शक्ति और लाभके लिये आपसमें लडते रहते थे। सेनापति या राज्यपाल ज्यादा दिनतक टिकते नही थे, जरा सी शिकायतपर उन्हें निकालकर दमिश्कसे कोई दूसरा भेजा जाता। इसी तरह के निष्कासनकी तलवार अब्दुल्ला खाजिमपुत्रके ऊपर पडी। वह ६९१-६९२ ई० (७२ हिज्री) तक खुरासानका निरंकुश शासक हो बैठा। उसने अपने नामके सोनेके सिक्के चलाये। खलीफा अब्दुल मलिक इसे कैसे बर्दाश्त कर सकता था? अतमें खलीफाके हुकुमसे उसे कतल कर दिया गया। लेकिन अब्दुल्ला अपने भविष्यको जानता था, इसलिए अपने पुत्र मूसाको उसने वक्षु पारके तुखारिस्तान में भेज दिया था। मूसाने मुट्ठीभर आदमियो की मददसे तेरमिजपर अधिकार कर लिया। स्थानीय शासक भाग गया। उसके बाद १५ साल तक मूसा वहाका स्वामी रहा। यह यजीद मुहल्लब-पुत्रकी राज्यपालताका समय (७०१-७०४ ई०) था।

इसी समय साबित कुतबापुत्रभी मूसासे आ मिला। साबितका स्थानीय लोगोपर बहुत प्रभाव था। उसने स्थानीय राजाओ को अपनी ओर कर लिया और यजीद के तहसीलदारो को अन्तर्वेद (वक्षु और सिरदरिया के बीच के प्रदेश) से मार भगाया। अब सारे अन्तर्वेद का स्वामी मूसा था। वहा खलीफा का नही मूसा का शासन चल रहा था। इसी समय तुर्कों, सोग्दो और हेफ़ताला ने मिलकर एक भारी सेना मुसलमानो से लडने के लिये भेजी, जिसे मूसा ने तितर-बितर कर दिया। लेकिन मूसा का साबित और उसके स्थानीय सहायको से झगडा हो गया। मूसा उन्हें भी दबाने मे सफल हुआ। साबित मारा गया। स्थानीय सामन्तो का मुखिया सोग्द का इखशीद तरखून गोरक बडी बहादुरी के साथ लडता रहा, किंतु अत मे उसे भागने पर मजबूर होना पडा। ७०४ ई० मे राज्यपाल मुफज्जल मुहल्लब-पुत्र के हुकुम से सेनापति उस्मान मसऊदपुत्र ने साग्द के इखशीद और खुत्तल के शाह की मदद से मूसा को हराकर तेरमिज पर अधिकार किया।

इसीके बाद कुतैब खुरासान का राज्यपाल होकर आया। तालेकान आते ही उसने दिग्विजय आरभ कर दिया। मेव होते बलख पहुच उसने वहा के विद्रोह का दमन किया। बरमक खान्दान पीढ़ियो से बलख के प्रसिद्ध नवविहार का महत रहता आया था। तत्कालीन बरमक भागकर कश्मीर चला गया। समझता था, कश्मीर और अफ़गानिस्तान के अपने सहधर्मियो हिंदुओ की मदद से वह जन्मभूमि से म्लेच्छो को भगा सकेगा, किंतु अरब-शक्ति स्थानीय उत्पीडितो की सहायता पा अब दुर्जेय थी। स्वय भारत का एक भाग (सिंध) पाच ही छ साल बाद अरबो के हाथ में जानेवाला था। इसी समय तिब्बत के घुमन्तुओ ने अपना विशाल राज्य स्थापित किया था, जो त्यानशान और पामीर तक फैला हुआ था। चीन और तुर्कों की प्रतिद्वद्विता के कारण उसे अरबो से मित्रता करनी पडी थी। फिर बरमक (परमक) को क्या सफलता मिलती? कुतैब ने बरमक की रानी को अपने हरम में डाल लिया। उसके भाई तथा सभी देहकानो ने कुतैब का स्वागत और वक्षुतट तक उसका अनुगमन किया। कुतैब के

---

[1] Turkistan Down to the Mongol Invasion

पराक्रम की कथायें वक्षुपार पहुच चुकी थीं। वहा कोई उससे लडने की हिम्मत नही रखता था। परले तटपर शगनियान का राजा अपने शत्रु शुगान और अखूनन के राजाओ के विरुद्ध—कुतैब के स्वागत के लिये प्रतीक्षा कर रहा था। पार होते ही उसने कुतैव को नगर द्वार की सोने की चाभी पेश कर राजधानी (तेरमिज्र) मे पधारने के लिये निमत्रण दिया। कुतैव ने शगनियान पर यही उपकार किया, कि उसे खलीफा का करद बनाकर छोड दिया। अखूनन और शुगान के राजा भी त्रस्त थे। उन्होने कर देकर छुट्टी ली। कुतैव वहा से मेर्व लौट गया। इसी साल उसने वादगियो के तरखून नीज़क से अपनी शर्तो पर सधि की।

अगले साल (७०५-७०६ ई०) कुतैव की विजय-यात्रा फिर आरभ हुई। मेव से मेवरूद, और आमूल (चारजूय) होते उसने वक्षु पार किया। उसका लक्ष्य वुखारा था। वैकद वक्षु के दाहिने तट पर वुखारा से सबसे नजदीक का अतिसमृद्ध व्यापारिक नगर था। यह महा-सेठों की नगरी थी, जिनके पास चीन के रेशम और दूसरे व्यापार से अपार सपत्ति जमा थी। ऐसे नगर पर घुमन्तू लूटेरो की नजर सदा रहती थी, इसलिये सेठो ने अपने नगर की जवर्दस्त किलावदी कर रक्खी थी। जैसे ही पता लगा, कि अरव उनके नगर की ओर आ रहे ह, उन्होने भी लडने की तैयारी कर ली। हर एक हथियार उठा सकनेवाला जवान सेना में शामिल हुआ। वैकदवालों ने सोग्दियो के पास भी सहायता के लिये प्रार्थना की। दुश्मन की सेना ने दो महीने तक कुतैब को घेरे रक्खा, और वह अपने स्वामी हज्जाज के पास सदेश तक न भेज सका। हज्जाज ने कुतैव की मगल कामना के लिये मस्जिदो में विशेप प्राथना करवाई। मध्य-एसिया का हरेक मुसलमान घर का विभीषण था। कुतैव के कितने ही दूत उनके भीतर घूम रहे थे। जो भी सोग्दी या तुर्क मुसलमान हो जाता, वह बिना मोल ही अरबो का गुप्तचर बनने के लिये तैयार हो जाता। कुतैव का प्रमुख चर तदर बुखारा की ओर गया हुआ था। उसे अच्छी रिश्वत मिल गई। उसने लौटकर अपने मालिक से कहा—"तुम्हारे सरक्षक हज्जाज पदच्युत हो गये।" कुतैव ने उसी समय अपने गुलाम सैयार से उसकी गर्दन कटवा दी और जिरार हसनपुत्र से कहा "इस घटना को तुम्हे और मुझे छोडकर और कोई नही जानता। अगर यह बाहर खुल गई, तो मैं निश्चय समझूगा, कि यह तुम्हारा काम है। इसलिये अपनी जवान पर कावू रखना।" तदर के अनुयायियो ने कटे शिरवाले धड को देखा, तो वह जमीन पर गिर कर कहने लगे—"हमने समझा था, वह मुसलमानो का दोस्त है।" कुतैव ने कहा—"नही, वह विश्वासघाती था। भगवान् उसे किये का दड देता, लेकिन उसे यही फल मिल गया। तैयार हो जाओ, कल शत्रुओ से मुकाविला करना है।"

लडाई शुरू हुई। मुकाविला सख्त था। कुतैव वडा वहादुर सेनापति था। वह सैनिको की पाती में घूमता उनका उत्साह बढा रहा था। शाम तक शत्रुओमें भगदड मच गई। बहुत कम ही लोग नगर के भीतर भाग कर जा सके, बाकी सबको अरबो ने तलवार के घाट उतारा। इसमें शक नही, वैकद (पैकद) जीतने में अरबो को भारी कुर्बानी देनी पडी। ५० दिनो तक मुसलमानो की सारी कोशिशें बेकार गई और वह नगर के भीतर नही घुस सके। हर प्रयत्न में भारी प्राणहानि उठा कर लौटना पडा। एक टुकडी ने किले की दीवार के नीचे खाई खोदकर इसे सुरग के जरिये भीतर के अस्तबल से जोड दिया। दीवार में दूसरा मार्ग बनाया, जिसके द्वारा उन्होने अपने कुछ आदमियो को भीतर भेज दिया। जैसे ही मुसलमान किले के भीतर पहुचे,

पहले गये आदमी उनसे आ मिले। कुतैब ने कह रक्खा था "इस सुरग से जो आदमी किले के भीतर पहले दाखिल होगा, मं उसे खून का दाम दूगा। अगर वह मारा गया, तो वह दाम उसकी सतान को मिलेगा।" उत्साह म आकर सभी सैनिक सुरग के भग्नस्थान पर टूट पडे और किले को सर कर लिया। नागरिको ने कुतैब से प्राण-भिक्षा मागी। उसने भी व्यथ खून-वहाना पसद नही किया।

अपनी एक सेना को वहा छोडकर कुतैब मेव की ओर लौट चला। उसका एक सेनप वर्की एक प्रभावशाली सेठ की दो कन्याओ को जबरदस्ती पकड़ कर ले जा रहा था। यह सुन इज्जत के वास्ते वैकदवाले फिर जानपर खेलने के लिये तैयार हो गये। लोगो ने नाक-कान काटकर अरबो की हत्या की। कुतैब एक ही फरसख आगे खूनबून में पहुचा था, कि उसे विद्रोह की खबर मिली। उसने तुरत लौटकर शहरपर हमला कर दिया। नागरिक फिर मजबूती से मुकाविला कर रहे थे। एक मास तक वह नगर को घेरे रहा। अत में सुरग खोदकर आग लगा दी गई। दीवार गिर गई। वैकद वालो ने वहुत प्राथना की, किंतु कुतैब ने उनकी एक भी नही मानी। शहर जीत कर उसने सभी हथियारवद नागरिको को मार डाला और वाकी नर-नारियो को गुलाम वना लिया। वह समृद्ध नगर अब ध्वसो का ढेर रह गया। सारे खुरासान के जीतने से जितनी गनीमत (लूटका माल) मिली थी, उससे भी अधिक वैकद से मिली। यहा के देवालय (वौद्ध विहार) मे एक सोने की मूर्ति[1] ८००० दिरहम वजन की (१ दिरहम=२५ ग्रेन, ¼ तोला) सोने की मूर्ति मिली और डेढ लाख मिस्काल (मिस्काल=१½ तोला) भारी एक सुवणपात्र तथा कबूतर के अडे के बराबर दो मोतिया। लोगो में कहावत थी, कि उन्हें पक्षियो ने अपने चोचो मे लाकर देवता के ऊपर चढाया था। लेकिन मुसलमान अपने अल्लाह को छोडकर किसी देवी-देवता के चमत्कार पर विश्वास करनेवाले नही थे। कुतैब ने अपने स्वामी हज्जाजके पास भेट के साथ विजय की खबर भेजी।

---

[1] यद्यपि मुसलमान अधिकतर मूर्त्ति-भजक के रूप में ही प्रसिद्ध है, लेकिन जहा आमदनी का सवाल आया, वहा उन्होने मूर्त्तियो के साथ दूसरा सुलूक भी किया। अवूरेहा अलवेरूनी (जन्म ९७३ ई० , मृत्यु २०४८ ई०) ने अपने ग्रथ (किताबुल-हिन्द; अन्जुमन तरक्की उर्दू, दिल्ली १९१८, पृ० १४९-१५५) म लिखा है—

"मशहूर मूर्त्तियो में एक सूर्य के नाम की मूर्त्ति मुलतान में थी। इसी सबध के कारण उसका नाम आदित्य रक्खा गया था। यह मूर्त्ति लकडी की वनी, वकरी के लाल रग की खाल से मढ़ी थी। इसकी दोनो आखो में दो पद्मराग मणिया (लाल) जडी हुई थी। मुहम्मद कासिम-पुत्र मुनब्बी ने जब मुल्तान जीता, और वहा की आवादी और समृद्धि के कारण पर विचार किया, तो उसे उसी मूर्त्ति के कारण पाया, क्योकि लोग चारो ओर से उसके लिये तीर्थ करने आते थे। मुहम्मद कासिम-पुत्र ने उसको उसी हालत में छोड देना अच्छा समझा और अपमान के लिये मूर्त्ति की गरदन में गाय का गोश्त लटका दिया, तथा वहा पर एक जामामस्जिद वनवा दी। (पीछे) जब मुल्तानपर करामिता वश का अधिकार हुआ, तो जलम शैवान-पुत्र ने उस मूर्त्ति को तोड डाला, उसके पुजारियो को कत्ल कर दिया और एक वुलन्द टीले पर अपना मकान पुरानी जामा मस्जिद की जगह वनवाया। उमैया वश के समय जो कुछ किया गया था

वैकद वहुत पुराना शहर था। प्रधान वणिक्पथ चीन मे फर्गाना होकर यहा आता था। व्यापारी यहा से नावो द्वारा ख्वारेज्म पहुचते, जहा मे स्थल मार्ग होकर कास्पियन तट, फिर समुद्री रास्ते से काकेशस की कुरा नदी पकड, एक स्रोत पारकर काला सागर तट पर पहुच वहुमूल्य पण्योको जहाज से युरोप के भिन्न-भिन्न देशो म पहुचाते। चीन के व्यापार मे वैकद का वहुत वडा हाथ था। जिस समय कुतैव ने वैकद पर आक्रमण किया, उस समय अधिकाश परिवारो के मुखिया चीन तथा दूसरे देशो में व्यापार के लिये गये हुये थे। लौट कर आने पर उन्होने अपनी स्त्रियो-बच्चो को दाम देकर अरवो के हाथो से छुडाया। वह फिर वैकद को आवाद करने में लग गये। मध्य-एसिया का इतिहासकार नरशाखी लिखता है—"इतिहास म यही ऐसा नगर है, जो जड-मूल से ध्वस्त हो जाने के वाद उसी पीढी म अपने ध्वसावशेष पर समृद्धि के साथ पुन स्थापित हो गया।" "वैकद-निवासियो ने अरवो को कर देना स्वीकार किया। कुतैव ने सधिपत्र लिखकर शाति स्थापित की। उसने शरदकाल मे वैकद विजय किया था। जाडो के लिये वह फिर अपनी राजधानी मेर्व लौट गया। कुतैव के पहले दो साल ज्यादातर लूट के अभियानो मे वीते। यद्यपि तेरमिज और वैकद विजय कर अव अरवो ने अपने को दुर्जेय सावित कर दिया था, किंतु अभी स्थायी राज्यविस्तार और शासन की स्थापना नही हो सकी थी। वैकद अन्तर्वेदका दक्षिण द्वार था। वलख से सोग्द जाने का एक रास्ता तेरमिज से होकर भी था, किंतु वहा दरवद (लोहद्वार) से गुजरना पडता, जो सैनिक दृष्टि से आक्रमणकारियो के अनुकूल नही था।

७०६ ई० का वसत आया। कुतैव फिर दिग्विजय के लिये निकला। उस समय, अन्तर्वेद के नगर और ग्राम दुर्गवद्ध थे, लेकिन वैकद के पतन से लोग समझ गये थे, कि अरवो से मुकाविला करने का परिणाम क्या होता है। नुमुशकत और रातीना ने वार्षिक कर देना स्वीकार किया। लेकिन आगे वुखारा ही नही सारे सोग्द के लोग—सोग्दी और तुर्क—अपने देश और सस्कृति के शत्रुओ से लडने के लिये तैयार थे। ताराव, खूनवून और रामतीन के वीच मे कुतैव

उससे डाह करके पहिले की जामामस्जिदको वन्द कर दिया गया। जब अमीर महमूद (गजनवी) ने इस मुल्क से करामिता का अधिकार उठा दिया, तो पहली जामामस्जिद मे फिर से शुक्रवार की नमाज चालू की और दूसरी को वन्द कर दिया, जो कि अव सिर्फ मेंहदी की पत्तियो का खलिहान भर रह गई है। थानेश्वर नगर की हिन्दू वडी इज्जत करते है। यहा की मूर्ति का नाम चक्र स्वामी है। यह मूर्ति प्राय पुरुष मात्र है और पीतल की वनी हुई है। इस वक्त वह गजनी के मैदान में सोमनाथ के सिर के पास पडी हुई है। सोम-नाथ का सिर महादेव के शिश्न के आकार का है।

सन् ५३ हिजरी (६७२ ईस्वी) की गरमियो मे जव सिसली (द्वीप) को जीता गया, और वहा से रत्न-जटित मुकुट पहिने सोने की मूर्त्तिया लाई गईं, तो अमीर म्वाविया (६६१-६८० ई०) ने सिन्ध भेज दिया, जिसमें उन्हें वहा के राजाओ के हाथ वेंच दिया जाय। उसने देखा कि अखण्ड वेचने मे कीमत ज्यादा—अर्थात् मूर्त्ति के एक दीनार भर सोने की कीमत एक दीनार सिक्के की कीमत से ज्यादा मिलेगी। उसने धर्म की नीति के विरुद्ध शासन की नीति के आधार पर मूर्त्ति के कारण होने वाले भारी दोष (मूर्त्ति पूजा आदि) का ख्याल नही किया।

की सेना घिर गई। सोग्द का तरखून मलिक गोरक (गूरक), खुनुक-खुदात, वर्दान (बुखारा)-खुदात और चीन-सम्राट का भाजा राजकुमार कुर-मगानून ८०००० सेना के साथ आ डटे थे। कुतैव लौटने की सोच रहा था, जब कि एकाएक तुर्क उसके ऊपर टूट पडे। शत्रु की शक्ति को देखकर अरवो म उत्साह नही था। मगर कुतैव बीच मे कूदा। उसके उत्साह दिलाने पर अरव लडने के लिये तैयार हो गये। दोपहर तक अल्लाह ने काफिरो की सेना को भगा दिया। विजयी कुतैव तेरमिज और वल्ख के रास्ते लौटा। रास्ते मे फारयाव में उसे हज्जाज का पत्र मिला, जिसे पढकर स्वामी के हुकुम के अनुसार वह वर्दानखुदात (बुखारा के राजा) को जीतने के लिये लौटा। जमीन म उसने वक्षु पार किया। रास्ते मे सोग्द (समरकद), केश (शहरसब्ज) और नसाफ (नखशाव) के भटो को हराता वह बुखारा पर पडा और निचले खर्काना मे वर्दान के दाहिनी ओर अपनी छावनी डाली। शत्रु की वडी सेना ने उसपर आक्रमण किया। ढाई दिन तक घमासान लडाई होती रही। हम जानते ह, कि इससे पहले भी (६७३ ई० और ६७६ ई० मे) बुखारा की खातून को अरवो ने अनेक वार हराया, लेकिन तुर्क इतनी जल्दी हार माननेवाले नही थे, तभी तो अरब युद्ध म तुर्कों का लोहा मानते थे। अत मे अरव विजयी हुये। अव कुतैवने वर्दान-खुदात (बुखारा) पर सीधे आक्रमण किया, किंतु असफल हो उसे मेव लौटना पडा। कुतैव ने हज्जाज के पास विवरण भेजा, तो उसने नक्शा मागा। नक्शा मिलने के बाद उसने कुतैव को हिदायत दी—"अपने पूर्व लक्ष्य पर लौट जाओ और अपनी प्रार्थनाओ में उसे छोडने के लिये पश्चात्ताप करो। दुश्मन के कमजोर स्थान पर आक्रमण करो। "किश विकिश वसिफ नफसन वरिद् वर्दान" (केश को पीस डाल, नसफ को नष्ट कर डाल, और वर्दान को भगा दे)। सावधानी रखना, जिसमें तुम घिर न जाओ। रास्ते की और कठिनाइयो को मेरे ऊपर छोड दो।"

७०८ ई० (९० हि०) में कुतैव ने बुखारा पर फिर आक्रमण किया। खबर पाते ही वर्दान-खुदात ने सोग्दियो और दूसरे पडोसियो को सहायता भेजने के लिये कहा, किंतु उनके आने से पहले ही कुतैव वहा मौजूद था। उसने बुखारा को घेर लिया। कुमक आते ही अरबो पर आक्रमण हो गया। इस युद्धके वारेमें इतिहासकार तबरी लिखता है—"जब तुर्क नगरसे बाहर निकल आये, तो अज्द कवीलेवालोने अलग अलग लडनेकी आज्ञा मागी। उन्होने सीधे तुर्कों पर आक्रमण कर दिया। कुतैव अपने कवच पर हरा मुखाच्छादक डाले बैठा वडे धैर्य से देखता रहा। तुर्क अज्दो को कुतैवके खेमे तक खदेडते आये, किंतु यहा स्त्रियोने घोडो के मुह पर पीट पीटकर मुसलमानो को मजबूर किया कि वह दुश्मन की ओर लौटें? फिर उन्होने तुर्कों को खदेडकर पहली जगह पहुचा दिया। एक ऊचे टीले का लेना मुश्किल मालूम हो रहा था। कुतैव ने ललकारा—"कौन है, जो उन्हें यहा से भगायेगा?" लेकिन कोई आगे नही बढा। सारा कवीला खडा मुह ताकता रहा। फिर कुतैवने बेनी-तमीन कवीले को उनकी पुरानी प्रतिष्ठा और वीरता का स्मरण दिलाते ललकारा। तमीनो के सरदार वाकीने झडा उठाते कहा—"ओ तमीन की मतानो क्या तुम आज मुझे छोडकर भाग जाओगे?" "नही नही" की आवाज आई। वह वहा पहुचे, जहा पर कि एक छोटी सी धारा शत्रु को अलग करती थी। सवार-अफसर हुसैनी धारा में पहले कूदा। वाकी लोग उसके पीछे पीछे थे। बीचमें पहुचकर वाकीने झडा हुसैनी को दे दिया, फिर अपनी देख-रेख में उस धारा पर पुल वनवाकर वोला—"जो प्राण न्योछावर करने के लिये तयार है, वह पार आवै, जो नही चाहता, वह अपनी जगह पर ही रहे।" ८०० आदमी पिल पडे।

फिर वाकी ने हुसैनी के रिसाले को शत्रु पर प्रहार करते हैरान करने के लिये कहा, और खुद पैदल सैनिको के साथ आक्रमण करने के लिये बढा। दोहरी मार के सामने तुर्क सैनिको का छक्का छूट गया। अरब पुल पर से टूट पडे। शत्रु सेना में भगदड मच गई, वह पूर्णतया पराजित हुई। खाकान और उसके पुत्र दोनो घायल हुये। यह देखकर आसपास के लोग कुतैब के नाम से कापने लगे। सोग्द के तरखून गोरक ने दो सवारो के साथ धारा के पास जा बात करने के लिये प्रतिनिधि बुलाया और कुतैब को कर देना स्वीकार कर वह अपने राज्य (समरकद) की ओर चला गया। कुतैब अब नीजक के साथ मेर्व की ओर लौटा। नरशाखी के कथनानुसार हैयान नवातयेन ने सोग्द तरखून से कहा—अधिक बुद्धिमानी इसी मे है, कि मित्रो को छोडकर अपने राज्य में लौट चले। "जब तक गर्मी है तब तक हम वहा रहेंगे, जब जाडा शुरू होने पर लौटंगे, उस समय सभी तुर्कों को तुम अपने विरुद्ध पाओगे। तुम्हारे सुदर सोग्द को भला वह कब छोडना चाहेंगे ?" तरखून को यह बात पसद आई। फिर पूछने पर हैयान ने कहा "कुतैब के साथ सुलह करो, हरजाना दो। फिर तुर्कों को कहो, कि हज्जाज सिंघ पर भी सेना भेज केश और नकशाब के रास्ते सेना भेज रहा है। तुम पीछे लौटोगे, तो वह भी जरूर लौट जायगे।" उसी रात तरखून ने कुतैब से सघि की। उसे २००० दिरहम दिया। कुतैब ने वचन दिया, कि हम तुम्हारे राज्य (समरकद) को तग नही करेंगे। चीन-सम्राट्के भाजेने भी तरखूनका अनुसरण किया। कुतैब का बुखारा पर यह चौथा आक्रमण था।

स्वतन्त्रता का अंतिम प्रयास—७०९ ई० (९१ हि०) में फिर कुतैब ने विजय-यात्रा आरभ की। उसके अनुयायियो मे बादगियो का राजा नीजक और तुखारिस्तान के राजा जिगाय का एक मत्री भी था। नीजक को आशा थी, कि कुतैब तुर्कों से पिट जायगा, किंतु वह आशा सफल नही हुई। उसने देखा, अरब-शक्ति बडी तेजीसे बढ़ती जा रही है। यही समय है, जब कि मध्य-एसिया की दबी जातियो को अपनी स्वतत्रताके लिये अतिम प्रहार करना चाहिये, फिर ऐसा समय मिलने वाला नही है। किसी बहानेसे कुतैबसे छुट्टी ले वह तुखारिस्तान चला गया। खुल्म में पहुचते ही उसने बगावत का झडा खडा कर दिया। अपने खजाने को काबुलके राजा (हिंदू) के पास भेजकर उससे मदद मागी। बलखके राजा (इस्पाहबद), मेवरूद, तालिकान, फारयाब और जुज्जान के राजाओ को भी धर्मयुद्ध में सम्मिलित होनेके लिये निमत्रित किया। सब तैयार हो गये, लेकिन तुखारिस्तान-शासक जिगाय साथ नही हुआ। नीजकने अपने अधिराज (जिगाय) के पैरो में सोने की बेडी डालकर बदी बना लिया और तुखारिस्तान से कुतैबके प्रतिनिधि को विदा कर दिया। कुतैब को यह खबर उस समय मिली, जब कि जाडा शुरू हो चुका था, और सेनायें जाडे के निवास के लिये जहा-तहा बिखर गई थी।

तुखारिस्तान का भीषण सघर्ष ९१ हिजरी (७०९ ई०) के शरदमें शुरू हूआ। पिछली अध-शताब्दी से अरबो के साथ यहा के लोगो का सघर्ष हो रहा था। वह उनसे जरा भी दया-माया की आशा नही रखते थे, न उनकी किसी बात पर विश्वास रखते थे। सघि करना और तोडना अरब सेनपो का साधारण काम था। क्रूरता मे वह उत्तर के घुमन्तू विजेताओ को भी मात करते थे। धन और स्त्रियो का लूटना शायद ही कभी इतना लोगो ने देखा हो। सबसे बुरी बात जो वहा के लोगो को खटकती थी, वह था उनके मन्दिरों, धर्मस्थानो और धार्मिक वस्तुओ का अल्लाह के नाम पर निर्दयतापूर्वक सहार करना। तुखारिस्तान और मध्य-

एसिया के लोग धार्मिक बातो म सकीण नही थे। वहा बौद्ध, जर्थुस्नी और ईसाई शातिपूर्वक रहा करते थे। उनके शासक (तुक) किसी एक घम को मानते हुये भी सभी धर्मो के प्रति उदारता दिखलाते थे।

कुतैव के लिये जरूरी था,कि नीजकको इस वगावतके लिये दड दे,नही ता मध्य-एसिया पर जो उसकी धाक जम गई थी, उसका खातमा हो जाता। उस समय मेव मे मौजूद सैनिक ही आसानीसे मिल सक्ते थे। उसने अपने भाई अव्दुरहमान को २००० सेनाके साथ वलख भेजा और वहा वसत तक चुपचाप रहने को कहा फिर तुखारिस्तान पर आक्रमण करना, उस समय "म तुम्हारे पास रहूँगा।" जाडे के अत मे शहर अवावद, अवहरशहर (नेशापुर), सरख्श, और हिरात से भी सेना मगवा ली। मेव म सैनिक और नागरिक अधिकारी नियुक्त कर कुतैव ने पहला आक्रमण मेवरूद पर किया। वहा का सामन्त हारकर भागा और उसके दो पुत्रो को कुतैव ने सूली पर चढवा दिया। फिर तालिकान में लडाई हुई, जिसमें तुक हार गये। जो मारे जाने से वचे, उन्हें अरवो ने फासी पर लटका दिया। कहते है, उनके लिये मील लवी फासी की पाती खडी की गई थी। अरव शासक नियुक्त करके कुतैव आगे वढा। फाराव और जुज्जान ने विना विरोध के अधीनता स्वीकार की। कुतैव का स्थानीय शासको पर या तो विश्वास नही था, या वह उनकी अवश्यकता नही समझता था। अरव इतने शक्तिमान् थे, कि वह स्वय शासन कर सकते थे। कुतैव ने इन दोनो जगहो के लिये भी अरव अफसर नियुक्त किये। वलखवाले पहले से-शात रहे।

एक दिन रहनेके वाद कुतैव खुल्मकी पहाडियोमे घुसा। नीजकने वगलानमें अपनी छावनी डाली थी और घाटे की रक्षा के लिये एक टुकडी नियुक्त कर दी थी। कुतैव तूफान की तरह आगे वढ़ता जाकर नीजक के दुर्भेद्य गढ के सामने रुका। रूव और समिन्जान के राजाओ ने क्षमादान पा गढ का दूसरा रास्ता वतला दिया। तुक वुरी तरह से घिर गये। अरवो ने सवको तलवारके घाट उतारा, और वहुत थोडे जान लेकर भाग पाये। वहा से कुतैव समिन्जान की ओर चला। वगलान और समिन्जान के वीच के रेगिस्तान में नीजक किलावदी करके स्वय केज चला गया, जिसका रास्ता एक ही ओर से था, जिसपर कोई घोडे पर सवार होकर नही जा सकता था। कुतैव ने दो महीने तक उसे घेरे रखा, लेकिन किले को नही सर कर सका। नीजक की रसद खतम हो गई, कुतैव को भी इस दुगम पहाडी मे लडने मे डर लगने लगा। उसने शाम से काम निकालना चाहा, और सुलेमान को नीजक के पास आत्म-समपण करने के लिये भेजते उससे कह दिया, कि अगर सफल नही हुये, तो तुम्हें जान से हाथ धोना पडेगा। वह जाडे के इन्तिजाम और कई दिन के सामान के साथ गया। नीजक से बात हुई। नीजक ने क्षमादान की शर्त रक्खी। प्राण वच जायेंगे, इस आशा से वह सुलेमान के साथ कुतैव के पास गया। वदी वनाकर कुतैव ने उसे पास रखा और वसरा में हज्जाज के पास पत्र भेजा। उस समय अरव और अजम (इराक और ईरान) का एक ही मलिक (उपराज) होता था। ४० दिन के वाद उत्तर आया, कि नीजक का मार डालना आवश्यक है। लेकिन कुतैव वचन दे चुका था। वह तीन दिन तक तम्बू में वद रहकर सोचता रहा। लेकिन स्वामी की आज्ञा का कैसे उल्लघन कर सकता था? चौथे दिन उसने नीजक और उसके ७०० अनुयायियो को मरवा, नीजक के शिर को हज्जाज के पास भेज दिया। यह एक ही उदाहरण नही था। ऐसे अनेक उदाहरणो के कारण मध्य-एसिया के लोग अरवो को झूठे, धोखेवाज और खून के प्यासे मानते थे। नीजक ने अपने अधिराज तुखारिस्तान के राजा का

सोने की जजीर में बाध रक्खा था। उसे भी मुक्त कर कुतैब ने दमिश्क भेज दिया। कुतैब यह विश्वासघात करने के बाद मेव लौटा। जुज्रजान के राजा ने प्राणभिक्षा पाने की शर्त पर अधीनता स्वीकार करनी चाही। कुतैब ने स्वीकार किया। राजा स्वय सामने आया और अपने लिये जामिन दिये। कुतैब ने एक अरब हबीब को बुलाने के लिये भेजा। जुज्रजान के राजा ने अपने परिवार के कई आदमी भेजे, फिर स्वय मेर्व गया। उसके साथ कुतैब ने सधि की, किंतु लौटते वक्त जहर देकर तालिकान में उसे मरवा दिया। इस पर लोग बिगड उठे और उन्होने हबीब को मार डाला। अब कुतैब ने राजा के परिवार के सभी जामिनो को मार डाला। इसी साल कुतैब ने सूमान, केश, नख्शाब तीनो नगरो पर अधिकार किया और सोग्द के तरखून के ऊपर अपने भाई अब्दुरहमान को आक्रमण करने के लिये भेजा। तरखून ने कर और जामिन दिया। बुखारा में कुतैब भी मौजूद था। अब्दुर्रहमान समरकद से लौटकर वहा आ भाई से मिला। फिर दोनो साथ मेव लौटे। तरखून की इस बात से सोगाद के लोग नाराज हो गये। तरखून ने आत्म-हत्या कर ली।

७११ ई० (९३ हिजरी) का साल आया। इसी साल हज्जाज ने अपने सेनापति मुहम्मद कासिमपुत्र को सिंधविजय के लिये भेजा। वह सिंधु के मुहाने पर उतरा। आपस मे लडते सिंधी राजाओ को हराकर उसने सारे सिंध को खलीफा के लिये जीत लिया। हज्जाज की विजयाकाक्षा इतनी सफलता से थोडे ही तृप्त होनेवाली थी। उसका मनसूबा चीन विजय करने का था। शायद उसे मालूम नही था, कि चीन कितना दूर है, वहा का थाङवश कितना मजबूत है और रास्ते में तरिम उपत्यका तिब्बती घुमन्तुओ के शक्तिशाली हाथो मे है। हज्जाज ने घोषित कर दिया था, कि जो कोई चीन को जीतेगा, उसे हम चीन का राज्यपाल (वली) बनायेंगे। ऐसी सरगरमी में कुतैब बिना कुछ नई सफलता दिखलाये चुप रहकर अपने स्वामी का कृपापात्र कैसे रह सकता था? उस समय ख्वारेज्मका राजा चिगान था, जिसका छोटा भाई खोरजाद बडे भाई से अधिक प्रभावशाली था। वह उससे खतरा समझने लगा और भाई के डर से मुक्त होने के लिये चिगान ने चुपके से कुतैब को बुला लिया। कुतैब एकाएक हजारास्प जा पहुचा। हजारास्प वह जगह है, जहा वक्षु के दोनो किनारे इतने सँकरे हैं, कि थोडे से आदमी बडी सेना का मुकाबिला कर सकते हैं। खोरजाद ने दूसरा चारा न देखकर आत्मसमर्पण कर दिया। कुतैब ने उसे चिगान के हाथ में दे दिया। चिगान ने कुतैब की बडी भेंट-पूजा और स्वागत-सत्कार किया। चिगान का एक और प्रतिद्वंदी खामजर्द का राजा था, जिसे दबाने मे उसने कुतैब से मदद चाही। यह काम कुतैब ने अपने भाई अब्दुर्रहमान को सौंपा। अब्दुरहमान ने हमला करके खामजर्द को मार डाला, देश को जीत लिया और खामजर्द के ४००० दासो और बहुत से लूट के माल को लिये मेर्व लौटा।

इसी समय सोग्दमें फिर भारी उथलपुथल मची। कुतैब सीधे समरकदपर आक्रमण करने गया। सोग्दियोने अपने वीर नेता तथा सोग्दके इखशीद के नेतृत्वमें अरबोका भयकर प्रतिरोध किया। अरबोकी सेना बहुत बडी थी। तुर्क अब अगर कुछ शक्ति रखते थे, तो उत्तरमे, किंतु इस समय पश्चिमी तुर्क कगानको अपने भीतरी झगडोंसे फुरसत नही थी। अरबोका खतरा उनके लिए दूरकी बात थी। अरब भारी सख्यामें पहुचकर समरकदको घेरनेमें सफल हुए। गोरकने शाश (ताश्कद) के राजासे सहायता मगाई। कुतैबने २००० शाशियोपर एकाएक

आक्रमण करके उन्हें मार भगाया। काफी समय तक गोरकने मुकाबिला किया। कितनी ही वार शहरसे वाहर निकलकर तुर्क अरवोंपर आक्रमण कर उन्हें तग करते, लेकिन रसद-पानीकी कमी और लडनेकी शक्ति कम हो जानेके कारण अतमें गोरकने सुलहकी प्रार्थनाकी। कुतैबने इसके लिए भारी हरजाना मागा और शहरमे मस्जिद बनवा, नमाज शुरू करानेकी वातको भी शर्तोमें रक्खा। शर्त मजूर करली पडी। ८०० हथियारबद अरव समरकदमे बुतपरस्तीको नेस्तोनाबूद करनेके लिए घुसे। उन्होंने समरकदकी सभी मूर्तियोंका तोड या जला डाला। इस कामको सवमे पहले कुतैबने अपने हाथो आरभ किया। गोरक खूब जानता था, कि अरब क्यो सफलता प्राप्त कर रहे है। उसने कुतैबके उत्तरमे कहा भी था—"तू अपने शत्रुओंको उनके भाई-विरादरोंकी मददसे जीत रहा है।" और ऐसे भाई-विरादर मुस्लिम अरवोकी मदद करनेके लिए सभी देशोमे तैयार थे।

७१२ ई० (९४[1] हि०) के जाडोमें विश्राम करलेके वाद कुतैब फिर एक बडी सेनाके साथ विजययात्राके लिए निकल वक्षु पार हुआ। इस सेनामे केश, नखशाव और ख्वारेज्मके भी २०००० सैनिक थे। काशान, और खोजन्दको जीत उसने शाशपर आक्रमण कर इस्लामकी विजयध्वजा मध्य-एसियाके सबसे उत्तरी नगरपर जा गाडी। आधी शताब्दीके प्रतिरोधके बाद मानो मध्य-एसिया अब भवितव्यताके सामने शिर झुकानेके लिए तैयार था। क्या न होता, जब कि धर्म वदल कर अपने भाई ही लाखोकी तादादमे विजेताओका साथ दे रहे थे। अरब विजेता तीन पीढ़ियोंमे अजमी (गैर-अरब) लोगोंके सपर्कमे आकर उनकी स्त्रियोंसे सताने पदा कर अब शुद्ध अरब भी नही रह गए थे। जहा तक स्त्रियोका सबध था, अरब शुरू ही से रक्त-शुद्धिको नही मानते थे। कुतैबने बुखारा, समरकद आदिमें पहले पहल मस्जिदे बनवाईं, जो कि अब भी इन शहरोकी सबसे पुरानी मस्जिद है। उसने बुखाराके आधे घरोको खाली करवा उनमें अरवोंको बसा दिया था। मेवम पहलेही ऐसा किया जा चुका था। घरमें बसे अरब जहा सुरक्षा रखनेका काम करते थे, वहा हर तरीकेसे लोगोको मुसलमान बनानेका प्रयत्न करते थे। अजान और कुरानका ऊचे स्वरसे पाठ कुफ्र भगानेकी सबसे बडी दवा है, यह कुतैबकी मान्यता थी।

७१३ ई० मे कुतैबका सरक्षक हज्जाज मर गया। अगले साल खलीफा वलीद भी मर गया, जो कि भारतवर्षके अरब-शासित प्रदेश (सिंध) का प्रथम मुसलमान खलीफा था।

६ खलीफा सुलेमान (७१४-७१७ ई०)

वलीदके वाद उसका भाई सुलैमान नया खलीफा बना। वलीद अपने पुत्रको खलीफा बनाना चाहता था, जिससे हज्जाज भी सहमत था। स्वामीके सहमत होनेपर कुतैब कैसे असहमत रह सकता था? अपनी इस सहानुभूतिके कारण कुतैबको नया खलीफा फूटी आखो देखना नहीं चाहता था। कुतैबको यह बात मालूम हो गई थी, इसीलिए सुरक्षित समझ उसने परिवारको समरकद पहुचा दिया। ७१४ ई० (९६ हि०) में कुतैबने अतिम अभियानका नेतृत्व किया। वह त्यानशानकी पहाडियोंमे घुस गया, और फर्गाना-विजय करके तेरक जोत पारकर काश्गरके

[1] ७-१०-७१२ से २८-८७-७१३ ईसवी तक (सिन्खोनिसिचिस्किय तवलित्सी, लेनिनग्राद १९४०)

ऊपर चढा। तुर्कोके उत्ताराधिकारी उइगुर फूटकी बीमारीसे ग्रस्त थे, और हरेक उइगुर राजकुमार कगान से अपनेको स्वतत्र समझता था। काशगर, खोतन, कुलजा आदि सभी जगहोंके राजकुमार अलग-अलग स्वतत्र शासक बन बैठे थे। कुतैबको एक जगह एक ही छोटे राजामे मुकाबिला करना पडता था। काशगरके राजाको नतमस्तक होना पडा। लेकिन कुतैब केवल राज्य ही दखल करना नही, बल्कि वहाके लोगोको मुसलमान भी बनाना चाहता था। यह जहाद, धर्मयुद्ध था। धमयुद्धकी क्रूरताको अरबोने कहा तक पहुचा दिया था, इसे कहनेकी अवश्यकता नही। धम-मदिरो और धमके नेताओंके साथ वह किसी प्रकारकी दया दिखलानेके लिए तैयार नही थे। इस शताब्दीके आरभमे जमन विद्वान् लेकाकने रेगिस्तानमे एक उजडे नगरकी खुदाईके वक्त एक भयकर दृश्य देखा था। एक घरके भीतर कितने ही बौद्ध और नेस्तोरी भिक्षु तलवारके नीचे ढेर हुए पाये गये। यद्यपि इस्लामने आरभिक कालम ईसाइयो और यहूदियोके प्रति बहुत सहानुभूति दिखलाई थी, पैगबर मुहम्मद स्वय उनके प्रशसक थे, किंतु अब नेस्तोरी ईसाई भी अरब-विजेताओंके लिए काफिरोंसे कम घृणाके पात्र नही थे। मध्य-एसियाका यह पूर्वी भाग (तरिम-उपत्यका) कुतैबके सामने "त्राहि मा" "त्राहि मा" करता रहा, किंतु उसका कोई फल नही हुआ। कही पर किसीने यदि थोडा मुकाबिला किया, तो उमे बडी निर्दयतापूण हत्याका सामना करना पडा, जिसमे बच्चे-बूढे भी नही बच सके। तुर्फानके लोगोने अरबोको देखते ही इस्लाम स्वीकार कर लिया। इसी से वह धन और जन दोनोकी रक्षा समझते थे। कुतैबकी सेना क्यो न लडनेके लिए तैयार होती, जब कि वह जानती थी, कि रेशम-पथके इन समृद्ध नगरोकी सारी सपत्ति उन्हें लूटमे मिलने वाली है।

लेकिन, इस अपार लूटने अरबोंके भीतर भी भारी ईर्ष्याका बीज बो दिया था। कुतैबके अनुयायी एक दूसरेके धनको देखकर अपने स्वामीसे भी सतुष्ट नही थे। कुतैबका पुराना सरक्षक हज्जाज मर चुका था। नया खलीफा सुलेमान उसका शत्रु था। खलीफाका प्रधान सलाहकार यजीद मुहल्लबपुत्र था, जिसे कुतैबने खुरासानके राज्यपालके पदसे वचित किया था। इधर खुरासानके अरब कबीलोमें दलबन्दीने भयकर वैमनस्य पैदा कर दिया था। भविष्य क्या होगा, इसे कुतैब जानता था। उसने एकके बाद एक तीन चिट्ठिया दूत द्वारा खलीफाके दरबारमें भेजते दूतसे कह दिया—इन तीनो चिट्ठियोंमेंसे पहले उस चिट्ठीको देना, जिसमें खलीफाके प्रति राजभक्ति प्रकट की गई है, फिर दूसरी चिट्ठी देना, जिसमें यजीद मुहल्लबपुत्रके प्रति घृणा प्रकट की गई है, तब तीसरी छोटे कागजवाली[1] चिट्ठी देना, जिसमे लिखा है—"मै सुलेमानको अपना खलीफा नही मानता और मैंने उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया है।" कुतैबने दूतको कह रक्खा था, कि चिट्ठी देते वक्त खलीफाके चेहरेका भाव देखते रहना। यदि वह पहले पत्रको पढकर उसे यजीदको देदे, तो फिर उसके हाथमें दूसरा पत्र देना, यदि उसे भी वह यजीदको दे,

---

[1] अल्बेरुनी ने "किताबुल हिन्द" (पृ० २२४) में लिखा है—"किरतास मिस्र में बर्दी की गोद से बनाया जाता है, और उसकी बनावटमें अक्षर खोद दिया जाता है। करीब करीब हमारे समय तक खलीफोके आज्ञा-पत्र इसी पर लिखे जाते थे। इसमें शब्दो के बदले जानेकी सभावना नही है, क्योकि वह इससे खराब हो जाता है। कागज चीनका अविष्कार है। पहिले एक चीनी ने समरकन्द में कागज बनाया।"

तो तीसरा पत्र पेश करना। खलीफाने पत्रको यजीदके हाथमें देनेके सिवा और काई क्रोधका भाव प्रकट नही किया। दूत लौट आया। कुतैवके दूसरे और तीसरे पत्र खलीफाको नही दिये गये, इसलिए खलीफाने उसे उसके पदपर वहाल रखनेका स्वीकृतिपत्र दे अपने एक दरवारीको भेजा। हलवाई (वगदादसे उत्तर-पूरव ईरान और तुर्की सीमापर एक महत्वपूर्ण नगर) में पहुचकर खलीफाके दूतने सुना, कि कुतैवने वगावत कर दी है। वह वहीसे लौट गया।

अपने दूतसे सारी वाते सुनकर कुतैवको जल्दी करनेके लिए अफसोस हुआ। सलाह करने पर उसे मालूम हो गया, कि सुलेमान उसे क्षमा नही करेगा, हा, इस्लामकी सेवाओंके लिए शायद उसका प्राण वच जाये। कुतैवने कहा "वाय, मौतसे मुझे डर नही, लेकिन खलीफा जरूर यजीदका खुरासानका वली वनायेगा, और मुझे सारी दुनियाके सामने वेइज्जत करेगा। इससे मुझे मौत अधिक पसद है।" उसके भाई अब्दुरहमानकी सलाह थी—"समरकद जाकर अपने अनुचरोंसे कहो जिसे मेरे साथ रहना हो, वह रहे और जो लौट जाना चाहता हो, वह लौट जाये। इसके वाद खलीफासे स्वतत्र होनेकी घोषणा कर दो।" लेकिन, कुतैवने अपने दूसरे भाई अब्दुल्ला की सलाह मानी और तदनुसार अपने अफसरोको वुलाकर खलीफाके विरुद्ध विद्रोह करनेके लिये वडा जोशीला व्याख्यान दिया, अपनी इस्लामकी सेवाओ और सफलताओकी वात कही और यजीदके दुष्कर्मोको खोलकर कहा। तव भी उसके अफसर विल्कुल चुप रहे। इसपर कुतव गुस्सेमें पागल होकर अपने सहायकोको "कायर, वुद्दू, काफिर, पाखडी" कहते कापते हुए अपने महलमें चला गया। अब्दुरहमान और दूसरोने उसे शात करनेकी कोशिश की, मगर कुतैव किसीकी वात माननेके लिए तैयार नही था। अरव भी इस वात को सहन नही कर सकते थे, विशेषकर, जवकि वह जानते थे, कि इस्लामका खलीफा कुतैवके विरुद्ध है। उन्होने वदला लेने का नारा लगाते उसके महलको घेर लिया। जिनके वलपर उसने सारी सफलतायें प्राप्त की थी, और काफिरोपर अत्यन्त निर्दयतापूर्ण अत्याचार किए थे, वही अब उसके जानके गाहक हो गये। कुछ लोगोंने उसके अस्तवल में आग लगा दी। एक टुकडी ने उसके दरवार-हालमे दाखिल हो पहले ही तीरसे घायल कुतैव का तुक्का वोटी कर डाला। इस तरह ४६ सालकी उम्रमें धर्मके नामपर नृशसता करनेमें अद्वितीय कुतैवका अवसान हुआ।

कुतैव जैसे दूसरे इस्लाम-प्रचारक शायद ही और हुए हो। अपने बुखाराके चारो अभियानोमें वह वहाके नागरिकोको उनका धर्म छुडाकर जवदस्ती मुसलमान वननेके लिए वाध्य करता रहा। उस समय तो लोग प्राण और धनकी हानिके डरसे मुसलमान हो जाते, किंतु फिर उन्हें अपनी जातीय सस्कृति और सवधी याद आते, तो फिर वुत-परस्त (वुद्ध-पूजक) वन जाते। ७१२ ई० (९४ हि०) में समरकदके एक अग्निमदिरको गिराकर उसकी जगह कुतैव ने जुमा (शुक्रवार) की नमाजके लिए एक वडी मस्जिद वनवाई, जिसमें जो भी नमाज पढ़ने जाता, उसे दो दिरहम दिया जाता। कुतैवने घरोको खाली करके ही अरवोको नही वसाया था, वल्कि हर परिवारको अपने घरमें एक-एक अरव रखनेके लिये मजवूर किया था, जो चर, धर्म-प्रचारक और घरदामाद सवका काम करता। एक अग्रेज इतिहासकार डेनिसन् रास[1] ने लिखा है "उस (कुतैव) का स्वभाव

---

[1] The Heart of Asia "His character was an epitome of the qualities, which made Islam a terror to mankind, and ultimately conspired to reduce it to empotance"

उन गुणोका राशीभूत रूप था, जिसने मानवताके लिए इस्लामको भयकी वस्तु बना दिया और अतमें उसे निष्पौरुष बना देनेमें सहायक हुआ।"

कुतैबके बाद विद्रोहियोके अगुवा वाकीने खुरासानका राजकाज सभाला।

(१६) यजीद मुहल्लब-पुत्र (७१५ ई०) कुतैबके मरनेके ९ मास बाद यज़ीद राज्यपाल बनकर आया। उसने आते ही वाकीको पकडकर वदीखानेमे डाल दिया और कुतैबके दूसरे साथियोको दड दिया। कुतैबके अत्याचारोंसे सोग्दके लोगोमें असतोष था, और आशा की जाती थी, कि यजीद पहले उधर जायेगा। किंतु, यजीदने पूरब न जाकर खुरासानसे पश्चिमकी ओर विजय-यात्रा करनी चाही। ७१६ ई० (९८ हि०) को उसकी सेना जुर्जान और तबारिस्तानपर पडी। कास्पियनके पश्चिम खजारोका बहुत जोर था, जिनसे रक्षा पानेके लिए अजोफ तट तक किलाबदी की गई थी, तो भी खजार ओर्दूका आतक इतना था, कि सीमाके दक्षिणके निवासी अपनी सुरक्षाके लिए खजारोको भी कर दिया करते थे। यज़ीदने खुरासानका प्रबध अपने पुत्र मुखल्लदके हाथमे छोडा था। उमैया (और पीछे अब्बासी) वशकी शासन-व्यवस्थाके अनुसार खलीफा स्वय अपना मलिक (क्षत्रप, उपराज) नियुक्त करता, जो अपनी इच्छानुसार किसीको प्रदेश का वली (राज्यपाल) बनाकर भेजता। वली अपने अधीनस्थ सारे कर्मचारियोकी नियुक्ति करता। जब तक नीचेवाले के लूटके मालमेंसे ऊपरवालोको काफी भेट मिलती रहती, तब तक उसको कोई खतरा नही था। जुरजानके लोगोने अपनी स्वतत्रता, धर्म और सस्कृतिके दुश्मनोका जी-जानसे प्रतिरोध किया, जिसपर यज़ीदने शपथ ले ली कि "मं तब तक अपनी तलवार को म्यानमें नही डालूगा, जब तक इतना खून न बह जाये, जिससे आटेकी चक्की चल सके, और उसके पिसे आटेकी मै रोटी न खालू।" कहते हैं, उसने अपनी प्रतिज्ञा पूरी करके छोडी। जब इस्लामका महासेनापति-गवर्नर ऐसा कर सकता था, तो नीचेवालोकी बात ही क्या? काफिरोंके विरुद्ध जो भी किया जाये, सब उचित था।

७ खलीफा उमर II अजीजपुत्र (७१७-७२० ई०)

सुलेमानके मरनेपर उमर खलीफा बना। निष्पक्ष इतिहासकार भी कहते है, कि उमैया खलीफोमें यह सबसे भलेमानुस और सदाचारी था। इसने यज़ीदके अत्याचारोको सुना। यजीदने गनीमत (लूट) की बहुतसी राशि अपने पास दबा ली थी। खुरासानके नौमुस्लिमोने भी उसकी निर्दयता और अत्याचारके लिए खलीफाके यहा गोहार की थी। उसने हुकुम दिया, कि सभी जातिके मुसलमानोको अरब मुसलमानोंके बराबर माना जाये। काफिरोपर चाहे जितना कर लगाया जाय। जिन लोगोने इस्लाम स्वीकार कर लिया है, उन्हें खतना करानेके लिये मजबूर न किया जाय। राज्यपालोका काम है, वह अपने प्रदेशमें इस्लामका प्रचार करें, रबात (सराय) स्थापित करें, मस्जिदें बनायें। दूसरे धर्मवालोंके गिर्जे, सिनागोज और अग्निमदिर न तोडे जाय, हाँ, उन्हें नये मदिरोंके बनानेकी इजाजत नही है।

(१७) जर्राह अब्दुल्लापुत्र ७१७-७१९ ई०)—खलीफा उमरने यजीदकी जगह जर्राहको खुरासानका शासक नियुक्त किया।

८ खलीफा यजीद II अब्दुलमलिक पुत्र (७१९-७२४ ई०)

उमरके मरनेपर यजीद नया खलीफा बना। हर नये खलीफाके बननेपर कुछ गड़बड़ होती थी। तीसरे खलीफा म्वाविया II (६८३-६७७ ई०) के समयसे खिलाफत दो टुकड़ामें बँट गई थी, पश्चिमी खिलाफत (अरब-साम्राज्य)के खलीफा अब्दुल्लाके वंशज होते थे, जिन्होंने स्पेन तकको अपने अधिकारमे कर लिया था। नये खलीफाके सिंहासन-आरोहणके समय मौका पाकर यजीद मुहल्लबपुत्र जेलसे भागनेमे सफल हुआ। उसने बसरामें पहुंचकर खलीफाके विरुद्ध बगावत शुरू की, जिसका असर पूर्वी प्रदेशोंपर भी पड़ा और विद्रोहको एक साल बाद दबाया जा सका। खलीफाने मस्लमाको उभय इराक (मसोपोतामिया और ईरानका) क्षत्रप नियुक्त किया, जिसने कूफाके पास फुरात नदीके तटपर यजीदको हराकर मार डाला।

(१८) सईद अब्दुल्ला पुत्र(७१७ ७१९ ई०) मस्लमाने सईदको खुरासानका राज्यपाल नियुक्त किया। इस वक्त सोगद और फर्गानाके लोगोंने आम बगावत कर रखी थी। लेकिन सोग्दी तरखून अरबोंका करद सामन्त था। उसे देशद्रोही कहकर विद्रोहियोंने दबाना चाहा। तरखूनने मेर्वमे सहायता मागी, लेकिन नया राज्यपाल निबल और ढुलमुल बुद्धिका आदमी था, वह सहायता नही भेज सका। इसपर सोग्दियोंने अपने उत्तरके पडोसी तथा शक्तिशाली तुर्क कगान सुलू (७१६-७३८ ई०) से मदद मागी। सुलूने विधर्मियोंके खिलाफ धर्मयुद्ध करना लाभकी बात समझी, और समरकदपर अक्रमण कर दिया। अरब देरसे आये, तब तक तुर्क ३००० सोग्दियोंको कतल कर चुके थे। यजीद दो साल तक खलीफा रहा, और इस सारे समय मध्य-एसियामे बराबर अशाति बनी रही। सुलू खाकान विद्रोहियोंकी पीठपर था। उधर पश्चिमकी ओर खाजार और किपचक कबीले भी अरबोंको फूटी आखा नही देखते थे, जिसके लिए अरब सेनाको उधर भी बराबर लडना पड रहा था। वहा भी सफलता का मुह देखनेको नही मिला। जिस समय मध्य-एसियावाले अपने सब तरहके दुश्मन अरबोंसे लड रहे थे, उस वक्त अरबोंके नीचे पिसे जाते सोग्दियोंको शरण देना पडोसी सहधर्मियोका कर्तव्य था। फर्गानाके शासकने ७२१-७२२ ई० मे अपने यहा इस्फारा जिलेमे सोग्दियोका रहनेके लिये जगह दी। कुतैब द्वारा नियुक्त शासक हिशाम अब्दुल्लापुत्रको निकालकर फर्गाना पहले ही स्वतत्र हो चुका था।

उभय-इराकमे पहलेकी अपेक्षा आमदनी कम हुई। यह भी सदा होते युद्धका परिणाम था। इस कसूरमे मस्लमा ७२० ई० (१०२ हि०) मे हटा दिया गया, और उसकी जगह उमर हुबैरा पुत्र क्षत्रप नियुक्त हुआ। बेचारा सईद झूठे ही कुजैना (हिजडा) कहा जाता था, वह समरकदकी दीवारोंके नीचे लड रहा था, जब कि दमिश्कसे बर्खास्तगीका हुक्म आया।

(१९) सईद अम्रपुत्र हरसी (७२१-७२२ ई०) नया राज्यपाल बहुत चुस्त आदमी था। विद्रोही सोग्दी सुलूकी सहायतासे बहुत मजबूत थे। उन्होंने जब नये राज्यपालकी दृढता देखी, तो उनमे से बहुतेरो—विशेष कर देहकानो (जमीदारो) और व्यापारियो—ने जन्मभूमि छोडनेका निश्चय कर लिया। साग्दका तरखून गोरक इससे सहमत नही था, तो भी फर्गानाके राजाके इस्फारामे जगह देनेकी बात मानकर बहुतसे लोग वहा चले गये। पीछे उसने विश्वासघात कर शरणार्थियोंको अरबोंके हाथमें दे दिया। सईद ने

समरकंदको अपने हाथमें करके खोजद (वर्तमान लेनिनाबाद) को घेर लिया। शहरके समर्पण करनेपर हम सब अपराध क्षमा कर देंगे, यह वचन दे कर भी उसने सोग्दियोंके साथ विश्वासघात कर उन्हें कत्ल कर डाला। वचन-भंग और निरीहो-निरपराधोंकी निर्मम हत्या अरब-शासन का आवश्यक रूप और मध्य-एसियामें इस्लामके प्रचारका साधारण ढंग था। इसी तरहकी धोखेबाजीसे सईदने जरफ्शा (सोग्द)-उपत्यकाके सभी दुर्गोको अपने हाथमें किया। कश्क-उपत्यकामें भी यही बात हुई। वस्तुत सोग्दी जितना लडनेमें बहादुर थे, और जिस प्रकार सुलू जैसा पृष्ठपोशक उन्हें मिला था, वैसी ही यदि उनमें एकता होती, तो सईद फिर सोग्दपर अरब-शासन स्थापित नही कर सकता था। सोग्द-विजय करके सईदने जाकर फर्गानाको घेर लिया। वहाके राजाने एक लाख दिरहम और बहुतसे गुलाम देकर छुट्टीपाई। फिर "शठे शाठ्य" की नीति उसे पसद आई, और अगली रात जब मुसलमान अपनी सफलतासे निश्चित हो सो रहे थे, उसी समय वह १०००० आदमियोको लेकर उनपर टूट पडा और बहुतोंको मार डाला। किंतु प्रधान सेनापति आलमको जब खबर लगी, तो उसने आकर खूब बदला लिया, और फर्गानाके राजा (तुर्क) को उसके २००० अनुयायियोंके साथ मार डाला। इस तरह सफल होते हुए भी ७२२ ई० (१०४ हि०) मे सईद हरसीको पदच्युत कर दिया गया और उसकी जगह मुस्लिम नया सेनापति बनकर आया।

मुस्लिम सईदपुत्र किलाबी सारी पूर्वी सेनाका प्रधान-सेनापति नियुक्त हुआ था। उसने सुलू खाकानके हाथो हार पर हार खाई और बडी मुश्किलमे कुछ सेनाके साथ जान बचाकर आमू (जैहू) दरियाके दक्षिण भाग कर बलख पहुचनेमे सफलता पाई।

९ खलीफा हिशाम (७२३-७४२ ई०)

नया खलीफा यजीदका भाई था। इसने उमरकी जगह खालिद अब्दुल्लापुत्र कसरीको उभय-इराकका क्षत्रप बनाया और खालिदके भाई (२०) असद अब्दुल्लापुत्रको एक बडी सेनाके साथ तुर्कोंसे बदला लेनेके लिये मध्य-एसियाकी ओर भेजा। असद (सिंह) भी सुलूके सामने सियार साबित हुआ। तीन बार वक्षु पार हो सोग्दकी ओर बढना चाहा, लेकिन हर बार उसे खाली हाथ लौटना पडा। इस असफलतासे क्रुद्ध होकर उसने अपने सेनापतियोको बहुत बुरी तरह फटकारा और बाल मुडवा, नगा कर, बेडी डाल उन्हे अपने भाई खालिदके पास भेज दिया। खालिद अपने भाईकी इस मूर्खतापर बडा नाराज हुआ और उसने असरस अब्दुल्लापुत्रको पूर्वी सेनाका सेनापति बनाकर भेजा।

(२१) असरस अब्दुला-पुत्र (७२४-७२९ ई०) असरसने देख लिया, कि विद्रोहियो को केवल राजनीतिक स्वतंत्रताकी कामना ही भारी प्रेरणा नही दे रही है, बल्कि वह मुसलमानोको विधर्मी समझकर भी बहुत घृणा करते है। उसने सारी प्रजाको मुसलमान बनानेकी योजना बनाई और प्रत्येक स्थानमें अरब और ईरानी दो-दो धर्म-प्रचारक नियुक्त किये। समरकदमे नौमुस्लिमोको कलमा दुहरानेके लिये दक्षिणा दी जाने लगी। इससे असाधारण सफलता मिली। लोग कलमा सुनाकर दक्षिणा भी लेते और बहुतसे करों और बेगारोसे भी मुक्त हो जाते। लेकिन देहकानोपर इसका प्रभाव बुरा पड़ा। वह अब मुसलमान थे, गावोंके बिना मुकुटके राजा थे, वह भला क्यो पसद

करने लगे, कि लोग कर और वेगारसे मुक्त हो जायें। खजानेमे भी आमदनीकी कमी हो गई। खजाची ने कहा—"करमे ही मुसलमानोंकी शक्ति है।" असरसने मुसलमान होनेपर कर-मुक्त कर देनेका हुकम दे रखा था। अव उसने दुवारा हुकम दिया—उन्हीको कर से मुक्त किया जाय, जिन्होने खतना करा लिया है, और जो नमाज-रोजा आदि इस्लामिक कर्तव्य को पूरा करते तथा कुरान का एक सिपारा पढ़ सकते है। इस पर सोग्द से जवाब आया—"देसी लोगो ने सच्चे मन से इस्लाम को स्वीकार किया है। वह मस्जिदें वनाने लगे हैं। सव लोग अरव वन गय है। इसलिये किसी पर कर नही लगाना चाहिये।" खजाना खाली था। ऐसे इस्लाम प्रचार से अरवी राज्य का ही दीवाला निकलने वाला था, इसलिये असरस ने हुकम दिया—"जिनपर पहले कर लगाया जा सकता था, उन सवपर कर लगाओ।" इसका परिणाम हुआ सवत्र विद्रोह। अरव धर्म-प्रचारको ने वडे परिश्रम से इस्लाम के लिये दिग्विजय की थी, यह हालत देखकर वह भी विद्रोहियो के साथ हो गये। सोग्द का अरव धर्मप्रचारक पकडा गया। सारे सोग्द ने अरवो के खिलाफ वगावत का झडा उठाकर तुर्को से मदद मागी। ७२८ ई० में केवल समरकद और दवूसिया के नगर ही अरवो के हाथ में रह गये, वाकी वुखारा आदि पर विद्रोहियो का कब्जा हो गया। ७२९ ई० मे वड़ी मुश्किल से अरवो ने वुखारा में दुवारा अपना शासन स्थापित किया। ७३० ई० या ७३१ ई० मे सुलू ने सोग्दियो की मदद के लिये एक वडी सेना भेजी। सोग्द के इखशीद ने भी विद्रोहियो का साथ दिया। इसी समय असरस ने अपने शासित प्रदेशो मे जगह जगह रवात वनाने शुरू किये, जो प्रतिरक्षा के लिये घुडसवारो की चौकियो का काम देती थीं। असरस की भी वही हालत हुई, जो उसके पूर्वाधिकारी हरसी की हुई थी। उसे लौटा लिया गया और उसकी जगह जुनैद को राज्यपाल नियुक्त किया गया।

(२१) जुनैद अब्दुर्रहमान पुत्र (७२९-७३४ ई०)—यह पहले सिंध मे राज्यपाल रह चुका था और अपने रणकौशल तथा क्रूरता के लिये मशहूर था। इसने वडे जोश के साथ मध्य एसिया पर फिर से अरव-शासन स्थापित करने के लिये चढ़ाई की। वुखारा मे अपनी सेना मे जाते समय यह खाकान (सुलू) के हाथ में पडने से वाल-वाल वचा। खलीफा हिशाम की एक रानी को इसने (भारत की लूट से) एक वहुमूल्य रत्नमाला भेंट की थी, जिसके कारण उसे यह पद मिला था। खलीफा ने उस समय कहा था, कि मेरे लिये भी एक ऐसी माला भेजना। ७३०-७३१ ई० में खाकान से पहली मुठभेड हुई, जिसमें उसने १७००००तुर्क सेना का हराया, ३००० तुर्क मारे। सुलूका भतीजा वदी वना, जिसे जुनैद खलीफा के पास भेज कर और स्वय जाडा विताने के लिये मेर्व चला आया। अगले साल वक्षुपार हो उसने अपनी सेना के तीन भाग किये, जिनमें से १०००० सेना लेकर सौरा हुर्री को समरकद पर चढाई करने के लिये भेजा, दूसरे भाग को उमर होरेनपुत्र के अधीन तुखारिस्तान पर। वाकी को लेकर वह स्वय तुखारिस्तान की ओर जा रहा था, इसी समय उसे पता लगा, कि खाकान ने समरकद में सौरा को खतरे में डाल दिया है। सेना सारी एक जगह नही थी, किंतु जो भी सेना मौजूद थी, उसे लेकर वह समरकद की ओर वढा। किसी तग और अधेरे रास्ते में तुर्कों ने उसे घेर लिया। भयकर युद्ध म सैकडो अरव मारे गये। जुनैद ने मुश्किल से एक खड्ड म छिपकर जान वचाई। सौरा घिरा हुआ था और जुनैद भी शत्रुओ को चारो ओर देख रहा था। दोनो में से एक का मरना आवश्यक था, तभी दूसरा बच सकता था। उसने सौरा को हुकम दिया—किला छोडकर समर-

कद से बाहर निकल आओ। सौरा बडी हिचकिचाहट मे था, तो भी अपने प्रधान-सेनापति की आज्ञा मान कर १२००० सेना के साथ जुनैद के डेरे की ओर चला। करीव करीव पहुच चुका था, इसी समय एकाएक तुर्कों ने आक्रमण कर दिया। १२००० आदमियो म से सिर्फ तीन वचकर निकल सके। सौरा मारा गया। जुनैद मौका पा भाग निकलना चाहता था, लेकिन सुलू उसे कहा छोडनेवाला था? कगान की सेना ने उसे घेर लिया। जुनैद ने दासो को मुक्त करने का प्रलोभन दे लडने के लिये कहा, और उनकी महायता से वह समरकद पहुच सका। खलीफा ने जव इस महापराजय की वात सुनी, तो वसरा और कूफा से २५००० सेना एकत्रित करके भेजी। चार मास के सघर्ष के वाद सुलू से वुखारा को भी खतरा होने की खबर लगी, तो वह नस्र सैयारपुत्र—जो कि छावनी का सेनापति था—की अधीनता में छावनी को छोडकर वुखारा की ओर चला आया। दो साल के सघर्ष के वाद जुनैद सोग्द को फिर कावू में कर पाया। इस सघर्ष मे सारा अतर्वेद अरवो के हाथ मे निकल गया था। उस समय जरफशा-उपत्यका अन्न की खान थी, उसपर तुर्कों के अधिकार होने का कारण ही सभवत ७३५ ई० (११५ हि०) का अकाल पडा, काफिरो ने मेर्व अनाज भेजने नही दिया।

शिया-आदोलन—खिलाफत के लिये पैगवर मुहम्मद के हाशिम वश और दूसरे वशो मे वैमनस्य खडा हुआ था, जिसमे अली और मुहम्मद के दोनो नाती हसन और हुसेन बलि चढे। जो अरब उमैया वश से विशेष सबध नही रखते थे, उनकी भी सहानुभूति धीरे धीरे विरोधियो के साथ होती गई। यही विरोधी पीछे शिया या वातिनी कहे जाने लगे। लेकिन हाशिम-वश के पक्षपाती भी सभी एकमत नही थे। कुछ मुहम्मद की पुत्री फातिमा और दामाद अली की सतान को मुहम्मद का असली उत्तराधिकारी मानते थे, और दूसरे मुहम्मद के चचा अव्वास की सतान को भी शामिल करते थे। जिस समय आदोलन और सघर्ष सफलता से दूर था, उस समय अव्वास और अली दोनो के पक्षपाती एक होकर काम कर रहे थे। अरवो के वाहर शिया-आदोलन का जो प्रभाव पडा, वह धीरे-धीरे इतना प्रबल हो गया, कि उसी के वलपर उमैया-वश नष्ट हुआ और अव्वास की सतान को पूर्वी खिलाफत का स्वामित्व मिला। खुरासान में शिया आदोलन का आरभ जुनैद के काल ही में हुआ। ७४० ई० में हारिस सुरैजपुत्र ने "अल्ला की किताव और पैगवर की सुन्नत" (सदाचार) के नाम पर अपना काला झडा उठाया। उसने प्रतिज्ञा की, कि धर्मद्रोहियो और उनके अनुयायियो के साथ जो भी शर्तें की गई है, उनको नही माना जायगा और मुसलमानो पर कर नही लगाया जायगा, तथा किसी पर अत्याचार नही किया जायगा।" यह वात नौमुस्लिमो और अमुस्लिमो दोनो के लिये आकर्षक थी। जुनैद शिया-प्रचारको को पकड पकडकर शहीद वनाने लगा, जिसमें कितने ही अरव तथा प्रभावशाली लोगो से सबध रखते थे।

जुनैद की सारी सफलता बेकार गई। उसने यजीद मुहल्लबपुत्र की लडकी से शादी करने की गलती की, जिसके कारण खलीफा नाराज हो गया और उसने आसिम अब्दुल्ला-पुत्र को राज्यपाल वनाकर भेजा। आसिम के पहुचने से पहले ही जुनैद मर चुका था।

(२२) आसिम अब्दुल्ला-पुत्र (७३४-७३६ ई०)—आसिम बडा ही अत्याचारी था। जुनैद के अनुयायियो पर उसने बहुत क्रूरता दिखलाई, जिसके कारण बहुत से अफसर उससे घृणा करने लगे। आरिस सुरैजपुत्र ने विद्रोह कर दिया। मेवरूद प्रदेश, बलख,

वावेल्, अववाव जैसे खुरासान के शहरो पर हारिस का अधिकार हो गया। इस्लाम के नाम पर गनीमत (लूट) का माल हलाल था ही, इसने और भी अधिक हिस्से का प्रलोभन दिया और गाजियो की भारी भीड उसके आसपास इकट्ठा हो गई। आसिम उसे दवा न सका और हासिम अपने काले झडे को फहराता अनुयायियो को वढ़ाता जा रहा था। अत मे आसिम को वर्खास्त कर उसके भाई खालिद ने उसकी जगह कसरी को फिर स खुरासान का राज्यपाल वनाया।

(२३) असद अब्दुल्ला-पुत्र कसरी (७३५-७३८ ई०)—आसिम अब्दुल्लापुत्र ने खलीफा हिशाम को नरमी दिखाने के लिये लिखा था, यह भी उसके वर्खास्त होने का एक कारण हुआ। असद ने हारिस को मार भगाया। वह जाकर सुलू से मिल गया, जिसने उसे फाराव में जागीर देकर रख लिया। राजधानी मेर्व ऐसी जगह नही थी, जहा से विद्रोही सोग्द को दवाया जा सके। वहा से सीधे वुखारा जाने का रास्ता किजिलकुम (रेगिस्तान) के भीतर से जाता था, जिसमे किसी वडी सेना का गुजरना आसान नही था, और दूसरा रास्ता वलख होकर वडे चक्कर का था, जिसमें समय वहुत लगता था। असद ने वलख को ही ७३६ ई० में अपनी अस्थायी राजधानी वनाया और उसी साल खुत्तल को लेना चाहा। किंतु, खाकान सुलू गाफिल नही था। उसने आक्रमण किया और असद का डेरा तथा हरम खाकान के हाथ मे पड गया। सुलह की वातचीत निष्फल गई। असद वलख लौटा और खाकान तुखारिस्तान के पर्वतो को। सुलू की यह अतिम विजय थी। ३० वर्षों तक इस दुर्जेय तुर्क खाकान (अबू-मुजाहिम) की धाक सारे मध्य-एसिया पर थी। चीन सम्राट् ने भी दामाद वना वडी से वडी पदविया दे उसे अपना वनाने का प्रयत्न किया। तुर्कों का उसपर असीम विश्वास था, जिन तुर्कों की वीरता और युद्धकौशल को देखकर अरवो ने ("अल् अतराक फिल्हरुव") युद्ध में तुर्कों को अजेय माना था। लेकिन वुढ़ापे मे सूलू का हाथ वेकार हो गया था, जिससे वह सीधे युद्ध में भाग लेने लायक नही रह गया था। घुमन्तू लडाके ऐसे नेता को पसद नही कर सकते। यद्यपि पहले असद को तेर्मिज और खुत्तल के इलाको में सफलता नही मिली। लेकिन अव सुलूका दुर्भाग्य और असद का सौभाग्य जगा। समरकद को आत्म-समर्पण करने के लिये मजबूर करने को असद ने जरफशा के ऊपरी भाग मे वारगसर पर पहुच कर खुद वाध वनाने में भाग ले पानी को रोकना चाहा, किंतु उसमें सफलता नही हुई। ७३७ ई० मे तुखारिस्तान में जो लडाईया लडनी पडी, उसमें खाकान के साथ देने वाले शिया-पक्षपाती हारिस और खुत्तल का राजा भी थे। किंतु शगान-खुदात (शगानियान) अरवो के साथ रहा। पहले तो असद को सफलता नही मिली, किंतु अत में उस के आक्रमण से तुर्क उश्रूसना लौट जाने के लिये मजबूर हुये। वहा से जा समरकद में उन्होंने लडने की तैयारी की। इसी समय सुलू कगान को तुर्गिस कुमार कुरसूल ने मार डाला। सूलू के मरने के साथ ही पश्चिमी तुर्क-साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया। हारिस तुर्कों के देश में भाग गया। खुत्तलपति से अरवो ने खुत्तल को ले लिया। असद समरकद पर चढ़ाई करने के लिये जा रहा था, इसी समय एक विद्रोही अनुचर ने अपनी जाति के इस शत्रु को मार डाला।

(२४) नस्र सैयार-पुत्र (७३७)—नस्र कुतैव की युद्ध में भाग ले चुका था। वह वडा अनुभवी और वृद्ध पुरुष था। उसे कुतैव ने ७०५ ई० मे एक गाव की जागीर दी थी। उस समय अरवो में घोर द्वद्व चल रहा था। उनके मुजारी और यमनी दो दल हो गये थे। मुजार

उत्तरी अरब से आये थे, और यमनियो का मूल स्थान यमन था। खुरासान के मुजारियो का नस्र शेख (सरदार) था। वैसे नस्र अत्यन्त योग्य शासक और कुशल सेनापति था। वह जितना शक्तिशाली था, उतना ही उदार, अपने अधीनोका भी वडा प्रेमपात्र था। अपने नौ सालकी शासन में खुरासान को उसने उमैयो के लिये वचाये रखा। उस समय उमैया-वश कमजोर हो चुका था, उसका सितारा डूबने ही वाला था। प्रतिद्वद्वी खारजी (शिया) मुहम्मद और अली के वश की दुहाई देकर वल सचय कर रहे थे। उनका प्रचार खुरासान और मध्य-एसिया म बडे जोर शोर से हो रहा था।

नस्र ने देखा, जिस शक्ति से अरव शासन को सवसे ज्यादा खतरा है, वह है तुर्क। यद्यपि सुलू खाकान—जिससे परेशान होकर अरवो ने उसे "इब्नमुजाहिम" (मधपकारियो का बच्चा) नाम दे रक्खा था, मर चुका था। किंतु जिस तेरगास राजकुमार कुरसूल ने उसे मारा था, उसके प्रवल होने का डर था। कुरसूल भी पश्चिमी तुर्कों के ही तुरगिस वश का था, इसलिये तुर्कों की जो शक्ति सूलू के पीछे थी, वही कुरसूल के पीछे हो गई। अरवो के विरोध मे सारे उत्तरापथ और दक्षिणापथ के लोग एकमत थे। कुरसूल की एक दो सफलताओ के वाद वह सुलू की तरह ही दुधर्ष हो जाता, इसलिये पहले उसकी ओर ध्यान देना आवश्यक था। पश्चिमी तुर्क राज्य पिछले खाकान के मर जाने के कारण विशृखलित हो गया था। इस मौके से फायदा उठाते हुये नस्र ने सिरदरिया की ओर मुह फेरा। ७३९ ई० में उसने उश्रूसना, शाश, (ताशकद) और फर्गाना के शासको के साथ नरमी दिखला सधि करके इन तुर्क शासको को कुरसूल से अलग करने मे सफलता पाई। फिर वह सीधे कुरसूल के ऊपर पडा। पहले दो अभियानो म वह सफल नही रहा। अतिम अभियान शाश के शासक के विरुद्ध था, जिसकी सहायता के लिये कुरसूल आया था। सिर दरिया के तट पर लडाई हुई, जिसमे कुरसूल वदी हुआ, और नस्र ने उसे मरवा दिया। कुरसूल के मरने के वाद तुर्कों पर इतना आतक छाया, कि उश्रूसना, शाश, और फर्गाना के राजाओ ने अधीनता स्वीकार करते हुये नस्र से सधि कर ली।

अव उत्तर के घुमन्तूओ का भय खतम हो गया था। नस्र पहले मुसलमान विद्रोहियो को छेडना नही चाहता था, क्योकि इससे भीतरी निवलता और वढ़ती। उसने सारे मुसलमानो का ध्यान एकत्रित करने के लिये काफिरो के ऊपर आक्रमण किया। मुसलमानो पर शरीयत (धर्मशास्त्र) के विरुद्ध जो कर लगे थे, उन्हें अमुस्लिमो पर लगवाया, फिर ८०००० अमुस्लिमो को करमुक्त कर उसे ३०००० मुसलमानो पर लगाया। सोग्द में करमुक्ति ने लोगो को मुसलमान होने के लिये अधिक आकर्षित किया था, फिर कर लगने पर सोग्दी क्यो उसे पसद करते? तो भी जो सोग्दी अरवो के राजनीतिक और धार्मिक अत्याचारो के कारण सुलू खाकान के राज्य में शरणागत हुये थे, अव नस्र की सफलता और उसकी न्यायप्रियता पर विश्वास करके सोग्द लौटने की सोचने लगे थे। नस्र ने उनकी सारी शर्तें मान कर ७४१ ई० में उनके साथ समझौता कर लिया। शर्तें थी—(१) मुर्तिद् (पुन अपने धर्म में लौटे) लोगो को दड नही दिया जायगा, (२) मुर्तिदो को प्रवास के पूर्व के वाकी करो से मुक्त किया जायगा, (३) मुसलमान कैदी छोड दिये जायेंगे, यदि काजी (न्यायाधीश) कानून-निर्धारित सख्या म गवाहो की गवाही के वाद वैसा फैसला दे। खलीफा ने भी नस्र के लिखने पर इन शर्तों को मजूर कर लिया। राजधानी में कितने ही लोग नस्र को इस प्रकार दवने के लिये वदनाम करते थे, जिसका उत्तर नस्र देता

था—"अगर मेरे प्रतिद्वंदियो ने मोग्दियो की वीरता होती देखी, तो वह भी उनकी शर्तों का माननें से इन्कार नही करते।" मुजारी होने के कारण अक्सर नस्र का भूतपूर्व मलिक असद से झगडा रहता था, क्योकि असद यमनी दल का नेता था। नस्र ने अपने पहले चार साल के शासन में केवल मुजारी सेनापति नियुक्त किये, किंतु पीछे उसने यमनियो को भी लेना शुरू किया। यमनियोंने इस विश्वासका उलटा वदला देते ७४४ ई० में जूदे अलीपुत्र करनानी के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया।

(शिया-आन्दोलन)[१]—नस्र का सवसे वडा दुश्मन हारिस था, जो कि शियो का पक्षपाती और अव तुर्कों में चला गया था। नस्र ने शामकी नीति से काम लिया और उसी साल (जिस साल कि यमनियो ने विद्रोह किया था) खलीफा मोतसिम से कहकर अनुयायियो सहित हारिस को क्षमा दिलवाई। ७४५ ई० में हारिस मेर्व लौटा। उधर किरमानी और नस्र का झगडा चल रहा था। हारिस को न मुजारियो से कुछ लेना-देना था, और यमनियों से, इसलिये उसने सिर्फ यही घोपणा की, कि मैं तो केवल न्याय की विजय चाहता हू। जैसे ही उसने अपने अनुयायियों की काफी शक्ति देखी, कुछ हजार को लेकर काला झडा खडा कर दिया। उसने नस्र को न छेडकर पहले उसके प्रतिद्वद्वी किरमानी पर आक्रमण किया। यद्यपि हारिस ७४६ ई० की वसत में उसी लडाई में मारा गया, लेकिन जिस सप्रदाय का वह समर्थक था, वह एक सिद्धात और आदर्श के लिये लड रहा था, इसलिये हारिस का खडा किया काला झडा गिरने नही पाया।

पैगवर मुहम्मद और उनके उपदिष्ट कुरानी इस्लाम के सिद्धान्त वहुत सरल, अरवो के तत्कालीन सामाजिक विकास के अनुरूप थे, लेकिन ग्रीक, रोमन और ईरानी जैसी सभ्य और सुसस्कृत जातियो के साथ जव मुसल्मानो का सपर्क हुआ, तो उस सादगी से काम नही चल सकता था, इसीलिये सिद्धातो में मतभेद होने लगा। आदिम इस्लाम के मुख्य-मुख्य सिद्धात थे—(१) ईश्वर एक है, वह वहुत कुछ साकार सा है और उसका मुख्य निवास इस दुनिया से वहुत दूर छ आसमानो को पारकर ७ वें आसमान पर है, (२) वह दुनिया को केवल "कुन" (हो) कहकर अभाव से भाव मे लाता है, (३) प्राणियों में आग से वने फरिश्ते और मिट्टी से वने मनुष्य सवश्रेष्ठ है, (४) फरिश्तों में से कुछ पथभ्रष्ट होकर सदा के लिये अल्लाह के दुश्मन वन गये हैं, वह सदा मनुष्यो को मार्गभ्रष्ट करने की कोशिश करते है, उनका सरदार इवलीस है, जो फरिश्ता होते समय अजाजील के नाम से मशहूर था, (५) मनुष्य दुनिया में केवल एक वार जन्म लेता है, और ईश्वरी वाक्य कुरान द्वारा विहित और निपिद्ध कर्म करके उसके फलस्वरूप अनतकाल के लिये स्वर्ग या नर्क पाता है, (६) स्वर्ग मे सुदर प्रासाद, अगूरो के वाग, शहद-शराव की नहरें, अनेक सुदरिया (हूरें) तथा वहुत से तरुण सेवक (गिलमान) होते हैं, (७) दया, सत्यभापण, चोरी न करना आदि सर्वधर्ममान्य भले कर्मों के अतिरिक्त नमाज, रोजा (उपवास), दान (जकात) और हज (विशेप समय मे कावा-दर्शन) ये चार मुख्य विहित कर्म है, (८) निपिद्ध कर्मों में है अनेक देवताओ और उनकी मूर्तियो का पूजन, शराव पीना, हराममास (सूअर तथा विना कलमा पढे मारे गये जानवर का मास) खाना आदि है।[२]

---

[१] Heart of Asia (E D Ross)

[२] विस्तार के लिये देखो लेखक की पुस्तक "इस्लाम धर्म की रूपरेखा"

सुन्नियो में आगे चलकर जो मतभेद हुये, उनके कारण उनके चार सप्रदाय हो गये—(१) कूफा (मेसोपोतामिया) के रहनेवाले अबूहनीफा (७६७ ई०) के अनुयायी हनफी कहे जाते है, जिनकी सख्या भारत और पाकिस्तान मे अधिक है, (२) मदीना-निवासी इमाम मालिक (७१५-७९५ ई०) के अनुयायी मालिकी है। मराको और मुस्लिम स्पेन म इनकी सख्या अधिक थी। इमाम मालिक ने कुरान के अतिरिक्त पैगवर-वचन (हदीस) को धम-निणय के लिये बहुत आवश्यक वतलाया, जिसके कारण हदीसो को जमा करने का काम शुरू हुआ। (३) इमाम शाफई (७६७-८२० ई०) के अनुयायी शाफई कहे जाते है। यह पैगवर के आचरण (सुन्नत) को सर्वाधिक अनुकरणीय मानते है। (४) चौथा सप्रदाय इमाम अहमद इब्नहम्बल के अनुयायियो (हवलियो) का है—जो कि ईश्वर (अल्लाह) को साकार मानते है। धर्म के सबध में अतिम निर्णय के लिये प्राचीनपथी कुरान, सुन्नत (पैगबर के सदाचार), कयास (अनुमान या दृष्टात) द्वारा किसी निष्कर्ष पर पहुचने के अतिरिक्त चौथे प्रमाण बहुमत (इज्माअ) को भी मानते है, जिनमें पूर्व-पूर्व को बलवत्तर स्वीकार करते ह।

यह बहुमत ही था, जिसके बलपर अली को खलीफा होने से तीन बार वचित किया गया। किंतु जितना ही समय बीतता गया, उतना ही अली के अनुयायियो का जोर बढता गया। अली को वचित कर तीसरे खलीफा बने उसमान ने वर्तमान कुरान को पुस्तक-रूप मे सग्रह किया। अली के अनुयायियो का कहना है, कि उसमे ऐसी बहुत सी आयतें (मत्र) हटा दी गई हैं, जिनमें अली और उनकी सतान के पक्ष मे कहा गया था। इस्लाम का सर्वोपरि प्रमाण कुरान है। जब उसमें घटाने-बढाने की बात एक सप्रदाय ने मान ली, तो सिद्धातो में फेर-फार करने की पूरी गुजाइश हो गई। कहते है, इन सैद्धान्तिक मतभेदो का आरभ इब्न-सबा (सबा-पुत्र) ने किया, जो कि ७ वी सदी में (पैगबर मुहम्मद के मरने के आधी शताब्दी बाद) हुआ था। वह यहूदी से मुसलमान बना था। यहूदी अपनी मूलभूमि (फिलस्तीन) को छोडने के लिये मजबूर हुये, और भिन्न-भिन्न देशो में बिखरकर ग्रीक तथा दूसरी उन्नत विचारधाराओ के सपर्क में आये। वह सवत्र विचार स्वातत्र्य के पोषक रहे। इब्न-सबा, जान पडता है, बौद्ध और प्लातोनी विज्ञान-वाद द्वारा अनुप्राणित नवप्लातोनी अद्वैतवाद से प्रभावित था, इसलिये उसने हलूल (जीव का अल्ला में विलयन) सिद्धात का प्रचार किया। वह पैगबर के दामाद अली में भारी श्रद्धा रखता था, इस लिये लोगों को यह कहने का मौका मिला, कि इब्न-सबा के सिद्धात के स्रोत हजरत अली थे। इब्न-सबाकी परपरा आगे बढती गई और इस्लाम में शिया और खारजी (बाह्य) जैसे सप्रदाय पैदा हुये। अरब में इनके मतभेद बहुत कुछ कुरान और पैगबर-सतान के प्रति अधिक श्रद्धा और कम पर निभर थे। शिया लोगो का कहना था, कि पैगबर का उत्तराधिकारी होने का अधिकार उनकी पुत्री फातिमा और अली की सतान को है। आगे चलकर इस सप्रदाय ने दार्शनिक मतभेदो मे भी हाथ बटाया और अत में अरबो और ईरानियो के शताब्दियो से चले आते द्वद्व से फायदा उठाने में इतनी सफलता प्राप्त की, कि ईरान ने १५ वी सदी मे शियामत को अपना राजधर्म घोषित किया। यह बात १४९९ ई० में सफावी वश के शासन (१४९९-१७३६ ई०) के साथ आरभ में हुई। उस समय शिया-प्रचार में जो सफलता प्राप्त हुई थी, उसमें ईरानी राष्ट्रीयता को भी मिलाकर अबूमुस्लिम ने शियो के काले झडे को गाडा, लेकिन उसे मुहम्मद के चचा अब्बास की सतान अबुल् अब्बास सफ्फाह ने बडी चतुरता से अपने हाथ में कर लिया।

अबू-मुस्लिम[1] **(मृत्यु ७५५ ई०)**—अब्दुरहमान मुस्लिमपुत्र को दुनिया अबू-मुस्लिम के नाम से अधिक जानती है। वह इस्पहान का रहनेवाला था। ईरान के एक तीर्थयात्री दल के साथ मक्का गया, जहा उस समय मुहम्मद अब्बासी भी आया हुआ था। अबू-मुस्लिम वही एक प्रतिष्ठित अरब-परिवार में घोडे की जीन बनाने का काम करने लगा था। इस २० साल के तरुण को मुहम्मद अब्बासी ने जल्दी परख लिया और उसने भविष्य-वाणी की, कि यही तरुण अब्बासी राज्य की स्थापना करेगा। मुहम्मद ने उसे अपने पक्ष के समर्थन के लिये इराक भेजा। वह जानता था, कि अब अरबो का नही, ईरानियो का पलरा भारी होने जा रहा है। अबू-मुस्लिम दो साल (७४२-७४४ ई०) खुरासान में अपने गुरु की ओर से प्रचार करता रहा। वह अच्छा वक्ता, सगठन करने मे निपुण और साथ ही ईरानी होने के कारण ईरानियो पर पूरा प्रभाव डाल सकता था।

किरमानी के विरुद्ध लडते हारिस सुरेजपुत्र मारा गया। किरमानी का मनसूबा कही बढ न जाय, इसके लिये नस्र ने ७४६ ई० में एक छोटी सी सेना उसके विरुद्ध भेजी। लेकिन सफलता नही मिली, फिर मेव की अपनी सारी सेना ले वह किरमानी के ऊपर चढा। उमया का झडा सफेद था, शियो ने अपने झडे के लिये काला रग अपनाया था। अबू-मुस्लिम ने देखा, यही अच्छा मौका है, और उसने अपना काला झडा फहरा दिया। भीतर ही भीतर लोग पुराने (उमैया) शासन से असतुष्ट थे, इसलिये चारो ओर से गाजी (धार्मिक योद्धा) अबू-मुस्लिम के झडे के नीचे आने लगे। नस्र इस विरोध को शात करने मे असमर्थ रहा। उसने अपने सहयोगी इराक के क्षत्रप मेवान से यह कहकर सहायता मागी, कि खुरासान का हाथ से निकलना उमैया-वश के लिये खतरनाक होगा, लेकिन सहायता नही आई। अबू-मुस्लिम ने किरमानी को भी आकर मिल जाने के लिये निमन्त्रित किया, लेकिन इससे पहले ही नस्र ने अपने एक सिपाही द्वारा किरमानी को मरवा कर उसके शिरको खलीफाके पास भेजवा दिया था। यमनी दल तथा किरमानी के दो पुत्र अबू-मुस्लिम से जा मिले। नस्र ने उमैया-वश को गाढी नीद से जगाने के लिये बहुत कोशिश की, लेकिन उसमें सफलता नही मिली। ७४७ ई० में अबू-मुस्लिम ने अपनी विजयिनी सेना लेकर सारे खुरासान और सोग्द की राजधानी मेव में प्रवेश किया और उमैया खलीफा की जगह अब्बासी खलीफा के नाम से खुतबा (शुक्रवार की नमाज का व्याख्यान) पढने का हुक्म दिया। नस्र पहले ही सघर्ष छोडकर सरख्श होते हुये नेशापोर भाग गया था। अबू-मुस्लिम ने उसके पीछे कहतबा शबीबपुत्र को भेजा, जिसने नेशापोर के पास नस्र को हराया। वह वहा से भागा। जुर्जान में सिरिया से कुमक के लिये आई सेना को पाकर नस्र ने फिर मुकाबला करना चाहा, किंतु कहतबा ने उसे अतिम हार दी। नस्र हमदान की ओर भागा। बुढापे मे इस परेशानी के कारण साव में पहुचकर ७४८ ई० में उसने प्राण छोड दिया।

उसके मरने के साथ उमैयो की सारी आशाये खतम हो गई। जुर्जान, रै (तेहरान), साव, कुम सभी अब्बासियो के हाथ म चले गये। खलीफा ने अपने योग्य सेनापति नस्र को खोकर अब खतरे को महसूस किया और सारी सेना को इस ओर लगा दिया, लेकिन कहतबाने इस्पहान के पास ७४९ ई० (१३२ हि०) म उसे हराया और

---

[1] Heart of Asia (E D Ross)

नहावद का विख्यात किला भी ले लिया। ईरान-विजय करके कहतवा इराक की ओर वढ़ा, जहा कूफा शियो का केंद्र था। करवला के पास उसकी उमैया सेनापति हुवैरापुत्र के साथ भिडत हुई, जिसमें कहतवा मारा गया, लेकिन उसके पुत्र हसन ने सेना का सचालन हाथ में लेकर हुवैरा को हरा वासित की ओर खदेड दिया। कूफा के यमनियो ने विद्रोह करके नगर को अव्वासियो के हाथ में दे दिया। हसन कहतवा-पुत्र के नगर में प्रवेश करने पर अव्वासियो का नेता अवुल-अव्वास प्रगट हुआ और कूफा अव्वासियो की अस्थायी राजधानी वना। अवू-सलमा को उसने अपना महा-मत्री वनाया। अतिम फैसला ७५० ई० मे (मेसोपोतामिया) की लडाई में हुआ, जहा मेरवान अपनी सारी शक्ति के साथ अव्वासी सेनापति अव्दुल्ला (अवुल-अव्वास के चचा) से भिडा। मेरवान की वुरी तरह हार हुई और वह मिस्र की ओर भागा, जहा उसे मार डाला गया।

अवू-मुस्लिम के प्रधान सहायक थे अवू-दाउद खालिद-पुत्र इब्राहिमपुत्र और जियाद सालेहपुत्र खुजाई। अवू-मुस्लिम ने देखा, जव तक यमनियो की कमर नही तोड दी जाती, तव तक स्थायी सफलता नही हो सकती, इसलिये उसने पहले यमनी नेताओ का सहार किया। अवू-दाऊद ने खुत्तलमें पहुचकर यमनी नेता उस्मान को मारा, उसी दिन अवू-मुस्लिम ने दूसरे नेता अली को खतम किया। अरबो को सफलतापूर्वक दवाने के वाद अवू-मुस्लिम ने देखा, जिस ईरानी राष्ट्रीयता के वलपर उसने सफलता पाई, वह भी सिर उठा रहा है। ईरान के जातीय धर्म (मज्दयस्न, जर्थुस्ती धर्म) को फिर से शक्तिशाली वनाने के लिये कितने ही लोगो में भावना पैदा हो गई थी, जिनका अगुआ नेशापोर के पारसियो का नेता विह् अफरीद (माह्-अफरीद) था। उसने इस्लाम के प्रहारो से शिक्षा लेकर अपने धर्म मे वहुत से सुधार करने चाहे और जर्थुस्तियो की मूर्ति-पूजा आदि कितनी ही वातो का तीव्र खडन किया। अवू-मुस्लिम खतरे को समझ रहा था। जर्थुस्ती पुरोहितो (मागियो) ने भी उससे शिकायत की—अफरीद दोनो धर्मो की जड काट रहा है। अवू-मुस्लिम ने इस आदोलन को वुरी तरह से दवा दिया। वुखारा में शारिक शेखपुत्र महरी ने ७५५-७५१ ई० में एक नया अरव सगठन खडा करते हुये घोषित किया "हमने पैगवरके परिवार का अनुगमन इसलिये नही किया, कि लोगो का खून वहाये और मनुष्य में विषमता कायम करें।" शारिक अली का पक्षपाती था, और अवुल-अव्वास को नही चाहता था। अरवो ने भी देखा, कि अवू-मुस्लिम के निष्ठुर हाथो में पडने से यही अच्छा है, कि अली के नाम से अपने लिये स्वतत्र स्थान वनायें। थोडे ही समय में ३०००० आदमी अली के झडेके नीचे चले आये। वुखारा और ख्वारेज्मके अरब-सरदारोंने उसका साथ दिया। वुखाराके नागरिक भी शारिकका समर्थन करने लगे। अवू-मुस्लिमने उसके विरुद्ध जियाद सालेहपुत्रको भेजा। शारिकने अपने प्रोग्राममें समानताको स्थान देकर सपत्तिशाली वर्गको अपने विरुद्ध कर लिया था। वुखारा-खुदात कुतैवा और दूसरे ७०० गढ़वाले जियादके समर्थक थे। कुतैवने वुखारापर विजय प्राप्त की, और कश्क कुषाण (कुषाण या हेफताली सेठो) के धर्म को नष्ट किया। लोगो ने शहरके भीतरके अपने घरोंको देकर दूसरी जगह ले अपने लिये ७०० महल वनवाये और उनके चारो ओर वाग लगवाये थे। यही उन्होने लाकर अपने नौकरो और ग्राहकोंके रहनेके लिये भी घर वनवाये। थोडे ही समयमें इस नये शहरकी जनसख्या पुरानेसे भी ज्यादा हो गई, और इसका नाम कुश्के-मगान (मगोका गढ़) बन गया। यहा पारसियोंके मदिर भी अधिक थे। जब सामानियोने

बुखारा ले लिया, तो उसके प्रतिहार-नायकने अपने लिये जमीन खरीदनी चाही। उस समय जमीनका मूल्य बढकर प्रति जिफ ४००० दिरहम हो गया, जो बढ़ते बढते एक समय १२००० दिरहम तक पहुचा। यह ७०० महल-निवासी इसी कुश्के-मगानके रहनेवाले धनाढ्य लोग थे। भला वह शारिकके साम्यवादको कैसे पसद कर सकते थे ? जियादने बडी क्रूरतासे विद्रोहियोका दबाया। बुखारा नगरमें आग लगा दी गई, जो तीन दिन तक जलती रही। विद्रोहियोको पकडकर शहरके दरवाजो पर लटका दिया गया। बुखारामे सफलता प्राप्त कर जियाद समरकद गया। यहा भी उसने विद्रोहियोका बडी क्रूरतापूवक कतल किया। सारी सेवाओंके बाद भी बुखारा खुदात (कुतैबा) को इस्लामसे दूर हो जानेका अपराध लगाकर अबू-मुस्लिमने मरवा डाला।

स्रोत-ग्रन्थ

1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
2 Heart of Asia (E D Ross)
3 History of Bokhara (A. Vambery)
४ इस्कुस्स्त्वो स्रेद्नेइ आजिइ (व० व० वेइमान, मास्को १९४०)
५ आर्खितेक्तुनिये पाम्यत्निकि तुर्कमेनिइ (मास्को, १८३९)
६ किताबुलूहिन्द (अबूरैहाँ अल्बेरुनी)
7 Sur les monnaies de Boukhara-Khoudats (Lerch)
८ सिनखोनिस्तिचेस्किये तब्लिट्सी द्ल्या पेरेवोदा इस्तोरिचेस्किख दात् पो खिज्रे ना येव्रोपेइस्कोये लेताइस्चिस्लेनिये (लेनिनग्राद १९४०)

अध्याय ३

अब्बासी (७४६-८१८ ई०)

१ खलीफा सफ्फाह अबुल-अब्बास (७५०-७५४ ई०)

मुहम्मद अब्बासीने अबू-मुस्लिमको अपने उद्देश्य की पूर्तिके लिये अपना हथियार बनाया था। हाशिमवश सवा सौ वर्षोंसे जिसका स्वप्न देख रहा था, उसे अबू-मुस्लिमकी सहायतासे मुहम्मद अब्बासीने पूरा करनेमें सफलता पाई, किंतु विजय प्राप्तिसे पहले ही वह मर गया। यद्यपि उसका पुत्र अबूजाफर—जो कि मसूरके नामसे द्वितीय खलीफा हुआ—१० साल बडा था, किंतु दासी-पुत्र होनेसे उस समय वह गद्दी नही पा सका, और छोटा भाई सफ्फाहके नामसे प्रथम खलीफा हुआ। सफ्फाहका अर्थ है खूनी। न जाने क्यों इस तरहका नाम उसे पसद आया। अब्बासी खानदान उस समय कूफा (मसोपातामिया) में रहता था। उमैया-वशकी राजधानी दमश्क सिरियामें थी। यद्यपि आगे चलकर धीरे धीरे मसोपोतामिया (इराक)से फारसी भाषा लुप्त हो गई, किंतु अखामनी वशके समयसे ही ईरानकी एक राजधानी मसोपोतामियामे रहती आई थी। सेलूकियोंने भी यही अपनी राजधानी रखी, जिसका नाम सलूकिया था। पार्थिव भी अपना राजनीतिक केन्द्र यही रखते थे, क्योकि यहासे वह अपने पश्चिमी प्रतिद्वद्वी रोमका आसानीसे मुकाबिला कर सकते थे। यही सासानियोंकी राजधानी तस्पोन थी, जिसे अरबोंने मदैन (नगरी) नाम दे दिया। अब्बासियोंने पहलेसे चले आये अपने केन्द्र कूफाको राजधानी बनाया, जो मदैनमें घूमती खलीफा मसूर द्वारा ७६२ ई० (१४५ हि०) मे बगदादमें परिवर्तित हुई और अत तक रही। इस्लामिक विजयके बाद करीब तीन सदियो तक उमैया और अब्बासी शासन-कालमें दरबार और सरकारकी भाषा अरबी थी, और जब तक शुद्ध ईरानी वंश ताहिरी (८१८-८७२ ई०) सफ्फारी (८६१-९०० ई०) और सामानी (८९२-८९३ ई०) ने पुन ईरानी राष्ट्रीयताको जागृत नही कर दिया, तब तक (प्राय तीन सदियो) तक अरबी भाषा ही सर्वेसर्वा रही। फारसीके राजकीय भाषा बननेका सवाल ही क्या था, जब कि उपेक्षाका शिकार होनेके कारण वह साधारण साहित्यिक भाषा भी नही बन पाई। अब्बासी वश वैसे १२५८ ई० (६५६ हि०) में खतम हुआ, जब कि चिंगिसके पौत्र हुलागूखानने उसको सर्वथा उच्छिन्न करना आवश्यक समझा, किंतु, राजशक्तिके तौरपर वह छठें खलीफा मोतसिमके समय (८३३-८४२ ई०) में ही समाप्त हो गया। इस वशके खलीफा और उनके समयमें मध्य-एसियाके राज्यपाल निम्न थे—

अब्बासी खलीफा और उनके राज्यपाल—

खलीफा			राज्यपाल		
१	सफ्फाह	७५०- ७५४ ई०	१	अबू-मुस्लिम	७४९ ७५५ ई०
२	मसूर	७४५- ७७५ ई०	२	अबू-दाउद खालिद	७५५ ७५७ ई०
			३	अब्दुल जब्बार	७५७ ७५८ ई०
			४	मेहदी (युवराज)	७५८
			५	खाज़िम	
			६	हुमैद कह्तबापुत्र	७६९
३	महदी	७७४- ७८३ ई०			
			७	अबू-औन	७७५
			८	मुआज मुस्लिमपुत्र	७७६
			९	मुसैयाह जुबैरपुत्र	७७९
			१०	फज्ल सुलेमानपुत्र	७८२
४	हादी	७८३- ७८६ ई०			
५	हारुन रशीद	७८६- ८०९ ई०			
			११	जाफर अशासी	७८७
			१२	अब्बास अशासी	७८८
			१३	गतरिव अतापुत्र	७९१
			१४	हम्जा खुजाई	७९२
			१५	फजल वमक	७९२
			१६	मसूर हिमयारी	७९५
			१७	जाफर वमक	७९६
			१८	मामून (युवराज)	७९८
			१९	अली ईसापुत्र	
			२०	हर्समा	८०९
६	अमीन	८०९- ८१३ ई०			
७	मामून	८१३- ८३३ ई०	२१	ताहिर	
				नूह (सामानी)	
८	मोतसिम	८३३- ८४२ ई०			
९	वासिक	८४२- ८४७ ई०			
१०	मुतवक्कल	८४७- ८६१ ई०			
११	मुन्तशिर	८६१- ८६२ ई०			
१२	मुस्तईन	८६२- ८६६ ई०			
१३	मुह्ताज	८६६- ८६९ ई०			
१४	मुह्तदी	८६९- ८७० ई०			
१५	मोतमिद	८७०- ८९२ ई०			

१६	मोजिद	८९२- ९०२ ई०
१७	मुक्तफी	९०२- ९०८ ई०
१८	मुक़तदिर	९०८- ९३२ ई०
१९	क़ाहिर	९३२- ९३४ ई०
२०	राज़ी	९३४- ९४० ई०
२१	मुत्तकी	९४०- ९४४ ई०
२२	मुस्तकफी	९४४- ९४६ ई०
२३	मुतीअ	९४६- ९७४ ई०
२४	ताई	९७४- ९९० ई०
२५	कादिर	९९१-१०३१ ई०
२६	कायम	१०३१-१०७५ ई०
२७	मुक्तदी	१०७५-१०९४ ई०
२८	मुस्तज़हिर	१०९४-१११८ ई०
२९	मुस्तरशिद	१११८ ११३० ई०
३०	राशिद	११३५-११३६ ई०
३१	मुक्तफी	११३६-११६० ई०
३२	मुस्तखिद	११६०-११७० ई०
३३	मुस्तजी	११७०-११८० ई०
३४	नाशिर	११८०-१२२५ ई०
३५	जाहिर	१२२५-१२२६ ई०
३६	मुस्तन्शिर	१२२६-१२४२ ई०
३७	मुस्तअसिम	१२४२-१२५८ ई०

खलीफा घोषित होनेके बाद कूफामें अबुल-अब्बासने उमैया-वंशके सर्वथा उच्छेद करने का हुक्म दिया। अलीके पक्षपाती करबलाके शहीदोंको भूल नहीं सकते थे। चारों ओर खून-खून-खूनका ही नारा था। सफ्फाहके चचा दाऊदने मक्कामें और अब्दुल्लाने फिलस्तीनमें उमैया-वंशकी संतानोंको चुन चुनकर खतम किया। अब्दुल्लाने एक बार उमैयोंको पूर्णतया क्षमादान की घोषणा कर दी, और ७० उमैया-त्रशियोंको दस्तरखानपर भोजनके लिये बुलाया। बेचारे बातमें आ अच्छे दिनोंका स्वप्न देखते भोजनके लिए बैठे। अब्दुल्लाके इशारेपर उसके नौकर टूट पड़े और सबको वहीं मार डाला। हाशिमी खान्दानने उमैया-खानदानको उच्छिन्न करके ही संतोष नहीं किया, बल्कि उमैया-खलीफों की कब्रोंको खुदवाकर उनके मुर्दोंके कंकालोंको चूर्ण-चूर्ण करके हवामें उड़ा दिया। पहली विजयके बाद ही उन्होंने सिरियापर भी आक्रमण कर दिया। अंतिम नगर वासितमें उमैया सेनापति हुबैरपुत्रने शरण ली थी। उसने आत्म-समर्पण करनेमें ही भलाई समझी। उधर खुरासानमें अबू मुस्लिम उमैयोंका नाम तक न रखनेकी प्रतिज्ञाको कार्यरूपमें परिणत करने लगा था, जिसके कारण वहां जबर्दस्त विद्रोह हुए। उमैयाके पक्षपातियोंने चीन सम्राट् स्वेन्-चुङ (७१३-७५६ ई०) की सहायतासे बुखारा, सोग्द और फर्गानामें घोर संघर्ष

शुरू किया, लेकिन समरकदके शासक जियादने बडी क्रूरताके साथ उनको दबा दिया। मूल सोग्दी अपनी परपराके अनुसार विदेशियोंसे लडनेके हर एक अवसरको हाथसे जाने नही देते थे। उन्होने नस्रके झडेके नीचे आकर मुकाबिला किया, और जियादने उनके साथ बडे भयकर ढगसे बदला लिया। एक तरह कह सकते है, कि अब अन्तर्वेद (सोग्द) सोग्दियोंके हाथसे निकलता जा रहा था, राजनीतिक तौरसे ही नही, बल्कि जातीय तौरसे भी। खुरासानी अरबो द्वारा पराजित होकर पहले मुसलमान हो गये थे। उनकी कट्टरताका नमूना अबू-मुस्लिम खुरासानी था। शासन और सेनामे हर जगह अब खुरासानियोकी पूछ थी। वह खुरासानसे आ-आकर अन्तर्वेदमे बसते जा रहे थे, जहा युद्ध और सामाजिक सघर्षका नेतृत्व अबू-मुस्लिम कर रहा था। अब्बासियोंके शासनकी स्थापनाके साथ ही एक दूसरे ईरानी वशका भाग्य चमका। बलख (बाख्त्रिया) का बौद्ध नवविहार अपने प्रभाव और वैभवके लिए बहुत समयसे मशहूर था। स्वेन्-चाङ के समय (६३१-६४६ ई०) और उससे पहले यहाके प्रधान-नायक भिक्षु होते थे, लेकिन आगेकी गडबडीमे किसी नायकने ब्याह करके अपनी सतानको महती दे दी और वह परमकके नामसे नवविहारकी अपार सपत्तिको भोगते मध्य-एसियाके बौद्धोंके धार्मिक नेता बन गये। यही परमक अरबीमें प अक्षरके न होनेसे बरमक हो गया। परमक वशी पीछे मुसलमान हो गये। खालिद बरमकीको बगदादके खलीफाका महामत्री बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ, तबसे बरमक खानदान प्राय आधी शताब्दी (८०२ ई०) तक अब्बासी खलीफोंके विशाल राज्यका सर्वे सर्वा रहा।

यद्यपि सोग्द और फर्गानाके विद्रोहको इस तरह दबा दिया गया, पश्चिमी तुर्क तथा उसकी शाखा तुर्गिसका साम्राज्य भी छिन्न-भिन्न हो गया, किंतु उनकी जगह घुमन्तुओने फिर एक नया शक्तिशाली राज्य कायम कर लिया था। चीन भी इस वशको अपने राजदूतके हाथ बडी बडी पदवियां भेजकर प्रोत्साहित कर रहा था। यही नही, रेशमपथको अपने हाथमें रखनेके लिये चीन नही चाहता था, कि फर्गाना और आगेके प्रदेशोका मालिक उसका कोई प्रतिद्वंद्वी हो। ७४८ ई० में चीनी सेनाने आकर सुयाबको ध्वस्त किया। दूसरे साल उसने शाश (ताशकद) के शासकको अधीन सामन्तका कर्तव्य न पालन करनेके अपराधपर तलवारके घाट उतारा। फर्गानाके इखशीदको बुलानेके लिए चीनी दूत आये। इखशीद मर गया था। उसके पुत्रने सहायता के लिए अरबोको बुलाया। जुलाई ७५१ ई० तक जियादने शारिकका विद्रोह दबा दिया था। फिर उसने सेनापति कौ-स्यित्-चाउ द्वारा सचालित चीनी सेनाकी ओर मुडकर उसे हराया। कहते है, जियादने इस युद्धमें ५०००० चीनियोको मारा और २०००० को कैदी बनाया। लेकिन चीनी लेखकोंके अनुसार उनकी सारी सेना ३०००० थी। अरबो और चीनियोकी यह लडाई बडे ऐतिहासिक महत्वकी है। इसी लडाईमें इस बातका फैसला हुआ, कि उभय मध्य-एसिया चीनी सस्कृति और प्रभावमें रहेगा अथवा अरबी धर्म और सस्कृतिमे दीक्षित हो जायेगा। इस हारके बाद भी चीनी अरबोंके प्रतिद्वंद्वियोको सहायता पहुचाते रहे। तरिम-उपत्यका इस समय तिब्बतियोंके हाथमें थी, जिनसे अरबोने सुलह कर रखी थी, इसके कारण इली-उपत्यका द्वारा चीन अपनी पूरी शक्ति नही लगा सकता था। साथ ही थाङ्-वशी सम्राट् स्वान्-चुङ् (७१३-७५६ ई०) को अपने आनद-मौजसे ही छुट्टी नही थी, कि वह राजकाज को देखे।

अबू-मुस्लिमने अपनी ओरसे अबू-दाऊद इब्राहिमपुत्रको बलखका राज्यपाल नियुक्त किया

था। उसके खुत्तल और केश (शहसब्ज) पर भेजे अभियान सफल रहे। खुत्तल-खुदात (शासक) हारकर चीन भाग गया। केश-खुदातको मारकर अबू-दाऊदने उसकी जगह उसके भाईको शासक नियुक्त किया। ७५२ ई० में उश्रूसनाके सामन्तोंने भी अरबोंके खतरेको देखकर चीनसे सहायता मागी, लेकिन चीन कुछ नही कर सका।

अबू-मुस्लिमके ही बलपर अब्बासी खिलाफत कायम हुई थी। वाम्बेरीने लिखा है[1] "अबू-मुस्लिमकी ईमानदारीके प्रति हमारे मनमें सम्मान पैदा होता है। उसने आश्चर्यजनक रीतिसे थोडेसे समयमें अन्तर्वेदके सभी तुर्कोंको अपनी ओर कर उनको अपने साथ इतना अधिक घनिष्ठताके साथ सबधित कर लिया, कि आज भी कितनी ही कथाये उसके सबधमें उज्बेको और तुर्कमानोके मुहसे सुनी जाती है, जिनमे अबू-मुस्लिमकी वीरता और चमत्कारिक कार्योंकी तुलना खलीफा अलीसे की जाती है।" अबू-मुस्लिमके खिलाफ भी शिकायत बगदाद पहुच रही थी। खलीफाको भय लगने लगा, कि कही वह अपनी प्रचड शक्तिको हमारे विरुद्ध न कर दे। ७५१ ई० मे सफ्फाहने अपने भाईको पूर्वी प्रातोका हाल जाननेके लिये भेजा, जिसने खलीफाको सचेत कर दिया। अगले साल (७५२ ई० मे) खलीफाके इशारेपर समरकदके गवर्नर जियादने अबू-मुस्लिमके खिलाफ विद्रोह किया। आशा यह की गई थी, कि जियाद इस प्रकार अबू-मुस्लिम या उसके प्रभावको खतम कर देगा, लेकिन परिणाम उलटा हुआ—जियाद मारा गया। अगले साल (७५३ ई० में) खलीफा अम्बारमे मर गया और उसकी जगह उसका वंचित भाई अबू-जाफर मसूरके नामसे खलीफा बना। अबु-मुस्लिम कितना जनप्रिय था, यह इसीसे मालूम होगा, कि जियादने जब अपने स्वामीके विरुद्ध विद्रोह किया, तो उसकी सेनाने उसका साथ देनेसे इन्कार कर दिया। उसने भागकर बारकतके देहकानके पास शरण ली, जिसने उसका शिर काटकर अबू-मुस्लिमके पास भेज दिया। सिवा नोमानी ने भी खलीफाके इशारे पर अबू-मुस्लिम से लडना चाहा था, उसे पकडकर आमूलमें प्राणदड दिया गया। इस सघर्षमे बलखका गवर्नर अबू-दाऊद अबू-मुस्लिमके साथ रहा।

२ खलीफा मसूर (७५४-७५७ ई०)

सफ्फाहने स्वय अपने बडे भाई अबू-जाफरको अपना उत्तराधिकारी चुना था, लेकिन उसका चचा अब्दुल्ला अपनी पुरानी सेवाओंके लिये खलीफा बननेके लिये उत्सुक था। अबू-मुस्लिमने जाफरका साथ दिया। अब्दुल्लाने १७००० खुरासानी सेनाका बध करवाया, लेकिन उससे कुछ लाभ नही हुआ। अबू-मुस्लिम ने ईरानी सेनाके साथ निसिबि में पहुचकर अब्दुल्लाकी शामी (सीरिया) सेनाको बुरी तरह हराया। अब्दुल्लाने अपने दावेको छोड दिया। मसूरको इस सेवाके लिये अबू- मुस्लिमका बहुत कृतज्ञ होना चाहिये था, लेकिन वह नही चाहता था कि खलीफा बनाने-बिगाडनेका अधिकार किसी दूसरेके हाथ में हो। खलीफाके बुरे भावोका पता अबू- मुस्लिमको लग गया था और वह खुरासान लौटना चाहता था। खलीफा समझता था, सारा खुरासान अबू-मुस्लिमके साथ है, इसलिये उसे वहा जाने देना अच्छा नही। उसने अबू-मुस्लिमको सिरिया-मिस्र का मलिक नियुक्त किया और आकर भेंट करनेके लिये मदैन (राज-

[1] History of Bokhara (A Vambery)

धानी) बुलाया। अबू-मुस्लिमने इसके उत्तरमें लिखा—"एक सासानी शाहने एक बार कहा था 'वजीरोंके लिये इससे अधिक खतरेका समय दूसरा नहीं हो सकता, जब कि राज्यमें पूर्ण शांति विराज रही हो।' इसलिये मैं इसे उचित नहीं समझता, कि अमीरुल्मोमिनीन (विश्वासियोंके स्वामी) के समीप रहूं। हां इसके कारण उनकी स्वामिभक्त प्रजा रहनेसे मैं अपनेको रोक नहीं सकता। अगर अमीरुल्मोमिनीन मुझे ऐसा करनेकी इजाजत देंगे, तो मैं उनका अत्यन्त विनम्र सेवक बना रहूंगा। पर यदि वह अपनी दुर्भावनाओंके वशमें पड़ेंगे, तो मुझे मजबूर होकर अपनी सुरक्षाके लिये अपनी राजभक्ति लौटा देनी पड़ेगी।"

इसके उत्तरमें खलीफाने लिखा—"मैंने तेरे पत्रका भाव समझ लिया, लेकिन तेरी स्थिति सासानी राजाओंके बुरे वजीरोंसे भिन्न है। तेरे जैसे नम्र और स्वामिभक्त सेवकको शांतिकालमें किसी चीजसे डरनेकी आवश्यकता नहीं। यद्यपि तेरे पत्रके अंतमें जिन बातोंकी ओर संकेत किया गया है उनसे तू पूर्णतया मेरे अधीन है, यह बात सिद्ध नहीं होती, लेकिन आशा है, कि तू इस पत्रके वाहकके साथ अवश्य लौट आयेगा। मैं अल्लाहसे प्रार्थना करता हूं, कि वह तुझे शैतानके फरेबमें पड़नेसे बचनेकी शक्ति दे। शैतान तेरे शुभ संकल्पोंको बेकार करनेकी कामना रखता है और तेरे लिये सर्वनाशके दरवाजेको खोलना चाहता है।"

अबू-मुस्लिमने उत्तरमें लिखा—"मेरे पास पैगंबरके परिवारके साथ बहुत घनिष्ठ तथा संबंधित एक पथप्रदर्शक (तुम) था, जिसका काम था, अल्लाहकी बतलाई शिक्षा और कर्तव्य कर्मके बारे में मुझे शिक्षा देना। उससे मैं ज्ञान-विज्ञान सीखनेकी आशा रखता था, लेकिन उसने संसारी चीजोंके लोभमें स्वयं कुरानके वाक्यों द्वारा मुझे अज्ञान और भ्रान्तिमें डाल दिया। उसने उलटी व्याख्या की तथा अल्लाहके नामपर मुझे तलवार निकालनेके लिये कहा और हुकुम दिया, कि अपने हृदयसे दयाके भावोंको लुप्त कर दूं, और अपने शत्रुओंकी प्रार्थना और दया भिक्षाको न स्वीकार करूं, किसी भी अपराधको न क्षमा करूं। मैंने उसे स्वामी बनानेके लिये सब कुछ किया। अब मेरे लिये इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं रह गया, कि मैंने जो पाप किए हैं, उन्हें क्षमा करनेके लिये अल्लाहसे प्रार्थना करूं।"

यह पत्र भेजकर अबू-मुस्लिम खुरासान चला गया। मंसूरने अबू-मुस्लिम द्वारा नियुक्त खुरासानके राज्यपाल अबू-दाऊद खालिदको राज्यपाल बनाकर उसे हुकुम दिया, कि वह अबू मुस्लिमकी शक्तिको खतम कर दे। सेनाको तब तक उसका हुकुम मानना था, जब तक कि वह अब्बासी-वंशके लिये लड़ता था, अब वह विद्रोही है, इसलिये वह मृत्युदंडके योग्य है। अबू-दाऊदने वह पत्र खुरासानी सेना और अफसरोंको दिखलाया। सबने अबू-मुस्लिमको छोड़कर अबू-दाऊद को अपना अधिपति माना। अबू मुस्लिमको यह खबर मालूम हुई। उसने सब ओरसे निराश होकर खलीफाकी सेवामें जाना स्वीकार किया। वह राजधानी मदैन पहुंचा। वहीं खलीफा द्वारा नियुक्त पांच हत्यारोंने ४५ सालकी आयुमें इस पराक्रमी विजेताको ७४५ ई० (१४७ हि०) में मार डाला। अबू-मुस्लिमने अब्बासी वंशकी स्थापनाके लिये छ लाख आदमियोंकी हत्या कराई थी। सबका जिम्मेवार वही नहीं, बल्कि उसका स्वामी था, जिसको गद्दीपर बैठानेके लिये उसने सब कुछ किया था। अब खलीफाने अपनेको बिल्कुल स्वतंत्र समझा। लेकिन अबू-मुस्लिमके मरनेके बाद उसके अनुयायी खलीफाके खिलाफ हो गये, और उन्होंने हाशिमी वंशमें अब्बासियोंका साथ छोड़कर अली-वंशके पक्षपातियोंके साथ हो जाना पसंद किया। अबू-मुस्लिमके मरनेके बाद

खुरासानमे भारी विद्रोह हुआ। यद्यपि उसे दो मासके भीतर ही दबा दिया गया, लेकिन उसके दलको नष्ट नही किया जा सका। अन्तर्वेद और ईरानके शिया (अली-पक्षीय) आदोलनकारी अबू-मुस्लिमको शहीद मानने लगे। इस दलने अपनी पोशाक और झडेका रग सफेद रखा, इसीलिए उन्हें श्वेतपट (सपीद-जामगान, अलमुवैयदा) कहा जाने लगा।

(२) **अबूदाऊद खालिद इब्राहीम पुत्र**—अबू-मुस्लिमके अनुयायियोंको दबानेके लिये दाऊद ने बहुत प्रयत्न करना चाहा, लेकिन वह बहुत दिनो तक जी नही सका। महलके जगलेसे गिर जानेके कारण उसकी कमर टूट गई, (स्वामीके साथ विश्वासघात करनेवालेका मानो अल्लाहकी ओरसे दड मिला) और उसी साल (८५७ ई० मे) वह मर गया।

(३) **अब्दुल जब्बार (७५७-७५८ ई०)**—अबूदाऊदकी जगह यह राज्यपाल होकर आया, । बुखाराके अरब शासक मुजाशी हारिस-पुत्र अन्सारीको इसने फासीपर चढाया, क्योंकि उसकी सहानुभूति शियोंके साथ थी। अब्दुल जब्बार विद्रोहको दबानेमे सफल नही हुआ। जब उसे अपने बर्खास्त करनेकी खबर मिली, तो वह स्वय विद्रोही बन गया। अब खलीफाने अपने पुत्र तथा उत्तराधिकारी मेहदीको खुरासानका राज्य-पाल बनाकर भेज ।

अब्बासी खलीफा यद्यपि अरब थे, लेकिन विवाह-शादी और राजनीतिक कारणो से उन्होने ईरानियोंके साथ बहुत घनिष्ट सबध स्थापित किया था, इसीलिए बरमक-वशियोंको अपना प्रधान-मत्री बनाया। इनके कालमे भी ईरानी (पारसी) भाषाको राज्यका आश्रय नही मिला, और अरबी ही राज्य-भाषा बनी रही। अब्बासियोंके कालमे ही ग्रीक तथा सस्कृत आदि भाषाओकी अमूल्य साहित्यिक निधियोको अनुवाद करके अरबी भाषाको बहुत समृद्ध किया गया। तो भी बहुत सी बातोंमें अब्बासी खलीफा ईरानियतको पसद करते थे। जहा पहले अरबोने शासनकी सुभीते के लिये अपने प्रतियोगी सासानियोकी कितनी ही बातें जल्दी जल्दीमें स्वीकार कर ली थी, वहा अब सासानी प्रभाव राजकाजके हर विभागपर स्पष्ट दिखाई पडता था। उमैयाकी राजधानी दमश्क थी, जहा रोमन क्षत्रप पहले रहा करता था, इसलिए उनपर रोमन प्रभावका अधिक पडना आवश्यक था। ७६२ ई० में खलीफ़ा मसूरने बगदाद नगरकी स्थापना की, और ७६८ ई० में उसे खलीफाकी राजधानी बननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। इससे पहिले थोडे समय तक कूफा अब्बासियोकी राजधानी रही, फिर मदैन (तस्पोन) हुई, जो कि बहुत पहलेसे ईरानकी राजधानी रहती आई थी। नई राजधानीका नाम बगदाद (भग-दत्त, भगवानका दिया) यही बतलाता है, कि ईरानका प्रभाव अल्लाह शब्द तक पहुच चुका था। मध्यएसियाके लिये अरबोने मेवको राजधानी बनाया, यद्यपि इससे पहिले तुर्कों और दूसरे राजवशोने बलखको प्रधानता दी थी।

अब्बासियोने अब खुलकर अली और अबू-मुस्लिमके अनुयायी शियोका दमन करना शुरू किया । पैगबरके वशके नामसे उन्होने अपने दलको सगठित किया था। फिर लोग पैगबरकी बेटीके वशको छोडकर पैगबरके चचा अब्बासको क्यो मानते ? अब्बासी वश अब केवल शस्त्रके बलपर ही लोगोको दबा सकता था, वह शिया सप्रदायका अगुवा अपनेको नही कहा सकता था। इमाम हसनके वश-घर मुहम्मद और इब्राहीमने ७६२ ई० में विद्रोह किया। इससे पहले ७५८ ई० म एक ईरानी धार्मिक सप्रदाय रावदीने काफी तरद्दुदमे डाला और एक बार तो उसके कारण खलीफाके प्राण भी सकटमे पड गये थे। रावदियोंके सिद्धातोमें पुनजन्म भी था, जो

कि पूर्वी ईरान और मध्य-एसियाम हाल तक बहुत प्रभाव रखनेवाले बौद्ध धर्मके कारण था। इस्लामके भीतर होनेके कारण वह अल्लाहको मानते थे, लेकिन जिब्रैल (फारिश्ताके सरदार) आदम ही नही बल्कि खलीफा और उसके दो सेनापतियोंके शरीरमें भी अल्लाहका अस्थायी तौरपर निवास अर्थात् आंशिक अवतार मानते थे । मध्य-एसिया और पूर्वी ईरानमें अशांति थी, अरमेनियाके उत्तरमें हूणोंके वंशधर खाजार घमन्तुओंका भारी दवाव था। उनसे लडनेके लिये ७६२ ई० म खलीफाकी सेना अरमनिया पहुची। खाजार कास्पियन समुद्रके पश्चिमी तटके मालिक थे। उन्हींकी प्रधानताके कारण कास्पियन समुद्रका नाम बहीरा-खाजार (खाजार-समुद्र) पडा, जो आगे वहीरा-खिजिर बनाकर खिजिर फरिश्ताके साथ जोड दिया गया।

मसूरको एक और ईरानी सम्प्रदाय उस्तादसीके विद्रोहका मुकाविला करना पडा। इस सम्प्रदायके अधीन हिरात, वादगी, सीस्तान तथा दूसरे प्रदेशोंके तीन लाख ईरानी सनिक लड रहे थे। इन्होंने खुरासान और मेव-रूद प्रदेशके अव्वासी सैनिकोंको भागनेके लिए मजबूर किया, तब मसूरने सेनापति खाजिम खुजैम-पुत्रको मेहदीकी सहायताके लिये भेजा। खाजिमने २०००० सेना लेकर उस्तादसियोंपर चढाई की। ७०००० उस्तादसी मारे गये और १८००० वदी वनाये गये। उस्तादसी पहाडोमें भागे, लेकिन वहा भी उनका पीछा किया गया और उन्हे आत्म-समर्पण करना पडा। बगदादमें रूसाफ नामका एक अलग महल्ला वसाया गया था, जो खुरासानियोंके लिए था। अभिमानी अरव खलीफा पैगवर-जातीय तथा विश्व विजेता होने के अभिमानमें चूर हो बाकी सभी लोगोंको नीच समझते थे, इसलिए खुरासानियोंका उनके भीतर निर्वाह नहीं हो सकता था, इसीलिए कूफा और मदीनके अरवी वातावरणसे अलग होनेके-लिये बसाये बगदाद नगरमे भी अरबोंका प्रधान मुहल्ला अलग हो रहा।

(६) हुमैद कहतबापुत्र (७६९-७७५ ई०)—प्रसिद्ध सेनापति कहतवाका पुत्र हुमैद अब खुरासानका राज्यपाल नियुक्त हुआ। अभी तक अरवोने हिंदूकुश (महाहिमगिरि) पर्वतमालाके पश्चिम तक ही अपनी विजयको सीमित रक्खा था। हुमैदने काबुलके विरूद्ध जहाद (धर्मयुद्ध) घोषित किया। काबुलकी प्रजा और वहाके तुर्क शासक भारतीय संस्कृति और धर्मके प्रभाव क्षेत्रमे थे। इससे आधी शताब्दी पहले सिंध और मुल्तानको अरवोंने इस्लामिक सल्तनतके आधीन किया था, और पख्तूनो (पठानो) से छेड-छाड नही शुरू की थी। सिंध और मुल्तानमें अरवोंके शासनमें उतनी धर्मांधता नहीं थी, किंतु हुमैदने जैसे-तसे सारे काबुलको मुसलमान बनानेका संकल्प कर लिया। यद्यपि अभी उसे इतनी सफलता नही हुई।

३ खलीफा मेहदी (७७४-७८३ ई०)

मसूरके बाद उसका पुत्र मेहदी खलीफा बना। उसने जिस समय शासन आरंभ किया, उस समय मध्य-एसियाकी अशांति दवाई नही जा सकी थी।

(७) अबू-औन (७७५-७७६ ई०)—हुमैदकी जगह अवूऔन राज्यपाल वनकर आया। मेंहदी खुरासनाकी परिस्थितिसे स्वयं वाकिफ था। अबू-मुस्लिमके कतलके बाद उसके अनुयायियोंका नेता एक अनपढ व्यक्ति इसहाक हुआ, जो उत्तरमें तुर्कोंके पास दूत बनकर भेजा गया था, इसलिए उसको अल्-तुर्क भी कहते थे। इसहाकके नेतृत्वमें अन्तर्वेदका विद्रोह बहुत प्रवल

हो उठा था। वह अपनेको ईरानी पैगंबर जर्थुस्तका उत्तराधिकारी जिंदा-जर्थुस्त घोषित करते हुए कहता था, कि अपने धर्मकी स्थापनाके लिए ईरानियोंमें जर्थुस्त फिर आ गया। यद्यपि इसहाकके विद्रोहको दबा दिया गया, लेकिन अबू-दाऊदको इसी सम्प्रदायके आदमीके हाथों प्राण खोना पड़ा। अबू-दाऊदके उत्तराधिकारी अब्दुल-जब्बारने ७६९ ई० मे विद्रोहियोंका साथ दिया था। इन विद्रोहियोंका नेता श्वेतपट बराज़ था। अब्दुल-जब्बार पराजयके बाद मेर्वरूदके पास पकड़ा गया और उसे सरकारके हवाला कर दिया गया।

मुकन्ना विद्रोह—मध्य-एसियामें सबसे अधिक खतरनाक विद्रोह मुकन्नाका था। मुकन्नाका असली नाम हाशिम हाकिम-पुत्र था। वह मेवके पास पैदा हुआ था। पैगंबरीका दावा करनेके बाद वह अपने मुहपर हरा परदा डाले रहता था। उसने अपने अनुयायियोंको समझा रखा था, कि मेरे चेहरेका तेज इतना तीव्र है, कि उसे कोई सहन नही कर सकता, इसीलिये मैं चेहरेपर हरा परदा डालता हू। मुकन्ना पहले अबू-मुस्लिमका अनुयायी था, फिर अब्दुल्-जब्बारके विद्रोही होनेपर उसका साथी बना। उसका उपदेश था—जैसे अल्लाह (खुदा) ने आदम, नूह, इब्राहीम, मूसा, ईसा और अबू-मुस्लिम मे अवतार लिया, वैसे ही आज वह मेरे भीतर है। अरबोंने हरा परदा डालने के लिये उसका नाम "अल्-मुकन्ना" (परदेवाला) रख दिया। यह कहना सदिग्ध है, कि उसने अपने चेहरेकी कुरूपताको ढकनेके लिये परदा रखना शुरू किया था। पहले पहल सुबाह गावने उसका पक्ष लिया, फिर किश और नसाफके इलाकेमें उसे सफलता मिली। बुखारा-खुदात बुनियात उसका सहायक बना। सोग्दमे भी मुकन्ना-पथियोंने विद्रोह कर दिया। बुखारा-प्रदेश के मुकन्नियोंका केन्द्र नरशाख था, जहा प्रसिद्ध अरबी-इतिहासकार नरशाखीपैदा हुआ। मुकन्नाको तुर्कोंसे भी सहायता मिली। अतमे जब खलीफाकी भारी पलटन चढ दौड़ी, तो उन्हे दबना पड़ा, और मुकन्नाने किश (शहरशब्ज) के पास एक पहाडी किलेमें शरण ली। चारो ओरसे निराश होकर मुकन्नाने जहर खा लिया और उसका शिर काटकर मेंहदीके पास हलब (अलेप्पो)-भेजा गया।

(८) मुआज मुस्लिमपुत्र (७७६-७७९ ई०)—मुआज जब मुकन्नाके विद्रोहको दबा नहीं सका, तो मुसैयाह जुबैर-पुत्र (७००-७८३) को आना पड़ा।

(९) मुसैयाह जुबैरपुत्र (७७९-७८२ ई०)—यह मुआजकी जगह राज्यपाल होकर आया, और मुकन्नी विद्रोह दबानेमे इसे सफलता मिली। इस समय अन्तर्वेद के कितनेही गावोमें जिंदीक (मज्दकी) रीति-रवाजवाले बहुतसे श्वेतपट (सफेद-जामगान) रहते थे, जिनमें सबसे अधिक इलाककी देहातोमें फैले हुए थे। मज्दक मानीके धार्मिक सुधारोंका पक्षपाती तथा साम्यवादी समाज स्थापित करनेकी इच्छा रखता था। कवादके शासनकाल (४८७-९८, ५०१-३१) मे उसे बहुत भारी सफलता मिली थी, किंतु कवादने बुढ़ापेके समय उसका साथ छोड़ दिया और अपने पुत्र खुस्रो अनोशेरवानके उत्तराधिकारके झगड़ेके साथ मज्दक और मज्दकियोंको बड़ी भारी सख्यामें मरवाया। यही मज्दकी अरबों और इस्लामकेसमय जिंदीक बन अपनेको छिपानेके लिये, इस्लाम या शिया सम्प्रदायका परदा डाले रहते थे, यद्यपि भीतरसे वह मज्दकी सिद्धात (वैयक्तिक सपत्ति और विवाह-प्रथाके-विरोध) के पक्षपाती थे।

यद्यपि नस्रने उमैयोंका पक्ष लेकर अपने प्राणोको खोया, लेकिन पीछे उसके वशज अब्बासियो केअनुकूल हो गये। नस्र-वशी लैसके लडके रफीने मुकन्ना-विद्रोहके दबानेमें अपने चचेरे भाई असन तामन-पुत्रको साथ लेकर अब्बासियोकी मदद की। पीछे रफी पर व्यभिचारका अपराध लगाया

गया, तो उसने प्राणरक्षाके लिये विद्रोही बन समरकंदको दखल कर वहांसे अब्बासी शासनका खतम कर दिया। नसाफके निवासियोंने उससे सहायता मांगी, तो उसने शाश (ताशकंद) के शासकका तुर्कोंकी सेनाके साथ सहायतार्थ भेजा। फर्गाना, खोजन्द, उश्रूसना, शगानियान, बुखारा, ख्वारेज्म और खुत्तलके लोग रफीके ओर हो गये थे। उसके उत्तरके पडोसी ताकुज-गागुज, करलुक और तरिम-उपत्यकके शासक तिब्बतियोंने भी उसकी सहायताके लिये आदमी भेजे थे।

१८ [illegible]
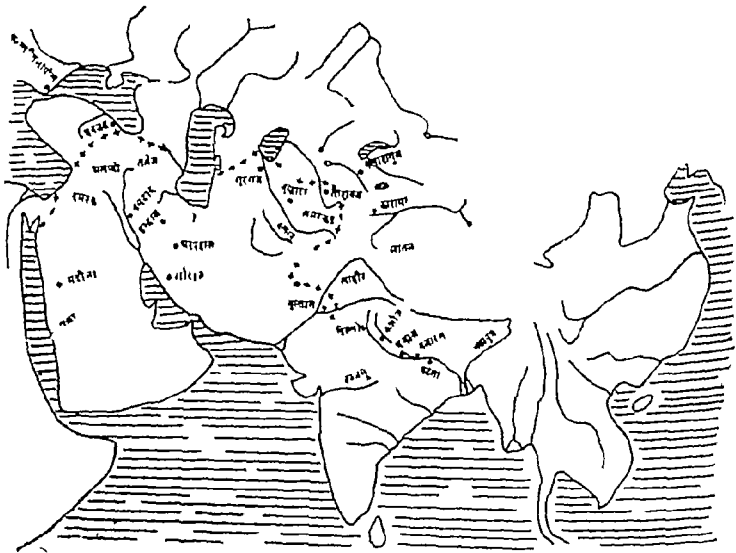
रफीका विद्रोह जल्दी नही दवा। जब उत्तरी तुर्कोंने उसका साथ छोड दिया और अब्बासी सेनाका जोर बढा, तो उसने ८०९ ई० मे खलीफा मामूकी न्यायप्रियताको सुनकर उसके पास आत्म-समर्पण किया। मामूने उसे पूर्ण क्षमा प्रदान की और इस प्रकार दस-पद्रह वर्षके बाद यह भीषण विद्रोह दब सका।

(१०) फजल सुलेमान-पुत्र तूसी (७८२-७८७ ई०)—मुसैयाहके असफल होने पर फज्लको सीस्तान और खुरासानको राज्यपाल बनाकर भेजा गया। इसके अगले साल खलीफा मेहदी मर गया।

४ हादी (७८३-७८६ ई०)

चौथे खलीफा हादीका शासन भी अशातिपूर्ण रहा, अन्तर्वेदमे विद्रोह होते रहे।

---

[1]Turkistan Down to Mongol Invasion, History of Bokhara (Vambery)

५ हारून रशीद (७८६-८०९ ई०)

अब्बासी खलीफोमें अपने विद्याप्रेम और दरबारी दबदबेके लिए हारून और उसके पुत्र मामूनकी ख्याति दुनियामें सबसे बढकर है। ७८६ ई० मे हारूनने खालिदकी जगह उसके पुत्र यहिया बरमकको अपना प्रधान-मत्री बनाया। अब्बासी वजीरोमे यह सबसे शक्तिशाली था, जिसके हाथमें ८०२ ई० तक सारी सल्तनतकी बागडोर रही।

(११) जाफर अशासी(७८७-७८८ ई०)—साल भरके लिये जाफर खुरासानका राज्य-पाल बनकर आया।

(१२) अब्बास अशासी (७८८-७९१ ई०)—पिताके सफल न होनेपर उसका पुत्र अब्बास राज्यपाल बनकर आया, किंतु उसे भी रफीके सामने बहुत सफलता नही मिली।

(१३)मतरिब अनापुत्र (७९१-७९२ ई०)—यह जाफरका भाई था, जिसे भतीजेकी जगह राज्यपाल बनाकर भेजा गया, किंतु कोई सफलता न दिखलानेके कारण उसे भी साल भर बाद लौट जाना पडा।

(१४) हजमा खुजाई (७९२-७९४ ई०)—इसके समय दैलममें शियोका जबर्दस्त विद्रोह हुआ।

(१५) फज्ल यहियापुत्र बरमक(७९४-७९५ ई०)—प्रधान-मत्री यहियाने अपने पुत्र फ़ज्लको खुरासानका राज्यपाल बनाकर भेजा। फज्लने खुरासानमें कितनी ही मस्जिद बनवाई और डाकके सुप्रबधके लिये डाक-चौकिया कायम की। उसने अन्तर्वेदमे जहाद (धर्मयुद्ध) घोषित किया, जिसके उत्तरमें उश्रूसनाके राजा खाराखरूने अब्बासी सेनापर असफल आक्रमण किया।

(१६) मसूर हिमयारी (७९५-७७९६ ई०)—फज्लका स्थान इसने लिया, किंतु इसे भी सफलताका मुह देखना नही नसीब हुआ।

(१७) जाफर यहिया-पुत्र बरमक(७९६-७९८ ई०)—प्रधान-मत्रीने अपने दूसरे पुत्र जाफरको सीस्तान और खुरासानका उपराज बनाकर भेजा किंतु वह भी दो सालसे अधिक नही टिक सका।

अब हारूनने अपने शिशु पुत्र मामूनको हमदान (पश्चिमी ईरान) से पूर्वके सारे प्रदेशका क्षत्रप बनाकर भेजा और सरक्षक होनेके कारण शासन जाफरके हाथमें रहा।

(१८)अली ईसा-पुत्र—अलीका राज्यपाल होना बगदादमें बरमक वशके पतनका द्योतक था। यहिया, और उसके दोनो पुत्र फज्ल और जाफ़र बरमक वशके अतिम प्रभावशाली शासक थे। नये राज्यपाल अलीने प्रजापर इतना अत्याचार किया कि, ८०४ ई० मे उसके अत्याचारोकी जाचके लिये अपने उत्तराधिकारी अमीनको बगदादमें स्थानापन्न बनाकर हारूनने स्वय ५०००० सेनाके साथ प्रस्थान किया। रे (तेहरान) में अली भारी भेंटके साथ खलीफाके आगमनकी प्रतीक्षा कर रहा था। भेंटको देखकर खलीफा खुश हो गया। वह स्वय ८०६ ई० में बगदाद लौट गया और अली ईसा-पुत्र अपनी राज्यपालीकी ओर। इसीके शासनकालमें लैस-पुत्र रफीको सब आगे बढ़नेका मौका मिला और उसने समरकद पर अधिकार कर सोग्दियो और तुर्क घुमन्तुओंकी सहायतासे अलीकी सेनाको अन्तर्वेदसे मार भगाया। जब यह खबर हारूनको मिली, तो उसने सेनापति हरसमाको भेजा। उसके भी

सफल न होनेपर युवराज अमीनके हाथमें शासनका काम छोड़ हारूनने स्वयं युद्धक्षेत्रका रास्ता लिया। किरमानशाह पहुंचकर उसने अपने दूसरे पुत्र मामूनको फज्ल सहल-पुत्रकी सचिवतामें मेवम निवास ग्रहण करनेके लिये भेजा। हरसमाने आगे बढ़कर रफीके ऊपर चढ़ाई की। बुखारामें अपना युद्ध-शिविर रक्खा, और कुछ ही समयमें सारे अन्तर्वेदको अपने हाथमें करनेमें सफल हुआ। हारून बीमारीके कारण धीरे-धीरे ही खुरासानकी ओर बढ़ सकता था। तूस पहुंचनेपर उसकी हालत बहुत खराब हो गई और वहीं २४ मार्च ८०९ ई० (जमादी २, १९३ हि०) को वह ४५ सालकी उम्रमें मरा, तूसमें ही उसकी कब्र बनी।

६ अमीन (८०९-८१३ ई०)

हारूनके मरनेपर उसके दोनों पुत्रों अमीन और मामूनमें सिंहासनके लिये झगड़ा हुआ। अमीनका राजधानीपर अधिकार था और मामूनका खुरासान तथा मध्य-एसिया पर। अमीनने अपने वजीर फज्ल रबीअपुत्रके परामर्शसे तूसमें अवस्थित सेनाको लौटनेके लिये आज्ञा भेजी। यह काम भाई ही नहीं पिताकी इच्छाके भी विरुद्ध था, इसलिये उसका पालन होना आसान नहीं था। मामूनने सारे डाक-संबंध तोड़ दिये और अपनेको हमदानसे पूरब तिब्बतके सीमांत तक फैले राज्यका खलीफा घोषित किया। वजीर फज्ल सहल-पुत्रकी योग्यताके कारण वह अपने यहां व्यवस्था स्थापित करनेमें सफल हुआ। कुछ समयके घेरेके बाद हरसमाने समरकंद ले लिया। रफीने मामूनके हाथमें आत्म-समर्पण किया। उसे क्षमा मिली। अमीनने जब मामूनको दबानेमें सफलता नहीं पाई, तो उत्तराधिकारियोंकी सूचीसे उसका नाम निकलवा दिया। मामूनने भी राज्यके आधे भागमें खुतबासे भाईका नाम निकलवा दिया। अमीनने ८१० ई० में मामूनको दबानेके लिये ५०००० सेना देकर अली ईसा-पुत्रको भेजा। रे (तेहरान) में जब वह पहुंचा, तो देखा, कि मामूनका जनरल ताहिर सीमांत-रक्षाके लिये तैयार है। ताहिरने अलीको द्वन्द्व-युद्धमें मार डाला। अलीकी सेना भाग खड़ी हुई। मामूनने ताहिरको बगदादपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। हरसमाकी सेनाके साथ ईरानी और तुर्की सेना ले ताहिरने बगदादी सेनाको हराते १२ महीनेके घिरावेके बाद (८१३ ई०) बगदाद ले लिया। भागनेकी कोशिश करते अमीनको एक ईरानी सिपाहीने मार डाला।

मामूनने अपने खुरासानके निवास-काल (८०९-८१८ ई०) में सोग्द, उश्रूसन, फर्गानाके राजाओंको अधीनता स्वीकार करनेके लिये सेना भेजी थी। ८१० ई० (१५४ हि०) में उसकी सेनाने कुलान (वर्तमान तरती, जिला औलियाअता) पर आक्रमण किया। इसी समय सूफी सकोकी इब्राहीम-पुत्र बलखी मारा गया। ८११ ई० में मामूनने अपने वजीर फज्लसे शिकायत की थी,— बड़े बुरे मौकेपर अभियान करनेके लिये मजबूर होना पड़ा है, इस समय करलुकोंका यब्गू अधीनता स्वीकार करनेसे इन्कार करता है, तिब्बतका खाकान (चन्-पो) भी विरुद्ध है, काबुलका राजा खुरासानपर आक्रमण करनेकी तैयारी कर रहा है, उतरारके शासकने कर देनेसे इन्कार कर दिया है। वजीर फज्लने सलाह दी—"यब्गू और तिब्बतके खाकानको पत्र लिखकर उन्हें अपने राज्यका राजा तथा पड़ोसियोंके आक्रमण करनेपर सहायता देनेका वचन दो। काबुलके राजाको भेंट भेजकर शांतिका वादा करो और उतरारके राजाका एक सालका कर माफ कर दो।" मामूने वैसा ही किया।

७ मामून (८१३-८३३ ई०)

८१३ ई० में मामूनके हाथमें निष्कटक खिलाफत आई, लेकिन अरबोंके डरके मारे मामूनने वजीर सहलपुत्रकी रायसे बगदाद न लौट मेवको ही अपनी राजधानी रक्खा। इसका परिणाम अच्छा नही हुआ, पश्चिमी प्रदेशकी प्रजा खलीफासे रुष्ट हो गई और मामूनको अपने भाईकी तरह दूसरोंके हाथमें खेलना पड़ा। उसने अपने विश्वासपात्र ईरानी सेनापति ताहिरको बगदादका शासक बनाकर भेजा। ईरानियोंकी मददसे मामूनने भाईको हराकर तख्त पाया था, और उन्हींके बलपर मेवको राजधानी बनाया था, इसलिये ईरानियोंका प्रभाव बढ़ना स्वाभाविक था। मध्य-एसियाके दो शासक ताहिरी और सामानी इसी समय मूलबद्ध हुए। ताहिर बगदाद-पर शासन करनेमें अधिक सफल नही हुआ। वहा अरबोंका प्रभाव अधिक था, जो ईरानियोंके प्रभुत्वको देख नही सकते थे। उधर अमीनके खूनका बदला लेना भी आवश्यक था। ताहिरने दामकी जगह शाम और भेंदसे काम लिया और एक बार सारे इराकपर खलीफाका प्रभुत्व स्थापित कर दिया। किंतु, राजधानी हट जाने से बगदाद और उसके आसपासके लोगोंको जो क्षति हो रही थी, उसके कारण विद्रोह और वैमनस्य बढ़ता ही गया। ईरानकी ओर जगहोंमें भी ऐसे विद्रोहोंकी कमी नही थी। वजीर फज्ल सहलपुत्र ईरानी था, यह अरबोंके लिये आगपर घी का छिड़कना था। बहुत समय तक मामून अपने वजीरके हाथमें खेलता रहा। उसने ईरानियोंको बड़े बड़े दर्जे दिये। यद्यपि मध्य-एसियाका शासन-सूत्र पहले ताहिरी वशमें गया, लेकिन उसी समय सामानी भी प्रभुत्वमें आये। ८१७ ई० में नूह सामानी और उसके भाइयोंको समरकद, फर्गाना, शाश, उश्रूसनासे उत्तर-पूरब सिर-नदीके दक्षिणी तटपर चिरचिक-उपत्यकामें, पेरक, उश्रूसना (उरा-त्यूबे जिला), और हिरात नगरका शासक बनाया गया। ८७० ई० में मामून-को सहलपुत्रकी नीति गलत मालूम हुई, उसे खतरा साफ-साफ दिखाई पड़ने लगा। इसी साल मामूनने मेर्वसे बगदादके लिये प्रस्थान किया। सरख्श पहुचनेपर मामूनके इशारेपर वजीर फज्ल गुसुलखानेमें मरा पाया गया। मामून बगदाद नगरमें दाखिल हुआ। अब ईरानी दल उसके कोपका भाजन था। उसने बगदादके शासक ताहिरको पदच्युत कर दिया। ताहिर ने जब पूरब जानेका निश्चय किया, तो उसे प्रसन्न करनेके लिये ८१८ ई० में पूरबका उपराज बना दिया। लेकिन साथ ही खलीफाने एक हिजड़ा भी साथ करके उसे हिदायत कर दी थी, कि यदि ताहिर विरुद्ध जावे, तो उसे जहर दे देना। ताहिरको यह बात मालूम हो गई। उसने अपने शासित देशमें खुतबेसे मामूनका नाम निकलवा दिया, लेकिन दूसरे ही दिन ताहिर अपने बिस्तरे पर मरा पाया गया।

मेर्व ८०९ से ८१३ ई० तक खलीफा अमीनके प्रतिद्वद्वी मामूनकी और ८१३ से ८१७ ई० तक खलीफा मामूनकी राजधानी रहा। ताहिरियोंने अपनी राजधानी नेशापोरमें रखी।

(अरबी साहित्य)—मसूर और हारून तकका शासनकाल (७४५-८३३ ई०) अरबी साहित्यके तीव्र विकासका समय है। यद्यपि ७वी सदीके मध्यसे लेकर प्राय १०वी सदीके मध्य तक अरबी (पारसीके क्षेत्रकी भी) राजभाषा रही, किंतु उसके साहित्य-सृजनका विशाल कार्य अब्ब सोखलीफोंकी सरक्षकतामें इसी वक्त हुआ। ग्रीक, पहलवी और सस्कृत भाषाओंसे हुए अनुवादोंको देखकर अरब विद्वानोंकी आखें खुली। ग्रीक (यूनानी) साहित्यकी निधियोंके महत्त्वको

समझ कर उमैया खलीफा यज़ीद(१) (६८०-६८३ ई०)के पुत्र खालिद (मृत्यु ७०४ ई०) ने अनुवादके कामको पहिले पहिल शुरू कराया। उसे कीमिया (रसायन) का बहुत शौक था। उसीने सब प्रथम एक ईसाई साधु द्वारा कीमियाकी एक यूनानी पुस्तकका अरबीमें अनुवाद कराया। लेकिन अनुवादकी प्रगति आगे नहीं बढ़ी। उमैया-वश अरब-जाति और अरबी भापाको दुनियामें सर्वोपरि मानता था, इसलिये उसका ध्यान उधर क्यो जाता? अब्बासी वस्तुत आधे अरब और आधे ईरानी थे, इसलिए पहलवीके साथ-साथ यूनानी (ग्रीक) और सुरियानी भापाओंके साहित्य की ओर भी उनका ध्यान गया। मसूरके शासनकाल (७५३-७७८ ई०) म वैद्यक, तर्कशास्त्र, दर्शन और भौतिक विज्ञानके बहुतसे ग्रथ अरबीमें अनुवादित हुए। उस समयके अनुवादकोमें इब्न-मुकफ्फा (मुकफ्फा-वशी) का नाम विशेप तौरसे स्मरणीय है। मुकफ्फा स्वय ईरानी जाति का ही नही, बल्कि ईरानी धर्मका भी अनुयायी था। उसने कितने ही ग्रीक दर्शन-ग्रथोंके भी अनुवाद किये। बहुतसे और अरबी अनुवादोकी भाति वह काल कवलित हो गये, लेकिन ग्रीक विचारधाराके प्रसारमें मुकफ्फाके अनुवादोने बडा काम किया, इसमे शक नही।

हारून और मामूनके अनुवादकोमें कुछ भारतीय पडित भी थे, जिन्होंने वैद्यक और ज्योतिप के सस्कृत ग्रथाके अनुवाद करनेमें सहायता की—सिंध इस समय अब्बासियो का था। अब्बासी कालके कुछ अनुवादक है[१]—

अनुवादक	ग्रथ	मूलकार
योहन्ना विश्रिक-पुत्र	तेमाऊस	प्लातोन
	प्राणिशास्त्र	अरस्तू
	मनोविज्ञान	"
	तर्कशास्त्र (अपूर्ण)	"
अब्दुल्ला नइमलाहमसी	सोफिस्तिक	प्लातोन
	भौतिक-शास्त्र-टीका	फिलोपोन
कस्ता लूकापुत्र		
		अफ्रादीसियस

मामूनके बाद भी अनुवादका काम जारी रहा। हुनैन इसहाकपुत्र (९१० ई०), होबेश इब्नुल-हसन, मत्ता युनुसपुत्र अल्कन्नाई (९४० ई०), अबू-जकरिया आदिलपुत्र (९७४ ई०), अबू-अली ईसा जूरा (१००८ ई०), अबुल्खैर अल्हसन खम्मार (जन्म ९४२ ई०) मुख्य अनुवादक थे। मसूर और मामूनका समय (७५४-९३३ ई०) करीब करीब वही है, जो कि तिब्बतके राजाओ ठी-दे चुग्तन, ठी-स्रोङ दे-चन और ठी-दे चनका (७४०-८३६ ई०), जब कि हजारो सस्कृत ग्रथोका तिब्बती भापामे अनुवाद करके तिब्बती साहित्यको समृद्ध किया गया। तिब्बतीय अनुवादक बौद्ध थे। वह अपने धर्म या दर्शनके ग्रथाका अनुवाद बहुत ही शुद्ध करना चाहते थे, जब कि अरबी अनुवादकोमें प्राय सभी यहूदी, ईसाई या साबी धर्मके माननेवाले थे।

---

[१] दर्शनदिग्दर्शन

यह अमुस्लिम अनुवादक अपने धर्मके पक्के थे। खलीफा भी उदार थे। खलीफा मंसूरके पूछनेपर जाज इब्नजिब्रीलने उत्तर दिया—"मै तो अपने बाप-दादोंके धर्ममे ही मरूगा। चाहे वह स्वर्गमे हो या नर्कमें, मैं भी उन्हींके साथ रहना चाहता हूँ।" अर्थात् गीताके शब्दोमे वह मानता था "स्वधर्मे निधन श्रेय।" मंसूर इस उत्तरको सुनकर हँस पडा और उसने अनुवादकको बहुत इनाम दिया।

अरबी-साहित्यमें जब अरस्तू और प्लातोन जैसे यूनानी दार्शनिकों एव बुद्धि-वादियोके ग्रथोका अनुवाद होने लगा, तो उसका असर अरब विद्वानोंके ऊपर पडना आवश्यक था। इस प्रभावका पहला परिणाम इस्लाममें मोतजला सप्रदायकी उत्पत्ति थी। इस सप्रदायका केंद्र बसरा रहा। इसके आचार्योंमे सबसे बडा विद्वान अल्लाफ अबुलहुजैल था, जिसका देहात ९वी सदीके मध्यमें हुआ था, इस प्रकार यह शकराचार्य (७८८-८२० ई०) का समकालीन था। अल्लाफ बडा ही वाद-चतुर था। ईश्वरको अद्वैत और निर्गुण सिद्ध करनेमे इसने अपने समसामयिक शकरके निर्विशेप चिन्मात्र ब्रह्माद्वैतके साधक तर्कोंका इस्तेमाल किया। अल्लाफका कहना था अल्लाह (ब्रह्म) में कोई गुण (विशेपण) नही हो सकता। मोतज-लियोके मुख्य सिद्धात थे—(१) जीव कर्ममें स्वतत्र है, (२) ईश्वर केवल भलाइयोका स्रोत है, (३) ईश्वर निर्गुण है, (४) ईश्वरकी सर्वशक्तिमत्ता सीमित है, (५) चमत्कार (मोजजा) झूठे हैं, (६) जगत् अनादि नही सादि है, (७) कुरान भी अनादि नही सादि है। मोतजलियोका दूसरा आचार्य नज्जाम (मृत्यु ८४५ ई०) सभवत अल्लाफका शिष्य था। अद्वैत विज्ञानवाद पहले ही नव-प्लातोनिक दर्शनके रूपमें ईरानियो और क्षुद्र-ऐसियाके विद्वानो तक पहुच चुका था, इसलिए उसे भारतसे जानेकी अवश्यकता नही थी।

सिक्के—अरब खलीफा सासानियो और रोमकोके उत्तराधिकारी थे, इसलिये उनके सिक्कोपर रोमक और सासानी सिक्को का प्रभाव देखा जाता है। काना बुखारा-खुदातके तौरपर ३० साल तक शासन करता रहा। बुखारामें सबसे पहले उसीने रौप्य मुद्रा (दिरहम्) ढाली थी। यह काम उसने उस समय किया, जबकि द्वितीय खलीफा अबूबकर (६३२-६४० ई०) के के समय सिक्कोका काम शुरू हुआ। कानाके सिक्केपर एक ओर बुखारा-खुदातका चित्र रहता था। यह सिक्के बहुत समय (८ वी शताब्दीके अत) तक चलते रहे, फिर ख्वारेज्मी सिक्के आये। बुखारियोने अपने शासक गितरिफ अता-पुत्रसे सिक्का ढालनेके लिये कहा। उस समय चादी बहुत महगी थी, इसलिये गितरिफ (७९१-७९२ ई०) ने हारून रशीदके जमानेमें अष्टधातु (सोना, चादी, सीसा, रागा, लोहा, तावा) का दिरहम् ढाला। गितरिफ इस सिक्केका आरभक था, इसलिये उसका नाम ही गितरिफी पड गया। खोटी धातुका सिक्का होनेके कारण लोग लेनेसे इन्कार करते थे, जिसपर उन्हें लेनेके लिये बाध्य किया गया। छ गितरिफी एक चादीके दिरहम के बराबरकी दरसे उसे सरकारी करमें भी ली जाती थी। उस समय बुखारा-प्रदेशका कर था दो लाख दिरहम्, जिसे ११,६८,५६७ गितरिफी निश्चित कर दिया गया था। पीछे गितरिफीका मूल्य बढता गया। जब वह मूल्यमें रौप्य दिरहमके बराबर हो गई, तो भी करकी रकमको घटाया नही गया। ८३५ ई० में तो १०० रौप्य दिरहम् ८५ गितारफीके बराबर था, और ११२८ ई० मे मूल्य और बढ़कर १०० दिरहमके बराबर ७० गितरिफी थी। अन्तर्वेदके सिक्कोमे गितरिफी के अतिरिक्त मुहम्मदी (मुहम्मद दाहद पुत्र का) दिरहम्० मुसैयबी (मुसैयब जुबैरपुत्र) दिरहम्

(७८०-७८३ ई०) भी चलते थे। मध्य-एसिया म ८२६-८२८ ई० में भिन्न-भिन्न प्रदेशामें निम्न प्रकारके सिक्का द्वारा कर उगाहा जाता था[1]—

प्रदेश	सिक्का
ख्वारेज्म	ख्वारेज्मी दिरहम
तुर्किस्तान (प्रदेश)	ख्वारेज्मी, मुसैयबी
उश्रूसना	मुसैयबी, मुहम्मदी
फर्गाना	मुहम्मदी
सोग्द	
किश् (शहरसब्ज)	
नसाब	
शाश	
खोजन्द	
बुखारा	गितरिफी

सोग्दमें ५वी, ६ठी सदीमे सासानी सिक्कोंकी नकल की गई।

स्थानीय सिक्कोंके अतिरिक्त खलीफाके सिक्के भी मध्य-एसियामें चलते थे। उमैयोंके सिक्के कूफी लिपिमे होते थे, जब कि अब्बासी सिक्के अरबी लिपिमें। इनके अग्रभागम "लाइलाहा इल्लल्लाह मुहम्मद रसूलल्लाह" लिखा रहता और दूसरी ओर खलीफाका नाम तथा टकसालका नाम होता था। खलीफा मोतमिद (८७०-८९२ ई०) के एक सिक्केपर पृष्ठभागमे "अल्मोआफिक़ विल्लाह" तथा "विस्मिल्लाह जरव हाजा दिरहम् ब-समरकद मातैन" उत्कीण है। मोतमिदने अपने भाई अबू-अहमद तलहाको "अल्मोआफिक़ विल्लाहको" उपाधि दी थी। भारतमें मुसलमानोंके सिक्के अकबरके समयसे पहले तक टेढ़ी-मेढी अरबी लिपि होते थे,। सिक्कोपर मूर्ति उत्कीर्ण करना इस्लामके विरुद्ध था, इसलिये जहागीर को छोडकर भारत में किसी मुस्लिम शासकने मूर्ति उत्कीण करानेका साहस नही किया।

---

[1]Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)

स्रोत-ग्रंथ

1 Heart of Asia (E D Ross)

2 Turkistan Down to Mongol Invasion (W Brtold)

३ इस्कुस्तवो स्रेद्निआजिइ

४ अर्खितेक्तुर्निये पाम्यात्निकि तुर्कमानिइ

5 History of Bokhara (A Vambery)

अध्याय ४

ताहिरी (८१८-८७२ ई०)

१ ताहिर (८१८-२२)[1]

ताहिरने इस राजवंशकी स्थापना की। ताहिरियोंका पूर्वज राजिक, सल्म जियादपुत्रके अधीन सजिस्तानके राज्यपाल अबू-मुहम्मद तलहा अब्दुल्लापुत्र कुला खुजाईका एक अफसर था। राजिकके पुत्र मुशाअबको हिरात प्रदेशके वुशग नगरका शासक बनाया गया था। जिस वक्त अब्बासियोंके लिये अबू-मुस्लिम प्रचार कर रहा था, उसी समय तलहा अबू-मुस्लिमके एक अनुयायीका सचिव था। यूसुफ बरमकने वुशगको तलहाके हाथसे छीन लिया। विद्रोह दमनके बाद मुशअब फिर वुशगका शासक बना दिया गया। उसकी मृत्यु ८१४ (१९९ हि०) में हुई। उसके पुत्र हुसैनको वह पद मिला, और हुसैनसे उसके पुत्र ताहिरको, जो अपनी योग्यता और सेवाओंसे मामूनके शासनकालमें बहुत शक्तिशाली शासक बन गया। ताहिरने रफी लैसपुत्रके विरुद्ध लडनेके समय भी अब्बासी सेनाका सचालन किया था। ८११ ई० में मामूनने अपने भाई अमीन के विरुद्ध जो सेना भेजी थी, उसका प्रधान-सेनापति ताहिर था। वजीर फज्ल सहलपुत्रने अपने हाथसे ताहिरके भालेमें झडा लगाया था। मामूनके लिये पश्चिम विजय करनेके बाद उसे अल्‌जजीरा (मसोपोतामिया) का राज्यपाल, बगदादकी सेनाका सेनापति और सवाद (इराक) का वित्तीय शासक भी बनाया गया। ताहिरके मित्र अहमद अबू-खालिद-पुत्रने खुरासानके गवर्नर रसा गस्सन अबाद-पुत्रके विरुद्ध मामूनका कान भरा, जिससे वह हटाया गया। आगे जिस तरह खलीफा ताहिरके खिलाफ हुआ, इसके बारेमें हम कह चुके है।

तुलनात्मक ताहिरी सफ्फारी-सामानी वंश

ई०	भारत (प्रतिहार)	चीन (याङ)	दक्षिणापथ (ताहिरी)	उत्तरापथ
८२०	नागभट्ट ८१५-	मुचुङ ८२१-२५	ताहिर I ८१८-२२	
			अली ८२८-३७	
	भोज I ८३६-	वेन्‌चुङ ८२७-४१	अब्दुला ८३७-४४	

[1] Heart of Asia (E D Ross), Turkistan down to Mongol Invasion

८४०		वूचुङ ८४१-४७	ताहिर II ८४४-५१	(उइगुर)
		स्वानचुङ ८४७-६०१	मुहम्मद ८५१-६७	ओग्नेयन् ८४७-
			(सफ़फारी)	
८६०		ईचुङ ८६०-७४	याकूब ८६१-७८	
		सीचुङ ८७४-८९	अम्र ८७८-९००	
८८०		चाउचुङ ८८९-९०४		
			(सामानी)	
			नस्र I ८७५-९२	
	महेन्द्र पाल ८९३-		इस्माईल ८९३-९०७	
९००		चाउह्वान ९०४-७ (खित्तन)	अहमद ९०७-१४	
	महिपाल I ९१४-	अपओकी ९०७-२६	नस्र II ९१४-४२	(कराखानी)
९२०		ताइचुङ ९२६-४७		आतुर्युक ९२६
९४०	महेन्द्र II ९४५-	शीचुङ ९४७-५१	नूह I ९४३-५४	
	देवपाल ९४८-	मूचुङ ९५१-६८	अब्दुलमलिक ९५४-	शातुक ९५५
९६०	विजयपाल ९६०-	चिङचुङ ९६८-८३	मसूर ९६१-७६	
			नूह II ९७६-९७	
९८०		शेङचुङ ९८३-१०३१		
			मसूर II ९९७-९८	बुगरा ९९२
				इलिकनस्र ९९३-
१०००			मुत्तासिर -१००४	
	राज्यपाल १०१८-२७			तुगान १०१२-२५

२ तलहा (८२२-८२८ ई०)

यद्यपि ताहिरने मामूके खिलाफ़ विद्रोह किया था, और खुतवेसे उसका नाम हटवा दिया था, किंतु खलीफ़ाकी हिम्मत नहीं हुई, कि उसकेवंशमे शासन छीन ले। ताहिरका एक पुत्र अब्दुल्ला मसोपोतामिया और मिस्रमे मामूनके लिये लड रहा था, दूसरे पुत्र तलहाको मामूनने पूर्वका उपराज रहने दिया। तलहाने अपना शासन-केन्द्र मेर्व नहीं नेशापोरमें रक्खा, जहासे वह तबा-रिस्तान, खुरासान, अन्तर्वेदपर पूर्ण प्रभुत्व रखता था। इमीके शासनकालमे अहमद अबूखालिद-पुत्रके सेनापतित्वमें एक सेना मध्य-एसियाके उत्तरी भागमें भेजी गई। उश्रूसनाके राजा कावूस, फ़ज्ल यहिया-पुत्र वरमकके समय अधीनता स्वीकार करनेवाले अफ़शीनाका पुत्र था। कावूसने मामूनको कर देना स्वीकार किया था, किंतु जब खलीफा मेवसे वगदाद चला गया, तो उसने इन्कार कर दिया। उसके बाद राजवंशमे झगडा उठ खडा हुआ और कावूसकी ओर किसीका ध्यान नहीं गया। कावूसके पुत्र हैदरने एक प्रसिद्ध सरदार—जो कि उसके भाई तथा प्रतिद्वंद्वी फ़ज्लका

ससुर और उसके दलका मुखिया था—को मार डाला। इस हत्याके बाद हैदर वहासे भागकर बगदाद पहुचा। दूसरी ओर फज्लने अपने दलको मजबूत करनेके लिये उत्तरी तुर्क ताकूज-आगूजोंको देशमें बुलाया। ८२२ ई० मे अहमद अबूखालिद-पुत्रने सेनाके साथ जब उश्रूसनाम प्रवेश किया, तो हैदरने एक गुप्त छोटे रास्तेसे उसे देशमे पहुचा दिया। काबूसको पता नही लगा, और लडना बेकार समझकर वह आत्मसमर्पण के लिये मजबूर हुआ। फज्ल तुर्कोंके साथ भाग गया, पीछे उन्हें भी छोड अरबोंसे मिल गया। इस विश्वासघातके कारण उसकी मददके लिये आये हुए तुर्क उत्तरी बयाबानमे नष्ट हो गए। काबूस आत्मसमर्पण करके बगदाद गया, अभी तक वह मुसलमान नही हुआ था। बगदादमें खलीफाके हाथो उसने इस्लाम स्वीकार किया और उसकी ओरसे उश्रूसनाका शासक नियुक्त हुआ। उसके बाद उसका पुत्र हैदर शासक बना, जो पीछे खलीफाके दरबारमें प्रथम श्रेणीका सरदार और अफशीनके नामसे बडा प्रसिद्ध हुआ। ८४१ ई० में अफशीन हैदरको फासी दी गई, लेकिन उसका वश ८९३ ई० (२८० हि०) तक उश्रूसनापर शासन करता रहा। अंतिम अफशीन शेर अब्दुल्ला-पुत्रके ८९२ (२७९ हि०) में ढाले हुए सिक्के लेनिन्ग्रादके एरमिताज म्युजियममे रखे हुए हैं।

अहमद अबूखालिद-पुत्रको जब मध्य-एसिया भेजा गया, तो तलहाने अहमद और उसके सचिवकी खूब भेंट-पूजा की। यही अहमद सामानियोका भी सरक्षक था। उसने अहमद असद-पुत्रको फिरसे फर्गानाका शासक बनाया। फर्गाना, काशान और उस्तका अतिम पतन नूह असद-पुत्रके हाथो हुआ। नूहने ८४० ई० मे इस्फिजाबको जीता और वहाके लोगोको अपने अंगूरके बगीचो और खेतोंके किनारे दीवार बनानेका हुक्म दिया, क्योकि तुर्क बराबर लूट मार करनेके लिये आया करते थे। इतना होनेपर भी इस्फिजाबका शासन तुर्की राजवशमे १०वी सदी तक रहा। इस्फिजाबके शासकने खलीफा से विशेष रियायतें प्राप्त थी। उसे कर देना नही पडता था, उसकी जगह वह एक दानिक (चवन्नी) और एक झाडू भेजता था।

३ अली (८२८-८३७ ई०)

अलीने भी अपने पूर्वाधिकारीके शासनको अक्षुण्ण रखा। इसीके समय तुर्किस्तानकी ओर खलीफाने अपने अभियान भेजे थे। खाराजियोंने विद्रोह किया, जिसमें नेशापोरके पास अली मारा गया।

४ अब्दुल्ला (८३७-८४४)

खलीफाने अलीके मरनेकी खबर सुनकर अब्दुल्ला ताहिरपुत्रको उपराज बनाकर भेजा। इस समय खलीफा मोतसिम् (८३३-८४२ ई०) गद्दीपर था। मोतसिम्के समय उसके गारदमें सोग्द, फर्गाना, उश्रूसना और शाशके तुर्क भरती थे। अब्दुल्लाने अपने राज्यकी सीमाको बढ़ाना चाहा, और उसके लिए अपने पुत्र ताहिरको सामानियोंके सहायक गूजोंके देशमें विजय करनेके लिये भेजा। ताहिर इस्लामका झडा लेकर ऐसे स्थानोमें गया, जहा इससे पहले मुसलमान गाजी नही पहुचे थे। खलीफा मोतसिम्के समय तक आमू और सिरद-रियाके बीचके लोग पक्के मुसलमान हो चुके थे—इन लोगोंमें सोग्दी और तुर्क दोनो ही जातिया थी। इस्लामका झडा लेकर इन्होंने अपनी उत्तरी पडोसी तुर्कोंके साथ दीनकी लडाई

लड़नी शुरू कर दी। अब्दुल्ला ताहिरियोंका सबसे शक्तिशाली शासक था। इसके समय खलीफाका शासन नाममात्र रह गया और एक तरह अरबोंके शासनके जूयेको उतारकर ईरानी अपना वश स्थापित करनेमें सफल हो गए। मोतसिम् अंतिम अब्बासी खलीफा था, जिसने मध्य-एसियामें अपने अधिकारका कुछ उपयोग किया। उसने २०,००,००० दिरहम् लगाकर शाश (ताशकंद) नगरमें एक नहर खुदवाई, जो कि १३ वीं सदी तक काम देती रही।

५ ताहिर II (८४४-५१ ई०)—

अब्दुल्लाकी मृत्यु (८४४ ई०) के बाद ताहिर और मुहम्मदने शासन किया। मुहम्मदके शासनके बाद ८७२ ई० में इस ईरानी राजवंशका अंत हुआ। अब बगदादी खलीफा का अधिकार यही था, कि लोग उसे इस्लामका धर्मगुरु मानते थे। शुक्रवारको नमाजके बाद जो खुतबा (उपदेश) पढ़ा जाता था, उसमें खलीफाके तौर पर उसका नाम लिया जाता था। यह प्रथा अंतिम अब्बासी खलीफा मुस्तअसिम (१२४२-१२५८ ई०) तक चलती रही। मुहम्मद ताहिरके शासनकालके अंतिम वर्षमें भी उसके प्रदेशमें कुछ भूमि खलीफाकी निजी संपत्ति थी।

शासन-व्यवस्था—ताहिरी और सामानी दोनों उच्चकुलीन थे, इसलिए उनमें अबू मुस्लिम या शियोंकी तरह ईरानी राष्ट्रीय भाव या जनतांत्रिक झुकावका पता नहीं था। एकतंत्रताके साथ जनताको अधिकसे अधिक अपने साथ रखनेकी ताहिरियोंने अवश्य कोशिश की, क्योंकि उन्हें इस्लामिक खलीफाकी इच्छाके विरुद्ध हो अपने अस्तित्वको कायम रखना था। शांति और व्यवस्था कायम रखनेके लिये अमीरोंके जुल्मोंसे निम्न श्रेणीके लोगोंकी रक्षा करना उनके लिये आवश्यक था। ताहिरी विद्याप्रेमी थे, लेकिन अभी उनके विद्याप्रेमका सुप्रभाव पारसी भाषापर नहीं पड़ा था। अब्दुल्ला ताहिरीका कहना था "ज्ञान और विद्या, योग्य और अयोग्य दोनोंके लिए सुलभ होनी चाहिए। ज्ञान अपने आप ठीक कर लेगा, और वह अयोग्योंके पास नहीं रहेगा।" ताहिरने मुस्लिम धर्मशास्त्रपर एक ग्रंथ "किताबुल्-कुनिया" तैयार कराई, जिसमें उसने किसानों के बारेमें कहा है—"अल्लाह हमें उनके हाथोंसे खिलाता है, उनके मुंहसे हमारा स्वागत करता है और उनके साथ दुर्व्यवहार करनेका निषेध करता है।" अपने पिता ताहिर (I) की तरह अब्दुल्ला भी कवि था। आमूल-ख्वारेज्मके शासक उसके भतीजे मंसूर तलहा-पुत्रने दर्शनपर कोई ग्रंथ लिखा था। अब्दुल्ला उसपर बहुत अभिमान करता था और उसे ताहिरियोंकी प्रशंसा कहता था।

६ मुहम्मद अब्दुल्ला-पुत्र (८५१-८७२ ई०)

मुहम्मद पहले बगदाद का गवर्नर था। खलीफा की निजी ग्राम-संपत्ति तबारिस्तान और देलमके प्रदेशों के बीच में थी, जो मुहम्मद को सुपुर्द की गई थी। मुहम्मद ने उसके प्रबंध के लिये ईसाई जाबिर हारून-पुत्र को भेजा, जिसने मुहम्मद की जमीन का सुप्रबन्ध करते हुए पड़ोसी गांवों की गोचरभूमि को भी दखल कर लिया। इस पर अली-पक्षपातिया शियों के नेतृत्व में गांवोंके लोगोंने विद्रोह कर दिया। उनका नेता हसन जैद-पुत्र ८८४ ई० तक इस प्रान्तका शासक रहा। इस शिया-आंदोलन की सफलता वस्तुतः किसानों की सहायता से हुई, जिनके स्वार्थों के समर्थन में शिया लड़ रहे थे। शायद इसी तरह का जनतांत्रिक संघर्ष ९१३-९१४ ई०

वाला भी था, जो कि हसन अलीपुत्र उत्रूशी अलीवशज के नेतृत्व मे सामानियो के विरुद्ध हुआ। उत्रूशीने देलम में इस्लाम फैलाया और निम्न वर्ग का हितैषी होने के कारण जीवन भर सर्व-प्रिय रहा। अलबेरूनी हसन पर आक्षेप करता है, कि उसने पारिवारिक सगठनको नष्ट कर दिया। हसनने तालुकदारी के अधिकार को खतम कर दिया, इसमे स देह नही। ५३ साल के शासन के बाद ताहिरी वश को याकूब लैमपुत्र ने समाप्त कर दिया। ताहिरी वश परम्परा के बारे में कहा गया है—

> दरखुरासान ज-आल मस्सावशाह। नाहिर व तलहा वद व अब्दुलल्लाह
> वाज ताहिर दिगर मुहम्मद दान। कि ब याकूब दाद तस्तो कुलाह।

स्रोत-ग्रन्थ

1 Heart of Asia (E D Ross)
2 Turkistan Down to Mongol Invasion (Bartold)
३ "सियासत नामा" (निजामुल्मुल्क)

अध्याय ५

सफ़्फ़ारी (६६१-६३० ई०)

सफ़्फ़ार लोहार या ताम्रकार को कहते हैं। याकूब का परिवार शायद यही पेशा करता था।

१ याकूब (८६१-८७८ ई०)

खलीफा मुतविक्लके समय ८४७-८६१ई० सालेह नस्रपुत्र ने खारजी सम्प्रदाय को दवाने का वहाना करके खुरासानको दखल कर लिया था। सालेह के भी वहुत से अनुयायी थे। इसे सुनकर ताहिर(८४४-८५१ ई०)स्वय खारजियो और सालेहके अनुयायियो के झगडे को दवाने के लिये आया और सफलता प्राप्त कर राजधानी मेर्व लौट गया। फिर दुवारा सालेहके विद्रोह की खवर आई। इस समय सालेहका सहायक याकूब लैसपुत्र सफ़्फ़ार (ताम्रकार) था। याकूब में स्वाभाविक नेता के गुण थे। उसकी उदार-हृदयता वचपन ही से प्रकट थी। सयाना होने पर वह डाकुओ के गिरोह का सरदार वन गया। उसे धन और यश दोनो प्राप्त हुआ, क्योकि जिनकी सम्पत्ति लूटता था, उनके साथ भी वडे उदार तथा मानवोचित वर्ताव करता था। जल्दी ही उसके वहुत से अनुयायी हो गये और वह निरा डाकू न रह विजेता वन गया। सालेहने उससे सहायता मागी। याकूब तो मानो इस अवसर को ढूँढ ही रहा था। ८६१ई० में याकूब की सहायता से विद्रोहियो को तेजी से दवा दिया गया। राज्यपाल के उत्तराधिकारी दिरहम नासपुत्र ने अपनी सेना की कमान याकूब को दे दी। चारो ओर याकूब का आतक छा गया। ताहिरी जनता में अप्रिय हो गये थे। याकूब ने ८७७ ई० में हिरात, फिर किरमान और शीराज तक को भी जीत लिया। अव ताहिरी नेशापोरमें निर्वल से रह गये। ८७१ ई० में याकूब ने खलोफा मातमिद (८७०-८९२ ई०) के पास अपने को खलीफा का दास घोपित करते हुए दर्शन पाने की इच्छा प्रकट की। खलीफा ऐसे भयानक आदमी से डर गया। क्या ठिकाना कहीं वह वगदाद-पर भी हाथ साफ न कर दे। आखिर इराक तक की सीमा तक तो वह पहुच ही गया था। मौतमिदने उससे जान छुडाने के लिये तुखारिस्तान तथा भारतीय सीमान्त तक का उसे गवर्नर वना दिया।

भारतके सीमात पर कावुलके तुर्क शासको और अफगाना (पख्तूनो) का देश था। याकूब हिंदूकुश पारकर कावुल-उपत्यकामें दाखिल हुआ। कावुलके तुर्क (हिंदू) राजाओ पिछले सौ वर्षोमे किसी मुसलमान शासकने नही परेशान किया था। याकूब उसे जीतकर कावुलके राजा और उसकी मूर्तियोको अपने साथ ले गया। ८७२ ई० म अतिम ताहिरी मुहम्मदको परास्त कर उसने ताहिरी वशका उच्छेद कर दिया। मुहम्मद ताहिरीने याकूब से कहा था—'अगर वफरमाने-अमीनुल्-मोमीनीन आमदी, अहद व मशूर अज़्रुन,

ता वलायत बतू सिपारम्, व गर न बाज गर्द ।' याकूब शमशीर अज जेरे-फसली बेरून आवद, व गुफ्त—'अह्द मौलाय-मन ईनस्त' ('अगर तू खलीफाके हुकुमसे आया, तो आज्ञापत्र दिखला ताकि मैं तुझे यह प्रदेश सुपुर्द कर दू, नही तो लौट जा।' याकूबने अपने चोगेके भीतरसे तलवार निकाली और कहा—'मेरे स्वामीका आज्ञापत्र यह है।')

८७६ ई० में नस्र अन्तर्वेदका वास्तविक शासक था। याकूब मगलवार ९ जून ८८९ ई० को मरा और उसका भाई अम्र लैसपुत्र उसका उत्तराधिकारी हुआ।

२. अम्र सफ्फार(८७८-९०० ई०)—

बडे भाईकी तरह अम्र भी बहादुर और योग्य नेता था। कुछ समय तक उसने खलीफाको अपना स्वामी स्वीकार किया। खुरासानके लोगोने अम्रके खिलाफ खलीफाके पास शिकायत की, तो खलीफा मोतमिद् (८७०-८९२) ने अम्रको खुरासानकी गवर्नरीसे वचित कर दिया, और उसे रफी हरसमा-पुत्रको प्रदान किया। अम्रको दबानेके लिये खलीफाने एक बडी सेना भेजी। पहली बार अम्र हार गया और शीराज तथा किरमानके रास्ते अपनी जन्मभूमि सीस्तानकी ओर भागा। वहा अपनी बिखरी सेनाको एकत्रित करके उसने फिर खलीफाकी सेनाके ऊपर प्रहार करना शुरू किया। इसी बीच (८९२ ई० मे) खलीफा मोतमिद मर गया और मोतजिद (८९२-९०२ ई०) नया खलीफा हुआ। अम्र लैसपुत्रने नये खलीफाको अपनी सेवायें अर्पित की। उसने ऐसे जबर्दस्त आदमीके साथ शामका वर्ताव करना ही अच्छा समझा और उसे खुरासानका गवर्नर नियुक्त किया। उस समय अरब-भिन्न पूर्वी प्रदेश (अजम) के दो भाग थे—(१) ईरान और (२) मावराउन्नहर् (अन्तर्वेद, मध्यएसिया)। अन्तर्वेदके शासक अब सामानी थे और खुरासान तथा ईरानके कितने ही भाग का अम्र। रफी हरसमा-पुत्रकी ताकत बढ़ती जा रही थी। इसे देखकर भी खलीफाको यह चाल चलनी पडी। अम्रने ८९६ ई० (२८३ हि०) में रफीको हराकर उससे नेशापोर छीन लिया और क्रूरतापूर्वक मारकर उसका सिर खलीफाके पास भेज दिया। इस तरह सारे ईरानका स्वामी बनकर अब अम्र अन्तर्वेदकी ओर बढ़ना चाहता था। खलीफा दोरगी चाल चल रहा था एक ओर वह अम्रको उत्साहित कर रहा था, दूसरी ओर इस्माईल सामानीकी भी पीठ ठोक रहा था। ९०० ई० (२८८ हि०) में इस्माईल सामानीने बलखको घेर लिया और कुछ लडाईके बाद नगरके साथ अम्र भी इस्माइलके हाथमें पड गया। खलीफा मर गया था। इस्माईलने अम्रको बगदाद भेजा, वहा उसे बदीखाने में डाल दिया गया, पीछे ९०३ ई० में कतल कर दिया गया। अम्रके पकडे जानेके बाद उसका पुत्र ताहिर नाममात्र का शासक रहा।

पहले खुतबामें खलीफाका नाम लिया जाता और उसके लिये दुआ की जाती थी। खलीफाके सिवा और किसीके नामसे दुआ नही की जा सकती थी, किंतु अम्रने खुतबामें अपना नाम रखवाकर बादशाहोको भी खुतबामें शामिल करनेका रवाज जारी किया।

"सियातनामा"[१] मे याकूब और अम्र लैस-पुत्रके पतन और इस्माईल सामानीके उत्थानके बारेमे कहा गया है "सामानियोमें एक न्यायप्रिय बादशाह (अमीर आदिल) हुआ, जिसको

---

[१] सल्जूकी वजीर-आजम निजामुल्मुल्क की कृति

इस्माईल अहमद-पुत्र रहा। वह अत्यधिक न्यायप्रिय था। उसमें बहुतसे सुगुण थे। वह दरवेशों (सन्तों) का भक्त था। यह इस्माईल ऐसा अमीर था, जो कि बुखारामें बैठा हुआ, खुरासान इराक माबराउन्नह्र (अन्तर्वेद) का स्वामी था। (उसने) याकूब लैसपुत्रको गोस्माली दिया। वह (याकूब) शीया के उपदेशकोंके जालमें फँस गया था और इस्माईलियोंके धर्मका था। उसने बगदादके खलीफाके प्रति बुरी नियत की और बगदाद जानेका इरादा किया, जिससे खलीफाको मार डाले और अब्बासियोंके कुलको हटा दे। खलीफाको खबर मिली, कि याकूब बगदादका इरादा किए हुए है। उसने दूत भेजकर कहा "तेरा बगदादमें कोई काम नहीं है। (वहीं) सारे कोहिस्तान, इराक और खुरासानको सभाल।" याकूबने कहा—'मेरी इच्छा है कि अवश्य तेरे दरगाहमें आऊं और सेवा करूं, अहद (नियुक्ति पत्र) ताजा करूं, नया बनवाऊं। जब तक यह न करूं, मैं नहीं लौटूंगा।" खलीफाने बहुत दूत भेजा, किन्तु उसने वही जवाब दिया। वह सेना लेकर बगदादकी ओर चला। खलीफाको सदेह हुआ। (उसने) अपने दरबारके बुजुर्गोंसे कहा—"मुझे मालूम होता, याकूब लैसने आज्ञाकारितासे सिर खींच लिया है, और बुरी नियतसे यहां आ रहा है, क्योंकि मैने उसे नहीं बुलाया। मैं हुक्म देता हूं कि लौट जाय, लेकिन वह नहीं लौटता। ऐसी हालतमें उसके दिलमें जरूर बदनीयती है। मुझे पता लगा है कि वह बातिनियोंके धर्मको माननेवाला है।" (बुजुर्गोंने) बतलाया कि खलीफा शहर (बगदाद) में न रहें, और बयाबानमें जाकर उर्दू और छावनी लगाए। बगदादके विशेष व्यक्ति और बुजुर्ग सब उसके साथ रहें। जब याकूब आवेगा और खलीफाको बयाबानमें सेनाके साथ देखेगा, तो उसकी नियत प्रकट हो जायेगी, उसका दुर्भाव अमीरुल्मोमनीन (खलीफा) को मालूम हो जायगा। लोग छावनीमें एक दूसरेके पास आना-जाना करेंगे। अगर वह दुर्भाव रखता है और इराक, खुरासानके सारे अमीर उसके साथ नहीं हैं, न सम्मति देते हैं। (और) उसका दुर्भाव प्रकट हो जाये, तो हम उसकी सेनाको पछाड़ेंगे।" यह उपाय अच्छा लगा और वैसा ही किया गया।" यह खलीफा अल्मोतमिद अल्लाह अहमद (८७०-८९२ ई०) था।

जब याकूब लैस वहां पहुंचा और खलीफाकी सैनिक छावनीके पास आया, तो दोनों सेनायें मिलने जुलने लगीं। याकूब लैसने अपने दुर्भावको प्रकट किया और खलीफाके पास आदमी भेजा कि बगदादको दे दो और जहां मन हो वहां जाओ। खलीफाने दो महीनेका समय मांगा, लेकिन उसने समय नहीं दिया। जब रात हुई, तो किसी को उसके सिपाहियोंके पास भेजकर उसकी बदनीयतीको प्रकट कराया "वह मलहिद (दुधर्मी) है, उसके ऊपर अल्लाहकी फटकार हो। वह इसलिये

तरफ भागा। उसके सारे खजानेको लूट लिया गया। खुजिस्तान पहुचकर उसने चारो ओर आदमी भेज सेना जमा की। खलीफाको जब इस बातकी खबर मिली, कि वह खुजिस्तानमे मुकाम किए हुए है, तो उसने पत्र और दूत भेजकर कहा "हमें मालूम हुआ है कि तू सीधा-सादा आदमी दुश्मनोकी बातोमें पडा है, और तूने अपने कामके परिणामपर ख्याल नही किया। तूने देख लिया, कि अल्लाने तेरे साथ क्या किया और तू अपनी सेना-सहित पराजित हुआ। इस समय जानता हूँ, कि तुझे समझ आई है। इराक और खुरासानके अमीर-पदके योग्य तेरे जैसा कोई नही है। सिवाय इस कसूरके तेरी और सेवाओको हमने पसन्द किया है और तूने जो किया उसको न किया समझते हैं। जितनी जल्दी हो, तू इराक और खुरासान चला जा, और उस वलायत (सूबा) के शासनके काममे लग जा।"

जब याकूबने खलीफाके पत्रको पढ़ा, तो उसका दिल जरा भी नरम नही हुआ, और अपने काम पर उसे लज्जा नही आई। उसने सिरका, मछली, प्याज और रोटी लकड़ीके थालपर रखकर लानेका हुकम दिया। फिर खलीफाके दूतको बुलाकर वहा बैठाया, और दूतकी ओर मुह करके उसने कहा--"जा खलीफाको कह दे, कि मै गरीबके घरमें पैदा हुआ आदमीहूँ और बापसे रूईगरोका काम सीखा। मैं जौ की रोटी, मछली, तरा और प्याजका खानेवाला हू। यह बादशाही बहादुरीके कारण मेरे हाथमे आई, तेरे हाथसे नही पाई। मैं तब तक पैर पर नही बैठूगा, जब तक कि तेरे सिरको न कटलवा लूँ और तेरे खानदानको नष्ट न करवा दूँ। जैसा कि अभी कहा, मैं वह करवाके रहूगा या जौ की रोटी, मछली और तराखानेकी ओर लौट जाऊगा।" यह कहकर इस पैगामके साथ उसने खुदाके खलीफाके दूतको लौटा दिया। खलीफाने बहुतसे पत्र और दूत भेजे, लेकिन वह नही लौटा और सैनिक अभियानका निश्चय करके उसने बगदाद जानेका इरादा किया। उसे कुलचकी बीमारी थी, जिसने आ पकडा। हालत ऐसी हुई, कि उसने समझ लिया, कि इस बीमारीसे छुट्टी नही मिलेगी। तब उसने अपने भाई अमरू लैस-पुत्रको अपना उत्तराधिकारी बनाया, और खजाना उसे दे दिया। फिर मर गया। अमरू लैस-पुत्र खुरासान लौट गया और बादशाही करने लगा। सेना और प्रजा अमरूको याकूबसे भी अधिक प्रेम करती थी। अमरू बडा हिम्मती, उदार और राजनीति-पटु था। उसकी हिम्मत और उदारता इतनी थी, कि उसके रसोईके सामानको चार सौ ऊट ढोते थे, दूसरी चीजोंका तो अन्दाजा ही नही किया जा सकता। लेकिन खलीफाका सदेह वैसा ही बना रहा, शायद वह भी अपने भाईका रास्ता पकडे, और कलको वही दिन सामने आये। यद्यपि अमरूका ऐसा इरादा नही था, तोभी खलीफाने इस बातका सदेह किया और किसी आदमीको इस्माईल अहमद-पुत्रके पास बुखारा भेजा "अमरू लैस-पुत्रको निकाल, उसपर चढ़ाई कर और देशको उसके हाथसे छीन, फिर हम खुरासान, इराक के अमीरका पद तुझे दे देगे।

खलीफाकी बातोका उस (इस्माईल) के दिलपर असर हुआ। उसने इस विचारको ठीक समझा कि अमरू लैस-पुत्रके साथ दुश्मनी करे। उसके पास जितनी सेना थी, उसे जमा किया और जैहूँ (वक्षु) नदीकी उस ओर गया। गिनती करनेपर दो हजार सवार मालूम [illegible] जिनमें दो के ऊपर एक ढाल, बीस मरदोपर एक कवच, और पचास आदमियोपर एक भाला था। वह शहर मेवर्में पहुचा। अमरू लैसके पास खबर गई, कि इस्माईल अहमद-पुत्र जैहूँ पार हो मेर्व आया है और राज्य माग रहा है।

तरफ भागा। उसके सारे खजानेको लूट लिया गया। खुजिस्तान पहुचकर उसने चारो ओर आदमी भेज सेना जमा की। खलीफाको जब इस बातकी खबर मिली, कि वह खुजिस्तानमे मुकाम किए हुए है, तो उसने पत्र और दूत भेजकर कहा "हमें मालूम हुआ है कि तू सीधा-सादा आदमी दुश्मनोकी बातोमें पडा है, और तूने अपने कामके परिणामपर ख्याल नही किया। तूने देख लिया, कि अल्लाने तेरे साथ क्या किया और तू अपनी सेना-सहित पराजित हुआ। इस समय जानता हूँ, कि तुझे समझ आई है। इराक और खुरासानके अमीर-पदके योग्य तेरे जैसा कोई नही है। सिवाय इस कसूरके तेरी और सेवाओको हमने पसन्द किया है और तूने जो किया उसको न किया समझते है। जितनी जल्दी हो, तू इराक और खुरासान चला जा, और उस वलायत (सूवा) के शासनके काममे लग जा।"

जब याकूबने खलीफाके पत्रको पढ़ा, तो उसका दिल जरा भी नरम नही हुआ, और अपने काम पर उसे लज्जा नही आई। उसने सिरका, मछली, प्याज और रोटी लकड़ीके थालपर रखकर लानेका हुकम दिया। फिर खलीफाके दूतको बुलाकर वहा बैठाया, और दूतकी ओर मुह करके उसने कहा—"जा खलीफाको कह दे, कि मै गरीबके घरमें पैदा हुआ आदमीहूँ और बापसे रूईगरोका काम सीखा। मै जौ की रोटी, मछली, तरा और प्याजका खानेवाला हू। यह बादशाही बहादुरीके कारण मेरे हाथमें आई, तेरे हाथसे नही पाई। मैं तब तक पैर पर नही बैठूगा, जब तक कि तेरे सिरको न कटलवा लूँ और तेरे खानदानको नष्ट न करवा दूँ। जैसा कि अभी कहा, मै वह करवाके रहूगा या जौकी रोटी, मछली और तराखानेकी ओर लौट जाऊगा।" यह कहकर इस पैगामके साथ उसने खुदाके खलीफाके दूतको लौटा दिया। खलीफाने बहुतसे पत्र और दूत भेजे, लेकिन वह नही लौटा और सैनिक अभियानका निश्चय करके उसने बगदाद जानेका इरादा किया। उसे कुलचकी बीमारी थी, जिसने आ पकडा। हालत ऐसी हुई, कि उसने समझ लिया, कि इस बीमारीसे छुट्टी नही मिलेगी। तब उसने अपने भाई अमरू लैस-पुत्रको अपना उत्तराधिकारी बनाया, और खजाना उसे दे दिया। फिर मर गया। अमरू लैस-पुत्र खुरासान लौट गया और बादशाही करने लगा। सेना और प्रजा अमरूको याकूबसे भी अधिक प्रेम करती थी। अमरू बडा हिम्मती, उदार और राजनीति-पटु था। उसकी हिम्मत और उदारता इतनी थी, कि उसके रसोईके सामानको चार सौ ऊट ढोते थे, दूसरी चीजोंका तो अन्दाजा ही नही किया जा सकता। लेकिन खलीफाका सदेह वैसा ही बना रहा, शायद वह भी अपने भाईका रास्ता पकडे, और कलको वही दिन सामने आये। यद्यपि अमरूका ऐसा इरादा नही था, तोभी खलीफाने इस बातका सदेह किया और किसी आदमीको इस्माईल अहमद-पुत्रके पास बुखारा भेजा "अमरू लैस-पुत्रको निकाल, उसपर चढ़ाई कर और देशको उसके हाथसे छीन, फिर हम खुरासान, इराक के अमीरका पद तुझे दे देंगे।

खलीफाकी बातोका उस (इस्माईल) के दिलपर असर हुआ। उसने इस विचारको ठीक समझा कि अमरू लैस-पुत्रके साथ दुश्मनी करे। उसके पास जितनी सेना थी, उसे जमा किया और जैहूँ (वक्षु) नदीकी उस ओर गया। गिनती करनेपर दो हजार सवार मालूम हुए, जिनमें दो के ऊपर एक ढाल, बीस मरदोपर एक कवच, और पचास आदमियोपर एक भाला था। वह शहर मेर्वमें पहुचा। अमरू लैसके पास खबर गई, कि इस्माईल अहमद-पुत्र जैहूँ पार हो मेर्व आया है और राज्य माग रहा है।

इस्माईल अहमद-पुत्र कहते हैं। वह अत्यधिक न्यायप्रिय था। उसमें बहुतसे सुगुण थे। वह दरवेशो (सन्तों) का भक्त था। यह इस्माईल ऐसा अमीर था, जो कि बुखारामें बैठा हुआ, खुरासान, इराक, मावराउन्नह्र (अन्तर्वेद) का स्वामी था। (उसने) याकूब लैसपुत्रको सीस्तानसे निकाला। वह (याकूब) शीयो के उपदेशकोंके जालमे फँस गया था और इस्माईलियोंके धर्ममें था। उसने बगदादके खलीफाके प्रति बुरी नियत की और बगदाद जानेका इरादा किया, जिसमें खलीफाको मार डाले और अब्बासियोंके कुलको हटा दे। खलीफाको खबर मिली, कि याकूब बगदादका इरादा किए हुए है। उसने दूत भेजकर कहा "तेरा बगदादमें कोई काम नही है। (वही) सारे कोहिस्तान, इराक और खुरासानको सभाल।" याकूबने कहा—"मेरी इच्छा है कि अवश्य तेरे दरगाहमें आऊ और सेवा करू, अहद (नियुक्ति पत्र) ताजा करू, नया बनवाऊ। जब तक यह न करू, मैं नही लौटूगा।" खलीफाने बहुत दूत भेजा, किन्तु उसने वही जवाब दिया। वह सेना लेकर बगदादकी ओर चला। खलीफाको सदेह हुआ। (उसने) अपने दरबारके बुजुर्गोंसे कहा—"मुझे मालूम होता, याकूब लैसने आज्ञाकारितासे सिर खीच लिया है, और बुरी नियतसे यहा आ रहा है, क्योकि मैंने उसे नही बुलाया। म हुक्म देता हू कि लौट जाय, लेकिन वह नही लौटता। ऐसी हालतमे उसके दिलमे जरूर बदनीयती है। मुझे पता लगा है कि वह बातिनियोंके धर्मको माननेवाला है।" (बुजुर्गोंने) बतलाया कि खलीफा शहर (बगदाद) मे न रहे, और बयाबानम जाकर उर्दू और छावनी लगाए। बगदादके विशेष व्यक्ति और बुजुर्ग सब उसके साथ रहे। जब याकूब आवेगा और खलीफाको बयाबानमें सेनाके साथ देखेगा, तो उसकी नियत प्रकट हो जायेगी, उसका दुर्भाव अमीरुल्मोमनीन (खलीफा) को मालूम हो जायगा। लोग छावनीमें एक दूसरेके पास आना-जाना करेंगे। अगर वह दुर्भाव रखता है और इराक, खुरासानके सारे अमीर उसके साथ नही हैं, न सम्मति देते हैं। (और) उसका दुर्भाव प्रकट हो जाये, तो हम उसकी सेनाको पछाडेंगे।" यह उपाय अच्छा लगा और वैसा ही किया गया।" यह खलीफा अल्मोतमिद-अल्लाह अहमद (८७०-८९२ ई०) था।

जब याकूब लैस वहा पहुचा और खलीफाकी सैनिक छावनीके पास आया, तो दानो सेनायें मिलने जुलने लगी। याकूब लैसने अपने दुर्भावको प्रकट किया और खलीफाके पास आदमी भेजा कि बगदादको दे दो और जहा मन हो वहा जाओ। खलीफाने दो महीनेका समय मागा, लेकिन उसने समय नही दिया। जब रात हुई, तो किसी को उसके सिपाहियोंके पास भेजकर उसकी बदनीयतीको प्रकट कराया "वह मुलहिद (दुर्धर्मी) है, उसके ऊपर अल्लाहकी फटकार हो। वह इसलिये यहा आया है, कि मेरे खानदानको हटा दे और दुश्मनोको मेरी जगहपर बैठाये। क्या तुम भी इस बातमें उसकी सहायता करते हो?" उनमें से एक जमातने कहा—"हमने उससे रोटीका टुकडा पाया है, इसलिये उसकी सेवा करते ह। उसने जो किया वह हमने किया।" लेकिन अधि॰काश लोगोंने कहा—"हमें इस बातकी खबर नही थी। हम जानते थे, कि वह कभी अमीरुल्मामिनीन के खिलाफ नही होगा। अगर वह दुश्मनी प्रकट करता है, तो हम उससे सहमत नहीं हैं। हम मुकाबिलेके दिन तुम्हारे साथ होगे, युद्धके वक्त तुम्हारी तरफ आ जायगे और तुम्हें विजय प्राप्त करायेगे।" ऐसा करनेवाले खुरासानके अमीर थे। जब खलीफा याकूबकी सेनाके सरदारोंके भावको इस प्रकार देखकर खुश हुआ।

याकूब लैस पहिले ही आक्रमणमें पराजित हुआ आर बडी कठिनाईसे खुजिस्तानकी

तरफ भागा। उसके सारे खजानेको लूट लिया गया। खुजिस्तान पहुचकर उसने चारो ओर आद ी भेज सेना जमा की। खलीफाको जव इस वातकी खबर मिली, कि वह खुजिस्तानमे मुकाम किए हुए है, तो उसने पत्र और दूत भेजकर कहा "हमें मालूम हुआ है कि तू सीधा-सादा आदमी दुश्मनोकी वातोमे पडा है, और तूने अपने कामके परिणामपर ख्याल नही किया। तूने देख लिया, कि अल्लाने तेरे साथ क्या किया और तू अपनी सेना-सहित पराजित हुआ। इस समय जानता हूँ, कि तुझे समझ आई है। इराक और खुरासानके अमीर-पदके योग्य तेरे जैसा कोई नही है। सिवाय इस कसूरके तेरी और सेवाओको हमने पसन्द किया है और तूने जो किया उसको न किया समझते है। जितनी जल्दी हो, तू इराक और खुरासान चला जा, और उस वलायत (सूवा) के शासनके काममें लग जा।"

जव याकूवने खलीफाके पत्रको पढा, तो उसका दिल जरा भी नरम नही हुआ, और अपने काम पर उसे लज्जा नही आई। उसने सिरका, मछली, प्याज और रोटी लकड़ीके थालपर रखकर लानेका हुकम दिया। फिर खलीफाके दूतको वुलाकर वहा वैठाया, और दूतकी ओर मुह करके उसने कहा--"जा खलीफाको कह दे, कि मै गरीवके घरमें पैदा हुआ आदमीहूँ और वापसे रूईगरोका काम सीखा। मै जौ की रोटी, मछली, तरा और प्याजका खानेवाला हू। यह वादशाही वहादुरीके कारण मेरे हाथमे आई, तेरे हाथसे नही पाई। मैं तव तक पैर पर नही वैठूगा, जव तक कि तेरे सिरको न कटलवा लूं और तेरे खानदानको नष्ट न करवा दूँ। जैसा कि अभी कहा, मै वह करवाके रहूगा या जौ की रोटी, मछली और तराखानेकी ओर लौट जाऊगा।" यह कहकर इस पैगामके साथ उसने खुदाके खलीफाके दूतको लौटा दिया। खलीफाने वहुतसे पत्र और दूत भेजे, लेकिन वह नही लौटा और सैनिक अभियानका निश्चय करके उसने बगदाद जानेका इरादा किया। उसे कुलचकी वीमारी थी, जिसने आ पकडा। हालत ऐसी हुई, कि उसने समझ लिया, कि इस बीमारीसे छुट्टी नही मिलेगी। तव उसने अपने भाई अमरू लैस-पुत्रको अपना उत्तराधिकारी बनाया, और खजाना उसे दे दिया। फिर मर गया। अमरू लैस-पुत्र खुरासान लौट गया और वादशाही करने लगा। सेना और प्रजा अमरूको याकूवसे भी अधिक प्रेम करती थी। अमरू वडा हिम्मती, उदार और राजनीति-पटु था। उसकी हिम्मत और उदारता इतनी थी, कि उसके रसोईके सामानको चार सौ ऊट ढोते थे, दूसरी चीजोका तो अन्दाजा ही नही किया जा सकता। लेकिन खलीफाका सदेह वैसा ही बना रहा, शायद वह भी अपने भाईका रास्ता पकडे, और कलको वही दिन सामने आये। यद्यपि अमरूका ऐसा इरादा नही था, तोभी खलीफाने इस वातका सदेह किया और किसी आदमीको इस्माईल अहमद-पुत्रके पास बुखारा भेजा "अमरू लैस-पुत्रको निकाल, उसपर चढ़ाई कर और देशको उसके हाथसे छीन, फिर हम खुरासान, इराक के अमीरका पद तुझे दे देंगे।

खलीफाकी बातोका उस (इस्माईल) के दिलपर असर हुआ। उसने इस विचारको ठीक समझा कि अमरू लैस-पुत्रके साथ दुश्मनी करे। उसके पास जितनी सेना थी, उसे जमा किया और जैहूँ (वक्षु) नदीकी उस ओर गया। गिनती करनेपर दो हजार सवार मालूम हुए, जिनमें दो के ऊपर एक ढाल, बीस मरदोपर एक कवच, और पचास आदमियोपर एक भाला था। वह शहर मेवमें पहुचा। अमरू लैसके पास खबर गई, कि इस्माईल अहमद-पुत्र जैहूँ पार हो मेव आया है और राज्य माग रहा है।

अमरू लैस हुसा, वह उस समय नेशापोरमें था। ७० हजार सवार उसने जमा कर बलखकी ओर मुह किया। जब दोनो एक दूसरेके आमने-सामने हुए, तो ऐसा सयोग हुआ कि अमरू लैस-पुत्र बलखमे हारा, और उसके ७० हजार सवार ऐसे रहे कि एकको भी चोट नही पहुची और न कोई कैदी बना। सबके बीचसे अमरू लैस-पुत्र ही गिरफ्तार हो गया। उसे इस्माईलके सामने लाये। इस्माईल की नजर अमरू लैस-पुत्रके ऊपर पडी। उसका दिल दुखी हुआ और जाकर (अमरू से) बोला—"आज रात मेरे साथ रह, क्योकि मैं अकेला हूँ।"

अमरूने कहा—"जब तक मैं जिन्दा हू। कोई पर्वा नही, खानेकी चीजका इतिजाम कर।"

फर्राश एक मन (२ सेर) मास ले आया और सैनिकोंसे लोहेके दो बर्तन मागे। हर तरफ दौडा। कि कलिया (गोश्त) पकावे। इस प्रकार गोश्तको बर्तनमे रखा, लेकिन नमककी कमी थी।

इस्माईलने अपने अफसरको उस (अमरू) के पास भेजा, तो अमरू लैस-पुत्रने मोतमिद (अफसर) से कहा—"इस्माईलसे कह कि मुझे तूने नही, बल्कि तेरी ईमानदारी, विश्वास और सुन्दर स्वभावने हराया।"[१]

विद्वान्—ताहिरियो और सफ्फारियोके रूपमें अब स्वतत्र ईरानी शासक पैदा हुए। सफ्फारी यद्यपि आभिजात्य वर्गके नही थे, और उन्हे अधिकतर युद्धो और सघर्षोमें ही समय बिताना पडा, किंतु ताहिरियोने विद्याकी ओर विशेष ध्यान दिया। बगदादके खलीफा मसूर-हारून-मामूनने दुनियाके बडे बडे दार्शनिको और विद्वानोकी कृतियोका अरबीमे अनुवाद करनेका रास्ता दिखलाया था, उसका फल इस समय मिला। याकूब किंदी (८७० ई०) बगदादी खलीफोके समयमें पहला उच्चकोटिका दार्शनिक पैदा हुआ, जिसे ग्रीक दर्शनके अनुवादोका परिणाम कह सकते है। इसका पूरा नाम अबू-युसुफ याकूब इसहाक-पुत्र किंदी था। दक्षिणी अरबमें किंदा नामक एक कबीला था, जिसमे याकूब पैदा हुआ, किंतु इसका परिवार कई पीढियोसे इराकमें आ बसा था। याकूबका पिता इसहाक किंदी कूफाका गवर्नर था। पूर्वी इस्लामने जो तीन (किंदी, फाराबी, बूअलीसीना) महान् दार्शनिक पैदा किये, उनमें याकूब किंदी पहला था। किंदीकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी, वह भूगोल, इतिहास, ज्योतिष, गणित और दर्शन सब पर अधिकार रखता था। उसके ग्रथ अधिकतर गणित, ज्योतिष, भूगोल, वैद्यक और दर्शनपर हैं। उस समयके किमिया (सोना बनानेकी विद्या) पर विश्वास रखनेवालोको निर्बुद्धि कहकर वह मजाक उडाता था, लेकिन दूसरी ओर फलित ज्योतिष पर उसका[२] बहुत विश्वास था। अपने दार्शनिक विचारोमे वह ग्रीक दार्शनिकोंसे प्रभावित था।

---

[१] "सियासतनामा" (निजामुल्मुल्क) पृष्ठ ८-१६

[२] दर्शन दिग्दर्शन पृष्ठ १०३-११३।

स्रोत-ग्रन्थ

1 Heart of Asia (E D Ross)
2 Turkistan Down to Mongol Invasion (W Bartold)
३ "सियासतनामा" (निजामुल्मुल्क, लाहौर)

भाग ७

उत्तरापथ (९४०-१२१२ ई०)

अध्याय १

कराखानी (९४०-११२५ ई०)

१ उद्गम

हम देखेंगे, सामानी राज्यश्रीका अन्त समीप आ रहा था। उनके पश्चिममें ईरानका शक्तिशाली राजवश दैलमी (बुवाईद) जोर पकड रहा था, दक्षिणमें ग़ज़नवी सुबुक तगिन अपनी शक्ति बढ़ा रहा था। ख्वारेज्ममें ख्वारेज्मशाह की दृढ नीव पड रही थी। इसी समय उनके उत्तरमे एक और शक्तिशाली तुर्क राज्य कायम हुआ, जो काशगरसे अराल समुद्र तक फैला हुआ था। पहिले दोनो पडोसियोका सबध अच्छा था, बल्कि कहा जा सकता है, ग़ज़नवियो, दैलमियोको सामानियोंसे मित्रता रही। कराखानी खानाबदोशोने जब सामानी राजकी निर्बलता देखी, तो उनकी नजर सिर-दरियाके पार जाने लगी। कराखानी, तुर्क जातिके प्रधान कबीलोंसे अलग हो त्यानशानके सानुओपर रहते थे। कोई कोई लेखक इन्हे उइगुर नही मानते। इनका पहिला खान जो मुसलमान हुआ, उसका नाम सातुक कराखान था। घुमन्तुओमें किसी खानके नामपर कबीलेका नाम पडना बहुत देखा जाता है, इसीलिए इन घुमन्तुओको कराखानी कहा जाने लगा। इनका एक खान इलिखान (९९३—) भी था, जिसके कारण इन्हें इलखानी भी कहा जाता है। कराखानी दसवी सदीके अन्तमें सप्तनदमें इली और सू-नदियोंकी उपत्यकाओमे रहते थे। उनके अधीन नगरोंमें सबसे बडे थे—कुलान (आधुनिक लुगोवया) और मेरके। उन्होने बोगराखान (१०७४-११०२ ई०) के नेतृत्वमे अन्तर्वेदको जीता। मुख्य खान बलाशागुन (चू-उपत्यका) और कभी कभी काशगरमें भी रहता था। अन्तर्वेदपर अधिकार हो जानेके बाद जब वहाके कराखानी शासकको प्रधानता मिल गई, तो वह काशगरमें रहने लगा। सामानियोका आमू तकका राज्य इन्होने लिया और आमूसे दक्षिण को महमूद ग़ज़नवीके पिता सुबुक तगिन ने।

हम बतला आए है, कि किस प्रकार उइगुर आरम्भमें ओरखोन नदीकी उपत्यका (मगोलिया) में रहते थे, उनके पुराने खान बुक्कूने स्वप्नके चमत्कारके अनुसार पूरब तथा पश्चिमकी दिग्विजय यात्रायें की, और बलाशागून (औलियाअता से उत्तर-पूरब) बसाया।

कराखानी राजवशका आरम्भ कैसे हुआ, इसके बारेमें ऐतिहासिकोंका एकमत नही है। कुछ तो इनके तुर्की या उइगुर कबीलेके होने में सदेह करते हैं। लेकिन हमें यह मालूम है कि अरब ताकूज-आगूजोकी करलुकोपर विजयकी बात कहते है और यह कि यग़मा कबीलेने काशगरको ले लिया। यह यग़मा ताकूज-आगूजोकी एक शाखा थी। इसी समय काफिर तुर्कोंने बलाशागुनको जीता। यह भी पता लगता है, कि इन जीतोका अर्थात् ताकुज-आगुज़ोंका नेतृत्व कराखानी कर रहे थे, इन्होने ही करलुक राज्यको खतम किया। कराखानियोंके सबधमें

जो स्थिति करलुकोकी है, वही स्थिति सलजूकी साम्राज्यमें आगूज़ोकी है। कराखानियोकी पुरानी परम्परा बतलाती है, कि सबसे पहिला सातुक बोगरा खान अब्दुलकरी-पुत्र अन्तर्वेदका विजेता था। दूसरे अन्तर्वेद-विजेताका यह दादा था। यही पहिले पहल मुसलमान हुआ। कहते है, सन् ९६० ई० में दो लाख खेमेवाले बहुतसे तुर्की कबीलोने इस्लाम धर्म स्वीकार किया। अन्तर्वेद (मावराउन्नहर) जैसे सांस्कृतिक केन्द्र का—जहापर कि अब इस्लाम जड जमा चुका था—प्रभाव उत्तरके इन घुमन्तुओंके ऊपर पडना आवश्यक था। उमैया-कालसे इस्लामिक धर्म-प्रचारक व्यापार और दूसरे सबधोंसे यहा पहुचने लगे थे, किन्तु उस वक्त उन्हें सफलता नही हुई, क्योकि सनातनी इस्लाम इन घुमन्तुओंके अनुकूल नही था। यह घुमन्तू बौद्ध और दूसरे धर्मोंके प्रभावके कारण ध्यान, योग, त्याग-पूर्ण रहस्यवादी धर्मकी ओर ज्यादा आकृष्ट होते थे। यह काम मुस्लमान सूफी-सन्त ही कर सकते थे, इसलिए जहा मौलवी असफल हुए, वहां सन्तोने इन घुमन्तुओमें सफलता पाई। वस्तुत मुसलमान सूफी-सन्त जिन बातोंको प्रधानता देते थे, उनपर केवल इस्लामके नामकी मुहर भर थी, नही तो वह वही बातें थी, जिनको कि बौद्ध, नेस्तोरी या मानी साधक-सन्त मानते थे।

काफिर तुर्कोंने बलाशागूनको ९४२ ई० में ले लिया था। अगले साल खानका पुत्र सामानियोंके हाथमें कैदी बन गया। कुछ आगूज़ किसी कारणवश अपनी भूमि छोड सामानी सरकारकी आज्ञासे अन्तर्वेदकी उस भूमिमें चले गये थे, जो कि घुमन्तुओंके अनुकूल थी। इनका काम था, सामानी सीमाकी रक्षा करना। यह आगूज़ (तुर्कमान) इस्फिजावके पश्चिम और पश्चिम-दक्षिणके इलाकोमे रहने लगे। सिर-दरियाके निम्न-भागमें आगूज़ोका एक दूसरा कबीला अपने नेता सल्जूकके नेतृत्वमें अलग जा बसा। सल्जूक मुसलमान बना और उसने जन्द-निवासी मुसलिम जनताको काफिरोको कर देनेसे मुक्त कराया। मरनेके बाद सल्जूक खान जन्दमें दफनाया गया। उसके उत्तराधिकारियोकी वहा नही पटी और ९८५ ई० के आसपास वह दक्षिणकी ओर चले गये। ग्यारहवी सदीमें जिन्दका मुसलमान शासक सल्जूकी कबीलेका घोर विरोधी था। सल्जूकके प्राथना करनेपर सामानियोने उन्हें नूर (बुखाराके उत्तर-पूरब के पहाडोंके नजदीक आधुनिक नूरअता) में बसा दिया। कुछ साल बाद जब बलाशगूनके खानने इस्फ़िजावको दखल कर लिया, तो उनके साथ लडनेमें सल्जूकियोने सामानियोका साथ दिया।

§२ राजावलि

उत्तरापथमें निम्न कराखानी कगान (खान) हुए—

कराखानी	गज़नवी	सल्जूकी
१ शातुक कराखान -९५५		
२ बुगरा खान -९९३		
३ इलिक नस्र -९९३-१०१२	१ सुबुक तगिन -९९७	
४ तुगान १०१२-१०२५	२ महमूद ९९७-१०३०	
५ कादिर -१०३२		
६ अरसलन I १०३२-१०५६	३ मसऊद १०३०-४१	१ तुगरल १०३६-६३
७ बोगरा II -१०५६	४ मुहम्मद -१०४१	
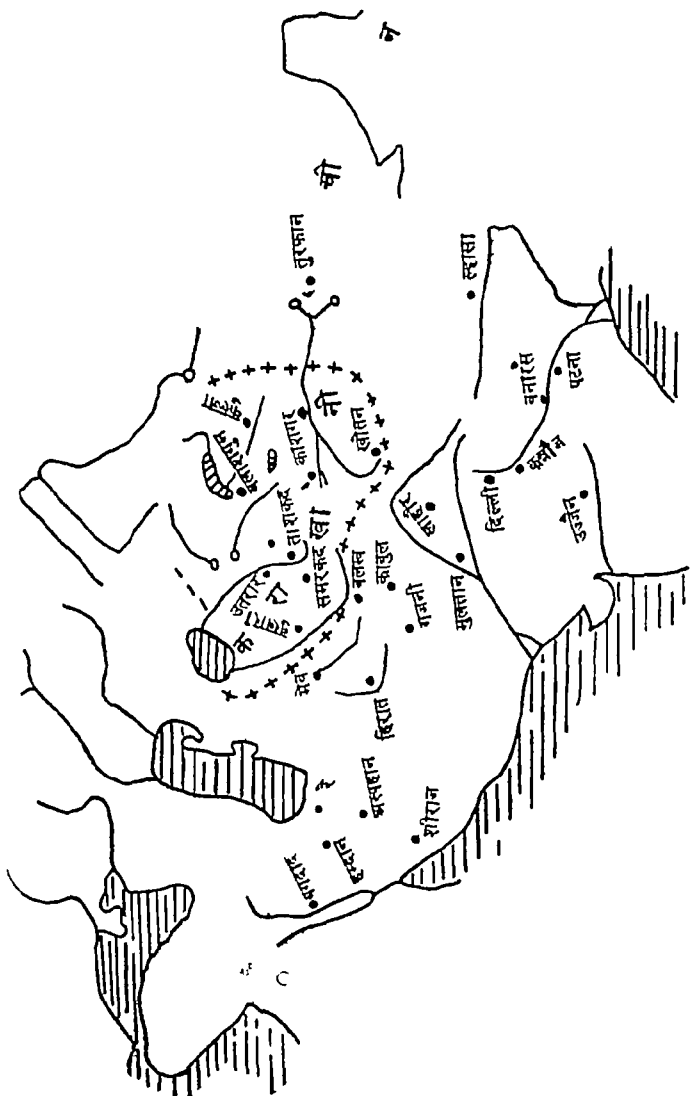
कराखानी

८ इब्राहीम I -१०५९
९ तुगरल युसुफ १०५९-७४
१० तुगरल तेमन -१०७४

गजनवी

५ मौदूद -१०४१
(ख्वारेज़्म)

सल्जूकी

२ अल्पअरसलन १०६३-
३ मलिकशाह १०७३-

कराखानी	गजनवी	सल्जूकी
११ बोगरा III हारून १०७८-११०३	१ अनुशूतगिन -१०९७	४ महमूद १०९२-
		५ वर्कियारुक १०९४-
१२ कादिर II जिब्रील ११०३-	२ मु० कुतुबुद्दीन १०९७-११२७	६ मलिकशाह II -११०८
		७ मुहम्मद ११०४-
		८ महमूद II १११७
	३ अत्सिज ११२७-५६	९ सजर १११७-५७

§३ राजा

१ शातुक कराखान (९५५)

इसके बारेमें इतना ही मालूम है, कि यह ९५५ ई० मे मौजूद था, तथा यही पहिले-पहल काफिरसे मुसलमान हुआ।

२ बोगराखान I (९९२)

शातुकके पुत्र मूसाका यह पौत्र था, जिसे शहाबुद्दौला और हारून भी कहते है। उस समय सामानी वंश बिलकुल निर्बल हो चुका था, इसलिए बोगरा खानको अन्तर्वेदका लेनेमें कोई कठिनाई नही हुई। अबूअली (सामानियोके सामन्त) ने ही बोगरा खानको बुलानेमें बडी तत्परता दिखाई थी, जिसके लिये यह तै हुआ था, कि आमू-दरियाके दक्षिणका भाग अबूअलीके हाथमें रहेगा। सामानी शासनकी दुर्व्यवस्थासे तग आकर देहकान (ग्रामणी) भी बोगराखानको निमत्रण देनेवालोमेंसे थे। बोगरा खान तीन पीढीका मुसलमान था, इसलिए उसकी आवभगतमें मौलवी भी किसीसे पीछे नही रहे। खलीफा वासिकका वशज अबूमुहम्मद उस्मान-पुत्र वासिकी भी खानके अनुयायियोमें था। सामानियो पर इस सारी आफतका कारण यह भी था—जो कि आमतौरसे पुराने राजवशोमें दुहराया जाता है—अर्थात् एक ओर राज्यका छिन्न-भिन्न होके सकुचित होते जाना और दूसरी ओर खरचका वेतहाशा बढ़ता जाना।

मुस्लिम इतिहासकार बोगरा खानको उडगुर खानके नामसे अधिक जानते है। इसकी राजधानी बालाशागुन थी। काशगर, खोतन, तरस, फागव (उतगर) और कराकोरम भी इसीके शासित नगर थे। यह सामानी नूह III का समकालीन था। हम कह आये है, कि खुरासानके गवर्नर सिमजूर अबूअली और हिरातके गवर्नर फाइक ने अपने स्वामीके विरुद्ध विद्रोह किया था, जिसके कारण नूहने फाइकको कडा दड दिया। अब उन्होने अपने स्वामीको दड दिलानेके लिये बोगरा खानको बुलाया। फाइकको उस वक्त समरकदकी रक्षा का भार दिया गया था। उसने समरकदका दरवाजा कराखानियोके लिये खोल दिया। नूह समरकद छोड बुखारा भाग गया। समरकदके बाद राजधानी बुखाराको लेकर अप्रयास ही बोगरा खान सारे अन्तर्वेदका शासक बन गया। बोगरा खानको यहाका जल-वायु अनुकूल नही आया। ९९३ (३८३ हि०) में वह बलाशागुन (सप्तनद) जा रहा था, कुछ ही मजिलोंके बाद मर गया। नूहने आकर बुखाराको फिर ले लिया। नागरिकोने उसका बडा स्वागत किया, किन्तु उसके अमीर विश्वासघात पर तुले हुए थे, इसलिए ९९४ (३८४ हि०) में नूहने गजनवी सुबुक तगिनको मददके लिये बुलाया। उसका

पुत्र महमूद गजनवी सेनाका सहायक-सेनापति था। गजनवियोंकी बीस हजार सेना वक्षु (आमू दरिया) पार हो किश (शह्रसब्ज) में नूहके साथ आ मिली और फिर संयुक्त सेनाने विद्रोही नगरों—हिरात, नेशापोर और तूस—को फिरसे विजय किया। पर, अन्तमें नूह और सुबक तगिन में झगड़ा हो गया।

३ इलिक नस्र (९९२-१०१२)

यह अन्तर्वेदसे विशेष संबंध रखता था।

४ तुगान (१०१२-२५ ई०)

इलिकके बाद उसका भाई तुगान खाकान बना। शायद वह अन्तर्वेदका भी शासक था, सप्तनदका तो अवश्य ही था। यह भी संभव है, कि पूर्वी तुर्किस्ताननें भी उसे अपना खाकान माना था, और कादिर खान यूसुफ काशगर और यारकन्दका प्रान्तीय शासक था। १०१७ ई० (कराखिताइयों)में पूरबसे आकर खित्तनोंने सप्तनद ले लिया। तुगानखान भारी सेनाके साथ उनके मुकाबिले के लिए चला, तो वे सप्तनद छोड़कर हट गये। लेकिन उसके तीन ही महीनें बाद तुगान खानकी पूर्ण पराजय हुई। कराखानियोंके घरकी फूटके साथ साथ महमूद गजनवी अपनी शक्तिको बढ़ाता जा रहा था। तुगानखान महमूदका विश्वासपात्र मित्र था, इसलिये बाहरी हमलेका डर नहीं था। सप्तनदपर अधिकार करनेवाले चीनसे आये एक लाख तम्बूवाले काफिरों का खतरा आया। एक बड़ी सेना लेकर तुगान खान ने १०१७ ई० (४०८ हि०)में आक्रमण कर काफिरोंको बुरी तरह हराया। इसके थोड़े ही समय बाद १०२५ ई० उसका देहान्त हो गया।

अरसलन खान मुहम्मद—तुगानखानका भाई था, जिसे अबू-मसूर मुहम्मद अली-पुत्र (बहिरा) भी कहते हैं। यह कहना मुश्किल है, कि वह काराखानियोंका महाखाकान था या कोई प्रादेशिक शासक। इतना मालूम है, कि उसने महमूदके साथ अच्छा संबंध बनाये रखा। वह बड़ा धर्मात्मा माना जाता था। महमूदनें अरसलन और उसके भाई इलिकसे अपने बड़े बेटे मसऊदके लिये एक राजकुमारी मांगी। राजकुमारीके बलख आनेपर उसका बड़ा स्वागत हुआ। महमूद काशगरीनें अपनी पुस्तक "दीवान लुगातुत्-तुर्क" में लिखा है, कि मसऊद और उसकी तुर्क बीबीकी पहिली ही रात मार पीट हो गई। सुबुक तगिन और उसका बेटा महमूद भी तुर्क ही थे, लेकिन सोग्दियोंके साथ मिश्रण होनेके कारण इनके आचार-व्यवहार तथा आकृति पर भी तुर्कोंका प्रभाव कम रह गया था। भाषामें भी महमूद फारसी लेखकों (फिरदोसी, बैरूनी) का संरक्षक था। उधर कराखानी अभी शुद्ध घुमन्तू मंगोलायित थे, इसीलिए महमूद गजनवीके इतिहासकार उतबीने कराखानियोंके विचित्र शरीर-लक्षणका उल्लेख करते हुए आश्चर्य किया है, तो भी कराखानी खानका इतना दबदबा और प्रतिष्ठा थी, कि महमूद अपने उत्तराधिकारी लड़केके लिये "छोटी आखों, चिपटी नाक, और चौड़े मुहवाली" खान-कुमारीको लेना इज्जतकी बात समझता था। वह भी इतनी गरबगहिल्ली निकली, कि उसने सोहागरातको ही महमूदके शाहजादेको ठोक दिया।

५ कादिरखान-यूसुफ (१०२५-३२)

कादिरखान और इलिक खान दोनों भाइयोंका झगड़ा था, इसका जिक्र हम पहिले कर चुके

है। वोगराके पुत्र इलिक तुगान (II) का भाई अली तगिन था, जिसका ही पुत्र यह कादिर खान यूसुफ था। यह कहना मुश्किल है, कि वह सारे कराखानी साम्राज्यका खान था या केवल काशगर प्रदेशका। मुहम्मद तुगान और इलिकका चौथा भाई अली-पुत्र अबू-मसूर था, जिसकी उपाधि असलम खान थी। बुखाराकी टकसालमे १०१२ (४०३ हि०) के ढले सिक्कोपर इसकी उपाधि अरसलन खान मिलती है। अरसलन खान भी तुगान खा से झगड पडा। १०१६ ई० में उजगन्दके पास दोनोकी लडाई हुई। ख्वारेजमशाह मामूनने बीचमें पडकर दोनो भाइयामें सुलह करवाई। यह भी कहा जाता है, कि कादिर खान पहिले समरकन्दकी गद्दीपर बैठा था। पीछे उसने सारे काशगर और खोतनको अपने हाथमें कर लिया। कादिर खा यूसुफने अपने काफिर भाइयो और प्रजाके बीच इस्लामका प्रचार करनेमें बडी तत्परता दिखाई। वोगरा खानके मरने पर, कहते हैं, खानका अधिकार परिवारकी दूसरी शाखाके हाथमे चला गया और यूसुफका हिस्सा नहीं मिला। उसने असतुष्ट आदमियोको अपनी ओर खीचा। फिर खोतन ले धीरे धीरे वह सारे पूर्वी तुर्किस्तानके नगरोका स्वामी वन गया। ११वी सदीके आरम्भमे इलिक नस्रका भाई तुगान खान काशगरका शासक था, लेकिन १०१३ (४०४ हि०) और १०१४ (४०५ हि०) में काशगरमें जो सिक्के चलते थे, उनपर खलीफा कादिर और मलिकुल्-मश्रिक् नासिरुद्दौला (पूर्व-स्वामी, राज्य विजेता) कादिर खान यूसुफका नाम मिलता है। वादके वर्षोमें भा यहा उसीके नामके सिक्के चलते रहे। इससे पता लगता है, कि अपनी मृत्युसे बहुत पहिले ही तुगान खानको पूर्वी तुर्किस्तानसे हाथ धो लेना पडा, और वह सप्तनद तथा अन्तर्वेदका ही शासक रह गया। उसका भाई मुहम्मद अली-पुत्र तराजका शासक था। अन्तर्वेदमें भी भाईके जीवनमें यही अधीनस्थ शासक था। उसकी मृत्यु १०१५ (४०६ हि०) में हुई थी। उसने असलम खानकी पदवी धारण कर १०२४ तक शासन किया। अरसलनके अन्तिम सालोमें जो दुर्व्यवस्था हुई, उससे अली तगिनने फायदा उठाया।

६ अरसलन खान सुलेमान (१०३२-५७ ई०)

कादिर खान यूसुफका ज्येष्ठ पुत्र वोगरा तैमन सुलेमान था, जो अरसलन खानकी उपाधि धारण कर पूर्वी तुर्किस्तान और सप्तनदका शासक बना। कादिर खा का दूसरा पुत्र ईगान तैमन मुहम्मद "वोगरा खान" की उपाधि ग्रहण कर तलस (औलिया-अता) और इस्फ़िजाब पर शासन करता था। दोनो भाइयोने महमूद-पुत्र मसऊद गजनवीसे वातचीत चला अन्तर्वेदके अपने भाई-बन्धुओंके ऊपर चढ़ाई करनेकी तैयारी की, लेकिन उसमे सफलता नहीं हुई। उस समय सिमकन (वैकलिग) नगरका शासक लश्कर खान था। अरसलन और उसके भाईमें दुश्मनी हो गई। १०४३ ई० (४३५ हि०) मे अरसलनने अपनी अधिराजता रख अपने राज्यके भिन्न भिन्न भागोको अपने वन्धुओमें वाट दिया, और अपने हाथमें काशगर और वालाशागुन का शासन रक्खा। लेकिन इतनेसे शान्ति नही स्थापित हुई, और १०५६ ई० में वोगरा खानने अरसलनको वन्दी वना उससे गद्दी छीन ली।

७. बोगरा खान II (१०५६-५९)

वोगरा खान वहुत दिन शासन नही कर सका। पन्द्रह ही मासमे उसकी स्त्रीने उसे विष

देकर मार डाला। कारण यह था कि बोगरा अपने बडे लडके चागिरी तैमन हुसैनको राज देना चाहता था, जबकि खातून अपने पुत्र इब्राहीमको।

८, इब्राहीम (१०५९-..)

इब्राहीम ज्यादा समय तक शासन नही कर सका। थोडे ही समय वाद वर्संखानके शासक यनाल तैमनसे लडाई हुई, जिसमें वह मारा गया। वस्तुत घुमन्तुओमे यह भाव काम करता रहता है, कि कोई खान बनकर ऐश्वर्य क्यो भोगे, जबकि सामाजिक दृष्टिमें सब बराबर हैं। खानो का जीवन सीधा-साधा घुमन्तू जीवन नही था। लूट और दिग्विजयसे अपार सपत्ति और दास-दासी उनके हाथमें आते थे, जिसमेंसे खान अपने और अपनी सतानके लिये अधिक भाग रखना चाहता था, जिसके कारण खान और उसके परिवारके आदमियोमें वडी विपमता खडी हो जाती थी। यही घरेलू कलह और खूनका कारण वनती थी। यद्यपि वाहरी शत्रुओके सामने कितनी ही बार वह आपसी फूटको भूल जाते थे, किन्तु वैमनस्य धीरे धीरे बढता ही जाता रहा। बोगरा खानके पुत्रोमे इब्राहीम अतिम खान था।

एक रूसी इतिहासकारने इन घुमन्तुओंके बारेमें लिखा है[1]—"उनके अनेक विभाजन बराबर झगडेका कारण बने रहते। झगडोको मिटानेके लिये कोई वहुत कडा कदम उठाया नही जा सकता था, क्योकि झगडनेवाले भी राजवशके अपने व्यक्ति थे, जिनकी सेवायें सकट या विजयके समय वहुत महत्व रखती थी। उनमें नियम था—एक हजार तुर्कोंकी सेना खडी कर उन्हें दरबारके गुलामोमें शामिल कर उनके साथ गुलामो जैसा वरताव नही किया जाता। उनको इस तरहकी शिक्षा दी जाती, जिसमें कि वह प्रजाके साथ अधिक परिचय प्राप्त कर सकें, और उनपर शासन करते यह भूल जायें, कि वह गुलाम हैं।" तुर्कोंमें इस तरहके "गुलामो"के रखनेकी प्रथा बहुत चल गई थी, क्योकि राज-वशियोकी महत्वाकाक्षाओके कारण खान या तेगिनको वराबर प्राणोका सकट वना रहता था, जवकि यह गुलाम तुक उतनी महत्वा-काक्षा नही रखते थे। गुलामोंके स्वभावमें आसानीसे परिवतन लाया जा सकता था, क्योकि वह जानते थे कि उनका सारा भविष्य अपने वश सबधके ऊपर नही वल्कि मालिककी कृपाके ऊपर अवलवित है। महमूद गजनवीका पिता सुबुक तगिन इसी तरह गुलामके रूपमें पला और वढा था। दिल्लीका प्रथम सुल्तान कुतुबुद्दीन ऐवक भी गोरियोका इसी तरहका तुर्क गुलाम था। वस्तुत यह गुलाम साधारण अर्थमें दास नहीं थे। उनको शिक्षा-दीक्षा ऐसी दी जाती थी, जिसमें ऊचे-से-ऊचे सैनिक असैनिक पदोको वह सँभाल सकें। उनके मालिक उन्हें गुलामकी तरह नही मानते थे, यह तो इसीसे मालूम है, कि इनमेंसे कितने ही अपने मालिकके दामाद बनते थे। वस्तुत मालिकका विरोध करनेमें इन्हें घाटा ही घाटा और मालिकको खुश रखनेमें लाभ ही लाभ था, यही कारण था, तुर्कोंमें इस प्रथाके बहुत चल पडनेका।

९, तुगरल कराखान युसुफ (१०५९-७४)

इब्राहीमके वाद काशगर और बलाशागुन पर कादिर खान यूसुफके एक पौत्र तुगरल

---

[1] बर्तोल्द

कराखान यूसुफ ने १६ साल राज्य किया, जिसमे उसका भाई वोगरा खान हारून भी सम्मिलित था। अन्तर्वेद-शासक शम्शुल्मुल्क नस्र (इलिक नस्रके पौत्र) के साथ उसकी लड़ाई हुई, किन्तु अन्तमे खोजन्दको सीमा मानकर दोनोने सुलह कर ली।

१०. तुगरल तैमन (१०७४-.)

तुगरलके पुत्र तुगरल तैमिनने केवल दो साल राज्य किया।

११. वोगरा खान III हारून (१०७४-११०२)

भतीजेके बाद चचाने २१ साल (४६७-९६ हि०) तक काशगर बलाशागुन और खोतनपर शासन किया। अन्तर्वेद दूसरी कराखानी शाखाके हाथम चला गया। वोगरा खान उस समय काशगरमें अपने भाईका उपराज था, जबकि १०६९ (४६२ हि०) मे उसने "कुदतकु-बिलिक" नामक तुर्की भाषाका प्रथम काव्य लिखा। तुर्की भाषाका यह प्रथम काव्य एक खानकी कलमसे लिखा गया है। इससे पहिले भी तुर्की भाषामे कविताए बनी होगी, किन्तु जनकाव्य होनेके कारण वह अधिकतर मौखिक रही। १०८९ ई० मे मलिक शाह सल्जूकी (११०४-१७ ई०) समरकन्दपर अधिकार कर उजगन्द तक आया। वोगरा खानने उसे अपना अधिराज स्वीकृत किया। जब मलिक शाह समरकन्द चला गया, तो देशमे विद्रोह हो गया, जिसमें जिकिलोने काशगर खानके भाई तथा अतवाशके शासक याकूब तैमनको बुलाया। याकूब समरकन्दपर आक्रमण करने गया, किन्तु जब मलिक शाहने उसकी तरफ मुह फेरा, तो वह अतवाश भाग गया, जहा उसकी लडाई अपने भाईके साथ हो गई। वोगरा खानने अतवाशपर अधिकार करके याकूबको बन्दी बना लिया। मलिक शाहने उजगन्द पहुचकर काशगरके खानसे याकूबको मागा। वोगरा खान इसके लिये तैयार नही हुआ। सल्जूकी सेनाने काशगरको घेर लिया, जिसमे बरसखान-शासक तुगरल यनाल-पुत्रका शायद हाथ था, जिसके पिताको वोगरा खानके भाई इब्राहीम ने मारा था। वोगरा खान अन्तमें बन्दी बना। इसकी खबर उसके पुत्र और खातून (रानी) को मिली। मलिक शाह ने याकूबको तना देखकर उससे सुलह की और उजगन्द छोडकर चलते समय याकूबको तुगरलसे लडाई जारी रखनेका हुक्म दे गया। युद्धका क्या परिणाम हुआ, यह मालूम नही, किन्तु वोगरा खान हारून याकूबके वन्दीखानेसे जरूर छूट गया, क्योंकि उसने ११ वी सदीके अन्त तक काशगरपर शासन किया। इन घटनाओको देखनेसे मालूम होगा, कि सारे उत्तरी कराखानियोका भी कोई एक सवमान्य खाकान कितने समय तक रहा, यह कहना मुश्किल है। खानजादोमे बराबर झगडे होते थे और वह एक दूसरेको बन्दी बना अपने राज्यका विस्तार करते थे। सल्जूकी अन्तर्वेदमें कुछ नही कर सकते, यदि उत्तरी कराखानियोंमें एकता होती। कराखानियोंमें खानजादा (राजकुमार यात तगिन), वेग जैसे उच्च कुल थोडेसे थे। उनके अतिरिक्त विशाल घुमन्तू जनता लडाइयोंकी लूट-पाटमें सहायता करती थी। जब तक लूटमें हिस्सा मिलता रहे, तब तक तुर्क जन-साधारणको इसकी पर्वाह नही थी, कि कौन महाखान है और कौन तगिन या वेग। लेकिन ऊपरी वर्गमें सपत्तिकी विषमताके कारण कभी समझौता नही हो पाता था।

१२. कादिर खान II जिबराईल (११०३)

यह सभवत कराखानियोका अन्तिम कगान बोगरा खान मुहम्मदके पुत्र कराखान उमरका पुत्र था, जिसके हाथसे कराखिताईयोने राज्य छीन लिया। यह बलाशागून और तलसका शासक था। इसके बाद कराखिताइयोंके आने तक सप्तनद (बलाशागुनका) इतिहास अधकारावृत है। ११०२ ई० में कराखान जिबराईलका सितारा बहुत ऊँचा था। उसने अन्तर्वेदको ही दखलकर सतोष नही किया, बल्कि आमू पार सल्जूकियोकी भूमिपर भी आक्रमण किया। तेरमिज लेने में उसे सफलता मिली, लेकिन २२ जून (११०२) को इसी शहरके करीब सुल्तान सिजरसे लडाई हुई, जिसमे वह बन्दी बनकर मारा गया। जिबराईलको मारनेके बाद सिजरने महमूद तगिनको अरसलन खानकी पदवी देकर अन्तर्वेदकी गद्दीपर बैठाया।

इस्लाम—कराखानियोंसे पहिले सप्तनदके तुर्क-देशमें कोई मुसलमान राजवश नही हुआ था। अरब इतिहासकार इब्नुल-असीरके अनुसार ९६० ई० (३४९ हि०)मे २ लाख तुर्क तबुओने इस्लाम स्वीकार किया। १०४३ ई० मे बहुतसे मुसलमान तुर्क किरगिज़ मरुभूमिमे घुमन्तू जीवन बिता रहे थे। इब्नुल-असीर लिखता है, कि गर्मियोमें इन तुर्कोंके दस हजार तबू बलगार (वोल्गा नदीके किनारे रहनेवाली तुर्क जाति) के पडोसकी भूमिमें रहा करते थे, जो जाडोमे जाकर बलाशागुनके पास डेरा डालते। पूर्वी तुर्किस्तानपर सदा चीनी सस्कृतिका प्रभाव रहा। उसी प्रभावके कारण बहुतसे कराखानी खाकानो तथा अन्तर्वेदके शासकोने भी तबगाच-खान (तमगाच खान) की पदवी धारण की। आठवी सदीके ओरखूनके शिलालेख से मालूम होता है, कि यह चीन सम्राट्की दी हुई पदवी होती थी। १०६७ (४५९ हि०) के कराखानी सिक्कोपर लिखा रहता था "मलिकुल्-मश्रिक वस् सीन" (पूर्व और चीनका स्वामी)। उरुमची, तुरफान और हामीके नगरोंके पास कराखानियोकी सीमा चीन से मिलती थी। इन नगरोमें पन्द्रहवी सदी तक अभी इस्लामकी प्रधानता नही थी, और वहा बौद्ध और नेस्तोरी धर्म अधिक प्रभावशाली थे। कराखानी सिक्कोपर अरबी लिपिके साथ साथ उइगुर-लिपिका भी व्यवहार होता था, जिसे मानी-धर्मी अथवा नेस्तोरी अपने साथ लाये थे। बोगरा खानके काव्य "कुदत्कु-बिलिक" में उपयुक्त कितने ही पारिभाषिक शब्द उइगुर-तुर्की-मगोल तीनो भाषाओंके एकसे है।

स्रोत-ग्रथ

1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
२ ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व० बरतोल्द, वेर्नी १८९८)
३ आर्खेआलोगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिजिइ (अ० न० बेर्नश्ताम्, फ्रुन्जे १९४१)
४. क्रत्कि० सोओब० XIII pp115—
५ कुदतकु-बिलिक (बोगराखान)

अध्याय २

कराखिताई (१११५-१२१८ ई०)

§१. उद्गम

कराखिताईका अर्थ है काले-खिताई। खिताई चीनका एक प्रसिद्ध राजवंश था, जिसने चाउ वंश (सुंग राजवंशकी शाखा) के रूपमें ९६० ई० से ११२६ ई० तक शासन किया। इसकी राजधानी कै-फेङ थी। इसके शासनका महत्व इतना समझा गया, कि जिस तरह चीन-वंश (२५५-२०६ ई० पू०) के गौरव-पूर्ण शासनके कारण भारत और बहुतसे दूसरे देशोंमें देशका नाम चीन पड़ा, वैसे ही खित्तन-वंशके कारण आज भी रूस और मुसलिम देशोंमें चीनका नाम खिताई मशहूर है। हमारे यहा भी नान-खिताईमे उसी चीनी रोटीका आभास मिलता है।

खित्तन उसी वंशके थे, जिसके कुनोक-घेई, जो पहाड़ोंमें वृक्षोंपर अपने मुर्दोंको टागा करते थे, फिर तीस साल बाद हड्डिया जमाकर उन्हें जलाते और शराबकी धार देते हुए प्रार्थना करते— "जाड़ेमें दोपहरको हम दक्खिणाभिमुख भोजन करें, ग्रीष्ममें उत्तराभिमुख। अपने शिकारों में हम बराबर बहुतसे सूअर और हरिन पायें।" खित्तन और घेई दोनो पुराने सियान्-पी की सतान थे और उन्हीकी भूमिमें रहते थे। घेई मूलत जूमिन कबीलेकी पूर्वी शाखामें थे। जूमिनोंने छठी सदीमें उत्तरी चीनपर राज किया था। किन्तु उससे पहिले ही मूजुग सियन्-पी ने घेइयो और खित्तनोंको शिरामुरेन नदीके उत्तर सुगारी नदी और मरुभूमिके बीचमें खदेड दिया था। प्रथम तोबा सम्राट्ने ३८८ ई० मे लूटमार मचानेके लिये घेइयोको दण्ड दिया था। ४८० ई० से घेई और खित्तन बराबर चीन दरबारमे घोड़ोंकी भेंट लाते थे। ४७९ ई० म खित्तन सिरा मुरेनकी शाखा पाइ-लग (लौह) नदीपर अवस्थित आधुनिक तुमेंद (मगोल) देशमें चले गये। छठी सदीमें खित्तन सिरामुरेन (सिरा नदी) के उत्तरम थे। घेइयो और खित्तनोंकी लूट-मारसे बचनेके लिये तोबा (वश) ने चीनके महाप्राकारको नानकाऊ जोत (पेकिङ्ग के समीप) से तातुङ-फू तक तीन सौ मील बढ़वाया। उसी सियान्-पी वंश से खित्तन वंश निकला, जिससे पीछे मचू हुए, जो कि भाषा और सस्कृति सभी बातोमे अब चीनी बन गये ह।

उत्तरके घुमन्तुओंमें देखा जाता है, परिस्थिति अनुकूल होनेपर एक छोटा सा कबीला योग्य नेताके अधीन एक विशाल जनका नेतृत्व हाथमें ले राज्य या साम्राज्य कायम करनेमें सफल होता है। खित्तनोंके साथ यही हुआ, चंगेजी (चिंगीसी) मगोलोंके साथ भी यही बात हुई। जब तुर्कोंने घेइयो और खित्तनोंको दबाना चाहा, तो दस हजार खित्तन परिवार कारिया भाग गये और चार हजार चीनकी प्रजा बन गये। ४६८ ई० में थाङ सम्राट् ताइ-चुङ (६२७-६५० ई०) ने खित्तनोंका एक नया प्रदेश बनाकर उसके शासकके वशका नाम ली रख दिया। उसके नीचे

१० इलाकोंके शासक थे। यही प्रदेश आजकल जेंहोलके नामसे प्रसिद्ध है। उसी सम्राट्ने आधुनिक युङ-पिङ-फूमें सभी पूर्वी बर्बर जातियोंके ऊपर एक उच्च-आयुक्तक नियुक्त कर खाकानकी पदवी प्रदान की। घुमन्तू जातियां अपने स्वभावसे मजबूर हो लूट-पाट करना छोड नही सकती थीं, जिसके लिये चीनको लडाई करनी पडती थी। ९०७ ई० में थाङ-वंश खतम हुआ, लेकिन इससे पहिले ८४२ ई० में उइगुरोंके मुकाबिलेमें खित्तनोंके साथ मेल-जोल बढानेके लिये थाङ-वंशने साम्राजी मुद्रा प्रदान कर उन्हें अपने संरक्षणमें ले लिया। थाङ-वंश के खतम होने पर खित्तनोंकी ताकत बढती गई। आगे हाथ बढानेसे पहिले उन्होंने घेई, सिव, सिरवी जैसे बहुतसे छोटे-छोटे कबीलोंको अपने अधीन कर लिया। घेई खित्तनोंके पश्चिममें रहते थे, अतएव तुर्क उनके समीप थे, इसीलिए उनके ऊपर तुर्कोंका ज्यादा प्रभाव था। घेइयोंको मूर्ख कहा जाता था, जो शब्द कि हूणोंमें आवारो (ज्वेन-ज्वेन) को छोडकर और किसीके लिये उपयुक्त नही होता था। घेई सुअर पालते थे, अपने मुर्दोंको पेडोंपर रखते थे, जो दोनों ही बातें तुगुसी जातियोंमें पाई जाती है। खित्तनोंके दबावके मारे घेई आधुनिक कलगन इलाकेमें जा शिकारी जीवन बिताने लगे।

यही घेई और खित्तन थे, जिनकी भूमिमें ११-१२ वीं सदी में मंगोलोंके पूर्वज रहते थे।

§२. खित्तन सम्राट्

यद्यपि खित्तेन-वंशका संस्थापक अपोकी था, किन्तु वास्तविक सम्राट् उसका पुत्र ताइचुङ हुआ। खित्तन-वंशावली निम्न प्रकार है—

१	अपोकी (अ० प ओ० की)	९०७-२६ ई०
२	ताइचुङ (तेकवाङ)	९२६-४७ ई०
३	शीचुङ (उरिन्क)	९४७-९५१ ई०
४	मूचुङ (जुर्रुत)	९५२-६८ ई०
५	चिङचुङ (मिङकी)	९६८-८३ ई०
६	शेङचुङ (लुङसू)	९८३-१०३१ ई०
७	शिङचुङ (शुङचैन, मूपूकू)	१०३१-५५ ई०
८	ताउचुङ (हुकी)	१०५५-११०१ ई०
९	त्यान-चू-ती (यन्ही)	११०१-२१ ई०
१०	तेचुङ	११२१-२५ ई०

(१) अपोकी (९०७-२६ ई०)

खित्तनोंने चीनसे स्वतंत्र हो आपसमें एकता स्थापित कर अपने मघका नाम स्याङ-लो-को मूली रखा, जिसका अर्थ है नदी (सिरामुरेन) का दोनों तीर। इनके आठ कबीले थे, जिनके अलग-अलग मुखिया हुआ करते थे। वही अपने ऊपर एक प्रधान (राष्ट्रपति) चुनते थे, जिसे एक नगाडा और झंडा राज्य-चिह्नके रूपमें दिया जाता था। पुराने सियन्-पी वंशमें भी यही प्रथा देखी जाती थी। यदि देशमें अकाल महामारी आती, या ढोरों और भेडोंको बहुत क्षति पहुंचती, तो मुख्य सरदार पदच्युत कर दिया जाता। खित्तन घुमन्तुओंकी मुख्य जीविका थी

अश्व-पालम। जब चीनियोंपे झगडा होता, तो खित्तनोंको मारनेके लिये वह चरागाहोंमें आग लगा देते। दसवी सदीके प्रारम्भमे, जबकि थाङवशका स्थान शादो तुक-वशने लिया, आठो खित्तन कबीलोका प्रधान अ-पओ-की था। राजनीतिक अशान्तिके कारण बहुतसे चीनी भागकर उसकी शरणमें गये थे। उसने उनके और अपने दूसरे वन्दियो के लिये नगर बनवाये। खित्तन स्वय आम घुमन्तुओकी तरह नागरिक जीवनको घृणाकी दृष्टिसे देखते थे। इन नगरोमें से एक आधुनिक दोलो-नोर (झील) के आस-पास था। अ-पओकी ने सुना, कि चीनी लोग निर्वाचन-प्रथाको वडी नीची निगाहसे देखते ह। वह नौ सालोंसे खित्तनोका सभापति था। उसपर अब राजा वननेकी धुन सवार हुई। उसने आठो कबीलो तथा प्रवासियो मे से भी कितने ही को लेकर अपना एक खास कबीला वनानेकी राय ली। फिर इस कबीलेको सभ्य चीनी रीति-रिवाज सिखलानेके लिये एक चतुर चीनीको नियुक्त किया। अपने नगरको भी उसने ठीक चीनी ढगपर वसाया। वहा बाजार थे, दूकानें थी और रहनेके घर थे। शहर वनानेके लिये ऐसा स्थान पसद किया, जहा बहुतसी कृषि-योग्य भूमि, लोहा और नमक पासमें था। उसने चीनी व्यापारियो और किसानोको इतना सुभीता दिया, कि उन्होने देश लौटनेका ख्याल छोड दिया। अपोओकी की स्त्रीने सलाह दी, कि अपने इलाकेसे जो नमक ले जायें, उनसे क्षति-पूर्ति मागो। यह विचार सबने पसन्द किया। एक वडा उत्सव मनाया गया, जिसमें सभी सरदार बुलाये गये। अपओकीने उनको वही मरवा दिया और निर्वाचनका नियम ताकपर रखकर स्वय स्थायी महाराज बन गया। अपओकी बहुत शक्तिशाली शासक और सेनापति था। पश्चात्-ल्याङ (चू) राजवश अब भी खित्तनोका अधिराज था। उसने उनसे पिंड छुडानेका निश्चय किया। कलकन, जेहोल और पेकिङके बीचके प्रदेशपर लूट-मार शुरू की, जो थाङ-वशके उत्तराधिकारी शादो तुर्कोंके हाथमें था। एक जगह उसके विरोधीने सफलता पाई, तो वह अपनी घुमन्तू सेना ले पेकिङ के पास तक पहुच गया।

पीछेकी ओर कितने ही छोटे-छोटे राज्य थे, जिनके आक्रमणका डर रहता था। इसके लिये पहिले वोत्सकाई कबीलेको खतम करना जरूरी था। इसके लिये उसने शादो तुर्क वशसे लल्लो-चप्पो लगाई। शादोके मरनेके वाद उसका पुत्र माउ-चि-लि (माउकिरे, मिङचुङ) ९२६ ई०में गद्दी पर वैठा। नये सम्राट्के गद्दी पर वैठनेकी सूचना देनेके लिये अपओकीके पास दूत भेजा गया। अपओकीने खबर सुन आकाशकी ओर ताकते रोते हुए जोरसे चिल्लाकर कहा—"अफसोस तुम्हारे पितामह सम्राट् और मैं दोनोने भाई वननेका निश्चय किया था। इसलिये होनान (राजधानी) सम्राट्का पिता मेरा पुत्र था। जब अशान्तिकी वात सुनी, तो मैं पचास हजार सेनाके साथ अपने वेटेकी मददके लिये कूच करनेको तैयार था। तब तक वोत्सकाईका खातमा करना वाकी था, इसलिए मैं अपनी हार्दिक इच्छाको पूरा नही कर सका। मेरा पुत्र (च्वाङ चुङ ९२३-२६ ई०) मर गया। मुझसे सलाह पूछे विना इसने कैसे अपनेको नया सम्राट् घोषित कर दिया?" इसपर दूतने जवाब दिया—"नया सम्राट् कुछ समयसे महासेनापति (फील्ड-मार्शल) के सैनिक पदपर आरूढ़ था। उसने पिछले वीस वर्षोंसे स्वय सेनाका सचालन किया है। उसकी कमानमें तीन लाख अभ्यस्त सैनिक है, इसलिए नभ (भगवान) और मनुष्य दोनोने ही उसे इस पदपर स्थापित करनेमें सहायता की। भला उसका विरोध कौन कर सकता है?"

अपओकी का पुत्र तूयरिक (तू-यू, ताइ-चुङ) दूतके पास खडा था, उसने उससे कहा—

"बहुत लम्बी बातें न करो। तुम उस कहावतको जानते होगे, अगर कोई गाय दूसरे के खेतमे चरने जाये, तो उसे पकडकर अपना माल बनाया जा सकता है।"

दूतने उत्तर दिया—"कैसे एक गुमनाम किसानके सबधकी कहावत का प्रयोग देवताओ द्वारा अभिषिक्त तथा मनुष्यो द्वारा स्वीकृत व्यक्ति पर लागू हो सकती है? उदाहरणार्थ जब तुम्हारे महान् पिताने निर्वाचनको उठाकर खित्तन-सिंहासनको अपने हाथमें कर लिया, तो कौन उन्हे अनुचित कृत्यका अपराधी बना सका?"

अपओकीने कुछ गरम होकर कहा—"मै जानता हूँ, कि मेरे पुत्रके पास महलमें दो हजार औरतें तथा एक हजार गायक-वादक आदि थे। वह अपना समय स्त्रियो और मदिरामे मस्त हो बकबकानेमें बिताता था। वह अयोग्य आदमियोको राजकाजमे लगाये हुए था, और किसी आदमीके दुःख-सुख पर ध्यान नही देता था। इसके कारण उसका पतन हुआ। जबसे उसके पतनकी खबर सुनी, तबसे मैंने और मेरे परिवारने पिअक्कडी छोड दी, अपने बाजो और शिकारी कुत्तोको मुक्त कर दिया। उन गायक-वादकोको छोड बाकी सभी हटा दिये, जिनकी कि सार्वजनिक भोजोमें आवश्यकता होती है। ऐसा न करता, तो मेरा भी परिणाम मेरे पुत्र जैसा होता। मैं चीनी बोल सकता हू, लेकिन मैं अपने लोगोंके सामने उसका एक शब्द भी मुहसे नही निकालता। इसीलिए कि वह चीनियोकी नकल करके डरपोक और कमजोर न बन जायें। अच्छा यही है कि तुम लौट जाओ, और सम्राट्से जाकर कहो, कि मैं दो हजार लोगोंके साथ पेकिङ और चेङतिङफूके बीच कहीपर उससे मिलूगा, और वही उसके साथ सधि करूगा। अगर वह मुझे पेकिङकी मैदानी भूमि दे देगा, तो मैं उसपर और आक्रमण नही करूगा।

अपओकीने बोतसकाईपर आक्रमण किया। उनकी राजधानी फूयूचिङ (कइयेवान) को ले उसका नाम "पूर्वी तान" रख पुत्रको वहाका राजा बना दिया। थोडे समय बाद ९२६ ई० में अपोकी मर गया। इसीके समय पुरानी सियान्पी प्रथा—लकडीके अक्षरो द्वारा सदेश भेजना छोड दिया गया। किसी चीनीने चीनी सकेत लिपि और चित्रलिपिको मिला-जुलाकर एक नई लिपि तैयार की। इसीमें उस समयके कुछ अभिलेख मिले ह, किन्तु अभी वह पढ़े नही गए। अपोकीका शासन-काल ९०७-९२६ ई० था, जबकि वह "दिव्य सम्राजीय राजा" बना था। उसका उर्दू सी-लू में तालिङ नदीपर चरवाही करता था, जो कि मगोलिया और मचूरियाके सीमान्त प्रदेश के भीतर था। वही उसने राजधानी मुजग बनवाई थी। पाचवें खित्तन सम्राट् मिङ्की (चिङ-चुङ ९६८-७६) ने तीन सौ मील और पूरब मुकदनके पास अपनी राजधानी (पूर्वी पेटिका) बनाई। उत्तरी पेटिका (राजधानी) पश्चिमी राजधानीसे सौ मील उत्तर थी। इसके अतिरिक्त एक दक्षिणी पेटिका भी थी, जो कि पश्चिमी राजधानीसे दक्षिण थी। खित्तन घुमन्तू थे। उनके सम्राटोको शिकारका बहुत शौक था, इसलिए उन्होने यह शिकारकी पेटिकाये (हिराकारगाहें) बनवाई थी। चारोही शिकारगाहोके फाटक और दरवाजे पूर्वकी ओर खुलते थे। खित्तन अपने सभी शुभ कामोको भारतीयोकी भाति पूर्वाभिमुख करते। महीनेकी हर प्रथम तिथिको पूर्वाभिमुख हो यात्रा या दूसरा काम करते। ऊपरी राजधानीमें बाकायदा नगर, बाजार, दूकानें थी। उन्होने अपना कोई सिक्का नही चलाया। सिक्केका काम रेशमके थान देते थे। उनके नगरोमें बहुतसे रेशमके कारखाने थे। खित्तन बौद्ध थे। उनके बडे-बडे मठ बने हुए थे, जिनमे भिक्षु-भिक्षुणिया रहते थे। इसके अतिरिक्त वहा

चीन राजधानीकी नकल करते हुए, वेश्याशालायें, आमोदगृह भी थे। नगरमें शिल्पो, मल्लो, विद्यार्थियो, अध्यापकोंके घरोके साथ साथ बहुत तरहके राजकीय कार्यालय थे।

(२) ताइ-चुङ् (९२६-९४७)

आपोकीने अपनेको बाकायदा सम्राट् घोषित नहीं किया था। उसके बाद पुत्र ताइचुङ (तेक्वाग) अपनी माके जोरपर पिताकी गद्दीपर बैठा और बड़ा भाई कुछ नही कर सका। खित्तन सरदार भी ताइ-चुङके साथ थे। इसने भी बापकी तरह लूट-पाट जारी रखी। शादो सम्राट् तेक्वाङने अपने दामादको सीमान्तका रक्षक बनाकर भेजा, लेकिन अपने ससुरके अयोग्य उत्तराधिकारियोंके समय विद्रोह करके वह खित्तनोका अनुयायी बन गया। खित्तन अपनी गाड़ियो और रिसालोके साथ येन्-मेन् (हसद्वार) डाडेसे आ गये। पश्चात्-थाङ्-वशीय (शादो, तुक) सेना बुरी तरहसे हारी। दामाद शीकिङ्-तान सम्राट् घोषित हुआ और खित्तनोको उनकी सहायताके बदले प्रदेश और बहुत सी चीजे भेंट की। माउकिरे (शादो सम्राट) ने अन्तिम प्रार्थनाकी थी—"मै एक गरीब सीधा-सादा तातार हू, जिसे स्थिर विचारवाली जनताने स्वीकार करके गद्दीपर बैठाया। मेरी केवल यही प्रायना है, कि जब तक दैव अपनी कृपासे मुझे जीवित रखे, तब तक अपने लोगोकी भलाईके लिए आप मेरा पथप्रदर्शन करें।"

इसी समय यन्-चिङ (आधुनिक पेकिङ) खित्तनोंके एक इलाके का शासन-केन्द्र बना। इस प्रकार पेकिङके वैभवका शिलारोप हुआ। अबसे ताइ-चुङने अपने वशका नाम ल्याओ (लौह) रक्खा।

खित्तन साम्राज्यके भीतरका महाप्रकारसे दक्षिणवाला चीन बारह सूबोमें बाटा गया था। इसके अतिरिक्त मचूरिया और उत्तरी तातार भूमि भी उनके हाथमें थी। खित्तन-वश आरम्भसे अन्त तक घुमन्तू रहा। ताइ-चुङने अपने साम्राज्यका सगठन चीनी ढग पर किया था और उसी रीतिके अनुसार वह शादो सम्राट्को बढ़िया मदिरा, जवाहिरात और मिठाइयोंके साथ प्रतिवर्ष तीन लाख थान रेशम भेजा करता था। लेकिन अब अधिराज और अधीनके स्थानपर पत्रोंमें "पिता-पुत्र" का प्रयोग किया जाता था। यह नही मालूम होता, शीनकिङ ताङ (काउचू ९३६-९४२) ने अपने जीवनके अन्त तक खित्तनोंके साथ हुई सधिका पालन किया। ९४३ ई० मे खित्तनोंने तीन सेनाओको भेजकर चीनपर आक्रमण किया, किन्तु युद्धका फल अनिश्चित रहा। अगले वसतमे उन्होने फिर आक्रमण किया और बहुतसे नगरो-ग्रामोको जलाया लूटा, पर चीनी सेनाने आकर उन्हें हरा दिया। ताइ-चुङ अपनी गाडी (रथ) छोड सफेद ऊटपर भागकर किसी तरह यन्चि पहुचा। उस साल उस प्रदेशमे सूखा, महामारी और टिड्डियोका प्रकोप था, इसलिये मजबूर होकर वह विजयी शादो-तुर्कोंके साथ सुलह करनेके लिये तैयार था, लेकिन बड़ी शर्तोंके कारण सुलह नही हो सकी। ताइ-चुङने सिरपर "सम्राजीय आज्ञामे जीव-दान" का गोदना गुदवाकर सभी बदियोको लौटा दिया। फिर वह पियान् (आधुनिक काइ-फेङ्-फू राजधानी) पर चढ़ दौड़ा। चीन-सम्राट् और राजमाताने क्षमा-प्रार्थना की। ताइ-चुङने जवाब दिया—"मेरे पोते, बहुत अफसोस मत करो, बस मेरे भोजनके लिये कोई स्थान दे दो।" उसके लिये सम्राजीय रथ भेजा गया, तो उसने उसका इस्तेमाल न करके जवाब दिया—"मैंने शरीरमें कवच लगा कर सारे चीनको जीतनेकी प्रतिज्ञा कर ली है, इसलिये मेरे पास महोत्सव या शिष्टाचारके लिये

उपयुक्त होनेवाले रथके इस्तेमाल करनेका समय नही है।" सम्राट् और सम्राट्की माता विजेता-का स्वागत करनेके लिये प्राकारसे बाहर आये। खित्तन विजेताने जवाब दिया—"कैसे सडकके ऊपर दो सम्राट् भेंट करेंगे।" दूसरे दिन ताइ-चुङ चिन राजधानीमे दाखिल हुआ। उसके सिरपर समूरी टोपी, शरीरपर कवच था, वह घोडेपर सवार था। चिन-वशके सारे अफसरोने विजेताके सामने दण्डवत्-प्रणाम किया। फाटकके भीतर घुसकर रक्षी मीनारके ऊपर चढ कर उसने दुभापियाको चीनी भापामे घोपित करनेको कहा—"मै केवल एक मनुप्य हू, तुम्हे डरनेकी कोई अवश्यकता नही। मै अपनी इच्छासे यहा नही आया। चीनी सेनाये मुझे यहा लाई।" फिर वह राजमहलमे गया। अन्त पुरकी सुन्दरिया स्वागतके लिये तैयार थी, किन्तु उसने उनकी ओर ताका भी नही। शामको शहरके बाहर एक पहाडीपर उसने रात बिताई। चिन-सम्राट्को "कृतघ्नियोका सरदार" की पदवी देकर उसे जेहोलके पास खित्तनोकी राजधानी, ह्लाङ-शुङफमें भेज दिया। राजधानीमे पहुचनेके सातवें दिन ताइचुङने महलमें रहना शुरू किया। अब सभी फाटकोपर खित्तन सैनिक पहरा देने लगे। अगले दिन उसने दरबार किया, किन्तु वहा चीनी सम्राटोका भेस न धारण कर अपने जातीय भेसमे आया। उसके अगले दिन दूसरा दरबार किया, जिसमें उसका सारा भेस चीनी था, किन्तु टोपी समूरी और बटन भी तातारो-की तरह बाई ओर थे। सारे चीनी अधिकारी पूरी दरबारी पोशाकमें थे। दरबार-हालके सामने घेड्योकी गाडिया ओर तातार (खित्तन) सवार पातीसे खडे थे। तीन सप्ताह बाद उसने एक और भारी दरबार किया। अब ताइचुङने चीनी सम्राटोका विशेप चिह्न नागमुकुट धारण किया, जिसके साथ शरीरपर भूरे रगका चोगा और हाथमें राजदण्ड था। उसने सभी अप-राधियोको एक ओरसे क्षमादान दिया। चीन-साम्राज्यका नाम महाल्याउ साम्राज्य हो गया। यह घोपणा ताइचुङके द्वितीय कालके दसवें वप अथवा उसके राज्यारोहणके बाईसवे वर्प (९४७ ई०) में हुई। दूसरे चान्द्रमासकी पहली तिथिको ताइचुङने "निश्चय ही मै सच्चा सम्राट् हू" कहते फिर एक बडा दरबार किया। इस दरबारमे उसने घोपित करके सभी प्रदेशो और नगरोके लिये दुभापियाके साथ एक-एक खित्तन राज्यपाल नियुक्त किये। खित्तन सेनाको रसदकी कमी हुई, इसपर ताइचुङने चारो तरफ सैनिक दल दौडाये, जिन्होने पूर्व और पश्चिममें एक हजार मीलके प्रदेशको लूट-पाटकर रसद जमा कर ली।

सेनापति ल्यू-ची-युवानने शान्सी प्रदेशमें प्राय सारे खित्तन सैनिक राज्यपालोको मार डाला। गरमीका मौसम सिरपर था। ताइचुङ अपने सालेको चिन-राजधानीका प्रबध सौंपकर चिन नौकरशाही, चतुर शिल्पियो, अन्त पुरकी स्त्रियो और कई हजार सैनिक अफसरोको लेकर चला। ह्वाङहो (पीत नदी) पार हो वह चाङते नगरमें पहुचा। उसने प्रदेशके लोगोकी भेटपर नजर दौडा कर एक चीनी अफसरसे कहा—"मुझे बडे शिकारोंको घेर कर शिकार करके मास खानेमें आनन्द आता है, किन्तु जबसे मै चीनमें दाखिल हुआ, तबसे मेरा उत्साह जाता रहा। यदि मै अपने पूर्वजोंके घरको एक बार और देख लू, तो मै बडे सतोषके साथ मरूगा।" ल्याउ-चाङ पहुचकर वह बीमार पडा और वही मर गया। खित्तन पेट चीरकर नमक डाल उसकी लाशको उत्तरकी ओर ले गये।

३. शीचुङ (९४७-९६२ ई०)

ताइचुङके मरनेके बाद उसका भतीजा तुर्युक-पुत्र वू-यू (उर्युक) गद्दीपर बैठा। यह बडा

क्रूर किन्तु जिन्दादिल आदमी था। शराब उसे बहुत पसद थी। वह एक अच्छा कलाकार, काफी सुपठित, सुशिक्षित आदमी था। वह बापके साथ चीन नही भागा था। खित्तनोने मौकिरेके दामादको सिंहासनपर बैठनेमे मदद की थी। उसी समय मौकिरेके उत्तराधिकारी तथा दत्तक पुत्रने तुर्युकको मार डाला। उर्युक् उस समय चचाके साथ चीनमें था। मृत्युके समय भी वह उसीके साथ था। चीनी सेनापतिके पास एक लाख सेना थी, किन्तु वह उससे कोई लाभ नही उठा सका। उर्युकने उसे पानगोष्ठीमें सम्मिलित होनेके लिये बुलाकर तालेमे वन्द कर दिया और ताइचुङकी इच्छाको घोषित किया—"तुम केन्द्रीय राजधानीमे साम्राजीय सिंहासनपर आरूढ हो सकते हो।" लेकिन दादीने ताइचुङके दूसरे पुत्रका पक्ष लिया। लडाई हुई। सेनाने साथ छोड दिया, इसलिये दादी हार गई। दादीने राज्यके उत्तरी भागके एक ऐसे स्थानको मागा, जहापर कि अपोकीकी समाधि, उसके विशेष स्मृति-चिह्न रक्खे हुए थे। यह स्थान सिरामुरेन (सिरा नदी) के ऊपरी भाग (आजकलके बारिन मगोल इलाके) में था। यही दादीको समाधिस्थ कर दिया गया। पाच साल राज करनेके बाद (९५२ ई० में) अपनी अवश्यकताओंकी पूर्त्तिके लिए उसने सेनाको लूट-मार करनेका हुकुम दिया। जब सेना नही तयार हुई, तो उसके साथ जबरदस्ती करना चाहा, जिससे विद्रोह हो गया, त्-यू मारा गया, और एक खूनके लिये कई खून किये गए।

४. मूचुङ् (९५१-९६८ ई०)

अब ताइचुङका पुत्र शूलू (जुर्रत) खित्तनोका सम्राट् बनाया गया। इसका नाम अपने दादा ही का मूचुङ था। राज-काजमें दिलचस्पी नही रखते। वह बडा शराबी और सभवत नपुसक था। सारी रात शराब पीता और सारे दिन सोया करता, जिसके कारण इसका नाम "सोनेवाला राजा" पड गया। ९५९ ई० में चाउ वशके द्वितीय राजाने खित्तनोपर आक्रमण करके उनके कई नगर छीन लिये। मूचुङने खबर सुनकर जबाब दिया—"क्या परवाह है, यदि कुछ नगर वह लौटा ल।" ९६० ई० मे शुङ-वश (९६०-१२७९ ई०) की स्थापना हुई, लेकिन वह तातारों (खित्तनो) के साथ झगडा मोल नही लेना चाहते थे। उन्होंने जबदस्ती छीने हुए घोडोको खित्तनोंके पास लौटा दिया और सीमान्तके लोगो पर लूट-मार करनेकी मनाही कर दी। पर तो भी खित्तन कई सालो तक लूट-मार करते रहे। इसपर शुङ सम्राट् ताइचू (९६०-७६ ई०) ने स्वय खित्तनोंके खिलाफ सेना-सचालन किया। ९६९ में मूचुङ मार डाला गया और उसके स्थान पर शीचुङ (उर्युक) का पुत्र गद्दीपर बैठा।

५ चिङ्चुङ् (मिंग्ची) (९६८-८३ ई०)

अब से सारे खित्तन-सम्राटोंके नाम चीनी होने लगे। चिङ-चुङ ने अपने वशका नाम महाखित्तन रखा। ९७० ई० में साठ हजार खित्तनोंने पाउ-चाउ (पाउतिङफू, पीछे प्रान्तीय राजधानी ची-ली) पर आक्रमण किया। लेकिन चीनी सेना ने उन्हे बुरी तरहसे हराया। शुङ सम्राट्ने प्रत्येक खित्तन सिरके लिये चौबीस थान रेशम इनाम देनेकी घोषणा की। उसने समझा, खित्तनोकी सारी सेना खरीदनेके लिये बीस लाख थान काफी होंगे।

९७५ के बाद दोनो राज्योंके सबधमें कुछ नरमी आई। बहुतसे दूत-मडल और राज

धानीमे रहनेके लिये एक राजदूत भेजा गया। खित्तन भी अब बड़ी तेजीसे चीनी संस्कृतिमें दीक्षित होते जा रहे थे। ९७६ ई० में शुङ सम्राट् ताइ-चूके मरनेपर संवेदना प्रकट करनेके लिये खित्तनोंने एक विशेष दूत-मंडल भेजा। ९७८ मे फिर लड़ाई छिड़ गई। नये शुङ सम्राट् ताइ-चुङ (९७६-९७ ई०) ने थोड़े दिनोंके लिये खित्तनोंके प्राचीन नगर या-भिङ (पेकिङ) पर अधिकार कर लिया। लड़ाईमें दस हजार खित्तन मारे गये। पीढ़ियोंसे युद्ध-क्षेत्र बने रहनेके कारण यह प्रदेश इतना बरबाद हो गया था, कि शुङ सेनाको उसे छोड़ जाना पड़ा।

६ शेङ्-चुङ् (९८३-१०३१)

चिङ्वुङकी मृत्यु (९८३ ई०) तक लूट-पाट जारी रही। उसके मरनेपर उसका १२सालका पुत्र लुङ्सू शेङ्चुङके नामसे गद्दीपर बैठा और उसकी मा अभिभाविका बनी। शुङ-वंशके साथ लड़ाई और लूट-पाट अब भी जारी रही। ९८४ ई० के अभिलेखोंसे पता लगता है, कि अभिभाविका राजमाता अपने एक चीनी सेनापति ह्वान-तेजङसे फँसी हुई थी। ९८६ में एक भारी चीनी सेनाने आक्रमण किया, लेकिन उसे सफलता नही मिली। ९८७ ई० की लड़ाईमें भी खित्तनोंने सभी चीनी सेनापतियोंको हराया। ९८९ मे शुङ सम्राट्को युद्ध-घोषणा निकालते हुए और भी सेना भेजनी पड़ी। उस समय ओर्दुस प्रदेशमें तिब्बती कबीलोंका जोर था। खित्तन घुमन्तुओंने ९९५ ई०में इन तिब्बतियों(तगुतों)को अपनी ओर कर लिया, लेकिन जब खित्तनोंको भागते देखा, तो उन्होंने भी भीषण प्रहार किया। बहुतसे खित्तन तबू (परिवार) ह्वाङ्हो नदीके दूसरे पार चीन की ओर चले गये और शुङ वंशको कम से कम दस हजार मजबूत सवारोंकी साहयक सेना मिल गई। ९९९ ई० में तृतीय शुङ सम्राट् (चेनचुङ ९९७-१२२ ई०) ने स्वयं सेनाका संचालन करते खित्तनोंपर आक्रमण किया। खित्तनोंको लगातार पाच साल तक हानि पर हानि उठानी पड़ी। १०३० ई० में खित्तनोंका एक चीनी अफसर शुङकी ओर चला गया, जिससे उसे बहुतसे सैनिक भेद मालूम हुए—पेकिङमें १८ हजार चीनी रिसाला है, गी-शी कबीला और कुछ सरदार महा-दीवारके उत्तरमें रहते हैं। इनके अतिरिक्त एक लाख अस्सी हजार सवार-सेना और है, जिनमें पाच हजार शरीर-रक्षक सैनिक हैं। लूट-पाटके लिये ५४ हजार सैनिक हैं। लगातार आक्रमणसे परेशान होकर खित्तन राजा और राजमाताने सारी सेना लेकर शुङ सेनापर आक्रमण कर दिया। आधुनिक होक्यानफूमें भारी लड़ाई हुई। खित्तनोंने इस लड़ाईमें एक प्रकारका तोपखाना इस्ते-माल किया—शायद इतिहासमें यह पहिला तोपखाना था, जिससे धनुष बाणके सिद्धान्तपर बड़े-बड़े पत्थर और लकड़ीके कुन्दे फेंके गये। यहा वह असफल रहे, किन्तु शाङ्चाउ (तामिङ्फूके पास कैं-चाउ)में वह शुङ सेनाको करीब करीब घेर लेनेमें सफल हुए, किन्तु उसी समय उनका सेनापति सिरमें बाण लगनेसे घायल होगया और शिविरमें लौटकर उसी रात मर गया। खित्तन पीछे लौटे। दोनों राज्योंमें सुलह हुई। चीनकी अधिकृत भूमिके बदलेमे खित्तनोंको सालाना दो लाख थान रेशम और एक लाख औंस (७८ मन) चादी भेंट मिलने लगी। इसके अतिरिक्त कुछ रेशम और चादी अभिभाविका रानीको भी मिला। १०१० ई० में राजमाता मर गई और थोड़े ही समय बाद उसका जार चीनी महामंत्री भी मर गया। १०२२ में चेङ्चुङके मरनेपर शिङ्चुङ नया शुङ सम्राट् बना। इसके बाद खित्तनोंसे कोई बड़ा झगड़ा नही हुआ और १०३१ मे शेङ्चुङ भी मर गया।

७. शिङ्-चुङ् (मुयुकु १०३१-१०५५)

अब उसका बेटा गद्दीपर बैठा। इसके समय भी राजशासन अन्तःपुरकी रखेलियोंके हाथमें रहा। ओर्दुसमें तगुतो (अमदो-तिब्बतियो) का राज्य काफी प्रबल हो उठा था, जिनकी राजधानी हिया थी। १०२८ ई० मे तगुत्-राजाने उइगुरोंके नगर खाङ्चाङ्को दखल कर लिया। शुङ्-सम्राट् ने भी तगुतोंके चीनपर पडते दबावको देखकर अपने हाथसे गये नगरोंको लौटाना चाहा। शुङ् राजदूतके कहनेका उत्तर देते हुए खित्तन-राजाने कहा—"हमारे लोग युद्ध करनेके लिये बेकरार है, किन्तु क्षतिपूर्त्तिके रूपमे यदि चीनी प्रदेश मिल जाय, तो मै सतुष्ट हो जाऊगा।" फिर समझाते हुए कहा—"हमने हसद्वार (जोत) को इसीलिये बन्द कर दिया है, कि तगुत लोग न आ सके। खित्तन सीमान्तपरके जलाशयको बद करना तो ९९७ से ऐसा ही चला आ रहा है। हमारी किलाबन्दियोंको मजबूत करनेके लिये जो सिपाही भेजे गये है, वह केवल टूटी-फूटी चीजोंकी आवश्यक मरम्मतके लिये ही। हमने सधि-नियमके विरुद्ध कोई बात नही की।" यद्यपि छिन्-वशके सस्थापक शादोने कुछ इलाके खित्तनोको रिश्वतमें दिये, लेकिन उत्तर-चाउ-वशके द्वितीय सम्राट्ने उसके कुछ भागको माग लिया। यह दोनो घटनायें शुङ् राजवशकी स्थापनाके पहिले की है। दूतने कहा—"यदि चाउ-वशके विधानको तुम तोड देना चाहते हो, तो हम भी छिन-वशके विधानको तोड देंगे, जिससे शुङ्-वशको ही लाभ होगा। सम्राट्ने मुझे यह कहनेके लिये भी आदेश दिया है, कि उनकी रायमें तुम्हारी इच्छा जो इलाका लेनेकी है, उसके भीतर उस भूमिसे लाभ उठानेका भाव ही काम कर रहा है, किंतु यह केवल लाभ का ही प्रश्न नही है, बल्कि इसमें बहुतसे मूल्यवान् जीवनोंके बलिदान की भी बात है। इसीलिए सम्राट् आपके पास भेजी जानेवाली भेंटमें उतना मूल्य और बढ़ानेके लिये तैयार है, जोकि विवादग्रस्त भूमिसे मिलता। यदि खित्तन उस भूमिको ही लेना चाहते है, तो उसका अर्थ यही है, कि वह १००५ ई० के सधि-पत्रको तोड फेंकनेके लिये उतारू है। यदि युद्ध करना ही अभिप्रेत है, तो परमभट्टारक उसे कबूल करनेसे इन्कार नही करते।" शिङ्चुङ्पर दूतकी इस बातका प्रभाव पडा। उसने ब्याहके लिये राजकन्या मागी, तो दूतने कहा—"विवाह-सबधके कारण जल्दी झगडा उत्पन्न हो जाता है। वह उतना स्थायी नही है, जितनी कि भेट। प्रथम श्रेणीकी राज-कुमारीके लिये एक लाख औंस (७८ मन) चादी दहेजमें देते है, जोकि आपको मिलनेवाली वार्षिक भेंट से कही कम है।" इसपर खित्तन राजाने कहा—"अच्छी बात है, तुम जाओ, जब दूसरी बार आओगे, तो मै बतलाऊगा कि भेंट ओर राजकन्यामें मुझे किसको लेना है, लेकिन अबके पूरे अधिकारके साथ आना।"

चीनी दूत दुबारा आया। उस समय दो लाखकी जगह तीन लाख थान रेशम और एक लाख की जगह दो लाख औंस (१५६ मन) चादी वार्षिक भेंट देना तै हुआ। इसके साथ यह भी निश्चय हुआ—(१) चीन पा-चाङ् सीमाके बाधको तोडकर प्रवाहित नही करेगा, (२) सीमान्तपर और सेना नही बढ़ायेगा, (३) खित्तन भगेलुओंको शरण नही देगा।"

इसके बाद १०४४ ई० में खित्तनोंने चीनको सूचना देकर भगेलुओंको शरण देनेके दोष पर तगुतोंके विरुद्ध युद्ध घोषित कर दिया। खित्तन विजयी हुए। तबसे चीनी अभिलेखोंमें "उत्तरी महाराज्य" की जगह "महाखित्तन" और दक्षिणी महाराज्य की जगह "महाशुङ्" लिखा जाने

लगा। १०५४ ई० में दोनो देशो मे पचास साल तक बनी रही शान्ति के उपलक्ष मे शिङ्चुङ ने अपना चित्र भेजकर जङ्चेङ्से उसका चित्र मगवाया। उससे अगले साल २५ साल के शासन के बाद शिङ्चुङ मर गया और उसके स्थानपर उसका पुत्र गद्दी पर बैठा। यह बौद्धधम का बडा पक्षपाती था, इसने कितने ही ऊचे सरकारी पदो पर बौद्ध भिक्षु नियुक्त किये थे।

८　ताउ-चुङ् (१०५५-११०१ ई०)

आगे शुङ और खित्तन सम्राटो में अधिकतर मैत्रीपूण सबध रहा। दोनो ने एक दूसरे का चित्र मगवाया। तो भी खित्तन घुमन्तू सीमान्त पर छोटी-मोटी लूट-पाट करने से अपने को रोक नही सकते थे। चीन ने युद्ध को खर्चीली चीज समझकर सब कुछ बर्दाश्त किया।

रीति-रवाज—खित्तन फरवरी-मार्च के मास मे चालीस दिन शिकार मे बिताते थे, फिर तारू नदी में बरफ मे छेद करके मछली मारते। उसके बाद तलही चिडियो का शिकार करते। गरमियो मे वह तान्-शान् (कोयला गिरि) अथवा ऊपरी राजधानी म चले जाते, शरद में पहाड में हरिन का शिकार करने जाते। खित्तनो के दो कबीले सबसे कुलीन समझे जाते थे—(१) स्याउ, राजकीय घेई वश के प्रतिनिधि, (२) युयेरुत (यूयेलुइ) अर्थात् खित्तन राजवश।

शासन-विभाग—अपोकी से पहिले खित्तनो मे जनतान्त्रिक गणराज्य-व्यवस्था थी। अपोकी ने उसे उठाकर राजतत्र स्थापित किया। राज-सचालन के लिये एक राजसभा होती थी। कार्यकारिणी सभा और केन्द्रीय कर्मचारी वर्ग को दक्षिण पक्षी कहते थे, क्योकि वह राजमहल के दक्षिण ओर रहते थे।

तेगिन—राजवशी कुमार
इलीपिर—सहायक-मत्री।
लिन्या—अध्यापक या आचाय।
इलिगिन्—प्रान्तीय राज्यपाल की उपाधि।

खित्तनो के अपने चार कबीलो—घेई, शिखी, नूचेन और बोत्सकाई—के लिये एक खास विभाग और उसके अधिकारी होते थे। उनके सभी पन्द्रह से पचीस साल की उम्र के पुरुप सैनिक सेवा करने के लिये बाध्य थे। युद्ध के लिये जब खित्तन प्रस्थान करते, तो एक धूमिल रग के बैल और एक सफेद घोडे की बलि देते। सफेद घोडे की बलि हूण और पीछे के मगोल भी देते थे। यह बलिदान आकाश (देव), पृथिवी, सूर्य तथा कात्-सिन् (भूमि) के पैतृक पहाडो के देवताओ के लिये दी जाती थी। राजा के मरने पर उसकी सोने की मूर्ति एक अलग तबू में रखी जाती और उसके निमित्त प्रतिमास प्रतिपदा और अमावस्या को खाद्य और मदिरा से श्राद्ध किया जाता था।

सैनिक व्यवस्था—राजाओ के प्रत्येक समाधि-मदिर के पास अपने सैनिक और घोडे होते थे। हरेक सैनिक को अपने खर्चे से जीन, अश्वकवच (लोहे या चमडे का) और दूसरे सामान, चार सौ तीरोके साथ चार धनुप, छोटे और बडे दो भाले, एक कुठार, एक हथौडा, एक छोटा झडा, लोहा चकमक पत्थर, जल-पात्र, राशन का थैला, बशी, नमदे का टुकडा, छाता, दो सौ फुट रस्सी, एक थैला भुना दाना, साथ लाना पडता था। खित्तन नवम्बर में दक्षिण की ओर लूट मार के लिये आते और फरवरी में लौट आते। लूट के लिये वह गावमें बिखर जाते और लूटने

से ही सतोष न कर तूतके पेडो और मेवे के बागो को काट डालते, घरो में आग लगा देते। स्त्रियो, बच्चो, बूढ़ो, और निरीह आदमियो को भी पकड ले जाते। जिस स्थान से चीजे नही ले जा पाते, वहा के लोगो को कहते कि, हम जल्दी ही फिर आ रहे है। छोटी-छोटी टुकडियो में होकर वह नगर-द्वार पर आक्रमण करते। घाट या सँकरे रास्ते में पहुचने पर तुरन्त रक्षा के लिये पहरे-दार नियुक्त कर देते। नगर को घेरते समय वह अपने वदियो को आगे करके खाइयो में मिट्टी डलवाते, लकडिया कटवा कर लगवाते और उन्ही के पीछे पीछे नगर की ओर वढते। खित्तना के विरोधी चीनिया की सेना मुख्यत पैदल सेना थी, जिसे अपने कवच और रसद के बोझ को लेकर चलना पडता था। यदि इन चीजा को साथ न रखते, तो अपने शरीर की रक्षा और भूख की मुश्किल होती। सब चीजो को लेकर चलने पर चीनी सैनिक जल्दी थक जाते।

१०६७ ई० में खित्तनो ने अपने वश का नाम "महाल्याउ" रखा। शुङ-सम्राट शेङ-चुङ जब १०६७ ई० मे गद्दी पर बैठा, तो अभिषेकोत्सव में खित्तनो ने मित्रता प्रकट करने के लिये एक दूत-मडल भेजा। साथ ही उन्होने चो-चाउ और यी-चाउ के नगरो पर किले-बन्दी को और मजबूत किया, वहा बहुत सी रसद और हथियार को भी जमा किया, सीमान्त पर सेनायें ज्यादा कर दी। इसके बाद सीमान्त नदियों को जबदस्ती पार करने की बात लेकर झगडा कर दिया। असल म वह लडाई करने का बहाना ढूढ़ रहे थे। १०७४ ई० में बहुत सी शिकायतों की एक सूची लेकर खित्तन-दूत शुङ-राजधानी में गया और कुछ किलेवदियो के तोड देने तथा सीमान्त मे कुछ परिवतन करने की माग की। थोडी आवाजाही के बाद शुङ-दरबार ने महादीवार की दक्षिणी पाती मे दो सौ मील तक उनकी सीमा को मान लिया। इसी समय खित्तन राज-परिवार में झगडा हो गया। मा-बेटे की ईर्ष्या से युवराज और उसकी मा ने अपने प्राण खोये। इसपर पौत्र येन्-ही युवराज हुआ। ४७ वर्ष राज करने के बाद ११०१ ई० म ताउ-चुङ मरा।

९ ताउचूङ-ति (येन्‌ही ११०१-२१)

इसके गद्दी पर बैठने के एक साल पहिले शुङ-सम्राट चुङ मरा था। चीन उस समय ह्विया (तगूतो) के साथ लड रहा था। ताउ चुङ ने शुङ दरबार में अपना दूत-मडल भेजा। इस समय ल्हासा (तिब्वत) का साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो गया था। खित्तनो ने मध्यस्थ बनने के लिये दूत-मडल भेजा था। और शुङ मत्री ने मदद मागने के लिए इससे पहिले खित्तना के दरबार मे दूत-मडल भेजा था। किन्तु, उस समय कुछ नही हो सका। चार साल बाद फिर मध्यस्थता करने के लिये दूत-मडल भेजा गया। ताउचुङ-ति बडा ही क्रोधी और लोभी था। उसके सारे सरदार उससे असतुष्ट थे। वह शरद मे हरिन का शिकार करने गया था, जबकि नूचेनो के सरदार आकूता ने विद्रोह कर दिया और मिङ्च्यान (आधुनिक निंगूता, किरिन प्रदेश) के इलाके और नगरा पर अधिकार कर लिया। उसके विरुद्ध भेजी गई वोत्सि-क्काई सेना हार गई। वोत्सिक्काई कबीले का ही एक अग नूचेन थे, यद्यपि वह उतने सभ्य नही थे। १११४ में और बडी सेना भेजी गई, उसके भी हारने के बाद १११५ ई० मे ताउचूङ स्वय मैदान मे उतरा, किन्तु आकूता ने उसे हर लडाई मे पछाडा। नूचेन सरदार ने खित्तनो के ल्याउ (लौह) के मुकाबिले में अपने वश का नाम किन (सुवण) रखा और किन् सम्राट की पदवी धारण की।

वोस्तिकाई सेना ने भी विद्रोह करके खित्तन युवराज को मार डाला और अपने सेनापति काउ-युङचाङ को वोत्सिकाई सम्राट् घोषित किया। इसके हाथ मे आज-कल की प्राय सारी ल्याउ-तुङ उपत्यका थी, केवल मुकदन को वह नही ले पाया। एक चीनी सेनापति ने बीस हजार सेना ले जाकर उसे हराकर मारा।

१११८ ई० में खित्तन भूमि मे सूखा पडा हुआ था। लोग वस्तुत एक दूसरे को खा रहे थे। ताउ-चू ने किन्-चाउ-फू के उपराज अपने चचा को प्रधानसेनापति बनाया, क्योंकि उसके ही प्रभाव से मुकदन बच पाया था। नूचेनो ने उसे हरा दिया और बढ़कर तालिङ् नदी पर चिनचाउ, शियान-चाउ आदि नगरो को ले लिया। ताउ-चू इस समय अपनी मध्य राजधानी (जेहोल प्रदेश) में था। खबर सुनकर वह चुपचाप जवाहिरात से पाच सौ थैले भरवा दो हजार सर्वोत्तम घोडो को भी तैयार करके भागने की सोचने लगा। किन लोग अपने थके घोडो और आदमियो को विश्राम देने के लिये ठहर गये थे। वह सारे ल्याउ-तुङ उपत्यका को जीत चुके थे। उन्होने खित्तन सम्राट् के पास दस मागें भेजी थी, जिनमें एक थी—किन् सरदार को सम्राट् स्वीकृत करना। उस परिस्थिति में खित्तनो ने इसे पसन्द किया और एक खास दूत-मडल द्वारा रथ, मुकुट और दूसरे राज्योपकरण भेट के रूप में आकूता के पास भेजे। लेकिन वह इतनेसे सतुष्ट नही हुआ। उसने खित्तन दूतो को सौ सौ कोडे मरवाकर लौटा दिया। ११२० ई० मे आकूता ने ऊपरी राजधानी ले ली और खित्तन सम्राटो की सारी कब्रो को नष्ट करा दिया। यहा से वह पूर्वोत्तर में केन्द्रीय राजधानी को गया। इधर ताउचू के परिवार मे उसके चारो पुत्रो में झगडा हो गया। अब किन सेना का कौन मुकाबिला करता? ११२१ ई० मे मध्य-राजधानी भी हाथ से निकल गई। ताउचू वहा से य्वेन्-याङ की ओर भागा। यहा उसके अत्यत जनप्रिय तथा सम्मानित द्वितीय पुत्र को इसलिये आत्महत्या करने के लिये मजबूर होना पडा, कि वह ताउचू के छोटे पुत्र को राजा होने में बाधा न डाल सके। छोटे भाई की मौसी ताउचू के मत्री को व्याही थी। यह दिखाया गया था, कि यह काम दो प्रतिद्वन्द्वी चचाओ के मनोरथ को विफल करने के लिये किया गया था। तरुण राजकुमार ने इस आत्मत्याग को ज़रा भी ननुनचके किया था। उसके इस त्याग का लोगो पर भारी प्रभाव भी पडा। लोग ताउचू के बिलकुल विरुद्ध हो गये। ताउचू वहा से जान बचाकर तातुङ-फू भागा। जहा पहुँचते पहुँचते उसके पाच हजार अनुयायी उसे छोडकर अलग हो गये, लेकिन बडा पुत्र अपने तीन सौ सवारो के साथ उसके साथ रहा। तातुङके गवर्नर को दुश्मन से मुकाबिला करने का आदेश दे फिर वह तेंदुस् पहुचा। लोगोका भाव बिगडा होने के कारण वह वहा से भी आगे भागा, लेकिन अभी तीन मील भी नही जाने पाया था कि नौकरो ने ही ताउचू को मार डाला। तातुङ के गवर्नर ने अपना नगर (नूचेनो) किनो को दे दिया।

१० ते-चुङ् (११२१-)

ताउ-चू के मरने के बाद तेचुङ ने राज्य सभाला। ताउ-चू ने इसे ही पेकिङ का अधिकारी बनाया था। किनोकी शुङ दरबार से भी बातचीत चल रही थी। शुङ दरबार ने पूर्ववत् भेट देना स्वीकार किया। अधीनता के बारे में आकूता ने माग की—"तुम मुझे अपने बराबर मानो।" शुङ वश को उसकी बात मानने में ही कुशल मालूम हुआ। शुङ-सम्राट ने

अपने हाथ से चिट्ठी लिखते समय उसे "परमभट्टारक महाकिन्-सम्राट्" सबोधित किया, और पहिले की त्यान्-चिन् और पेकिङ्ग की माग को भी छोड दिया।

ये-लू-ताउचू (दैशी) गोवी रेगिस्तान पार कर गया था, जबकि आकूता मर गया और उसकी जगह उसका भाई वू-ची-वाई (गू-की-माई) गद्दी पर वैठा। कुछ समय के लिये नूचेन् शान्सी प्रदेश छोड गये। येलू की कुमक के अतिरिक्त तीस हजार और सवार ताउ चू के पास थे। उसने फिर लडाई करने की कोशिश की, मगर येलू ने उसे वेकार समझकर साथ नही दिया।

येलू ने चचा को गद्दी पर वैठाकर शुङ्ग दरवार मे दूत भेजा, किंतु सम्राट् ने यह कहकर मिलने से इन्कार कर दिया, कि अभी वैध सम्राट् जिन्दा है, इसलिये हम खित्तनों का दूसरा सम्राट् नही मान सकते। जिन लोगो ने चचा को गद्दी पर वैठाया था, वह भी अधिकार के लिये मोल-भाव कर रहे थे। किन्-विजेताओ और शुङ्ग का भी भय था। मोल-भाव करते समय शुङ्ग के भेजे एक दूत को चचा सम्राट् ने मरवा डाला और येलू दैशी को चो-चाऊ लेने के लिये भेज दिया। येलू ने वहा की चीनी सेना को ह्वाङ्ग-चाउ तक भगा दिया, लेकिन थोडे ही समय वाद चचा मर गया। उसका स्थान उसकी विधवा नें लिया, किन्तु असली ताकत सेनापति स्याउ-कान के हाथ में थी। नान-काउ जोत अव किनो के हाथ मे थी, इसलिये पेकिङ्ग खतरे मे हो गया था। विधवा रानी का लिये येलू खित्तन सेना के साथ भाग कर तेंदुस् में सम्राट् ताउ-चू के पास गया। ताउ-चू ने विधवा चाची को मरवा डाला और चचा को गद्दी पर वैठाने के लिये ये-लू को भला-बुरा कह कर छोड दिया। आकूता ने सुना, कि भगोडा सम्राट् तेंदुस में शक्ति सचित कर रहा है। उसने शाम से काम लेते हुये एक तातार भिक्षु को भेजकर ताउ-चू को राजधानी मे बुलाया और भाई वना उसे और दूसरे खित्तन राजकुमारो को महल देकर अच्छी तरह रखने का वादा किया। लेकिन ताउ-चूने उसपर विश्वास नही किया,और आक्रमण करके शानसी के (तेंदुक से दक्षिण) एक नगर को ले लिया। इसपर एक किन् सेनापति ने धावा वोलकर सारे राजपरिवार को पकड लिया। ताउ-चू ने हिया (तगुत्) में शरण लेनी चाही, मगर तगुत आफत मोल लेने के लिये तयार नही थे। वहा से वह एक गुमनाम से दूसरे तिव्वती कवीले में जाकर छिपा। ११२५ ई० के आरम्भ में अव भी उसके पास एक हजार सवार थे। किनो को पता लग गया था। उन्होने यकायक हमला कर दिया। ताउ-चू ने जान वचाने के लिये अपने खजाने और दूसरी वहुमूल्य वस्तुओ को रास्ते में वखेरना शुरू किया। इन वहुमूल्य वस्तुओ मे छ फुट लम्वी सोने की एक वुद्ध-मूर्त्ति भी थी। लेकिन, किन् सेना पीछा करने से रुकी नही, और अन्तमें ताउ-चू के पास पहुच गई। किन् सेनापतिने वन्दी सम्राट् के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए घोडे से उतरकर शरावका प्याला उसके सामने किया, फिर उसे वडे आदर से ले गये। किनो ने उसे 'तटवर्ती राजकुमार' की उपाधि देकर आधुनिक व्लादिवोस्तोक के नजदीक चाङ्ग-पाइ पर्वत के पूर्व म नजरवन्द कर दिया।

किनो ने शुङ्ग वश के विश्वासघात से नाराज होकर ह्वाङ्ग-हो नदी के उत्तर के सारे चीन का मागा। तगूतो ने भी शक्ति को देखकर उसकी अधीनता स्वीकार की। शुङ्ग की ओर से अनुकूल उत्तर न आने पर ११२६ ई० म किन सेनापति न्योली-तो (वारिव) ने छोटी छोटी नावो से ह्वाङ्ग-हो (पीत नदी) को पार किया। शुङ्ग सेना अधिक प्रतिरोध नही कर सकी और विना वहुत लडे-भिडे किनोने आधुनिक काङ्-शङ्गफू को ले लिया। विजेता ने पचास लाख औंस (पच्चीस

लाख छटाक) सोना, एक करोड औंस चादी, दस लाख थान रेशम और दस हजार ढोर मागे। शुङ सम्राट् ने जल्दी जल्दी जमा करके दो लाख औंस सोना चालीस लाख औंस चादी की पहिली किस्त दे दी, बाकी को किस्तो में देने का वादा किया। पर इस से जान नही बची। किनो ने फिर शुङो के ऊपर आक्रमण कर कई लडाइयो में शुङ सेना को परास्त किया। इन्ही लडाइयो मे कुछ सैनिक यत्र इस्तेमाल किये गये थे, जिन्हें पीछे चिंगिस ने भी इस्तेमाल किया। राजधानी ले लेने पर शुङ सम्राट् (हुइ-चुङ ११००-२६ ई०)ने अपने को किन् सेनापति चन-मूहो (जे-मू-गुर) के हाथ मे अर्पण कर दिया। शुङ राज्य को पूर्णतया दखल करने की जगह विजेता ने यही पसन्द किया, कि अधिक से अधिक हरजाना लिया जाय। उनकी माग थी— एक करोड औंस सोना, दो करोड नाल[1] चादी और एक करोड थान रेशम। शुङ सम्राट् ने सिंहासन छोड दिया। उसकी रानी और बहुत सी अन्त पुरिकाओ, तथा दूसरे तीन हजार के करीब परिचारको को किन् तातार-भूमि ले गये। शुङ-वंश के बहुत से अधिकारी याङ-ची नदी के दक्षिण भाग गये। किनो ने शानसी, शानतुङ, चि-ली तथा होनान के प्रदेश अपने राज्य में शामिल कर लिये।

खितन साम्राज्य खतम हो गया, लेकिन उसके एक राजकुमार येलू दैशी ने उभय-मध्य-एसिया में एक विशाल साम्राज्य कायम किया, जिसे इतिहास कराखिताई (काला खित्तन) के नाम से जानता है।

३ कराखिताई (११२५-१२१८ ई०)

कराखिताइयो की वशावली

१ येलू दैशी	११२५- ४३
२ (पुत्री)	११४३
३ येलयु इले (रानी)	११४३
४ चे-लू-गू	— ११८२
५ गुरखान	— १२१०
६ कुचुलुक	१२१०-१२१८

१ येलू दैशी ११२५-४३ ई०

खित्तन सम्राट ताउ-चूने राजकुमार येलू दैशी को चचा को गद्दी पर बैठाने के लिये फटकारा था। हाथ से चले गये राज्य के लिये फिर आक्रमण करने की योजना में येलू ने साथ देते कहा—सारी सेना रहने पर जब हम सफल नही हो पाये, तो अब सफलता की क्या आशा सकती है? वह अपने दो सौ आदमियो के साथ रात को निकल भाग कर पाई-ताता (श्वेत तातार) की भूमि में चला गया। पुराने संबध के कारण श्वेत तातारो ने उसकी मदद की। वहा से वह उरुम्ची की ओर बढ़ा। इतिहासकार जुवैनी के अनुसार कराखिताई येलू के नेतृत्व में किरगिजो की भूमि से होकर एमिल पहुचे। वहा उन्होने एक नगर बसाया, जो कि पीछे चिंगिस

[1] १ नाल = ५ औंस = २।। छटाक।

अपने हाथ से चिट्ठी लिखते समय उसे "परमभट्टारक महाकिन्-सम्राट्" संबोधित किया, और पहिले की त्यान्-चिन् और पेकिङ्ग की माग को भी छोड दिया।

ये-लू-ताउचू (दैशी) गोबी रेगिस्तान पार कर गया था, जबकि आकूता मर गया और उसकी जगह उसका भाई वू-ची-वाई (गू-की-माई) गद्दी पर बैठा। कुछ समय के लिये नूचेन् शान्सी प्रदेश छोड गये। येलू की कुमक के अतिरिक्त तीस हजार और सवार ताउ-चू के पास थे। उसने फिर लडाई करने की कोशिश की, मगर येलू ने उसे बेकार समझकर साथ नही दिया।

येलू ने चचा को गद्दी पर बैठाकर शुङ दरबार मे दूत भेजा, किंतु सम्राट् ने यह कहकर मिलने से इन्कार कर दिया, कि अभी वैध सम्राट् जिन्दा है, इसलिये हम खित्तनो का दूसरा सम्राट् नही मान सकते। जिन लोगो ने चचा को गद्दी पर बैठाया था, वह भी अधिकार के लिये मोल-भाव कर रहे थे। किन्-विजेताओ और शुङ का भी भय था। मोल-भाव करते समय शुङ के भेजे एक दूत को चचा सम्राट् ने मरवा डाला और येलू दैशी को चो-चाऊ लेने के लिये भेज दिया। येलू ने वहा की चीनी सेना को ह्वाङ-चाउ तक भगा दिया, लेकिन थोडे ही समय बाद चचा मर गया। उसका स्थान उसकी विधवा ने लिया, किन्तु असली ताकत सेनापति स्याउ-कान के हाथ में थी। नान-काउ जोत अब किनो के हाथ में थी, इसलिये पेकिङ खतरे मे हो गया था। विधवा रानी को लिये येलू खित्तन सेना के साथ भाग कर तेंदुस् म सम्राट् ताउ-चू के पास गया। ताउ-चू ने विधवा चाची को मरवा डाला और चचा को गद्दी पर बैठाने के लिये ये-लू को भला-बुरा कह कर छोड दिया। आकूता ने सुना, कि भगोडा सम्राट् तेंदुस मे शक्ति संचित कर रहा है। उसने शाम से काम लेते हुये एक तातार भिक्षु को भेजकर ताउ-चू को राजधानी मे बुलाया और भाई बना उसे और दूसरे खित्तन राजकुमारो को महल देकर अच्छी तरह रखने का वादा किया। लेकिन ताउ-चूने उसपर विश्वास नही किया,और आक्रमण करके शानसी के (तेंदुक से दक्षिण) एक नगर को ले लिया। इसपर एक किन् सेनापति ने धावा बोलकर सारे राजपरिवार को पकड लिया। ताउ-चू ने हिया (तगुत्) में शरण लेनी चाही, मगर तगुत आफत मोल लेने के लिये तैयार नही थे। वहा से वह एक गुमनाम से दूसरे तिब्बती कबीले में जाकर छिपा। ११२५ ई० के आरम्भ में अब भी उसके पास एक हजार सवार थे। किनो को पता लग गया था। उन्होंने यकायक हमला कर दिया। ताउ-चू ने जान बचाने के लिये अपने खजाने और दूसरी बहुमूल्य वस्तुओं को रास्ते मे बखेरना शुरू किया। इन बहुमूल्य वस्तुओ में छ फुट लम्बी सोने की एक बुद्ध-मूर्ति भी थी। लेकिन, किन् सेना पीछा करने से रुकी नही, और अन्तमे ताउ-चू के पास पहुच गई। किन् सेनापतिने बन्दी सम्राट् के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए घोडे से उतरकर शरावका प्याला उसके सामने किया, फिर उसे बडे आदर से ले गये। किनो ने उसे 'तटवर्ती राजकुमार' की उपाधि देकर आधुनिक व्लादिवोस्तोक के नजदीक चाङ-पाइ पर्वत के पूव मे नजरबन्द कर दिया।

किनो ने शुङ वश के विश्वासघात मे नाराज होकर ह्वाङ-हो नदी के उत्तर के सारे चीन को मागा। तगूतो ने भी शक्ति को देखकर उसकी अधीनता स्वीकार की। शुङ की ओर से अनुकूल उत्तर न आने पर ११२६ ई० म किन सेनापति व्योली-तो (वारिब) ने छोटी छोटी नावो से ह्वाङ-हो (पीत नदी) को पार किया। शुङ सेना अधिक प्रतिरोध नही कर सकी और बिना बहुत लडे-भिडे किनोने आधुनिक काइ-्फाङ्फू को ले लिया। विजेता ने पचास लाख औंस (पच्चीस

लाख छटांक) सोना, एक करोड औंस चादी, दस लाख थान रेशम और दस हजार ढोर मागे। शुङ सम्राट् ने जल्दी जल्दी जमा करके दो लाख औंस सोना चालीस लाख औंस चादी की पहिली किस्त दे दी, बाकी को किस्तो में देने का वादा किया। पर इस से जान नही बची। किनो ने फिर शुङो के ऊपर आक्रमण कर कई लडाइयो में शुङ सेना को परास्त किया। इन्ही लडाइयो में कुछ सैनिक यंत्र इस्तेमाल किये गये थे, जिन्हें पीछे चिंगिस ने भी इस्तेमाल किया। राजधानी ले लेने पर शुङ सम्राट् (हुइ-चुङ ११००-२६ ई०) ने अपने को किन् सेनापति चन-मूहो (जे-मू-गुर) के हाथ में अर्पण कर दिया। शुङ राज्य को पूर्णतया दखल करने की जगह विजेता ने यही पसन्द किया, कि अधिक से अधिक हरजाना लिया जाय। उनकी माग थी—एक करोड औस सोना, दो करोड नाल[1] चादी और एक करोड थान रेशम। शुङ सम्राट् ने सिंहासन छोड दिया। उसकी रानी और बहुत सी अन्तःपुरिकाओ, तथा दूसरे तीन हजार के करीब परिचारको को किन् तातार-भूमि ले गये। शुङ-वंश के बहुत से अधिकारी याङ-ची नदी के दक्षिण भाग गये। किनो ने शानसी, शानतुङ, चि-ली तथा होनान के प्रदेश अपने राज्य मे शामिल कर लिये।

खित्तन साम्राज्य खतम हो गया, लेकिन उसके एक राजकुमार येलू दैशी ने उभय-मध्य-एसिया में एक विशाल साम्राज्य कायम किया, जिसे इतिहास कराखिताई (काला खित्तन) के नाम से जानता है।

३ कराखिताई (११२५-१२१८ ई०)

कराखिताइयो की वंशावली

१ येलू दैशी	११२५- ४३
२ (पुत्री)	११४३
३ येल्यु इले (रानी)	११४३
४ चे-लू गू	— ११८२
५ गुरखान	— १२१०
६ कुचुलुक	१२१०-१२१८

१ येलू दैशी ११२५-४३ ई०

खित्तन सम्राट ताउ-चूने राजकुमार येलू दैशी को चचा को गद्दी पर बैठाने के लिये फटकारा था। हाथ से चले गये राज्य के लिये फिर आक्रमण करने की योजना में येलू ने साथ देते कहा—सारी सेना रहने पर जब हम सफल नही हो पाये, तो अब सफलता की क्या आशा सकती है? वह अपने दो सौ आदमियो के साथ रात को निकल भाग कर पाई-ताता (श्वेत तातार) की भूमि में चला गया। पुराने सबध के कारण श्वेत तातारों ने उसकी मदद की। वहा से वह उरुम्ची की ओर बढ़ा। इतिहासकार जुवैनी के अनुसार कराखिताई येलू के नेतृत्व में किर-गिजो की भूमि से होकर एमिल पहुचे। वहा उन्होने एक नगर बसाया, जो कि पीछे चिंगिस

[1] १ नाल = ५ औंस = २॥ छटांक।

के पुत्र ओ-गु-ताइ के वंश की राजधानी बना। आजकल यह स्थान खुवुचोक (तरखगताई) के पास है। कहते हैं, सीमान्तर पर पहुचने पर अफरासियाब वंशी तुर्क खानो ने अपने प्रतिद्वन्द्वी करलुकों और किप्चकों (कङली) के विरुद्ध येलू को बुलाया। करलुको की राजधानी बालाशगुन जल्दी ही येलूके हाथ में चली गयी, लेकिन उसने करलुक खाकान को इल-तुर्कान् की पदवी
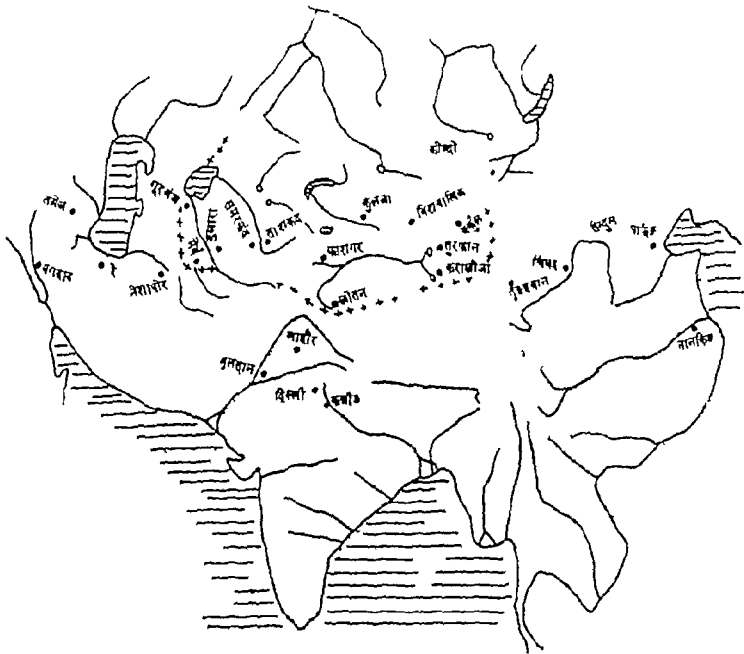
१ कराखिताइ साम्राज्य (११८२ ई०)

देकर रहने दिया। बिशबालिक के उइगुर राजा (इदिकु) ने बिना विरोध के येलू की अधीनता स्वीकार कर ली। काशगर के करलुक राजा अरसलन खान को ११३७ में हराकर तरिम-उपत्यका पर भी येलू ने अधिकार कर लिया। किरगिज और किप्चक भी उसकी सेना के सामने नहीं ठहर सके।

एमिल में पहुचकर येलू ने वहा चालीस हजार किबितक (तबू-परिवार) बसा दिये। ११४१ में समरकन्द से उत्तर कतवान की मरुभूमि में येलू ने सल्जूकी सुल्तान सिंजर को पूर्णतया पराजित कर वहा से अपनी एक सेना को भेजकर ख्वारेज्म पर भी अधिकार कर लिया।

अन्तर्वेद के शासक और सैनिक (करलुकों) में ११४१ में झगड़ा शुरू हो गया। महमूद खानने करलुको के विरुद्ध सिंजर से मदद मागी थी। इस पर करलुको ने गुरखान (येलू) का सहायतार्थ बुलाया। गुरखान ने मध्यस्थ बनकर झगड़ा शान्त करना चाहा। सिंजर ने इसका बहुत ही

अपमानजनक उत्तर दिया, जिसपर कराखिताइयो ने अन्तर्वेद पर आक्रमण किया और ९ सितम्बर ११४१ ई० में कतवान की मरुभूमि में सिजर को पूरी तरह हरा कर सल्जूकी सेना को दगम (समरकन्द से दक्षिण) की ओर हटने के लिये मजबूर किया। इस सघप में दस हजार हताहतो को नदी वहा ले गई और तीस हजार युद्धक्षेत्र मे काम आये। सिजर तेरमिज्ञ की ओर भगा। येलू को मदद के लिये बुलाने वाले करलुक गासक मुहम्मद ने भी देश छोड दिया और सारे अन्तर्वेद ने येलू के सामने सिर झुकाया। उसी साल (११४१ ई०) बुखारा पर भी गुरखान का अधिकार हो गया। उस समय बुखारा में खानदानी रईसो का एक वश था, जिनकी उपाधि "सद्रे जहा" (जगत् प्रधान) तथा खानदान का नाम बुरहान था। यह मुल्लो तथा खलीफा उमर के वशज थे। कराखिताई आक्रमण के समय अब्दुल अज़ीज़ उमर-पुत्र बुखारा का सदर था। कराखिताइयो ने विरोध करने के कारण सद्रे-जहा के खानदान के मुखिया हुशामुद्दीन उमर अब्दुल अज़ीज-पुत्र को मार डाला और अल्पतगिन को बुखारा का शासक नियुक्त किया—यह अल्पतगिन सुवक तगिन का स्वामी नही था, जिसका कि पुत्र विजेता महमूद गजनवी था। सिंजर की पराजय के वाद हल्ला हो गया, कि ख्वारेज़म शाह ने कराखिताइयो को वुलाया है, जवकि असली वात यह थी, कि कराखिताइयो की एक सेना ने ख्वारेज्म शाह के राज्य को लूटा, लोगो को भारी सख्या में मारा, जिस पर अतिसिज्ञ सधि करने के लिये मजबूर हुआ, और जिसके अतिरिक्त उसने तीस हजार सुवर्ण दीनार वार्षिक कर देना स्वीकार किया। शायद कतवान के युद्ध के तुरत वाद ही ख्वारेज़म पर हमला नही हुआ, क्योकि सिंजर की पराजय से फायदा उठाने के लिये अतिसिज़ अपनी सेना ले सल्जूकियो के मुख्य प्रदेश खुरासान पर चढ दौडा था, और उसी साल १९ नवम्बर (११४१) को उसने मेर्व को लूटा। कराख्तिाइयो के आक्रमण के भय से पीछे लौटकर पुन मई ११४२ ई० में वह नेशापोर पहुचा। नेशापोर के लोगो के सामने अतिसिज्ञ ने घोषणा की थी—हमारी सच्ची सेवाओ के प्रति कृतघ्नता दिखलाने के कारण सिंजर को यह सजा मिली है। हमें मालूम नही, कि पश्चात्ताप करने से उसे कुछ फायदा होगा। उसे हमारे जैसा मित्र और सहायक कही नही मिलेगा। अतसिज्ञ के हुकुम पर २९ मई को नेशापोर में उसके नाम का खुतबा पढा गया। उसी साल की गरमियो में सिंजर ने खुरासान पर फिर अधिकार कर लिया।

करमीना (उज़बेकिस्तान) में येलू ने गुरखान (खानो का खान, राजाधिराज) की पदवी धारण कर अपने को सम्राट् घोषित किया। इसी उपाधि के कारण कराखिताई वश को गुरखानी वश भी कहते है। गुरखान उपाधि इतनी वडी समझी गई, कि पीछे विजेता तेमूर भी गुरखान कहा जाता था। सम्राट् घोषित करते हुए येलू ने चीनी रेशम का सुदर चोगा, तथा दूसरी राजसी पोशाक पहिनी। लोगो के धन को देख कर लोभ मे न पडे, इसके लिये उसने अपने चेहरे को ढाक लिया। कुछ इतिहासकारो का मत है, कि येलू मानी के धर्म का अनुयायी था, लेकिन यह सदिग्ध है, क्योकि खितन तातार वौद्ध धर्म के पक्षपाती थे। येलू की सेना वडी अनुशासनबद्ध थी। किसी नगर को जीतने पर लूट-पाट नही होने पाती थी। नगर पर अधिकार करते ही हर घर से एक एक दीनार युद्धकर वसूल किया जाता। अपने सहायको के प्रति गुरखान ने कभी विश्वासघात नही किया, और न उनको पद से च्युत किया। सप्तनद,[1] कुलजा, सिर-दरिया के उत्तर-पूर्व वाले प्रदेश

---

[1] सेमिरेच्या

पर गुरखान का सीधा शासन था। इली नदी के पश्चिम चू-उपत्यका तथा वलाशागुन से नातिदूर तक का हागुन-उर्दू खोतो (गृह) कहा जाता था। यहा पर गुरखान का अपना उर्दू विचरण करता। येलू के अनेक समय बाद तक कोपाल से थोड़ा पश्चिम समतल भूमि में अवस्थित कार्यलिक करलुकखानो के हाथ म था। अन्तर्वेद तथा पूर्वी तुर्किस्तान पर भी कराखानियो का शासन था, समरकन्द मे भी करलुक वश का राज्य था। ख्वारेज्म म खारेज्मशाह शासन करता था। येलू देशी का राज्य गोबी के रेगिस्तान से वक्षु (आमू-दरिया) तट और तिब्बत के सीमान्त से सिवेरिया तक फैला हुआ था। इब्नुल्असीर के कथनानुसार प्रथम गुरखान की मृत्यु ११४३ ई० में हुई थी। करा-खिताइयो के अधीनस्थ कबीलों में नैमन बडा महत्व रखता था, जिसके ऊपर विजय प्राप्त करने के वादही चिंगिस की शक्ति बढी। मगोलो को सस्कृत बनाने मे भी नैमनो का हाथ था।

२. गुरखान-पुत्री (११४३)

येलू देशी के वाद उसकी पुत्री गद्दी पर बैठी, किन्तु वह थोड़े ही दिनो बाद मर गई।

३. येलू-इ-ले (११४३)

चीनी इतिहास के अनुसार वहन के मरने के वाद उसका भाई गद्दी पर बैठा। शायद वह अल्पवयस्क था, इसलिये उसकी मा अभिभाविका बनी जो बेटी के समय भी शासन का भार सभाले हुई थी। जुवेनी के कथनानुसार गुरखान की लडकी सत्तर साल तक राज करती रही। चीनी इतिहास के अनुसार लडकी का नाम पू-शो स्यान (खानखाना) था। चीनिया ने यह भी लिखा है, कि उसने अपने पति को मरवा डाला और वह खुल्लमखुल्ला जारो को रखती थी। जुवैनी कहता है, कि विद्रोहियो ने उसे और उसके एक जार को मार डाला। जान पडता है, यह येलू की लडकी ही थी, जिसको जुवैनी भ्रम से लडकी की मा कहता है।

४. चे-लु-गू (११४३-८२ ई०)

अभिभाविका वहन के कत्ल के वाद अपने बडे भाई को भी मारकर ये-ल्लू इले के पुत्र चे-लु-गू गद्दी पर बैठा। इसका असली नाम मानी या कुमानोम था। इसके विलासितापूर्ण जीवन और अत्याचार के वारे में मुसलमान ऐतिहासिको ने वहुत अतिरजन से काम लिया है। यदि वह ऐसा नालायक होता, तो आधी सदी तक कराखिताई साम्राज्य अच्छी तरह चल नही सकता था। गुरखानी चाहे बौद्ध धर्मी रहे हो, किन्तु शासक के तौर पर वह सभी धर्मों को समानता की दृष्टि से देखते थे। इसी गुरखान के समय नेस्तोरी पेत्रियाक इलियास (११७६-९० ई०) ने काशगर में अपनी मैत्रोपोली (धार्मिक प्रदेश की राजधानी) स्थापित की और उसका नाम "काशगर और नेवाकित की मेत्रोपोली" पडा। इससे मालूम होता है कि इस मेत्रोपोली म सप्तनद[1] (नेवाकत) का दक्षिणी भाग भी था। कराखिताइयो के समय मध्यएसिया की मुल्लाशाही दबी

---

[1] बेनश्ताम के अनुसार सातो नदिया हैं—(१) अरिस, (२) असा-तलस, (३) चू (४) इली, (५) कोकस्-कराताल, (६) शेसा और (७) आगूज। पहिले नाम वूसुनो और शकोकी भाषा में होंगे, जिनके शायद यह तुर्की अनुवाद है।

जिसमे इस्लामिक धर्मान्धता कुछ शिथिल हुई और ईसाइयो और दूसरे धर्मों को सास लेने का मौका मिला। लेकिन, इस समय तक जनता अधिकतर मुसलमान हो चुकी थी, जिसके भावो को उत्तेजित कर के पुराने शासक समय-समय पर विद्रोह करते रहते थे। चेलुगुके समय खोतन के करलुक शासक अरसलन खानने विद्रोह किया, जिसके झडे के नीचे धीरे धीरे और भी बहुत से मुसलमान विद्रोही एकत्रित हो गये। अरसलन खानने खिताई सरदार शामूर तवङ को फसाने की कोशिश की थी। अपने अधीन मुसलमान शासको पर गुरखानो का रोब बहुत था।

५ गुरखान (१२१० ई०)

चे-लू-गू के बाद गुरखानी वश मे और भी शासक हुए होगे, किन्तु अगले तीस-तैतीस वर्षों का इतिहास अधकारावृत है। हो सकता है, उस समय गुरखानी सिंहासन के दावेदारो में झगडा चल रहा हो। नैमन राजकुमार कुचलुक भाग कर गुरखानियो में चला आया। उसका पिता ताइ-वङ-खान चिगिसके हाथो मारा गया था। नैमन वश की ख्याति ही गुरखान के पास नही पहुची थी, वल्कि ताइ-वङ् खित्तन साम्राज्य का एक शक्तिशाली तथा विश्वासपात्र सामन्त था। १००८ ई० (६०८ हि०)में दरबार में पहुचने पर गुरखान ने कुचुलुक का स्वागत करते अपनी लडकी व्याह दी। कहते है कुचलुक पहिले ईसाई था और लडकी बौद्ध थी। अपने श्वसुर के प्रति भक्ति का परिचय देते शादी के बाद कुचलुक भी बौद्ध हो गया।

उधर १२०८ ई० मे चिगिस खान ने नैमनो के अवशेषो को ईर्तिश नदी के तट पर बुरी तरह से हराया। नैमनो के नेता कुचलुक और मेर्गित कुमार तुक्ता-विकी फिर से नैमनो के प्रभुत्वको स्थापित करना चाहते थे। तुक्ता-विकी युद्ध क्षेत्र मे मारा गया। उसके पुत्र ने गुरखान के सामन्त उइगुर इदिकुत (राजा)पर आक्रमण करके वहा स्थान बनाना चाहा। इदिकुत गुरखान का जुआ फेंककर चिगिसकी ओर हो गया। १२०९ ई० मे गुरखानी प्रतिनिधि शाकम जोक काराखोजा में रहता था, बहुत भारी कर लगाने के कारण लोगो ने घेर कर उसका सिर काट लिया। मेर्गितो को उइगुरो ने हरा दिया, बाकी बचे लोग गुरखान के राज्य में कुचलुक से जा मिले।

(१) मुस्लिम विद्रोह

उइगुर-भूमि के पूर्वी सीमान्त से मुस्लिम-जगत शुरू होता था। यद्यपि कराखिताइयो के इस्लाम-विरोधी भावो के कारण मुसलमानो में क्षोभ था, किन्तु तब भी उनकी सुसगठित शक्ति के सामने मुल्लो की कुछ नही पेश जाती थी। तेरहवी सदी के प्रारभ में चिगिस के आक्रमण के कारण जब मगोलिया के घुमन्तू नैमन और मेर्गित भागकर इस ओर आने लगे, तो मुसलमानो का क्षोभ शक्तिशाली हो उठा। इसे शुद्ध धर्मकी लडाई नही कह जा सकता था। इसके कारण थे—कराखिताई साम्राज्य की शक्ति का ह्रास, उसके शासन का कमजोर होना, हरेक सामन्त का अपनी शक्ति बढ़ाने के लिये उतावलापन, तथा कर उगाहने वालो की मनमानी। आन्दोलन पूर्वी-तुर्किस्तान में आरभ हुआ, जहा पर करलुको के साथ गुरखान का बर्ताव बहुत बुरा था। गुरखान को पता लग गया था, कि विद्रोह हमारे सारे मुस्लिम प्रदेशो में फैलेगा।

लेकिन जब तक घुमन्तू यहा नही पहुचे थे, तब तक आन्दोलन को सफलता नही मिली। गुरखान ने काशगर के खान के पुत्र को कैद कर रखा था, जिसे कुचुलुक ने मुक्त कर दिया। मुसलिम विद्रोह अरसलनखान अबुलमुजफ्फर यूसुफ (मृ० मार्च १२०५ ई०) के शासन मे आरम्भ हुआ था। कहते है, एक बडा धनी मुसलमान महमूद बाय अत्याचार से पीडित होकर भाग गया, जिसे नगर को घेरे मे डाल कर उस पर विजय प्राप्त करते समय सोलह वर्ष बाद पकडा गया। इस सघर्ष में ८७ हजार मुसलमान मारे गये। कुलजा प्रदेश में मुसलमानो ने बुजार के नेतृत्व में विद्रोह कर दिया। बुजार ने अल्मालिक नगर मे तुगरल खान की पदवी धारण कर अपने को चिंगिस का सामन्त घोषित किया। लेकिन अभी चिंगिस चीन से लडने मे लगा हुआ था, इसलिये वह पच्छिम की ओर ज्यादा ध्यान नही दे सकता था।

ख्वारेज्म से झगडा—कराखिताइयो ने १२०७ ई० में बुखारा पर आक्रमण किया। उस समय यहा के धनी लोग ख्वारेज्मशाह के पक्ष म थे। ख्वारेज्म शाह खिताई सेना का मुकाबिला नही कर सकता था। उसने मलिक सिंजर से सहायता चाही, किन्तु सिंजर ने सहायता न देते कहा "थाल बनाने वाले के लडके को अपने किये का फल भोगने दो।" मलिक सिंजर कई सालों तक ख्वारेज्मशाह के दरबार मे बन्दी रहा। उसने बुखारा पर काफी समय तक शासन किया था और उसका बनवाया सिंजर-मलिकमहल १२२० ई० के चिंगिसी अग्निकाण्ड से भी बचा रहा।

ख्वारेज्मशाह १२०८ के वसन्त में खुरासान मे शान्ति स्थापित करने गया था। १२०८ ई० (६०५ हि०) में ख्वारेज्म में एक बडा भूकम्प आया, जिसमें शहर में दो हजार और बाहर भी बहुत से आदमी मरे, दो गाव धरती के गर्भ में चले गये। इसीके बाद १२०९ ई० मे खिताई वजीर महमूद बे कर उगहाने के लिये आया।

ख्वारेज्मशाहसे झगडके कारणकी दो परपरायें है—

(१) परपरा—ख्वारेज्मशाह बहुत समय तक कराखिताइयोका करद रहा। १२१० (६०७ हि०) मे कर उगहानेके लिये गुरखानी वकील आया। वह तख्तपर ख्वारेज्मशाहकी बगलमें बैठ गया। मुहम्मदने नाराज होकर उसे नदीमें फेंकवा दिया। कराखिताइयोंसे झगडा होना जरूरी था, इसलिए महमूदने तुरन्त जाकर बुखारा ले लिया। फिर समरकन्दके शासक उस्मान खाके पास दूत भेजकर शामसे काम लेना चाहा। उसमें सफल न होनेपर समरकन्दपर चढाई की। उस्मानका अपने मालिक गुरखानसे अच्छा सबंध नही था। उसने गुरखानकी कन्या मागी थी। गुरखान अपनी कन्या एक मुसलमानको कैसे देता? इन्कार करनेपर उस्मान नाराज हो गया। इसलिए उसने मुहम्मद ख्वारेज्मशाहसे मेल कर लिया और उसके नाममे समरकन्दमें खुतबा और सिक्का चलवाया। ख्वारेज्मशाहने समरकन्दकी किलाबन्दी करनेका हुक्म दिया और अपनी मा तुर्कान-खातूनके सबधी अमीर बुरतानाका उस्मानके दरबारमें अपना वकील नियुक्त किया। वहासे ख्वारेज्मशाह आगे सिर नदी पार हो अगस्त या सितम्बर रबी (१२१० ई०) म इलामिशके मैदानम कराखिताई सेनापति तायन-कू स जाकर भिडा। पराजित तायन-कू बन्दी बनाकर ख्वारेज्म भेजा गया। मुहम्मद आसानीसे उतरारको भी ले समरकन्द होते ख्वारेज्म लौट गया।

ख्वारेज्मशाहकी अनुपस्थितिमें किपचक कादिर खानके बचे-खुचे लागाने जन्दके आसपास

के इलाकेको लूटा और उजाड़ा था, इसलिये बदला लेनेके ख्यालसे मुहम्मद ख्वारेज्ममे ज्यादा न ठहर सीधे जन्दकी ओर गया। उस्मान मुहम्मदकी कन्यासे व्याह करनेके लिये उसके साथ आया था। वह राजधानी (गुरगच) में रुक गया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जन्दमे किपचकोको हराया, किन्तु इसी वक्त उसे खबर आई, कि कराखिताई सेनाने समरकन्दको घेर लिया है। वह उधर दौड़ा। पर, तबतक कराखिताई सत्तर बार आक्रमण कर चुके थे, जिनमें सिर्फ एक बार नगरवाले नगरके भीतर शरण लेनेके लिये मजबूर हुए। इधर ख्वारेज्मशाहके आनेकी खबर मिली और उधर राजकीय पूर्वी सीमान्तपर रहनेवाले नैमन कबीलेके मुखिया तथा गुरखानी दामाद कुचलुकके बगावतकी खबर भी, इसलिए कराखिताई समरकन्दवालोसे सुलह करके लौट गये। ख्वारेज्मशाहने उनका पीछा किया। यूगाकका शासक मुसलमान था, तो भी उसने नगरको समर्पण नही किया। एक सेना उसके विरुद्ध भेजी गई। सेनाने नगरको दखल कर उसके शासकको ख्वारेज्मशाहके सामने पहुचाया। उसी समय कुचलुकका दूत पहुचा।

कुचलुक तथा मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके बीच सधि हो गई। सधिके अनुसार तै हुआ कि जो गुरखानको पहिले हराये, वह सारी तुर्क-भूमिका स्वामी हो। यदि ख्वारेज्मशाह सफल हो, तो काशगर और खोतन तक उसको मिले, यदि कुचलुक सफल हो, तो सिर-दरियासे पूर्वका देश उसका हो। गुरखानी सेनाके साथ लड़नेमें ख्वारेज्मशाह असफल रहा और कुचुलक सफल। युद्ध-आरम्भके पहिले ही ख्वारेज्म प्रतिनिधि बुरताना तथा कूबदजामा प्रदेशके इस्पाहवद (माजदरानी राजकुमार) ने कराखिताइयोसे इस शर्तपर समझौता कर लिया, कि बुरतानाको ख्वारेज्म और इस्पाहवदको खुरासान दे दिया जाय, तो वह ख्वारेज्मशाहका साथ छोड़ देगे। गुरखानने और भी उदारता दिखलाई। युद्धके आरम्भमें ही बुरताना और इस्पाहवद रण-क्षेत्र छोड़कर भाग गये। कराखिइताइयोकी वाम-पक्षीय सेना प्रतिद्वन्द्वी मुसलमानोकी दक्षिण-पक्षीय सेनासे मिश्रित हो गई। इसी तरह मुसलमानोकी वामपक्षीय सेना कराखिता-इयोकी दक्षिण पक्षीय सेनासे मिश्रित हो गई। दोनो सेनाओका केन्द्रीय भाग अस्त-व्यस्त हो गया। युद्धका कोई निश्चित परिणाम नही हो पाया, दोनो सेनाओने अपने शत्रुओकी छावनियों और शरणार्थियोको लूटा। इस गड़बड़ीमें ख्वारेज्मशाह एकाएक कुछ अनुयायियोंके साथ कराखिताइयोसे घिर गया। दुश्मनकी पोशाक पहिननेकी ख्वारेज्मशाहकी आदत थी, इसलिये वह कई दिन उसी तरह रहकर मौका पा भाग निकला और सिर-नदी के तटपर अपनी सेनासे आ मिला। उसकी सेनामें हल्ला हो गया था, कि शाह मर गया।

(२) परपरा—दूसरे इतिहासकारने कराखिताइयोसे ख्वारेज्मशाहके झगड़ेका कारण इस प्रकार बतलाया है —

सुल्तान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने दो-तीन साल तक कराखिताइयोको कर नही दिया। कर उगाहनेके लिये गुरखानका वजीर महमूद बेग आया। जिस वक्त वह गुरगाच पहुचा, उसी वक्त ख्वारेज्मशाह किपचकोंके ऊपर आक्रमण करने चला गया और बातचीत करनेका काम अपनी मा तुर्कान खातूनके ऊपर छोड़ दिया। रानीने सारा रुपया देकर देर करनेके लिये बेटेकी ओरसे क्षमा प्रार्थना की और पूर्णतया अधीनता स्वीकार की। वजीर मुहम्मद बेगने लौट कर ख्वारेज्म-शाहके गर्व करनेकी शिकायत की। इसपर गुरखानने ख्वारेज्मी दूतोका भी सम्मान नही किया।

गुरखानके पूर्वी प्रदेशमें विद्रोह हो रहे थे। कुचुलुकने उनके दवानेके बहाने जाकर वहा वस गये अपनी जाति (नैमन लोगों) के उर्दूको जमा कर लिया। कुचुलुककी नीयतका पता जल्दी ही गुरखानको लग गया। उसने अपने सामन्त समरकन्दके शासक उस्मानसे सहायता मागी, लेकिन कन्या देनसे इनकार करनके कारण उस्मान गुरखानसे नाराज हो चुका था। उसने मदद भेजनेसे इनकार कर गुरखानसे मनमुटाव किए ख्वारेज्मशाहका पक्ष ले लिया और ख्वारेज्म शाहसे मिलकर उसके नामका सिक्का और खुतबा चलवाया। इसपर गुरखान ने तीस हजार सेनाके साथ आकर समरकन्दको दखल कर लिया, लेकिन समरकन्दके खजानेको नहीं लूटा। पूरबमें कुचुलुचके विद्रोहके सफल होनेकी खबर पा गुरखानी सेना समरकन्द छोडकर लौट गई। अब मुहम्मद ख्वारेज्मशाह समरकन्द पहुचा। उस्मानने आगे बढ़कर उसका स्वागत किया और अपने प्रदेशको उसके हाथमे दे वह उसकी सेनामें शामिल हो गया। दोनो साथ तराज गये। सेनापति तायन-कू एक मजबूत सेनाके साथ मुकाबिला करनेके लिये तैयार था। सप्तनदमें बलाशागुनसे नातिदूर गुरखानने कुचुलुकपर विजय पाई, किन्तु उसका सेनापति तायन-कू मुसलमानोंके साथ लडते तराजमें वन्दी बन गया था। निश्चित हार किसी की नहीं हुई, किन्तु तायन-कू वन्दी बना। दोनो सेनायें पीछे लौट गई। कराखिताई सेनाने सेनापति विहीन हो अपने ही इलाकेको खुद लूटा। बलाशागुनके नागरिकोको डर हुआ, कि ख्वारेज्मशाह उनके नगरकी ओर आ रहा है, इसलिये उन्होने अपने नगरके फाटक वन्द कर लिये। वजीर महमूद और गुरखानने बहुत रोका, लेकिन उन्होंने नही माना। १६ दिनके मुहासिरेके वाद शहरपर अधिकार हुआ और कराखिताई सेना तीन दिनो तक लूट मार करती रही। ४७ हजार नगर-निवासी मारे गये। सारी सम्पत्ति नष्ट हो गई। कारून जैसे धनी महमूदने भयभीत होकर सलाह दी, कि सरकारी खजानेको लूटो। कुचुलुक लूटनेवाली सेनाका अगुआ बन गया था। जब लूटे हुए मालको लौटानेके लिये सेनापर जोर दिया गया, तो सैनिकोनें विद्रोह कर दिया। कुचुलुकने इस मौकेसे फायदा उठाकर सैनिकोको अपनी ओर खीच लिया। सेना द्वारा परित्यक्त गुरखान कुचुलुकके सामने आत्मसमर्पण करने गया। कुचुलुकने ऐसा करने नही दिया, बल्कि स्वामी और पिताके समान उसका स्वागत किया। अब सारी शक्ति कुचुलुकके हाथमें चली गई। गुरखानकी एक रानीको व्याह कर वह गुरखानको सिंहासनपर रख उसका सम्मान करता रहा। दो साल वाद गुरखान मर गया। एक रूसी इतिहासकार के मतसे दूसरी परपरामें ही अधिक सत्यताका अश है।

ख्वारेज्मशाहकी पराजयसे समरकदपर कराखिताइयोका अधिकार हो गया, इससे जान पडता है कि पहिली बार विद्रोह दवा दिया गया। गुरखानने उस्मानके साथ उस समय (१२१० ई०) नरमी दिखलायी, इसी समय उस्मानको अपनी ओर पूरी तौरसे करनेके लिये गुरखानने अपनी कन्या भी व्याह दी, उसको थोडा कर देने के लिये कहा और समरकन्दमें अपना वकील रख दिया। उस्मान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके विरुद्ध हो गया। जब १२१० ई० में कुचुलुकने करलुकोंकी सहायतासे सप्तनदके ऊपरी भागमें सफलता पाई थी और उजगन्दमें रखे गुरखानके खजानेको लूट लिया था, और गुरखानी सेनाको समरकन्द छोड अपने देशकी रक्षाके लिये लौट जाना पडा था। अब अन्तर्वेदमे फिर लडाईके बादल मडराने लगे। ख्वारेज्मशाह किपचकाके ऊपर सफल अभियान करके जन्दसे लौटकर बुखारा आया, वहीं उससे उस्मान भी आ मिला।

इसी अभियानमें उजगन्द ख्वारेज्मशाहके हाथमें आया। जैसा कि पहिले कहा, कोई निर्णायक विजय नहीं हुई थी, इसलिये ख्वारेज्मशाह कराखिताइयोंका पीछा नहीं कर सका और न सप्तनदके अपने धर्मभाइयों की कोई मदद कर सका। तो भी इस युद्धके कारण मुसलमानोंमे ख्वारेज्मशाहकी इज्जत बहुत बढ गई। सरकारी कागजोंमें उसे "द्वितीय सिकन्दर" लिखा जाने लगा और उसने अपने को "सुल्तान सिंजर"के नामसे मशहूर होने दिया।

६ कुचुलुक (१२१०-१२१८ ई०)

मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जब कराखिताइयोंपर आक्रमण किया, उस वक्त उजगन्दका शासक जलालुद्दीन कादिर खान (उलुक सुल्तान) था। कुचुलुकने गुरखानको अपने हाथमें कर काशगरी खानके पुत्र अरसलनखान अबुलफतह मुहम्मदको मुक्त कर दिया था। मालूम होता है, कुचुलुकका कृपापात्र होनेके ही कारण काशगरियोंने अबुलफतहको १२१० (६०७ हि०) मे मार डाला। यह कह ही चुके है, कि गुरखानके जीवनमे कुचुलुक राजसिंहासनपर नहीं बैठा। साम्राजी दबदबेके सभी चिह्नोंको उसने गुरखानके लिये रखा। विशेष अवसरोंपर गुरखान जब सिंहासनपर बैठता, तो उसके दरबारियोंकी तरह कुचुलुक भी सामने खड़ा रहता। जब कुचुलुकने गुरखानके सारे राज्यको अपने हाथमें ले लिया, तो मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने कुचुलुकसे माग की—गुरखानने मुझे अपनी कन्या तमगाच खातूनको ब्याहने, अपने सारे खजानेको दहेजमे देने और अपने पास सिर्फ दूरके प्रदेशोंको रखनेका वचन दिया है। लेकिन कुचुलुक ऐसे वचन-दानको कब माननेवाला था? उसका ध्यान सबसे पहिले उस मुसलिम आन्दोलनकी ओर गया, जो कि कराखिताइयोंके राज्यमें फैल रहा था। इसी आन्दोलनके अन्तिम अवशेषके रूपमे पहिलेके घोडाचोर डाकू बुज़ार (ओज़ार) ने कुलजा प्रदेशमें अपना स्वतंत्र राज्य कायम कर लिया था। कुचुलुकने उसके देशपर अधिकार कर लिया, और १२११ से १२१३ ई० तक करलुकोंकी गोशमालीके लिये पूर्वी तुर्किस्तानको लूटता-बर्बाद करता रहा। देशमें अकाल पड गया। मुहम्मदकी सेना विशबालिक पहुची, लेकिन लोगोंने डरके मारे कुचुलुककी अधीनता स्वीकार की। पूर्वी तुर्किस्तानपर विजय प्राप्त कर मुसलिम-आन्दोलनकी जड से खतम करते कुचुलुकने वहा मुसलमानोंपर बहुत अत्याचार करना शुरू किया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाह काशगर और खोतनमें अपने धर्म-भाइयोंकी कोई मदद नही कर सका, यही नही अन्तर्वेदके उत्तरी इलाकोंकी भी वह रक्षा नही कर सका। १२१४ ई० की गर्मियोंमें समरकन्दके ऊपर कुचुलुकके आक्रमणका भारी भय था। ख्वारेज्मशाहने अपनेको असमर्थ पा अन्तमें इस्फिजाब, शाश, फरगाना और काशानके लोगोंको देश छोडकर दक्षिण-पश्चिममें चले आनेका हुकुम दिया, जिसमें वह कुचुलुकके हाथोंमें न पड़ें। सिर नदीके ऊपर वाले फरगाना प्रदेशको भी हाथसे जाते देख, उसे भी उजाड देनेका हुकुम दिया। घुमन्तुओंके उस सरदारके मारे, मध्य-एसियाके एक अत्यन्त शक्तिशाली शासककी यह स्थिति थी जिसे कि बिना अधिक कठिनाईके १२१८ ई० में मगोलोंके एक सेनापतिने खतम कर दिया।

एक तीसरी परपरा है कि कराखिताई सेनाने गुरखानके खजानेको मागा था, जिसके न देने पर सेनामें विद्रोह हो गया। यह देख गुरखानका साथ छोडकर कुचुलुक विद्रोहियोंके साथ हो गया और गुरखानको पकडकर उसे ही तखतपर तब तक रहने दिया, जब तक कि दो साल बाद

(१२१२ ई० में) वह मर नही गया। इससे एक साल पहिले ही (१२११ ई० में) चिंगिसकी सेना हुविलेइ नोयनके आधीन पूर्वी सप्तनदमें पहुची। मगोल जानते थे कि हमारा शत्रु नैमन राज-कुमार गुरखानियोंका दामाद बनकर अपनी शक्ति बढा रहा है, इसलिए वह उसका पीछा छोडनेके लिये तैयार नही थे। यही खबर पाकर करलुक बुज्ञार अरसलन खानने अपनी राजधानी (कायालिक) मे कराखिताई प्रतिनिधिको मरवाकर अपने को चिंगिसके अधीन घोषित किया।

(१) उस्मान खा से झगडा

ताजुद्दीन विलगा खान उस्मान खानका चचेरा भाई था, जो पहिले कराखिताइयोकी ओरसे उतरारका शासक रह चुका था और वही पीछे उसने ख्वारेज्मशाहकी अधीनता स्वीकार की। ख्वारेज्मशाहने उसे वहासे निर्वासित कर दिया। पीछे विलगाखान एक साल नसा नगरमे रह अपनी उदारताके कारण बहुत जनप्रिय हो गया। इससे डरकर ख्वारेज्मशाहने जल्लाद भेजकर उसका सिर कटवा मगवाया। उस्मानको नजदीक लानेके लिये ख्वारेज्मशाह उसे अपना दामाद बनानेके लिये ख्वारेज्म ले गया था। तुर्कान खातूनने तुर्कोंकी प्रथाका बहाना करके एक साल तक उस्मानको वहा रहनेके लिये कहा। १२११ के वसन्तके अभियानमें समरकन्दियोको शान्त देखकर उस्मानको सपत्नीक समरकन्द भेज दिया गया। ख्वारेज्मशाहके साथ उस्मानका राजर्बा अच्छा नही था, इसलिए उसने कराखिताइयोसे फिर सबध जोडना चाहा। उत्तरी सप्तनदमे उसी वक्त मगोल सेनापति हुविले (कुविले) नोयनके सामने वहाके खानने अधीनता स्वीकार की थी। कराखिताई शासक मार डाला गया था, तो भी उस्मानने ख्वारेज्मशाहके मुसलिम जुयेकी जगह काफिरोंके जुयेको उठाना ही पसन्द किया, जिसमें समरकन्दके लोग भी उसके साथ थे। ख्वारेज्मशाहको इस बातका पता लगा, कि उस्मान कराखिताई रानीके पक्षमे है और ख्वारेज्मी रानीके साथ बुरा वर्ताव कर रहा है। यही नही १२१२ ई० में उस्मानकी आज्ञासे समरकन्दियोंने विद्रोह कर वहा रहनेवाले सारे ख्वारेज्मियोको मार डाला। उस्मानकी आज्ञासे मरे हुए ख्वारे ज्मियोंके शरीरको दो टूक करके बाजारमें कसाइयोंके मासकी तरह लटका दिया गया था। ख्वारेज्म राजकन्याने जान बचानेके लिये अपनेको किलेमें बन्द कर लिया। उस्मानने मुश्किलसे उसे जीवित रहने दिया। इसका बदला लेनेके लिये ख्वारेज्मशाहने अपनी राजधानीमें बसते सभी विदे-शियो और समरकन्दियोको मार डालना चाहा, पर उसकी मा तुर्कान खातूनने उसे रोका। ख्वारेज्मशाहने समरकन्द पर चढ़ाई की और जल्दी ही नगरको आत्मसमपण करना पडा। उस्मानने तलवार और पारचा (वस्त्र) ले ख्वारेज्मशाहके सामने उपस्थित हो पूण अधीनता स्वीकार की। तीन दिन तक समरकन्द शहरको लूटा गया। केवल विदेशियोंके मुहल्ले ही इस लूटसे बचे। सैयदो, इमामो और आलिमोने बडी मिन्नत की, तब जाकर लूट बन्द हुई। ख्वारेज्म-शाहने उस्मानको क्षमा कर देना चाहा, लेकिन उस्मानकी ख्वारेज्मी रानी (मुहम्मदशाहकी पुत्री) के हठके कारण दूसरी रात उसे कत्ल करवा देना पडा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने फरगाना और तुर्क-भूमिके अमीरोंके पास अधीनता स्वीकार करनके लिये दूत भेजे। कुचुलुककी गति-विधि रोकनेके लिये उसने इस्फिजावमें एक सेना रखी। अबसे समरकन्द ही उसकी राजधानी सा बन गया। उसने वहा एक मस्जिद बनवाई और एक महल बनानेका काम भी शुरू कर दिया।

कुचुलुकमें शासक और सैनिकके बहुतसे गुण थे, लेकिन जहा तक मुसलमानोका सबध था,

वह उन पर किसी तरहकी दया दिखानेके लिये तैयार नही था। इसके ही कारण उसने सारे मध्य-एसियाके मुसलमानोको अपना दुश्मन बना लिया और इसीसे फायदा उठाकर मुहम्मद ख्वारेज्मशाह मुसलमानोका नेता और विजेता बन गया। इलीउपत्यकामे बुज़ारको हराकर कुचुलुकने उसकी राजधानी (अल्मालिक) को घेर लिया। लोग अपने शहरके लिये बडी बहादुरीसे लडे। जब उसके पुराने शत्रु मगोल वहा पहुचे, तो कुचुलुक ने वहासे हटते हुये बुज़ारको मरवा डाला। मगोल सेनापति जेबे नोयनने शहरमें प्रवेशकर बुज़ारके पुत्र सुकनाग तगिनको गद्दीपर बिठाया और उसकी लडकी उलुकू खातूनको चिंगिसके अन्त पुरके लिये भेज दिया। मगोलोने सुकनाग तगिनसे सधि की। १२२१ ई० मे चीन-सम्राट्का प्रतिनिधि अब भी बुज़ारकी राजधानी अलमालिकमें रहता था, जिसका काम था—(१) जन-गणना करना, (२) लोगोंको सैनिक सेवाके लिये भरती करना, (३) डाकका यातायात ठीक रखना, (४) कर उगाहना, (५) दरबारमे भेंटके पहुचानेका प्रबन्ध करना। इस प्रकार वह सैनिक नेता और कर-उगाहक दोनो ही था। मगोलोको मध्य-एसियाके सभ्य प्रदेशमे पहिले पहल यही अपने दारुखर्चा (राज-प्रतिनिधि) नियुक्त करनेकी अवश्यकता पडी। जब मगोल सेना वहा पहुचो, तो काशान और आकसीकत के गुरखानी शासक इस्माईलने नगरके बुजुर्गोके साथ मगोलोके पास आत्मसमपण किया।

जेबे नोयनने इसकी सूचना चिंगिसको दी। हुकुम आया, कि इस्माईलको हरावलका पथ-प्रदर्शक बना कुचुलुकके विरुद्ध आगे बढो। १२१९ ई० में बीस हजार मगोल कुल्जाके रास्ते मप्तनदमे पहुचे। बलाशागुन बिना प्रतिरोधके उनके हाथमे चला गया। उन्होने उसका नाम बदल कर गोबालिग (सुनगर) रख दिया। फिर काशगरमे पहुचकर जेबेने घोपणा की, कि सभी अपने-अपने धमके अनुसार स्वतत्रता-पूर्वक पूजा-पाठ कर सकते हैं। मगोलोने नगरको नही लूटा, केवल कुचुलुकके बारेमे खोज-पड़ताल की। काशगरी लोग मगोलोके आगमनको अल्लाकी दया कहते थे। कुचुलुक बिना लडे भागा और सिरिकुलमें मारा गया। जेबीको गुरखानकी अपार सपत्ति हाथ लगी। उसने हजार श्वेतमख घोडे चिंगिसके पास भेजे। जिस शत्रुने वर्षों

ख्वारेज्मशाहने जब १२१५ ई० मे आक्रमण किया, तो उसे खबर लगी, कि पराजित मेंर्गित तक्तू खानके नेतृत्वमे मगोलियासे भागते आ रहे है, जिनका पीछा करते मगोल कङ्ली (किपचक) भूमिमे आ गये ह। यह खबर सुनकर समरकन्दसे बुखारा और जन्द होते मुहम्मदशाहने उधरकी ओर प्रस्थान किया। वहा पहुचने पर पता लगा, कि मेंर्गित ही नही मगोल भी आ गये ह। ख्वारेज्मशाह समरकन्द लौट साठ हजारकी बडी सेना लेकर इरगिज़ नदीके तटपर पहुचा। नदीकी धारमे पिघलती बरफका ज़ोर था, इसलिए उसे कुछ समयके लिये रुक जाना पडा। जब नदी बरफ-मुक्त हो गयी, तो नदी पार मेंर्गितोंके ऊपर पडकर उसने उन्हें नष्ट कर दिया। फिर कैली और किमाज नदियोंके बीच पहुँचा। एक घायल मुसलमानने बतलाया, कि आज ही मेंर्गितो और मगोलोकी भयकर लडाई हुई है। मुहम्मदने विजेता मगोलोका पीछा किया और दूसरे दिन सबेरे उन्हें जा पकडा। इस टुकडीका नेता जूजी और दूसरे मगोल सरदार थे। वह ख्वारेज्मशाहसे लडना नही चाहते थे। उन्होने कहा कि हम केवल मेंर्गितोंके विरुद्ध भेजे गये ह, हमें दूसरे से लडनेका हुक्म नही है। ख्वारेज्मशाहने जवाब दिया—"हम सभी काफिरोको अपना शत्रु समझते है।" उसने मगोलोको लडनेके लिये मजबूर किया। युद्धका कोई फैसला नही हुआ। मुसलमानोंके दक्षिण-पक्षके सेनापति शाहजादा जलालुद्दीनने बडी बहादुरीसे मुसलमानोको हारनेसे बचाया। दूसरे दिन फिर लडनेका निश्चय था, लेकिन उस दिन अधेरेमें ही जलती आग छोडकर मगोल भाग गये। लडाईमे मगोलोने इतनी वीरता दिखाई थी, कि मुहम्मदको उनसे फिर खुले मैदानमें लडनेकी हिम्मत नही हुई।

स्रोत-ग्रन्थ

1 A thousand years of Tatars (Parker)

2 A short History of Chinese Civilisation (Tsui Chi, London 1945)

३ ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व० बरतोल्द, वेर्नी १८९८)

वह उन पर किसी तरहकी दया दिखानेके लिये तैयार नही था। इसके ही कारण उसने सारे मध्य-एसियाके मुसलमानोंको अपना दुश्मन बना लिया और इसीसे फायदा उठाकर मुहम्मद ख्वारेज्मशाह मुसलमानोका नेता और विजेता बन गया। इलीउपत्यकाम बुजारका हराकर कुचुलुकने उसकी राजधानी (अल्मालिक) को घेर लिया। लोग अपने शहरके लिये बड़ी बहादुरीसे लड़े। जब उसके पुराने शत्रु मगोल वहा पहुचे, तो कुचुलुक ने वहासे हटते हुयें बुजारका मरवा डाला। मगोल सेनापति जेबे नोयनने शहरमे प्रवेशकर बुजारके पुत्र सुकनाग तगिनको गद्दीपर बिठाया और उसकी लडकी उलुकू खातूनको चिंगिसके अन्त पुरके लिये भेज दिया। मगोलोने सुकनाग तगिनमे सधि की। १२२१ ई० मे चीन-सम्राट्का प्रतिनिधि जब भी बुजारकी राजधानी अलमालिकमें रहता था, जिसका काम था—(१) जन-गणना करना, (२) लोगोका सैनिक सेवाके लिये भरती करना, (३) डाकका यातायात ठीक रखना, (४) कर उगाहना, (५) दरबारमे भेटके पहुचानेका प्रबन्ध करना। इस प्रकार वह सैनिक नेता और कर-उगाहक दोनो ही था। मगोलोको मध्य-एसियाके सभ्य प्रदेशमें पहिले पहल यही अपने दारुगची (राज-प्रतिनिधि) नियुक्त करनेकी अवश्यकता पडी। जब मगोल सेना वहा पहुची, तो काशान और आकसीकत के गुरखानी शासक इस्माईलने नगरके बुजुर्गोंके साथ मगोलोंके पास आत्मसमर्पण किया।

जेबे नोयनने इसकी सूचना चिंगिसको दी। हुकुम आया, कि इस्माईलको हरावलका पथ-प्रदर्शक बना कुचुलुकके विरुद्ध आगे बढ़ो। १२१९ ई० में बीस हजार मगोल कुल्जाके रास्ते सप्तनदमें पहुचे। बलाशागून बिना प्रतिरोधके उनके हाथमे चला गया। उन्होने उसका नाम बदल कर गोबालिग (सुनगर) रख दिया। फिर काशगरमें पहुचकर जेबेने घोषणा की, कि सभी अपने-अपने धर्मके अनुसार स्वतन्त्रता-पूर्वक पूजा-पाठ कर सकते हैं। मगोलोने नगरको नही लूटा, केवल कुचुलुकके बारेमें खोज-परताल की। काशगरी लोग मगोलोंके आगमनको अल्लाकी दया कहते थे। कुचुलुक बिना लडे भागा और सिरिकुलमें मारा गया। जेबीको गुरखानकी अपार सपत्ति हाथ लगी। उसने हजार श्वेतमुख घोडे चिंगिसके पास भेजे। जिस शत्रुने वर्षोंसे ख्वारेज्मशाहकी नींद हराम कर दी थी, उसे जेबेने इतनी आसानीसे खतम कर दिया। धार्मिक स्वतन्त्रता देकर मगोलोने कुचुलुकके अत्याचारके कारण क्षुब्ध और पीडित मुसलमानोंको अपनी ओर कर लिया था। अब मगोलोंके खिलाफ अपने युद्धको ख्वारेज्मशाह धर्मयुद्ध का नाम नही दे सकता था। मगोलोने तो मुसलमानोको धार्मिक स्वतन्त्रता दी, और ख्वारेज्मशाहने कई मुसल्मान दूतोको जानसे मार डाला।

उत्तरापथमें तेरहवी सदीके प्रथम पाद मे मगोलोंके रूपमे एक नयी शक्ति आ पहुची, जिसने चीनसे लेकर सिर-दरियाके तट तक एक विशाल साम्राज्य कायम कर दिया।

(२) मगोलोसे झडप—

जैसा कि पहिले कहा, किपचकोके साथ की लडाईमे मुहम्मद ख्वारेज्मशाह ज्यादा सफल रहा। शिकनाग ख्वारेज्मके राज्यमे मिला लिया गया। जन्दसे उत्तर बढ़कर मुहम्मदने किरगिज-मरुभूमिके किपचको पर कई अभियान भेजे। ऐसे ही एक अभियानमें १२१६ ई० में सयोगवश ख्वारेज्मी सेनाकी टक्कर चिंगिसकी सेनाकी एक टुकडीसे हुई। तुर्गई प्रान्तमे

(१२१२ ई० में) वह मर नही गया। इससे एक साल पहिले ही (१२११ ई० मे) चिंगिसकी सेना हुबिलेइ नोयनके आधीन पूर्वी सप्तनदमें पहुंची। मगोल जानते थे कि हमारा शत्रु नैमन राज कुमार गुरखानियोंका दामाद बनकर अपनी शक्ति बढा रहा है, इसलिए वह उसका पीछा छोड़नेके लिये तैयार नही थे। यही खबर पाकर करलुक बुज़ार अरसलन खानने अपनी राजधानी (कायालिक) मे कराखिताई प्रतिनिधिको मरवाकर अपने को चिंगिसके अधीन घोषित किया।

(१) उस्मान खा से झगडा

ताजुद्दीन बिलगा खान उस्मान खानका चचेरा भाई था, जो पहिले कराखिताइयोकी ओरसे उतरारका शासक रह चुका था और वही पीछे उसने ख्वारेज्मशाहकी अधीनता स्वीकार की। ख्वारेज्मशाहने उसे वहासे निर्वासित कर दिया। पीछे बिलगाखान एक साल नसा नगरमें रह अपनी उदारताके कारण बहुत जनप्रिय हो गया। इससे डरकर ख्वारेज्मशाहने जल्लाद भेजकर उसका सिर कटवा मगवाया। उस्मानको नजदीक लानेके लिये ख्वारेज्मशाह उसे अपना दामाद बनानेके लिये ख्वारेज्म ले गया था। तुर्कान खातूनने तुर्कोंकी प्रथाका बहाना करके एक साल तक उस्मानको वहा रहनेके लिये कहा। १२११ के वसन्तके अभियानमें समरकन्दियोको शान्त देखकर उस्मानको सपत्नीक समरकन्द भेज दिया गया। ख्वारेज्मशाहके साथ उस्मानका ।जर्वा अच्छा नही था, इसलिए उसने कराखिताइयोंसे फिर सबध जोडना चाहा। उत्तरी सप्तनदमें उसी वक्त मगोल सेनापति हुबिले (कुबिले) नोयनके सामने वहाके खानने अधीनता स्वीकार की थी। कराखिताई शासक मार डाला गया था, तो भी उस्मानने ख्वारेज्मशाहके मुसलिम जुयेकी जगह काफिरोंके जुयेको उठाना ही पसन्द किया, जिसमें समरकन्दके लोग भी उसके साथ थे। ख्वारेज्मशाहको इस बातका पता लगा, कि उस्मान कराखिताई रानीके पक्षमें है और ख्वारज्मी रानीके साथ बुरा बर्ताव कर रहा है। यही नही १२१२ ई० में उस्मानकी आज्ञासे समरकन्दियोंने विद्रोह कर वहा रहनेवाले सारे ख्वारेज्मियोको मार डाला। उस्मानकी आज्ञासे मरे हुए ख्वारेज्मियोंके शरीरको दो टूक करके बाजारमें कसाइयोंके मासकी तरह लटका दिया गया था। ख्वारेज्म राजकन्याने जान बचानेके लिये अपनेको किलेमें बन्द कर लिया। उस्मानने मुश्किलसे उसे जीवित रहने दिया। इसका बदला लेनेके लिये ख्वारेज्मशाहने अपनी राजधानीम बसते सभी विदेशियो और समरकन्दियोंको मार डालना चाहा, पर उसकी मा तुर्कान खातूनने उसे रोका। ख्वारेज्मशाहने समरकन्द पर चढाई की और जल्दी ही नगरको आत्मसमर्पण करना पडा। उस्मानने तलवार और पारचा (वस्त्र) ले ख्वारेज्मशाहके सामने उपस्थित हो पूर्ण अधीनता स्वीकार की। तीन दिन तक समरकन्द शहरको लूटा गया। केवल विदेशियोंके मुहल्ले ही इस लूटसे बचे। सैयदो, इमामो और आलिमोंने बडी मिन्नत की, तब जाकर लूट बन्द हुई। ख्वारेज्मशाहने उस्मानको क्षमा कर देना चाहा, लेकिन उस्मानकी ख्वारेजमी रानी (मुहम्मदशाहकी पुत्री) के हठके कारण दूसरी रात उसे कत्ल करवा देना पड़ा। मुहम्मद ख्वारज्मशाहने फरगाना और तुर्क-भूमिके अमीरोंके पास अधीनता स्वीकार करनके लिय दूत भेजे। कुचुलुककी गतिविधि रोकनेके लिये उसने इसिफ़जाबमें एक सेना रखी। अबसे समरकन्द ही उसकी राजधानी सा बन गया। उसने वहा एक मस्जिद बनवाई और एक महल बनानेका काम भी शुरू कर दिया।

कुचुलुकमें शासक और सैनिकके बहुतसे गुण थे, लेकिन जहा तक मुसल्मानोंका सबध था,

वह उन पर किसी तरहकी दया दिखानेके लिये तैयार नही था। इसके ही कारण उसने सारे मध्य-एसियाके मुसलमानोको अपना दुश्मन बना लिया और इसीसे फायदा उठाकर मुहम्मद ख्वारेज्मशाह मुसलमानोका नेता और विजेता बन गया। इलीउपत्यकामें बुज़ारको हराकर कुचुलुकने उसकी राजधानी (अलमालिक) को घेर लिया। लोग अपने शहरके लिये बडी बहादुरीसे लडे। जब उसके पुराने शत्रु मगोल वहा पहुचे, तो कुचुलुक ने वहासे हटते हुयें बुज़ारको मरवा डाला। मगोल सेनापति जेबे नोयनने शहरमें प्रवेशकर बुज़ारके पुत्र सुकनाग तगिनको गद्दीपर बिठाया और उसकी लडकी उलुकू खातूनको चिंगिसके अन्त पुरके लिये भेज दिया। मगोलोने सुकनाग तगिनसे सधि की। १२२१ ई० मे चीन-सम्राट्का प्रतिनिधि अब भी बुज़ारकी राजधानी अलमालिकमें रहता था, जिसका काम था—(१) जन-गणना करना, (२) लोगोंको सैनिक सेवाके लिये भरती करना, (३) डाकका यातायात ठीक रखना, (४) कर उगाहना, (५) दरबारमें भेंटके पहुचानेका प्रबन्ध करना। इस प्रकार वह सैनिक नेता और कर-उगाहक दोनो ही था। मगोलोको मध्य-एसियाके सभ्य प्रदेशमे पहिले पहल यही अपने दारुखची (राज-प्रतिनिधि) नियुक्त करनेकी अवश्यकता पडी। जब मगोल सेना वहा पहुची, तो काशान और आकसीकत के गुरखानी शासक इस्माईलने नगरके बुजुर्गोंके साथ मगोलोंके पास आत्मसमपण किया।

जेबे नोयनने इसकी सूचना चिंगिसको दी। हुकुम आया, कि इस्माईलको हरावलका पथ-प्रदशक बना कुचुलुकके विरुद्ध आगे बढो। १२१९ ई० में बीस हजार मगोल कुल्जाके रास्ते सप्तनदमें पहुचे। बलाशागुन बिना प्रतिरोधके उनके हाथमे चला गया। उन्होने उसका नाम बदल कर गोबालिग (सुनगर) रख दिया। फिर काशगरमे पहुचकर जेबेने घोषणा की, कि सभी अपने-अपने धमके अनुसार स्वतन्त्रता-पूर्वक पूजा-पाठ कर सकते है। मगोलोने नगरको नही लूटा, केवल कुचुलुकके बारेमे खोज-परताल की। काशगरी लोग मगोलोंके आगमनको अल्लाकी दया कहते थे। कुचुलुक बिना लडे भागा और सिरिकुलमे मारा गया। जेबेको गुरखानकी अपार सपत्ति हाथ लगी। उसने हजार श्वेतमुख घोडे चिंगिसके पास भेजे। जिस शत्रुने वर्षोसे ख्वारेज्मशाहकी नीद हराम कर दी थी, उसे जेबेने इतनी आसानीसे खतम कर दिया। धार्मिक स्वतन्त्रता देकर मगोलोने कुचुलुकके अत्याचारके कारण क्षुब्ध और पीडित मुसलमानोको अपनी ओर कर लिया था। अब मगोलोंके खिलाफ अपने युद्धको ख्वारेज्मशाह धमयुद्ध का नाम नही दे सकता था। मगोलोने तो मुसलमानोको धार्मिक स्वतन्त्रता दी, और ख्वारेज्मशाहने कई मुसलमान दूतोको जानसे मार डाला।

उत्तरापथमें तेरहवी सदीके **प्रथम** पाद मे मगोलोंके रूपमे एक नयी शक्ति आ पहुची, जिसने चीनसे लेकर सिर-दरियाके तट तक एक विशाल साम्राज्य कायम कर दिया।

(२) मगोलोसे झडप—

जैसा कि पहिले कहा, किपचकोंके साथ की लडाईमें मुहम्मद ख्वारेज्मशाह ज्यादा सफल रहा। शिकनाग ख्वारेज्मके राज्यमें मिला लिया गया। जन्दसे उत्तर बढकर मुहम्मदने किरगिज-मरुभूमिके किपचकों पर कई अभियान भेजे। ऐसे ही एक अभियानमें १२१६ ई० में सयोगवश ख्वारेज्मी सेनाकी टक्कर चिंगिसकी सेनाकी एक टुकडीसे हुई। तुर्गई प्रान्तम

ख्वारेज्मशाहने जब १२१५ ई० में आक्रमण किया, तो उसे खबर लगी, कि पराजित मेंगित तक्तू खानके नेतृत्वमें मगोलियासे भागते आ रहे है, जिनका पीछा करते मगोल कछली (किपचक)- भूमिमे आ गये है। यह खबर सुनकर समरकन्दसे बुखारा और जन्द होते मुहम्मदशाहने उधरकी ओर प्रस्थान किया। वहा पहुचने पर पता लगा, कि मेंगित ही नही मगोल भी आ गये है। ख्वारेज्मशाह समरकन्द लौट साठ हजारकी वडी सेना लेकर इरगिज़ नदीके तटपर पहुचा। नदीकी धारमे पिघलती बरफका जोर था, इसलिए उसे कुछ समयके लिये रुक जाना पडा। जब नदी बरफ-मुक्त हो गयी, तो नदी पार मेंगितोंके ऊपर पडकर उसने उन्हें नष्ट कर दिया। फिर कैली और किमाज नदियोंके बीच पहुँचा। एक घायल मुसलमानने बतलाया, कि आज ही मैंगितो और मगोलोकी भयकर लडाई हुई है। मुहम्मदने विजेता मगोलोका पीछा किया और दूसरे दिन सबेरे उन्हें जा पकडा। इस टुकडीका नेता जूजी और दूसरे मगोल सरदार थे। वह ख्वारेज्मशाहसे लडना नही चाहते थे। उन्होंने कहा कि हम केवल मेंगितोंके विरुद्ध भेजे गये है, हमें दूसरे से लडनेका हुक्म नही है। ख्वारेज्मशाहने जवाब दिया—"हम सभी काफिरोको अपना शत्रु समझते है।" उसने मगोलोको लडनेके लिये मजबूर किया। युद्धका कोई फैसला नही हुआ। मुसलमानोंके दक्षिण-पक्षके सेनापति शाहजादा जलालुद्दीनने बडी बहादुरीसे मुसलमानोको हारनेसे बचाया। दूसरे दिन फिर लडनेका निश्चय था, लेकिन उस दिन अधेरेमें ही जलती आग छोडकर मगोल भाग गये। लडाईमें मगोलोने इतनी वीरता दिखाई थी, कि मुहम्मदको उनसे फिर खुले मैदानमे लडनेकी हिम्मत नही हुई।

स्रोत-ग्रन्थ

1 A thousand years of Tatars (Parker)
2 A short History of Chinese Civilisation (Tsui Chi, London 1945)
३ ओचेक इस्तोरिइ सेमिरेच्या (व० वरतोल्द, वेर्नी १८९८)

भाग ८

दक्षिणापथ (८९२-१२२० ई०)

अध्याय १

सामानी (८६२-६६६ ई०)

उद्गम—

अब्बासी राज्यपाल असद अब्दुल्ला-पुत्र कसरी (७२३—७३५—७३७) के शासन-काल में सासानी वीर बहराम चोबीन के वशज सामान ने अपने नगर से वचित किये जाने पर मेव मे जा असद से मदद मागी और उस की सहायता से वह फिर सामान-खुदात (सामान का शासक) वन गया। मुस्लिम शासक के प्रति कृतज्ञता दिखलाते हुए सामान ने अपना जर्थुस्ती धर्म छोड इस्लाम स्वीकार किया और अपने सरक्षक के नाम पर अपने पुत्र का नाम असद रक्खा। असद के चारो पुत्रों ने समरकद मे रफी लैस-पुत्र के विद्रोह को दमन करते समय खलीफा हारून रशीद की वडी सेवा की। इसके लिये खलीफाने खुरासान के राज्यपाल गस्सान अवाद-पुत्र को लिखा, कि इन चारो भाइयो को एक-एक नगर का शासक वना दिया जाय। इस प्रकार ८१७ (२०२ हि०) से असद-पुत्रो में से नूह को समरकन्द, अहमद को फर्गाना, यहिया को शाश-उश्रूसना और इलियास को हिरात का अमीर वना दिया गया। ८२० ई० म गस्सान के उत्तराधिकारी ताहिर ने भी उन्हे अपने पदोपर रहने दिया। यही चारो भाई स्वतत्र सामानी राजवश के सस्थापक है। इस वश मे निम्न अमीर हुये—

१	नस्र अहमद-पुत्र	८७५-९२
२	इस्माइल अहमद-पुत्र	८९३-९०७
३	अहमद इस्माइल-पुत्र	९०७-१४
४	नस्र II अहमद-पुत्र	९१४-४२
५	नूह I नस्र I-पुत्र	९४३-५४
६	अब्दुल् मलिक II नूह-पुत्र	९५४-६१
७	नस्र III अब्दुलमलिक-पुत्र	९६१
८	मसूर I नूह-पुत्र	९६१-७६
९	नूह II मसूर-पुत्र	९७६-९७
१०	मसूर II नूह II-पुत्र	९९७-९९
११	अब्दुल मलिक II नूह II-पुत्र	९९९-
१२	मुन्तसिर नूह II-पुत्र	

१ नस्र[1] (८७५-९२ ई०)

याकूब लैस-पुत्र ने ताहिरी वंश को जिस वक्त समाप्त किया, उस वक्त समरकन्द का अमीर (शासक) नस्र अहमद-पुत्र था। ताहिरियों के पतन के बाद खलीफा मोतमिद (८७०-९२) के भाई मुवफ्फक ने नस्र को सारे अन्तर्वेद का शासक बनाने का नियुक्ति-पत्र (अहद) भेजा। इसके शासनमें वक्षु तट से सुदूर पूर्व तक का देश था। नस्र खुरासानसे कब स्वतंत्र हुआ, इसका पता नही है। ८७४ ई० (२६१ हि०) में नस्र अपने भाई इस्माईल की सहायता से अन्तर्वेद का शासन चलाता रहा। खुतबे मे दोनो भाइयो का नाम था, किन्तु याकूब लैस-पुत्र का नाम नही था। समरकन्द से नस्र ने अपने भाई इस्माईल को बुखारा का अमीर बनाकर भेजा। उस समय राजनीतिक अशान्ति और गुंडागर्दी के कारण बुखारा की बुरी दशा थी। इस्माईल ने अपने को योग्य सेनापति और शासक सिद्ध किया और अपनी न्यायशीलता से वह बहुत जल्दी जनप्रिय हो गया। डाकुओ और गुंडो का उसने बडी निर्दयता के साथ उच्छेद किया, केवल रामातीन और पैकंद के बीच चार हजार बदमाशो को मरवाया। लेकिन बडा भाई कान का कच्चा था। उसे लोगों ने भडका दिया, कि इस्माईल राज्य को अपने हाथ में करना चाहता है। नस्र ने ८८५ ई० में इस्माईल के विरुद्ध चढ़ाई कर दी और मदद के लिये अपने मित्र खुरासान के शासक रफी हरसमा-पुत्र को भी बुला भेजा। नस्र ने बुखारा शहर के अधिक भाग पर अधिकार कर रसद रोक दी। रफी ने आकर वहा की अवस्था देख कर कहा—मैं लडने नहीं बल्कि दोनो भाइयों मे मेल कराने आया हू। उसने (८८६ ई० मे) सुलह करवा दी। इस्हाक को बुखारा का अमीर और इस्माईल को आमिल-खराज (तहसीलदार) बनाया गया।

इस्माईल और इस्हाक दोनो मेरे विरुद्ध मिल गये है, यह सन्देह कर नस्र ने फर्गाना से सेना बुलाकर ८८७ ई० में फिर आक्रमण किया। इस्माईल ने भी ख्वारेज्म में सैनिक तैयारी की। मामूली झडप के बाद ८८८ (२७५ हि० के अन्त) में उसने नस्रको हराकर बंदी बना लिया, पर अपने पराजित भाई के साथ बहुत ही सम्मान-पूर्ण बर्ताव किया और मुक्त करके उसे समरकन्द भेज दिया। तबसे अपनी मृत्यु (२१ अगस्त ८९२ ई०) तक नस्र शान्ति-पूर्वक शासन करता रहा।

२ इस्माईल[2] अहमद-पुत्र (८९२-९०७ ई०)

इस्माईल अहमद-पुत्र ८४९ ई० में फर्गाना में पैदा हुआ था। बडे भाई नस्र ने उसे ८७४ ई० में बुखारा भेजा। ताहिरियों के पतन के बाद चारो ओर अराजकता फैली हुई थी। उस वक्त वहा वह कैसे शान्ति स्थापित करने में सफल हुआ, इसे हम बतला चुके है। ८७४ ई० के आरम्भ में हुसेन ताहिर-पुत्र ने ख्वारेज्म से बुखारा पर चढाई की। पाच दिन के संघर्ष के बाद नागरिको ने कुछ शर्तो पर आत्मसमर्पण किया। हुसेन ने उन्हे तोड दिया, जिसपर फिर विद्रोह हुआ। हुसेन डर के मारे किले में बन्द हो गया और रात के वक्त नगर से वसूल किये हुये दिरहमों

---

[1] Turkistan Down to the Mongol Invasion (w Bartold) pp 129

[2] Turkistan pp 135, 136, Heart of Asia p 74

को लिये बिना ही भाग गया। इस जमा किये हुये धन को विद्रोहियो ने आपस में बाट लिया। कहावत थी, बुखारा के बहुत से परिवार उसी रात की कमाई से धनी बन गये। बुखारा में फिर भी शान्ति स्थापित नही हुई। लोगो ने अबूहब्स-पुत्र फकीर अब्दुल्ला की सलाह से नस्र अहमद-पुत्र से सहायता मागी। उसकी सहायता से इस्माईल ने आकर अमीर हुसैन मुहम्मद-पुत्र ख्वारेज्म के उपद्रव को शान्त किया। इस्माईल अब बुखारा का अमीर (शासक) बना और हुसैन मुहम्मद-पुत्र उसका सहायक। २५ जून ८७४ शुक्रवार को बुखारा मे याकूब लैस-पुत्र की जगह नस्र अहमद-पुत्र के नाम से खुतबा पढा गया। चद ही दिनो बाद इस्माईल ने बुखारा में दाखिल हो शर्तें भग कर खारिजी नेता हुसैन को कैद कर लिया—खारिजी एक असनातनी मुसलिम धार्मिक सप्रदाय था। इस्माईल के और भी दुश्मन थे, खारिजी तो थे ही। उसकी सफलता के कारण उसका भाई नस्र भी सदेह करने लगा। हुसैन ताहिरपुत्र भी पड्यत्र कर रहा था, बुखारा के कुछ धनी मानी तथा गुडे भी बिगडे हुए थे। किसानो का जिस तरह शोषण हो रहा था, उसके कारण बहुत से किसान डाकू बनने के लिय मजबूर हो गये और केवल पैकन्द और रामातान के बीच उनकी सख्या चार हजार थी, किन्तु जमीन के मालिक और उच्चवग इस्माईल के साथ था, जिन्ही के बलपर इस्माईल ने शान्तिव्यवस्था स्थापित की। सबसे अधिक प्रभावशाली बुखारा-खुदात अबू-मुहम्मद और धनी सेठ अबू-हाशिम यस्सारी थे। इन्हे इस्माईल ने अपनी ओर से दूत बनाकर समरकन्द भेजा और चुपके से अपने भाई नस्र को लिख दिया, कि इन्हें जेल में डाल दे। पीछे छुडवा मगाकर उनपर अपनी कृपा प्रकट करते रुपया पैसा दे अपनी ओर करके भाई के खिलाफ कर दिया। इस्माईल ने खतरा पैदा करा दिया था, इसलिये, जैसा कि पहिले कहा, ८८८ ई० में भाई को उससे लडने के लिये मजबूर होना पडा। पैकन्द के नगर वासियो ने अमीर नस्र का स्वागत किया।

नस्र के मरने पर उसका अनुज इस्माईल अन्तर्वेद और ख्वारेज्म का स्वामी बना, किन्तु वह राजधानी को बुखारा से हटाकर समरकन्द नही ले गया। अब्बासी खलीफा अब नाममात्र के खलीफा थे। उनका काम था भेंट और तोहफे लेकर पदविया और दर्जे प्रदान करना। खलीफा मोतजिद (८९२-९०२) ने इस्माईल के लिये नियुक्ति-पत्र भेजा। इस्माईल अपने को कट्टर मुसलमान साबित करना चाहता था, इसलिये वह उत्तर के काफिरो के खिलाफ धमयुद्ध (गजा) छेडकर गाजी बने बिना कैसे रह सकता था? उसने सिर-दरिया के उत्तर ताराज (औलिया-आता से प्राय ३० मील दक्षिण) पर आक्रमण किया। वहा के तुर्क बौद्धो और ईसाइयो ने काफी मुकाबिला किया, किन्तु भीतर फूट के कारण तुर्क इस्माईल की सेना का मुकाबिला नही कर सके। शासक और देहकानो (ग्रामपतियों) ने इस्लाम स्वीकार किया। ताराज नगर के फाटक के खुलते ही इस्माईल भीतर घुसकर तुरन्त प्रधान गिरजे में पहुचा और उसे मस्जिद बना खलीफा के नाम से वहा नमाज अदा की। लूट की अपार सपत्ति के साथ वह बुखारा लौटा। यह कह आये है, कि सफ्फारी अमीर अम्रू लैस-पुत्र की आखें अन्तर्वेद पर गडी थीं। ९०० (२८८ हि०) में इस्माईल ने अम्रू के खिलाफ अभियान कर वक्षु पार हो बलख को घेर लिया। नगर के साथ-साथ अम्रू भी उसके हाथ में आया। अम्रू को इस्माईल ने खलीफा के पास बगदाद भेज दिया। खुश होकर खलीफा ने इस्माईल सामानी को खुरासान, तुर्किस्तान, अन्तर्वेद, सिन्ध-हिन्द और जुरजान का वली (क्षत्रप) बना दिया। इस्माईल का शासन अपने शासित देशो के लिये

बडा ही शान्तिपूर्ण था। सिन्ध प्राय दो सदियों पहिले मुसलमानो के हाथ में चला गया था, इस्माईल अब उसका (भारत के एक भाग का) भी स्वामी था। उसका शासन अच्छा था। उसने हर नगर के पृथक् पृथक अमीर (शासक) नियुक्त किये थे। इस शान्ति से लाभ उठा उसने गाजी का कर्तव्य पालन करते उत्तर के काफिर तुर्कों पर आक्रमण करना जारी रखा। अपने अन्तिम अभियान मे वह हज़रत तुर्किस्तान नगर पर चढ दौडा और तुर्कों को हराकर उनको वहा से खदेड दिया तथा लूट की अपार सपत्ति के साथ वह बुखारा लौटा। उसके शासन के अन्तिम चार सालो में बुखारा नगर शान्तिपूर्ण ही नही बल्कि बहुत ही वैभवशाली था। नगर की सपत्ति को बढ़ाने तथा उसे अनेक इमारतो से अलकृत करने मे इस्माईल का बडा हाथ था। यद्यपि बुखारा ने इससे पहिले ही एक मुसलिम-केन्द्र का रूप ले लिया था, लेकिन बुखारा को बुखारा-शरीफ बनाकर उसे इस्लामिक सस्कृति और विद्या का महान् केन्द्र बनाना बहुत कुछ इस्माईल का काम था। अब भी इस्माईल की बनवाई कुछ इमारते वहा मौजूद है। बुखारा ने पूरबका बगदाद बन अनेक शताब्दियो के लिये मध्यएसिया ही नही सारे पूर्वी इस्लामिक जगत की काशी का रूप लिया। बडे से बडे धर्मशास्त्री, कवि और दार्शनिक यहा पैदा हुए। यहा के इतिहासकारो ने अपने और अपने से पहिले के इतिहास पर सुदर ग्रथ लिखे। बुखारा उस समय एक ऐसे राज्य की राजधानी थी, जिसमें मेव, नेशापोर, रे (तेहरान), आमूल, हिरात, बलख और मुल्तान जैसे महान् नगर थे। इस्माईल ९०७ ई० मे मरा। उसके बाद उसका पुत्र अहमद गद्दी पर बैठा।

३ अहमद इस्माईल-पुत्र (९०७-९१४ ई०)

अहमद को अपने बाप का समृद्ध और सुशासित राज्य मिला, लेकिन इसी समय ईरान के पश्चिमी भाग पर दैलमी वश का शासन स्थापित हुआ, जो धीरे धीरे सारे ईरान पर अधिकार करने की कोशिश कर रहा था, जिसके कारण सामानियो के पश्चिमी प्रदेशो को खतरा पैदा हो गया। सामानी राज्य मे उस समय मत्रियो का अधिक जोर था, जिनमें अधिकाश तुर्क थे, सेना के अधिकारियो में भी वही अधिक थे। अहमद ने अपने को अधिक पक्का मुसलमान साबित करने के लिये बीच में लोक-भाषा (पारसी)—जो राजभाषा बन गई थी, को हटाकर फिर अरबी को राजभाषा बना दिया। उसके सात वर्ष के शासन में सामानी वश का प्रभुत्व बढ़ने की जगह

ग्रथ अरबी भाषा मे अनुवादित हुए, यह हम कह आये है। अब इस्लामिक जगत ने स्वय-दार्शनिक पैदा करने शुरू किये। फाराबी उनमे प्रधान था। किन्दी बगदादी केन्द्र का स्वतत्र दार्शनिक था, तो फाराबी और बू-अली सेना सामानी काल की देन है। फाराबी का असली नाम था अबू-नस्र मुहम्मद-पुत्र तर्खन-पुत्र उजलक-पुत्र अल्फाराबी (फाराब-निवासी)। फाराबी का जन्म फाराब जिले के वासिज नामक स्थान में हुआ था। वासिज में एक छोटा सा किला था, जिसका किलेदार अबूनस्र का बाप मुहम्मद था। बाप, दादो के नाम से मालूम होता है, कि फाराबी तुर्क था। यह कहने की अवश्यकता नही, कि अभी अरबो तथा सामानियो के पूरा प्रयत्न करने पर भी सारा मध्यएसिया मुसलमान नही हुआ था। बौद्ध, मानी या नेस्तोरी विचारो का भी वहा प्रभाव था। १५० वर्षो से इस्लाम मध्यएसिया पर पूर्ण विजय प्राप्त करने की कोशिश कर रहा था, लेकिन सिर-दरिया से थोडे ही दूर पर अवस्थित ताराज इस्माईल के विजय के पहिले इस्लाम से अछूता था। फाराबी के स्वतत्र विचार उसकी जन्मभूमि के वातावरण में मौजूद थे। सभवत फाराबी की शिक्षा अपनी जन्मभूमि के बुखारा या समरकन्द जैसे नगरो मे हुई थी। उसने अपनी शिक्षा को तब तक समाप्त नही समझा, जब तक कि बगदाद के एक ईसाई विद्वान् योहन हैलान-पुत्र के चरणो में नही बैठा। फाराबी ने दर्शन के अतिरिक्त साहित्य, गणित, ज्योतिष और वैद्यक का भी अध्ययन किया था।

दर्शन पर तो उसने अपनी कलम चलाई ही, सगीत पर भी उसने एक पुस्तक लिखी। कहा जाता है, फाराबी सत्तर भाषाओ का पडित था। तुर्की तो उसकी मातृ-भाषा ही थी। फारसी उसकी जन्मभूमि की भाषा थी। अरबी इस्लाम की जबान ठहरी। इनके अतिरिक्त सुरियानी, इब्रानी, यूनानी आदि भाषाओ से भी उसे काम पडा था। शिक्षा समाप्त करने के बाद भी फाराबी बहुत समय तक बगदाद मे रहा। उसके बाद वह हलब (अलप्पो) के सामन्त सैफुद्दौला के विशेष प्रेम से वहा रहने लगा। फाराबी की रहन-सहन बौद्ध भिक्षुओ की सी थी। वह शान्त और एकान्त जीवन को बहुत पसन्द करता था। अब इस्लाम में सूफी अपने योग-दर्शन-प्रेम और स्वतत्र-विचारो के लिये मशहूर होने लगे थे। फाराबी सूफियो की पोशाक में रहता। उसपर यूनानी सोफिस्तो और बौद्ध भिक्षुओ के जीवन का बहुत अधिक प्रभाव था। दमिश्क गया था, वही ८० साल की उम्र में दिसम्बर ९५० ई० में उसका देहान्त हुआ। हलब के सामन्त सैफुद्दौला ने सूफी पोशाक पहनकर फाराबी की कब्र पर फातिहा पढा। फाराबी और बू-अली सेना जैसे विचारक किसी भी देश के गौरव है। जन्मभूमि (अन्तर्वेद) ने उनके जीवन मे उनका उतना सम्मान नही किया, किन्तु सोवियत उजबेकिस्तान और ताजकिस्तान अपने इन महान रत्नो की अब कदर कर रहे है। उनके ग्रथो की खोज हो रही है, उन पर विद्वान् डाक्टर-उपाधि के लिये निबध लिख रहे है। उनकी ग्रन्थावलिया छप रही है। कवि उनकी गौरव-गाथाओ पर काव्य लिख रहे है।

यह हमें मालूम है, कि यूरोप ने यूनान के महान् दार्शनिको—सुकरात, प्लातोन, अरस्तातिल—के साथ सबध स्थापित करने और प्रेरणा लेने में अरबी विद्वानो के उपकार को मुक्त कठ से स्वीकार किया है। यदि अरब अनुवादको और विचारको ने अपनी कलम न उठाई होती, तो शायद हम यूनान के गभीर दर्शन को आज पा भी नही सकते। यूरोप के पुनर्जागरण में यूनान के प्राचीन दार्शनिको का बहुत बडा हाथ है। फाराबी अरस्तू के ग्रथो का महान भाष्यकार

वडा ही शान्तिपूर्ण था। सिन्ध प्राय दो सदियो पहिले मुसलमानो के हाथ में चला गया था, इस्माईल अव उसका (भारत के एक भाग का) भी स्वामी था। उसका शासन अच्छा था। उसने हर नगर के पृथक् पृथक अमीर (शासक) नियुक्त किये थे। इस शान्ति से लाभ उठा उसने गाजी का कतव्य पालन करते उत्तर के काफिर तुर्कों पर आक्रमण करना जारी रखा। अपने अन्तिम अभियान में वह हजरत तुर्किस्तान नगर पर चढ दौडा और तुर्को को हराकर उनको वहा से खदेड दिया तथा लूट की अपार सपत्ति के साथ वह वुखारा लौटा। उसके शासन के अन्तिम चार सालो में वुखारा नगर शान्तिपूण ही नही वल्कि वहुत ही वैभवशाली था। नगर की सपत्ति को वढाने तया उसे अनेक इमारतो से अलकृत करने मे इस्माईल का वडा हाथ था। यद्यपि वुखारा ने इससे पहिले ही एक मुसलिम-केन्द्र का रूप ले लिया था, लेकिन वुखारा को वुखारा-शरीफ वनाकर उसे इस्लामिक सस्कृति और विद्या का महान् केन्द्र वनाना वहुत कुछ इस्माईल का काम था। अव भी इस्माईल की वनवाई कुछ इमारते वहा मौजूद है। वुखारा ने पूरवका वगदाद वन अनेक शताब्दियों के लिये मध्यएसिया ही नही सारे पूर्वी इस्लामिक जगत की काशी का रूप लिया। वडे से वडे घमशास्त्री, कवि और दार्शनिक यहा पैदा हुए। यहा के इतिहासकारो ने अपने और अपने से पहिले के इतिहास पर सुदर ग्रथ लिखे। वुखारा उस समय एक ऐसे राज्य की राजधानी थी, जिसमें मेव, नेशापोर, रे (तेहरान), आमूल, हिरात, वलख और मुल्तान जैसे महान् नगर थे। इस्माईल ९०७ ई० में मरा। उसके वाद उसका पुत्र अहमद गद्दी पर वैठा।

३ अहमद इस्माईल-पुत्र (९०७-९१४ ई०)

अहमद को अपने वाप का समृद्ध और सुशासित राज्य मिला, लेकिन इसी समय ईरान के पश्चिमी भाग पर दैलमी वश का शासन स्थापित हुआ, जो धीरे धीरे सारे ईरान पर अधिकार करने की कोशिश कर रहा था, जिसके कारण सामानियो के पश्चिमी प्रदेशो को खतरा पदा हो गया। सामानी राज्य में उस समय मत्रियो का अधिक जोर था, जिनमें अधिकाश तुर्क थे, सेना के अधिकारियो में भी वही अधिक थे। अहमद ने अपने को अधिक पक्का मुसलमान सावित करने के लिये वीच में लोक-भाषा (पारसी)—जो राजभाषा वन गई थी, को हटाकर फिर अरवी को राजभाषा वना दिया। उसके सात वष के शासन में सामानी वश का प्रभुत्व वढने की जगह घटता ही गया और वह अपने आस-पास के लोगो में भी इतना अप्रिय हो गया, कि २३ जनवरी ९१४ ई०को अपने ही गुलामों ने उसे मार डाला। इसके समय में सवसे वडा इस्लामिक धर्मशास्त्री (फकीह) अव्दुल्ला वुखारी ८०९-९१६ ई० में मौजूद था, जिसकी हदीस जामे-अस्-सहीह (सही वुखारी) आज भी मुसलमानो में वहुत प्रामाणिक मानी जाती है। इसमें अव्दुल्ला ने १६ साल के घोर परिश्रम के वाद पैगम्वर (मुहम्मद) के वचनो और आचारो को ६ लाख परम्पराओ द्वारा सगृहीत किया। फारसी का प्रथम और महान् कवि अवुलहसन रूदकी इसी समय हुआ था, जिसकी सरस कविताए आज भी मौजूद हैं। इस्लामिक जगत के महान् दार्शनिक फारावी का भी यही काल है।

फारावी[1] (८७०-९५० ई०)—वगदादी काल में विदेशी भाषाओ से वहुत से दशन

---

[1]दर्शनदिग्दर्शन (राहुल साकृत्यायन) पृ० ११३-१२८

ग्रथ अरवी भाषा मे अनुवादित हुए, यह हम कह आये है। अव इस्लामिक जगत ने स्वय-दार्शनिक पैदा करने शुरू किये। फारावी उनमें प्रधान था। किन्दी वगदादी केन्द्र का स्वतत्र दार्शनिक था, तो फारावी और बू-अली सेना सामानी काल की देन है। फारावी का असली नाम था अबू-नस्र मुहम्मद-पुत्र तखन-पुत्र उजलक-पुत्र अल्फारावी (फाराव-निवासी)। फारावी का जन्म फाराव जिले के वासिज्र नामक स्थान में हुआ था। वासिज्र में एक छोटा सा किला था, जिसका किलेदार अबूनस्र का वाप मुहम्मद था। वाप, दादो के नाम से मालूम होता है, कि फारावी तुर्क था। यह कहने की अवश्यकता नही, कि अभी अरवो तथा सामानियो के पूरा प्रयत्न करने पर भी सारा मध्यएसिया मुसलमान नही हुआ था। वौद्ध, मानी या नेस्तोरी विचारो का भी वहा प्रभाव था। १५० वर्षों से इस्लाम मध्यएसिया पर पूण विजय प्राप्त करने की कोशिश कर रहा था, लेकिन सिर-दरिया से थोडे ही दूर पर अवस्थित ताराज इस्माईल के विजय के पहिले इस्लाम से अछूता था। फारावी के स्वतत्र विचार उसकी जन्मभूमि के वातावरण में मौजूद थे। सभवत फारावी की शिक्षा अपनी जन्मभूमि के वुखारा या समरकन्द जैसे नगरो मे हुई थी। उसने अपनी शिक्षा को तव तक समाप्त नही समझा, जव तक कि बगदाद के एक ईसाई विद्वान् योहन हैलान-पुत्र के चरणो में नही वैठा। फारावी ने दशन के अतिरिक्त साहित्य, गणित, ज्योतिष और वैद्यक का भी अध्ययन किया था।

दर्शन पर तो उसने अपनी कलम चलाई ही, सगीत पर भी उसने एक पुस्तक लिखी। कहा जाता है, फारावी सत्तर भाषाओ का पडित था। तुर्की तो उसकी मातृ-भाषा ही थी। फारसी उसकी जन्मभूमि की भाषा थी। अरवी इस्लाम की जवान ठहरी। इनके अतिरिक्त सुरियानी, इब्रानी, यूनानी आदि भाषाओ से भी उसे काम पडा था। शिक्षा समाप्त करने के वाद भी फारावी वहुत समय तक वगदाद में रहा। उसके वाद वह हलव (अलप्पो) के सामन्त सैफुद्दौला के विशेष प्रेम से वहा रहने लगा। फारावी की रहन-सहन वौद्ध भिक्षुओ की सी थी। वह शान्त और एकान्त जीवन को वहुत पसन्द करता था। अव इस्लाम में सूफी अपने योग-दर्शन-प्रेम और स्वतत्र-विचारों के लिये मशहूर होने लगे थे। फारावी सूफियो की पोशाक से रहता। उसपर यूनानी सोफिस्तो और बौद्ध भिक्षुओ के जीवन का वहुत अधिक प्रभाव था। दमिश्क गया था, वही ८० साल की उम्र मे दिसम्वर ९५० ई० में उसका देहान्त हुआ। हलव के सामन्त सैफुद्दौला ने सूफी पोशाक पहनकर फारावी की कब्र पर फातिहा पढा। फारावी और वू-अली सेना जैसे विचारक किसी भी देश के गौरव है। जन्मभूमि (अन्तर्वेद) ने उनके जीवन में उनका उतना सम्मान नही किया, किन्तु सोवियत उजवेकिस्तान और ताजकिस्तान अपने इन महान रत्नो की अव कदर कर रहे है। उनके ग्रथो की खोज हो रही है, उन पर विद्वान् डाक्टर-उपाधि के लिये निवध लिख रहे ह। उनकी ग्रन्थावलिया छप रही है। कवि उनकी गौरव-गाथाओ पर काव्य लिख रहे है।

यह हमें मालूम है, कि यूरोप ने यूनान के महान् दार्शनिको—सुकरात, प्लातोन, अरस्तातिल—के साथ सवध स्थापित करने और प्रेरणा लेने में अरवी विद्वानो के उपकार को मुक्त कठ से स्वीकार किया है। यदि अरव अनुवादको और विचारको ने अपनी कलम न उठाई होती, तो शायद हम यूनान के गभीर दर्शन को आज पा भी नही सकते। यूरोप के पुनर्जागरण में यूनान के प्राचीन दार्शनिको का वहुत वडा हाथ है। फारावी अरस्तू के ग्रथो का महान भाष्यकार

है। उसके भाष्य और ग्रथ इतने महत्वपूर्ण समझे गये, कि विद्वानो ने उसे द्वितीय अरस्तावित और "द्वितीय आचार्य" (हकीम सानी) का नाम दिया। अरस्तू को पुनरुज्जीवित करने में फारावी की सेवायें अमूल्य हैं। फारावी ने अपनी खोजो से अरस्तू के ग्रथो की जो सख्या और क्रम निश्चित किया था, उसे आज भी वैसे ही माना जाता है—फरावी ने अरस्तू के नाम पर कुछ दूसरी पुस्तक भी शामिल कर दी। उसने अरस्तू के तर्कशास्त्र के ८, विज्ञान के ८, अतिभौतिक, आचार, राजनीति आदि विषयो पर भाष्य और ग्रथ लिखे हैं। दूसरे विषयो की ओर भी उसकी रुचि थी, किन्तु फरावी ने अपना ध्यान तर्कशास्त्र, अतिभौतिक शास्त्र और भौतिक शास्त्र पर अधिक दिया।

४ नस्र' (II) अहमद-पुत्र (९१४-४२ ई०)

नस्र के समय पश्चिम म सामानियो के प्रतिद्वन्द्वी दैलमी (वुवायही) थे। दोनो ईरानी वशो का परस्पर वैवाहिक सबध भी था। दोनो वशो की तुलनात्मक वशावलि निम्न प्रकार है—

सामानी		बुवायही	
४ नस्र II	९१४-४२	१ अली बुवायही-पुत्र	-९३२
५ नूह I	९४३-५४	२ अहमद मुईउद्दौला	९३२-९७
६ अब्दुल-मलिक I	९५४-६१		
७ नस्र III	९६१		
८ मसूर I	९६१-७६	३ आजादुद्दौला (एकनु० १)	९६७-
९ नूह II	९७६-९७		
१० मसूर II	९९७-९९	४ मज्दुद्दौला	

५ नूह I नस्र II-पुत्र (९४३ ५४ ई०)

नूह के शासन-काल की कोई उल्लेखनीय घटना नही है।

६ अब्दुलमलिक नूह-पुत्र (९५४-६१)

अब्दुल-मलिक के समय की एक घटना स्मरणीय है। सामानियो के सैनिक और असैनिक बडे-बडे पदो पर तुर्को की काफी सख्या थी। इन्ही में एक तुर्क अल्प-तगिन (सिंह कुमार) प्रतिहारो का अफसर था। दिसम्बर ९५६ ई० में इसने एक विशिष्ट सामानी अधिकारी बकर मलिक-पुत्र को राजद्वार पर मार डाला। सदेह किया जाता है, कि इस हत्या में अमीर (अब्दुल मलिक) की भी सम्मति थी। बकर का उत्तराधिकारी अल्पतगिन का पहिलेका सहायक-सेनापति अब्दुल हसन महमूद इबराहीम-पुत्र सिमजूरी था। उसने ९२७ ई० में दरबार में घोषणा-पत्र और झडे को पहुँचाया। अल्पतगिन ने खुरासान के अबू मन्सूर अब्दुल्रज्जाक-पुत्र को शासक के तौर पर तूसमें रख छोडा था। सामानी दरबार ने अबू

'Heart of Asia p.74, मुदी अत्देला नुमिज्मातिकी, लेनिनग्राद १०४५, पृ० ८८-८९

मन्सूर को प्रोत्साहित करते हुए अल्पतगिन का स्थान दे दिया। इस पर अल्पतगिन गजना (गजनी) की ओर चला गया, जहा ९६२ ई० मे उसने गजनवी राजवश की स्थापना की। अल्पतगिन ९६३ ई० में मरा। उसके बाद उसका उत्तराधिकारी उसका पुत्र इसहाक हुआ, जिसे गजना के पुराने राजा ने ९६४ ई० में हरा दिया। जिस पर सामानी (मन्सूर I) मदद से वह ९६५ ई० में फिर गजनी लौट सका। इस्माईलके वक्त मे अब भी सिर-दरिया के उत्तर काफिर तुर्कों की भूमि थी। धर्म-युद्धो में एक काफिर तुर्क सुबक तगिन बन्दी बनाया गया। नेशापोर (खुरासान) मे किसी दास-वणिक से उसे सेनापति अल्पतगिन ने खरीद लिया। सुबुक तगिन के गुणो को उसके मालिक ने पहिचाना लिया, और उसको आगे बढ़ने का मौका मिला। जब अल्प-तगिन सामानियो से नाराज़ होकर गजना चला गया, तो सुबुक तगिन भी उसके साथ था। सुबुक तगिन ने अल्प तगिन और उसके पुत्र की बडी सहायता की और अन्तिम उत्तराधिकारीने सुबुकतगिन के लिये अपना सिहासन छोड दिया। इस प्रकार २० अप्रैल ९५७ ई० को सुबुक तगिन सिहासन पर बैठा। उसके बाद उसने अफगानिस्तान और भारत के विजयो से बडी ख्याति प्राप्त की और अन्त में सामानी वश के उच्छेद में उसने और उसके पुत्र महमूद गजनवी ने खास तौर से भाग लिया।

८ मन्सूर I नूह-पुत्र (९६१-७६ ई०)

अब्दुल मलिक के बाद उसका पुत्र नस्र III थोडे ही दिनो तक शासन कर सका। फिर अब्दुलमलिक का भाई मसूर I सामानी शासक हुआ। इसने दैलमी राजा रुकनुद्दौला (९६४-७५) की अपोती तथा जादुद्दौला की लडकी से ९७१ ई० में शादी की। अल्प तगिन ने मसूर को अमीर मानने से इन्कार कर दिया। उस समय वह खुरासान (नेशापोर) का राज्यपाल था। झगडे का फैसला हथियार से ही हो सकता था। बलख के युद्ध में अल्प तगिन असफलहो गजना-की ओर चला गया और वहा अपने को मजबूत करके मसूर के आक्रमणो का उसने जवाब दिया। अल्प-तगिन और मसूर की मृत्यु एक ही साल हुई।

९ नूह II मन्सूर-पुत्र (९७६-९७ ई०)

नूह के गद्दी पर बैठने के समय गजना में सुबुकतगिन ने अपना शासन अभी स्थापित नही किया था, वह अल्प तगिन के उत्तराधिकारी का समर्थक था। उसने वक्षु पार कर सामानियो के राज्यपर आक्रमण किया। किश के पास नूह से भेंट हुई। सुबुक तगिन सामानियो से स्वतत्र नही होना चाहता था, उसने राजभक्ति की शपथ ली। उसकी पहिले की सेवाओ के लिये तथा ख्वारेज़्मियो से मनमुटाव होने के कारण नूह ने नसा और अबीवर्द सुबुकत-गिन को देने के लिये कहा। यह दोनो प्रदेश अबूअली के थे। उस ने नसा दे दिया, लेकिन अबीवर्द से इन्कार किया, इसके कारण दोनों ख्वारेज़्मियो (अबू-अब्दुल्ला और गूरगजी अबूअली) मे झगडा हो गया। इसके लिये नूह ने अबूअली पर ९९८ ई० में आक्रमण करके पूरी विजय प्राप्त की। सुबुक तगिन ने इसमें नूह की सहायता की, इसके लिये सामानी दरबार ने "नासिरुद्दीनु-द्दौला", की सुबुकतगिन को और उसके पुत्र अबुल्कासिम महमूद को "सैफुद्दौला" (राज्य खड्ग) की पदवी प्रदान की। नूह ने अबूअली की जगह महमूद गजनवी को

खुरासान का राज्यपाल बनाकर नेशापोर भेजा। १९ सितम्बर ९९६ ई० में अबूअली को गूरगजी अमीर मामूनने हराकर वन्दी बनाया और अब अबूअली अब्दुल्ला की जगह मामून स्वय ख्वारेज्मशाह बन गया। अमीर महमूद ने काराखानी फायक को पकडकर बन्दीखाने में डाल उसके राज्य को छे लिया। बुखारा सरकार और अबू अली में उस समय झगडा छिडा हुआ था, मामून ने बीच में पडकर समझौता कर दिया।

अब दक्षिण मे सामानियो के सामन्त गजनवी एक बडी शक्ति के रूप में खडे हो रहे थे। इसी समय उत्तर के घुमन्तू कराखानियो ने भी हमला कर दिया। ९९६ ई०में कराखानियो के जबदस्त हमलेके कारण नूह के हाथ मे अब अन्तर्वेद का एक छोटा सा भाग रह गया, इसलिये वह अकेला दुश्मनो का सामना नही कर सकता था। उसके बुलाने पर सुबुक तगिन एक बडी सेनासे साथ आया, जिसके साथ गूजगान और खुत्तलके बडे अमीर भी थे। सुबुकतगिनने नूह को किश (शहरसब्ज) मे आकर मिलने के लिये कहा, लेकिन वजीर अब्दुल्ला उज़ैर-पुत्र ने इसमें हतक होने की बात कहकर नूह से इन्कार करा दिया। सुबुकतगिन ने नूह की गोशमाली के लिये अपने दानो बेटो महमूद और बुगराचुक को २० हजार सेना देकर बुखारा भेजा। नूह का दिमाग ठडा हुआ और उसने सुबुकतगिन की सारी बातें मान ली। अब्दुल्ला को पदच्युत कर उसे सुबुक तगिन के हाथमें दे दिया। सुबुक तगिनने अपने आदमी अबूनस्र अहमद मुहम्मद पुत्र अबूजैद-पुत्रको सामानी वजीर बनाया। मागने पर नूह ने अबूअली, और उसके हाजिब तथा वजीरको सुबुकतगिन के हाथ में दे दिया, जिन्हे उसने गर्देज के किले में कैद कर दिया। इसके बाद सुबुकतगिन ने कराखानियो से लडाई न कर समझौता कर कतवान की मरुभूमि को सामानी और कराखानी सीमा मान ली, जिससे सारी सिर-उपत्यका कराखानियो के हाथ में रही और जैसा कि पहिले बतलाया, उनकी बात मानकर फायक को समरकन्द का गवर्नर नियुक्त किया गया। वक्षु के दक्षिण का स्वामी अब सुबुकतगिन था, खुरासान भी सामानियो के हाथ से निकल गया था। २३ जुलाई ९९७ ई० को नूह II की मृत्यु हुई।

बू-अली सीना (९८०-१०३७ ई०)

यद्यपि बू-अली सीना का दार्शनिक जीवन कुछ समय बाद शुरू होता है, किन्तु इस्लामी जगत के इस महान् दार्शनिक के निर्माण में सामानी शासन का काफी हाथ है। बूअली सीना के बारे में हम कह सकते हैं, कि उसके रूप मे इस्लामिक दर्शन उन्नति की पराकाष्ठा पर पहुचा। बू-अली सीना, दार्शनिक मसकविया (मृ० १०३० ई०) महाकवि फिरदौसी (९४०-१०२० ई०) और महान् पडित और पर्यटक अल्बेरुनी (९७३-१०४८ ई०)का समकालीन था। मसकवियासे सीना की भेट हुई थी और अल्बेरुनी से उसका पत्र-व्यवहार हुआ था। इस का पूरा नाम अबू-अली अल्-हुसैन यदन् अब्दुल्ला इब्न सीना था। इसका जन्म ९८० ई० में बुखारा के पास अफशान में हुआ था। सीना के परिवार के लोग पीढियो से सरकारी कर्मचारी होते आये थे। उसने प्राथमिक शिक्षा घर पर पाई। देशभाई फाराबी पहिले दार्शनिक हो चुका था। दोनो की जन्मभूमिया आधुनिक उज्बेक सोवियत प्रजातन्त्र में थीं। सीना के परिवार में स्वतन्त्र विचारो का वातावरण था। उसने स्वय लिखा है कि मेरे बचपन में मेरे बाप और चचा यूनानी नफ्स (विज्ञान) के सिद्धान्त पर खारिजिया (बातनिया) के मत से

बहस किया करते थे। खारजियो का बुखारा मे कितना ज़ोर था और इस्माईल सामानी को उसके दबाने में कितनी मुश्किल पडी थी, इसे हम वतला चुके है। प्राथमिक शिक्षा समाप्त कर बू-अली सीना बुखारा में पढने आया। वहा उसने दर्शन और वैद्यक का विशेष तौर से अध्ययन किया। अभी वह १७ वर्ष का तरुण था, इसी समय उसने नूह II (मसूर-पुत्र) की चिकित्सा करके रोग-मुक्त किया। इस सफलता से उसे सबसे ज्यादा फायदा यह हुआ, कि नूह के पुस्तकालय का दरवाजा उसके लिये खुल गया। पुस्तकालय को देखकर सीना के मन मे क्या भाव पैदा हुये यह उसके निम्न वचन से मालूम होता है—"मै एक इमारत में घुसा, जिसमे वहुत से कमरे थे। हरेक कमरे में पाती से पुस्तकें एक के ऊपर एक रखी हुई थी। एक कमरे में अरवी कितावे, और काव्य ग्रथ थ, दूसरे कमरे में कानून (फिका) की पुस्तके थी, इत्यादि। हरेक कमरे में एक-एक विज्ञान से सबध रखनेवाली पुस्तकें थी। मैने पुराने ग्रथकारो की पुस्तको की एक सूची पढ़ी और अपनी अपेक्षित पुस्तक मागी। मैने वहा ऐसी पुस्तकें देखी, जिनका नाम भी वहुत से लोगो को मालूम नही था। पुस्तको का ऐसा सग्रह उससे पहिले और वाद में मैने कभी नही देखा। मने उन्हें पढकर फायदा उठाया और प्रत्येक ग्रथकार और उसके विज्ञान के सापेक्ष महत्व को समझा।" पीछे यह अफवाह फैलाई गई कि पुस्तको को पढकर सीनाने आग लगादी, जिसमें कि वह ज्ञान दूसरे के पास न जाये। लेकिन यह विश्वास करनेकी बात नही है। सीना इतना हृदय-हीन नही हो सकता था,और न सामानी अमीर नूह इसकी इजाजत दे सकता था। शताब्दियोंसे मध्यएसिया की पुस्तक जहा-तहा विखरती तथा नष्ट होती रही। १९१७ की बोलशेविक क्रान्तिसे पहले कुछ छोटे-मोटे सग्रह जहा-तहा थे। ताशकन्दके पुस्तकालय मे ५०० हस्तलिखित ग्रन्थ थे। आज वहा ५० हजार से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थ सगृहीत होगये ह, जिनके सूचीपत्रोको कई जिल्दो मे छापा गया है और वहा के वहुमूल्य हस्तलेखोको प्रकाशित करने का काम भी शुरू हो गया ह।

सीनाका तरुणाईका सरक्षक नूह (II) २३ जुलाई ९९७ ई० को मर गया। सामानी राज्य क्षीण होते होते कुछ ही समय बाद बुखारा भी कराखानियोंके हाथमे चला गया। इन घुमन्तू तुर्कोंके शासनमें सीनाको क्या प्रोत्साहन मिल सकता था? सीनाका स्वभाव ऐसा था, कि वह दरबारी नही हो सकता था। उसने अपने उजडे हुए दयारको छोड भिन्न-भिन्न दरबारोकी खाक छाननी शुरू की। कही वह छोटा-मोटा अफसर वनाया जाता, कही अध्यापक और कही लेखक। अन्तमें जगह-जगह भटकते वह पश्चिमी ईरानमें हमदानके शासक शम्शुद्दौलाका वजीर वना। शम्शुद्दौलाके मरनेके वाद उसके पुत्रने सीनाको कुछ महीनोंके लिये जेलमें डाल दिया। जेलसे छूटनेके बाद अस्फहानके शासक अलाउद्दौलाके दरवारमें पहुचा। अलाउद्दौलाने जब हमदानको जीत लिया, तो अबू-सीना फिर वहा लौट गया। यही ५७ वर्षकी उम्रमें १०३७ ई० में सीनाका देहान्त हुआ। हमदानमें आज भी उसकी समाधि मौजूद है। यह स्मरण रखनेकी वात है, कि हमदान इखवतनके नामसे प्रथम ईरानी राजवश (मद्रवश) की प्रथम राजधानी रहा। सीनाने यूनानी दर्शनपर भाष्य और विवरण नही लिखे। उसका कहना था—भाष्य और विवरण तो ढेरके ढेर मौजूद है। उनपर विचार कर स्वतत्र निश्चय पर पहुचनेकी अवश्यकता है। उसने अपने निश्चयोको अपनी पुस्तको "शफा" (चिकित्सा), "इशारात" (सकेत) और "नजात" (मुक्ति) में लिखा। १७ वर्षसे ५७ वर्षकी उमर तकके ४० वर्षोंकी एक एक घडीका उसने पूरा उपयोग किया। दिनमें सरकारी काम करता या विद्यार्थियोको

पढाता, शामको मित्र-गोष्ठी या प्रेमाभिनयमें बिताता, किन्तु रातको निद्रा न आने देनेके लिये सामने मदिराका प्याला रख हाथमें कलम ले सारी रात लिखनेमें बिता देता। सीनाका पद्य-रचना पर इतना अधिकार था, कि उसने साइस, वैद्यक और तर्ककी पुस्तकोको भी पद्यमें लिखा है। फारसी और अरबी दोनो भाषाओका वह लेखक था। जेलम उसने कवितायें लिखी। उसकी कविताओ और सूफी निबन्धोमें प्रसाद-गुण बहुत पाया जाता।[1]

१० मसूर II नूह II-पुत्र (नवबर ९९७-९९८ ई०)

इसका पूरा नाम अबुल-हारिस मसूर था। शासनकी सारी शक्ति वजीर अबुल-मुजफ्फर मुहम्मद इब्राहीम-पुत्र बरगशीके हाथमें थी। बरगशीके बाद फायकका बहुत प्रभाव था। अबू-अली और उसके अनुयायियोको नूहने सुबुकतगिनको दे डाला था, जिसने उन्हें मरवा डाला। वजीर अब्दुल्ला किसी तरह बन्दीखानेसे निकलकर अन्तर्वेद पहुचा। उसके स्थानापन्न अबू-मुहम्मद हुसैन-पुत्र इस्फजाबी—जो कि वहाके शासक-वशका था—ने विद्रोह कर कराखानी शासक इलिक नस्र खा को मददके लिये बुलाया। इलिकका पिता बोगरा खान हारून पहिले ही अन्तर्वेद-विजयके लिये आकर मई ९९२ ई० में बुखारामे दाखिल हुआ था। सामानी सेनापति फायकने मुकाबिला करनेकी जगह उसका स्वागत किया। अबकी फिर विद्रोहियोंके बुलानेपर इलिक नस्र समरकन्द आया। उसने दोनों प्रधान विद्रोहियोको गिरफ्तार करनेका हुक्म दिया। फायकको अपने शिविरमें ले जाकर उसने बडा स्वागत किया और तीन हजार सवारोंके साथ उसे बुखारा भेज दिया। मसूर राजधानी छोड आमूल (चारजूय) भाग गया। लेकिन फायकने अपनेको सामानी सेवक घोषित करते हुए बुखारापर अधिकार कर मसूरका लौटनेके लिये राजी किया। अब एक दूसरे हाजिब (राज-अफसर) बेग तुजुनको खुरासानका सेनापति बनाकर भेजा गया। सुबुक तगिन की मृत्यु (९९७ ई०) पर महमूदको खुरासान खाली कर देना पडा था, क्योंकि उसका छोटा भाई इस्माईल बडे भाईके लिये स्थान खाली नही करना चाहता था।

मन्सूर सामानीने फायक और बेग तुजुनके झगडेको मिटानेके लिये समझौता कराना चाहा, लेकिन फायकने चुपचाप कोहिस्तान (वर्तमान ताजकिस्तान) के शासक अबुल-कासिम सिमजूरी को खुरासानके सेनापति बेग तुजुनपर आक्रमण करनेके लिये कहा। मार्च ९९८ ई० में विजयी हो बेग तुजुनने सिमजूरीसे समझौता कर लिया और जुलाई ९९८ ई० म अपने विरोधियोंको हराते हुए बुखारा पहुच गया। इसके बाद फायक और वजीर बरगशीमें झगडा हो गया। बरगशीने अमीर मन्सूरकी शरण ली। मन्सूरने सुलह करानी चाही, लेकिन फायक अपने प्रतिद्वन्द्वी बरगशीको समर्पण करनेके लिये कह रहा था। इस कहा-सुनीमें उसने अमीर मसूरको भी अपमानित किया। झगडा और न बढे, इसके लिये बुखाराके शेख बीचमे पडे। बरगशीको पदच्युतकर बूज्गानमे निर्वासित कर दिया गया। सामानी दरबारके लिये सबसे कठिन समस्या थी, बेग तुजुन और महमूद गजनवीका झगडा। महमूद अपने भाईको हराकर गजनाका स्वामी बन चुका था। खुरासानकी क्षत्रपी बेग तुजुनको दी जा चुकी थी, जिसका दावा महमूद छोडनेके लिये तैयार नहीं था। बलख-तेरमिज-चिरागकी क्षत्रपी देकर महमूदको राजी करनेके लिये अमीर

---

[1] सीनाके दार्शनिक विचारोंके लिये देखो "दर्शनदिग्दर्शन" पृष्ठ १३८-१४७

मन्सूरने बहुत कोशिश की, लेकिन महमूद सारे खुरासानको मागता था। उसने वेग तुजूनपर आक्रमणकर उसे नेशापोर छोडनेके लिये मजबूर किया। फायक और वेग तुजूनको सदेह हुआ, कि अमीर मन्सूर महमूद गजनवीसे मिल जाना चाहता है, इसलिये उन्होने १ फरवरी ९९९ की शामको मन्सूरको समरकन्द की गद्दीसे उतार कर, एक सप्ताह बाद उसे अधा करके बुखारा भेज दिया।

११ अब्दुलमलिक नूह II-पुत्र (९९९ ई०)

मन्सूरको हटाकर अबुल्फवारिस अब्दुल-मलिकको अमीर घोषित किया गया। दोनो विरोधियोंके सामने महमूद गजनवीकी नही चली। उसने समझौता करके नेशापोरको वेग तुजूनको दे दिया और बलख तथा हिरातको अपने पास रखा। इस प्रकार आखिर उसने वही बात की, जिसे मन्सूर कराना चाहता था। अब महमूदके वही दो प्रतिद्वन्द्वी नही रह गये थे, बल्कि अबुल कासिम सिमजोरी भी उनके साथ मिल गया। महमूदको खुश होनेका कोई कारण नही था, तो भी उसने मई ९९९ ई० में दो हजार दीनार खैरात किये। वेग तुजूनके साथ जो समझौता हुआ था, वह भी चदरोजा रहा। महमूदकी सेनाके पिछले भागको धोखेसे मार डाला गया, जिसपर लडाई शुरू हो गई। महमूदने सारी शक्ति लगाकर अपने विरोधियोको बहुत बुरी तरहसे हराया और वह सारे खुरासानका मालिक हो गया। खलीफा कादिर (९९१-१०३१ ई०) ने महमूदके पास एक पत्र लिखा, जिसमे सामानियोकी हार का कारण उनका खलीफाको माननेसे इन्कार करना बतलाया। महमूदने खुरासान-सेनापतिका पद स्वय न ले अपने भाई नस्रको दे दिया। अमीर अब्दुल-मलिक और फायक बुखारा भगे। वेग तुजूनने दुबारा कोशिश की, लेकिन असफल हो उसे भी बुखारा जाना पडा। उसी गरमीमे फायक मर गया। कराखानी खान इलिक नस्रने सामानी वशका खातमा कर दिया। अब्दुलमलिक तथा दूसरे कितने ही सामानी राजकुमारोको पकडकर कराखानी उज्गन्द ले गये।

१२ मुन्तसिर सामानी (-१००९ ई०)

सामानियोके वशोच्छेदके समय उनके राजकुमारो में सघर्ष चल रहा था। बुखाराको इलिक नस्रने बिना प्रतिरोधके दखल कर लिया। सामानी प्रतिरोधियोमे एक था मसूर II (९९७-९९८) का भाई इस्माईल, जो पकडकर उज्गन्दमें बन्द किया गया था। उसने स्त्री भेस में भागनेमें सफलता पाई। ९९९ ई० में अब्दुलमलिक II के उठाये विद्रोहको कराखानियोने दबा दिया, किन्तु इस्माईल जल्दी हाथमें नही आया।

पहिली झोकमें सोग्दी जनताने अपने सामानी शासकोका साथ छोड दिया था, लेकिन पीछे जान पडता है, कितनोने भूल स्वीकार की, और इस्माईल अब मुन्तसिर (विजयी) उपाधि धारण कर बुखारा पहुच वहासे ख्वारेज्म गया। पिताके सिपाहियो द्वारा मारे जानेपर बने ख्वारेज्मशाह मामू-पुत्र अब्दुल-हसन अलीने मुन्तसिरको भीतर-भीतर मदद दी। मुन्तसिरने एक सेना सगठित करली जिसका सेनापति एक तुर्क हाजिब अरसलन यालू था। यालूने कराखानी गवर्नर जाफर तगिनको बुखारासे मार भगाया। बची-खुची सेना जाकर समरकन्दके गवर्नर तिगिन खानसे मिली, लेकिन वहा भी वह डट न सकी और जरफशां के

पुलके पास बुरी तरहसे हारकर उसे भागना पडा। यह खबर इलिक नस्रके पास पहुची, तो वह एक बडी सेना लेकर आया। मुन्तसिर तथा उसके सेनापति अरसलन यालूको आमूल होते हुए ईरानकी ओर भागना पडा। खुरासान पर महमूद गजनवीके भाई नस्रका शासन था, जिसके साथ लडाई हुई। मुन्तसिरको सफलता नही मिली। उसने इसके लिये अपने सेनापति अरसलन यालूको दोषी ठहराया और उसे मरवा डाला। नस्र गजनवीने मुन्तसिरकी आखिरी सेनाको भी खतम कर दिया। खुरासानसे निराश होकर मुन्तसिर १०३० ई० म अन्तर्वेदकी ओर लौटा और गूजो (तुर्कमानो) से मदद ली। इतिहासकार गर्देजीके अनुसार गूज नेता पयगू (यवगू) ने इस्लाम स्वीकार किया। हमे मालूम है, "यवगू" नाम नही, बल्कि करलुको और दूसरे तुर्क घुमन्तुओमे एक पुरानी राजोपाधि है, जो शकोमें भी पाई जाती थी। सभवत यवगू मुसलमान नही हुआ, बल्कि उसके सरदार सल्जुक-पुत्रने इस्लाम स्वीकार किया, जिसने कि पहिले भी काफिर कराखानियोके विरुद्ध सामानियोंकी सहायता की थी। जहा भी लूटकी सभावना हो, वहा गूज या कोई भी लडाकू घुमन्तू कैसे पीछे रह सकता है? गूज बडी खुशीसे मुन्तसिरके झडेके नीचे इकट्ठे हो गये। सुवास् तगिनको उन्होने जरफशाके तटपर हराया और खुद इलिक खानको १००३ ई० की गरमियोमे समरकन्दके पास बुरी तौरसे हारना पडा। इलिक खानके १८ सेनापति वन्दी बनाये गये, जिन्हें गूजोने मुन्तसिरके हाथमे देनेसे इन्कार कर दिया। वह जानते थे, इनके लिये हमें भारी रकम मिलेगी। उधर मुन्तसिरको डर हुआ, कि गूज शायद दुश्मनमे बात चीत चला रहे हैं, इसलिए उसने उनका साथ छोड दिया। १००३ ई० की शरदमें वक्षु पर बरफ जमी हुई थी, उसी समय दरगानमें ३०० सौ सवारो और ८०० सौ पैदल सनिकोके साथ मुन्तसिर वक्षु पार हो आमूल पहुचा। १००४ ई० में उसने नसा और अबीवदको लेनेका असफल प्रयत्न किया। वहाके निवासी नही चाहते थे, इसलिए ख्वारेज्मशाह अलीने उसे शरण नही दी। मुन्तसिर बाकी सेनाके साथ तीसरी बार अन्तर्वेदकी ओर लौटा। बुखाराके गवर्नरने उसे हरा दिया। तो भी नूरके किलेमें रह कर उसने दबूसियामें अवस्थित दुश्मनकी सेनापर आक्रमण किया।

भाग्यने उसका साथ दिया। सोग्दियोका राष्ट्रीय आन्दोलन आरम्भ सा हो गया। सभी जगह सोग्दी अपने राजवशकी पुन स्थापनाके लिये सेनामे भरती हो गाजी (धर्मयोद्धा) बनने लगे। समरकन्दके गाजियोका नेता अलमदार-पुत्र तीन हजार गाजियोंके साथ मुन्त सिरसे आ मिला। नगरके सेठोने भी अपने तीन सौ दासोको मुन्तसिरके लिये हथियारबन्द करके दे दिया। गूज भी अछता-पछताकर उससे आ मिले। इस नई सेनाके साथ मुन्तसिरने बूरनामजके पास मई-जून (शाबान) १००४ ई० में महाखानकी सेनाको हराया, लेकिन यह सफलता चिरस्थायी नही रही। कराखानियोकी शक्तिका स्रोत सुदूर उत्तरमें था, जिसे सुखाया नही जा सकता था। खान (सभवत इलिक खान) एक बडी सेनाके साथ लौटा और जीजक एव खवासके बीच भूखी-मरुभूमिमें घोर लडाई हुई। बूरनामजमे भारी लूटका मौका मिला था, उसके कारण सतुष्ट हो गूज अपने अपने डेरोमें लौट गये और युद्धमे भाग लेने नहीं आये। स्वय मुन्तसिरका एक सेनापति हसन ताकपुत्र अपने पाच हजार आदमियोंके साथ खानसे जा मिला। बेचारे मुन्तसिरको फिर खुरासानकी ओर भागना पडा। उसने अभी भी हिम्मत नही हारी, और सामानी सुरखत-पुत्रके बुलानेपर वह अन्तर्वेद आया। सुरखत-पुत्र उन सामानी

राजकुमारोमेंसे था, जो इलिक खानसे मिल गये थे। जब मुन्तसिर बुखारा की ओर बढ रहा था, उसी समय सैनिकोने उसका साथ छोड दिया। बेकार जान देनेकी जगह उन्होने इलिकके हाजिव (अफसर) सुलेमान और शफीकी अधीनता स्वीकार करना बेहतर समझा। बाकी सेनाको शत्रुओने घेर लिया और वक्षु (आमू दरिया) के सभी घाटोको भी रोक दिया। तो भी मुन्तसिर अपने आठ अनुयायियोंके साथ बच निकलनेमे सफल हुआ। उसके भाई और दूसरे अनुयायी पकडकर उजगन्द पहुचाये गये। १००५ ई० के आरम्भमें मेर्वके पास बसनेवाले एक अरब कबीलेके सरदारने धोखा देकर मुन्तसिरको मार डाला। इस प्रकार सामानी वशका उच्छेद हुआ।

(१) सामानी शासनव्यवस्था—

अरबो के समय सासानियो की व्यवस्था के अनुसार मध्यएसिया का शासन होता रहा। खलीफा सर्वतत्र स्वतत्र शासक था। वह केवल अल्ला के सामने ही जवाबदेह था। यही सिद्धात सामानी या दूसरे स्वतत्र शासको (अमीरो) का भी था। बगदाद के अधीन मानते सामानियो ने कभी सुल्तान (स्वतत्र राजा) होने का दावा नही किया। खलीफा की आखो में वह केवल अमीर (राज्यपाल), मवाली-अमीरुल्-मोमनिन (खलीफा के अनुचर) या केवल आमिल (कर उगाहने वाले) थे। जो अहद (नियुक्ति-पत्र) उन्हें मिलता, उसमे और किसी शक्ति के दिये जाने की बात नही होती थी। इतिहासकार कभी कभी सामानियो को अमीरु-लमोमनीन (मुसलमानो का शासक) कहते थे। ईरानी आदश के अनुसार सर्वतत्र-स्वतत्र शासक को अच्छा कत-खुदा (भूपति) होना चाहिये, इसलिये सामानी अमीर नहरो के बनाने, कराज (भूगर्भी जलप्रणालियों) को तैयार करने, नदियो पर पुल बाधने, कृषि-प्रोत्साहन, किला-निर्माण, नवीन-नगर-स्थापन, अच्छी इमारतो द्वारा नगर को अलकृत करने तथा सडको पर रबात (पान्यशालायें) बनाने की ओर बहुत ध्यान देते थे।

उनके शासन-यत्र के दो विभाग थे[1]—(१) दरगाह (अन्त पुर), (२) दीवान।

१ दरगाह—इस्माईलके समय से ही खरीदे दासमें—मुख्यत तुर्क होते थे—जो दरगाह के आदमी तथा अमीर के वैयक्तिक शरीर-रक्षक होते थे। प्रधान सैनिक कर्तव्य केवल इन्हीं शरीर-रक्षको के सरदार को ही नही बल्कि स्थानीय प्रसिद्ध कुलो की सतानो, देहकानो तथा तुर्क-सेना को भी करना पडता था। सामानियो के शासनकाल के आरभ में अन्तर्वेद के अधिकाश आदमी हथियारबद थे और वह युद्ध या विद्रोहमें सैनिक की तरह भाग लेते थे।

सामानियो ने विशेप उद्देश्य से खरीदे होनहार तरुण तुर्क दासो की शिक्षा का विशेष प्रबन्ध किया था, जो कि सल्जूकी वजीर निजामुल्मुल्क के कथनानुसार* निम्न प्रकार थी।[1]

---

[1] सियासतनामा में है—सामानियो के जमानेमे भी यही कायदा था। उनकी सेवा, विद्या और सस्कृति के अनुसार क्रमश गुलामो का दर्जा बनाया जाता। जैसे ही गुलामको खरीदते, एक साल उसे प्यादा रहकर सेवा करने की आज्ञा देते। इन गुलामो को आज्ञा नही थी, कि वह रिकाब में पैर रखें या जरदोजी की पोशाक पहने। यदि इस एक साल में गुप्त या प्रकट घोडे पर चढ़ने का पता लगता, तो दण्ड दिया जाता। जब एक साल सेवा हो जाती, तो वसा-कबाशी कहलाता, और हाजिब उसे ताजी घोडा दिलवाता, जिसकी लगाम और रस्सी

(१) प्रथम वर्ष पैदल सैनिक, साईस का काम सीखना पड़ता और छिपकर भी घोड़े पर चढ़ने का सख्त निषेध था। इस समय उन्हें पहनने के लिये जन्दान के बने कपड़े मिलते थे।

(२) द्वितीय वर्ष हाजिव (तबुओ के सेनापति) की सहमति से उसे साधारण चार जामें के साथ एक तुर्की घोड़ा सवारी के लिये मिलता।

(३) तृतीय वर्ष की शिक्षा में उत्तीर्ण को एक खास तरह का कमरबन्द (कराचूर) मिलता।

इसी तरह आगे उसकी प्रगति होती। पाचवें वर्ष में गुलाम अच्छा चारजामा पाते, कपड़े भी उनके ज्यादा कीमती होते। छठे वर्ष में कवायद परेड की पोशाक मिलती। सातवें वर्ष में उसको वसाकवाशी (तम्बू-कमाडर) का दर्जा मिलता, जिसमें उसको तीन दूसरे आदमी भी मिलते। उसकी पोशाक होती—काले नमदे की टोपी, जिसके ऊपर चादी के तारो का काम होता, और पोशाक का कपड़ा गजा (एलिजाबेथपोल) का बना होता। आगे बढ़ते हुए गुलाम खल-वाशी (विभागीय कमाण्डर) और हाजिब (कमाडर) बनते।

(१) सारी सेना का मुखिया हाजिबे-बुजुर्ग या हाजिबुल-हुज्जाव कहा जाता, जिसका स्थान प्रथम श्रेणी के दरबारियो मे होता। दरगाह का दूसरा ऊचा पद था, साहबे-हरस या अमीरहरस। इस पद को प्रथम अमीर मुवाविया (प्रथम उमैया खलीफा) ने प्रचलित किया था।

इनके अतिरिक्त दरगाह के दूसरे कर्मचारी थे—द्वारपाल, भोजनशालाधिकारी, प्याला-वाहक।

सामानियो के प्रादेशिक शासक राज्यवंश के आदमी होते थे, जैसे इस्फिजाब का शासक इस्माईल का पुत्र मसूर था। कभी कभी अपनी बड़ी सेवाओ के लिये तुर्की गुलाम भी बड़े पदो पर पहुच जाते, जैसे कि सिमजूरी, अल्पतगिन, ताश और फायक। लेकिन उन्हें यह पद पतीस वर्ष की उमर से पहिले नही मिल सकता था। खुरासान के राज्यपाल को सिपहसालार (सेनापति) कहा जाता था। वजीर को नियुक्त करते समय सैनिक कमाण्डरो की राय ली जाती थी। दरगाह के घरू कार्यों का प्रवन्ध "वकील" करता था, यह भी एक महत्वपूर्ण पद था।

सादी होती। जब एक साल ताजी घोड़े के साथ सेवा कर लेता, तो अगले साल उसे कराजूरी का पद देते। पांचवें साल वह अच्छा जीन और बढ़िया लगाम, दारायी या दबूशी कपड़े का चोगा पहनते। छ साल पर उनमान का चोगा मिलता। सातवें साल सोलह खूटो वाला तबू देते, उसकी सवा मातहत गुलाम करते, और उसे वसाकवाशी का दर्जा देते। उसे काले नमदे की टोपी, जिस पर रूपे का काम किया होता, गजा का चोगा उसे पहनावे। फिर हर साल उसका दर्जा और दबदबा बढ़ाते खेलवाशी होने तक पहुचाते। फिर हाजिब होकर अगर विद्या और योग्यता मालूम होती, तो बड़ा बड़ा काम उसके हाथ में देते, और बादशाह तथा दरबारी लोग उसके दोस्त होते। जब तक कि वह ३५ साल का न हो जाता, न उसे अमीर (शासक) का पद देते और न वलायत (प्रदेश) पर नामजद करते। लेकिन सामानियो का पाला हुआ बन्दा (गुलाम) अल्प-तगिन ऐसा था, कि उसने ३५ वर्ष की उमर में खुरासान के सिपहसालार (सेनापति) का पद पाया।

२ दीवान—बुखारा में रेगिस्तान नामक प्रसिद्ध मैदान के पास दीवानखाने (सचिवालय) थे—(१) दीवान वजीर (२) दीवान मुस्तौफी (खजानची), (३) दीवान अमीदुलमुल्क (राज्यावलम्ब), (४) दीवान साहिब-शूरत (प्रतिहारपति), (५) दीवान साहिब बरीद (डाक-अफसर), (६) दीवान मुशरिफ, (७) दीवान-खास (अमीर के निजी जमीन्दारी का प्रबन्धक) (८) दीवान काजी (न्यायाधीश)।

(१) वजीर, जिसे ख्वाजा-बुजुग भी कहते थे, सारी नौकरशाही के ऊपर था। उसके पद का चिह्न था दावात। जैहानी, बलअमी, उतबी सामानी वश के वडे वडे वजीर थे। मुस्तौफी के नीचे हासिब और हुस्साब जैसे और कर्मचारी होते थे। मुसरिफ प्रत्येक नगर की खबर लेकर अमीर के पास पहुचाता था। मुस्तुतसिब सडक और बाजार की व्यवस्था करते थे। यह धोखे-बाजी, तथा कर वसूल करने की देखभाल एव इस्लामी कानून के उल्लघन करने की रोकथाम का काम करते थे। अधिकतर इनमें दरगाह के हिजडे या तुर्क गुलाम होते थे, जो प्राय निष्पक्ष रहते थे और छोटे-बडे लोग उनसे भय खाते थे। सामानी शासन मे औकाफ (धर्मोत्तर-सपत्ति) का भी एक दीवान (दफ्तर) था।

(२) काजिउलकुज्जात—सारे राष्ट्र का प्रधान न्यायाधीश होता था। प्रदेशो मे भी इसी तरह के पदाधिकारी होते थे, जिनमें प्रादेशिक वजीर को "हाकिम" या "कतखुदा" कहते थे।

(३) धर्माचाय—इस्लाम के प्रचार के साथ साथ मुल्लाओ का जोर बहुत बढ गया था। अबूअब्दुल्ला इस्माईल स्थानीय मुल्लो का सरदार था। अमीर के सामने जाने पर मुल्लो को सलाम करते हुए जमीन चूमना नही पडता था। प्रधान-मुल्ला पुरोहित पहिले उस्ताद, और मुफ्ती और फिर शेखुलइस्लाम कहा जाता। अध्यापक अन्तर्वेद में दानिशमद कहे जाते थे। वली गवर्नर को और खातिब खुतबावाले अफसर को कहते थे।

(४) स्थानीय राजवश—सामानियो बहुत से छोटे छोटे सामन्त और शासक थे, जिनका अपने कुल के कारण विशेष महत्व था। इन सामन्त-राजाओ में फरीगून (गूजगान), गजनवी (गजना) गरजिस्तान (ऊपरी मुरगाव-उपत्यका), ख्वारेज्मया, इस्फिजाव, शगानियान, (पूर्वी पहाडो मे), खुत्तल और रश्त के मुख्य थे। इलाक में तूनकत का मुख्य दहकान शक्तिशाली था। इनमे सबसे अधिक शक्तिशाली शासक थे ख्वारेज्म, इस्फिजाव और शगानियान के।

(क) ख्वारेज्म—ख्वारेज्म के पुराने शासक अपने वश के उद्गम को बहुत काल तक पीछे ले जाते थे। अरबो के विजय के बाद इनकी शक्ति क्षीण हो गई, और इनके दो भाग हो गये, जिनमे दक्षिणी राजधानी कात मे थी, जिसके ही राजको ख्वारेज्मशाह कहते थे। उत्तरी वश की राजधानी गूरगज थी। गूरगज के शासक को अमीर कहते थे। ९९५ ई० मे मीर गुरगज ने दक्षिण को भी जीतकर ख्वारेज्म शाह की पदवी धारण की।

(ख) इस्फिजाव—यह भी एक पुराना राजवश था। वह चार सिक्के और एक झाड़ू राज-करके रूप में देता था। सिर-दरिया प्रदेश के पूर्वी तया सप्तनद के पश्चिमी भाग पर इसका प्रभाव था। यह इलाके सामानियो के आधीन थे। उर्दू शहर निवासी तुर्कमान-राजा इस्फिजाव के शासक को बराबर कर भेजा करता था।

(ग) शगानियान—यहा के मुहतजिद (शासक) की पदवी अमीर थी। सामानियो के समय की शगानखुदातवाली प्राग्-इस्लामिक पदवी अव नही चलती थी। शगानियान के अमीर सामानी वश के पतन के वाद भी रहे।

(घ) खुत्तल—यहा के शासक को खुत्लानशाह या शेर-खुत्तलान कहते थे। वारहवी सदी में भी खुत्तल के अमीर अपने को वहराम गोर (४२०-३८) का वशधर मानते थे।

सामानी नगरो के मुखिया को "रईस" कहते थे[1]।

(२) शिल्प और व्यवसाय—

उस समय के भिन्न भिन्न नगर अपने विशेष-विशेष पण्यो के लिये मशहूर थे —

(१) व्यवसायिक नगर—

(क) तेरमिज—यहा का सावुन और नावें मशहूर थी।

(ख) वुखारा—कोमल वस्त्र, जायनमाज (कालीन), तावे का दीपक, घाडे का कमर वद, उश्मूनी, चर्बी, पोस्तीन, सुगधित तेल, स्वादु मास, सरदा और तरवजा।

(ग) करमीनिया—रूमाल

(घ) दबूसिया, वदार—एक रग मे रगा वदारी कपडा।

(ङ) रविनजान—शाल नमदा, जायनमाज, जलपात्र, चमडा, टाट और गधक।

(च) ख्वारेज्म—नाना प्रकार के समूरी चर्म, रेगिस्तानी लोमडी, गीदड, चित्तीदार खरगोश, वकरी आदि के छाले, मोम, वाण, भोजपत्र, ऊची समूरी टोपी, मत्स्यदन्त, अवर, सिझाया घोडे का चमडा, वाज, तलवार, कवच, स्लाव जातीय दास, भेड, ढोर। यह सभी चीजें ख्वारेज्म की ही नही थी, वल्कि इनमे से वहुत सी वुलगार तथा सिवेरिया आदि से आती थी। अगूर, किसमिस, वादाम, तिल आदि यहा के मशहूर थे। भेंट के लिये शाटन धारीदार कपडे, कालीन, कवल, तथा इनके अतिरिक्त ताले, पनीर, खमीर, मछली भी यहा होती थी। तेरमिज की वनी हुई नावें यहा विकने के लिये आती थीं।

(छ) समरकन्द—सीनगून (रूपहला कपडा), तावे का वडा वर्तन, कलापूर्ण प्याले, तबू, रिकाव-लगाम, तुर्कों के लिये वने शाटन, मूमजाल (लाल कपडा), शिनीजी (एक वस्त्र), कई प्रकार के रेशमी कपडे तथा सर्वश्रेष्ठ कागज। यह मालूम है, कि अरव सेनापति ज़ियाद सालेपुत्र ने ७५१ ई० मे समरकन्द में कुछ चीनी शिल्पकारो को पकडा था, जिनसे टाट का कागज वनाना अरवो ने सीखा। चीनियो ने कागज का आविष्कार ईसा की दूसरी शताब्दी में ही कर लिया था। दसवी सदी के अन्त मे समरकन्द के कागज ने मुस्लिम देशो से चर्मपत्र को हटा दिया।

(ज) जीजक—कोमल ऊन और ऊनी कपडा।

(झ) वनाकत—तुर्किस्तानी कपडे।

---

[1]Turkistan down

(ञ) शाश[१]—घोडे के चमडे का ऊचा चारजामा, बाड, तबू, चमडा, चोगा, जायनमाज, चमडे की टोपी, अलसी, सुन्दर धनुष, दरजी की सुई कैंचो और बढिया चीनी बर्तन।

(ट) इस्फिजाब और फरगाना—सफेद कपडे, हथियार, तलवार, ताबा, लोहा और तुर्क दासो के लिये मशहूर था।

(ठ) तराज़ (तलश)—बकरी का छाला।

(ड) शालजी—चादी।

(ढ) तुर्किस्तान—घोडे और खच्चर।

(ण) खुत्तल—घोडे और खच्चर।

(२) अजीविका और कर—वक्षु और सिर-दरिया के बीच की भूमि (अन्तर्वेद) के निवासियो को अपनी जरूरत और विलासिता की भी बहुत सी चीजो के लिये किसी दूसरे देश का मुह ताकने की आवश्यकता नही थी। चीन का प्रभाव सीधे और तुर्क जातियो द्वारा भी यहा पडा। उसके कारण यहा शिल्प की बडी उन्नति हुई। पहिले-पहल इस प्रदेश को जीतने पर अरब विजेताओ ने यहा बहुत प्रकार के चीनी माल पाये। स्थानीय शिल्प-उद्योग के बढने पर चीनी माल की खपत कम हो गई। जरफशा (सोग्द) उपत्यका के रेशमी और सूती कपडे सारे मुस्लिम जगत मे प्रसिद्ध थे। फरगाना की धातु की चीजें, विशेषकर हथियारा की माग बगदाद मे भी बहुत थी। यहा पत्थर का कोयला भी इस्तेमाल किया जाता था। ईसापूर्व द्वितीय शताब्दी के चीनी यात्री चाङ-क्यान् ने लिखा था "यहा काले पत्थरो के पहाड है, जो कि लकडी की तरह जलते हैं।" पत्थर के कोयले ने यहा के धातु-उद्योग के विकास में बडी सहायता की। अन्तर्वेद के शिल्प और कलापूर्ण वस्तुओ के उद्योग के विकास मे चीन ने ही नही मिस्र ने भी मदद की थी—दबीकी कपडा ख्वारेज्म में बनता था, जो कि मूलत मिस्र के दबीक स्थान की चीज थी।

ख्वारेज्म के तरबूज़ दुनिया में बहुत मशहूर थे। उन्हें बरफदान मे पैक करके खलीफा मामून (८१३-३३), खलीफा वासिक (८४२-४७) के पास बगदाद भेजा जाता था। सही-साबित पहुचे एक खरबूजे का दाम सात सौ दिरहम होता था।

घुमन्तू जातिया मास के लिये ढोरो और भेडो को बेचने लाती थी। सवारी और ढुलाई के जानवर, चमडे, समूर, तथा दास-दासियो को भी देकर उत्तर के घुमन्तू कपडा और अनाज

---

[१] शाश के बारेमें अल्बेरुनीने (अल्हिन्द पृ० ४०१में) लिखा है—"अपरिचित और दूसरी भाषा बोलने वाली जातिके विजयी होने पर नामो में परिवर्तन बहुत जल्दी हो जाता है। विदेशी जातियो के मुह से उनका उच्चारण अक्सर कठिन होता है, इसलिये वह लोग उनको अपनी भाषा में बदल लेते ह्। जैसे ग्रीक (यूनानी) लोगो की आदत है, कि कभी-कभी असली नामो के अर्थ को अपनी भाषा में अनुवाद कर लेते हैं, इसलिये नाम बदल जाते हैं। शाश अपने तुर्की नाम ताशकन्द से निकला है, अर्थात् पत्थर का गाव। अरब वाले शब्दो को अरबी कर देते हैं, जिससे शब्दो में परिवर्तन आ जाता है। उदाहरणार्थ पोमग उनकी किताबो में फोसज और सकलकन्द उनके कागजो मे फारफज़ा बन गया है।

ले जाते थे। उत्तर के घुमन्तुओं का सबसे अधिक व्यापार ख्वारेज्मी सरतों (ताजिकों) के हाथ में था। ख्वारेज्म से उनका कारवां जहां उत्तर के घुमन्तुओं में जाता, वहां दक्षिण में खुरासान और पश्चिम में वोल्गा और कास्पियन पार खजारों के मुल्कमें भी जाता था। वहां से एक रास्ता अराल-समुद्र के पश्चिमी तट से रेगिस्तान पार हो पेचेनगा के देश में जाता। ख्वारेज्मी सौदागरों की सपत्ति खुरासान के सभी शहरों में थी। यह व्यापारी कितने विद्या-नुरागी थे, यह इसी से मालूम होगा, कि अलबैरूनी इन्हीं में पैदा हुआ था।

(क) मजूरी—एक ताम्रकार के नौकर लैस-पुत्र याग को पन्द्रह दिरहम मासिक वेतन मिलता था।

(ख) कर—सामानियों की आमदनी प्राय साढ़े चार करोड़ दिरहम थी। ख्वारेज्म का खर्च सबसे अधिक सेना और उसके अफसरों पर होता था, जो कि प्रतिवर्ष दो करोड़ (पचास लाख तिमाही) था। सामानियों ने खर्च बढ़ाते हुए अन्त में मृत्यु-कर भी लगा दिया था। भारत की आजकल की सरकार भी खर्च को कई गुना बढ़ाकर उसी पथ पर चल रही है।

(ग) भूमिपति—बहुत से गांव इस काल में सामन्तों की जमीदारी थे। सिमजूरियों की जमीदारी में सारा कोहिस्तान था। तुर्क गुलाम अल्पतगिन के खुरासान और अन्तर्वेद में पांच सौ गांव थे। प्रत्येक शहर में उसका एक महल, एक बाग, एक कारवांसराय, और एक हम्माम (स्नानागार) होता था।

(छ) आयातकर—सीमान्तों और नदियों पर भी कर लिया जाता था। आमू-दरिया पर उतरने वाले जानवरों में प्रति ऊंट पर दो दिरहम और सवारी के लिये एक दिरहम कर लेते थे। दिरहम के चांदी के सिक्के थे। तुर्की गुलाम के क्रय के लिये प्रमाणपत्र सत्तर से सौ दिरहम तक के होते थे। तुर्की दासियों के खरीदने के लिये विशेष लाइसेंस की जरूरत नहीं पड़ती थी।

स्रोत ग्रंथ

1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
2 Heart of Asia (E D Ross)
३ त्रुदी अत्देला नुमिज्मातिकी १ (लेनिनग्राद १९४५)
४ दर्शनदिग्दर्शन (राहुल सांकृत्यायन, प्रयाग १९४७)
५ सियासतनामा (निजामुल्मुल्क)
6 History of Bokhara (A Vambery)
७ इस्कुस्त्वो स्रेद्निइ आज़िइ
8 Histoire des Samanides (मीरखुन्द, अनु० C Defremery)

अध्याय २

कराखानी (६६३-१२११ ई०)

§१ उद्गम[1]

उत्तरापथ के वर्णन में हम कराखानियो के बारे में लिख चुके है। कराखानी मूलत आगूज या उइगुर तुर्को की शाखा थे। उनका प्रथम खाकान शातुक बुगरा खान अन्तर्वेद में नही आया, किन्तु प्रथम मशहूर कराखानी खान बुगरा खान हारून मई ९९९मे विजेता के तौर पर बुखारा में दाखिल हुआ, यह हम कह आये है। इन घुमन्तुओ के कितने ही राजवशी शासक भिन्न-भिन्न प्रदेशो और नगरो पर शासन करते हुए बडी बडी उपाधियो के साथ अपने सिक्के चलाते थे। इनके राज टूटते और स्थापित होते रहते थे, जिसके कारण निश्चित तौर से यह कहना मुश्किल है, कि इनमें से कौन अन्तर्वेद में शासन करता रहा और किसका राज्य सप्तनद और तरिम-उपत्यका तक फैला हुआ था। तो भी जिन शासको का वर्णन नीचे दिया जा रहा है, वह प्राय सभी दक्षिणापथ के शासक थे।

§२ खान—

	बुगराखान	(मृ० ९३३ ई०)
१	इलिक नस्र	
२	बुरीतगिन	१०४१-
३	इब्राहीम	१०५९-
४	शम्शुल्-मुल्क	१०६८-१०८०
५	खिज्र	१०८०-
६	अहमद	१०९५-
७	मसऊद	१०९५-
८	कादिर	१०९५-११०१
९	महमूद तगिन	११०२-११२८
१०	तमगाच बोगरा	११३०-
११	किलिच तमगाच	
१२	रुकनुद्दीन महमूद	

---

[1] Heart of Asia Turkistan. (W Bartold)

बोगराखान हारून

बोगराखान हारून (मृत्यु ९९३) के बाद काराखानी वंशका मुखिया कौन हुआ, इसे निश्चयपूर्वक कहना मुश्किल है। शायद वह इलिक नस्र (९९३-) का बाप अरसलन खान अली था, जो कि ९९८ ई० में शहीद हुआ था। उसे तुर्की भाषामें हरिक (दग्ध) पदवी से याद किया गया है, जिसका अर्थ शहीद है। अरसलनके अधीनस्थ शासकके तौरपर इलिक उजगन्दमें रहता था। कराखानी राज्यमें ही क्या सभी घुमन्तू साम्राज्योंमें पैतृक सम्पत्तिका ख्याल वैयक्तिक ही नही सारे राज्यकी सम्पत्ति तक पहुचता था। राज्य केवल खान नही बल्कि उसके सारे परिवारकी सम्पत्ति माना जाता था, इसलिये उसके अलग-अलग इलाकोको राज वंशिकोंके छोटे-छोटे राज्यके तौरपर वाट दिया जाता था, जिन्हें उनके परिवारो-उपपरिवारोंके व्यक्तियोंके अनुसार फिर विभाजित किया जाता था। सारे साम्राज्यका प्रमुख खान कितनी ही वार अपने वंशके शक्तिशाली सामन्तो द्वारा मान्य नही होता था। राज्यके वटवारेकी यह प्रथा वैयक्तिक झगडेका कारण वन जाती, जिसके कारण शासकोमें वरावर परिवतन होता रहता, इसीलिये राजवंशके भिन्न-भिन्न व्यक्तियोंके शासनकालके वारेमें किसी निश्चयपर पहुचना असभव सा है। कराखानियोंके सिक्के वहुत मिलते हैं, लेकिन वह भी गुत्थी सुलझानेमें असमर्थ हैं। निश्चित ऐतिहासिक आकडे न मिलनेके कारण अकसर यह मालूम नही होता, कि एक या उसी तरहके सिक्केमें जो भिन्न-भिन्न उपाधिया उल्लिखित है, वह एक व्यक्तिकी है या अनेक व्यक्तियोंकी। दिक्कत और भी वढ़ जाती है, जबकि हम उत्तरापथ और दक्षिणापथ, पूर्वी तुर्किस्तान और पश्चिमी तुर्किस्तानमें एक ही काराखानी वंशके भिन्न-भिन्न शासकोंको अपना स्वतंत्र सिक्का जारी करते, स्थान-परिवतन भी करते देखते हैं। इसीलिये हम उत्तरापथ और दक्षिणापथकी कोई सीधी विभाजक रेखा नही खीच सकते।

(१) इलिक नस्र (-९९३)

बोगरा खानके मरनेपर उसका पुत्र इलिक नस्र खान गद्दीपर वैठा। सामानी दरवारी फायक भागकर इलिक नस्र खानकी शरणमें गया था, जवकि नूह और सुबुकतगिनकी सम्मिलित शक्तिने अन्तर्वेदसे कराखानियोको हटा देनेकी कोशिश की थी। इलिक खानने फायकको समरकन्द का अमीर (राज्यपाल) वना दिया। लेकिन तव तक और कार्यवाही नही होसकी, जब तक ९९७ ई० नूह और सुबुकतगिन मर नही गये। नूहका उत्तराधिकारी मन्सूर भारी कायर ओर सुबुकतगिनका उत्तराधिकारी महमूद गजनवी महान् विजेता था। ९९६ ई० में कराखानियोका आक्रमण हुआ। १७ अगस्त ९९२ ई० को वुखारा लौटनेके वाद सारा अन्तर्वेद नही वल्कि उसका एक भाग नूहके हाथमें ही रह गया था। वह अकेले इलिक खानका मुकाविला नही कर सकता था, इसलिये उसने सुबुकतगिनको वडी सेनाके साथ वुलाया। जैसा कि पहले कहा, गुजार, शगानियान और खुत्तलके अमीर भी उसके साथ थे। वुलाने और नूह के इन्कार करनेपर सुबुकतगिनने वीस हजार सेना वुखारा भेजी। इस पर नूहने नाक रगडकर उसकी सारी वातें मानी। वजीर अब्दुल्ला उजैरपुत्रको पदच्युत कर उसे सुबुकतगिनके हाथमें दे दिया। सुबुकतगिनने अपने आदमी अवूनस्र अहमद मुहम्मद-पुत्र अवूजैदको वजीर वनाया। उसने

[1] Heart of Asia

कराखानियोंसे समझौता कर लिया। सुबुकतगिन अब वक्षु (आमू-दरिया) उपत्यकाका स्वामी हुआ। सारा खुरासान सामानियोंके हाथसे निकल गया।
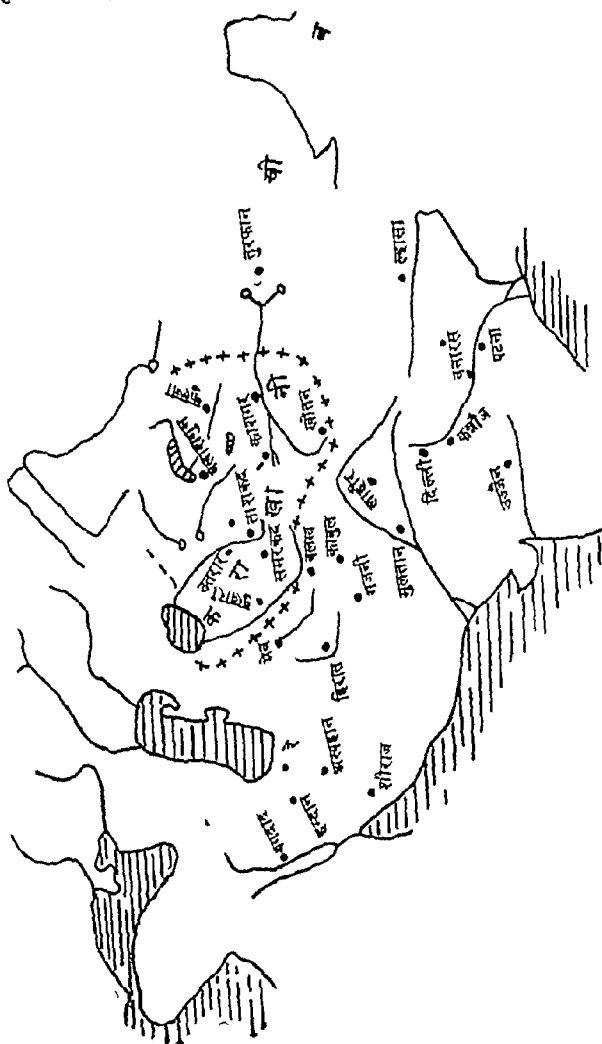
कराखानीसाम्राज्य (९९३ ई०)

९९९ ई० की गरमियोंमें फायक मर गया। इलिक खानने चाहा कि महमूद गजनवी और उसके राज्यके बीचमें सामानियोंका भाग न रहे। मसूरको १ फरवरी ९९९ ई० को गद्दी से उतार अंधा करके बुखारा भेज दिया गया था और उसकी जगह पर अब्दुल

मलिक II अमीर घोषित हुआ। इलिक खानके खतरेकी बात जब बुखारा पहुची, तो वहा बडी गडबडी हुई। खतीवने बुखाराकी मस्जिदमें लोगोको बादशाहकी ओरसे लडनेके लिये समझाना चाहा, किन्तु सशस्त्र होनेपर भी बुखारावाले अब सामानियोपर विश्वास करनेके लिये तैयार नही थे। इस्माईलके समयसे ही सामानी वस्तुत जनताके प्रिय नही थे। वह पुराने सामन्त-वशी थे, इसलिये साधारण जनताके साथ घनिष्ठता स्थापित करने के लिये तैयार नही थे। उनका एक बडा बल यह था, कि वह कट्टर सुन्नी थे और शिया-आन्दोलनको हर तरहसे दबाना चाहते थे। शिया-आन्दोलन इस समय जनसाधारणका बडा पक्षपाती तथा जनतान्त्रिक आन्दोलन था। वह आर्थिक तोरसे शोषित-पीडित जनताकी आकाक्षाओका समर्थन करता था, और राष्ट्रीय दृष्टिसे भी अरबोका पक्षपाती न हो ईरानियो तथा दूसरोंके जातीय स्वाभिमानको उभाडता था। शिया-आन्दोलनके अनुगामियोमें प्रसिद्ध दार्शनिक बू-अली सेनाका बाप और भाई भी थे। सुन्नियोकी भी पूरी सहानुभूति सामानियोंके साथ नही थी, बल्कि वह अबू अली और फायक जैसे नेताओको अपना अगुआ मानते थे। कराखानी अभी हालही में मुसलमान हुए थे,इसलिये "नया मुसलमान प्याज ही प्याज" की कहावतके अनुसार वह इस्लामके कट्टर पक्षपाती थे। वह स्वय असस्कृत-अशिक्षित थे, इसलिये उनका सारा शासन-प्रबन्ध अधिक सभ्य सोग्दी या तुर्की मन्त्रियोंके हाथोमें था। जनता अपने धर्म-शास्त्रियोकी सलाह मानती थी, जिनका कहना था—"दुनियावी चीजोंके लिये यदि सघर्ष हो, तो मुसलमान जहादके लिये बाध्य नहीं है।" ऐसी स्थितिमें सामानियोको बुखारासे क्या सहायता मिल सकती थी ? ऊपरसे इलिक खानने घोषित किया था, "मैं सामानियोंके मित्र और सरक्षकके तौरपर बुखारा आ रहा हूँ।" लोग विजेताकी ओर हो गये। बुखारी सेनाके सेनापति बेग तुजून और यनाल-तगिन अपनी इच्छासे विजेताके दरबारमें उपस्थित हुए और उन्हे गिरफ्तार कर लिया गया। २३ अक्तूबर (९९९ ई०) को इलिक खान बुखारामें बिना किसी विरोधके दाखिल हुआ और सामानी खजाना उसके हाथमें आ गया। अब्दुल मलिक और दूसरे राजवशियोको बदी बनाकर इलिकने उजगन्द भेज दिया और वह स्वय भी बुखारा और समरकन्दमें अपने गवर्नर नियुक्त कर लौट गया। इस प्रकार जनसाधारणकी पूर्ण उपेक्षाके साथ मध्यएसियामें ईरानी मुसलमानोंके प्रथम गौरवशाली राज-वशका अन्त हुआ। इसमें सदेह है, कि उस समय किसीने इस घटनाके ऐतिहासिक महत्वको समझा। सदियो तक तुर्कों और अरबोंके शासनके बाद मध्यएसियाके ईरानियोंने यह सुन्दर मौका पाया था, और इसके परिणामस्वरूप ईरानी (फारसी) साहित्य, सस्कृति और कलाका पुनरुज्जीवन और प्रगति भी काफी हुई, लेकिन इस्लामने राष्ट्रीयता की भावनाको कुचलकर धर्मान्धताके भाव इतने भर दिये थे, कि लोग इस बातको नही समझते थे। उनका ख्याल था—"आखिर कराखानी भी तो मुसलमान है।"

(२) इब्राहीम (बुरी तगिन १०४१)

गजनवियाकी निबलतासे लाभ उठाते मसऊदको बुरे दिन दिखाकर बुरीतगिनने अब अन्तर्वेदमें अपना स्वतन्त्र राज्य कायम कर लिया। १०४१ (४३३ हि०) मे ही बुगरा खानने

---

[१] बुरी तगिन अन्तर्वेदमें अपना शासन मजबूत कर खाकानसे स्वतन्त्र हो गया। १०४१ ई० (४३३ हि०)में बुगरा खानके अधीन वह बुखाराका शासक था, यह उसके सिक्कोसे मालूम होता है।

उसे बुखाराका शासक बना दिया था। १०४६ (४३८ हि०) के समरकन्दी सिक्कोपर इसके लिये "इमादुद्दौला ताजुल्मिल्लत सैफ-खिलाफतुल्ला तमगाचखान इब्राहीम" का उल्लेख है। बुगरा खानने भी उससे पहिले चीन सम्राजी तमगाचखानकी उपाधि धारण की थी। बुरी तगिनने पीछे "पूर्व और चीनका राजा" की पदवी धारण की, और उसका पुत्र नस्र "प्राची और चीनका सुल्तान" बना, यद्यपि दोनो बाप-बेटोका "प्राची और चीन" अन्तर्वेद तक ही सीमित था।

तुर्कभूमि (उत्तरापथ) के कराखानियोंके आपसी झगडोंके कारण इब्राहीम (बुरीतगिन) को सफलता मिली। बुगरा खान हारूनके समय १०४४ (४३६ हि०) में अन्तर्वेदमें शिया-आन्दोलन जोर पकडे हुए था। अन्तर्वेदके शासक बगदादके सुन्नी अब्बासी खलीफाको अपना पोप मानते थे, किन्तु शिया मिस्र के फातमी खलीफा मुस्तसिर (१०३६-१०९४ ई०) को स्वीकार करते थे। उनके प्रभावमें स्वय बुगरा खान आ गया और उसने शिया धर्म स्वीकार किया। मध्यएसिया, ईरान और दूसरे देशोमें भी देखा गया है, कि अपनी प्रजाको दूसरेके प्रभावमें न जाने देनेके लिये शासक अपने धर्मको बदल देते थे। आगे मगोलोंके समय यह बात मध्यएसिया, ईरान और रूसमें दुहरायी गयी। बोगरा खानने राजनीतिक चालसे ही शियोका समर्थन किया था, इसलिये उसने बुखाराके शियोका कतलआम करा दिया। विचार पलटा, दूसरे शहरो में भी वैसा ही करनेका हुक्म दिया।

३. इब्राहीम II इलिक-पुत्र (१०५९)

इब्राहीम तमगाच खान बडा धर्मात्मा था। उसका पिता नस्र भी फकीरी जीवन व्यतीत करता था। तमगाच खान इब्राहीम स्वय अपने लिये राजकोशसे पैसा नही लेता था और न मुसलमान साधुओकी राय लिये बिना टैक्स लगाता था। अली-वशज अबू-शुजा नामके एक साधुने एक बार उससे कह दिया—"तुम सुलतान होने लायक नही हो।" इसपर उसने अपने महलका दरवाजा बन्द कर तख्त छोडना चाहा। लोगोंने बहुत समझा-बुझाकर उसे रोका। सल्जूकियोकी अपेक्षा कराखानी अधिक सस्कृत और सभ्य थे। पूर्वी तुर्किस्तान और सप्तनद उनका केन्द्र होने के कारण वह चीनी तथा उइगुर जैसी सभ्य जातियोंके सपर्कमें आये थे। १०६९ ई० में तुर्की भाषाकी प्रथम कविता-पुस्तक "कुदतकु-बिलिक" एक सामन्त कविने लिखी। तमगाच खानने पहिले अपना सारा ध्यान देशमें शान्ति कायम रखनेमें लगाया। लेकिन, सपत्ति सबधी चोरी आदि अपराधोका दण्ड बहुत निष्ठुरता-पूर्वक दिया जाता था। एक बार समरकन्दके किलेके फाटकपर इस दण्डके विरोधमें लुटेरोने लिख दिया "हम प्याज है, जितना ही छाटे जायेंगे, उतना ही और बढेंगे।" तमगाचने उसके नीचे लिखवा दिया "मैं यहा माली हू, जितना ही तुम बढोगे, उतना ही मैं तुम्हारा मूलोच्छेद करूगा।" खानने एक बार अपने दरबारियों से कहा—पहिले मैंने बहुतसे तरुण सुदर पौवोको तलवारके घाट उतारा, अब म ऐसे तरुणोको अपने पास रखना चाहता हू, इसलिये तुम मेरे लिये तरुणोंके एक ऐसे नेताको ढूंढ लाओ, जो कि लूट-पाटसे जीविका करता है। मैं उसपर दया दिखाऊगा, और वह मेरा काम करनेके वास्ते

---

[1] इब्राहीम बुगरा खानकी औलादका अन्तिम खाकान, १०५८ ई० में मरा, जिसके बाद उसका पुत्र नस्र (१०५८-७० ई०) गद्दीपर बैठा। इस समय काशगरका राज्य कराखानियोकी एक दूसरी शाखा तुफगाजके हाथमें था—Turkistan (Bartold)

आदमियोंको जमा करेगा। ढूंढ़नेपर चार-पुत्रोंवाला ऐसा आदमी मिल गया। खानने प्रधान साहिब-हस (वधिक) बनाकर उसे तथा उसके पुत्रोंको खलअत (राजसी पोशाक) प्रदान की। सुल्तानके कहनेपर उसने तीन सौ आदमियोंको जमा किया। घरमें एक-एक करके ले जाकर उन्हें गिरफ्तार किया गया, फिर प्रधान और उसके पुत्रोंको भी पकड़ा गया। अन्तमें सबको कतल करवा दिया गया। इसका इतना आतंक छाया, कि कहते है, चांदीका दिरहम भी खोये जानेपर वहीं पड़ा मिलता। इब्राहीमने धर्मात्मा होते हुए भी अपराधियोंके साथ कठोर वर्ताव करनेमें आना-कानी नहीं की। खानने लोगोंकी संपत्तिकी खुली लूटको ही बन्द नहीं कर दिया, बल्कि बनियोंकी लूटसे भी रक्षा की। उसने मासका दाम निश्चित कर दिया था। कसाइयोंने हजार दीनार खजानेको दे दाम बढ़ानेकी अरजी दी। खानने स्वीकार किया। कमाई दीनार लाये। दाम भी बढ़ा कर खानने घोषणा कर दी—"जो कोई मास खरीदेगा, उसे मृत्यु-दण्ड मिलेगा।" मास न बिकनेके कारण कसाई भूखे मरने लगे। कसाइयो ने फिर हजार दीनार देकर पहिली कीमतपर मास बेचना स्वीकार किया। खानने कहा—यह उचित नहीं होगा, यदि हजार दीनारमें अपनी प्रजाको बेच डालू। इब्राहीमका मुल्लोंसे भी झगड़ा रहा, क्योंकि वह उनको प्रजा-विरोधी कारवाइयोंके लिये कठोर दण्ड देता था। समरकन्दके एक मशहूर मुल्ला इमाम अबुल-कासिमको उसने कतल करवा दिया। इतनेपर भी जनता मुल्लोंके नहीं बल्कि खानके साथ रही, क्योंकि वह जनहितका बहुत ख्याल रखता था। १०६१ ई० में सलजूकी अल्प अरसलन (१०६३-७३ ई०) ने अन्तर्वेदपर आक्रमण किया। इब्राहीमने खलीफा कायम (१०३१-७५ ई०) के पास शिकायत की, लेकिन खलीफा अब केवल उपाधियोंकी ही वर्षा कर सकता था। उसने तमगाच खानको "इज्जतुल्-उम्मत" (धर्मानुयायियोंकी प्रतिष्ठा), "काबतुल्-मुसलमीन" (मुसलमानोंका काबा) और "मुअवदुल्-अदल" (न्यायमंदिर) की उपाधियां प्रदान की। तमगाच खानके जमानेमे ही सलजूकियोंने अन्तर्वेद पर आक्रमण करना शुरू किया।

दाऊदके मरनेपर कराखानी साम्राज्यका शासक दाऊद-पुत्र अरसलन हुआ, जिसने १०६४ ई० मे खुत्तल और शगानियानपर आक्रमण किया। बलख और तेरमिजके बाद यह प्रान्त भी सल्जूकियोंके हाथमें चले गये थे। १०६५ ई० में ख्वारेज्मसे जंद और सारान पर चढ़ाई करने पर वहांके शासकोंने सल्जूकियोंकी अधीनता स्वीकार की, और अपने पदपर बने रहे। १०६८ ई० में मरनेसे पहिले इब्राहीमने अपने पुत्र शमशुल्मुल्कके लिये सिंहासन छोड़ दिया। तुरन्त ही दूसरे पुत्र शूऐशने विद्रोह कर दिया। पिताके मरनेके साथ ही समरकन्द और बुखारामें दोनों पुत्रोंका संघर्ष हुआ, जिसमें शमशुल्मुल्क सफल हुआ। इब्राहीम अल्प अरसलनसे लड़ते १०७९ ई० में मारा गया। इसका उत्तराधिकारी खिजिर खान हुआ। इब्राहीम और तमगाच खान इब्राहीमके एक होनेमें संदेह है। तमगाच इब्राहीमका उत्तराधिकारी शमशुल्मुल्क था।

४ शमशुल्मुल्क[1] (१०६८-८० ई०)

इसके राज्यकालमें भी सल्जूकियोंसे युद्ध जारी रहा। १०७२ ई० में अल्प अरसलन

---

[1] वही (Bartold)

दो लाख सेनाके साथ अन्तर्वेदपर चढ़ा, किन्तु इसी बीच उसकी हत्या हो गयी। उसके हत्यारे किलेदारको गिरफ्तार करके मृत्यु-दण्ड दिया गया। उसी जाडेमें शम्शुलमुल्क तेरमिजको ले बलखमें प्रविष्ट हुआ। बलखके गवर्नर अयाज (अल्प-अरसलन-पुत्र) पहिले ही वहासे भाग गया। लौटते समय कुछ बल्खियोने तुर्क-सेना पर आक्रमण कर दिया। शमशुलमुल्क बलखको जला देना चाहता था, किन्तु निवासियोकी प्रार्थनापर उसने क्षमा कर व्यापारियोसे कर वसूल कर के ही सतोष कर लिया। शमशुलमुल्कके लौट जानेपर जनवरी १०७३ ई० में अयाज बलख लौट आया। उसने ६ माचको वक्षु पार हो तेरमिजको लेनेके लिये आक्रमण किया, लेकिन परिणाम अधिकाश सैनिकोको नदीमे डुबा देनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं हुआ। शमशुलमल्कने अपने भाईको तेरमिजका शासक नियुक्त किया था। उसी समय या १०७४ के आरम्भ मे मलिक शाह सल्जूकी (१०७३-९३ ई०) ने तेरमिज लेते हुए समरकन्दपर आक्रमण करना चाहा। शमशुलमुल्कने शान्ति-भिक्षा मागी। सल्जूकियोका प्रसिद्ध वजीर निजामुलमुल्क बीच में पडा, और सुलह हो गई। मलिकशाह खुरासान लौट गया। काशगरी कादिर खान यूसुफके पुत्रो तुगरल कराखान युसुफ और बोगरा खान हारूनसे भी शमशुलमुल्क का झगडा होता रहा। अन्तमें सुलह हुई और उन्हें फरगाना तथा सिर-नदीके पार अन्तर्वेदको दे शमशुलमुल्कने खोजदको अपनी सीमा मान ली। खोजन्दमें पहिले अकशीकत और तूनकतमे इबराहीम और उसके पुत्रोके सिक्के ढलते थे, अब मरगिनान, अकसीकत और तूनकतमें तुगरल कराखान और उसके पुत्र तुगरल तगिनके सिक्के ढलने लगे।

अपने पिता तमगाच खान इब्राहीमकी तरह ही शमशुलमुल्क भी न्यायप्रियताके लिये प्रसिद्ध था। वह बराबर घुमन्तू जीवन व्यतीत करता, और केवल जाडोमे अपनी सेनाके साथ बुखाराके आस-पास डेरा डालके रहता। सूर्यास्त के बाद किसी सिपाहीको शहरमें रहनेकी इजाजत नही थी। सिपाहियोको कडा हुकुम था, कि वह अपने तबुओमें रहे और प्रजाको न सतायें। घुमन्तू रहते हुए भी कराखानियोंने नगरोंके प्रति अपने कर्तव्यकी उपेक्षा नही की। उन्होने विशाल और सुन्दर महलो द्वारा नगरोको सजाया, राजपथोंके ऊपर रबाते (सरायें) बनवायी (सराय मगोल भाषामें राजमहलको कहते थे, जिसका अर्थ भारतमें आकर इतना गिर गया)। तमगाच खान इब्राहीमके बारेमें पता नही, किन्तु बारहवी सदीके तमगाच खान इब्राहीम हुसैन-पुत्रने समरकन्दके गुजज़मीन (कारजमीन) मुहल्लेमें एक ऐसा सुन्दर प्रासाद बनवाया था, जिसकी सासानी राजधानी तस्पोनके ताक-खुसरोसे तुलना की जाती थी। शमशुलमुल्ककी इमारतोमें रबाते-मलिक (राजपान्थशाला) थी, जो १०७८ (४७१ हि०) में खरजग गावके पास बनायी गई थी। समरकन्दसे खोजन्द जानेवाले मार्गपर आक्-कुतल्में भी उसने एक रबात बनवायी थी। बापकी तरह इसका भी मुल्लाओंसे बराबर झगडा रहा। राज्यारम्भमे ही १०७९ ई० में उसने इमाम अबू-इब्राहीम इस्माईल अबूनस्र-पुत्र सफ्फारीको बुखारामे कत्ल करवा दिया।

शमशुलमुल्कसे रुकुनुद्दीन महमूद तकका शासन दक्षिणापथके कराखानी वशके इतिहासका अश है।

५. खिज्र खान (१०८०——)

शमशुल्मुल्कके बाद भाई खिजिर उसका उत्तराधिकारी हुआ। यह बहुत कुछ गुमनाम सा शासक है। निजामीके ग्रथ "अरूज़े समरकन्द" के अनुसार इसके शासनमें समरकन्द समृद्धिकी चरम सीमापर पहुचा था। इसने अन्तर्वेद और तुर्किस्तान (सिर-दरियाके उत्तरी भाग) दोनो पर शासन किया। यह विद्वान, न्यायी कवियोंसे प्रेम रखता था। कवियोंमें प्रतियोगिता कराता और विजयी कविके लिये दरवार-हालमें चादी-सोनेकी तश्तरिया पारितोषिकके लिये रखवाता। खिजिर खानके दरवार-हालमें २५० दीनारो (स्वर्ण मुद्राओ) से भरी ऐसी चार तश्तरिया रखी रहती, जिन्हें एक वार एक कविने जीत लिया था। जब खान जलूसमें निकलता, तो सोने और चादीकी चोव लिये चोवदार उसके आगे आगे चलते। खिजिर खान शायद एक ही साल राज्य कर सका। उसके बाद उसके पुत्र अहमदने गद्दी सभाली।

६. अहमद (१०९५ ई०)

खिजिर-पुत्र अहमदके शासनकालमें मुल्लाओंके साथ झगडे-फसादने वहुत उग्र रूप धारण किया, जिसमे सल्जूकियोको बीचमें कूदनेका मौका मिला। गद्दीपर बैठते ही, पिताके समयके प्रधान काजी और अव वजीर अवूनस्र सुलेमान-पुत्र कासानीको अहमदने मरवा दिया। दीवान प्रजाको वहुत सता रहा था, इसीलिए शाफई-धर्मशास्त्री अवू-ताहिर इलक-पुत्रने प्रजाके उत्पीडनको वतलाते हुए मलिक शाहसे सहायता मागी। मलिक शाहने १०८९ ई० में वुखारा ले लिया। सल्जूकी सेना समरकन्द लेनेके लिये पहुची, मुकाविला कडा हुआ। किला घेरे रहते समय नागरिकोंने मलिकशाहके पास रसद पहुचायी। कराखानियोंने अली-वशज एक अमीरको बुर्जकी रक्षाका भार दिया था। उसका लडका वुखारामें वन्दी था। मलिक शाह सल्जूकीने उसे कत्ल कर देनेकी धमकी दी, इसलिये पिता ढीला पड गया। बुर्ज लेकर मलिक शाहने किलेपर अधिकार कर लिया। अहमद किसी नागरिकके घरमें छिपा हुआ था। गर्दनमें रस्सी डालकर उसे मलिकके पास लाया गया। मलिकशाहने उसे अस्पहान भेज दिया। फिर अपनी विजय-यात्राको जारी रखते वह उज्गन्द पहुचा। उसका रोब इतना छा गया था, कि काशगरके कराखानी खानने स्वय आकर अधीनता स्वीकार की, खुतवामें मलिक शाहका नाम पढवाया तथा उसके नामसे सिक्के जारी किये। समरकन्दमें अपना उपराज छोड कर मलिक शाह खुरासान लौट गया।

कराखानियोकी सेनामें उनके जिकली कवीलेका भाग वहुत था। किसी कारणसे वह अपने खानसे नाराज हो गये और अन्तर्वेदमें रहनेवाले उनके लोग मलिकशाहसे मिल गये। लेकिन सफलता प्राप्त करनेके वाद मलिकशाहने उनकी अच्छी तरह खातिर नही की, जिसपर जिकली विद्रोही हो गये। मलिकशाहके हटते ही जिकली सेनाने समरकन्दके उपराजपर आक्रमण कर दिया। उपराजको भागकर ख्वारज्ममें शरण लेनी पडी। विद्रोहियोंके नेता ऐनुद्दौलाने कारा-

---

[1]वही

गरी खानके भाई तथा अतवाश नगरके गवर्नर याकूब तगिनको सप्तनदसे बुलाया। उसने ऐनुद्दौलाको कत्ल करवा कर शासनकी बागडोर अपने हाथमें ले ली। इसपर जिकली खिलाफ हो गये। मलिकशाहने खबर पाते ही फिर अन्तर्वेदका रास्ता लिया। उसके बुखारामें घुसते ही याकूब फरगानाके रास्ते अतवास भाग गया और उसकी सेना तवावीसमें मलिकशाहसे मिल गई। यह स्मरण रखना चाहिये, कि इस समयके ईरानी शासक सल्जूकी भी कराखानियोंकी तरह तुर्क थे। दोनो की भाषाओमे भी बहुत अन्तर नही था, इसलिये सेनाओका राजभक्ति-परिवर्तन जातिद्रोह नही समझा जा सकता था। समरकन्द लेकर मलिकशाह फिर उजगन्द पहुचा। उत्तरमें काराखानी खानोंके घरू झगडे इतने तीव्र थे, कि मलिकशाह निश्चित होकर फिर खुरासान लौट गया। अबकी बार भी मलिकशाहने खिज्र-पुत्र अहमदको फिर शासक बनाया, लेकिन वह अधिक समय शासन नही कर सका। ईरानमें रहते हुए अहमद दैलमी दरबारके सपर्कमें आया था, जहा वह शिया विचारोंसे प्रभावित हो गया। अन्तर्वेद लौटनेपर मुल्लोको यह अच्छा मौका मिला, क्योंकि अन्तर्वेदके मुसलमान धर्मान्ध सुन्नी और शियोंके कट्टर विरोधी थे। समरकन्दके धर्मशास्त्रियो (फकीहो) और काजियोने नास्तिक होने का अपराध लगा सेनाको कत्ल करनेके लिये भडकाया। लेकिन राजधानीमें अहमद इतना जनप्रिय था, कि वहा विद्रोह करानेमें सफलता नही हुई। तब उन लोगोने कासान नगरके शासक तुगरल यनाल बेगको विद्रोह करनेके लिए तैयार किया। जब अहमद सेना लेकर पहुचा, तो सेनाने विद्रोह कर दिया। खानको पकडकर समरकन्द ला धार्मिक अदालतके सामने पेश किया गया। उसने अपनेको बिलकुल निरपराधी बतलाया, लेकिन तब भी उसे अपराधी कहकर काजियोने मृत्यु-दण्ड दे, धनुपकी प्रत्यचाको गलेमें डालकर फासी लगवा दी गई। यह जनमतको पूर्णतया विरोधी बना कर ही किया जा सकता था।

७ मसऊद खान (१०९४)—

विद्रोहियोने अहमदके चचेरे भाई मसऊद खानको समरकन्दकी गद्दीपर बैठाया। यह थोडे ही समय तक शासन कर सका।

८ कादिर (१०९५-११०१)—

इसके समय खुरासानके गवर्नर सजर सल्जूकीने विद्रोह किया चचा भतीजे की लडाईमें कादिरखान मारा गया।

१०९७ ई० में मलिकशाह-पुत्र बरकयारुक सल्जूकीके हाथमें अन्तर्वेद आ गया। उसने सुलेमान तगिन (—११०२) महमूद तगिन और हारून तगिन कराखानी खानजादोको एकके बाद एक अन्तर्वेदका शासक नियुक्त किया था। उनमें सुलेमान तगिन दाऊद कुजतगिनका पुत्र और तमगाच खान इब्राहीमका पौत्र था। बारहवी सदीके आरम्भमें तुर्किस्तान (सिर-पार) के कराखानियोने अन्तर्वेदपर आक्रमण किया। कादिर खान जिबराईल (बोगराखान मुहम्मद-पौत्र) ने अन्तर्वेद ही नही ले लिया, बल्कि ११०२ ई० में सल्जूकियोकी भूमि (खुरासान) पर भी आक्रमण कर दिया। वह तेरमिज्र लेनेमें सफल हुआ, लेकिन २२ जून ११०२ ई० को तेरमिजके नातिदूर सुल्तान सजर सल्जूकी (१११७-५७) से लडते हुए मारा गया।

९ महमूद तगिन (११०२–२८) ई०

सजरने सुलेमान तगिन-पुत्र महमूद तगिनको मेवसे वुलाया। आपसी सघर्षमें कराखानी खानजादे अक्सर शरणार्थी वनकर पास-पडौसके सुल्तानोंके दरवारमें रहते थे। कादिर खानके आक्रमणके समय महमूद अन्तर्वेदसे भागकर सल्जूकोकी राजधानी मेवमें चला गया था। महमूदने अरसलनखानकी उपाधि धारण करके ११३० ई० तक शासन किया। शासन सभालते ही उसे एक कराखानी राजकुमार (खानजादा तगिन) शागिर वेगके विद्रोहोका मुकाविला करना पडा। पहिले विद्रोहमें ११०३ ई० में सजर सहायताके लिये आया था और दोनों प्रतिद्वन्द्वियामें सुलह कराकर दिसम्वर के महीनेमें मेर्व लौट गया। ११०९ ई० (५०३ हि०) में शागिर वेगने फिर विद्रोह किया, लेकिन अरसलनने सजरकी सहायतासे नकशावके पास उसे हरा दिया। इसके वाद वीस साल तक अन्तर्वेदमें शान्ति रही। अरसलनने अन्तर्वेदमें सभी कराखानियोंसे अधिक इमारतें वनवायी। उसने वुखाराके दुर्ग और नगर-प्राकारकी भी मरम्मत करवाई। वहाके शमशावाद-प्रासादके ध्वस होनेपर १११९ ई० में ईदगाह महल वनवाया। ११२१ में वुखाराकी जामा-मस्जिदकी सुदर इमारत इसीने वनवायी। दो और प्रासाद वनवाये, जिनमें से एकका पीछे मदरसा वना दिया गया। पैकन्द नगरका उसने पुनर्निर्माण कराया। किलेके पासकी जामा-मस्जिदके मीनारको शहरिस्तानमें ले जाकर उसे वडे भव्य रूपमें पुन स्थापित करा दिया। लेकिन थोडे ही समय वाद मीनार और एक तिहाई मस्जिद गिर गई। अरसलनने अपने खर्चसे सारे मीनार और मस्जिदको फिरसे (११२७ ई० मे) वनवा दिया। अरसलन अपनी इस्लाम-भक्तिको प्रमाणित करते हुए किपचक (अरालसागरसे उत्तरकी भूमि) के काफिरोपर जहाद भी वोला। यह हम पहिले वतला चुके हैं, कि मुसलमान होनेसे पहिले यह घुमन्तू वौद्ध या ईसाई साधू-सन्तोंके भक्त हुआ करते थे। जिसकी तृप्तिके लिये मुसलमान साधू-सन्तोंकी भी महिमा वढी। अरसलन खान महमूद भी यूसुफ हसन-पुत्र वुखारी सामानी नमदापोश (नमदेवाला) का परम भक्त था। नमदापोशने तीस साल तक वुखाराके अपने मठ (खानकाह) में सिर्फ फलाहारपर गुजारा किया था। इसके अतिरिक्त वुखारामे एक दूसरा सन्त शेख अवूवक्र कल्लावादी था, जो विलकुल मास नही खाता था। अरसलन नमदापोशको वावा (पिता) कहा करता था। १११५ (५०९ हि०) में शेख एक दुष्टकी तीरसे मरकर शहीद हुआ। जो भी सूफी दिनमें वाजारके प्याव पर पानी पीता, उसे शेख शहरसे वाहर करवा देता, क्योंकि उसके मतमें सूफीका सबसे पहिला कर्तव्य है अपने सदाचारका पालन करना।

सूफियो-सन्तोका इतना भक्त होते अरसलनका मुल्लोंके साथ वरावर सघर्ष रहा। मुल्ले एक तो परमलोभी फिर, विचार-स्वतत्रताके घोर शत्रु थे, दूसरी तरफ वौद्ध साधुओंके पथपर चलनेवाले सूफी-सन्त त्यागी तथा विचार-स्वतत्रताके पक्षपाती थे। सूफियोंके भक्त मुल्लाओंको क्यों पसद करने लगे? शमशुलमुल्कके समय मारे गये इमाम सफ्फारका पुत्र भी अपने पिताकी तरह ही ढोंगी मुल्ला था। उसने सुल्तानपर धर्म-विरोधी होनेका आक्षेप किया, इसपर तगिनके सरक्षक सजरने उसे मेवमें निर्वासित कर दिया। जीवनके अन्तमें अरसलनको लक्वा मार गया, और उसने अपने पुत्रको राजकाजमे सहभागी वना लिया। तरुण शासकके विरुद्ध षड्यत्र करने वालोका मुखिया धर्मशास्त्री और अध्यापक (फकीह-मुदर्रिस) अशरफ मुहम्मद-पुत्र समरकन्दी

था, जो हजरत अलीका वंशज मुल्लोंका सरदार और समरकन्दका रईस था। अरसलनने षड्यन्त्रको दबानेके लिये सिंजरसे मदद चाही और साथ ही अपने दूसरे पुत्र अहमदको भी बुला लिया। नगरके फकीर और रईस उससे मिलने गये। तरुण खानने उन्हें पकडनेकी आज्ञा दे दी और फ़क़ीरको तुरन्त कत्ल करवाकर षड्यन्त्रको दबा दिया। शान्ति स्थापित हो जानेपर अरसलनको इसका अफसोस हुआ कि सिंजरको क्यों बुलाया। सिंजर करलुकोंको हराकर अन्तर्वेदमें दाखिल हुआ। शिकारके वक्त उसने बारह आदमी गिरफ्तार करवाये, जिन्होंने स्वीकार किया, कि हमें सुल्तानको मारनेके लिये अरसलनने भेजा था। सिंजरने समरकन्दको ले लिया। खानके कहनेपर मुल्लोंने सिंजरके पास खानकी क्षमा-दान करनेके लिये पत्र लिखा। सिंजरने कहा—"सुल्तानको इस बातका आश्चर्य है, कि मुल्ला लोग ऐसे आदमीकी आज्ञाकारिता स्वीकार करें, जिसे अल्लाने स्वयं पद-वंचित कर दिया, जो किसी हथियारके उपयोग करनेमें असमर्थ है, जिसे सर्वशक्तिमान् अल्लाकी सहायता प्राप्त नहीं है, जिसे कि जगत्-शासक अल्लाकी छाया, खलीफ़ाके उपराज (सिंजर) ने गद्दीसे उतार दिया है।" आगे सिंजरने यह भी लिखा, कि मैंने इस गुमनाम आदमीको उठाकर खान बनाया, इसके प्रति-द्वन्द्वीको खुरासानमें भेज दिया, सत्रह वर्षों तक अपनी सेनासे इसकी सहायता की। इस सारे समयमें इसने दुश्शासन किया, पैगम्बरके वंशजों (सैय्यदों) को मारा, पुराने सम्भ्रान्तकुलोंका उच्छेद किया, केवल सन्देहपर लोगोंको कत्ल कराया, उनकी संपत्ति जप्त की।

सिंजरके ७० हजार हथियारबन्द सिपाही—"जिनके रास्तेमें कोई पर्वत भी बाधा नहीं डाल सकता"—पहिलेसे ही समरकन्दके ऊपर आक्रमण करनेके लिये तैयार थे। सुल्तानने कहा केवल नगरको बचानेके लिये मैंने उन्हें रोक रखा है—उन नागरिकोंको बचानेके लिये,—जो कि अपनी धार्मिकताके लिये मशहूर हैं। सुल्तानकी रानी—अरसलन खानकी पुत्रीने सिंजरको बहुत समझाया था। ११३० के वसंतके आरम्भमें सिंजरने जब समरकन्द ले लिया, तो रोग-शय्यापर पड़े अरसलनको चारपाईपर लिटाकर सुल्तानके पास पहुंचाया गया। उसकी बेटी भी मिलनेके लिये बुलाई गई। कुछ समय बाद जब सुल्तान लौटती यात्रामें बलख पहुंचा, तो वहां अरसलन मर गया और उसे मेर्वमें अपने बनाये मदरसेमें दफनाया गया।

१० तमगाच बोगरा खान इब्राहीम (११३०)

सिंजरके दरबारमें अबुल मुजफ्फर इब्राहीम नामक अरसलनका एक भाई रहता था। सिंजरने सदियोंसे तुर्कों द्वारा शासित अन्तर्वेदपर सीधे अधिकार करनेमें हानि समझी और इसे ही तमगाच बोगरा खान इब्राहीमके नाम से गद्दीपर बैठाया। अब अन्तर्वेदके कराखानी शासक सल्जूकियोंके कठपुतली मात्र थे।

११ किलिच तमगाच खान

अबुल्-मलिक हसन अली-पुत्र अबुल्मोमिन-पुत्र, जो कि हसन तगिनके नामसे अधिक प्रसिद्ध है, कुछ दिनों शक्तिहीन खान रहा।

१२ रुकुनु (जलालु) द्दीन मुहमद

यह अरसलनका पुत्र गडवडीके दिनोमें कुछ समय कराखानियोकी गद्दीपर रहा। सिंजर सल्जूकी इसका मामा था और उसका वडा भक्त भी, इसलिए सिंजरने काशगर जीतनेपर इसे वहा का शासक वनाया। सिजरको विजय द्वारा थोडे दिनोके लिये सारा मुसलिम एसिया एक छत्रके नीचे आ गया, किन्तु उसी समय पूर्वसे एक और शक्तिशाली जाति (कराखिताई) आ पहुची, जिसने वहुत दिनो वाद फिर मध्यएसियामें मुसलिम शासनका हटाकर प्राय एक शताब्दीके लिये काफिरोका दल शासन स्थापित कर दिया।

§३ सिक्के

कराखानियोंके वहुतसे सिक्के मिलते है। छोटा वडा प्रत्येक शासक अपने शासित प्रदेशमें अपना सिक्का चलानेकी होड लगाये हुए था। उनके नामो और पदवियोकी इतनी गडवडी है, कि सन् मिलनेपर भी वात स्पष्ट नही होने पाती। रूसके मुद्रा-विशारद दोर्नके अनुसार अन्तर्वेदके विजेता दो भाई थे, जिनमें ज्येष्ठका नाम नासिरुल्हक् नस्र और कनिष्ठका कुतुवुद्दौला अहमद था। नस्रके मरनेपर अहमद गद्दी पर वैठा। नस्र अली-पुत्रके सिक्के १०१० ई० (४०१ हि०) तक के और उसके उत्तराधिकारी अहमद अली-पुत्रके सिक्के १०१६ (४०७ हि०) तकके मिलते हं। सन् और टकसाल के नगरका पता न होनेसे यह नही कहा जा सकता, कि तुगान खान (काशगरी) का शासन अन्तर्वेदमे था या नही। ज्येष्ठ भाई तुगान शायद इलिक नस्रके जीवनमें कराखानी राज्यवशका नाममात्रका मुखिया था। चौथा भाई अबू-मसूर मुहम्मद अली-पुत्र पीछे अरसलन खानकी पदवीके साथ शासन करता रहा। वुखारा टकसाल वाले इसके सिक्के १०१२ (८०३ हि०) के मिलते है। अरसलन खान भी तुगान खानसे झगड पडा था और १०१६ में उजगन्दके पास उससे लडा था, फिर ख्वारेज्म शाह मामूनने वीचमे पडकर शान्ति कराई। मामून स्वय महमूद गजनवीसे लडनेकी तैयारी कर रहा था। समव है उजगन्दके पास अन्तर्वेदके शासक अरसलन खान और तत्कालीन काशगर-शासक कादिर खानके वीच सैनिक सघर्ष हुआ हो।

स्रोत ग्रन्थ

1 Turkistan Down to Mongol Invasion (W Bartold)

2 Heart of Asia (E D Ross)

3 History of *Bokhara* (A Vambery)

४ इस्कुस्त्वो स्रेद्निङ आजिइ

१५ तोबाका तुर्क साम्राज्य (५६६ ई०)
मूल—पृष्ठ १११ पर पढ़िये।
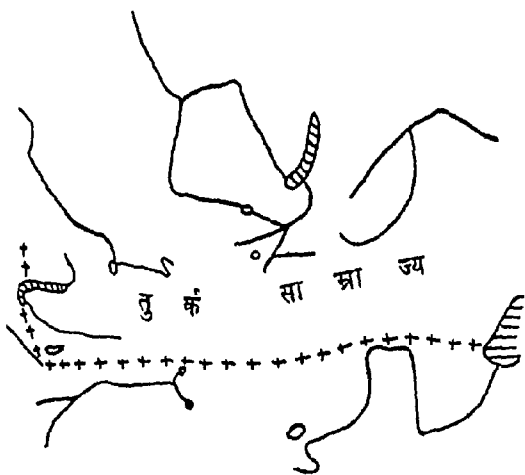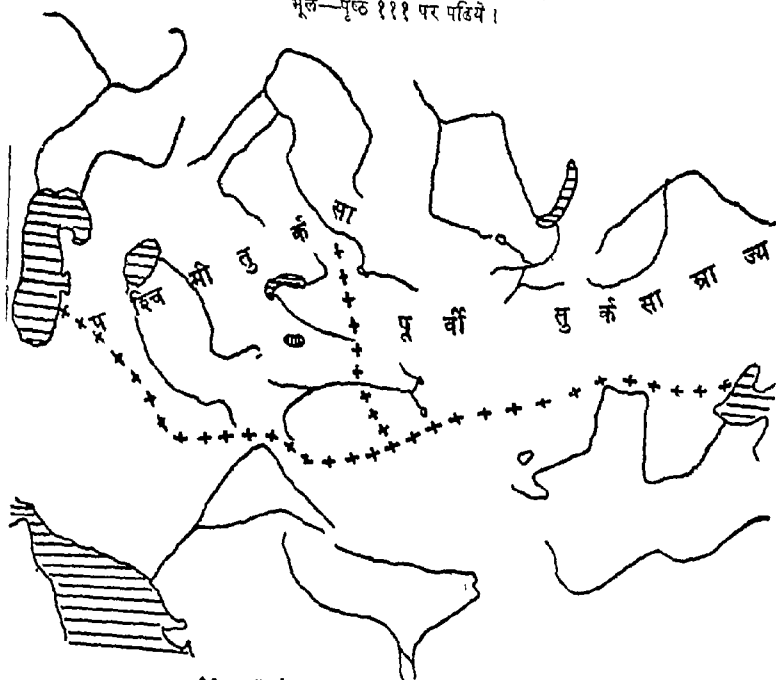
१६ पूर्वी और पश्चिमी तुर्क साम्राज्य (६२८ ई०)
मूल—पृष्ठ ११७ पर पढ़िये।

अध्याय ३

गज़नवी (९९८-१०५९ ई०)

§१ उद्गम

गजनवी वश ने पजाब ओर सिंध पर भी शासन किया था, महमूद गजनवी ने बनारस, कालिंजर और सोमनाथ तक लूट-पाट मचाई, इसलिये भारतीय इतिहास को उसका काफी परिचय है। लेकिन पजाब छोडकर बाकी भारत के साथ गजनवियों का सबध केवल लूटमार का था। उनकी शक्ति ईरान, मध्यएसिया (अन्तर्वेद) और अफगानिस्तान मे दृढ थी। वही से सैनिक लेकर महमूद भारत के नगरो और मदिरो को लूटने आता था। भारत म उसका "चिडिया रैन बसेरा" जैसा ही था। पहिले हम कह चुके हैं, कि किस तरह सामानियो और उनसे पहिले के समय भी होनहार तुर्क तरुणो को दास-बाजारो से खरीदकर उनको बाकायदा शिक्षा दी जाती थी, जिसमें वह सैनिक-असैनिक ऊचे पदो के लायक हो सके। घुमन्तुओ और सामानियो में राजकुमारो का सिंहासन के लिये हमेशा झगडा होता रहता था, इसलिये भाई भाई पर क्या पिता-पुत्र पर भी विश्वास नही कर सकता था। दास अपने रुधिर सबध से सिंहासन के लिये दावा नही कर सकते थे, इसलिये यह प्रथा बहुत चल पडी। अल्प तगिन को सामानियो ने बुखारा जीतकर वहा का शासक नियुक्त किया था। वह भी पहिले इसी तरह का खरीदा गुलाम था। अल्प तगिन पीछे खुरासान का सेनापति* हुआ। इसीने गजनवी-वशस्थापक सुबुक तगिन को गुलाम के रूप में खरीदा था।

"सियासतनामा" (राजनीति शास्त्र)—सल्जूक सुल्तान मलिकशाहके प्रसिद्ध वजीर निजामुलमुल्क ने इसे उसी अभिप्राय से लिखा, जिससे कि कौटिल्य ने अपने "अर्थशास्त्र" को लिखा था। निजामुलमुल्क तूस में पैदा हुआ था। उसका पूरा नाम अबू-अली हुसेन अली-पुत्र इस्हाक-पुत्र अब्बासी था। इसके पूर्वज तूस के आसपास के दहकान थे। विद्या प्राप्ति के समय उमर खैय्याम और हसन सब्बाह-पुत्र इसके सहपाठी रहे। विद्या समाप्ति के बाद बलख के मौतमिद अली शाहजान-पुत्र के यहा लेखक (कातिब) हो गया। कुछ अनबन हो गई, तो उसे छोडकर दाऊद मेकाइल-पुत्र सल्जूकी के पास चला गया। आगे अल्प अरसलन और मलिकशाह के जमाने मे निजामुलमुल्क का सितारा चमका और सारी सल्जूकी हुकूमत इसके हाथ में थी।

"सियासतनामा" में वर्णित राजनीतिक नियमो और सिद्धान्तोकी बातें बडी सरल फारसी गद्य म हैं। उसमें अपनी बात को साफ करनेके लिये, लेखकने कितनी ही जगह उदाहरणार्थ ऐतिहासिक कहानिया[1] और भूगोल आदि की बातें दी हैं।

---

[1] "सियासतनामा" अध्याय २७

निजामुल्मुल्क समाज में वर्ग-भेद को उचित और आवश्यक समझता था। इसे भगवान का काम बतलाते हुए वह लिखता है (पृ० ३)—"आग जगल मे पैदा होती है। वहा जो कुछ सूखा रहता है, वह सब जल जाता है, और सूखे के साथ रहने की वजह से बहुत सा गीला भी जल जाता है। इसी तरह बन्दगो (सेवको) मेंसे एक को भगवान की कृपा से सौभाग्य और धन प्राप्त होता है। उसके लिये भगवान (हकताला) अन्दाजे के अनुसार प्रताप सुलभ करता है। उसे अकल ओर इल्म देता है, जिसमें कि वह इस अक्ल और इल्म के द्वारा नीचे वालो से मे हरेक को अन्दाजा से सपत्ति मिले, हरेक को उसकी योग्यता के मुताबिक दर्जा और निवास दे, आदमियो मे से इन के लोगो और खिदमतगारो को नियुक्त करे, और उनमें से हरेक को सम्मान तथा पद देवे, लौकिक-पारलौकिक कामो मे उनके ऊपर विश्वास करे। प्रजा का काम है, आज्ञाकारिता का रास्ता पकडे और अपने काममे तत्पर रहे।

अल्प तगिन—अल्पतगिन को इस्माईल (सामानी) ने खरीदा था, और उसने आखिरी उमर में नस्र-पुत्र अहमद की कुछ साल तक सेवा की थी, नूह के जमाने में खुरासान का सिपहसालार बना था। जब नूह मर गया, तो नूह-पुत्र मसूर बादशाह बना। उसकी बादशाही के भी ६ साल बीते। अल्पतगिन ने हर तरह कोशिश की, लेकिन नूह-पुत्र मसूर के मन को अपनी और न कर सका। लोगो ने मसूर से कह दिया—"जब तक अल्पतगिन को तू नही मारता, तब तक तू बादशाह नही रह सकता। तू बादशाह नही है, तू राज्य नही कर रहा है। ५० साल से वह (अल्पतगिन) खुरासान में बादशाही कर रहा है। सेना उसकी बात मानती है। अगर तू उसको गिरिफ्तार करें, तो उसके धन से तेरा खजाना भर जायेगा। उपाय यह है, कि उसे दरगाह (दरबार) मे बुला और ऐसा कहला भेज कि जबसे हम तख्त पर बैठे, तू दरगाह में नही आया और अहद (नियुक्ति-पत्र) को नया नही किया। हमारी इच्छा है—तू हमारे लिये पिता की जगह है। "जब यहा आये, तो उसे एकान्त में बुला और हुकम देकर उसका सिर कटवा दे।"

अमीर मसूर ने ऐसा ही किया। उसे दरगाहमें बुलाया। अल्प तगिन के साहिबखबर (चर) ने लिख दिया, कि तुझे किस काम के लिये बुला रहे हैं। अल्प तगिन ने चाहा, बुखारा चलें और नेशापोर से सरख्श की ओर कूच कर दिया। उसके साथ करीब तीस हजार सवार थे। खुरासान के सारे अमीर उसके साथ थे। जब वहा से तीन रोज का रास्ता आगे गया, तो उसने लश्कर के अमीरों (सेनपो) को बुलाया और उनसे कहा—"तुम्हें एक बात कहनी है। जो कुछ मैं कह रहा हू, इसके बारे में जो ठीक समझो, वह मुझसे कहो, ताकि मैं जानू।"

उन्होने कहा—"हम तुम्हारे सेवक हैं।"

उसने कहा—"तुम जानते हो, कि अमीर मसूर मुझे किसलिये बुला रहा है?"

उन्होंने कहा—"इसलिये कि तुम्हें देखें और अहद (नियुक्तिपत्र) को ताजा करें।

उसने कहा—"जैसा तुम लोग समझते हो, बात ऐसी नही है। मलिक (सुल्तान) मुझे इसलिये बुला रहा है, कि मेरे सिर को धड से अलग करे। वह बच्चा है। आदमियो की कदर नही जानता। तुम जानते हो, कि सामानियो के मुल्क को सालो से मैं सभाले हुए हू। तुर्किस्तान के खानो मे जिसने बुरी नीयत की, उसे मैंने हराया।"

अमीरो ने जब उसे बदला लेने के लिये कहा, तो उसने उत्तर दिया—"दुनिया के लोग

कहेंगे, कि अल्प तगिन ने साठ साल सामानी खानदान को सभाले रक्खा, जब उसकी उमर अस्सी बरस की हो गई, तो अपने स्वामि-पुत्रो से अलग हो उनके मुल्क को दखल किया, स्वामी की जगह गद्दी पर बैठा। मैंने सारी उम्र नेकनामी से गुजारी, अब जबकि कब्र के किनारे पहुच गया हू, यह ठीक नही, कि म अपने नाम पर धब्बा लगाऊ। यह खूब मालूम है, कि गुनाह उसकी तरफ है, लेकिन सभी लोग इसे नही जानते। कितने ही लोग कहेंगे, कि गुनाह अमीर (सुल्तान) का है, कुछ लोग कहेंगे कि गुनाह अल्प तगिन का है। मै उसके राज्य की इच्छा नही रखता और न उसकी बुराई चाहता हू। जब तक म खुरासान में हू, तब तक यह बात नही होगी। अगर मं खुरासान से बिदा हो जाऊ और उसके मुल्क से बाहर निकल जाऊ, तो मतलबी लोगो को बात का मौका नही मिलेगा। जब तक मेरे हाथ मे तलवार खिच सकती है, तब तक रोटी हाथ में ला सकता हू। इसी तरह बाकी उमर बिताऊगा। अ छा है कि अपनी तलवार को काफिर (गर मुस्लिम) के सिर पर चलाऊ, जिसमें कि मुझे पुण्य मिले। अब समझे? यह सेना, खुरासान, ख्वारेज्म, नीमरोज आ।र मावराउन्नह्र (अन्तर्वेद) की होनेसे अमीर मसूर की है, तुम सभी उसके आज्ञाकारी (सेवक[1]) हो। मैंने तुम्हे उसको दे दिया। उठो और उसकी दरगाह में जाओ। उसकी खिदमत में रहना। म हिन्दुस्तान की ओर जाऊगा और धमयुद्ध और जहाद में लगूगा। अगर मारा जाऊगा, तो शहीद होऊगा, अगर सफलता पाई, तो कुफ्र के भवन को इस्लाम का भवन बनाऊगा।

किसी को यह विश्वास नही था, कि वह खुरासान छोडकर हिन्दुस्तान जायेगा, जब कि खुरासान और मावराउन्नह्र में उसके पाच सौ गाव जायदाद के थे, कोई ऐसा शहर नही था, जहा पर उसकी सराय (महल), बाग, कारवासराय, और गरमाबा (स्नानगृह) न हो। उसके पास बहुत अधिक सम्पत्ति थी। हजार-हजार भेडे, और सौ-हजार घोडे तथा ऊट उसके पास थे। अल्प तगिन के मन मे हुआ, बलख चले। चलकर वहा एक-दो महीना मुकाम करे, जिसमें कि जो भी गजा (धर्मयुद्ध) की इच्छा रखने वाले हे, वह मरावरउन्नह, खुत्तलान और बलख के इलाके से उसके पास आवें।

इसपर भी चुगलखोरो ने चुगली की और मसूर ने १६ हजार सवार के साथ एक अमीर को बुखारा से बलख जाने के लिये कहा, जिसमें जाकर उसका गिरिफ्तार करें।

जब लश्कर तेरमिज पहुचकर जेहू (वक्षु) नदी पार हो गई। तो अल्प तगिन ने खुल्म की तरफ कूच कर दिया। खुल्म और बलख के बीच मे एक तग दर्रा है। इसी तग दर्रे में चार फर्सख का रास्ता जाने पर खुल्म मिलता है। अल्प तगिन उस दर्रे म पहुचा। उसके पास २० हजार गुलाम सवार थे। सभी अच्छे आदमी थे। धर्मयुद्ध के लिये आठ सौ आदमी और आकर शामिल हुए।"

---

[1] बन्दगो (गुलामो) की शिक्षा—सियासतनामा के २७ वें अध्याय म निजामुलमुल्क ने तुर्क-गुलामो की शिक्षा का सविस्तर वर्णन किया है, और वही अल्पतगिन और सुबुक तगिन जसे सौभाग्यशाली बन्दगो का जिक्र किया है (पृ० ९८-१०८)—"पुराने समय मे गुलामो की परवरिश और शिक्षा की व्यवस्था उनकी खरीद के दिन से बुढ़ापे तक की जाती थी।"

अल्प तगिन कूच करके बामियान पहुचा। अमीर-बामियान ने उसका विरोध किया, जिसपर वह बन्दी बना। अल्प तगिनने उसे माफ कर दिया और उसे खिलअत दे अपना बेटा कहा। बामियान के इस अमीर का नाम शेर बारीक था। वहा से अल्प तगिन काबुल की ओर चला। उसने अमीर-काबुलको हराया, उसके लडकेको बन्दी बनाया और उसे भी उसी तरह (पुत्र) कहकर पिता के पास भेज दिया। यह काबुल-राजा का पुत्र लोयक का दामाद था, वहा से गजनी जाने का इरादा किया। अमीर गजनी भाग गया। जब अल्प तगिन गजनी पहुचा, तो (वहा का राजा) लोयक बाहर आया और उसने युद्ध किया। अमीर-काबुल का पुत्र दूसरी बार पकडा गया। (गजनी के फतह करने पर) तीन दिन ढिंढोरा पीटा गया, कि 'जिस किसी के पास मुसलमानो का माल मिलेगा, उसके साथ मैं वही करूगा, जैसा कि मैने अपने गुलाम के साथ किया (एक गुलाम को अल्प तगिन ने मौत की सजा दी थी)।' उसकी सेना बहुत डरी। लोग सन्तुष्ट हुए। नागरिको ने जब इस शान्ति और न्याय को देखा, तो कहा—'हमें ऐसा ही बादशाह चाहिये, जो कि न्यायी हो। फिर हम उसको अपने प्राण बच्चे-स्त्री के समान मानेगे। हमारा अभिलषित यही था, चाहे तुर्क हो, चाहे ताजिक।' तब उन्होने नगर का दरवाजा खोल दिया और अल्प तगिन के पास आये। लोयक ने जब यह देखा, तो वह भागकर किले मे बन्द हो गया, और २० दिन बाद निकल कर अल्प तगिन के सामने आया। अल्प तगिन ने उसे जागीर दी। उसने किसी को दु ख नही दिया, गजनी में अपना घर बनाया और वहा से जा हिन्दुस्तान को लूटा। वहा से बहुत सा लूट का माल लाया। गजनी से काफिरो (हिन्दुओ) का मुल्क १२ दिन का रास्ता था। खुरासान, मावराउन्नह्र, नीमरोज में खबर पहुची, कि अल्पतिगन ने हिन्दुस्तान के दरबन्द (घाटे) को खोल दिया और वहा से बहुत सा सोना-चादी, पशु ले आया, भारी गनीमत का माल प्राप्त किया, तो चारो ओर से लोग (गाजियो की सेना में भरती होने के लिये) दौडे। यहा तक कि ६ हजार सवार जमा हो गये। उन्होने बहुत से वलायत (प्रदेश) दखल किये और बेगापुरतक साफ कर दिया, वलायत अपने हाथ में किये। हिन्दुस्तान का शाहशाह डेढ़ लाख सवार और पैदल तथा पाच सौ हाथियो के साथ सामने आया, यह ख्याल करके कि अल्प-तगिन को हिन्दुस्तान की भूमि से बाहर कर दे या उसको उसकी सेना के साथ मार डालें।

निजामुल्मुल्क ने अल्पतगिन को सामानियो द्वारा पालापोसा, बन्दा बतलाते हुए लिखा है (पृ० ९५)—"३५ वर्ष की उम्र में उसने खुरासान की सिपहसालारी (सेनापतिपद) पाई। वह बडा ही ईमानदार और विश्वासपात्र, बहादुर, होशियार, ईश्वर से डरनेवाला था। वह सालो खुरासान का वली (राज्यपाल) रहा। उसके पास २७०० गुलाम (बन्दी) तुर्क रहते थे। एक दिन उसने ३० गुलाम खरीदे, जिनमे एक महमूद का पिता सुबुक तगिन भी था। उसे खरीदे तीन ही दिन बीते थे। वह गुलामो के बीच अल्पत गिन के सामने खडा था। उसी समय हाजिब ने आकर अल्प तगिन को कहा—"अमुक गुलाम जिसे वसाक बाशी का पद मिलने की आज्ञा थी, नही है। उसके दर्जे और उत्तराधिकार को किस गुलाम को दिया जाये।" इसी समय अल्प तगिन की नजर सुबुक तगिनके ऊपर पडी और उसकी जबान पर आ गया—"इसी गुलाम को मैने प्रदान किया।"

हाजिब ने कहा—"स्वामी, अभी इस गुलाम को खरीदे तीन रोज से अधिक नही हुये। अभी इसने एक साल भी सेवा नही की, उस दर्जे पर पहुचने के लिये सात साल सेवा करनी चाहिये।

अल्प तगिन ने कहा—"मने कह दिया, गुलाम ने सुन लिया, और सेवा कर दी। मैंने उसे जो प्रदान किया, उसे नही लौटाऊगा। यह वसावबाशी का पद इसे दे दिया।"

अल्प तगिन ने अपने मनमे सोचा, हो सकता है, यह गुलाम के तौर पर नया-नया खरीदा तरुण तुर्किस्तान में किसी वुजुर्ग (कुलीन पिता) का पुत्र हो। शायद यह काम को अच्छी तरह करे। यह सोचकर उसने परीक्षा लेने की सोची। जो भी पैगाम देकर भेजा, जो काम दिया, किसी में उसने गलती नही की। परीक्षा में हर रोज वह अच्छा उतरता गया, इसलिये अल्प तगिन के दिल में उसके लिये स्नेह हो गया। जब सुबुक तगिन १८ साल का हो गया, तो उसके नीचे २० गुलाम दिये। एक दिन अल्प तगिन ने २० गुलामो को देकर हुकम दिया, कि वह खलज और तुकमान लोगो के पास जाये और उनके पास जो मालगुजारी वधी हुई है, उसे वसूल कर लाये। सुबुक तगिन भी इन गुलामो में था। जब वहा पहुचे, तो खलजो और तुकमानोने सारी मालगुजारी नही दी। गुलाम नाराज हो गये, और हथियार उठाकर जग करने का इरादा करने लगे, जिसमें कि जबर्दस्ती मालगुजारी वसूल कर लें। सुबुक तगिन ने कहा—"मै हर्गिज लडाई नही करूगा' और इसमें तुम्हारा सहायक नही बनूगा। इसपर उसके साथियो ने फिर कहा। तब उसने जवाब दिया—"क्योकि खुदावन्द (स्वामी) ने हमें जग करने के लिये नही भेजा, वल्कि कहा कि मालगुजारी ले आवें। अगर जग करें और वह हमे हरा दें, तो यह बडी बुरी बात होगी और हमारे खुदावन्द की इज्जत को हानि पहुचेगी। फिर खुदावन्द कहेगा, कि बिना हुक्मके क्यो तुमने जग किया। " अधिकाश लोगो ने भी कहा, कि वह ठीक कह रहा है। उन्होने लडाई नही की और लौट गये। अल्प तगिन के पास जाकर कहा कि 'तुकमानो ने सरकशी की और मालगुजारी नही दी'। अल्प तगिन ने कहा—'क्यो हथियार नही उठाया? लडाई करके मालगुजारी उनसे क्यो नही लिया?' उन्होने कहा—'हम जग करनेवाले थे, लेकिन सुबुक तगिन ने नही करने दिया। अल्प तगिन ने सुबुक तगिन को कहा—'क्यो तूने जग नही किया, और क्यो नही गुलामो को जग करने दिया?"

सुबुक तगिन ने कहा—'इसीलिये, कि हमारे खुदावन्द ने आज्ञा नही दी थी। अगर बिना हुकम के जग करते, तो हममें से हरेक खुदावन्द (स्वामी) था, बन्दा नहीं। बन्दगी (सेवक धर्म) यह है, कि उतना ही करे जितने के लिये कि खुदावन्द ने हुक्म दिया।'

अल्प तगिन खुश हुआ और उसने कहा—'ठीक कह रहा है।'

फिर उसे तीस सौ गुलामो के अफसर का पद दिया।

अल्प तगिन को पुत्र नही था, कि उसको अपनी जगह बैठाये। सुबुक तगिन गुलाम था, जिसे उसने पहिले खरीदा था। उसका हक ज्यादा था। दूसरो ने कहा कि सुबुक तगिन अपनी होशियारी मुरौवत, दानशीलता, सुस्वभावता और ईश्वर से भय खाने, विश्वासपात्र होने के कारण सबसे बढ़कर है। उसे हमारे खुदावन्द ने पाला है, और उसके कामो को पसन्द किया है। अल्प तगिन के सारे स्वभाव और आचरण उसमे है। सबने एक राय होकर सुबुक तगिन को अपना अमीर बनाया। सुबुक तगिन ने जाविलिस्तान के स्वामी की लडकी ब्याही थी, जिसमे महमूद पैदा हुआ, इसी कारण उसे जाविली कहा जाता था।"

तुलनात्मक गजनवी-सल्जूकी-गोरी-वश

सन् ई०	भारत (कन्नौज)	चीन	दक्षिणापथ	उत्तरापथ
	(प्रतिहार)	(खित्तन)	(गज़नवी)	(कराखानी)
१०००		शेङ्गचुङ ९८३-१०३१		
	राज्यपाल १०१८-		महमूद ९९७-१०३०	तुगान १०१२-२५
१०२०				कादिर १०२५-३२
	त्रिलोचन १०२७-	शिङ्गचुङ १०३१-५५	मसऊद १०३०-४१	अर्सलन १०३२-५६
	यश १०३७-			
१०४०			मौदूद १०४१-४८	
			इब्राहीम १०४८-५१	
		ताउचुङ १०५५-११०१	(सल्जूकी)	वोगरा १०५६-५९
			तुगरल १०३६-६३	
१०६०			अल्पअसलन १०६३-७३	तुगरलकरा १०५९-७४
	(गहड़वाल)		मलिकशाह १०७३-९२	वोगराहारून १०७४-०२
१०८०	चद्रदेव १०८०-			
			महमूद १०९२-९४	
			वर्कियारुक १०९४-११०४	
११००	मदनचद्र ११००-	त्यान्-चू-त्ती ११०१-२५	मलिकशाह ११०४-१७	असलनमहमूद ११०२-३०
		(चिन्)		
	गोविंद १११४-	ताइ-चू १११५-२३	सिंजर १११७-५७	(कराखिताई)
११२०		ताइचुङ ११२३-३५		येलू ११२५-४३
		शी-चुङ ११३५-४९		
११४०				चेलुगू ११४३-८२
		है-लिङ वाङ ११४९-६१		
	विजय० ११५५		(गोरी)	
११६०		शीचुङ ११६१-९०		
	जयचद्र		गयासुद्दीन -१२०३	

११७०-११९८

११८०

'गुरखान'

११८२-१२१०

चाङ्गवुङ्ग ११९०-१२०९

---

§२ राजावलि—

गजनवी राजा इस प्रकार है —

१	सुबुक तगिन	- ९९७ ई०
२	महमूद सुबुकतगिन-पुत्र	९९७-१०३० ई०
३	मसऊद महमूद-पुत्र	१०३०-१०४१ ई०
४	मुहम्मद महमूद-पुत्र	१०४१-
५	मौदूद मसऊद-पुत्र	१०४१-
६	इब्राहीम	-१०५९ ई०

१ सुबुक तगिन (—९९७ ई०)

सुबुक तगिन योग्य सेनापति तथा शासक था। अल्प तगिनके उत्कर्षमें उसका भी हाथ था और उस के खुरासान छोड गजनी में नये राज्यकी स्थापनाम सुबुक तगिनका काम काफी था। सुबुक तगिन अल्प तगिनके मरने पर भी सामानी वंश का भक्त रहा, किन्तु अंतिम शासक ने सुबुक तगिनके लिये गद्दी छोड दी। इसके बाद भी वह अपने को जीवन भर सामानियोंका अधीन सामन्त मानता रहा, यद्यपि अब राजशक्ति सामानियोंके हाथमें बडी तेजीसे निकलती जा रही थी।

२ महमूद (९९७-१०३० ई०)

महमूद अपने पिता सुबुक तगिनके मरनेके बाद गद्दी पर बैठा। समानियोंमें झगडा था, इसलिये उसे खुरासान छोडकर गजनीके ऊपर अपना ध्यान लगाना पडा और अन्तमें वह गद्दीपर बैठनेमें सफल हुआ। अन्तिम सामानीकी मृत्युके बाद सामानी राज्य कराखानिया और गजनविया में बट गया। जुल्कदा ३८९ हि० (अक्तूबर-नवम्बर ९९९ ई०)में इलिक खानकी सेना बुखारा में प्रविष्ट हुई। इसी महीनेमें महमूद अपने पिता की गद्दीपर बैठा। वह स्वतत्र शासक था, और उसे सामानियोंको अपना अधिराज माननेकी अवश्यकता नहीं थी। बगदादी खलीफा अब केवल धार्मिक गुरु भर रह गया था और उसका राज्य कितने ही स्वतत्र राज्यों (रियासतों) में बँट चुका था, तो भी वह इस्लाम का बडा पोप था। स्वतत्र शासक उसके पास बडी बडी भेंटें भेजा करते और खलीफा उन्हें भारी भरकम पदवियां प्रदान करता। खलीफा कादिर[1] (९९१—१०३१ ई०) ने महमूद को "वली अमीरुल्-मोमनीन खुरासान-पति" (खलीफाका मुसलमानी राज्यपाल) का "अहद" (शासन-पत्र) एक मुकुट और "यमीनुद्दौला-अमीनुल्मिल्लत" (राज्य-दक्षिणवाहु

---

[1] निजामुल्मुल्क "सियासतनामा"

जातीय-अमीन) की उपाधि के साथ भेजा था। महमूदने खुरासानमें अपने खुतबेमें खलीफा कादिरका नाम पढवाया। यह वही खलीफा था, जिसे ९९१ ई० में दैलिमियोकी कृपासे गद्दी मिली थी, लेकिन सामानियोने उसे खलीफा नही माना था। भारतके राजाओकी तड़क-भड़क तथा सामानियोकी शान-शौकतको दुगना करके महमूदने अपने दरबारको सजाया था। महमूदने ही पहिले-पहल इस्लाममें "सुल्तान"की उपाधि कमसे कम दरबारी कामोमें धारणकी थी। वैसे साधारणतया वह "अमीर महमूद" ही कहा जाता था। महमूदके सिक्को तथा गरदेजीके इतिहासमें "सुल्तान"की पदवी उसके साथ जुडी मिलती है।

सामानियोंके खतम होनेके बाद काराखानी और गजनवी एक दूसरेके प्रतिद्वन्द्वी बने। महमूदके "वली-अमीरुल्मोमनीन" बननेपर इलिक खान क्यो पीछे रहता? उसने अपनेको "मौला-अमीरुल् मोमनीन" (खलीफाका सरदार) घोषित किया तथा अपने सिक्कोपर खलीफा कादिरका भी नाम उत्कीर्ण करवाया। इलिक नस्रके सिक्कोपर उसकी पदवी "नासि-रुल्हक" (सत्यरक्षक) है। कराखानी और गजनवी प्रतिद्वन्द्वी और पडोसी भी थे। हमेशा हर बातका फैसला तलवारसे करना अच्छा नही था, इसलिये १००१ ई० मे महमूदने शाफई इमाम अबूतैयब सलहा मुहम्मद-पुत्र सालकी और सरख्सके गवनर तथा अपने भाई तुगान्चिक को दूत बनाकर इलिक खानके पास उजगन्द भेजा। इलिक नस्रने उनका अच्छी तरह स्वागत किया और बहुमूल्य रत्न, कस्तूरी, घोडे, ऊट, दासी-दास, सफेद बाज, काले समूरी चम, हुतुव् (बलरस) की सीग, तथा चीनकी कितनी ही बहुमूल्य वस्तुओकी भेंटके साथ अपनी लडकीको महमूदकी खातून बनानेके लिये भेजा। इस प्रकार दामाद बनाकर यह भी तै किया, कि वक्षु (आमू-दरिया) दोनो राज्योकी सीमा रहे। लेकिन इस सधिको सबसे पहिले कराखानियोने तोडा। दरअसल कराखानी जैसे घुमन्तुओमें जनमत इतना प्रबल होता था, कि खानके मिलानेसे काम नही चलता था।

महमूदने भारतके काफिरोंसे धर्मयुद्ध छेड रखा था। वह इस समय प्रतिवर्ष लूट-मारके लिये भारत जाया करता था। १००६ ई० मे ऐसे ही एक अभियानमे जाकर वह मुल्तानमें ठहरा हुआ था, जब कि कराखानियोने अपनी दो सेनाओको खुरासानके ऊपर भेज दिया। पहिली सेनाको सुबासी तगिनके नेतृत्वमें नेशापोर और तूसको दखल करनेका और दूसरी सेनाके सेना-पति जाफर तगिनको बलख लेनेका काम मिला था। दोनोंने अपने कर्तव्य पूरे किये। बलखके नागरिकोने कराखानियोंके साथ कुछ गुस्ताखी दिखलाई, जिसपर शहर लूट लेनेकी आज्ञा हो गई। नेशापोरके जन-साधारण तटस्थ रहे, किन्तु धनीमानी लोग अन्तर्वेदकी तरह गाजी महमूदके पक्षमें थे। यह खबर महमूदको मुल्तानमें मिली। वह तुरन्त लौट पडा और जाफर बलख छोडकर वक्षु पार तेरमिज भागनेके लिये मजबूर हुआ। सुबासी तगिन भी महमूदका मुकाबिला नही कर सका और अपने सामान लदे काफिलेको ख्वारेज्मशाह अलीके पास भेज कर बची-खुची थोडी सी सेनाके साथ अन्तर्वेदकी ओर भागा। उसका भाई और नौ सौ सैनिक महमूदके बन्दी बने। महमूदका ध्यान बँटानेके लिये इलिकने जाफरको छ हजार सैनिकोंके साथ बलख पर आक्रमण करनेके लिये भेजा, लेकिन उस सेनाको वक्षु तटपर ही महमूदके भाई नस्रने छिन्न-भिन्न कर दिया। इलिकने इस घोर पराजयसे नाराज होकर अपने सैनिकोको फटकारा। इसपर उन्होंने हिन्द-विजेताकी सेनाके बारेमें कहा—"न आँ फ़ोलान व सलाह व आलात व मरदाँ

हेचकश मुकावमत न तवानद्" (ऐसे हाथियो, हथियारो और आदमियोंके साथ कोई नही लड सकता)। दूसरे साल इलिकने स्वय महमूदके खिलाफ युद्ध-क्षेत्रमें उतरनेका निश्चय कर अन्तर्वेदके देहकानाको लडनेके लिये बुलाया और अपने भाई कादिर खान यूसुफ (खोतनके शासक) के साथ जो झगडा चल रहा था, उसम समझौता कर लिया। फिर उसके "चौडे मुह, छोटी आखो, चिपटी नाको, नाममात्र मूछ-दाढीवाले, लोहकी तलवार तथा काली पोशाकवाले" कराखानी तुर्क महमूदका मुकाविला करने आये। वलखसे चार फरसख (२४ मील) पर सरखियान पुलके पास रविवार ४ जनवरी १००८ ई० (२२ रवी २, ३९८ हि०) को लडाई हुई। महमूद भारतमें केवल हीरा-मोती ही नही वटोरता था, वल्कि लडाईके सामान भी ले जाता था। इस लडाईमे उसने पाच सौ हाथी ला खडे किये। तुर्क हाथियोसे लडनेके अभ्यासी नही थे, न उनके घोडे हाथियोंके सामने ढीठ होकर जा सकते थे। महमूदकी रक्षा इस युद्धमें इन्हीं भारतीय हाथियोने की, नही तो वह कही का नही रहता। कराखानी सेना पूर्ण रूपसे पराजित हुई। जो भागे, उनमेंसे भी वहुतेरे वक्षु नदीमे डूव गये। कराखानी सामानियोंके खुरासानी इलाकेका भी अपने हाथमे करना चाहते थे, लेकिन वह पूरी आफतमें फसे। इसमें सदेह नही, इस हारमे कराखानियोका घरेलू झगडा भी कुछ कारण था। इलिकके वडे भाई तुगान खान काशगरीने भाईके विरुद्ध महमूदके साथ दोस्ती की थी। इलिकने भाईपर चढाई करना चाहा, लेकिन इस वक्त काशगरके रास्तेको वरफ रोके हुई थी, इसलिये इलिकको उजगन्द लौट जाना पडा। फिर दोनो भाइयोंके दूत विजेता महमूदके पास पहुचने लगे। महमूदने १०११-१२ ई० में दोनों भाइयोमें समझौता कराया। इलिक १०१२ ई० में मर गया।

§३ महमूद और ख्वारेज्मशाह

(१) अली—मामून ख्वारेज्मशाहके वाद उसका पुत्र अवुल् हसन अली ख्वारेज्मशाह वना। सुवुक तगिनके अभियानसे ज्ञात है, कि अली कराखानियोंके अधीन था। इलिक और उसके सहायकोको जव महमूदने हराया, तो ख्वारेज्मशाह महमूद गजनवीका मित्र वन गया। महमूदने उसके साथ अपनी वहन व्याह दी तथा अलीके भाई तथा उत्तराधिकारी अवुल्-अव्वास मामून (II) मामून (I)-पुत्रको भी अपनी एक वहन १०१५ (४०६ हि०) मे दी।

(२) मामून (II)—खलीफा कादिरने मामूनके पास भी अहद (नियुक्ति-पत्र), खिलअत, ध्वजा (राजचिह्न), "ऐनुद्दौला व जैनुल्मिल्लत" (राज्य-नेत्र, जाति-भूषण) की पदवी भेजी। सीधे लेनेमें महमूदके क्रोध का डर था, इसलिये मामूनने अपने दरवारी तथा प्रसिद्ध विद्वान् अबू-रेहाँ अल्बेरूनीको रेगिस्तानमे जा खलीफाके दूतसे भेट स्वीकार करनेके लिये भेजा। मामून और महमूदकी दोस्ती ज्यादा दिनोतक टिक न सकी। महमूदने इलिक खान और तुगानसे सधि करली। मामूनने उस सधिमें भाग लेनेसे इन्कार कर दिया, जिसके कारण दोनोंके सवध विगड गये। अपने वजीर अवुल्-कासिम अहमद हसन-पुत्र मैमन्दीके परामर्शानुसार महमूदने अपने पुराने दोस्तकी परीक्षा करनी चाही। १०१४ ई० में ख्वारेज्मशाहके दूतसे वजीरने कहा, कि मामूनके राज्यमें महमूदके नामसे खुतवा जारी किया जाये। ऊपरसे ऐसा दिखलाया गया, मानो वजीरने सुल्तानकी इच्छाके विना ही यह सुझाव रक्खा। ख्वारेज्मशाहने पहिले आना-कानी की। तव मैमन्दीने स्पष्ट शब्दोमें यह माग रखी। मामूनने अपने सेनापतियो और जन-प्रतिनिधियोंको

बुलाकर उनके सामने यह बात रखते हुए कहा—इन्कार करनेपर महमूद हमारे देशको सत्याना-शमें मिला देगा। लेकिन,उसके अमीरोने माननेसे साफ इन्कार कर दिया और विद्रोह का झडा उठाया। तलवार निकाल कर उन्होने महमूदके लिये अपमानजनक कडे-कडे शब्द इस्तेमाल किये। मामूनने दूतसे मीठी-मीठी बाते करके शान्त करनेकी कोशिश की। अल्-बेरूनीने भी "अपनी सुनहली-रुपहली वाणी" से समझाकर महमूदके वजीरके सामने शाहसे माफी मगवाई। इसी समय अपने पक्षको मजबूत करनेके लिये अल्बेरूनीके परामर्शानुसार मामूनने इलिक और तुगान खानके झगडको शान्त कर उनमें मेल कराया। मामूनके इस अनुचित दखलसे नाराज होकर महमूदने बलखसे अपना दूत भेज, तुगान खान और इलिकके सामने अपनी अप्रसन्नता प्रकट की। उन्होने उत्तरमें कहा—"हमने मामूनको आपका मित्र और बहनोई जानकर उसकी बातपर ध्यान दिया", और साले और बहनोईका झगडा मिटानेके लिये मध्यस्थ बननेकी इच्छा प्रकट की, किन्तु महमूदने इसका उत्तर भी देनेकी अवश्यकता नही समझी।

कराखानियोने मामूनको सारी बात बतला दी। मामूनने सलाह दी,कि ख्वारेज्म और कराखानी दोनो, एक एक वाहिनी खुरासान भेजें, जो कि प्रजाको विना दुःख दिये भिन्न-भिन्न दिशाओंसे जाकर वहा शान्ति स्थापित करे। कराखानी इस सलाहको माननेके लिये तैयार नही थे। उन्होने फिर साले-बहनोईके बीच मध्यस्थ बननेकी बात दुहराई। मामूनने उसे स्वीकार किया। कराखानियोंके दूतने १०१६-१७ ई० मे महमूदके पास पहुचकर मीठी-मीठी बातें कीं। महमूदने भी कहा—तुम्हारे कहनेसे हम सभी बातोको भूल जाते हैं। इसके बाद ही महमूदने मामूनको निम्नपत्र लिखा—

"यह मालूम है, कि हम दोनोंके बीचमे किन शर्तोंके साथ मित्रताकी सधि हुई थी, और ख्वारेज्मशाहपर हमारा कितना उपकार है। खुतबाके सबधमें उसने हमारी इच्छाओका पालन यह जानते हुए किया, कि अगर ऐसा नही किया, तो क्या दशा होगी? लेकिन उसके लोगोने उसे इस काममें स्वतत्र नही रहने दिया। मैं 'प्रतिहार और प्रजा' का शब्द (ख्वारेज्मशाहके लिये) इस्तेमाल नही करता, क्योकि ऐसे लोगोंके लिये इस शब्दका इस्तेमाल नही किया जा सकता, जो कि सुल्तानको कह सकते हैं 'यह करो' यह नही करो।' इस बातसे शासनकी कमजोरी और असमर्थता प्रकट होती है, सचमुच ही यही बात थी। इस अवस्थासे नाराज होकर मैंने यहा बलखमे इतने समय तक ठहर कर एक लाख सवार तथा पैदल, एव पाच सौ सैनिक हाथी इन राजद्रोहियोको सजा देनेके लिये जमा किये, जिन्होने अपने प्रभुकी इच्छाके प्रति विरोध प्रदर्शित किया। उन विश्वासघातियोको मै ठीक करना चाहता हूं, साथ ही अपने भाई तथा साले अमीरको ऊपर उठाना चाहता हू, और उसे दिखलाना चाहता हू, कि शासन किस तरह करना चाहिए। एक निर्बल अमीर इस कार्यके अयोग्य है। हम गजनी तभी लौटेंगे, जब कि निम्न तीन मागोमेंसे एकको पूरा करनेके साथ मेरे पास पूर्ण क्षमा-याचना पहुचेगी—(१) "मेरे नामसे खुतवा जारी किया जाय और पहिले के वचन-दानके अनुसार पूरी आज्ञाकारिता और रजामन्दी प्रकट की जाय, (२) हमारे पास हमारे योग्य पैसा और भेंट भेजी जाय, जिसे कि हम चुपकेसे लौटा देंगे, क्योकि हमें व्यर्थके पैसोकी अवश्यकता नही है, उसके विना भी सोने-चादीके बोझसे दबती भूमि और किले हमारे पास ह, (३) अथवा क्षमा-पत्रके साथ क्षमायाचनाके लिये अपने अमीरो, इमामो

और फकीहाको मेरे पास प्रार्थना करनेके लिये भेजे, जिसमें कि मैं वहासे अपने साथ पकड लाये कई हजार आदमियोंको लौटा दूं।"

ख्वारेज्मशाहने तीनों शर्तें पूरी करना ठीक समझा। उसने खुतबाको पहिले खुरासानके अपने नगरों नसा और फारावमें, उसके बाद काथ और गूरगंज इन दोनों राज-धानियोंको छोड बाकी शहरोंमें भी जारी किया। कितने ही शेखों, काजियों और दीवानोंको अस्सी हजार दीनार तथा तीन हजार घोडों को भटके रूपमें भेजा। इसका प्रभाव उसकी प्रजापर बुरा पडा और हजारास्पमें तैयार सेनाने मामूनके बुखारी हाजिब (अमात्य) अल्प तगिनके नेतृत्वमें उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया। कितने ही अनुयायी और वजीर मारे गये, बाकी भाग गये। ख्वारेज्मशाह मामून किलेमें बन्द हो गया। विद्रोहियोंने बुधवार २० मार्च १०१७ ई० को किलेमें आग लगा दी और मामूनको मार डाला।

(ग) अबुल्हारिस (१०१७)—मामूनके मरनेके बाद उन्होंने उसके भतीजे अबुल हारिस मुहम्मद अली-पुत्र (१०१७ ई०) को गद्दीपर बैठाया, जो कि उस समय सात सालका बच्चा था। सारी ताकत अल्प तगिन और उसके द्वारा नियुक्त वजीरके हाथमें थी। विद्रोहियोंने मनमाने तौरसे धनियोंको लूटा-मारा और इस मौके से लाभ उठाकर अपने वैयक्तिक दुश्मनोंसे बदला लिया।

महमूद गजनवीके साथ जो झगडा खडा हुआ था, उसमें मामूनने अपने सालेको खुश रखनेके लिये अपने प्राण तक खोये। इसके लिये महमूद कोई कडा कदम उठाना चाहता था, लेकिन उसकी बहन अभी ख्वारेज्ममें थी। उसको डर लगा, कि कहीं विद्रोही उसको नुकसान न पहुँचायें। इसलिये नरमीसे काम लेते हुए उसने केवल खुतबा जारी करने तथा हत्यारोंको समर्पण करनेकी माग पेश की। दूतको यह भी सिखला दिया था, कि वह जाकर विद्रोहियोंसे कहे—सुल्तानको यदि खुश करना चाहते हो, तो उसकी बहनको सही-सलामत उसके पास भेज दो। विद्रोहियोंने बहनको तुरन्त भेज दिया, और पाच-छ आदमियोंको हत्यारा कहकर जेलमें डाल दिया। सधि हो जानेपर वह दो लाख दीनार और चार लाख घोडोंके साथ हत्यारोंको भेजनेकी भी तैयारी करने लगे। लेकिन, महमूद इतने से थोडे ही क्षमा करनेवाला था? वह ख्वारेज्मपर आक्रमण करनेकी तैयारी करने लगा। वक्षु-तटके नगरों—खुत्तल, कबादियान और तेरमिज—में सैनिक अभियानके लिये नौकायें बनने लगी। आमूल (चारजूय) में रसद जमा होने लगी। इस सैनिक तैयारीकी गंभीरताको छिपानेके लिये ख्वारेज्मके दूतको साथ लिये महमूद गजनीकी ओर चल पडा। वहा जाकर उसने साफ जवाब दिया—यदि अपनी भलाई चाहते हो, तो अल्प-तगिन और दूसरे विद्रोही नेताओंको मेरे पास भेजो। ख्वारेज्मियोंके लिये लडनेके सिवाय कोई चारा नहीं था। उन्होंने पचास हजार सवार जमा किये। अभियानके लिये प्रस्थान करते हुए महमूदने इलिक और तुगानखानको सूचित किया—मैं अपने बहनोईका बदला लेने तथा उस देशपर कब्जा करने जा रहा हूं। उन्होंने तुम्हें और मुझे बहुत कष्ट दिया है। कराखानियोंने देखा, कि ख्वारेज्म भी महमूदके हाथमें चला गया, तो हम पश्चिमसे भी घिर जायेंगे। तो भी महमूदकी इतनी धाक थी, कि कराखानियोंने सधि नहीं तोडी और विद्रोहियोंको दण्ड देनेके महमूदके संकल्पका समर्थन किया—"क्योंकि ऐसा करनेसे दूसरोंको शिक्षा मिलेगी कि राजाओंका खून बहानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिये।"

महमूद आमूलसे वक्षुके बायें किनारे किनारे अपनी सेना लेकर चला। ख्वारेज्मकी सीमा पर अवस्थित जाफराबादमें महमूदने अपने सेनापति मुहम्मद इब्राहीम-पुत्र ताईके आधीन सेना भेजी। उसके ऊपर अचानक रेगिस्तानकी ओरसे खुमारताश शराबीने आक्रमण किया। ताईकी सेनाकी बडी हानि हुई, लेकिन इसी समय महमूद आ गया, और सेनाका सर्वनाश नही होने पाया। ख्वारेज्मी पराजित हुए। खुमारताश महमूदका बन्दी बना। अगले दिन हजारास्पके पास ख्वारेज्मकी प्रधान-सेनाके साथ मुठभेड हुई। यहा भी ख्वारेज्मी पूर्णतया पराजित हुए और विद्रोहियोंके नेता अल्प तगिन (बुखारा) और सैयद तगिनखानी बन्दी बने। सैयद चुप रहा लेकिन अल्प तगिनने महमूदको मुहतोड जवाब दिया। आगे बढते हुए महमूदने ३ जुलाई १०१७ ई० को ख्वारेज्मकी राजधानी कातको दखल किया। वही उसने तीन विद्रोही नेताओको हाथीके पैरो तले रौंदवाया और उनकी लाशको हाथीके दातपर टगवा सारे शहरमे यह कहते हुए घुमवाया कि राजाओंके हत्यारोकी यही अवस्था होती है। फिर उन्हें फासी पर लटका दिया।

दूसरे विद्रोहियोको भी उसने अपराधके अनुसार दण्ड दिया। महमूदके कितने ही राजनीतिक शत्रु भी कुफ्रके अपराधमे तलवारके घाट उतारे गये। बच्चे ख्वारेज्मशाह (अबुल्-हारिस मुहम्मद) को उसके परिवारके साथ महमूदने अपने साथ ले जा भिन्न-भिन्न किलोंमें कैद कर दिया। ख्वारेज्मी सेनाके पैरोंमें बेडी डालकर गजनी ले गये, जहासे पीछे मुक्त कर काफिरोंके साथ लडनेके लिये भारत भेज दिया।

ख्वारेज्मशाहका पुराना वश खतम हुआ। उसकी जगहपर महमूद गजनवीने अपने प्रधान हाजिब अल्तूनताशको ख्वारेज्मशाह बनाकर एक नये वशकी स्थापना की।

(१) अल्तुनताश (१०१७)—द्वितीय ख्वारेज्म शाह अल्तूनताशकी मददके लिये महमूदने अरसलन जाज़िबको एक वाहिनी देकर ख्वारेज्म भेज दिया।

कराखानी इसेपसन्दनही करते थे, कि महमूदकी शक्ति बहुत बढ जायेलेकिन उन्हें अपने झगडोंसे फुर्सत नही थी। महमूदका विश्वसनीय मित्र तुगान खान ने १०१७ (४०८ हि०) में चीनकी ओरसे आये काफिरोंके एक लाख उर्दू (तबुओ)पर विजय प्राप्त की किन्तु जल्दी ही वह मर गया।

० ० ० ० ०

तुगान खान और अली तगिन दोनो तुगान खान (1) के पुत्र थे। अलीके पुत्र यूसुफके भी सिक्के मिले हैं। अली तगिन पहिले पहल इलिक नस्रके समय अन्तर्वेदमें आया। जैसा कि मैमन्दीने १०३२ ई० में महमूदसे कहा था—"अलीतगिन तीस सालसे अन्तर्वेदमें रह रहा है।" महमूद गजनवी १०२५ ई० में अन्तर्वेदकी भूमि में गया। उसी समय उसने कराखानियोंकी कमजोरी देखकर उनपर आक्रमण कर दिया। बहाना था—अली-तगिनके अत्याचारकी शिकायत देश-वासियोने मेरे पास भेजी और तुर्क खाकानके पास भेजे गये मेरे दूतको रास्ता नहीं दिया गया। महमूदने वक्षु पार करनेके लिये जजीरो से बधी नावोका पुल तैयार कराया। शगानियानका अमीर महमूदसे आ मिला, फिर ख्वारेज्मशाह अल्तूनताश भी आ पहुचा। महमूदने अपने लिये १० हजार घोडोंके बाधने लायक एक विशाल तबू तैयार कराया। जब इसकी खबर सारे कराखानियोंके महाखान कादिर खानको मिली, तो वह पूरबसे अभियान करते हुए समरकन्द पहुचा। महमूदका शिविर उसके शिविरसे और दक्षिण था। कादिर खान समरकन्दमें आकर

वहासे और आगे बढता वडे शान्तिपूर्ण भावके साथ महमूदके शिविरसे एक फसख (६ मील) की दूरीपर आकर रुक गया। तबू गाड दिए गये, फिर खानने महमूदके पास अपने आनेकी सूचना देनेके लिये दूत भेजकर कहा--"मै तुमसे मिलना चाहता हू।" महमूदने एक दूसरेके देखने लायक सुरक्षित स्थान ठीक कर दिया। खान और सुल्तान दोनो वहा आकर अपने घोडोंसे उतर पडे। महमूदने पहिले ही अपने खजानचीके हाथमे कपडेमें लिपटे एक बहुमूल्य हीरेको दे रखा था। घोडेसे उतरते ही उसे खानको भेट देनेका हुक्म दिया। कादिर खानने भी एक रत्न देनेके लिये रख रखा था, किन्तु चलते समय जल्दीमे भूल गया। पीछे उसने अपने परिचारक द्वारा रत्न भेजकर महमूदसे क्षमा मागी। दूसरे दिन महमूदने साटनके एक बडे सुदर तबूको गाडनेका हुकम दिया और उसमे भोजकी तैयारी कराई। कादिर खानको दूत भेजकर भोजनके लिये निमत्रित किया।

खानके आनेपर महमूदने बडे ठाट-बाटके साथ दस्तरखान फैलानेका हुक्म दिया। एक ही दस्तरखानपर अमीर महमूद और खान भोजन करनेके लिये बैठे। भोजन समाप्तिके बाद दोनो "प्रमोदशाला" में गये। उसे दुलभ फूलो, सुस्वादु मेवो, बहुमूल्य रत्नो, सुनहरे गोटा-पट्टा, कमखावो, बिल्लौरके सुदर दर्पणो तथा दूसरी अनेक प्रकारकी दुलभ वस्तुओंसे सजाया गया था। शालाको देखकर कादिर खान चकित हो गया। दोनो प्रमोदशालामे कुछ समय तक बैठे रहे। अन्तर्वेदके तुर्क खानोमें रवाज नही था, इसलिये कादिर खानने शराब नही पी। दोनों कुछ समय तक सगीत सुनते रहे। इसके बाद कादिर खान उठा। महमूदने अपने मेहमानके योग्य भेटें उपस्थित करनेके लिये आज्ञा दी। इन भेटोमे निम्न चीजे थी—सोने-चादीके मद्य-चषक, बहुमूल्य रत्न, बगदादकी दुलभ वस्तुए, सुन्दर कपडे, मूल्यवान् हथियार, रत्न जटित सोनेकी लगामवाले अनर्घ घोडे, रत्नजटित सोनेकी अमारियोंके साथ १० हथनिया, बरजा के सुनहले साजावाले खच्चर, सोने-चादीके डडे और घटियोवाले पाथेय, खच्चर, गोटा-पट्टे, साटन, बहुमूल्य कालीन, कामदार शिरोबद, तबारिस्तानी गुलाबी रगकी छीट, भारतीय तलवारें, चन्दन, भूरे अम्बर, अच्छी जाति की गदहिया, बरबरी बाघके चमडे, शिकारी कुत्ते, सारस, हरिन और जानवरोंके शिकार करनेवाले सुशिक्षित बाज और शाही। महमूदने बडे शिष्टाचार और सम्मानके साथ कादिर खानसे विदाई लेते उसके सामने कृतज्ञता प्रकट की और मेहमानीकी त्रुटियोंके लिये क्षमा मागी।

अपने शिविर में आकर जब कादिर खानने भेटकी चीजोको देखा, तो वह बडे आश्चर्यमें पड गया और समझ नही पाया, कि प्रतिदानमें क्या भेजे। उसने अपने कोषाध्यक्षको खजानेका दरवाजा खोलनेके लिये हुकम दिया और उसमेंसे बहुतसी अशर्फियोंके साथ तुर्क-भूमिमें उपजनेवाली चीजो--सोनेकी लगाम और रिकाब वाले बढ़िया घोडो, सुनहले कमरबन्द और जामा पहिने तुर्क दासो, बाज, नाना प्रकारके समूर, काली लोमडीके समूर, चमडेके बतन, सीग सहित दो बकरियोंकी खालसे बनाये गये बर्तन, चीनी साटन आदि—को भेजा। दोनो शासक बहुत सतोषके साथ मित्रतापूर्वक एक दूसरेसे विदा हुए। इस भेंटका राजनीतिक निश्चय यह हुआ, कि दोनो मिलकर अन्तर्वेदसे अली तगिनको खतम करके वहा कादिर खानके द्वितीय पुत्र यगान तगिनको शासक बनायें। महमूदकी पुत्री जैनबका ब्याह यगान तगिनसे और महमूदके द्वितीय पुत्र मुहम्मदके साथ कादिर खानकी पुत्रीका ब्याह तै हुआ। महमूद अपने बडे लडके मसऊदसे प्रसन्न नही था, वह अपने दूसरे पुत्र मुहम्मदको उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। लेकिन, सारी योजना अभी पूरी नही हो सकी थी, कि महमूदको अपने प्रतिद्वन्द्वी अली तगिनके सहायक तुर्क-

मानोंके सरदार सल्जूक-पुत्र इसराईलसे भुगतना पडा। महमूदने इसराईलको धोखेसे पकडकर अपने राज्य पजाबके एक किलेमें बन्द करवा दिया और उसके उर्दू (घुमन्तू अनुयायियो) को नष्ट कर बचे खुचे तुर्कमानोको खुरासानमें चले जानेकी आज्ञा दी।

अली तगिन बुखारा और समरकन्द छोडकर मरुभूमिकी ओर भाग गया। उसकी बीवी और लडकियोके साथ सारा सामान महमूदके हाजिब बिलगाना तगिनके हाथ लगा। इतनी सफलताके बाद भी अपने सहायकोकी हित-रक्षाका कुछ भी प्रबन्ध किये बिना महमूद बलख होते गजनी लौट गया। उसने कराखानियोकी अन्तर्वेदीय शाखाको बिलकुल ध्वस्त करनेका ख्याल इसलिये छोड दिया, कि उससे कादिर खान सर्व-शक्तिमान् हो जाता। पीछे बलखके पडोसी प्रदेश तेरमिज, कबादियान, शगानियान और खुत्तल—प्राचीन तुखारिस्तान—महमूदके हाथमें चले आये। यगान तगिनने गजना जा महमूदकी कन्यासे पाणि-ग्रहण करने तथा श्वसुरकी मददसे अन्तर्वेदको जीतने का ख्याल प्रकट किया, तो महमूदने कहा—अभी मैं सोमनाथ नगरके रास्तेमे हू। इसी बीच शायद तुम तुर्किस्तानमें अपने प्रतिद्वन्द्वीको हरा सकोगे। फिर हम दोनोकी सयुक्त सेना अन्तर्वेदसे तुम्हारे दुश्मनोको निकाल देगी। यगान तगिनको महमूदके उत्तरका अर्थ साफ मालूम हो गया और इसे उसने अपना अपमान समझा। कादिर खान और उसके पुत्रोने अली तगिनके भाई तुगान खानको हराकर बलाशगुन (सप्तनद) छीन लिया। महमूद भारतसे लौटा और शायद अन्तर्वेदमें कुछ छेड-छाड भी की, किन्तु अली तगिन बुखारा और समरकन्दका स्वामी बना रहा। बलाशागुनसे निकाले जानेपर तुगान खानने अक्सीकतमे अपना शासन-केन्द्र बनाया, जहा के १०२६ (४१७ हि०), १०२७ (४१८ हि०) में ढाले उसके सिक्के मिले हं। लेकिन दक्षिणी फरगानाके उजगन्द (इलिक नस्रकी राजधानी) से १०२५ (४१६ हि०) के पहिलेके कादिर खानके नामके सिक्के, फिर १०२९ (४२० हि०) मे अक्सीकतमे भी उसी के सिक्के मिले, जिससे जान पडता है कि कादिरखानने पीछे अक्सीकतको भी ले लिया।

१०२६ ई० में कयाखान और बुगराखान दो तुर्क (शायद कराखानी) खानो के दूत राजकन्या मागने के लिये महमूद के पास आये। महमूद ने बडे सम्मान के साथ दूतो से कहा—"हम मुसलमान हैं और तुम काफिर, इसलिये हम अपनी बहन-बेटी तुम्हें कैसे दे सकते हैं? हा, अगर तुम मुसलमान हो जाओ, तो शायद बात हो सकती है।" इसी साल महमूद के पास खलीफा कादिर ने महमूदके जीते देशो का "अहृद", उसके और उसके बेटो तथा भाई युसूफ के लिये नई पदवियोंके साथ भेजा। महमूद ने खलीफा को सामानियो के असली उत्तराधिकारी होनेके अपने कर्तव्यपालन करनेमें कोई कोताही न करने का वचन दिया। खलीफाने उसे "अखिल प्राचीका महान शासक" की पदवी प्रदान की। उसकी माग पर खलीफाने इस बातको मान लिया, कि महमूदके द्वारा ही वह कराखानियो से सबध स्थापित करेगा और उन्हें सीधे भेंट भी नही भेजेगा। यद्यपि कराखानियो के साथ महमूद का बर्ताव बराबरी का था, लेकिन खलीफा के सामने महमूद उन्हें अपने अधीन प्रकट करता था। मगलवार ३० अप्रैल १०३० को महमूद की मृत्यु हुई। उसके बाद कराखानियो और गजनवियो के सबध में परिवर्तन हो गया। वक्षु के उत्तर महमूद का राज्य कुछ थोडे से इलाके ही तक सीमिति था, किन्तु उसके राज्य के रूप में पूर्वी मुसलिम भूमि का शासन अपने चरम विकासपर पहुचा था।

महमूद के शासन में कुफ्र का दोष लगाकर जहा विरोधियो पर अत्याचार किया जाता

था, वहा उसकी दिग्विजया के खर्चे के लिये वडे वडे टैक्स लगाये जाते थे, जिससे प्रजा लाखा की सख्या में वर्बाद हो रही थी। महमूद ने भारत के नगरा ओर मदिरा की लूट के रूप मे अपार सपत्ति गजनी म पहुचाई थी, किन्तु उससे जनता को क्या लाभ ? जनसाधारण के लिये तो महमूद के सारे अभियान सत्यानाश के कारण थे। लोगा को उसने हाकिम जाक की तरह चूस रहे थे। महमूद के वजीर अबुल्-अब्बास फजल अहमद-पुत्र इस्फराइनी के अत्याचारो के कारण वहुत से आवाद इलाके उजड गये। कितने ही स्थानो पर नहर खराव ओर कितनी ही जगहो म विलकुल नष्ट हा गई। इसके ऊपर १०११ (८०१ हि०) का महान् अकाल आया। पहिले पाल्नेि अनाजकी फसल को नही पकने दिया, जिससे लोगा को खाने-पीने की चीजोका भारी अभाव हो गया। केवल नेशापोर और उसके आसपास के गावो मे एक लाख आदमी अकाल की वलि चढे। लोगो ने कुत्तो, विल्लिया को खाकर खतम कर दिया, और कभी कभी आदमी को आदमी का मास खाते देखा गया। महमूद ने गरीवो मे कुछ पसे वटवाये। महमूद की वडी वडी इमारते भारत की लूट से वनवायी गई थी, किन्तु उनकी मरम्मत और सुरक्षा के लिये भी वहुत धन खर्च करना पडता था, जिसका वोझ प्रजा पर पडता था। महमूद ने वलख मे एक वहुत सुन्दर वाग वनवाया था, जिसको अच्छी अवस्था म रखने के लिये नागरिको के ऊपर भारी कर लगा था। वह वहा वरावर नही रहता था, पर इसी वाग में अपने जलसे करता था। एक दिन उसने अपने दरवारियो से पूछा—"क्यो वगीचे के इतने मनोहर सौंदय के वीच में एक भी प्रमोद महोत्सव मनाने म सफल नही होता।" अबूनस्र मिस्कीनने क्षमा मागते हुए कहा—"वलख के नागरिक इस व्यथ के वगीचे की देखभाल के लिये वडे दु खी है, क्योकि इस हानिकारक खर्च का वहुत वडा भाग उनके सिर पर पडता है। इसीलिये सुल्तान के हृदय मे आनन्द ओर उल्लास नही हो पाता।" सुल्तान नाराज हो कई दिनो तक अबू-नस्र से नही वोला। कराखानियोके १००६ ई० के आक्रमण का हवाला देते महमूद ने कहा—"मै ऐसी आफतो से लोगा की रक्षा करता हू और वह मेरे लिये एक वगीचा भी ठीक-ठाक रखना भार समझते है।" इसके चार महीने वाद महमूद ने नागरिको को वगीचे के कर से मुक्त कर खर्च के लिये यहूदियो के ऊपर कर लगाया।

महमूद के दरवार के रत्न केवल प्रसिद्धि के लिये अपनी इस्लाम-भक्ति प्रदर्शित करते थे, नही तो वह सभी ढोगी थे। महमूद आलिमो और शेखो का सरक्षण तभी तक करता था, जव तक कि वह उसके हाथ में हथियार वनकर काम करने के लिये तैयार रहते थे। उसके धार्मिक युद्ध केवल धन लूटने के लिये थे, यह भारत के अभियान से स्पष्ट है। धर्मान्धता से प्रेरित होकर उसने ऐसा किया, इसका कोई प्रमाण नही मिलता। कभी कभी वह दूसरे की सपत्ति जप्त करने के वहाने उन पर कुफ्र का अपराध लगाता। महमूद ईरानी राष्ट्रीय भावनाओ का सरक्षक था, यह समझने की गलती की जा सकती है, क्योकि महमूद के कहने पर फिरदोसी ने अपने महान् ग्रथ "शाहनामा" को लिखा। महमूद की सेना में सबसे अधिक क्रीतदास ओर भाडे के सिपाही थे, वाकी प्रजा महमूद की आखो में केवल कर देने वाले प्राणी थी, जिनके दिलो में राज-भक्ति या धम-भक्ति का ख्याल हो ही नही सकता था। वलख के नागरिको के कराखानिया से मुकाविला करने की वात पर महमूद नाराज हो गया था। उसकी दृष्टि में युद्ध प्रजा का काम नही था।

उसने कहा था—"प्रजा को युद्ध से क्या काम ? यह स्वाभाविक था कि शत्रुओ ने तुम्हारे नगर को जला दिया, और आमदनी के एक अच्छे स्रोत, मेरी सपत्ति को नष्ट कर दिया। तुम्हें उन

हानियों की क्षतिपूर्ति मिलती, लेकिन हमने यह सोचकर माफ कर दिया, कि अब तुम फिर ऐसा नही करोगे। अगर किसी समय कोई राजा अधिक मजबूत दिखाई पड़े और तुमसे कर लेकर तुम्हारी रक्षा करना चाहे, तो तुम्हें कर चुका कर अपनी रक्षा करनी चाहिये।" इससे मालूम है, कि महमूद का पिता चाहे उन्ही तुर्कों का गुलाम हो, जिनमें कबीलेवाली सामन्तशाही रहते भी कुछ हद तक सादगी और सैनिक जनतान्त्रिकता थी, किन्तु, महमूद एक बिल्कुल निरकुश शासक था। उसके सामने प्रजा को सिर झुकाये कर देने के सिवाय और कोई अधिकार नही था।

उसके दरबार में भी ऐसे ही खूसट भरे हुए थे। पहिले सभी कागज-पत्र फारसी में लिखे जाते थे। वजीर मैमन्दी ने फिर से अरबी को राजकीय अभिलेखो की भाषा बनाया। ऐसा करने का कारण बतलाते हुए उसने कहा—"(लोकभाषा को मान देने पर) योग्य और अयोग्य सभी बराबर हो गये, जिसके कारण सुन्दर साहित्य की हाट को बहुत नुकसान पहुचा।" इसीलिये वजीर ने लेखको के तल को ऊपर उठाया। फारसी भाषा का उपयोग उन्ही कामो मे रहने दिया, जहा उसके बिना काम न चलता।

महमूदके राज्यमें लोगोको दो भागोमे बाटा गया था—एक वह जो कि सुल्तान की ओर से वेतन पाकर सैनिक सेवा करते थे और दूसरी साधारण जनता, जिसकी कि सुल्तान बाहरी और भीतरी शत्रुओ से रक्षा करता था। सैनिक या प्रजा में से कोई भी सुल्तान की इच्छा के विरुद्ध कोई काम करने का अधिकार नही रखता था। महमूद ने अपने पुत्र मसऊद तक के ऊपर खुफिया दूत रख छोडे थे।[१]

महमूद के बारे में निजामुल्मुल्क ने लिखा है—[१]"एक दिन सुल्तान महमूद अपने खास-गियो और नदीमोंके साथ शराब पिये हुये थे। उसके सिपहसालार अली नोश तगिन और मुह-म्मद अरबी उस मजलिस में मौजूद थे। वह सारी रात शराब पीते रहे। जब जगे तो सवेरा हो गया था। अली नोश तगिन पर शराब पीने का अधिक असर हुआ था। उसने घर जाने की इजाजत मागी। महमूद ने कहा—'दिन होने पर इस हालत में जाना ठीक नही है। इसी जगह बैठ होश होने पर जाना। अगर इस हालत मे तुझे मोहतसिब (अफसर) देखेगा, तो पकडेगा, तेरी आबरू चली जायगी और मेरा दिल दुखी होगा। अली नोश तगिन पाच हजार मर्दों का सेनापति, बहादुर था।

अली नोश तगिन उठ खडा हुआ और अपने घर की ओर चला। मोतहसिब ने उसको सौ सवारो और प्यादो के साथ देखा। जब अली नोश तगिन को इस तरह मस्त देखा, तो उसे घोडे पर से नीचे खीचने का हुक्म दिया और खुद घोडे परसे उतर कर अपने हाथ से इतना पीटा, कि वह जमीन पर पड़ गया। मोतहसिब एक बूढा तुर्क खादिम (राजसेवक) था।

अली नोश तगिन को उसके घर ले गये। उसने रास्ते में कहा, कि सुल्तान के हुक्म को नही माना, इसलिये मेरी यह हालत हुई। अगले दिन जब अली नोश तगिन ने अपनी पीठ को नगा करके महमूद को दिखलाया, तो वह जगह-जगह कटी थी। महमूद ने हसकर कहा—'तोबा कर और फिर मस्त हो घर से बाहर न जाना।'

---

[१] सियासतनामा पृष्ठ, ३९-४०

महमूद वदसूरत था। "सियासतनामा" में लिखा है[1] सुल्तान महमूद गाजी का मुह अच्छा नही था। वह पीला था। जव उसका पिता सुवुक तगिन मर गया, तो वह बादशाही करने लगा और हिन्दुस्तान (पजाव) उसके हाथ मे आया। किसी दिन सवेरे अपने खास कमरे में जाय नमाज पर वैठा नमाज पढ रहा था। दो खास गुलाम एक दपण उसके सामने लिये खडे थे। इसी समय उसका वजीर शमशुल्कफ्फात अहमद हसनने भीतर आ कमरे के दरवाजे से मोजरा और सलाम किया। महमूद ने उसे सिर के सकेत से वैठने को कहा। महमूद ने दुआ पढने से छुट्टी पा कवा (चोगा) पहना, सिरपर कुलाह रखी, आईना मे निगाह करके अपने चेहरे को देखकर मुस्कुराया, फिर अहमद हसन से वोला 'तू जानता है, कि इस समय मेरे दिल में क्या आया?'

उसने कहा—खुदावन्द (स्वामी) उसे वेहतर जानते हैं।

(महमूद ने) कहा—मुझे सदेह है कि लोग मुझसे प्रेम नही करते, क्याकि मेरा चेहरा अच्छा नही है। लोगो की आदत है, वह सुन्दर मुह वाले वादशाह से प्रेम करते ह।

अहमद हसन ने कहा—ऐ, खुदावन्द, एक काम कर, जिसमें कि स्त्री-वच्चे तुझे अपनी जान की तरह से प्यार करें और तेरे हुकम पर आग-पानी मे कूदे।

(महमूदने) कहा—क्या करू?

(वजीर ने) कहा—धन को दुश्मन मान, जिसमे लोग तुझे दोस्त मानें।

महमूद को वात पसन्द आई। फिर उसने दान और खैरात करने के लिये अपना हाथ खोल दिया, और लोग उससे प्रेम तथा उसकी प्रशसा करने लगे। वहुतसे वडे वडे काम और विजय उसके हाथ में आये। उसने सोमनाथ को जीता, समरकन्द उसका हुआ, इराक (हाथ में) आया। फिर एक रोज उसने अहमद हसन से कहा—जबसे मैंने धन से अपना हाथ खीच लिया, दोनो लोक मेरे हाथ में आये।

उससे पहिले सुल्तान नाम (किसी का) नही हुआ था। वह पहिला आदमी था, जिसने कि इस्लाम में अपने को सुल्तान कहा।"

३ मसऊद (१०३०-४१ ई०)

जैसा कि पहिले कहा, महमूद छोटे लडके मुहम्मद को अपना उत्तराधिकारी वनाना चाहता था, लेकिन मुहम्मद कुछ ही दिनो तक शासक रह सका, फिर उसको हटाकर मसऊदने राजशासन सभाला। मसऊद मे अपने पिता के केवल दोष ही मौजूद थे। उसकी सारी शक्ति सल्जूकियो (तुर्कमानो) को दवाने मे खर्च हुई, जिन्हे कि महमूद ने अपनी जान नष्ट करके खुरासना भेज दिया था। मसऊद के अत्याचारो से जनता हताश हो गई और उच्च वग ने भी असतुष्ट हो अन्तर्भेद में अपने दूत भेजने शुरू किये। लेकिन, इस अवस्था का लाभ कराखानियो ने नही वल्कि- तुर्कमानो के नेताओ ने उठाया।

गजनवियो और कराखानियो का आपस में क्या सवध था, इसका पता उस पत्र से मालूम होता है, जिसे ख्वारेज्म शाह अल्तूनताश ने मसऊद के पास भेजा था—"यह अच्छी तरह मालूम

---

[1] वही पृष्ठ ४२

है, कि स्वर्गीय अमीर (महमूद) ने पहिले बहुत अधिक श्रम और धन व्यय करके उनकी सहायता की, जिससे कादिर खान ने बडा खान बन अपनी गद्दी को मजबूत किया। इस वक्त यह आवश्यक है, कि उसकी सहायता की जाय, जिसमे वह मित्रता बनी रहे। ये (कराखानी) हमारे सच्चे मित्र नही होगे, तो भी बाहर से अच्छा सबध रखना चाहिये, जिसमे वह दूसरो को हमारे खिलाफ न भडकाये। अली तगिन हमारा असली दुश्मन है। वह अपने हृदय में बराबर ईर्ष्या रखे हुये है, क्योकि स्वर्गीय अमीर की सहायता से उसका भाई तुगानखान बलाशगुन से भगाया गया। दुश्मन कभी मित्र नही बन सकता, लेकिन उसके साथ भी सधि करनी होती है। मित्रतापूर्ण सबध स्थापित करना आवश्यक है। साथ ही हमें बलख, तुखारिस्तान, शगानियान, तेरमिज, कबादियान और खुत्तल के प्रदेशो को सैनिको से भर देना है, क्योकि शत्रु अरक्षित प्रदेशो को लूटने-पाटने के हरेक मौके को हाथ से जाने देना नही चाहता।"

मसऊद ने कादिरखान और उसके पुत्र बोगरा तगिन की पुत्रियो को अपने तथा अपने युवराज मौदूद के व्याह के लिये मागने के वास्ते दूत भेजे थे। अभी बात चल ही रही थी, कि १०३२ ई० में कादिर मर गया। बडा पुत्र बोगरा तगिन सुलेमान अरसलन खान की पदवी धारण करके तख्त पर बैठा। द्वितीय पुत्र यगान तगिन ने बोगरा खान की उपाधि ले तलस और इस्फिजाब पर शासन शुरू किया। मसऊद ने सवेदना प्रकट करने और बधाई देने के लिए दूत भेजे। दूत सफलतापूवक ६ सितम्बर १०३४ ई० को गजनी लौट आये। मौदूद की दुलहन रास्ते मे मर गई। मसऊद की शाह खातून सही सलामत गजनी पहुची और बडे धूमधाम से शादी हुई।

अन्तर्वेद के शासक अलीतगिन के साथ समझौता नही हो सका। मसऊद ने अपने भाई मुहम्मद के विरुद्ध मदद करने के बदले अलीतगिन को खुत्तल देने का वचन दिया था। उसके आनाकानी करने पर झगडा उठ खडा हुआ, लेकिन वह बिना खून-खराबी के ही तै हो गया। अलीतगिन तो भी खुत्तल न पाने के लिये नाराज था। अल्तूनताश ने जो सलाह दी थी, उसे न मानकर मसऊद ने अलीतगिन को अन्तर्वेद से निकालने के लिये कादिर खान के लडको को मदद दी। यद्यपि वह खुद नही सम्मिलित हुआ, लेकिन अल्तूनताश के युद्ध में इसका असर हुआ। १०३२ ई० में अल्तूनताश सुल्तान की आज्ञा बिना अतर्वेद मे दाखिल हुआ। सुल्तान मसऊद ने १५ हजार सेना बलख से भेजी। इस आक्रमण की खबर सुनकर अलीतगिन बुखारा की रक्षा का भार गाजियो (स्वेच्छा सैनिको) को सौंप वहाँ के किले में १५० गुलाम सैनिक छोड खुद दबूसिया मे चला गया। शहर ने आत्मसमपण कर दिया। सीधे आक्रमण करके किले को भी सर कर दुश्मन ने ७२ गुलाम वन्दी बनाये। लेकिन अलीतगिन की प्रधान सेना के साथ दबूसिया में जो लडाई हुई, उसमे उतनी सफलता नही हुई। मसऊद तुर्कमानो को अपना विरोधी बना चुका था, इसलिए वह सल्जूकियो के नेतृत्व मे अली के साथ हो गये। अलीतगिन के राजचिह्न (छत्र) के साथ तुर्कमानो का लाल झडा भी पहाड पर फहराने लगा। युद्धका कोई निपटारा नही हुआ। इसी लडाई में अल्तूनताश मरणान्तक घाव से घायल हुआ। वजीरकी बुद्धिमानी से सेना किसी तरह सही सलामत ख्वारेज्म पहुच गई। ख्वारेज्मशाह के घायल होने की बात को छिपाकर वजीर ने अलीतगिन के साथ सुलह की बातचीत शुरू की और सलाह दी कि ख्वारेज्मशाह को बीच में डालकर सुल्तान मसऊद से समझौता की बात की जाये। समझौता हो गया। अलीतगिन

समरकन्द लौटा और ख्वारेज्मी सेना को आमूल (चारजूय) के लूटने में कोई बाधा नही डाली। राजधानी की ओर कूच करने से पहिले ही अल्तूनताश मर गया।

मसऊद के आक्रमणो से अलीतगिन की आखें खुल गईं। उसने समझ लिया, कि यदि हम कराखानी आपसमें लडेंगे तो कही के नही रहेंगे। उसने अपने खानदान से मेल कर, अरसलनखान सुलेमान को अपना अधिराज मान लिया। अब अरसलनखान और बोगराखान के नाम से समरकन्द में भी सिक्के ढलने लगे। अल्तूनताश के बाद उसका पुत्र हारून ख्वारेज्मशाह बना।

(२) हारून ख्वारेज्मशाह (१०३२ ई०) हारून नवीन ख्वारेज्म वश का प्रभावशाली शासक था। वह गजनवियो और दूसरे पडौसियो से बराबर लडता रहा। ख्वारेज्म की भौगोलिक परिस्थिति ऐसी है, जिसके कारण सदा ही वह एक स्वतत्र राज्य रहा। अखामनशियो के समय उसे नाम मात्र की ही अधीनता स्वीकार करनी पडी थी। ग्रीकोबाल्तरी जुये को कभी उसने अपने कधे पर नही रखा। कुषाणो के समय अवश्य वह उनके आधीन हुआ था, किन्तु बहुत दिनो के लिये नही। ख्वारेज्म जहा अन्तर्वेद की ओर से कराकुम की विशाल मरुभूमि के कारण दुष्प्रवेश्य था, वहा मेर्वकी तरफ से भी किज़िलकुम की विस्तृत मरुभूमि उसके रक्षा-प्राकार का काम देती थी। पश्चिम तथा उत्तर की ओर भी इसी तरह की उस्तउर्त और किपचककी दुगम मरुभूमिया थी। ख्वारेज्म में आसानी से पहुचने का रास्ता वक्षु की धारा है। हजारास्प के पास वह ऐसी जगह से गुजरती है, जहा थोडे सैनिको द्वारा अच्छी तरह प्रतिरक्षा की जा सकती है। इसीलिये किसी भी बाहरी शासक के लिये ख्वारेज्म को अपने हाथ मे देर तक रखना आसान नही था। अल्तूनताश के राज्य के उत्तर के पडोसी कितनी ही घुमन्तू जातिया थी, जिनमें किपचको का नाम पहिले पहल इसी समय लिया जाने लगा था। अल्तूनताश ने उनके आक्रमणो का मुकाबिला किया। उसने और उसके पुत्र हारून ने अपने ग्यारहवी शताब्दी के उत्तराधिकारयों की भाति अपनी सेना मे घुमन्तुओं की भी एक वाहिनी रखी थी। अपने स्वामी गजनवियो की तरह ख्वारेज्मशाह भी अपनी प्रतिहार (गारद)-सेना के लिये भारी सख्या में गुलाम खरीदते थे। इन सैनिको की अधिकता से महमूद को अल्तूनताश से शका हो गई थी, तो भी अल्तूनताश ने सदा अपने को गज़नवियो का सामान्त माना। महमूद ख्वारेज्म की शक्ति को जानता था। उसने अल्तूनताश को गजनी बुलाने का असफल प्रयत्न किया। वही बात मसऊद के लिये भी हुई।

अल्तूनताश के मरने पर मसऊद ने अपने पुत्र सईद को ख्वारेज्मशाह बनाया और अल्तूनताश के पुत्र हारून को केवल "खलीफत्तुद्दार" के तौर पर शासक रहने दिया। उसे भेंट भी बाप के समय से आधी मिलती थी। ऐसी अवस्था को हारून कितने दिनो तक बर्दाश्त करता? १०३४ में उसने आज्ञोल्लघन करना शुरू किया। हारून का भाई मसऊद के दरबार में था। वहीं १०३३ के अन्त या १०३४ के आरभ वह छत से गिरकर मर गया। दुश्मनो ने लिख दिया कि सुल्तान ने उसे मरवा दिया। हारून ने भाई का बदला लेने का निश्चय किया और अलीतगिन तथा सल्जूकियो से समझौता कर लिया। अगस्त १०३४ में उसने खुतबा में से मसऊद का नाम हटवा दिया। हारून और अलीतगिन ने मिलकर तै किया, कि ख्वारेज्म सेना मेव पर चढ़े और अलीतगिन तेरमिज-बलख पर। इसी योजना के अनुसार उमूजी पहाडियों ने १०३४ ई० के वसत में खुत्तल पर और वर्ष के आरम्भ में तुर्कमानो ने कवादियान पर आक्रमण किया। मसऊद

का तेरमिज का कमाण्डर बेगतगिन तुर्कमानो के मुकाबले के लिये तैयार था, लेकिन वह मंता के पास वक्षु पार हो गये। वेग तगिन ने जाकर शापूरगान में उनको हराया। पर, उन्होंने उसका पीछा किया। बेगतगिन घायल होके मर गया। मसऊद ने अलीतगिन अब्दुल्ला-पुत्र को सेना देकर भेजा, और उसने तेर्मिज में जाकर अपना शासन स्थापित किया।

(४) सल्जूकी तुर्कमान—

हारून ख्वारेज्मशाह का सौभाग्य था, जो उसे में सल्जूकी जैसे दोस्त मिल गये। १०२९ में अली तगिन और सल्जूकियो मे झगडा हो गया। अलीतगिन के हुकुम से उसके सेनापति अल्पकारा ने सल्जूक के पौत्र युसूफ को मार डाला। इसी युसूफ को अलीतगिन ने स्वय इनच-पैगू की उपाधि दे अपने सारे तुर्कों का सेनापति बनाया था। अपने नेता के साथ हुये ऐसे विश्वासघात को तुकमान कैसे सहन करते? १०३० में युसूफ के चचेरे भाई तुगरल और दाउद ने विद्रोह कर अल्पकारा और उसके हजार आदमियो को मार डाला। अल्पतगिन और उसके पुत्र ने साधारण लोगो की सहायता से पीछा करके तुर्कमानो को पूरी तौर से हराकर उनकी सम्पत्ति लूट ली, बहुत से स्त्री-बच्चो को बन्दी बनाया, और बाकी को खुरासान में बसने के लिये बाध्य किया। उत्तरापथ और दक्षिणापथ की घुमन्तू जातियो के इतिहास से हम अच्छी तरह जानते हैं, कि घुमन्तुओ का नाश करना साप मारने से भी ज्यादा मुश्किल है। इन्ही तुर्कमान घुमन्तुओ को अब ख्वारेज्मशाह ने अपनी ओर किया। वह कराखानियो और गजनवियो दोनो के दुश्मन थे, इसलिये हारून की बात मानने के लिये तैयार हो गये। हारून ने उन्हें खुरासान और माशरेवातके आसपास की जमीन दे दी, जहा वह चले गये।

तुर्कमान मूलत सिर-दरिया के उत्तर के रहनेवाले थे। जन्द के तुर्कों से उनकी दुश्मनी थी—अक्तूबर १०३४ में जन्द के शासक शाह मलिक न उनपर आक्रमण कर दिया। सात आठ हजार तुकमान मारे गये, बाकी नेबरफ बनी सिरदरिया के ऊपर से भागकर अपनी जान बचाई। हारून ने बीच में पडकर समझौता कराना चाहा। शाह मलिक इसके लिये तैयार नही था, किन्तु खुरासान के लिये एक बाहिनी देने को तैयार हो गया। १२ नवम्बर को नाव पर हारून और शाहमलिक की मुलाकात हुई। हारून की ३० हजार बडी सेना देखकर शाहमलिक डर गया और उसने वाहिनी नही दी। इस प्रकार १०३५ के अन्त मे खुरासान पर आक्रमण नही हो सका।

१०३४ के वसन्त में गजनवी शासित पजाब में भयकर विद्रोह हुआ—अभी पजाव में मुसलमान नाम मात्र हो थे। मसऊद उसे दवाने में सफल हुआ।

अल्पतगिन की मृत्यु (१०३४ की गर्मियो या शरद) के समय घुमन्तू तुर्कमान खुरासान की ओर प्रवास कर रहे थे। १०३५ के वसन्त में अल्पतगिन के बडे पुत्र के गद्दी पर बैठने की सूचना मसऊद को मिली। उसने बुखारा में अपनी ओर से सवेदना और बधाई भेजी। इस पत्र में उसने तरुण इलिक को 'श्रेष्ठ अमीर-पुत्र" कहा था। अलीतगिन के दोनो पुत्र हारून के साथ किये समझौते के अनुसार काम करने के लिये तैयार थे। उन्होने शगानियान और तेरमिज प्र आक्रमण किया, फिर वक्षु पार हो अन्दखुद में हारून की सेना से मिलने का निश्चय किया। शगानियान का शासक अबुल्कासिम मुकाबिला नही कर सका, और अपने उत्तर के पहाडियो (कुमीजियों) के देश में भाग गया। इलक की सेना ने दारजगी (दरवद) पार हो तेरमिज को घेर लिया,

लेकिन वह किले को नही सर कर सकी। इसी समय खबर मिली, कि गजनविया ने रिश्वत देकर उसके गुलामो से हारून को मरवा डाला। अलीतगिन के पुत्र लौह-द्वार (दरवन्द) होते समरकन्द लौट गये।

इसी साल खुरासान में सल्जूकियो की सफलता की खबर मिली। हारून की मृत्यु के वाद वह खुरासान में प्रविष्ट हुए थे। अली के दोनो पुत्रो ने शगानियान पर अभियान किया। दो तीन मंजिल समरकन्द से आगे जाने पर मालूम हुआ, कि मसऊद के सेनापति अवुलकासिम और उसके सहायकों ने वहाँ सेना एकत्रित की है, तथा मसऊद अन्तर्वेद पर चढ़ाई करना चाहता है। ८ दिसम्वर (१०३५) को दोनो भाइयो का दूत क्षमा-याचना के लिये मसऊद के दरवार में वलख पहुँचा। मसऊद ने क्षमा दे दी, लेकिन गुस्से के मारे दूत को सीधा दर्शन न दे दानिश-मन्द (अध्यापक) को वीच में रखकर वातचीत की।

हारून के मरने के एक साल वाद दिसम्वर १०३६ ई० में मसऊद के दरवार में अली के दोनो पुत्रो के दूत वुखारा खतीव अल्पतगिन और अब्दुल्ला पारसी आये। अवकी वार सुल्तान ने दूतो से भेंट की और अपने भाई "इलक" की तन्दुरुस्ती के वारे में पूछा। इलक ने एक गजनवी राजकुमारी व्याह के लिये मागी थी, और कराखानी कुमारिया मसऊद को देने का वचन दिया था, एवं कराखानियो के प्रमुख अरसलनखान से समझौता कराने में मध्यस्थ वनने की प्रार्थना के साथ खुत्तल की माग छोड देने की वात भी कही थी। इलक ने मसऊद को यह भी कहलवाया था, कि सल्जूकियो के साथ लडने में हम आपकी सहायता करेंगे। निश्चय हुआ, कि इलक की वहन मसऊद के पुत्र सईद को व्याह दी जाय, और महमूद की भतीजी (नस्र की पुत्री) इलक को। मसऊद ने वलख के रईस (नगर-पति) अब्दुस्सलाम को दूत वनाकर अन्तर्वेद भेजा, जो कि अली-पुत्रो के दरवार में सितम्वर १०३७ में भी मौजूद था।

तुर्किस्तान के कराखानियों के साथ भी मसऊद का सबध अच्छा नही था। १०३४ ई० में जव गजनवी दूत लौटे, उसी समय वोगरा खान का दूत अपनी दुलहिन जैनव को लेने आया। मसऊद इस शर्त पर तैयार हुआ, कि जैनव के नाम पर महमूद की सपत्ति से भाग न मागा जाय। वोगरा खान का दूत लौट गया। फिर मसऊद ने अरसलन खान से उसके भाई के दावे की शिकायत की। अरसलन खान के फटकारने पर वोगरा खान अपने भाई और मसऊद दोनो के विरुद्ध हो गया। ऐसी अवस्था में सल्जूकियो की सफलता से उसे खुश होना ही चाहिये था। तुगरल से उसकी पहिले से दोस्ती थी। १०३७ ई० में वक्षु तट पर एक जूते वनानेवाले के पास वोगरा खान का गुप्त-पत्र पकडा गया, जिसमें तुर्कमान नेताओ को वचन दिया गया था, कि तुम जो कुछ भी कदम उठाओगे, उसमें हम वाधक नही होगे। सुल्तान ने मानो इस पत्र को देखा ही नही, ऐसा दिखलाने के लिये जूता वनानेवाले को सौ दीनार देकर भारत भेज दिया, जिसमें पत्र के वारे में कुछ पता न लग सके। फिर १० हजार खर्च करके तुर्किस्तान में अपना दूत भेजा, और अरसलन खान को वीच में पडकर भाई से समझौता कराने के लिये कहा। २३ अगस्त १०३७ ई० को मसऊद का दूत अवूसादिक कवानी रवाना हुआ और चौदह महीना तुर्किस्तान में रह सफल होकर लौटा। वेहकी के लेख से मालूम होता है, कि इस समय भाइयो के वीच कोई वैमनस्य नही था।

२८ सितम्वर (१०३७) को अली के दोनो पुत्रो और किसी एक अज्ञात शासक के दूत मसऊद के पास आये।

बुरीतगिन—१०३८ ई० में इलक (1) नस्र का पुत्र अबू-इसहाक इब्राहीम अन्तर्वेद में आया। इस समय उसकी उपाधि बूरी-तगिन थी। अली के पुत्रो जेल से भाग पहिले वह अपने अपने भाई ऐनुद्दौला के पास उज्रगन्द में जा कुछ समय तक रहा। १०३८ ई० की गर्मियो में मसऊद के वजीर का उसको पत्र मिला। उसे अनुकूल उत्तर देने के लिये कहा गया। बुरीतगिन कुमीजियो के वेष मे हो, तीन हजार सेना जमाकर वख्श, खुत्तल और हुल्बुक के इलाको में लूट-मार मचाने लगा। पज नदी के तटपर पहुचने पर उसे खबर मिली, कि मसऊद स्वय युद्ध के लिये आ रहा है। बुरीतगिन लौटकर क्षमा-प्रार्थी हुआ, लेकिन मसऊद ने उसके विरुद्ध अक्तूबर के अन्त में दस हजार सेना भेज दी। इसी समय खबर मिली, कि बुरीतगिन खुत्तल छोडकर कुमीजो के इलाके में चला गया। सेनापति अली को बलख लौटा लिया गया।

मसऊद ने अब अन्तर्वेद पर अभियान करने का निश्चय कर उसी जाडे मे बुरी तगिन को खतम करना जरूरी समझा, जिसमें कि वसन्त में वह तुर्कमानो के खिलाफ अभियान कर सके। वजीर ने बहुत समझाया, "अभियान वसन्त में करना अच्छा है, क्योकि उस वक्त नई घास चरने के लिये रहती है, या पतझड (शरद) में, जब कि फसलें तैयार रहती है। बुरीतगिन के विरुद्ध अभियान शगानियान के शासक अथवा अली-पुत्रद्वय पर छोडा जा सकता है। सुल्तान को स्वय जाडे मे नही जाना चाहिये।" लेकिन पहिले कह चुके है, कि मसऊद ने अपने बाप के केवल अवगुण लिये थे, वह वजीर की बात मानने के लिये तैयार नही हुआ। उस समय अन्तर्वेद में जो गडबडी फैली हुई थी, उसके कारण भी वह इस समय को अनुकूल समझता था। तेरमिज के राज्यपाल बेगतगिन को हुकम मिला, कि वह वक्षु पर नावो का पुल तैयार कर दे। पुल तैयार करने वाली जगह नदीके बीच में अराल-पैगम्बर का द्वीप पडकर वक्षु को दो भागो में विभक्त करता था। पुल तैयार करने में देर नही हुई। सोमवार १८ दिसम्बर १०३८ ई० को सुल्तान की सेना नदी पार हो गई। रविवार ३१ दिसम्बर को वह शगानियान पहुची। यद्यपि शत्रु की ओर से कोई प्रतिरोध नही हुआ, लेकिन पहाडो में सर्दी और बरफ से मुकाबिला करना पडा। इतिहासकार बेहकी स्वय इस अभियान में मसऊद के साथ था। उसने लिखा है—"कभी भी कोई इस तरह की तकलीफ में नही फसा होगा। मगल ९ जनवरी १०३९ को सेना शूनियान जोतके पर पहुची। इतने में ही वजीर की चिट्ठी आई, कि सल्जूकी सरख्श से गूज्रगानकी ओर बढ रहे है। भय होने लगा, कही वह तेरमिज पहुच कर नावो के पुल को न तोड दे, फिर तो सुल्तान अपने देश से विच्छिन्न हो जायेगा। उधर बुरीतगिन ने भी शूनियान-जोत को रोक रक्खा था। सुल्तान लौटने के लिये मजबूर हुआ। शत्रु देश के एक एक चप्पे से परिचित था। उससे मुकाबिला करना आसान काम नही था। शुक्रवार १२ जनवरी को वापसी की यात्रा आरम्भ हुई। दो सप्ताह बाद २६ जनवरी को मसऊद तेरमिज पहुचा। इस सारे समय बूरी तगिन मसऊद का पीछा कर रहा था। उसने बहुत सी रसद और ऊटो-घोडो को छीन लिया। इतने बडे विजेता के अभियान को विफल करने से बुरीतगिन का महत्त्व बढ गया। गजनवी सरकार के पास १०३९ में जो पत्र मिले थे, उनसे पता लगा, कि तुर्कमानो (सल्जूकियो) की सहायता से बुरी तगिन अलीपुत्रद्वय के ऊपर कई विजय प्राप्त कर चुका था। अब प्राय सारा अन्तर्वेद उसके हाथ में था।

खुरासान में मसऊद ने एक बडी सेना तैयार की थी, लेकिन उसके भी सेनापति सुल्तान की तरह ही बडे तडक-भडक से अभियान करनेवाले थे। पास में रसद की एक बड़ी जमात

होने से वह भारी भरकम सेना जल्दी पग नही बढ़ा सकती थी। ऐसी सेना के मुकाबिले मरुभूमि को मा-बाप मानने वाले घुमन्तुओ को बहुत हलकी वाहिनी थी, जो कि अपनी रसद को मुख्य सेनाग से १२० मील पीछे रख सकती थी। साथ ही उसे अन्तर्वेद से भी सहायता मिल रही थी।

हारून का भाई इस्माईल गजनवियो को अपना खानदानी दुश्मन समझता था, इसलिये तुर्कमानो को पीछे की ओर से कोई खतरा नही था। मसऊद ने यह रुख देखकर उससे नाराज हो १०३८ में ख्वारेज्म का अहद जन्द के शासक शाह मलिक के पास भेज दिया और कोशिश की, कि ख्वारेज्मी स्वेच्छा-पूवक अधीनता स्वीकार कर ले। इसी प्रयत्न में उसने १०४०-१०४१ तक ख्वारेज्म पर चढ़ाई नही की। फरवरी १०४१ ई० में आसीव के मैदान में दोनो पक्षो की तीन दिन तक लडाई होती रही, जिसमें ख्वारेज्मी (इस्माईल) पराजित हुआ। शायद वह और भी लडते, मगर इसी समय अफवाह उडी, कि गजनवी सेना दक्षिण से आ रही है। विश्वासघात के डर से भी इस्माईल २८ माच को राजधानी छोड सल्जूकियो के पास भाग गया। अप्रैल मे ख्वारेज्म की राजधानी पर शाह मलिक का अधिकार हो गया, और उसने मसऊद के नाम से खुतबा पढवाया, यद्यपि उस समय तक मसऊद मर चुका था।

शाहमलिक के अभियान से पहिले ही मई १०४० ई० में सल्जूकियो और गजनवियो का निर्णयात्मक युद्ध दंदानकान मे हो चुका था। सल्जूकियो ने खुरासान पर से गजनवियो का शासन सदा के लिये खतम कर दिया। सल्जूकी सरदार तुगरल ने युद्धक्षेत्र में ही सिंहासन रखवा उस पर बैठकर अपने को खुरासान का अमीर घोषित किया। इसके बाद उसने तुर्किस्तान के दोनो खानो अलीतगिन-पुत्रो—बूरीतगिन और ऐनुद्दौला—के पास सूचनार्थ पत्र भेजे। गजनवी सेना भाग रही थी, जिसका पीछा उसने वक्षु तट तक किया। इसका उद्देश्य यह भी था, कि अन्तर्वेद में पहुचकर वहा अपनी उपस्थिति से अपना अधिकार स्थापित करे। दूसरी ओर बेहकी के अनुसार मसऊद ने पत्र में अरसलन खान को लिखा था—मुझे दृढ़ विश्वास है, कि अरसलनखान सहायता देने से इन्कार नही करेगा, बल्कि यह भी आशा है, कि वह स्वय सेना लेकर सल्जूकियों के विरुद्ध अभियान करेगा। सल्जूकियो के महाप्रहार के कारण मसऊद को अब बलख और गजना के भी बचा पाने की आशा नही थी। वजीर के समझाने पर भी मसऊद बुरीतगिन को बलख और तुखारिस्तान का "अहद" दे पजाब (भारत) चला गया, और गजनीमें बच रहे अमीरो को सल्जूकियो की सेवा मे जाने की आज्ञा दी।

लेकिन मसऊद की शका गलत निकली।

४. मुहम्मद (१०४१)—

जनवरी १०४१ में मसऊद मर गया। उसके बाद कुछ दिनो तक उसके भाई मुहम्मद ने गद्दी सभाली। महमूद गजनवी इसी को अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहता था। एक बार पहिले भी वह असफल हो चुका था, अबकी बार भी कुछ ही महीना तक वह गद्दी पर रहा। उसे हटाकर मसऊद का शक्तिशाली पुत्र मौदूद अप्रैल १०४१ ई० मे गद्दी पर बैठा।

५. मौदूद (१०४१-१०४८ ई०)—

मौदूद ने गिरते हुए गजनवी वश को सभालने की कोशिश की। बलख और तेरमिज भी उसके हाथ में रहे। अन्तर्वेद के शासक (शायद बूरीतगिन) ने अधीनता स्वीकार की।

बेहकी के लेखानुसार अबुल-हसन अहमद महमूद-पुत्र ने तेरमिज में पन्द्रह साल तक सल्जूकियो का मुकाबिला किया और अत में निराश होकर दाउद सल्जूकी (तुगरल के भाई चाकर) के सामने आत्मसपर्ण किया। तेरमिज के हाथ से निकल जानेपर गजनवियो के लिये अच्छे दिनो की आशा नही रह गई। इतिहासकार बेहकी उस समय तेरमिज का शासक था, १०४८ से पहिले वह गजनी में अभिलेख-विभाग का प्रमुख था। १०४३ ई० में सल्जूकी ख्वारेज्म ले चुके थे और मसऊद द्वारा नियुक्त वहा का शासक मलिकशाह ईरान की ओर भाग गया था। वहा कुछ समय तक वह बेहक जिले का शासक भी रहा, किन्तु अन्त मे सल्जूकियो ने पकडकर उसे मकरान में कैद कर दिया, जहा ही वह मर गया।

६. इब्राहीम (१०४८-५१)—

मसऊद के उत्तराधिकारी इब्राहीम ने सल्जूकियो की अजेय शक्ति के सामने सिर झुकाया और दाऊद के साथ सधि करके १०५९ ई० में बलख को सल्जूकियो के हाथ में दे दिया।

स्रोत-ग्रन्थ।

1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)
2 Heart of Asia (E D Ross)
३ सोव्यत्स्कया एत्नोग्राफिया १९४६ (२)
४ सियासतनामा (निजाममुल्मुल्क, लाहौर)

अध्याय ४

सल्जूकी (१०३६-११५७)

सामानियो के राज्य को कराखानियो और गजनवियो ने आपस में बाट लिया था। गजनवियो की शक्ति को ध्वस्त करने में सबसे अधिक हाथ तुर्कमानो का था, जिनके नेता तुगरल खान सल्जूकी ने १०३६ ई० में मसऊद को भारी हार देकर युद्ध-क्षेत्र में ही सिंहासनारोहण किया था।

§१ राजावलि

सल्जूकियो के समकालीन राजवशो की तुलनात्मक वशावलि निम्न प्रकार थी—

	सल्जूकी	गजनवी	कराखानी	ख्वारेज्मी
		महमूद ९९७-१०३०	इलिकनस्र ९९३-१०१२	मामून II -१०१७
१	तुगरल १०३६-६३	मसऊद १०३०-४१	अरसलन II १०३३-५७	हारून १०३४
		मौदूद १०४१-५६		
२	अल्प अरसलन १०६३-७३	इब्राहीम १०५९	तुगरल युसूफ १०५९-७४	इस्माईल १०४१
३	मलिक शाह I १०७३-९२		बुगरा हारून १०७४-११०२	
४	महमूद I १०९२-९४			
५	बरकियारुक १०९४-११०४		कादिर जिब्रैल ११०३	अनुशतगिन -१०९७
६	मलिकशाह II ११०४			
७	मुहम्मद II ११०४-१११७			कुतुबुद्दीन १०९७-११२७
८	महमूद II १११७-			
९	सिंजर १११७-५७			अत्सिज ११२७-५६

§२ उद्भव*

सल्जूकी कह आये हैं, कि सिर-दरिया के उत्तर के घुमतू थे। इनके कबीले का नाम तुर्कमान था, जो कि आज भी तुर्कमानिस्तान सोवियत प्रजातन्त्र के निवासियो के रूप में मौजूद है। तुर्कमान तुर्कों की गूज (आगूज) शाखा के वशज थे अपने घुमन्तू जीवन के सिलसिले मे सिर-दरिया के उत्तरी तट पर पहुचे थे। यह हम बतला चुके हैं, कि किस तरह यूची-शक हूणो के प्रहार के कारण ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी में कान्सू से भागने के लिये मजबूर हुए, और उनका पीछा करते हुए हूण और उनके वशज आवार, तुर्क, उइगुर, आगूज, किपचक सारे उत्तरापथ मे फैल गये। अरब, सामानी, सफ्फारी और ताहिरी को छोडकर, मध्यएसिया के सारे इस्लामिक शासक तुर्क थे। इन भिन्न-भिन्न तुर्क जातियो की भाषा की समानता को देखने पर उज्बेक, तुर्कमान, किरगिज और कजाक एक ही तुर्क-जाति के मालूम होते है। इनके हम तीन भाग कर सकते हैं —

(१) उत्तरी तुर्क—सिबेरिया के याकूत आदि।

(२) पूर्वी तुर्क–सिङ क्याङ के तुर्क, उज्बेक, कजाक, कूफा-तातार।

(३) पश्चिमी तुर्क—उस्मान अली (आधुनिक तुर्की) आजुरबायजानी, और तुर्कमान।

तुर्कों का मूल देश अल्ताई के आसपास था, जहा से प्राचीन समय में वह बडी सख्या में चीन और मध्यएसिया की ओर बढे, यह हम बतला आये है। चीन की महादीवार ने उनके पूर्वाभिमुख बढाव को रोक दिया, किन्तु तुर्किस्तान की ओर बढ़ने में उन्हे सफलता मिली। वहा से उन्होंने शको और सोग्दियो के वशजो को ढकेल या हजम कर घुमन्तू जीवन बिताना शुरू किया। इन उत्तरी घुमन्तुओ की बहुत सी लहरें आगे मध्यएसिया की ओर आती रही। इन्ही मे सल्जूकी तुर्कों और चिगीसी मगोलो की लहरें भी थी।

(२) सल्जूक¹नाम —सल्जूक इनके सरदार का नाम था, जिसने पहिले पहल इस्लाम ग्रहण किया था। इसी कारण तुर्कमान कबीले का नाम सल्जूकी पडा, किन्तु इसका मुख्य नाम तुर्कमान ही अधिक प्रसिद्ध है। पश्चिमी तुर्कों में गूजो और तुर्कमानो का ही अश ज्यादा है। हम देख चुके है बाज वक्त एक विशाल कबीले का प्राचीन नाम एक छोटे कबीले के लिये रह जाता है, जब कि बाकी कबीले वाले दूसरा नाम ग्रहण कर लेते है। तुर्कमान भी गूजो के अन्तर्गत ही थे, किन्तु उन्हे गूजो से अलग दिखलाया गया है। इन्ही पश्चिमी तुर्कों ने वक्षु-भूमि, अरमेनिया और क्षुद्र-एसिया तक को अपने प्रभाव में ले लिया। उस्मान अली या उस्मानी तुर्क सल्जूकियो की ही एक शाखा थी, जिसने बिजन्तीन राज्य को खत्म कर १५ वी सदी मे कस्तुन्तुनिया को अपनी राजधानी बनाया और आगे पूर्वी यूरोप पर अपना राज्य विस्तार किया।

---

*History of Bokhara (A Vambery)

¹Turkisten

अध्याय ४

सल्जूकी (१०३६-११५७)

सामानिया के राज्य को कराखानिया और गजनवियों ने आपस में बाँट लिया था। गजनवियों की शक्ति को ध्वस्त करने में सबसे अधिक हाथ तुर्कमानों का था, जिनके नेता तुगरल खान सल्जूकी ने १०३६ ई० में मसऊद को भारी हार देकर युद्ध-क्षेत्र में ही सिंहासनारोहण किया था।

§१ राजावलि

सल्जूकियों के समकालीन राजवंशों की तुलनात्मक वंशावलि निम्न प्रकार थी—

	सल्जूकी	गजनवी	कराखानी	ख्वारेज्मी
		महमूद ९९७-१०३०	इलिकनस्र ९९३-१०१२	मामून II -१०१७
१	तुगरल १०३६-६३	मसऊद १०३०-४१	अरसलन II १०३३-५७	हारून १०३४
		मौदूद १०४१-५६		
२	अल्प अरसलन १०६३-७३	इब्राहीम १०५९	तुगरल युसूफ १०५९-७४	इस्माईल १०४१
३	मलिक शाह I १०७३-९२		बुगरा हारून १०७४-११०२	
४	महमूद I १०९२-९४			
५	बरकियारुक १०९४-११०४		कादिर जिब्रैल ११०३	अनुशतगिन -१०९७
६	मलिकशाह II ११०४			
७	मुहम्मद II ११०४-१११७			कुतुबुद्दीन १०९७-११२७
८	महमूद II १११७-			
९	सिंजर १११७-५७			अत्सिज ११२७-५६

§२ उद्भव*

सल्जूकी कह आये ह, कि सिर-दरिया के उत्तर के घुमतू थे । इनके कबीले का नाम तुर्कमान था, जो कि आज भी तुर्कमानिस्तान सोवियत प्रजातत्र के निवासियो के रूप म मौजूद है। तुर्कमान तुर्कों की गूज़ (आगूज़) शाखा के वशज थे अपने घुमन्तू जीवन के सिलसिले मे सिर-दरिया के उत्तरी तट पर पहुचे थे। यह हम बतला चुके है, कि किस तरह यूची-शक हूणो के प्रहार के कारण ईसा-पूर्व द्वितीय शताब्दी मे कान्सू से भागने के लिये मजबूर हुए, और उनका पीछा करते हुए हूण और उनके वशज आवार, तुर्क, उइगुर, आगूज़, किपचक सारे उत्तरापथ मे फैल गये। अरब, सामानी, सफ्फारी और ताहिरी को छोडकर, मध्यएसिया के सारे इस्लामिक शासक तुर्क थे। इन भिन्न-भिन्न तुर्क जातियो की भाषा की समानता को देखने पर उज्बेक, तुर्कमान, किरगिज़ और कज़ाक़ एक ही तुर्क-जाति के मालूम होते हैं। इनके हम तीन भाग कर सकते है —

(१) उत्तरी तुर्क—सिबेरिया के याकूत आदि।

(२) पूर्वी तुर्क—सिङ्क्याङ के तुर्क, उज्बेक, कज़ाक, कूफा-तातार।

(३) पश्चिमी तुर्क—उस्मान अली (आधुनिक तुर्की) आजुरबायजानी, और तुर्कमान।

तुर्कों का मूल देश अल्ताई के आसपास था, जहा से प्राचीन समय मे वह बडी सख्या में चीन और मध्यएसिया की ओर बढे, यह हम बतला आये है। चीन की महादीवार ने उनके पूर्वाभिमुख बढ़ाव को रोक दिया, किन्तु तुर्किस्तान की ओर बढ़ने मे उन्हे सफलता मिली। वहा से उन्होने शको और सोग्दियो के वशजो को ढकेल या हजम कर घुमन्तू जीवन बिताना शुरू किया। इन उत्तरी घुमन्तुओं की बहुत सी लहरें आगे मध्यएसिया की ओर आती रही। इन्ही में सल्जूकी तुर्कों और चिंगीसी मगोलो की लहरे भी थी।

(२) सल्जूक¹नाम —सल्जूक इनके सरदार का नाम था, जिसने पहिले पहल इस्लाम ग्रहण किया था। इसी कारण तुर्कमान कबीले का नाम सल्जूकी पडा, किन्तु इसका मुख्य नाम तुर्कमान ही अधिक प्रसिद्ध है। पश्चिमी तुर्कों में गूज़ो और तुर्कमानो का ही अश ज्यादा है। हम देख चुके है बाज़ वक्त एक विशाल कबीले का प्राचीन नाम एक छोटे कबीले के लिये रह जाता है, जब कि बाकी कबीले वाले दूसरा नाम ग्रहण कर लेते है। तुर्कमान भी गूज़ो के अन्तर्गत ही थे, किन्तु उन्हें गूज़ो से अलग दिखलाया गया है। इन्ही पश्चिमी तुर्कों ने वक्षु-भूमि, अरमेनिया और क्षुद्र-एसिया तक को अपने प्रभाव मे ले लिया। उस्मान अली या उस्मानी तुर्क सल्जूकियो की ही एक शाखा थी, जिसने बिजन्तीन राज्य को खतम कर १५ वी सदी मे कस्तुन्तुनिया को अपनी राजधानी बनाया और आगे पूर्वी यूरोप पर अपना राज्य विस्तार किया।

---

*History of Bokhara (A. Vambery)

¹Turkisten

पूर्वी तुर्कों की एक शाखा का नाम कायक था जिसी से सल्जूका (तुर्कमानो) का सबध था। कायक ताशकन्द से उत्तर की भूमि से ९८५ ई० (३९५ हि०) में अन्तर्वेद में दाखिल हो समरकन्द और बुखारा के पास-पडोस में घुमक्कडी जीवन व्यतीत करने लगे। चरागाहो की कमी के कारण उन्हे सिर-दरियाके दक्षिण आनेके लिये मजबूर होना पडा था। सामानियोके उत्तराधिकारी महमूद गजनवी का वर्ताव उनके साथ अच्छा था। कभी कभी झगडा भी हुआ, किन्तु तो भी उसी ने इन्हें वक्षु पार (खुरासान के) निसा और अवीवर्द में रहने की इजाजत दे दी। उस समय उनके सरदार का नाम मिकाईल था। गजनवियो ओर कराखानियो का जिस समय सघर्ष चल रहा था, उसी समय गूजो मे भी आपसी वैमनस्य था, जिसके कारण एक शाखा ९५६ ई० (३४५ हि०) मे जाकर जन्द में बस गई। इनका सरदार सेल्जूक किपचको के खान पीगू के दरवार को छोडने के लिये मजबूर हुआ। यही पहिले पहल मुसलमान हुआ। इसीलिये उसके कबीले का नाम सल्जूक पडा।

सेल्जूक के एक पुत्र मिकाईल के लडके तुगरल और चाकिर दाउद थे और दूसरे लडके का पुत्र युसूफ था। युसुफको अन्तर्वेदके शासक अलीतगिन ने स्वय पहिले ईनच-पैगू की उपाधि दे अपने सारे तुर्कों का सेनापति बनाया, किंतु पीछे नाराज हो उसे मरवा डाला। १०३७ में यूसूफ के चचेरे भाई तुगरल और दाउद ने विद्रोह करके अलीतगिन के सेनापति अल्पकारा और उसके हजार आदमियो को मार डाला। अलीतगिन के प्रहार से उन्हें भारी हानि उठानी पडी, यह बात हम बतला आये हैं। खुरासान मे महमूदने इन्हें बसाया और हारून ख्वारेज्मशाह ने अपनी ओर मिलाकर तुर्कमानो की शक्ति को बढ़ने दिया। अलीतगिन के दोनो पुत्र उनका कुछ बिगाड नही सके। अल्तूनताश ख्वारेज्म शाह से इनकी घनिष्टता बढ़ी और वह अक्सर ख्वारेज्म मे जाडा बिताने लगे। हारून ने उन्हे शेराखान और माशरेवाल के पासका इलाका दे दिया था, यह भी हम बतला आये है। सल्जूकियो के अपने भाई-बन्द जन्द के शासक शाहमलिक ने अक्तूबर १०३० ई० में तुर्कमानो पर आक्रमण करके सात-आठ हजार तुर्कमानो को मार डाला, बाकी बरफ बनी सिर-दरिया को पार कर भाग गये। हारून ख्वारेज्मशाह के बीच मे पडने पर भी शाह मलिक और सल्जूकियो में समझौता नहीं हो सका, यह बात भी हम बतला आये है। तुर्कमानो को अपनी ओर खीचने के लिये ख्वारेज्मशाह, गजनवी और कराखानी, (बुरीतगिन) सभी कोशिश करते रहे, इसी अवस्था से लाभ उठाकर वह अपनी शक्ति बढ़ाने मे सफल हुए।

§३ सुल्तान

१ तुगरल मिकाईल-पुत्र[1] (१०३६-१०६३ ई०)

बडा भाई तुगरल तुर्कमानोका सरदार था, लेकिन सैनिक योग्यतामे उसका छोटा भाई दाऊद (चाकर) उससे अधिक था। १०३६ ई० में मेवके पासके निर्णायक युद्धमे मसऊदको उसीने हराकर गजनवी शक्तिको खतम किया था—गजनवियोंके साथ अन्तिम सघर्ष १०५९ मे हुआ, जिसके साथ वह वश अपने सारे महत्वको खो बैठा। मसऊदको खुरासानसे भगानेके बाद तुगरलने सारे ईरानपर अधिकार जमानेके लिये दैलिमी (बुवायही) वशको खतम करना आवश्यक समझा। बुवाहियोकी समाप्तिके बाद तुगरलके राज्यकी सीमा रोमन-राज्यकी सीमा

पर पहुच गई और कुस्तुन्तिनोपोलके इम्पेरातर कसतान्तिन मोनोमकको भी मजबूर तुगरलकी मैत्री प्राप्त करनी पडी। तुगरलकी अजेय सेना तुर्कमान घुमन्तुओंकी थी, जो कि अभियानोंमें अपने तम्बुओं और परिवारके साथ जाया करते थे। १०४८ ई० (४४० हि०) के अन्त तक आजुरवाइजान, मेसोपोतामिया और क्षुद्र-एसियापर सल्जूकियोंका शासन स्थापित हो गया। ४०० साल पहिले मरुभूमिके घुमन्तू अरब अपनी विजययात्रा करते सिर-दरियाके किनारे तक पहुचे थे। इसके बाद उत्तरी तुर्क घुमन्तुओंने इस्लाम स्वीकार किया। अब उन्होंने उलटी विजय-यात्रा आरम्भ की थी और तुगरल जैसे विजेताके रूपमें वह अरबकी मरुभूमि तक पहुच गये। अरबोंके विजय-प्रवाहका रूप काफिर देशोंके विरुद्ध धार्मिक युद्ध (जहाद) था, जिसके साथ वह रास्तेमें चुन ली गयी संस्कृतियोंके प्रभाव तथा विद्याको भी लेते आये थे। लेकिन, सल्जूकियोंकी विजय-यात्रा किसी संस्कृतिको साथ लिये नही आयी थी। वह इस्लाम धर्मके माननेवाले थे, किन्तु थे अभी प्राय: घुमन्तू-बर्बर अवस्थामें। अपनी विजय-यात्राके आरंभ करनेसे पहिले ही उनके पास लिखित भाषा थी, और शायद कोई साहित्य भी। तुगरलके पूर्वज ईसाई या मानीके धर्मके माननेवाले थे। इसका अर्थ है, घुमन्तू होते हुए भी तुर्कमानोंके सरदारोंमें शिक्षा और संस्कृतिका नितान्त अभाव नही था। किन्तु जहा तक साधारण तुर्कमान जनताका संबंध था, वह अवश्य मरुभूमिके पुत्र थे। अरबोंने राज्य लुप्त हो जानेपर भी अपने आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक प्रभावको विजित देशोंपर स्थायी तौरसे छोडा। पर तुर्क ऐसा कोई उद्देश्य अपने साथ लेकर नही आये थे, हा उन्होंने अपने खूनका प्रभाव अवश्य छोडा। जहा अरबी-प्रभावके कारण बलख, बुखारा विद्याके केन्द्र बन गये, वहाँ तुर्कमानोंके कारण आज उजबेकिस्तान, तुर्कमानिस्तान, आजुरबायजान और तुर्की तकका भाग तुर्की-भाषाभाषी हो गया। जहा तक आजुरबाइजान और तुर्कीका संबंध है, तुर्क-भिन्न रक्तकी अधिकताके कारण वहाके निवासियोंके चेहरे-मोहरेपर वह मंगोलायित आकृति अधिक नही आ सकी।

१०५५ ई० (४४९ हि०) में तुगरल खलीफाकी राजधानी बगदादमें दाखिल हुआ और कायम (१०३१-१०७५) को अब्बासी तख्त पाने और खलीफा बननेमें सहायता की। बाहरसे तुगरलने खलीफाके प्रति भारी सम्मान प्रदर्शित किया, किन्तु १०६३ ई० (४५५ हि०) में उसने खलीफाको लडकी देनेके लिये मजबूर किया। खलीफाकी लडकीसे तुगरल ब्याह नही कर सका था, कि रे (तेहरान) में ७० वर्षकी उम्रमें उसकी मृत्यु हो गई। भाई चाकर (दाऊद) पहिले ही मर चुका था, इसलिये तुगरलका उत्तराधिकारी दाऊद-पुत्र अल्प-अरसलन हुआ।

इतिहासकार इदरीसी तुगरल, अल्पअरसलन और मलिकशाह जैसे सल्जूकी शासकोंकी योग्यताको स्वीकार करता है, लेकिन वह उनके सरदारों और साधारण तुर्कमान कबीलेमें भेद करते हुए लिखता है—"उनके राजा लडाकू, समझदार, दृढसंकल्प, न्यायशील, और दूसरे सुगुणोंसे संयुक्त हैं, किन्तु उनका जनसाधारण क्रूर, जंगली, रूखे और मूर्ख हैं।" प्रथम सल्जूकी और कराखानी शासक, गजनवी महमूद-मसऊदसे भी अच्छे मुसलमान थे। कराखानी जन अपने शासकोंके लिये भी इस्लामिक सदाचारकी पाबन्दी आवश्यक मानते थे, उनके खानतक भी शराब नही पीते थे। इन तुर्क शासकों (सल्जूकियों और कराखानियों) में आदर्श न्यायशील राजा बनने की इच्छा भी थी, किन्तु महमूद तो सुल्तानको सर्व-नियम-विमुक्त मानता था।

"घुमन्तू तुर्कमानोंके नेता अपने जनसाधारण सैनिक से मुश्किलसे कोई भेद रखते थे, वह

उनके हरेक काममें शरीक होते थे। ऐसे राजा कैसे महमूद और मसऊदकी तरह यकायक स्वेच्छाचारी शासक बन सकते थे? हां, सल्जूकी सुल्तानोंने अपने सरदारोंकी गणतंत्री प्रथाको हटा दिया। पहिले साहिब-खबर (राजचर) का एक पद दरबारमें रहता था, जिसे सल्जूकियों ने उठा दिया। घुमन्तुओंके लिये खुफियागिरी करना एक घृणास्पद बात थी। साहिब-खबरकी नियुक्ति न करनेके बारेमें जब पूछा गया, तो द्वितीय सल्जूकी सुल्तान अल्प अरसलनने कहा—"यदि मैं उन लोगोंके ऊपर साहिब-खबर नियुक्त करूं, जोकि मेरे दिली दोस्त हैं, मुझसे घनिष्टता रखते हैं, तो वह साहिब-खबरकी कोई परवाह नहीं करेंगे और न उसे रिश्वत देंगे। क्योंकि उनको अपनी भक्ति, मित्रता और मेरे साथ अपनी घनिष्टतापर पूरा विश्वास है। दूसरी ओर मेरे विरोधी और शत्रु अवश्य साहब-खबरके साथ मित्रता करेंगे और उसे पैसा देंगे। यह स्पष्ट है कि साहब-खबर मेरे मित्रोंके संबंधमें बुरी खबर और मेरे शत्रुओंके संबंधमें अच्छी खबर मेरे पास पहुंचाता रहेगा। अच्छे और बुरे शब्द तीर जैसे होते हैं। अगर बहुत से तीर छोड़े जायं, तो कम से कम एक लक्ष्यपर लग ही जाता है। इसके कारण मित्रोंके संबंधमें मेरी सहानुभूति कम होती जायगी और शत्रुओंके लिये वह बढ़ती जायेगी। थोड़े समयके भीतर ही शत्रु मित्रोंसे भी अधिक मेरे नजदीक हो अन्तमें उनका स्थान लेंगे। इसके कारण मेरी जो हानि होगी, उसका कोई अंदाजा नहीं लगा सकेगा।" इससे उलटे सल्जूकियोंका प्रसिद्ध वजीर निजामुल्मुल्क लिखता है "साहिब-खबरका पद राज्यकी व्यवस्था (कवायद) का एक स्तम्भ है।"

इससे मालूम होगा, कि सल्जूकी शक्ति पाकर अभी बिगड़े नहीं थे। उन्होंने अपने घुमन्तू कबीलोंकी सादगी आदि बहुतसे गुणोंको कायम रखा था। लेकिन कब तक ऐसा कर सकते थे, जब कि सभी तरहके स्वेच्छाचारों और दुर्गुणोंसे भरे सामन्ती संसारके वह शासक बन चुके थे।

खुरासान-विजयके बाद उसके कुछ शहरोंके खुतबेमें तुगरलका नाम और कुछमें दाऊदका नाम पढ़ा जाता था। घुमन्तुओंकी स्वच्छंदताके कारण कराखानियोंकी भांति सल्जूकियोंमें भी राज-परिवारिक झगड़े बहुत रहते थे। सारा परिवार राज्यका स्वामी माना जाता इसलिये सल्जूकी राजवंशियोंको अलग अलग नगरोंका शासक बनाकर भेजना आवश्यक था। ये नगर उनकी सैनिक जागीरें थीं। तुर्कोंकी विजयसे पहिले सैनिक जागीरोंका उतना विस्तार नहीं था, जितना की इस समय हुआ। यह सैनिक जागीरदार अपने अर्धदासोंसे निश्चित लगान लेने का ही अधिकार नहीं रखते थे, बल्कि उनके शरीर, संपत्ति, स्त्री-बच्चोंपर भी हक रखते थे। इस प्रथासे सबसे अधिक हानि प्राचीन कालसे चले आये देहकानों (ग्रामपतियों) विशेषकर खुरासानके देहकानोंकी हुई। मंगोलोंके विजय तक खुरासानमें अभी देहकान मौजूद थे, जो परिवार-सहित अपनी गढ़ियोंमें रहते थे। उन्हींकी देखा-देखी सैनिक जागीरदारी पानेवाले तुर्क भी देहकान कहे जाते थे। १०३५ ई० में देहिस्तान, नसा और फारावके शहर तुगरल, दाऊद और इन दोनोंके चचा पैगू (भगवान्) की जागीरें थी। इन तीनोंको देहकानकी पदवी थी, जोकि कुछ कुछ बली

हजार दिरहम प्रति जिफ्त था। यदि कोई खरीदार मिल भी जाता, तो भूमि विना जुती ही रह जाती। इसका कारण था शासकोंकी क्रूरता और अपनी प्रजाके साथ उनका निष्ठुर व्यवहार।"

सल्जूकी अन्त तक पानीमें पद्मपत्रकी तरह तत्कालीन समाजसे निर्लेप रहे। इसका पता इसी से मालूम होगा, कि अन्तिम और महाप्रतापी सल्जूकी सुल्तान सिंजर अकबरकी तरह लिख-पढ़ नहीं सकता था। वह सभी तरहकी संस्कृतिसे अपरिचित रहे। राजकाजका सारा काम उनका वजीर देखता था। हां, तलवारके महत्वको वह मानते थे, इसलिये उसके धनी थे। ये तुर्क सभ्य देशमें आकर शासक बने, तो भी न वह अपने घुमन्तू जीवनको छोडनेके लिये तैयार थे और न सभ्य जगतके साधारण कानूनको माननेके लिये ही। वह इसे कायरताका चिह्न मानते थे। उनके व्यवहार और वर्ग-विभाजन सदा अशान्तिके कारण रहे, तो भी अपने कबीलेवालोंके विरुद्ध कोई कठोर कदम नही उठा सकते थे, क्योंकि राजवंशके साथके उनके संबंध और सेवाओंको भुलाया नही जा सकता था। नियम था, हजार तुर्कमान तरुणोंकी एक वाहिनी जमा की जाय, फिर उन्हें "दरबारी गुलाम" बनाकर शिक्षा दी जाय, जिसमें कि वह साधारण प्रजामें मेल-जोल पैदा कर उनके साथ हिल-मिल जायें, गुलामकी तरह राज्य सेवा करें तथा राज्यवंशके अनन्य भक्त रहें। लेकिन सब कुछ करने पर भी मरुभूमिके स्वच्छन्द पुत्रोंको गुलाममें परिवर्तित करना आसान नही था। सल्जूकी प्रजामें तुर्कमान घुमन्तुओं और साधारण अतुर्कमान प्रजाके स्वार्थ भी परस्पर-विरोधी थे। घुमन्तू शान्तिके समय अपनी जीविका पशुपालनसे करते, एक जगहसे दूसरी जगह घूमा करते थे, जब कि साधारण जनता कृषि और शिल्प-व्यवसायसे जीविका करती ग्रामों और नगरोंमें रहा करती थी। हरेक घुमन्तू अपनेको सुल्तानका संबंधी मानता—इसमें शक नही सुल्तानका सिंहासन इन्हींके सहारे टिका हुआ था—इसलिये साधारण जनताको नीच दृष्टिसे देखना उनके लिये स्वाभाविक था। इन घुमन्तुओंमें स्त्रियोंका प्रभाव अधिक था, जिसे हम आगे तुर्कान खातून के रूपमें चरम सीमापर पहुंचा देखेंगे।

२ अल्प अरसलन (१०६३-७३ ई०)

चचाके मरनेके बाद अल्प अरसलन[1] वक्षुसे फुरात और कास्पियन तटसे फारसकी खाडी तक फैले विशाल राज्यका स्वामी बना। इसने पुराने वजीरको हटाकर इस्लामके कौटिल्य हसन अली-पुत्र निजामुल्मुल्कको वजीर बनाया। निजामुल्मुल्कका जन्म १०१८ (४०८ हि०) में खुरासानके तूस नगरमें हुआ। नैशापोरमें पढनेके समय यह महाकवि उमर खैय्याम तथा इस्माइली गुरु हसन-सब्बाहका सहपाठी था। पहिले यह गजनवियोंकी सेवामें था, फिर बलखमें सल्जूकी

[1] निजामुल्मुल्कने "सियासतनामा" (अध्याय ४४ पृष्ठ १४५) में अल्प अरसलन के बारे में लिखा है—"अगर चार लाख आदमियोंको वेतन-भोजन दिया जाय, तो निश्चय ही खुरासान मावराउन्नहर (अन्तर्वेद), काशगर, बलाशागून, ख्वारेज्म, नीमरोज, इराक, पारस, शशाम, आजुरबायजान, अरमन, अन्ताकिया, येरुसलम (बैतुल्मुकद्दस) जो कोई (देश) स्वामीके पास हैं—उसमें चार लाख की जगह सात लाख सवार हो। (फिर वह) देश और सिन्ध-हिन्द, तुर्किस्तान, चीन और माचीन (महाचीन) तक का स्वामी हो जाये। हब्शा (युथोपिया) बर्बर, रोम, मिस्र और पश्चिम उसका आज्ञाकारी होये।"

उनके हरेक काममें शरीक होते थे। ऐसे राजा कैसे महमूद और मसऊदकी तरह यकायक स्वेच्छाचारी शासक वन सकते थे? हा, सल्जूकी सुल्तानोने अपने सरदारोंकी गणतत्री प्रथाको हटा दिया। पहिले साहिव-खवर (राजचर) का एक पद दरवारमें रहता था, जिसे सल्जूकिया ने उठा दिया। घुमन्तुओंके लिये खुफियागिरी करना एक घृणास्पद वात थी। साहिव-खवरकी नियुक्ति न करनेके वारेमें जव पूछा गया, तो द्वितीय सल्जूकी सुल्तान अल्प अरसलनने कहा—"यदि म उन लोगोके ऊपर साहिव-खवर नियुक्त करू, जोकि मेरे दिली दोस्त है, मुझसे घनिष्टता रखते ह, तो वह साहिव-खवरकी कोई परवाह नही करेंगे और न उसे रिश्वत दगे। क्योकि उनको अपनी भक्ति, मित्रता और मेरे साथ अपनी घनिष्टतापर पूरा विश्वास है। दूसरी ओर मेरे विरोधी और शत्रु अवश्य साहिव-खवरके साथ मित्रता करेंगे और उसे पैसा देंगे। यह स्पष्ट है कि साहिव-खवर मेरे मित्रोंके सवधमें वुरी खवर और मेरे शत्रुओंके सवधमे अच्छी खवर मेरे पास पहुचाता रहेगा। अच्छे और वुरे शब्द तीर जैसे होते है। अगर वहुत से तीर छोडे जाय, तो कम से कम एक लक्ष्यपर लग ही जाता है। इसके कारण मित्रोंके सवधमें मेरी सहानुभूति कम होती जायगी और शत्रुओंके लिये वह वढती जायेगी। थोडे समयके भीतर ही शत्रु मित्रोंसे भी अधिक मेरे नजदीक हो अन्तमें उनका स्थान लेंगे। इसके कारण मेरी जो हानि होगी, उसका कोई अदाजा नही लगा सकेगा।" इससे उलटे सल्जूकियोंका प्रसिद्ध वजीर निजामुलमुल्क लिखता है "साहिव-खवरका पद राज्यकी व्यवस्था (कवायद) का एक स्तम्भ है।"

इससे मालूम होगा, कि सल्जूकी शक्ति पाकर अभी विगडे नही थे। उन्होंने अपने घुमन्तू कवीलोंकी सादगी आदि वहुतसे गुणोंको कायम रखा था। लेकिन कव तक ऐसा कर सकते थे, जव कि सभी तरहके स्वेच्छाचारो और दुर्गुणोंसे भरे सामन्ती ससारके वह शासक वन चुके थे।

खुरासान-विजयके वाद उसके कुछ शहरोंके खुतवेमें तुगरलका नाम और कुछमें दाऊदका नाम पढा जाता था। घुमन्तुओंकी स्वच्छदताके कारण कराखानियोंकी भाति सल्जूकियामें भी राज-परिवारिक झगडे वहुत रहते थे। सारा परिवार राज्यका स्वामी माना जाता इसलिये सल्जूकी राजवशियोंको अलग अलग नगरोंका शासक वनाकर भेजना आवश्यक था। ये नगर उनकी सैनिक जागीरें थीं। तुर्कोंकी विजयसे पहिले सैनिक जागीरोंका उतना विस्तार नही था, जितना की इस समय हुआ। यह सैनिक जागीरदार अपने अधदासोंसे निश्चित लगान लेने का ही अधिकार नही रखते थे, वल्कि उनके शरीर, सपत्ति, स्त्री-वच्चोंपर भी हक रखते थे। इस प्रथासे सवसे अधिक हानि प्राचीन कालसे चले आये देहकानों (ग्रामपतियो) विशेषकर खुरासानके देहकानोकी हुई। मगोलोंके विजय तक खुरासानमें अभी देहकान मौजूद थे, जो परिवार-सहित अपनी गढियोंमे रहते थे। उन्हीकी देखा-देखी सैनिक जागीरदारी पानेवाले तुर्क भी देहकान कहे जाते थे। १०३५ ई० में देहिस्तान, नसा और फारावके शहर तुगरल, दाऊद और इन दोनोंके चचा पैगू (भगवान्) की जागीरें थी। इन तीनोंको देहकानकी पदवी थी, जोकि कुछ कुछ वली (गवर्नर) के वरावर मानी जाती थी। देहकानोंके चिह्न थे—दो नोकदार सिरोवाली टोपी, एक ध्वजा, और ईरानी ढगसे सिला चोगा, तुर्की प्रथाके अनुसार घोडा, चारजामा, एक सोने का कमरवन्द तथा विना कटे कपडेके तीस टुकडे। देहकानी प्रथाका ह्रास अन्तर्वेदमें वस्तुओंके मूल्य गिरने के कारण भी हुआ। इतिहासकार नरसाखी लिखता है—"मेरे समयमें दानके तौरपर भी कोई भूमि नही लेना चाहता था, ऐसी भूमिको भी नही, जिसका दाम सामानियोंके समय चार

हजार दिरहम प्रति जिफ्त था। यदि कोई खरीदार मिल भी जाता, तो भूमि विना जुती ही रह जाती। इसका कारण था शासकोंकी क्रूरता और अपनी प्रजाके साथ उनका निष्ठुर व्यवहार।"

सल्जूकी अन्त तक पानीमें पद्मपत्रकी तरह तत्कालीन समाजसे निर्लेप रहे। इसका पता इसी से मालूम होगा, कि अन्तिम और महाप्रतापी सल्जूकी सुल्तान सिंजर अकबरकी तरह लिख-पढ नही सकता था। वह सभी तरहकी संस्कृतिसे अपरिचित रहे। राजकाजका सारा काम उनका वजीर देखता था। हा, तलवारके महत्वको वह मानते थे, इसलिये उसके धनी थे। ये तुर्क सभ्य देशमे आकर शासक बने, तो भी न वह अपने घुमन्तू जीवनको छोडनेके लिये तैयार थे और न सभ्य जगतके साधारण कानूनको माननेके लिये ही। वह इसे कायरताका चिह्न मानते थे। उनके व्यवहार और वर्ग-विभाजन सदा अशान्तिके कारण रहे, तो भी अपने कबीलेवालोंके विरुद्ध कोई कठोर कदम नही उठा सकते थे, क्योकि राजवंशके साथके उनके संबंध और सेवाओंको भुलाया नही जा सकता था। नियम था, हजार तुर्कमान तरुणोंकी एक वाहिनी जमा की जाय, फिर उन्हे "दरबारी गुलाम" बनाकर शिक्षा दी जाय, जिसमे कि वह साधारण प्रजासे मेल-जोल पैदा कर उनके साथ हिल-मिल जायें, गुलामकी तरह राज्य सेवा करे तथा राज्यवंशके अनन्य भक्त रहे। लेकिन सब कुछ करने पर भी मरुभूमिके स्वच्छन्द पुत्रोंको गुलाममें परिवर्तित करना आसान नही था। सल्जूकी प्रजामे तुर्कमान घुमन्तुओ और साधारण अतुर्कमान प्रजाके स्वार्थ भी परस्पर-विरोधी थे। घुमन्तू शान्तिके समय अपनी जीविका पशुपालनसे करते, एक जगहसे दूसरी जगह घूमा करते थे, जब कि साधारण जनता कृषि और शिल्प-व्यवसायसे जीविका करती ग्रामो और नगरोमें रहा करती थी। हरेक घुमन्तू अपनेको सुल्तानका संबंधी मानता—इसमें शक नही सुल्तानका सिंहासन इन्हीके सहारे टिका हुआ था—इसलिये साधारण जनताको नीच दृष्टिसे देखना उनके लिये स्वाभाविक था। इन घुमन्तुओमें स्त्रियोंका प्रभाव अधिक था, जिसे हम आगे तुर्कान खातून के रूपमे चरम सीमापर पहुंचा देखेंगे।

२ अल्प अरसलन (१०६३-७३ ई०)

चचाके मरनेके बाद अल्प अरसलन[1] वक्षुसे फुरात और कास्पियन तटसे फारसकी खाडी तक फैले विशाल राज्यका स्वामी बना। इसने पुराने वजीरको हटाकर इस्लामके कौटिल्य हसन अली-पुत्र निजामुलमुल्कको वजीर बनाया। निजामुलमुल्कका जन्म १०१८ (४०८ हि०) में खुरासानके तूस नगरमे हुआ। नैशापोरमें पढ़नेके समय यह महाकवि उमर खैय्याम तथा इस्माइली गुरु हसन-सब्बाहका सहपाठी था। पहिले यह गजनवियोकी सेवामे था, फिर बलखमें सल्जूकी

---

[1] निजामुलमुल्कने "सियासतनामा" (अध्याय ४४ पृष्ठ १४५) में अल्प अरसलन के बारे में लिखा है—"अगर चार लाख आदमियोको वेतन-भोजन दिया जाय, तो निश्चय ही खुरासान मावराउन्नहर (अन्तर्वेद), काशगर, बलाशागून, ख्वारेज्म, नीमरोज, इराक, पारस, शाम, आजुरबायजान, अरमन, अन्ताकिया, येरुसलम (बैतुलमुकद्दस) जो कोई (देश) स्वामीके पास है—उसमें चार लाख की जगह सात लाख सवार हो। (फिर वह) देश और सिन्ध-हिन्द, तुर्किस्तान, चीन और माचीन (महाचीन) तक का स्वामी हो जाये। हब्शा (युथोपिया) बर्बर, रोम, मिस्र और पश्चिम उसका आज्ञाकारी होये।"

बल्खीका वजीर बन ३० साल तक सल्जूकी-साम्राज्यका वजीर-आजम (महामंत्री) रहा। वह न्यायप्रिय, विचार-सहिष्णु और साहित्यानुरागी था। अल्प अरसलनके समय १०५० ई० में तुर्कोंने पहिले-पहल रोमन-राज्यपर आक्रमण किया, जिसमें रोमन-अधीन अरमेनियाका एक भाग उजाड़ हो गया। उन्होंने वहां ईसाइयोंको मार डाला। इस यात्रासे लौटनेके बाद अल्प अरसलनका विचार वक्षु पार विजय-यात्रा करनेका हुआ। १०७२ ई० में वह दो लाख सेना ले इस विजय-यात्रापर निकला। उसने वेरज्ञेमके दुर्गपतिको किसी कसूरमें मृत्यु-दण्ड दिया था, जिसने मौका पाकर अल्प अरसलनको मार डाला। इस मौकेसे फायदा उठाकर कराखानी शासक शम्सुलमुल्क (१०६९-१०८० ई०) ने तेरमिजसे चलकर बलखको ले लिया। वहांका वली अरसलन-पुत्र अयाज पहिले ही भाग गया था।

निजामुल्मुल्क, सुल्तान अरसलन और अपने बारेमें एक जगह लिखता है[1] "सुल्तान शहीद अल्प अरसलन पवित्रात्माके जमानेमें सेवकके लिये एक बात पैदा हुई। सारे जहानमें दो मजहब (सम्प्रदाय) हैं, एक अच्छा अबूहनीफाका दूसरा शाफई मजहब है। सुल्तान अपने सम्प्रदायमें पक्के थे। उनकी जीभसे अक्सर निकल जाया करता था—"अह्, अगर मेरा वजीर शाफई मजहबका न होता" । वह हनफी था और शाफई मजहबको दोष देता,इसलिये उससे मुझे हमेशा शंका रहती, मैं डरता रहता। संयोग ऐसा हुआ कि सुल्तान-शहीद (अल्प अरसलन) ने मावरा उन्नहर (अन्तर्वेद) जानेका इरादा किया, क्योंकि शमशुलमुल्क (कराखानी) आज्ञाकारी नहीं था, और न (आज्ञानुवर्तन) करना चाहता था। (सुल्तानने) सेनाको बुलाया और नस्र-पुत्र शमशुलमुल्क इब्राहीमके पास दूत भेजा। मैंने दानिशमद अश्तरको पहिले ही सुल्तानके पास भेज दिया, जिसमें जो कुछ वहां हो, उसकी मुझको खबर दे। सुल्तानका दूत आया। उसने चिट्ठी और समाचार दिया। खानने वहांसे अपने रसूल (दूत) को सुल्तानके रसूलके साथ यहां भेजा। जैसा कि स्वभाव है, दूत समय-समय पर वजीरोंके सामने जा और जो अभिप्राय या निवेदन करना होता, उसे कह देते, जिसमें कि वजीर उसे सुल्तानसे कहे। संयोगसे सेवक साथियों के साथ अपने बैठकखानेमें बैठा शतरंज खेल रहा था। शतरंज खेलनेवालोंमें से एकने कहा कि समरकन्दके खानका दूत आया है। मैंने कहा—'तो, ले आओ। ' उससे सुल्तान और वजीरके संबंधकी कुछ बातोंका पता लगा।

३. मलिकशाह अरसलन पुत्र (१०७३-१०९२ ई०)

गद्दी पानेमें अरसलनके पुत्र मलिक शाहका हलका सा विरोध हुआ। गद्दी पाते ही उसे कराखानियोंसे मुकाबिला करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने अल्प अरसलन के मरते ही बलखको लूटा और बरबाद किया था। १०७३ ई० में ही मलिकशाहने समरकन्दके शासक अल्प तगिन पर आक्रमण किया। अल्प तगिन की मृत्युकी खबर सुनकर उसने तेरमिजको घेर लिया। अल्पतगिनने मजबूर होकर शांति-भिक्षा मांगी। तबसे १०७९ (४८२ हि०) तक मलिकशाहको कराखानियोंसे झगड़ा करनेकी अवश्यकता नहीं पड़ी। उसके बाद प्रजाके आर्त्तनाद सुनने के बहाने मलिकशाहने वक्षु पार हो बुखारा

---

[1] वही पृ० ८८०

और समरकन्दको ले लिया और कराखानी शासक अहमद खिज़िर-पुत्रको वन्दी बनाया। समरकन्दसे आगे बढ़ते हुए उसने काशगरपर आक्रमण किया। वहाके खानने भी अपने सिक्के और खुतवेमे सल्जूकी-सुल्तानको अपना अधिराज मान कर प्राण बचाया। मलिकशाह अब चीनके सीमान्तसे कान्स्तान्तिनोपोल के द्वार तकका स्वामी था। इसके समय वाणिज्य-व्यापारमे वहुत भारी वृद्धिहुई। अपने शासनके पाच साल इसे युद्धमें विताने पडे, ।उसके वादके पन्द्रह सालके अपने शान्तिपूर्ण शासनमें उसका ध्यान राजकी सास्कृतिक, साहित्यिक और आर्थिक समृद्धि वढानेमे रहा। इस्लामके इतिहासमें मलिकशाह का काल अत्यत वैभवपूण माना जाता है। इसमें जहा मलिकशाहकी सैनिक चातुरी ने काम किया था, वहा निजामुलमुल्कके शासन का भी कम हाथ नही था। निजामुलमुल्कको मलिकशाह वहुत मानता था। हसन सब्बाहपुत्रने अपने धोखाघडीके हथकण्डो द्वारा एक जवर्दस्त इस्माईली सप्रदाय कायम कर लिया और उसके गुप्तचर अपने गुरुकी आज्ञापर हत्या करनेमें इतने सफल होते रहे कि हसन के नामपर ही हत्यारे को यूरोपीय भाषाओमें असासिन कहा जाने लगा। निजामुलमुल्क अपने पूव सहपाठीको सीमा अतिक्रमण करते देख चुप नही रह सकता था। इसपर हसनके भेजे हत्यारेने १०९२ (४८५ हि०) में निज़ामुलमुल्कको मार डाला। मलिकशाह भी उसी साल कुछ महीनो वाद ३८ सालकी उमरमें मर गया।

गज़ाली (१०५९-११११ ई०)

इस कालमे जहा निजामुलमुल्क जैसे महान् राजनीतिज्ञ उमर खैय्याम जैसा अमर कवि पैदा हुये, वहा गज़ाली जैसे दार्शनिकको पैदा करनेका भी सौभाग्य इसी कालको है। ग़ज़ालीका पूरा नाम मुहम्मद मुहम्मद-पुत्र मुहम्मद-पुत्र मुहम्मद-पुत्र गज़ाली था, अर्थात् उसके वाप, दादा और परदादाका नाम भी मुहम्मद ही था। सूत कातना (कोरी या ततवाका काम) इसका खानदानी पेशा था, इसलिये मुहम्मदने अपने नामके साथ ग़ज़ाली लगाया। ग़ज़ाली का जन्म १०५९ ई० (४५० हि०) में ईरानके तूस नगरके ताहिरान मुहल्लेमें हुआ था। इससे पहिले ही महान् कवि फिरदौसीको तूस पैदा कर चुका था। गज़ालीके परिवारमें विद्याकी पूछ-ताछ नही थी। गज़ालीका वाप स्वय अनपढ़ था, लेकिन ग़ज़नवी और सल्जूकी शासनमें विद्याके प्रति लोगोमें जो प्रेम वढ़ चला था, उसके कारण वाप ने भी अपने लडकेको पढानेका निश्चय किया। उसे क्या मालूम था, उसका लडका सनातनी इस्लामका सबसे बडा दार्शनिक होगा। ग़ज़ालीके शिक्षक नेशापोरके वेहकिया विद्यापीठके अध्यापक अब्रुलमलिक हरमैन थे। हरमैनकी विद्याकी इतनी ख्याति थी, कि सल्जूकियोंके महामन्त्री निज़ामुलमुल्कने राजधानी नेशापोरमें अपने नामसे मदरसा-निजामिया वनवा कर वहा उन्हे प्रधानाध्यापक नियुक्त किया था। नेशापोरमें विद्या समाप्त कर गजाली जव ४८४ हि० (१०९१ ई०) में वगदाद पहुचे, तो सारे शहरने उनका शाहाना स्वागत किया। १०९२ (४८५ हि०) में मलिकशाह सल्जूकीके मर जानेपर उसकी प्रभावशालिनी रानी तुर्कानखातूनने अमीरो और दरवारियोको इस वातपर राजी कर लिया, कि गद्दी उसके चार सालके बेटे महमूद (१०९२-१०९४ ई०) को मिले। साथ ही वगदादी खलीफाके सामने यह भी माग पेश की, कि खुतवा मेरे लडकेके नामसे पढ़ा जाय। खलीफाने पहिली वात मान ली, लेकिन दूसरी वातको मानना मुश्किल समझ

वलीका वजीर वन ३० साल तक सल्जूकी-साम्राज्यका वजीर-आजम (महामंत्री) रहा। वह न्यायप्रिय, विचार-सहिष्णु और साहित्यानुरागी था। अल्प अरसलनके समय १०५० ई० में तुर्कोंने पहिले-पहल रोमन-राज्यपर आक्रमण किया, जिसमें रोमन-अधीन अरमेनियाका एक भाग उजाड़ हो गया। उन्होंने वहां ईसाइयोंको मार डाला। इस यात्रासे लौटनेके बाद अल्प अरसलनका विचार वक्षु पार विजय-यात्रा करनेका हुआ। १०७२ ई० में वह दो लाख सेना ले इस विजय-यात्रापर निकला। उसने वेरजेमके दुर्गपतिको किसी कसूरमें मृत्यु-दण्ड दिया था, जिसने मौका पाकर अल्प अरसलनको मार डाला। इस मौकेसे फायदा उठाकर कराखानी शासक शम्सुलमुल्क (१०६९-१०८० ई०) ने तेरमिजसे चलकर बलखको ले लिया। वहांका वली अरसलन-पुत्र अयाज पहिले ही भाग गया था।

निजामुल्मुल्क सुल्तान अरसलन और अपने बारेमें एक जगह लिखता है[1] "सुल्तान शहीद अल्प अरसलन पवित्रात्माके जमानेमें सेवकके लिये एक बात पैदा हुई। सारे जहानमें दो मजहब (सम्प्रदाय) हैं, एक अच्छा अबूहनीफाका दूसरा शाफई मजहब है। सुल्तान अपने सम्प्रदायमें पक्के थे। उनकी जीभसे अक्सर निकल जाया करता था—"आह, अगर मेरा वजीर शाफई मजहबका न होता" । वह हनफी था और शाफई मजहबको दोष देता,इसलिये उससे मुझे हमेशा शंका रहती, मैं डरता रहता। संयोग ऐसा हुआ कि सुल्तान-शहीद (अल्प अरसलन) ने मावरा उन्नहर (अन्तर्वेद) जानेका इरादा किया, क्योंकि शमशुल्मुल्क (कराखानी) आज्ञाकारी नहीं था, और न (आज्ञानुवर्तन) करना चाहता था। (सुल्तानने) सेनाको बुलाया और नस्र-पुत्र शमशुलमुल्क इब्राहीमके पास दूत भेजा। मैंने दानिशमद अश्तरको पहिले ही सुल्तानके पास भेज दिया, जिसमें जो कुछ वहां हो, उसकी मुझको खबर दे। सुल्तानका दूत आया। उसने चिट्ठी और समाचार दिया। खानने वहांसे अपने रसूल (दूत) को सुल्तानके रसूलके साथ यहां भेजा। जैसा कि स्वभाव है, दूत समय-समय पर वजीरोंके सामने जा और जो अभिप्राय या निवेदन करना होता, उसे कह देते, जिसमें कि वजीर उसे सुल्तानसे कहे। संयोगसे सेवक साथियों के साथ अपने बैठकखानेमें बैठा शतरंज खेल रहा था। शतरंज खेलनेवालोंमें से एकने कहा कि समरकन्दके खानका दूत आया है। मैंने कहा—'तो, ले आओ। ' उससे सुल्तान और वजीरके सबंधकी कुछ बातोंका पता लगा।

३. मलिकशाह् अरसलन पुत्र (१०७३-१०९२ ई०)

गद्दी पानेमें अरसलनके पुत्र मलिक शाहका हलका सा विरोध हुआ। गद्दी पाते ही उसे कराखानियोंसे मुकाबिला करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने अल्प अरसलन के मरते ही बलखको लूटा और बरबाद किया था। १०७३ ई० में ही मलिकशाहने समरकन्दके शासक अल्प तगिन पर आक्रमण किया। अल्प तगिन की मृत्युकी खबर सुनकर उसने तेरमिजको घेर लिया। अल्पतगिनने मजबूर होकर शांति-भिक्षा मांगी। तबसे १०७९ (८८२ हि०) तक मलिकशाहको कराखानियोंसे झगड़ा करनेकी अवश्यकता नहीं पड़ी। उसके बाद प्रजाके आर्तनाद सुनने के बहाने मलिकशाहने वक्षु पार हो बुखारा

---

[1] वही पृ० ८८०

और समरकन्दको ले लिया और कराखानी शासक अहमद खिज़िर-पुत्रको वन्दी वनाया। समरकन्दसे आगे वढ़ते हुए उसने काशगरपर आक्रमण किया। वहाके खानने भी अपने सिक्के और खुतवेमे सल्जूकी-सुल्तानको अपना अधिराज मान कर प्राण वचाया। मलिकशाह अव चीनके सीमान्तसे कास्तान्तिनोपोल के द्वार तकका स्वामी था। इसके समय वाणिज्य-व्यापारगे वहुत भारी वृद्धिहुई। अपने शासनके पाच साल इसे युद्धमें विताने पडे, ।उसके वादके पन्द्रह सालके अपने शान्तिपूर्ण शासनमें उसका ध्यान राजकी सास्कृतिक, साहित्यिक और आर्थिक समृद्धि वढानेमें रहा। इस्लामके इतिहासमें मलिकशाह का काल अत्यत वैभवपूण माना जाता है। इसमे जहा मलिकशाहकी सैनिक चातुरी ने काम किया था, वहा निजामुल्मुल्कके शासन का भी कम हाथ नहीं था। निजामुलमुल्कको मलिकशाह वहुत मानता था। हसन सव्वाहपुत्रने अपने धोखाधडीके हथकण्डो द्वारा एक जवर्दस्त इस्माईली सप्रदाय कायम कर लिया आर उसके गुप्तचर अपने गुरुकी आज्ञापर हत्या करनेमें इतने सफल होते रहे कि हसन के नामपर ही हत्यारे को यूरोपीय भाषाओमे असासिन कहा जाने लगा। निजामुलमुल्क अपने पूव सहपाठीको सीमा अतिक्रमण करते देख चुप नही रह सकता था। इसपर हसनके भेजे हत्यारेने १०९२ (४८५ हि०) में निज़ामुलमुल्कको मार डाला। मलिकशाह भी उसी साल कुछ महीनो वाद ३८ सालकी उमरमें मर गया।

गज़ाली (१०५९-१११९ ई०)

इस कालमें जहा निजामुलमुल्क जैसे महान् राजनीतिज्ञ उमर खैय्याम जैसा अमर कवि पैदा हुये, वहा ग़ज़ाली जैसे दार्शनिकको पैदा करनेका भी सौभाग्य इसी कालको है। गजालीका पूरा नाम मुहम्मद मुहम्मद-पुत्र मुहम्मद-पुत्र मुहम्मद-पुत्र ग़ज़ाली था, अर्थात् उसके वाप, दादा और परदादाका नाम भी मुहम्मद ही था। सूत कातना (कोरी या ततवाका काम) इसका खानदानी पेशा था, इसलिये मुहम्मदने अपने नामके साथ ग़ज़ाली लगाया। ग़ज़ाली का जन्म १०५९ ई० (४५० हि०) में ईरानके तूस नगरके ताहिरान मुहल्लेमें हुआ था। इससे पहिले ही महान् कवि फिरदौसीको तूस पैदा कर चुका था। गज़ालीके परिवारमें विद्याकी पूछ-ताछ नही थी। गज़ालीका वाप स्वय अनपढ था, लेकिन गजनवी और सल्जूकी शासनमे विद्याके प्रति लोगोमें जो प्रेम वढ चला था, उसके कारण वाप ने भी अपने लडकेको पढानेका निश्चय किया। उसे क्या मालूम था, उसका लडका सनातनी इस्लामका सबसे वडा दार्शनिक होगा। गज़ालीके शिक्षक नेशापोरके वेहकिया विद्यापीठके अध्यापक अवुलमलिक हरमैन थे। हरमैनकी विद्याकी इतनी ख्याति थी, कि सल्जूकियोंके महामत्री निज़ामुलमुल्कने राजधानी नेशापोरमें अपने नामसे मदरसा-निजामिया वनवा कर वहा उन्हे प्रधानाध्यापक नियुक्त किया था। नेशापोरमें विद्या समाप्त कर गज़ाली जव ४८४ हि० (१०९१ ई०) में वगदाद पहुचे, तो सारे शहरने उनका शाहाना स्वागत किया। १०९२ (४८५ हि०) मे मलिकशाह सल्जूकीके मर जानेपर उसकी प्रभावशालिनी रानी तुर्कानखातूनने अमीरो और दरवा-रियोको इस वातपर राजी कर लिया, कि गद्दी उसके चार सालके वेटे महमूद (१०९२-१०९४ ई०) को मिले। साथ ही वगदादी खलीफाके सामने यह भी माग पेश की, कि खुतवा मेरे लडकेके नामसे पढ़ा जाय। खलीफाने पहिली वात मान ली, लेकिन दूसरी वातको मानना मुश्किल समझ

उससे समझौता करनेके लिये गज़ालीको तुर्कान खातून की दरबारमे भेजा। गज़ाली अपने काममें सफल हुए।

गज़ालीने यद्यपि इस्लामकी शरीयतपर दृढ़ रहनेका संकल्प किया था, किन्तु उनके गंभीर अध्ययनने पुराने पथ पर दृढ नहीं रहने दिया। उन्होंने अपने वास्तविक विचारोंको सूफी वेदान्तके परदेके नीचे दबानेकी करीब-करीब उसी तरह कोशिश की, जिस तरह उनसे दो शताब्दी पहिले शंकराचार्य कर चुके थे।*

घुमन्तुओमें गुलाम खरीद कर उसे शिक्षा-दीक्षा देकर योग्य पदोंके लिये तैयार करनेकी प्रथा थी, यह हम पहिले कह चुके है। सल्जूकियोमें भी ऐसे गुलामोको बडे बडे पदो पर नियुक्त किया जाता था। मलिक शाहने अपने तश्तदार (थालधारक) वल्कतगिनको ख्वारेज्मका राज्यपाल बनाया था। वल्कतगिनने नूश तगिनको गुलाम खरीदा था। दरबारमे वल्कतगिनका बहुत प्रभाव था। उसके गुलाम नूश तगिनकी भी बहुत चलती थी। १०७७ (४७० हि०) में बल्कतगिनके मरने पर नूशतगिन ख्वारेज्मका गवर्नर नियुक्त हुआ। यही उस प्रसिद्ध ख्वारेज्मशाही राज्यवंशका संस्थापक हुआ, जिसने चिंगिस के आक्रमणके समय मध्यएसियामें भारी शक्ति प्राप्त कर ली थी। नूशतगिन अपने स्वामीसे भी अधिक शक्तिशाली हो गया, लेकिन वह जीवन भर सल्जूकियोंका भक्त बना रहा।

४ महमूद I मलिक-पुत्र (१०९२-१०९४ ई०)

अरसलनके चार पुत्रोमे महमूद सबसे छोटा और बापके मरनेके समय केवल चार सालका था। लेकिन उसकी मा तुर्कान खातून बहुत जबर्दस्त स्त्री थी, जिसके कारण और भाइयोंको वंचित कर इस शिशुको सल्जूकी ताज मिला और खलीफा मुक्तदिर (१०७५-९४) ने भी मजबूर होकर खुतबामें उसके नामको रखना स्वीकार किया। लेकिन ज्येष्ठ पुत्र बरकियारुक इस्पहानमें तना रहा। उसके विरुद्ध खातून स्वयं सेना लेकर गई। बरकियारुक लडनेमें सफलताकी आशा न देख अपने समर्थक मुवैयादुद्दौला (निजामुलमुल्क-पुत्र) के पास रे (तेहरान) चला गया। अन्तमें मुवैयाद और उसके परिवारकी सहायतासे उसका पल्ला भारी हो गया। तुर्कान खातूनने इस्पहानको हाथसे न जाने देनेके लिये बरकियारुकको बहुत सा खजाना देनेको मजबूर किया, किन्तु खातूनका दरबारी दबदबा बहुत समय तक नहीं चला और पहिले खातून फिर उसके शिशु पुत्रके मरनेके साथ बरकियारुकको मौका मिला। इसी समय खलीफा मुक्तदिर भी मर गया।

५ बरकियारुक १०९४-११०४ ई०

बरकियारुक अभी सोलह सालका ही था। उसने महान् वजीर निजामुलमुल्कके पुत्र मुवैयादुद्दौलाकी सहायतासे गद्दी पानेमें सफलता प्राप्त की। खलीफा मुस्तज़हिर (१०९४-१११८ ई०) की स्वीकृति भी मिल गयी। बरकियारुक बगदाद गया, नये खलीफाने सुल्तानका बडा स्वागत किया। बरकियारुकका ११ सालका शासन अधिकतर लडाई झगडा में बीता।

---

*विशेष के लिये देखो "दर्शनदिग्दर्शन" पृष्ठ १५०-८७

१०९७ ई० में अन्तर्वेदने बरकियारुककी अधीनता स्वीकार की। उसके नियुक्त सुलेमान तगिन (—११०२), महमूद तगिन और हारून तगिन एकके बाद एक अन्तर्वेदके शासक रहे। इनमें सुलेमान तगिन कराखानी खान तमगाच खान इब्राहीमका पौत्र और दाऊद कूच-तगिनका पुत्र था। ११वीं सदीके आरम्भ होते ही तुर्किस्तानके कराखानियोंने अन्तर्वेदपर आक्रमण कर दिया। कादिर खान जिब्रैल (बोगराखान मुहम्मद के पुत्र) ने अन्तर्वेदको ही दखल नहीं कर लिया, बल्कि ११०२ में सल्जूकियोंकी अपनी भूमिपर भी आक्रमण किया। वह तेरमिज लेनेमें सफल हुआ, लेकिन उसके पास ही २२ जून ११०२ ई० को सुल्तानके भाई सिंजरसे लड़ते मारा गया।

बरकियारुक इस बातमें सौभाग्यशाली था, कि उसको अपने भाइयोंसे बहुत लड़ने झगड़नेकी जरूरत नहीं पड़ी। वह अधिकतर बगदादमें रहता था। उसका एक भाई मुहम्मद आजुरबाइजानका शासक था और दूसरा सिंजर खुरासानका। सिंजरने खुरासानका राज्यपाल रहते गजनीको करद बनानेमें सफलता पाई। बरकियारुक इस्पहानसे बगदाद जाते समय ११०४ ई० (४९८ हि०) में मर गया। मृत्युके समय उसने अपने पुत्र मलिक शाह (II) के प्रति भक्तिकी शपथ ली थी।

बरकियारुकका संकल्प पूरा नहीं हुआ। उसके भाई मुहम्मदने धोखेसे बगदादको ले लिया और शिशु सुल्तानको अपना बंदी बना गद्दी सँभाल ली।

६ मलिकशाह II बरकियारुक पुत्र (११०४ ई०)

७. मुहम्मद मलिक-पुत्र (११०४-१११७ ई०)

मुहम्मदका तेरह सालका शासन भी लड़ाई-झगड़ोंमें बीता। इसी समय ईसाइयों और मुसलमानोंके सलेबी जंग शुरू हो गये। अब सल्जूकियोंकी सीमा भूमध्यसागर तक पहुँच गयी थी। ईसाइयोंके पवित्र स्थान येरुशेलम आदि भी शताब्दियोंसे मुसलमानोंके हाथमें रहते अब सल्जूकियोंके हाथमें थे। कुछ थोड़ेसे देशोंको छोड़कर सारा यूरोप इस समय तक ईसाई हो चुका था। यूरोपीय सामन्त नहीं चाहते थे, कि उनका पवित्र स्थान मुसलमानोंके हाथमें रहे। इसीलिए उन्होंने धर्म-युद्ध छेड़ दिया था। मुहम्मदके सेनापति इस समय उसी धर्मयुद्धमें लगे हुए थे। साथ ही गृह-कलह भी कम नहीं था। मुहम्मद १११७ (५११ हि०) में इस्पहानमें मरा।

८ महमूद II मुहम्मद-पुत्र (१११७ ई०)

अब बरकियारुकके सबसे छोटे भाई सिंजरकी शक्ति बढ़ गयी थी। महमूद नाममात्रके लिये गद्दीपर बैठा था, सारी शक्ति उसके चचा सिंजरके हाथमें थी। सिंजरने भतीजेको उभय इराक (इराक अरब और इराक अजम इरान) दे दिया, लेकिन शर्त यह रखी, कि खुतबेमें सिंजरका भी नाम रहेगा। यह प्रबन्ध भी स्थायी नहीं रहा।

९ सिंजर[1] मलिकशाह-पुत्र (१११७-११५७ ई०)

सिंजर सल्जूकी वंशका अन्तिम और महाप्रतापी सुल्तान था। वह बीस साल तक खुरा-

[1] वही पृ० ८८०

सान और अन्तर्वेद का राज्यपाल रहा और अब चालीस साल तकके लिये महान् सल्जूकी साम्राज्यकी बागडोर उसके हाथमें आयी। सल्जूकी राजवंश चार पीढ़ियों पहिले घूमन्तू पशु-पाल तुर्कों का था। सल्जूकियोंके हाथमें पहिले ख्वारेज्म आया फिर इराक-ईरान-सीरिया पर उनकी विजय-ध्वजा फहरायी। सल्जूकी अपने भिन्न-भिन्न प्रान्तोंके राज्यपाल अपने विश्वासपात्र तुर्क गुलामोंको बनाते रहे, यह हम कह आये हैं और यह भी कि नूशतगिनने अपनी शक्तिको बहुत बढ़ा लिया था। उसने अपने पुत्र कुतुबुद्दीन मुहम्मदकी शिक्षाकी ओर बहुत ध्यान दिया था। पिताके मरने पर १०९७ (४९० हि०) में यही ख्वारेज्मशाहकी उपाधि धारण कर गद्दी पर बैठा। इसीके समय कराखिताइयोंने अन्तर्वेदपर आक्रमण करना शुरू किया। कुतुबुद्दीनने ११२७ ई० (५२१ हि०) में उनके मुकाबिलेमें एक लाख सेना भेजी, लेकिन काफिरा (कराखिताइयो) ने ऐसी करारी हार दी, कि कुतुबुद्दीनको उनका करद होना पड़ा। कराखिताई इसके बाद राजधानी काशगरको लौट गये। जल्दी ही कुतुबुद्दीन मर गया और उसका पुत्र अत्सिज ख्वारेज्मशाह बना। अत्सिज कई साल तक सुल्तान सिंजरका तश्तदार बनकर मेवमें रहा था। उसके अधिक प्रभावको देखकर दरबारी जलने लगे, इसपर वह सिंजरसे छुट्टी ले ख्वारेज्म चला गया। वहा पहुचते ही उसने अपने स्वामीसे बगावत की। सिंजरने उसपर आक्रमण किया, लड़ाईमें अत्सिजका पुत्र इल्किलिच मारा गया और ख्वारेज्मियोंको बुरी तरहसे हारना पड़ा। अत्सिजने सुल्तानके सामने नाक रगड़ी। सिंजरने अपने भतीजे सुलेमान शाहको ख्वारेज्मका गवर्नर नियुक्त किया। सिंजरके लौटते ही अत्सिजने सुलेमान शाहको मार भगाया। अब सारा ख्वारेज्म अत्सिजके हाथमें था। लेकिन सिंजर उसे क्षमा करनेवाला नहीं था। अपनी शक्तिको मजबूत करनेके लिये ११४१ (५३६ हि०) में अत्सिजने कराखिताइयोंको सहायताके लिये बुलाया।

जुवैनीके अनुसार गजनाके अभियानमें कान भरनेके कारण सिंजरको अत्सिजने अपनी ओरसे ठंडा देखा था, जिसके कारण ही उसे विद्रोह करनेकी प्रेरणा मिली। ११३८ के पतझड़में सिंजरने ख्वारेज्मपर आक्रमण किया। सिंजरका अत्सिजपर यह इल्जाम था, कि उसने बिना हमारी आज्ञाके जन्द और मन्किशलकके मुसलमानोंका खून बहाया, वहाके निवासी इस्लामी प्रान्तोंके विश्वसनीय रक्षक थे, वह बराबर काफिरो (तुर्कों) से युद्ध करते थे। जवाबमें अत्सिजने विद्रोह करके सुल्तानके अफसरोंको कैद कर लिया, उनकी सपत्ति जप्त कर ली, खुरासानकी ओर जानेवाले सारे रास्ते बन्द कर दिये। सुल्तान इस समय खुरासानमें था। वहीं से उसने सितम्बर (मुहर्रम) ११३८ ई० में भारी सेना लेकर ख्वारेज्मकी ओर प्रयाण किया। अत्सिजने हजारास्पके पास जबर्दस्त मोर्चाबन्दी कर वक्षुका बाध तोड़कर आस-पासकी बहुत सी भूमि जलमग्न कर दी। सल्जूकी सेना वक्षुके किनारे किनारे नहीं चल सकती थी, इसलिए उसे रेगिस्तानका रास्ता पकड़ना पड़ा, जिसके कारण गति मन्द हो गई। १५ नवम्बरको भयंकर युद्ध हुआ। अत्सिजकी सेनामे अधिकतर काफिर तुर्क थे। उसने हमला किया, किन्तु पूरी हार खानी पड़ी। हताहतो और बन्दियोंके रूपमें १० हजार आदमियोंका नुकसान हुआ। बन्दियोंमें ख्वारेज्मशाहका पुत्र भी था, जिसे तुरन्त कत्ल करवा कर उसके सिरको सिंजरने अन्तर्वेद भेज दिया। सिंजर युद्ध-क्षेत्रमें १ सप्ताह रहा। बची सेना अत्सिजका साथ छोड़कर उसके पास आ गई। सिंजरने उसे क्षमा कर दिया। अत्सिज भाग

गया। सिंजर बिना किसी रुकावटके सारे ख्वारेज्म पर अधिकार कर अपने भतीजे सुलेमान मुहम्मद-पुत्रको राज्यपाल नियुक्त कर उसके साथ एक वजीर, एक अतावेग और एक हाजिव दे १० फरवरी ११३९ को राजधानी मेर्व लौट गया। सिंजर के लौट जाने पर अत्सिज फिर ख्वारेजिम लौट आया। सिंजर के वर्त्ताव से लोग रुष्ट थे, इसलिये सारे ख्वारेज्मी उसके साथ हो गये और अत्सिज ने सिंजर के अफसरों को मार डाला, सुलेमान भी भाग कर अपने चचा के पास गया। ११३९ ई० (५३४ हि०) में अत्सिज ने बुखारापर भी आक्रमण कर दिया और वहा के राज्यपाल यगी अली-पुत्र को वन्दी वना पीछे कत्ल कर दिया। उसके वाद उसने बुखारा के किले को ध्वस्त कर दिया। इतना करने के वाद फिर उसने अपने अधिराज (सिंजर) की अधीनता स्वीकार करने की इच्छा प्रकट की। मई (११४१) के अन्त में अत्सिज ने राजभक्ति की शपथ ली, जिसमें कहा, कि सुल्तान ने दुनिया के सामने अपने न्याय को सदा दिखलाया और अव भी अपनी दया के प्रकाश को दिखला रहा है। लेकिन इसके कुछ ही महीनो वाद अत्सिज ने शपथ तोड फेंकी।

११४३ ई० (५३८ हि०) में सिंजर ने फिर ख्वारेज्म पर चढाई की और अत्सिज को अधीनता स्वीकार करने के लिये मजवूर किया और वह लूटे खजाने को लेकर मेर्व लौटा। नवम्बर ११४७ में सिंजर ने तीसरी वार ख्वारेज्म पर आक्रमण किया। यह याद रखने की वात है, कि अत्सिज और सिंजर का झगडा ही कराखिताइयो को अन्तर्वेद में बुलाकर सल्जूकियो के राज्य को छिन्न-भिन्न करने और अन्त में स्वय सिंजर के मारे जाने का कारण हुआ।

११४१ई० में अन्तर्वेद के तुर्क सैनिको (करलुको) और खान में झगडा हुआ। महमूद खान ने करलुको के विरुद्ध सिंजर से मदद मागी, तो करलुको ने कराखिताइयो के गुरखान को सहायता के लिये बुलाया। यह वही गुरखान था, जिसने वलाशागुनमें घुमन्तुओ की सेना के विरुद्ध वहा के खान का सर-क्षण किया था। वह सिंजरसे न लडकर चाहता था, कि वीच में पडकर करलुको से समझौता करादे, किन्तु सिंजर ने इसका उत्तर बहुत अपमानजनक दिया, जिसके लिये कराखिताइयो ने अन्तर्वेद पर आक्रमण किया। ९ सितम्बर ११४१ ई० को कतवान की मरुभूमि में लडाई हुई और सिंजर की सेना पूर्णतया पराजित हुई। (कराखिताइयो) ने सिंजर की सेना को दरगम (समरकन्द के दक्षिण) की ओर हटने के लिये मजवूर किया। १० हजार हताहतो को नदी बहा ले गई, ३० हजार युद्ध क्षेत्र में काम आये। सिंजर किसी तरह भागकर तेरमिज पहुचा। सारे अन्तर्वेद ने कराखिताइयो के सामने सिर झुकाया। इसी साल (५३६ हि०) बुखारा पर भी उनका अधिकार हो गया। इस समय बुखारा में एक खानदानी रईसो का वश था, जिसकी पदवी सद्रे-जहा (जगत का मुखिया) थी। वह अपने को उमर की औलाद कहते थे। वशस्थापक का नाम बुर्हानुल् मिल्लत अब्दुल अजीज उमर-पुत्र माजा था। कराखिताइयो के आक्रमण के समय बुखारा का सद्रे-जहा हुसामुद्दीन उमर अब्दुल अजीज-पुत्र था। सद्रे-जहा के नेतृत्व में बुखारा ने काफिरो (कराखिताइयो) का विरोध किया। सद्रे-जहा मारा गया। कराखिताइयो ने अल्पतगिन को बुखारा का शासक नियुक्त किया। सिंजरकी घोर पराजय से लोगो में अफवाह उडी, कि अतसिज ने ही कराखिताइयो को बुलाया, यद्यपि कम से कम इस समय के लिये

---

*Turkistan Heart of Asia

यह बात सच्ची नही थी, क्योंकि कराखिताइयों की एक सेना ने अत्‌सिज़के राज्य को लूटकर भारी सख्या मे लोगो को मारा था, जिसके कारण अत्‌सिज़ सधि करने के लिये मजवूर हुआ और उसने जिन्स के अतिरिक्त तीस हजार सुवर्ण दीनार वार्षिक कर देना स्वीकार किया। शायद कतवान के युद्ध के वाद ही ख्वारेज्म पर हमला नही हुआ, क्योंकि सिंजर की पराजय से फायदा उठाकर अत्‌सिज़ ने जाकर खुरासान पर आक्रमण किया और १९ नवम्बर (११४१ ई०) को मेर्व को लूटा। जव उसे कराखिताइयो के आक्रमण की खवर मिली, तो पीछे लौटा। मई ११४२ को फिर वह सिंजर के खिलाफ अभियान करते नेशापोर पहुचा। नेशापोर के लोगो के सामने अत्‌सिज़ ने घोषणा की—"मने सल्जूक-वंश की सच्चे दिल से सेवा की, जिसके प्रति कृतघ्नता करने के कारण ही सिंजर को यह वदला मिला। हम नही जानते, उसका पश्चात्ताप लाभदायक सिद्ध होगा। सिंजर को हमारे जैसा उसके राज्य का समर्थक और मित्र कही भी नही मिलेगा। अन्तर्वेद में कराखिताइयो के राज्य की स्थापना एक महत्वपूर्ण घटना थी। करीव चार शताब्दियो वाद फिर वहा काफिरो का शासन स्थापित हुआ और मुसलमानो को उनके सामने सिर झुकाना पडा। सिंजर निर्वल हो चुका था। अत्‌सिज़ मेर्व और नेशापोर तक लूट मार मचाता रहा, तो भी सिंजर अभी अत्‌सिज़ के लिये काफी था।

२९ मई (११४१ ई०) को नेशापोर में अत्‌सिज़ के नाम का खुतवा पढा गया, लेकिन उसी साल की गरमियो मे सिंजर ने खुरासान को फिर अपने हाथ मे ले लिया। सिंजर ने ११४३ (५३८ हि०) में चढ़ाई की, तो अत्‌सिज़ फिर अधीनता स्वीकार करने के लिये मजवूर हुआ। शायद इसी सवध मे मार्च ११४४ को गुज़ो ने वुखारा पर सफल आक्रमण किया, जिसमें वहा का किला ध्वस्त हो गया। अत्‌सिज़ की वदनीयती की खवर सुनकर सिंजर ने कवि (अदीव) साविर को पता लगाने के लिये भेजा, जिसने सूचित किया कि अत्‌सिज़ ने पैसा देकर सुल्तान को मारने के लिये दो इस्माईलियो को नियुक्त किया है। सुल्तान सजग हो गया, लेकिन अत्‌सिज़ ने पता पाने पर साविर को वक्षु में फेंकवाकर मरवा दिया।

नवम्बर ११४७ में सिंजर ने तीसरी वार ख्वारेज्म पर आक्रमण किया और दो महीने के घिरावे के वाद हजारास्प को ले सका। वहा से अत्‌सिज़ की राजधानी में पहुचा। अत्‌सिज़ की प्रार्थना पर दरवेश आहूपोश (हरिन-चर्मधारी साधू) ने दोनो के वीच में विचवई का काम किया—आहूपोश की वडी प्रतिष्ठा थी, वह केवल हरिन का मास खाता, और हरिन का ही चमडा पहनता था, इसीलिये आहूपोश के नाम से विख्यात था। सिंजर ने फिर अत्‌सिज़ को क्षमा कर दिया, लेकिन शर्त यह रखी, कि अत्‌सिज़ स्वय मेरे पास वक्षु तटपर अधीनता स्वीकार करने के लिये आये। जून ११४८ के आरभ में वह मुलाकात हुई, लेकिन मुलाकात के समय दरवारी कायदे के विरुद्ध अत्‌सिज़ ने सुल्तान के सामने न जमीन चूमी, न घोडे पर से ही उतरा। उसने सिर झुकाया और सुल्तान के लगाम उठाने के पहिले ही लौट पडा। इस अपमान के लिये सिंजर ने फिर लडाई करना मुनासिव नही समझा और वह मेर्व लौट गया।

खुरासान में असफल होकर अत्‌सिज़ ने सिर-दरिया की ओर मुह फेरा। सिंजर को लडाइयो में फसे देखकर कराखानियो ने जन्द ले लिया था अरसलनखाग महमूद का पुत्र कमालुद्दीन वहा राज्य कर रहा था। अत्‌सिज़ ने कमालुद्दीन से समझौता करके यह तै किया, कि ११५२ के वसन्त में काफिर किपचको पर आक्रमण किया जाय। किपचको का केन्द्र सिग्नाक

(उत्तरार से २४ फर्पख, तुमैन आरिक डाक-चौकी मे सात मील उत्तर) था। अत्सिज इस शर्त के मुताविक अपनी सेना लेकर आया। उसे देखकर कमालुद्दीन डर के मारे राज्य छोड भाग गया और बहुत वचन देने पर वह अत्सिज के पास आया। अत्सिज को वचन की परवाह क्या थी, उसने उसे पकडकर जिन्दगी भर के लिये जेल में डाल दिया। सिग्नाक पर आक्रमण नही हो सका। कुछ कठिनाइयो के कारण उसने अपनी सेना दूसरी ओर भेजी और जन्द को विद्रोहियो ने फिर ले लिया। जून ११५२ (रवी I ५४७ हि०) को अत्सिज ने जन्द पर अभियान किया। वीच के रेगिस्तान को एक सप्ताह में पार कर ८ रवी I (१३ जून ११५२ ई०) को उसकी सेना सिर नदी के किनारे जन्द से २० फर्पख पर सागदरा पहुची। अगले दिन (शुक्रवार) को सेना शहर के दरवाजे पर थी। पता लगा, विद्रोही खान भाग गया। अत्सिजने उसका पीछा करने के लिये सेना भेजी। दूसरे विद्रोहियों ने अधीनता स्वीकार की और उन्हे क्षमा दान मिला। इस प्रकार विना खून-खरावी के जन्द फिर ख्वारेज्मशाह के हाथ में आ गया। अत्सिज ने अपने वडे पुत्र अबुल्फतह इल-अरसलान को जन्द का राज्यपाल नियुक्त किया। इसके वाद यह प्रथा चल पडी, ओर ख्वारेज्मशाह का ज्येष्ठ पुत्र जन्द का राज्यपाल वनाया जाता।

११५३ ई० के वसन्त में खुरासान का वातावरण अत्सिज को अनुकूल मालूम हुआ। गूजो (तुर्कमानो) ने दो बार सिंजर को हराया। सेनापति और सुल्तान ने राजधानी छोड दी और अगस्त या जुलाई के अन्त में गूजो ने मेर्व को लूटा। उसके कुछ ही समय वाद उन्होने सिंजर को वन्दी बना लिया और सितम्बर के अन्त या अक्तूबर में दुबारा मेर्व को लूटा। इसके वाद तीन साल तक सिंजर गूजो का वन्दी वना रहा। गूज उसे सारे दरवारी ठाटवाट के साथ अपने साथ लिये खुरासान के शहरो—मेर्व, नेशापोर आदि—को वुरी तौर से लूटते रहे। गूजो ने सुल्तान की इस अवस्था से फायदा उठाकर अपने को स्वतत्र घोपित करने का ख्याल नही किया, वल्कि वैध शासक के सरक्षक होने का दिखावा किया। सवसे पहिले आमूय (आमूल) के शासक को किला समर्पण करने के लिये कहा गया। जन्द की भाति यह भी अत्सिज के लिये एक महत्वपूर्ण स्थान था, क्योंकि यही होकर ख्वारेज्म का रास्ता वक्षु के किनारे-किनारे जाता था। अत्सिज ने जानते हुए भी विरोध न कर अपने राज्य में लौट काफिर किपचको के विरुद्ध सघर्प जारी किया। दिसम्बर ११५३ के अन्त से ११५४ के शरद-आरम्भ तक अत्सिज के भाई यनाल तगिन ने वैहक जिले को लूटा और वरवाद किया।

यद्यपि सिंजर गूजो का वन्दी था और उसकी अधिकाश सेना ने भी उनका साथ दिया था, किन्तु सल्जूकी सेना के एक भाग ने महमूद खान को अपना नेता बना गूजों का विरोध करना शुरू किया। महमूद ने अत्सिज के साथ समझौता करने के लिये वातचीत शुरू की। अत्सिज ने अपने दूसरे पुत्र किलिच खान को ख्वारेज्म में छोड ज्येष्ठ पुत्र इल्-अरसलन को ले सेना-सहित खुरासान की ओर प्रस्थान किया। शहरिस्तान (नसा) नगर मे पहुचकर अत्सिजन ने सुना, कि सिंजर अपने एक सेनापति की मदद से बन्दी खाने से भाग तेरमिज पहुच गया। ख्वारेज्मशाह (अत्सिज) नसा गया, जहा महमूद खान का दूत इज्जुद्दीन तुगराई उससे मिला। खान और अमीर लोग अत्सिज जैसे खतरनाक मित्र को निमन्त्रित करने के लिये पछताने लगे। अत्सिज की मागें इतनी कम थी, जिनकी वह आशा नही कर सकते थे। नसा से ही अत्सिज ने सुल्तान सिंजर को पत्र लिखा, जिसमें वन्दीखाने से निकल भागने में सफल होने के लिये उसे बधाई दी और

पूरी अधीनता स्वीकार करते अपने अधिराज से पूछा, कि हुक्म मिलने पर मैं सुल्तानी सेना मे शामिल होने के लिये तेरमिज आ सकता हू,ख्वारेज्म लौट सकता हू, या खुरासान में रह सकता हू। उसने अपने मित्रो—महमूदखान, सजिस्तान सालार और पर्वतीय गोर शासक के पास भी इसी अभिप्राय के पत्र लिखे। अभी वह शहरिस्तान (नसा) में ही था,कि सजिस्तान-सालार का दूत अत्सिज़ के पास आया। खुरासान के शहर मे अत्सिज़ और महमूद खान की बडी मित्रतापूर्ण मुलाकात हुई। फिर मई मे विसाकवाशी (गारद-अफसर) नैमुल्मुल्क लौही सिंजर का पत्र लेकर आया। महमूदके आ जाने तथा सजिस्तान और गोरके शासको की प्रतीक्षा करते अत्सिज़ ने गूज़-नेता तूती वेग को पत्र लिखने का हुक्म दिया। इस पत्र में उसने सिंजर के कैदी होनेके बारेमें एक भी शब्द नही लिखा था "कहा जाता है, जब गूज़-सेनायें खुरासान में आई और सरकारी अफसरोने मेव छोड दिया,तो सुल्तान सिंजरको भी चला जाना चाहिये था,क्योकि पृथ्वी की अंतिम छोर तक सारी भूमि को गूज़ सेना अपनी सपत्ति समझती थी। लेकिन सुल्तान प्रजापर दया करते अपनी राजसी मर्यादा और अपने को स्वेच्छापूवक समर्पण करते हुए उनके भीतर चला गया। गूज़ो ने सिंजर की उदार-हृदयता को नही समझ पाया और पवित्र दरबारी सन्मानों को नही माना, इसीलिये अधिराज को उनसे अलग होने के लिये मजबूर होना पडा। गूज़ क्या करते ? रोज़ाना एक नगर से दूसरे नगर को कूच करते रहना अब उनके लिये सभव नही था। उन्हें केवल खुरासान के नगरो पर ही अधिकार करने को कहा गया था। अधिराज (सुल्तान) स्वय उनके बीच में आ गया था। उनकी सारी सेना को बलख प्रदेश में एकताबद्ध किया जानेवाला था। विद्रोह के पहिले गूज़ो को बलख में रहने को जगह मिली थी। जब अधिराज स्वय शासन करने के लिये लौट आया,तो उसकी आज्ञा के बिना किसी को उसके राज्य में अधिकार जमाने का हक नही है। अब उनके लिये एक यही रास्ता है, कि सल्जूकी सरकार की अधीनता स्वीकार करें और अपने अपराध के लिये क्षमा-प्रार्थी हो। महमूद खान, और ख्वारेज्म, सजिस्तान तथा गोर के शासक उनकी ओर से अधिराज के सामने इस बात की सिफारिश करेंगे, कि वह उनके लिये एक युर्त (ओर्दू) और जीविका के साधन प्रदान करे।"

अत्सिज़ को कराखिताइयो के खतरे का अब होश आया था, इसलिये शायद वह दिल से चाहता था, कि इस्लामिक शक्ति को सगठित और मजबूत किया जाय, लेकिन यह काम नही हो सका। खबूसान में ही ३० जुलाई ११५६ ई० को लकवे से उसकी मृत्यु हो गई।* अत्सिज़ सल्जूकी सुल्तान का सामन्त रहते मरा। लेकिन, इसमें सदेह नही, वह ख्वारेज्म के प्रबल वश की नीव रखने वाला था। जन्द और मनकिश्लक पर अधिकार कर उसने उत्तर के पडोसी घुमन्तुओ को अपने अधीन किया, और भाडे की तुर्की सेना से अपना सैनिक बल बढा, एक स्वतत्र राज्यकी बुनियाद डाली। उसके उत्तराधिकारी ने इस शक्ति को और बढ़ाया, इसमें शक नही।

११५७ ई० सिंजर में मरा[1], लेकिन उसके पहिले ही वह अपने गौरवपूर्ण जीवन को खतम कर चुका था। अत्सिज़ की सहायता से उसे फायदा उठाने का मौका नही मिला, और सिंजर के बाद फिर सल्जूकी वश अपने खोये वैभव को प्राप्त नही कर सका। मध्यएसिया में अब करा-

---

[1] सिंजर का मकबरा मेर्व में है। आर्खि० पाम्या० तुर्कमेन०, पृ० २९

खिताइयो की विजय-दुंदुभी वज रही थी। ख्वारेज्मशाह की शक्ति भी वढ़ती जा रही थी। दक्षिण में गोरियो ने एक नई सल्तनत कायम की, जिस भारत को जीतने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। सिंजर के मरने के वाद भी सल्जूकी सुल्तान पश्चिमी एसिया को वाटकर अपना शासन करते रहे, जिनमें कुछ थे—
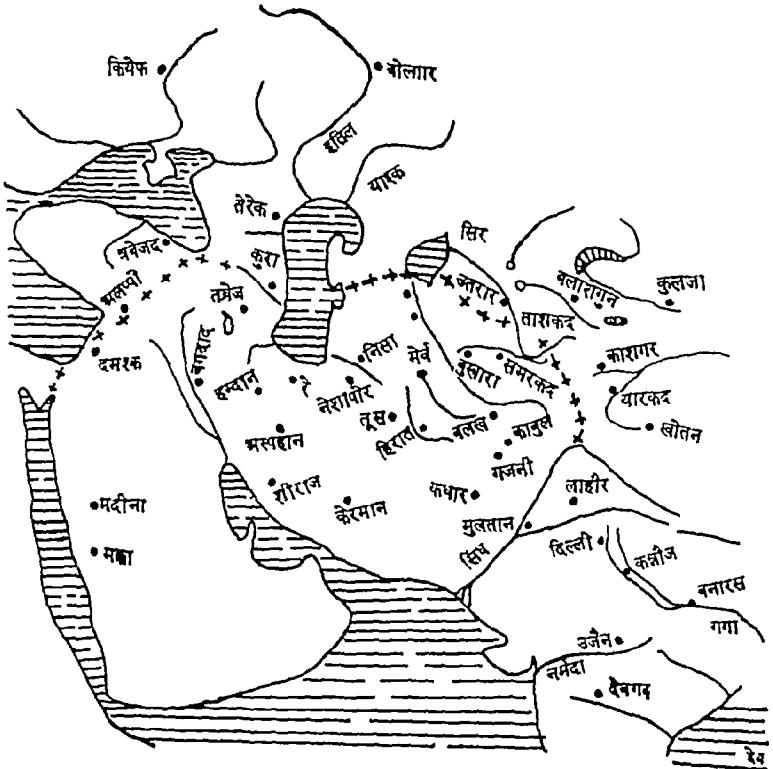
३१ सलजूकी साम्राज्य (११५० ई०)

(१)	किरमानी सल्जूक	१०४१-११८७	(४३३-५८३ हि०)
(२)	सिरियाके सल्जूक	१०९४-१११७	(४८७-५११ हि०)
(३)	इराक-कुरदिस्तान के सल्जूक	१११७-११९४	(५११-५९० हि०)
(४)	रूमी (क्षुद्रेसिया) सल्जूक	१०७७-१३००	(४७०-७०० हि०)

सिंजरके वाद अत्सिज-पुत्र इल-अरसल ख्वारेज्मशाह बिलकुल स्वतंत्र शासक था।

स्रोत-ग्रंथ

1 Turkistan Down to Mongol Invasion (W Bastold)
2 Heart of Asia (E D Ross)
३. सियासतनामा (निजामुल्मुल्क)
४ इस्कुस्स्त्वो स्रेद्नेइ आजिइ
५ प्राब्लेमा सेल्जुक्स्कओ इस्कुस्त्वो (इ० अ० ओर्बेली)
६ ओचेर्क इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्कओ नरोदा (व० व० वर्तोल्द।
७ आर्खितेक्तुर्नीयि पाम्यात्निकि तुर्कमेनिइ (मास्को १९३९)
8 Recueeil de Textes relatifs a l'hiostoire des seldjucides (Hotsma)
9 Travels in Central Asia (A Vambery, 1861)
10 Sketches of Central Asia (A. Vambery, 1868)
11 History of Bukhara (A Vambery, 1873)
१२ रज्वलिनी स्तारओ मेव (शुस्कोव्स्की, १८९४)

अध्याय ५

गोरी (११५६-१२०७ ई०)

§१ कराखिताई (११२४-१२१८ ई०)

कराखिताइयो के बारे में हम पहिले कह चुके है।[1] चतुर्थ कराखिताइ शासक गुरखान चे-लू-गू (११४३-११८२) के समय कराखिताई अन्तर्वेद मे थे। ख्वारेज्मशाह अतिसज़ पर जब सल्जूकियो का प्रहार हुआ, तो उसने अपनी मदद के लिये कराखिताई दरवार में गुहार की। हम यह भी बतला चुके है, कि महमूद खान और उसकी सेना के झगडे मे खान ने जब सिंजर से मदद मागी, तो करलुको ने गुरखान को वुलाया। ९ सितम्वर ११४१ ई० में सिंजर को कराखिताइयो ने करारी हार दी और वुखारा पर अपनी ओर से अल्पतगिन को शासक नियुक्त किया।

सिंजर को हराकर वक्षु को कराखिताइयो ने अपनी सीमा मानी। अतिसज़ ने कराखिताइयो की अधीनता स्वीकार की। उसके वाद करीव-करीव कराखिताई वश के पतन के समय (१२१८ ई०) तक सभी ख्वारेज्मशाह कराखिताइयो के करद रहे।

अत्सिज़ के उत्तराधिकारी इल-अरसलन ने चाहा कि कराखिताई जुए को उतार फेंके, लेकिन उसमें वह सफल नही हुआ। ख्वारेज्मशाहोको पहिले सल्जूकियो से और पीछे गोरियो से मुकाविला पडा, जिसमे वह कराखिताइयो की मदद लेने के लिये मजबूर हुये। इल अरसलन ने मरते वक्त अपने सबसे छोटे पुत्र सुल्तानशाह महमूद को राज्य दिया। इसे बडा पुत्र तेकिश कैसे मजूर कर सकता था। उसने कराखिताइयो से मदद ले भाई को हटाकर गद्दी सभाल ली। अपने पूर्वजों की तरह इसने भी काम निकल जाने पर कराखिताइयो को ११९२ (५८८ हि०) में धत्ता वताना चाहा। उसका भाई सुल्तान शाह महमूद उस समय गोरियो के यहा शरणागत था। वहा से भागकर कराखिताई रानीके पास पहुचकर उसने कहा—ख्वारेज्मके लोग मुझे तख्त पर देखना चाहते हैं। रानी ने इस मौके को अच्छा समझा। तेकिश के ऊपर जली भुनी थी ही, उसने अपने पति कर्मा को एक बडी सेना देकर महमूद के साथ कर दिया। तेकिश ने रोकने के लिये वक्षु की नहर को काटकर रास्ते के इलाके को जलमग्न करा दिया। कर्मा ने देखा, लडाई की जबर्दस्त तैयारी है और लोग तेकिश के पक्ष में है। वह फौज लेकर लौट गया। सुल्तान महमूद ने अपने अनुयायियो और कुछ कराखिताइयो की मदद से सरख्श पर अधिकार कर लिया। तेकिश ने भी देख लिया, कि कराखिताइयो के साथ दुश्मनी करने से मै फायदे में नही रह सकता,

---

[1] देखो जिल्द १, भाग ५, अध्याय २

इसलिये उसने फिर गुरखानी दरबार की अधीनता स्वीकार की और तब से मरने के समय (१२०० ई०) तक बराबर कर भेजता रहा। उसने अपने उत्तराधिकारी पुत्र मुहम्मद अलाउद्दीन को भी वैसा ही करने की शिक्षा दी, किन्तु वह उसे जल्दी ही भूल गया। मुहम्मद १२०८ ई० मे कराखिताई भूमि पर चढाई की, लेकिन बुरी तरह हारा। अगले साल की चढाई में उसे सफलता जरूर मिली, और उसने उतरार (फाराब) और तराज्ञ तक का इलाका ले लिया, लेकिन इसका कारण ख्वारेज्मशाह की बहादुरी नही, बल्कि चिगिस का पूव की सीमा पर हमला था, जिसने १२०७ में नैमन (तुर्क) के खान ता-यङ्क खान को हराकर मार डाला, और उसका पुत्र गुचलुक भागकर गुरखानी दरबार में चला आया।

गुचलुक को हराकर किस तरह चिंगिस ने कराखिताई साम्राज्य को ध्वस कर उत्तरापथ को अपने हाथ में लिया, इसके बारे में हम पहिले कह चुके हैं। कराखिताइ काल में अन्तर्वेद का शासन सीधे गुरखान की ओर से होता था, वह भिन्न-भिन्न स्थानो के लिये राज्यपाल नियुक्त करता था, किन्तु, ख्वारेज्म पर कराखिताई शासन ख्वारेज्मशाह की माफत होता था। कराखिताई बौद्ध धम के मानने वाले थे, और उनकी सस्कृति चीनी थी। यह भी हम बतला चुके हैं, कि बौद्ध होने पर भी यद्यपि ईसाइयो और दूसरो के साथ गुरखानो का बर्ताव बहुत उदारतापूण था, लेकिन मुसलमानो के साथ वह उतनी उदारता दिखलाने के लिये तैयार नही थे। इसका कारण भी था। मुसलमानो ने भी अपने तीन-चार शताब्दियों के शासन में दूसरे धमवालो के साथ घोर असहिष्णुता का परिचय दिया था।

§२ गोरी[1] (११५६-१२०७ ई०)

उद्गम—हिरात से पूर्व और दक्षिण की ओर तथा गर्जिस्तान और गूजगान के दक्षिण मे जो पहाडी प्रदेश है, उसे गोर (गूर) कहा जाता था। खुरासानी फारसी भाषा से यहा की भाषा में काफी अन्तर था। १० वी सदी तक गोर के पहाडी लोग प्राय सभी काफिर थे, यद्यपि प्रदेश चारो ओर मुसलमानो से घिर चुका था। काफिर का अर्थ है बौद्ध, जुर्थुस्ती अथवा हिन्दू होना। तुमान्स्की हस्तलेख के अज्ञात लेखक के कथनानुसार उसके समय में गोरशाह अपने को गूजान के फरीगूनियों का सामन्त मानते थे। बाद में किसी समय वहा के अधिकाश लोगो ने इस्लाम स्वीकार किया। पहिले पहल महमूद गजनवी के पुत्र मसऊद की सेना १०२० ई० में गोर के भीतर तक पहुची। मसऊद उस समय हिरात का राज्यपाल था। विजय प्राप्त करने के बाद गजनवियो ने गोर के पुराने शासक को अपने पद पर बना रहने दिया। सिंजरके अवसान के समय (११५६ ई०में) जब सल्जूकी साम्राज्य बिखरने लगा, तो ख्वारेज्मशाह की भाति गोर-शासक ने भी उससे फायदा उठाया। सिंजर जिस वक्त गूज्रा का बन्दी था, उस समय की घटनाओ में गोरो ने भी भाग लिया। इसके कुछ ही समय बाद गयासुद्दीन और शहाबुद्दीन दोनो भाई गोर के शासक तथा सेनापति के रूप में रगमच पर आये। उनका स्थापित किया हुआ विशाल शक्तिशाली राज्य यद्यपि अपनी जन्मभूमि में बहुत दिना तक नही टिक सका, किन्तु उसी ने भारत

[1] Turkistan (Bertold), Heart of Asia

में एक जबर्दस्त इस्लामिक शक्ति की नींव डाली, जो कई सदियों तक चलती रही और उसने भारत के जीवन के हरेक अंगपर अपनी अमिट छाप छोड़ी।

१ गयासुद्दीन मुहम्मदगोरी (-१२०३ ई०)

गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी स्वयं तख्त पर बैठा और सेनापति का पद उसके छोटे भाई शहाबुद्दीन मुहम्मद गोरी ने संभाला। पीछे वह गजनी का शासक भी बना, जब गोरियोंने उसे ११७३ (५६९ हि०) में जीत लिया। दोनों भाइयों के पिता का नाम साम और चचाका फखरुद्दीन मसऊद था। गोरी राज्य के बढनेपर मसऊदको बामियान, तुखारिस्तान, शुगनान तथा बालोर (चितराल) तक दूसरे पहाडी प्रदेशों के शासक का पद मिला। मसऊद के पुत्र शमशुद्दीन मुहम्मदने वक्षु पार हो शगनानियान को भी ले लिया। पूरबमें गोरियों का राज्य वख्श और चितराल तक पहुंचा। पश्चिममें हिरातको भी लेकर खुरासानमें पहुंच वह ख्वारेज्मशाहके प्रतिद्वन्द्वी बन गये। गोरियोंकी स्थिति ख्वारेज्मशाहसे बेहतर थी। जहां ख्वारेज्मशाहको भाडे की तुर्क घुमन्तू सेनाका ही बल था, वहां गोरियोंके पास केवल तुर्क गारद ही नहीं थे, बल्कि उन्हींकी तरहके लडाकू पहाडियोंकी बडी सेना भी सहायता के लिये मौजूद थी। इसके साथ ही गोरियोंको यह भी फायदा था, कि वह इस्लामके सुल्तान कहे जाते थे, जबकि कराखिताई काफिरों (बौद्धों) का सामन्त होनेके कारण ख्वारेज्मशाहको वह सन्मान नहीं था। थोडे दिनों के लिये गोरी राज्यवंशने मुसलिम एसियाके पूर्वी भाग का एक मात्र स्वतंत्र और सबल राजवंश कहलानेका सौभाग्य पाया। पश्चिमी एसियामें सल्जूकियोंके बँटे हुए राज्य निर्बल थे, इसलिये सारे इस्लामिक जगतकी आशा गोरियों पर लगी हुई थी। अन्तर्वेदके मुसलमान कराखिताइयोंके हाथमें थे, पर वह भी अपने दक्षिणके इन धर्मबन्धुओंकी ओर बडी आशा लगाये रहते थे। इस समय कराखिताई, ख्वारेज्मशाह और गोरी यही तीन मध्यएसियाकी बडी बडी शक्तियां थीं। कराखिताइयोंके अधीन रहते हुए भी ख्वारेज्मशाह गोरियोंको पछाडनेके लिये हर तरह की तदबीर कर रहा था, और अन्तमें वह इसमें सफल भी हुआ, यद्यपि उस सफलताका उपभोग चिंगिस खानने वहां पहुंचकर उन्हें नहीं लेने दिया। गोरियों और ख्वारेज्मशाह दोनोंके लिये अपनी जन्मभूमि संकटके समय बडी सुरक्षित जगह थी। ख्वारेज्म जहां रेगिस्तानोंसे घिरा होनेसे दुर्जेय था, वहां गोर हिन्दुकुशकी दुर्गम पहाडियोंके कारण दुर्धर्ष थी, पंजाबको दखलकर गजनवियों ने गोरियोंको रास्ता दिखला दिया था। तो भी उन्होंने तब तक हिन्दुस्तान पर कोई बडा कदम उठानेकी हिम्मत नहीं की, जब तक कि जन्मभूमिमें अपनेको मजबूत नहीं कर लिया।

गयासुद्दीनके चचा, अलाउद्दीनने महमूदके वंशजोंको गजनी से भगा दिया। शहाबुद्दीनने गजनी राज्य को लेने के बाद उच्चके राजा की रानी को अपनी तरफ मिलाकर भारत में पैर जमाने का मौका पाया, फिर मुलतान और सिंध को भी उसने जीत लिया। ११७८ ई० में गुजरात पर उसने चढ़ाई की, लेकिन वहां उसे हारना पडा। गुजरात की तरफ असफल हो शहाबुद्दीन ने पूर्व की ओर ध्यान दिया।

वह गजनवी खानदान से गजनी और पंजाब दोनों को ले चुका था। उस समय दिल्ली (चौहान) राज्य की सीमा पर सरहिन्द का किला था, जिसे शहाबुद्दीन ने पहिले लिया। इसके बाद पृथ्वीराज चौहान से तरावडी के मैदान में ११९१ ई० में लडाई हुई, जिसमें शहाबुद्दीन को घायल होने के सिवा कुछ हाथ नहीं आया। अगले साल शहाबुद्दीन फिर बड़ी सेना लेकर चढ़ा। अबकी

बार तरावडी के मैदान में हिन्दुओं की हार हुई। पृथ्वीराज शहाबुद्दीन का बन्दी बना और अन्त में मार डाला गया। चौहानों का मूल स्थान अजमेर था। शहाबुद्दीनने तरावडी की सफलता के बाद अजमेर की ओर बढ कर उसे ले लिया। दिल्ली मे अपने गुलाम कुतुबुद्दीन ऐवक को राज्यपाल बनाकर वह स्वय गजनी लौट गया। ११९४ ई० मे शहाबुद्दीन फिर एक बडी सेना लेकर आया। वह जानता था, कि भारत की सबसे बडी शक्ति दिल्ली नही कन्नौज है। जब तक जयचन्द को नही हराया जाता, तब तक वह हिन्दुस्तान का शासक नही बन सकता। जयचन्द दिल्ली की सीमा से मिथिला तक का राजा था। अपनी भारी सेना के साथ वह गोरी से लडने के लिये आगे बढा और चन्दौर मे लडते हुए मारा गया—हिन्दुस्तान मे मुसलमानो की शक्ति दृढ़ हो गई।
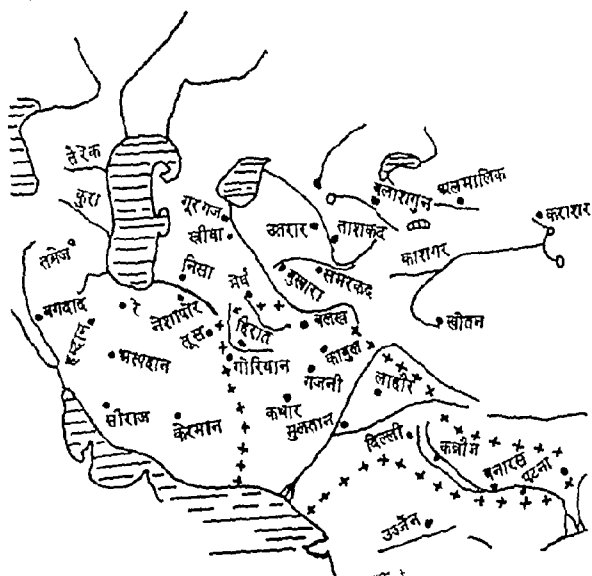
३२. गोरी साम्राज्य (१२०३ ई०)

लेकिन अपने जन्मदेशमें गोरियोंकी सफलता वैसी नही रही। एक ओर वह और उसके सेनापति हिन्दुस्तानके काफिरोको हरा, उनके मदिरो और विहारोको तोड रहे थे, दूसरी ओर उनके सबसे जबदस्त प्रतिद्वन्द्वी काफिर कराखिताई उसकी नाकमें दम किए हुए थे और जिनके ही कारण गोरी वशका उच्छेद हुआ।

कन्नौज-विजयके चार साल बाद ११९८ (५९४ हि०) में गयासुद्दीनके भाई-बन्धु मुहम्मदपुत्र मसऊद-पुत्र बहाउद्दीन साम ने कराखिताई सामन्त से बल्ख छीन लिया, तुर्क-राजाके मरनेसे उसे यह मौका मिल गया। बलखमें इसी समय गयासुद्दीनके नामका खुतबा भी शुरू हो गया। ख्वारेजमशाह तेकिश कराखिताइयोंका सामन्त ही नही था, बल्कि इस्लामके खलीफाके

साथ भी उसका अच्छा सबंध नही था। यद्यपि बगदादी खलीफा अब नाममात्रके खलीफा थे, लेकिन मुसलिम जगतके पोप होनेके कारण अब भी उनका काफी सम्मान था। खलीफाकी इच्छानुसार गयासुद्दीनने तेकिशके विरुद्ध खुरासानपर चढाई की। तेकिशने कराखिताइयोंसे मदद मागी। जमादी 11 (अप्रैल ११९८ ई०) में तायनकूके अधीन कराखिताई सेनाने वक्षु पार हो गूजगान और दूसरे पडोसी इलाकोको उजाडा। उन्होने सामसे माग की, कि बल्खको छोड दो, नही तो कर देना स्वीकार करो। गोरियोने कोई उत्तर नही दिया, किन्तु साथ ही गयासुद्दीन अपने शत्रुओपर आक्रमण नही करना चाहता था, क्योंकि गोर सेनापति शहाबुद्दीन उस समय हिन्दुस्तान गया था। गयासुद्दीन स्वय गठियाकी बीमारीमे पडा हुआ था और कधेकी सवारीपर ही चल सकता था। रातके वक्त तीन गोर सेनापतियोने कराखिताइयोकी छावनी पर आक्रमण किया। कराखिताइयोमे रवाज था, वह रातको तबू नही छोडते थे और न सतरी रखते थे। दूसरे दिन जब कराखिताईयोको मालूम हुआ कि, गयासुद्दीन अपनी सेनाके साथ नही है, तो उन्होने फिर लडाई जारी की। कराखिताइयोकी हार हुई, भागते वक्त उनमेसे काफी वक्षुमें डूब गये। गोरी वशके ऊपरका पहिला भयकर सकट दूर हुआ और इस सफलताके बाद उसकी हिम्मत भी बढ गयी। तेकिशके बाद मुहम्मद ११९७ ई० में ख्वारेज्मकी गद्दीपर बैठा, जिसकी घोषणा ३ अगस्त १२०० ई० को हुई। मुहम्मद गद्दीपर तो बैठा, लेकिन मलिकशाहके पुत्र हिन्दूखानने उत्तराधिकारके लिये झगडा शुरू कर दिया। गोरियोने हिन्दूखानका समर्थन किया और खुरासानके कितने ही शहरोको ले लिया। गोरियोके बर्तावसे खुरासानी सतुष्ट नही थे। इसी बीचमें गयासुद्दीन मर गया और मुहम्मदशाहकी जानमें जान आई।

२ शहाबुद्दीन (१२०३-१२०६ ई०)

१२०३ ई०में शहाबुद्दीन हिन्दुस्तानसे लौटा और ख्वारेज्मशाहकीगुस्ताखियोंके लिये सीधे उसके ऊपर चढ़ दौडा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जब यह बात सुनी, तो मेर्व छोड ख्वारेज्मको लौट गया और नहरका पानी तुडवाकर भूमिको जलमग्न करा दिया, जिससे शहाबुद्दीनको ४५ दिन देर करने के बाद आगे बढनेका मौका मिला। करासूके पास लडाई हुई, जिसमें मुहम्मदकी हार हुई। शहाबुद्दीनने आगे बढकर गूरगजको घेर लिया। गोरियोकी क्रूरताकी इतनी दु ख्याति थी, कि नगरका एक-एक आदमी रक्षाके लिये उठ खडा हुआ। ६ मास तक शहाबुद्दीन खीवगीने हदीसोका प्रमाण दे-देकर देशके लिये लोगोको लडनेके लिये उत्तेजित किया और कहा—"अपने प्राण और सपत्तिके लिये मरनेवाला शहीद है।" इतिहासकार औफी इस वक्त गूरगजमें मौजूद था। उसके कथनानुसार नागरिकोको हथियारबन्द करना एक सैनिक चाल थी। राजमाता तुर्कान खातूनने ऐसा करके रोक-थाम की और उधर पुत्रके पास खुरासानमें खबर भेजी। इतना हथियार भी कहा से आता? सैनिकोंके लिये कागजके शिरस्त्राण बनवाये गये थे। यद्यपि सेनाकी भी हालत कुछ ऐसी ही थी, लेकिन भारी सेनाको देखकर शहाबुद्दीनको हिचकिचाहट हुई। सप्ताह के भीतर ही मुहम्मद ख्वारेज्मशाह केवल सौ सवारोंके साथ राजधानीमें पहुचा। धीरे-धीरे चारो ओरसे सेनायें आकर जमा हुई और राजधानीको शहाबुद्दीनके हाथमें जाने नही दिया गया। इतिहासकार जुवैनीके अनुसार उस समय ख्वारेज्मी सेना की सख्या

७० हजार थी। कराखिताइयोंसे भी मदद मागी गयी थी। गोरियोंका शिविर वक्षुके पूरवकी ओर था। शहाबुद्दीनने अगले दिन नगरपर आक्रमण करनेके लिये घाट ढूढनेका हुक्म दिया। इसी समय सेनापति तायनकू तराज और उस्मान (समरकन्द-सुल्तान) के नेतृत्वमें भारी कराखिताई सेना आ पहुची। शहाबुद्दीनको विजयकी आशा नही रह गयी और वह जल्दी जल्दी पीछेकी ओर भागा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने उसका पीछा किया और हजारास्पमें पहुचते पहुचते गोरीको बुरी तरह हराया। ख्वारेज्मी विजयोत्सव मनानेके लिये गूरगज लौट आये, लेकिन कराखिताई सेनाने गोरीका पीछा नही छोडा। अन्दखुदमें गोरी घिर गया। सितम्बरके अन्त या अक्तूबरके आरम्भ (१२०३) में दो सप्ताह तक लडाई होती रही। भारत-विजेता शहाबुद्दीन गोरी काफिरो (बौद्धों) के हाथसे बुरी तरह हारा और उसने भागकर अन्दखुदके किलेमें शरण ली। रूसी इतिहासकारने लिखा है "उसकी अवस्था वही थी, जो कि सेदांमें नेपोलियनकी। यदि उसके भाग्यमें भी वही बदा नही निकला, तो वह समरकन्दके उस्मानकी कृपा थी, जो कि मुसलमान होनेके कारण नही चाहता था, कि इस्लामका सुल्तान काफिरोंके हाथमे वन्दी बने।" उस्मानने गुरखानसे सुलहकी बातचीत करनेकी आज्ञा मागी, और समझौता करा दिया। कराखिताइयोने गोरीको अपने देशमें लौट जाने दिया और केवल वैयक्तिक स्वतत्रताका मूल्य वसूल किया। शहाबुद्दीन जब मैदान छोडकर किले की ओर भागा जा रहा था, उस समय किलेके भीतर ले जाना सभव न देखकर उसने अपने हाथसे चार हाथियोंको मार डाला, दो को कराखिताइयोने पकड लिया, एक और बचा था, जिसे कि उसने मुक्ति पानेके समय दे दिया। शहाबुद्दीनका अर्थ है (धर्मका तारा)। अन्दखूदमे वह धर्मका तारा डूब गया। शहाब|बडा दीन-हीन होकर गजनी लौटा। राजधानीमे उसके मरनेकी खबरसे अशान्ति मची हुई थी। उसने वहा पहुचकर व्यवस्था कायम की, और मुहम्मद ख्वारेज्मशाहसे नाक रगड कर सधि की। हिरात छोड सारा खुरासान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके हाथमें चला गया।

१२०५ ई० के वसन्तमें बलखके राज्यपाल ताजुद्दीन जगी (फखरुद्दीन मसऊदके पुत्र) ने ख्वारेज्मशाहके प्रदेश पर विना अपने सुल्तान (शहाबुद्दीन गोरी) के हुकमके यकायक आक्रमण कर दिया। गोरियोने मेवरूदको लूट लिया, लेकिन सरख्शम ख्वारेजिमयोने उन्ह बुरी तरहसे हराया। जगी अपने दस सेनापतियोंके साथ बन्दी बना, और ख्वारेज्म में उन्हे कत्ल कर दिया गया। जो दिल्ली, कन्नौज और काशी तकपर इस्लामकी ध्वजा गाड चुका था, कैसे हो सकता था, कि वह शहाबुद्दीन अपने अन्तर्वेदके भाइयोको काफिरो (बौद्धो) की गुलामी से छुडानेकी नहीं सोचता। आखिर वह इस्लामका सुल्तान था। खलीफा नासिरने अपने पत्रमे सलाह दी थी, कि ख्वारेज्म शाहको पहिले खतम करो और इसके लिये कराखिताइयोंके साथ मेल करो। खलीफाका भेजा हुआ वह पत्र गजनी में ख्वारेजिमयोको मिला, जब कि उन्होने कुछ ही साल बाद उस पर अधिकार किया। लेकिन शहाबुद्दीन कुछ नही कर सका। हिन्दुस्तानम भी शहाबुद्दीनको सुल्तानके तौरपर उतना नही जाना जाता, जितना कि उसके द्वारा नियुक्त शासक कुतुबुद्दीन ऐबकको। १२०५ ई० की गरमियोंमें शहाबुद्दीनके हुकमसे बलख गवर्नर इमादुद्दीन उमरने कराखिताइयोंके मजबूत किले तेरमिजपर आक्रमण किया। उस समय इमादुद्दीनका प्रसिद्ध पुत्र बहरामशाह तेरमिजका राज्यपाल था। इसी समय हिन्दुस्तानम बगावत (विद्रोह) हो जानेकी खबर आयी, जिसके कारण इमादुद्दीन और आगे नहीं बढ सका। जुवैनीके

अनुसार वह हिंदुस्तान पर अभियानके लिये हुक्म देते कहा गया था, कि सेना और खजाना की व्यवस्था ठीक करके ही कराखिताइयो की ओर बढनेका विचार करो। १२०६ ई० के वसन्तमें शहाबुद्दीन गजनी लौटा और कराखिताइयोंके ऊपर अन्तर्वेदमें अभियान करनेकी तैयारी करने लगा। बामियानके शासक बहाउद्दीनको उसने वक्षुपर पुल बाधनेका हुक्म दिया। सुल्तानके हुक्मसे वक्षुके ऊपर एक गढ बनाया गया, जिसका आधा भाग दरियामे था। यह सारी तैयारी हो रही थी, इसी समय १३ माच १२०६ ई० को शहाबुद्दीन गोरी एक हिन्दूके हाथों मारा गया।

३ गयासुद्दीन II महमूद (१२०६-०७ ई०)

शहाबुद्दीनके मरनेके बाद उसका भतीजा तथा गयासुद्दीनका पुत्र महमूद गद्दीपर बैठा। उसमें बाप या चचाकी योग्यता नही थी। उसके विरुद्ध तुर्क गुलामो (गुलाम गारद) के नेताओने विद्रोह करके गजनी पर अधिकार कर लिया। उनमेंसे एक कुतुबु-द्दीन ऐबकका हिन्दुस्तानपर अधिकार पहिले ही से था। ख्वारेज्मशाहको भी अच्छा मौका हाथ लगा और "कराखिताइयोंके हाथमे बलख प्रदेश चला जायगा", यह बहाना करके उसने बलखको लेना चाहा, लेकिन वहाके गोरी राज्यपाल इमामुद्दीन उमरने ४० दिन तक आत्म-समर्पण नही किया और (१२०६ ई०) नवम्बरके अन्तिम दिनों में अपने साथ बलखको भी दे दिया। उसे बन्दी बनाकर ख्वारेज्म भेजा गया। तेरमिजके गवनरने भी कोई आशा नही देखी, तो अपने पिताकी सम्मतिसे कराखिताई राज्यपाल उस्मान (समरकन्द) के हाथमे उसे सौंप दिया। दिसम्बरमें ख्वारेज्मशाहने हिरातमें बडे विजयोत्सवके साथ प्रवेश किया। गयासुद्दीन महमूदको उसने गोरियोंके पैतृक देश गोरका शासक बनाकर रख दिया, जिसने अपनेको ख्वारेज्मशाहको अधीनस्थ मान खुतबा और सिक्का उसीके नामसे जारी किया। गोरी की शक्तिको पूरी तौरसे ध्वस्त करके अपने राज्यकी सीमाको हिन्दूकुश तक पहुचाकर मुहम्मद ख्वारेज्मशाह जनवरी १२०७ ई० में अपनी राजधानी को लौटा।

गोरियोका उत्थान जितना जल्दी हुआ था, उसी तरह दो पीढी के भीतर ही उनका पतन हुआ। अब मध्यएसियामें कराखिताई और उसके सामन्त ख्वारेज्मशाहकी शक्ति बच रही थी।

स्रोत-ग्रंथ

1 Turkistan Down to Mongol Invasion (W W Bartold)
2 Heart of Asia,
3 History of Bokhara (A. Vambery)

अध्याय ६

ख्वारेज़्मी (१०७७-१२३१ ई०)

§१ प्रवेशक

दसवी शताब्दी म मामू-वशी ख्वारेज्मशाहो का वर्णन हम कर चुके है।[1] इन्होंने सामानियो की निबलता से फायदा उठाकर शक्ति-सचय किया। पीछे इनका अपने सबधी महमूद गजनवी से झगडा हो गया, जिससे इस वश का उच्छेद हुआ। मामून I अबुलहसन अली, और अबुल् अब्बास मामून II (—१०१७) इस वश के शासक थे।

अपने बहनोई मामून II के मारे जाने के बाद महमूद गजनवी ने अपने एक गुलाम अलतून ताश को १०१७ ई० में ख्वारेज्मशाह बनाया। उसके बाद हारून (१०३४-१०३५) ने शासन किया, जिससे झगडा हो जाने पर मसऊद गजनवी ने अपने पुत्र सईद को वहा बैठाना चाहा, लेकिन उसमे सफलता नही हुई। इस वश का अन्तिम ख्वारेज्मशाह इस्माईल था, जिसे भाग कर सल्जूकियो के यहा शरण लेनी पडी। सल्जूकियो ने तीसरे ख्वारेज्मशाह वश की स्थापना की। यही इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण ख्वारेज्म वश है, जिसके उच्छेद का श्रेय चिंगिस खान को है।

ख्वारेज्मी शाह—		भारत में (गहडवार)	
१ अनोश तगिन	१०७७-९७	चद्रदेव	१०८०-११००
२ कुतुबुद्दीन मुहम्मद तत्पुत्र	१०९७-११२७	मदन	११००-१८
३ अतसिज तत्पुत्र	११२७-५६	गोविंद	१११८-५५
४ इ अल्सलन तत्पुत्र	११५६-७२	विजय	११५५-७०
५ महमूद सुल्तान तत्पुत्र	११७२-	जयचद्र	११७०-९३
६ तकाश अरसलनपुत्र	११७२-१२००	गोरी	११९३-१२०६
		(गुलाम)	
७ अलाउद्दीन मुहम्मद तत्पुत्र	१२००-२०	कुतुबुद्दीन	१२०६-१०
८ जलालुद्दीन तत्पुत्र	१२२०-३१	अल्तमश	१२११-३६

§२ सुलतान

१ अनोश तगिन (१०७७-१०९७ ई०)

मलिक शाह सल्जूकी (१०७३-१०९२ ई०) ने अपने तश्तदार बिलगतगिन को ख्वारेज्म

---

[1] देखो पीछे ७१३

का राज्यपाल नियुक्त किया था, जिसके मरने के बाद उसका क्रीतदास अनोशतगिन ख्वारेज्म का राज्यपाल बना। यह अपने स्वामी सल्जूकी सुल्तान का सदा भक्त रहा। अनोशतगिन को सल्जूकी अमीर बिलगतगिन (बिलगाबेग) ने गरजिस्तान के एक आदमी से खरीदा था। बिलगातगिन द्वारा वह मलिकशाह के दरबार मे पहुचा, जहा अपनी योग्यता के कारण बहुत तरक्की करते तास्तदार के पदपर प्रतिष्ठित हुआ। इस विभाग के खर्च के लिये ख्वारेज्म प्रदेश का कर लगा हुआ था। जब वह प्रदेश का शासक नही बना था, उसी समय उसके पुत्र कुतुबुद्दीन मुहम्मद की शिक्षा-दीक्षा मेव मे हो रही थी। १०९७ ई० मे जब ख्वारेजमशाह बल्गतगिन किंचो कुचकुर-पुत्र विद्रोही अमीरो द्वारा मारा गया, तो विद्रोह के दमन के लिये सुल्तान बर्कियारुक ने अमीरदाद अब्बासी अल्तूनताश-पुत्र को खुरासान का राज्यपाल नियुक्त किया, जिसने ख्वारेज्म का शासन अनोशतगिन के पुत्र मुहम्मद के हाथ मे दे दिया।

२. कुतुबुद्दीन मुहम्मद (१०९७-११२७ ई०)

अनोशतगिन ने अपने पुत्र कुतुबुद्दीन को बहुत अच्छी तरहसे शिक्षा दी थी। सल्जूकी वशमे शिक्षाका कितना महत्त्व था, यह इसी से मालूम होगा कि प्रतापी सुल्तान सिंजर बिलकुल अनपढ था। शायद घुमन्तुओ को अपने खून के साथ यह भाव भी मिलता था, कि पढ़ने-लिखने से आदमी डरपोक हो जाता है। कुतुबुद्दीन मुहम्मद को पिताने आजन्म सल्जूकियो का नमकहलाल दास रहने की शिक्षा दी थी,लेकिन कुतुबुद्दीन ने गद्दी पर बैठते ही ख्वारेजमशाह की उपाधि धारण की। इसीके समय से अन्तर्वेद पर कराखिताइयो के आक्रमण शुरू हुये। कुतुबुद्दीन को उनसे बुरी तरह हार कर कराखिताइयोको वार्षिक कर देनेके लिये मजबूर होना पडा। ११२७ (५२१ हि०) में इस हार के थोडे ही दिनो बाद कुतुबुद्दीन मर गया और उसका पुत्र अतसिज गद्दीपर बैठा।

३. अत्सिज[1] (११२७-११५६ ई०)

अत्सिज कई साल तक सिंजर का तश्तदार बन मेर्व में रहा था। सिंजर पर उसका अत्यधिक प्रभाव था, जिससे दरबारी जलने लगे थे। इस पर वह सिंजर से आज्ञा लेकर ख्वारेज्म चला गया। ख्वारेज्म पहुचते ही उसने स्वामी के प्रति विद्रोह कर दिया। सिंजर ने हमला किया जिसमे अत्सिज का पुत्र इल-किलिच मरा, अत्सिज ने सिर नवाया किन्तु सिंजर ने नाराज होकर अपने भतीजे सुलेमान शाह को ख्वारेज्म का राज्यपाल नियुक्त किया। अत्सिज ने सिंजर के लौटते ही उसके भतीजे को मार भगाया। अब सारा ख्वारेज्म अत्सिज के हाथ में था। ११४१ (५३६ हि०) मे सिंजर का जोर देखकर अत्सिज ने अपनी सहायता के लिये कराखिताइयो को बुलाया।

ख्वारेज्मशाह का वशस्थापक वस्तुत अत्सिज था। उसके दोनो पूर्वाधिकारी सल्जूकियों के इतने विनम्र सेवक थे, कि वह चूँ भी नही कर सकते थे। आरभिक वर्षों मे अत्सिज भी सिंजर के प्रति बहुत भक्ति रखता था। अन्तर्वेद में सिंजर ने जितने अभियान किये, उनमें अत्सिज भी साथ रहा। अत्सिज ने उत्तर की ओर अपनी राजसीमा को बढ़ाने का प्रयत्न किया और वहा के अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान जन्द (सिरदरिया) और मनकिशलक प्रायद्वीप पर कब्जा

[1] Turkistan Heart of Asia

कर लिया। सिर-दरिया और अराल समुद्र के उत्तर की ओर अभी घुमन्तुओं का अखड देश था, जहा पर किपचक पशुपाल रहा करते थे। अब भी वह इस्लाम से अछूते थे, जिसका यह अर्थ नही, कि उनके सरदारो में धर्म और सस्कृति का नितान्त अभाव था। अत्सिज को इनके ऊपर आक्रमण करते जहाद के कर्तव्यपालन करने का भी मौका था। वह किपचक भूमि के बहुत भीतर तक बढता चला गया, और काफिरो के सबसे प्रतापी खानो और सरदारो को जीतने में सफल हुआ। इस सफलता के थोडे ही समय बाद उसने सिंजर से विद्रोह किया। पहिले कह चुके है, कि गजनी के अभियान में लोगो ने अत्सिज के विरुद्ध सिंजर का कान भरा था, जिसके कारण उसने रुखाई दिखाई थी, जिससे असित्ज का भी मन बिगड गया। सिंजर ने ११३८ के पतझड में यह बहाना करके ख्वारेज्म पर आक्रमण किया कि अत्सिज ने बिना मेरी आज्ञा के जद और मगकिशलक पर आक्रमण करके वहा ऐसे मुसलमानो का खून बहाया, जोकि उत्तर के काफिरो से हमारे साम्राज्य के लिये ढाल का काम देते थे। सितम्बर ११३८ ई० मे सुल्तान बलख से भारी सेना लेकर ख्वारेज्म की ओर चला। अतसिज ने हजारास्प के पास मजबूत किलाबन्दी की थी, लेकिन तो भी सिंजर से १५ नवम्बर को उसे हारना पडा। बन्दियो में अत्सिजका पुत्र भी था, जिसके सिर को कटवाकर आतक फैलाने के लिये सिंजर ने अन्तर्वेद में भेज दिया। अत्सिज भाग गया। सिंजर अपने भतीजे सुलेमान मुहम्मद-पुत्र को राज्यपाल बना १० फरवरी ११३९ को मेर्व लौटा। अत्सिज ने ख्वारेज्म लौटकर सुलेमान को भगा दिया। यही नही ११३९ (५३४ हि०) में उस ने बुखारा पर भी आक्रमण किया और वहा के राज्यपाल यगी अली-पुत्र को पकडकर कत्ल करवाया। अब अत्सिज सिंजर के पास अधीनता स्वीकार करने के लिये निवेदन किया और मई ११४१ के अन्त में राजभक्ति की शपथ लेते देर नही हुई कि वह उसे तोडने के लिये भी तैयार हो गया।

अन्तर्वेद में अब भी करखानियो का राज्य था, यद्यपि उत्तरापथ के राज्य कराखिताईको को उनसे ले चुके थे। यह कह चुके है, कि कराखानी महमूद खान और उसके सैनिको के झगडे में उनके बिचवई बनने की बात को सिंजर ने बडे अपमानजनक शब्दो में ठुकरा दिया था, जिसके कारण कराखिताइयो ने अन्तर्वेद पर आक्रमण किया और ९ सितम्बर (११४१) को कतवान की मरुभूमि में सिंजर को बुरी तरह हराया। उसी साल बुखारा पर भी उनका अधिकार हो गया और उन्होने अपनी ओर से अल्पतगिन को बुखारा का शासक नियुक्त किया। यह भी कह चुके है, कि इस वक्त अत्सिज ने कराखिताइयो को नही बुलाया था, यद्यपि प्रचार यही किया गया था, कि ख्वारेज्मशाह ने इस्लाम के सुल्तान (सिंजर) के विरुद्ध काफिरो (कराखिताइयो) को बुलाया। कतवान की हार के बाद सिंजर फिर अपने पुराने गौरव को प्राप्त नही कर सका। जहा तक अत्सिज का सबध था, उसके मुकाबलेमें वह अपनेको अधिक शक्तिशाली समझता था। कतवान की हार के बाद अत्सिज ने भी सिंजरसे बदला लिया। वह खुरासान मे घुसा और २१ मई (११४१) को नेशापोरमें अपने नामका खुतबा पढवाया। सिंजर फिर सभल गया और ११४३ (५३८ हि०) में उसने ख्वारेज्म पर चढाई की। अत्सिज अधीनता स्वीकार करने के लिये मजबूर हुआ। इसी समय मार्च ११४४ ई० म गूजो ने बुखारा को लूटा और उसके किले को ध्वस्त कर दिया। अत्सिज की बदनीयती का सिंजर को पता लग गया और नवम्बर ११४७ में उस ने तीसरी बार ख्वारेज्म पर आक्रमण किया, जिसमे फकीर आहूपोश ने बीचमें पडकर दोनोमे समझौता करवाया,

तो भी अतिसज ने सिंजर से मुलाकात के समय कैसी धृष्टता का परिचय दिया, इसे हम बतला आये हैं। लेकिन उसके कारण सिंजर ने फिर लड़ाई नहीं छेड़ी। सिंजर के साथ फसे होने के समय जन्द और मनकिशल्क को अतिसज खो चुका था। कराखानी कमालुद्दीन को अतिसज के साथ समझौता करने के लिये मजबूर होना पड़ा, फिर वह अतिसज का आजन्म बन्दी बना।

जून ११५१ (रबी ५४७ हि०) में अतिसज ने ख्वारेज्म से जाकर जन्द के विद्रोहियों पर आक्रमण किया। बीचके रेगिस्तानको एक सप्ताहमें पारकर ८ रबी ५४७ हि० (२५ जून ११५१ ई०) को उसकी सेना सिर-दरियाके किनारे पहुंची। ९ को वह जन्द के दरवाजे पर थी। अन्त मे विद्रोही भाग गये या क्षमाप्रार्थी हुये और बिना खून-खराबीके जन्द पर फिर अतिसज का अधिकार हो गया। अपने जेठ पुत्र इल अरसलन को राज्यपाल बनाकर उसने यह परिपाटी चला दी, कि जन्द का राज्यपाल सदा ख्वारेज्मशाह का युवराज हुआ करेगा। ११५३ के वसन्तसे सिंजर का सितारा बड़ी तेजी से डूबने लगा, जबकि गूजो ने दो बार सिंजर को हराया, मेर्व को लूटा और अन्तमें सिंजर को बन्दी बनाकर वह सारे खुरासानमे लूट-मार मचाते रहे। अतिसज के लिये यह सुनहला मौका था। उसने पहिले अपनी शक्ति मजबूत की, फिर वह सिंजर का पक्ष लेकर गूजो पर पड़ा। तब तक सिंजर बन्दीखाने से भाग चुका था। असित्ज ने कराखिताइयो की शक्ति को बढ़ते देखा था। वह समझता था, अगर मैंने सावधानी से काम नहीं लिया, तो सदियो का बना इस्लामिस्तान सल्जूकी-वश के उच्छेद के बाद ही काफिरिस्तान बन जायेगा। लेकिन अतिसज अपने मसूबो को पूरा नहीं कर सका था, कि खबूसान मे ३० जुलाई ११५६ ई० को लकवे से उसकी मृत्यु हो गयी। यद्यपि अतिसज ने सल्जूकियो के सामन्त के तौरपर ही प्राण छोड़ा था, लेकिन अब वस्तुत सल्जूकी नहीं बल्कि ख्वारेज्मशाह इस्लाम का सुल्तान बनने वाला था, यह काम अतिसज के पोतो और परपोतो ने किया।

४. इल्-अरसलन अतुसिज-पुत्र (११५६-११७२ ई०)

इल्-अरसलन को राजगद्दी शान्ति से नहीं मिली। इसके लिये उसे अपने कितने ही चचो को मारना पड़ा, भाई को अन्धा करना पड़ा, सुलेमान को कैद में डालना पड़ा तथा उसके अताबेग (अध्यापक-सचिव) ओगुलबेग को मरवाना पड़ा। २२ अगस्त ११५७ को वह गद्दी पर बैठा। शासन की बागडोर हाथमें लेते ही उसने सैनिको की तनख्वाहें और अफसरो की जागीरें बढ़ा दी। उसी साल रमजान (अक्टूबर-नवम्बर) में मेर्वमें पहुचकर सिंजर ने अरसलन को गद्दी पाने की सनद भेजी थी। ११५७ के वसन्त में सिंजर ७५ साल की उमरमें मर गया, उसके साथ ऐसिया की सबसे बड़ी सल्तनत का अन्त हो गया। सिंजर का उत्तराधिकारी महमूद खान इल्-अरसलन का मित्र (मुखलिस) मात्र था, जबकि अत्सिज अपने को सिंजर का "बन्दा" (दास) लिखा करता था। सल्जूकी खानदान का मुखिया अब इराक का शासक गयासुद्दीन मुहम्मद महमूद-पुत्र (११५३-११५९) था, जो कि मलिकशाह का प्रपौत्र था। वह चाहता था कि पूर्व की सीमा बढ़ाकर सल्जूकी साम्राज्य को फिर से स्थापित करे। लेकिन अब्बासी खलीफा के साथ उसका झगड़ा भी चल रहा था। इल्अरसलन ने बीच में पड़कर खलीफा मुकतफी (११३६-११६०) के वजीर को पत्र लिखकर कहा—"सुल्तान महमूद खुरासान को डाकुओ से और अन्तर्वेद को काफिरो (कराखिताइयो) की दासता से बचा सकता है।" लेकिन इसका कोई

फल नही निकला। आपसी झगडे इतने बढ चुके थे कि सिंजर का रहासहा राज्य भी केरमानी, शामी (सीरिया), इराकी और रूमी (क्षुद्रेसिया) के सल्जूकी शासको मे बट गया और इल अरसलन ख्वारेज्मशाह ही अब एसिया में सबसे शक्तिशाली मुसलमान सुल्तान रह गया।

अन्तर्वेद म कराखिताइयो का शासन अभी सुदृढ नही हो सका था। वह सीधे शासन न करके कराखानी राजकुमारो को अपनी ओर से शासक नियुक्त करते थे। कतवान के युद्ध के अनन्तर अरसलन खान महमूद का पुत्र इब्राहीम समरकन्द का शासक बनाया गया था। करलुको ने जनवरी-फरवरी ११५६ (५५० हि०) मे मारकर उसकी लाश को बुखारा के पास कल्लाबाद की मरुभूमि मे फेक दिया। उसके बाद हसन तगिन का पुत्र जलालद्दीन अली समरकन्द की गद्दी पर बैठा। उसने करलुको के नेता पेगू खान को मार डाला और उसके पुत्र तथा दूसरे करलुक-नेताओ—जिनमें लाचिन बेग भी था—पर बहुत अत्याचार किये। करलुक सरदार भागकर इल-अरसलन ख्वारेज्मशाह के पास पहुचे। इल्-अरसलन उनका पक्ष करते जुलाई ११५८ ई० मे सेना ले अन्तर्वेद पहुचा। समरकन्द के खान ने कराकुल और जन्द के घुमन्तू तुर्कमानो से मदद मागी और कराखिताइयो के पास भी गुहार की। कराखिताई गुरखान ने इलक तुर्कमान के सेनापतित्व में १० हजार सेना भेजी। ख्वारेज्मशाह ने बुखारा के लोगो को दिलासा देकर अपने पक्ष में किया, फिर आगे बढकर रबिन्जान शहर को ध्वस्त किया। जरपशा के किनारे दोनो सेनायें आमने सामने हुई। ख्वारेज्मी सेना सख्या में अधिक थी, इसलिये इलक-तुर्कमान ने आगे बढ़ने में आगा-पीछा किया। समरकन्द के इमाम और मुल्ला बीच में पड़े, जिसमे लड़ाई नही हुई। इल्-अरसलन करलुक अमीरो को प्रतिष्ठा-पूर्वक उनके पदो पर बैठाकर ख्वारेज्म लौट गया।

११६४ (५५९ हि०) में गुरखान ने समरकन्द के खान को लिखा, कि करलुको को मजबूर कर बुखारा और समरकन्द से काशगर भेज दो, यहा उन्हें बेहथियार करके खेती या दूसरे कामो मे लगा दिया जायेगा। खान ने गुरखान के आज्ञापत्र को करलुको को दिखला कर काशगर भेजने के लिए जोर दिया। करलुक विद्रोही बन गये और उनकी सयुक्त सेना बुखारा पर चढ़ दौडी। बुखारा का रईस (सद्र) मुहम्मद था, जिसका पिता उमर ११४१ में शहीद हो चुका था। उसने खान के पास प्रार्थना की, कि बुखारा को बचाने के लिये जल्दी सेना भेजो। साथ ही उसने करलुको के पास दूत भेजकर कहलवाया, कि काफिर कराखिताई किसी प्रदेश को दखल करने के बाद लूट मार नही करते। तुम्हारे जैसे मुसलमानो और गाजियो का उसे रोकना कर्तव्य है। इस तरह की बातचीत में उसने करलुको को भरमाये रखा और समरकन्द के खान को आक्रमण करने के लिये मौका दिया। यद्यपि करलुक हारे, किंतु जलालुद्दीन करलुको को पूरी तौर से नष्ट नही कर पाया, यह इसीसे मालूम है, कि जलालुद्दीन अलीके उत्तराधिकारी किलिच तमगाज खान मसऊद के समय उन्होंने फिर विद्रोह किया। जिस समय इल-अरसलनने अन्तर्वेद पर अभियान किया था, उसी समय खुत्तल के अमीर अबूशुजा फरुखशाह ने तेरमिज पर असफल आक्रमण किया। खुतल कराखिताइयो के प्रभाव में था, इसलिये समझा जाता है, कि उन्होने यह काम गुरखान की प्रेरणा से किया था। इल्-अरसलन ने खुरासान म कोई विशेष सफलता नही पाई। वहा गूज अमीरो और दूसरो के झगडे चलते रहे।

११६५ (५६० हि०) म कराखिताइयो ने बल्ख और अन्दखुद को लूटा। यह वही अन्दखुद है, जहा इसके ४२ साल बाद शहाबुद्दीन गोरी को कराखिताइयो ने हरा कर गोर-गजवन को

मटिया मेट कर दिया। पहिले ११६३ ई० मे तमगाज खान मसऊद अली-पुत्र अन्तर्वेद में कुतुलुक विलका वेग और रुकुनुद्दीन की उपाधि के साथ गद्दी पर बैठा। ११६५ ई० मे उसने गूजो द्वारा ध्वस्त बुखारा के किले को पक्की ईंटो की बुनियाद पर फिर से मरम्मत करवाया। इसके शासन में करलुक अमीर ऐयार वेग ने विद्रोह किया था। यह भी स्मरण रखना चाहिये, कि भारत के प्रथम मुसलमान सुल्तान कुतुबुद्दीन का दामाद और पीछे दिल्ली का सुल्तान ऽल्तमश भी करलुक था। ऐयार वेग साधारण घर मे पैदा हो अपनी योग्यता से आगे बढा था। वह अद्वितीय सवार योद्धा समझा जाता था। एक सालतक वह अन्तर्वेद का प्रधान सेनापति भी रहा। विद्रोह करने पर खान ने उसपर आक्रमण किया और ज़र्मान तथा सवात के बीच भूखी-मरुभूमि में दोनो का युद्ध हुआ। ऐयार लडते लडते खान (कुतलुक विलका वेग) के पास पहुच गया था, लेकिन इसी समय खान के सिपाहियो ने उसे पकडकर कत्ल कर दिया। खान को करलुको और खुरासान में ध्वसलीला मचानेवाले गूज़ो से लडना पडा था। गूज़ो मे लडने के लिये वह एक लाख सेना के साथ जाडे में वक्षु पार हुआ। करलुको के साथ उसकी लडाईया नखशाव, किश, शगानियान और तेरमिज़ में हुई। उसने विद्रोहो को दवाकर शान्ति स्थापित की।

इल-अरसलन चाहे कितना ही शक्तिशाली शाह हो, लेकिन अभी भी वह कराखिताइयो का करद सामन्त था। वार्षिक कर न चुकाने के कारण ११७१ (५६७ हि०) मे गुरखानी सेनाने ख्वारेज्म पर आक्रमण किया। ख्वारेज्म ने भी मुकाविला करने का निश्चय किया। इस समय उसकी हरावल का सेनापति ऐयारवेग था, किन्तु यह करलुक ऐयारवेग नही था। ऐयार वेग हार करा खिताइयो का बन्दी बना। ख्वारेज्मशाह ने बाध तोडकर फिर भूमि को जलमग्न कर दिया, जिसमें कराखिताई ख्वारेज्म की ओर न बढ सके।

माच ११७२ ई० में इल अरसलन मारा गया।

५ महमूद

तकाश इल-अरसलन का ज्येष्ठ पुत्र तथा जन्द का गवर्नर था, लेकिन छोटे भाई (महमूद सुल्तान शाह) और उसकी मा तेरके ने उसे वचित करना चाहा था।

६ तकाश अरसलन-पुत्र (११७२-१२०० ई०)

तकाश उसे न मान कराखि-खिताई में प्रथम गुरखान की रानी तथा उसके पति फूमा (कर्मा) के पास चला गया था। फूमा वडी सेना के साथ तकाश का पक्ष लेकर ख्वारेज्म आया। कराखिताई सेनाको देखकर मा-बेटो की हिम्मत टूट गई और वह भाग गये। सुल्तानशाह ने मूएइद से मदद मागी। मुएइद मदद करने के लिये आया भी। सुब्रली नगर के पास मरुभूमि के किनारे लडाई हुई और ११ जुलाई ११७४ ई० को मुएइद पकड कर मारा गया। सुल्तानशाह और उसकी मा देहिस्तान की ओर भागे। तकाश ने शहरपर अधिकार कर तुर्कानाको पकडकर मरवा डाला। सुल्तानशाह भागकर पहिले मूएइद के पुत्र तथा उत्तराधिकारी तुगानशाह अवूबक्र के पास गया, फिर सुल्तान गयासुद्दीन गोरी की शरण में पहुचा।

तकाश कराखिताइयो की मदद से ११ दिसम्बर ११७२ ई० को ख्वारेज्म की गद्दी पर बैठा।

कराखिताई जानते थे, कि तकाश उनकी दया के भरोसे ख्वारेज्मशाह बना है। कर

उगाहने के लिये कराखिताई दूत—जोकि गुरखान का सबंधी भी था—ख्वारेज्म आया। उसके शेखी और अपमानजनक वर्ताव से क्रुद्ध हो तकाश ने उसे मार डाला, और उसकी आज्ञा से अमीरो ने दूत के साथियो को भी मार डाला। यह खबर जब सुल्तानशाह को मिली, तो उसने कराखिताई रानी के पास जाकर उसे उभाडा और सारा ख्वारेज्म हमारे पक्ष में है, कहकर रानी के पति कर्मा के साथ सेना लिवा लाया। तकाश ने बाध तोड़कर रास्ते की भूमि को जलमग्न कर दिया। ख्वारेज्म की तैयारी को देखकर कर्मा ने भी समझ लिया, कि सुल्तानशाह की वात गलत है। वह स्वय लौट गया, तो भी सुल्तानशाह की प्रार्थना पर एक वाहिनी उसके लिये छोड गया, जिसकी मददसे उसने सरख्शके पास गूज शासकको हरा मेर्व ले लिया। फिर १३ मई ११८१ को अपने पुराने मददगार तुगानशाह को पूरी तौर से पराजित कर सरख्श और तूस पर भी कबजा कर लिया। इस समय तुगानशाह तकाश के सामन्त के तौर पर नसापर शासन कर रहा था। ११८१ के अन्त में गोरी-दूत अमीर हुसामुद्दीन बातचीत करने के लिये ख्वारेज्म आया। तकाश ने वचन दिया, कि अगले वसन्त में मैं सेना के साथ खुरासान आऊगा और उसी समय गयासुद्दीन (गोरी) से मिलूगा। हुसामुद्दीन जनवरी ११८२ ई० मे ख्वारेज्म से विदा हुआ, उसके साथ तकाश का दूत फखुरुद्दीन भी था।

तकाश खुरासान के अभियान के लिये तैयारी करने लगा। इसी समय सुल्तानशाह का दूत ख्वारेज्म पहुचा। तकाश ने उससे तुगानशाह के साथ शान्तिपूर्वक रहने की माग की। दूत ने अपने मालिक की ओर से इस बात को मानकर अधीनता भी स्वीकार कर ली। अब खुरासान पर अभियान करने का कोई कारण नही रह गया, तो भी तकाश ने अपनी तैयारी जारी रखी और इस बात की चिट्ठी भी गोरी के पास भेज दी। मई मे तकाश ने जाकर सरख्श को घेर लिया और यहा से गोरी के पास भेजे एक पत्र में लिखा, कि सरख्श चन्द दिनो में सर हो जायेगा, फिर हम दोनों की मुलाकात का प्रबन्ध किया जायगा। पत्र में यह भी लिखा था, कि हमारे शासित सभी प्रदेशो की वाहिनिया इस वक्त हमारी सेना मे है। सरख्श के जल्दी सर नही होने पर, सरख्श के दरवाजे से तकाश ने गयासुद्दीन के पास दूसरा पत्र लिखा। अल्पकारा ऊरान जाडा मे काफिर किपचको की एक बडी सेना के साथ आ पहुचा है। उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र फीरान युगुर के साथ और पुत्रो को भी भेजकर अधीनता स्वीकार करते अपनी सेवायें ख्वारेज्मशाह को अर्पित की। ख्वारेज्मशाह ने उन्हे जन्द के राज्यपाल शाहजादा मलिकशाह के पास भेज दिया है, और हुक्म दिया कि उनको साथ लेकर शाहजादा काफिरो पर हमला करे। ख्वारेज्मशाह इसी जाडे मे गोरी सुल्तान की मदद करने के लिये आनेवाला था, लेकिन शत्रुओ के विरुद्ध गोरियो की सफलता की खबर सुनकर उसने अभियान रोक दिया। अगला पत्र तकाश ने गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी के नाम जनवरी ११८३ ई० मे लिखा था, जिसमे ख्वारेज्मशाह ने मुलाकात न करने के लिये अफसोस प्रकट किया और यह भी कहा, कि जरूरी काम के लिये अन्तर्वेद पर अभियान करना पड रहा है, घोडे बहुत थक गये है इसलिये नया सफर करना मुश्किल है।

अक्तूबर नवम्बर ११८२ मे तकाश ने जो खत ईरानी अताबेग पहलवान के पास भेजे, उनमें किपचको का जिक्र है। अक्तूबर के पत्र मे लिखा है, कि अल्पकारा-पुत्र फीरान को तकाश के परिवार से रिश्तेदारी का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसने पिछले साल की तरह इस साल भी

अपनी सेवायें अर्पित की हैं— पिछले साल उसने तराज (तलस) तक के वहुत विस्तृत प्रदेश को काफिरो के जूये मे मुक्त कर दिया। नवम्बर के पत्र मे लिखा था तुर्क-भूमि से आकर किपचकों की वाहिनिया वरावर ख्वारेज्मशाह की सेना में भरती हो रही हैं।

अन्तर्वेदके अभियानके सबधमे ताशने अपने वजीरके पास ख्वारेज्ममे चिट्ठी लिखी थी। वक्षु पार हो ख्वारेज्मशाहने एक वाहिनी बुखारा भेजी। सैनिकोंको हुक्म दिया, कि शान्तिप्रिय निवासियोको कोई हानि न पहुचाई जाय। लेकिन प्राकारवद्ध नगर में राजद्रोही अत्याचारियो ओर ढीठ मुतिदोने—जो कि इस प्रान्तमे रहते कुफ्रके शिकार हो गये थे—भारी जमात इकट्ठा कर ली थी। ख्वारेज्मशाहने दया दिखलाते हुए वहुत देर तक अपने सिपाहियोको रोककर वागियोंको समझानेकी कोशिश की, लेकिन मालूम हुआ कि उनके कानोमे भ्रान्तिकी रूई पडी हुई है, इसलिये मगलवार १२ अक्तूबर ११८२ ई० (५७८ हि०) को सैनिकोंने नगर पर आक्रमण कर दिया। एक मुहूर्तमें प्राकार पर अधिकार हो गया। विजयके वाद सेना लूट मचाना चाहती थी, लेकिन शाहने धार्मिक जनतापर दया दिखलाते हुए सेनाको लौटा लिया। वह जानता था, आक्रमणके वाद दखल किये शहरमें यदि लूट-मार मची, तो पीडितोमे वह शान्तिप्रिय निवासी भी होंगे, जिन्होंने कि मजबूर हो काफिरोकी अधीनता स्वीकार की थी। इस पत्र से जान पडता है, पहिले आक्रमणको रोक दिया गया था। अगले दिन (वुधवार) तकाशने शहरके आत्मसमर्पण करने के लिये प्रतीक्षा की। शामके अंधेरेसे लाभ उठाकर विद्रोही सेनापतिने भागना चाहा, किन्तु वह अपनी एक हजार सेनाके साथ पकडा गया। ख्वारेज्मशाहने उसे माफ कर दिया। वुखारामें सेनाके आते समय एक सैयद इमामने वडी सेवा की थी। तकाशने इसके लिये उसको धन्यवाद दिया। सद्रे-जहान वुरहानुद्दीन द्वारा नियुक्त वदरुद्दीनकी मुदर्रिस-इमाम-खतीब ओर मुफ्ती के पदो पर नियुक्तिको स्वीकार किया और हिदायत दी कि खुतवेमें खलीफाके साथ मेरा भी नाम पढ़ा जाय।

तकाश अव इतना वढ़-चढ़कर हाथ मार रहा था, मानो अधिराज गुरखानका अब कोई अस्तित्व ही नही है। गयासुद्दीन और शहावुद्दीन गोरी कावुल और भारतमें कुफ्रका चिराग वुझानेमें लगे हुए थे और तकाश किपचक भूमिको काफिरोंसे विहीन करना चाहता था। लेकिन सभी काम वेखटके नही हो रहे थे। उसके भाई सुल्तान शाहने खुरासानमे अपना अड्डा जमा लिया था और गयासुद्दीन मुहम्मद गोरीकी वुरी गत कर दी थी। तकाशने जव यह वात सुनी, तो उसने गयासुद्दीनको ढारस देते हुए लिखा—मैं पचास हजार तुर्कोंकी सेनाके साथ विचवई करनेके लिये आ रहा हू। इस पत्रमें तकाशने गयासुद्दीनको भाई नही वल्कि पुत्र कहकर सबोधित किया। ख्वारेज्मशाह पूरवके सारे इस्लामिक शासकोंको अपने अधीन वनानेकी इच्छा रखता था, यह इससे स्पष्ट है। ११८३ ई० की गरमियोमें तकाश सेना-सहित खुरासान पहुचा और शायद इसी कारण गयासुद्दीन मुहम्मद गोरी की स्थिति अच्छी हो गई।

१५ अप्रैल ११८५ ई० को तुगानशाह मर गया और उसका पुत्र सिंजरशाह खुरासानके तख्तपर वैठा। देशमें वरावर अशान्ति मची रही। अधिकाश प्रदेश तकाशके भाई सुल्तानशाहके हाथमें था। तकाशने मध्य जून ११८७ ई० में नेशापोर ले लिया, और जन्दके भूतपूर्व गवर्नर अपने ज्येष्ठ पुत्र मलिकशाहको वहा का शासक वनाया। सिंजरशाहको पकडकर उसने ख्वारेज्म भेज दिया। जब पता लगा कि वह नेशापोर वालोंसे गुप्त वातचीत कर रहा है, तो उसे अन्धा

करा दिया। २९ सितम्बर ११९३ ई० को सुल्तानशाह मर गया। अब मेव भी तकाश का हो गया। इसी सालके अन्तमे उसने मलिकशाहको मेवका राज्यपाल और उसके भाई मुहम्मदको नेशापोरका शासक बनाकर भेजा।

सल्जूकी सुल्तान तुगरलने बगदादके खलीफा नासिरका नाकमें दम कर रखा था। खलीफा अपने बचे-खुचे राज्यको बचाना चाहता था। सुल्तान तुगरल और उसके अतावेग लोगोको समझा रहे थे—"यदि खलीफा इमाम है, तो उसका कर्तव्य है नमाज पढनेमे लगा रहना। उसकी इज्जत और सम्मान इसीलिये है, कि वह अपने आचरण द्वारा लोगोंके सामने उदाहरण पेश करे। यही उसके लिये काफी है, यही सच्ची बादशाही है। लौकिक शासनके कामोमे खलीफाका दखल देना बेसमझीकी बात है। यह काम सुल्तानोके जिम्मे दे देना चाहिये।" इसकी वजहसे मुल्ला लोग सुल्तान तुगरलके खिलाफ हो गये थे, क्योकि वह खलीफाके पक्षपाती थे।

खलीफाके बुलानेपर १९ मार्च ११९४ को तकाशने रे (तेहरान) के पास तुगरलकी सेनापर आक्रमण किया। तुगरल बहादुरीमे लडते हुए युद्ध-क्षेत्रमें मारा गया। तकाशने रे और हमदानपर अधिकार कर लिया। अब (११९४) तकाश एसियाका सबसे बडा मुसलमान सुल्तान था। खलीफाको अब अक्ल आयी और समझा, तकाश कम खतरनाक नही साबित होगा।

(बौद्ध, ईसाई, जर्थुस्ती)

११९५ ई० में तकाश ने सिर-दरियाके उत्तरके तुर्कोंकी खबर ली। काइर तुकू खान वहाके काफिरोका नेता था। उसके विरुद्ध धर्म-युद्ध (गजवा) घोषित करते हुए तकाशने सिगनाकपर अभियान किया। जन्दमें ख्वारेज्मी सेनाके आनेकी खबर सुनकर तुकू खान भाग निकला, लेकिन ख्वारेज्मी सेनाने उसका पीछा किया। ख्वारेज्मकी सेनामें उत्तरके घुमन्तुओ की भी वाहिनियाँ रहती थीं, यह पहिले कह आये है। उरानियान कबीलेकी एक वाहिनी के सरदारने तुकू खानको सूचित किया, कि युद्धके समय हम ख्वारेज्मियोंका साथ छोड देंगे। इससे उत्साहित हो शुक्रवार १९ मई (११९५ ई०) को तुकू खानने युद्ध छेडा। उरानियानोने अपने वचनके अनुसार तकाशकी सेनाका साथ छोड दिया और उसकी रसद और सामानको लूट लिया, जिसके कारण मुसलमानोंकी घोर पराजय हुई। बहुतसे युद्धमे मारे गये, और उससे भी अधिकने मरुभूमिमें भूखो-प्यासा प्राण खोये। १८ दिन बाद ख्वारेज्म लौट कर तकाशने सालके बाकी समयको "इराक" में बिताया। उसी सालके अन्तमे काइर तुकू खान और उसके भतीजे अल्प दरकमें झगडा हो गया। भतीजा तकाशके पास जन्दमे सहायता मागने आया। तकाशने स्वीकार किया। शाहजादा कुतुबुद्दीन मुहम्मद जनवरी ११९८ ई० मे नेशापोरसे ख्वारेज्म आया। तकाशने उसे अल्प दरककी मददके लिये भेजा। खान हार कर अपने कितने ही अमीरोंके साथ बन्दी बना, और बेडी पहनाकर फरवरी में ख्वारेज्म लाया गया। उसके कबीलेने अल्प दरकको अपना खान माना, किन्तु वह काफिर इस्लामके गाजीका भक्त अधिक दिनो तक नही रहा और उसने भी चचाका पथ पकडा। "लोहे को लोहा काटता है" की कहावतके अनुसार तकाशने भूतपूर्व खान (तुकू खान) को जेलखानेसे छोड अल्पदरक (अल्पकारा) के विरुद्ध भेजा। अगले साल शुभ समाचार (खबर बशारत) मिला, कि तुकू खान विजयी हुआ।

गोरियोंके प्रकरणमें हम कह चुके है, कि वहाउद्दीन (वामियान-शासक) ने ११९८ ई० में कराखिताई शासकसे वलख छीनकर वहा पर गयासुद्दीन मुहम्मद गोरीके नाम से खुतवा पढ़वाया। इस कामको तकाश अपने विरुद्ध समझता था। अव तक गोरी सुल्तान और ख्वा-रेज्मशाह हिन्दुस्तान और किपचकके काफिरोको परास्त करने में एक दूसरेकी सहायता करते रहे। लेकिन जान पड़ता है, तकाशके इरादेको जानकर, अव गयासुद्दीन भी तन गया था, इसीलिए उसने वलख पर प्रहार किया। तकाशने गयासुद्दीनके खिलाफ कायवाही करनेके लिये कराखिताइयोंसे भी मदद माँगी। उस समय शत्रुकी भारी शक्तिको देखकर गयासुद्दीन हमला नही करना चाहता था, क्योंकि यद्यपि भारत (दिल्ली) विजय किये हुए ६ वप हो गये थे, और ४ वर्ष पहिले कन्नौज भी विजित हो चुका था, किन्तु अभी वहाँ विद्रोह शान्त नही हुए थे, इसलिये गोर-सेनापति शहावुद्दीन हिन्दुस्तानमे फसा हुआ था। अन्तमे धोखेसे कराखिताइयोंके शिविरपर आक्रमण करके गोरी-सेनाने भारी सफलता प्राप्त की। इस हारका दोप कराखिताइयोंने ख्वारे-ज्मशाह पर लगाकर प्रत्येक निहत सैनिकके लिये १० हजार दीनार हर्जाना माँगा। तकाशने गयासके पास सहायताके लिये पत्र भेजा। गयासने शत रखी—इस्लामके खलीफाकी अधीनता स्वीकार करो और कराखिताइयोंके आक्रमणसे जो नुकसान हुआ है, वह हमारी प्रजाको दे दो। जब गयाससे समझौता हो गया, तो तकाशने गुरखानको लिखा—"आपकी सेनाने केवल वलख को दखल करनेकी ही कोशिश की, उसने हमारी कोई सहायता नही की। मैं न आपकी सेनासे मिला, और न उसे मैंने नदी (वक्षु) पार करनेकी आज्ञा दी। अगर मैंने ऐसा किया होता, तो आपकी माँगके अनुसार पैसा देता। अब जब कि आप गोरियोका कुछ नही विगाड सके, तो मुझसे माँग कर रहे है। मैंने अब गोरियोंसे समझौता कर लिया है। मैंने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली है, अब मै आपके अधीन नही रहा।"

इस तरहका मुह फट जवाब सुनकर कराखिताई कैसे चुप रहते? वह ख्वारेज्मकी राजधानी को घेर कर प्रति रात छापा मारते रहते। इसी समय काफी सख्यामें गाजी तकाशसे आ मिले, जिसपर कराखिताइयोको लौट जाना पड़ा। तकाशने उनका पीछा करते हुए बुखारा को जा घेरा। बुखारा-निवासी इस्लामके सुल्तानके नही वल्कि काफिरोंके वफादार रहे, और उनकी तरफसे लड़े। तकाश एक आखका काना था। बुखारा वाले कराखिताइयोकी शक्तिपर विश्वास करते थे, इसलिये उन्होने कफतान और ऊची नुकीली टोपी पहनाकर एक काने कुत्तेको प्राकारके ऊपरसे "ख्वारेजमशाह" कहकर प्रदर्शित किया। इसके बाद कुत्तेको कतापुल्त (युद्धयन्त्र) द्वारा दुश्मनके शिविरपर फेंकते हुए चिल्लाकर कहा "यह है तुम्हारा सुल्तान"। ख्वारेजमवाले बुखारियो को मुर्तिद (धमसे पतित) कहते थे। अन्तमे बुखारा तकाशके हाथमें चला गया। उसने दया दिखलाते लोगोमें बहुत सा पैसा बाटा और कुछ समय वाद वहासे ख्वारेज्म लौट गया।

खलीफाके वजीर मुईनुद्दीनने बड़ी धृष्टतापूवक वर्ताव किया और कहा—चूकि सुल्तान (तकाश) को यह दर्जा हमारे यहासे मिला है, इसलिये उसे वजीरसे मिलनेके लिये घोड़ेसे उतर कर आना चाहिये और वजीरके तबू मे खलअत ले जाना चाहिये। तकाश ऐसा करनेसे इकार कर तुरन्त वहासे लौट पड़ा। उस समय तो बीच-बचाव हो गया, लेकिन वजीरके मरनेके वाद (जुलाई ११९६ ई० मे) तकाशने खलीफाकी सेनापर आक्रमण कर उसे बुरी तरहसे हराया। मृत वजीरको दड देनेके लिये उसके शवको कब्रसे निकाल उसका सिर काटकर ख्वारेज्म भेज

दिया। इसके वाद भी खलीफाका कहना था, कि ख्वारेज्मशाहको पश्चिमी ईरानकी ओर नजर न दौडानी चाहिये। तकाशने जवाब दिया—इतना पर्याप्त नही है, मेरी असख्य सेनाके खर्चके लिये इराक-अजमकी आदमनी वहुत कम है, इसलिये खुजिस्तान भी मिलना चाहिये। अतिम जीवनमें तकाशने वगदादमे भी अपने नामका खुतवा पढे जानेकी माग की। यही से ख्वारेज्म शाह और अब्बासियोका भारी झगडा उत्पन्न हुआ, जिसका अन्त मगोलो द्वारा दोनो वशोंके उच्छेदके साथ हुआ। ख्वारेज्म सेनाने इस समय वडी वरवादी मचाई। इतिहासकार रावन्दीके अनुसार तकाशके सेनापति मायाचुकने उससे भी अधिक क्रूरता दिखलायी, जो कि गूज़ोने खुरासान में, अथवा पीछे मगोलोने इराकमे की थी। जब इसकी शिकायत तकाशके पास पहुची, तो उसने मायाचुकको पदच्युत कर दिया और ख्वारेज्ममें आनेपर उसे कत्ल करवा दिया। वगदादमें रखी सेनाकी हालत भी वेहतर नही हुई। ११९४ ई० मे—जिस साल शहावुद्दीन मुहम्मद गोरीने जयचन्द्रको हराया—खलीफाने पाच सौ सवार ईराक-अजम भेजे। उन्होने वहा पर रखी हुई ख्वारेज्मी सेनाको लूटकर मार भगाया।

तकाश ३ जुलाई १२०० ई० को मरा। यह खवर मिलनेपर इराक-निवासियाने ख्वारेज्म की रही सही सेना को भी खतम कर दिया।

७ मुहम्मद तकाश-पुत्र (१२००-१२० ई०)

तकाशका वडा लडका मलिकशाह पिताके जीवनमेंही ११९७ई०मे मर गया था, इसलिये द्वितीय पुत्र मुहम्मद कुतुवुद्दीन (धर्म-ध्रुव) और अलाउद्दीनकी उपाधिके साथ गद्दी पर वैठा। उसके गद्दीपर वैठनेकी घोषणा ३ अगस्त १२०० ई० को हुई। मलिकशाहका पुत्र हिन्दूखान गद्दीका दावेदार था। गोरियोने उसका समर्थन किया, जिनकी सहायतासे खुरासानके कितने ही शहरोंको उसने ले लिया। लोग लूट-खसूटके कारण हिन्दूखान से असन्तुप्ट हो गये। उधर उसका सरक्षक गया-सुद्दीन भी मर गया। उसी वक्त मुहम्मदने अपने भतीजेपर धावा वोल दिया और १२०३ ई० तक उसने खुरासानके अपने सारे राज्यको वापस ले लिया। १२०४ ई० के वसन्तमे उसने और आगे वढ वादगियोको लूटा और हिरातपर भारी कर लगाया। हिरात पर तकाशका कभी अधिकार नही हुआ था, इसलिये भारत-विजेता शहावुद्दीन मुहम्मद गोरीको वुरा लगना ही था। वह भारतसे लौटते ही सीधे ख्वारेज्मपर चढा। मुहम्मद जल्दी जल्दी मेवसे ख्वारेज्म लौटा। भूमिको जलमग्न कर गोरीकी सेनाको आगे वढनेमे ४५ दिनकी देर करा सका, लेकिन ख्वारेज्मियो की हार हुए विना नही रही। गोरीके वर्णनमें हम वतला चुके हैं, कि किस तरह कराखिताइयाकी मदद पहुचनेके कारण ख्वारेज्मकी राजधानी शहावुद्दीनके हाथमें जानेसे वची, उसे लौटना पडा और अन्तमे कराखिताई सेनाके हाथमें अन्दखुदमे ऐसी पराजय खानी पडी, जिससे वह फिर सभल नही सका। शहावुद्दीन गजनी भागा। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके साथ इस्लामके सुल्तानको नाक रगडकर सधि करनी पडी। अव हिरात छोड सारा खुरासान ही ख्वारेज्मशाहके हाथमें नही चला गया, वल्कि इस्लामका सुल्तान अव गोरी नही ख्वारेज्मशाह वना। १३ मार्च १२०६ ई० को जातीय वदला लेनेके लिये हिन्दुओंने जव शहावुद्दीनको मार डाला, तो इस्लामी दुनियामें मुहम्मद ख्वारेज्मशाहका कोई प्रतिद्वन्द्वी नही रह गया। शहावुद्दीनके भतीजे गयासुद्दीन महमूदके समय रहा सहा गोरी साम्राज्य भी छिन्न-भिन्न हो गया। तुर्की गुलामाने गोरी राज्यको वाट

लिया। ख्वारेज्मशाहने भी इससे फायदा उठाया और दिसम्बर १२०६ ई० को हिरातमें विजयोत्सव मनाते हुए प्रवेश किया। गयासुद्दीन महमूद अब उसका एक सरदार भर था, जिसे गोरमें शासन करनेका अधिकार दिया गया। खुतवा और सिक्के ख्वारेज्मशाहके चलने लगे। जनवरी १२०७ ई० में ख्वारेज्मशाह अपनी राजधानीको लौट गया।
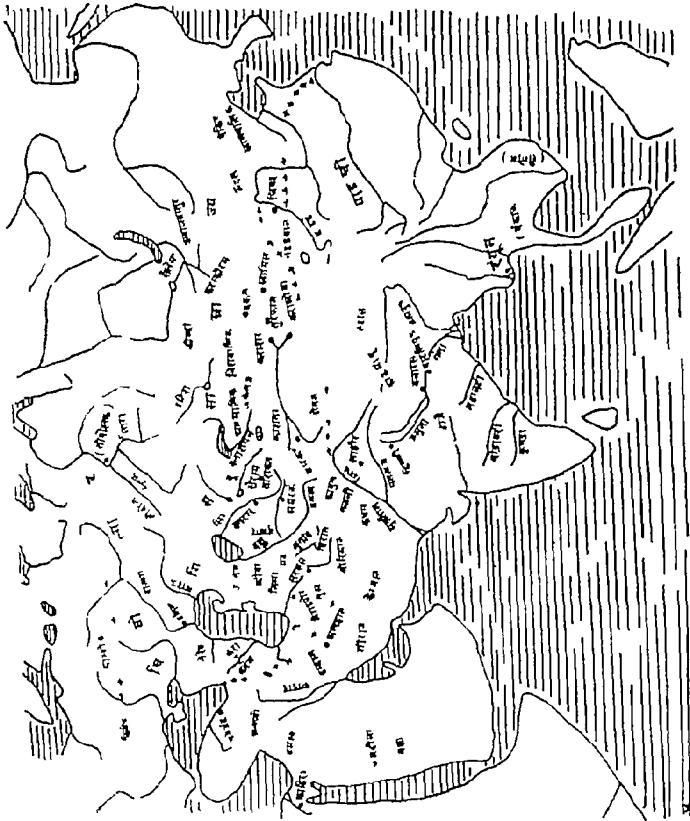
पूर्वी इस्लामी जगत अब फिर एकताबद्ध होने लगा। शक्तिशाली होते भी तकाशने कराखिताइयोंकी अधीनतासे इन्कार नहीं किया और वही शिक्षा वह अपने पुत्रको भी दे गया था, लेकिन मुहम्मद उसे भूल गया। उसने १२०८ ई० में कराखिताइयोंकी भूमि पर चढाई की और उसे बुरी तरहसे हार खानी पडी। अगले साल की चढाईमें उसे सफलता मिली और उतरार (फाराव) और तराज तकका प्रदेश उसने ले लिया। इसी समय कराखिताई साम्राज्यके पूरबी सीमान्तपर खतरा पैदा हो गया। १२०७ ई० में चिंगिसने नैमन तुर्कोंके खान तायङ्ग को हराकर मारा डाला था। उसका पुत्र कुचलुक (गुचुलुक) भागकर गुरखान (कराखिताई) के

दरबार मे शरणागत हुआ। दो वर्षके भीतर ही कुचलुकने किस तरह गुरखानके साम्राज्यको अपने हाथमें कर लिया, यह हम पहिले बतला चुके हैं। कुछ सफलताके बाद भी ख्वारेज्मशाहने अभी कराखिताइयोको कर देनेसे इन्कार नही किया। लेकिन १२०९ (६०७ हि०) में जब कराखिताई दूत कर उगाहनेके लिये राजधानी गुरगाजमें आया और तख्तपर शाहकी बगलमें बैठा, तो इस्लामके सुल्तानको यह सह्य नही हुआ और उसने उसे वक्षु नदीमे फेंकवाकर मरवा दिया। यह कराखिताई साम्राज्यके प्रति युद्ध-घोषणा थी, इसलिये "प्रतिरक्षासे आक्रमण बेहतर होता है" इस नीतिका अनुसरण करते हुए मुहम्मदने कराखिताई राज्यपर अभियान किया। बुखारा लेकर वह समरकन्द पर बढा। समरकन्दके कराखिताई शासक उस्मानने उसका स्वागत किया। आगे बढ़ते हुए ख्वारेज्मशाहने सिर-नदीके पार सितम्बर (१२१० ई०) में इलामिशके मैदानमे कराखिताई सेनाको हराकर उसके सेनापति तायङ्कूको बन्दी बना ख्वारेज्म भेजा और उसे भी वक्षुमें फेंकवाकर मरवा दिया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहका सितारा ओजपर था। अन्तर्वेदका शासक उस्मान भी अब ख्वारेज्मशाहके पक्षमें था। उधर गुरखानको हाथकी कठपुतली बना कुचलुकने शासनको सभाल लिया था। कुचलुकने गुरखानकी एक रानीको ब्याहा और दो साल बाद (१२१२ ई० में) जब गुरखान मर गया, तो स्वय नया गुरखान बन गया।

१२०८ के वसन्तमे मुहम्मदने खुरासान जाकर वहाँकी अशान्ति दूर की। हिरातके राज्यपालने ख्वारेज्मशाहके मरनेकी अफवाह सुनकर गोरी झडा खडा करनेकी चेष्टा की थी। ख्वारेज्मशाहने राज्यपालको उसके किये का दड दिया। नेशापोरके राज्यपाल कज्ली (कज़्लिक) ने भी विद्रोह किया था। ३० मार्च १२०७ ई० को ख्वारेज्मशाह वहा पहुचा। कज़लिकका पुत्र अन्तर्वेदको ओर भागकर कराखिताइयो के पास पहुचना चाहता था। उसे और उसके साथियोको वक्षु तटपर पकडकर मरवा दिया गया। कज़्लीने कहीं भी रक्षाकी सभावना न देखकर ख्वारेज्मशाहकी मा तुर्कान (तेरेकिन) खातूनकी शरण लेनी चाही और वह गुरगाज पहुचा। तुर्कानखातून बडी जबर्दस्त स्त्री थी। उसका लडका भी उससे बहुत दबता था, लेकिन कज़्लीके अपराधकी गुरुताको वह समझती थी, इसलिये उसने अपने पति तकाशके मकबरेमें शरण लेने की राय दी। ऐसा कहकर भी अन्तम तेरेकिन खातूनने कज़्लिकका सिर कटवा कर पुत्रके पास भिजवा दिया और अपने सबधी की मदद नही की।

१२०८ (६०५ हि०) में दिनको ख्वारेज्ममे एक भारी भूकम्प आया, जिससे राजधानीमें दो हजार आदमी मर गये, बाहर भी बहुत से लोग हताहत हुए, दो गाव धरतीके गर्भमें चले गये।

१२०९ ई० मे कराखिताई दूत महमूद बाय कर मागनेके लिये आया था। उसका जो परिणाम हुआ, उसे हम बतला चुके हैं। समरकन्दका शासक उस्मान ख्वारेज्मशाहका बडा सहायक हुआ। उसे शादी करनेके लिये ख्वारेज्म बुलाया गया था, लेकिन तुर्कान खातूनने तुर्की प्रथाका बहाना बनाकर एक साल ससुरालमें रहनेको कहा, जिसे उस्मानने स्वीकार किया। १२११ के वसतके अभियानमें समरकन्दियोकी मनोवृत्तिसे डरकर वह अपनी पत्नी-सहित समरकन्द चला गया। उस्मानको ख्वारेज्मका जो तजर्बा हुआ, उसके कारण उसने गुरखानसे सबध जोडना ही अच्छा समझा। इसी समय उत्तरी सप्तनदमें मगोल सेनापति कुबिलैनोयनने वहाके राजकुमारके बुलानेपर आक्रमण किया और कराखिताई राज्यपालको मार डाला। मगोल काफिर थे, तब भी उस्मानने जब उनकी सफलता की अतिरजित बात सुनी, तो काफिरोका जुआ उमे

पसन्द आया। उसकी प्रजा भी उससे सहमत थी। ख्वारेज्मशाह अपने दिग्विजयोमे वडा धन खर्च कर रहा था। आखिर उसका सारा भार लोगो पर ही पड रहा था, इसलिये वह क्यो इस्लामके सुल्तानको पसन्द करने लगे? समरकन्दियोने ख्वारेज्मियोको लूटना मारना शुरू किया खबर पाकर ख्वारेज्मशाह चढ आया। समरकन्दने आत्मसमर्पण किया। उस्मान भी शरणमे आया। शायद ख्वारेज्मशाह क्षमा भी कर देता, लेकिन उसकी पुत्री तथा उस्मानकी बीवी क्षमा करनेके लिये तैयार नही थी, इसलिये उसे मारना पडा। गुरगाज एक कोनेमे था। वहासे अफगानिस्तान और ईरान तक फैले साम्राज्यका शासन करना कठिन था, इसलिये अब एक तरह से समरकन्द ही ख्वारेज्मशाहकी राजधानी बन गया। उसने वहा एक जामा मस्जिद बनायी और एक बडा महल बनाने का काम शुरू किया। कराखिताइयोकी ओर के इलाकोको उसने छीन लिया।

गुरखान मर गया। गुचलुक से युद्ध करनेका बहाना करते हुए मुहम्मदने कहा गुरखानने अपनी कन्या तफगाच खातूनको ब्याहने और अपने सारे खजानेको दहेजमें देनेका वचन दिया था, इसलिये राजकन्या और खजानेको भेजो, और केवल दूरके प्रदेशोपर ही अपना शासन रखो। गुचलुककी स्थिति अच्छी नही थी। उसके दुश्मन मगोल उसे क्षमा करनेवाले नही थे। गुचलुकने अपने शासनमें मुसलिम धर्मान्धताका उत्तर अपनी धर्मान्धतासे देना चाहा, लेकिन अब तरिम-उपत्यका और सप्तनद मुसलिम-भूमि थी। वहाके मुसलमानोने धार्मिक आन्दोलन किया। इस आन्दोलनसे फायदा उठाकर एक भूतपूर्व डाकूने कुल्जा प्रदेशमें अपना स्वतत्र राज्य कायम कर लिया। गुचलुकने इसे बडी बुरी तरहसे दबाया। १२१३ ई० के आसपास ख्वारेज्मशाहने मुसलमानोकी मददके लिये अपनी सेना राजधानी विशबालिक भेजा। लेकिन लोगोने गुचलुकका-साथ दिया। फिरसे व्यवस्था स्थापित करनेके बाद गुचलुकने मुसलमान आन्दोलनकारियोपर —विशेषकर पूर्वी तुर्किस्तानमें—बडी क्रूरता दिखलायी। ख्वारेज्मशाह अपने सहधर्मियोकी मदद करनेके लिये नही आया, यहा तक की अन्तर्वेदके उत्तरी इलाकोको भी वह गुचलुकके अत्याचारोंसे नही बचा सका। १२१४ की गर्मियोमे कराखिताई सेनाके समरकन्दपर आक्रमण का बडा भय था। ख्वारेज्मशाहकी इतनी हिम्मत नही हुई, कि आगे बढ़कर गुचलुकसे लोहा ले। उसने इस्फिजाब, शाश, फरगाना और काशानके लोगोको आदेश दिया, कि वह देश छोडकर दक्षिण-पश्चिममें चले आये, जिसमें कि गुचलुकके हाथमें न पडे। सिर-दरियाके उत्तरी तटवाले फरगाना प्रदेशको उसने उजाडकर बरबाद कर देनेकी आज्ञा दी, जिसमें गुचलुकके हाथमें कोई चीज न पडे। यह ऐसा समय था, जबकि ख्वारेज्मशाहको चारो ओर गुचलुक ही गुचलुक (कुच-लुक) दिखलायी पडता था, डर लग रहा था, कही फिरसे उसे अपना सारा राज्य खोना न पडे और पूरबी इस्लामिस्तानपर धर्मान्ध काफिरोका अखड राज्य कायम हो जाये।

किपचक मरुभूमिकी तरफ ख्वारेज्मशाहको ज्यादा सफलता मिली। शिगनाक अब ख्वारेज्म राज्यमें था। जन्दसे ख्वारेज्मियोने उत्तरकी किरगिज मरुभूमिके किपचकोपर आक्रमण किये और इसी अभियानमें मगोल सेनासे ख्वारेज्मियोकी टक्कर हो गयी, इसे हम पहिले बतला चुके हैं। यद्यपि मगोलोकी सेना बहुत बडी नही थी, तो भी मुकाबिला जितना कठोर रहा, उसके कारण मुहम्मद ख्वारेज्मशाह की हिम्मत नही हुई, कि सवेरे भाग निकली मगोल सेनाका पीछा करे।

अपने समसामयिक मुसलमान शासकोमें मुहम्मद ख्वारेज्मशाह सबसे बडा था, इसमें सदेह

नही। १२१५ ई० में अपने पुत्र जलालुद्दीनको उसने गोरियोंके राज्यका शासक बनाया। जिस समय सुल्तान अन्तर्वेदमें कराखिताई घुमन्तुओंके आक्रमणकी चिन्तामे पडा हुआ था, उसी समय उसके सेनापतियोंने प्राय सारे ईरानकको जीत लिया और सुदूर उम्मा मे उसके नामका खुतवा पढ़ा जाने लगा। वगदादका खलीफा यह नही चाहता था। ख्वारेज्मशाहने खलीफासे माग की, कि अब वह लौकिक शासनको त्याग दे। खलीफा इस मागको सहसा इन्कार नही कर सकता था। उसने शेख शहाबुद्दीन सुहरावर्दीको दूत बनाकर ख्वारेज्मशाहके पास भेजा। सुल्तानने देर तक शेखको इन्तिजार करते रक्खा, फिर जब वह दरवारमे आया, तो उसे बैठनेके लिये भी नही कहा। शेखने पैगम्बरकी हदीस (वाक्य) पढनेकी इजाजत मागी और इस्लामिक प्रथाके अनुसार सुल्तानने सुननेके लिये घुटने टेके। हदीसका मतलव था—"कोई मोमिन (मुसलमान) अब्बासके खानदानको हानि न पहुचाये"। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने जवाब दिया—"यद्यपि मै तुर्क हू और अरवी बहुत कम समझता हू, तो भी तूने जो हदीस पढी है, उसका भाव मैंने समझ लिया। मैने तो अब्बासकी एक भी सतानको हानि नही पहुचायी और न मने उनकी बुराई करनेकी कोशिश की। इसी बीचमें मने सुना है, कि अब्बासकी सतान काफी सख्यामे अमीरुल् मोमिनीन (खलीफा) के हुक्मसे सदा जेलोमे बन्द रहती ह। यही नही वल्कि वहा उनकी सख्या बढती ही जा रही है। यह बहुत अच्छा और उचित होता, यदि शेख इस हदीसको अमी रुल्मोमिनीनके सामने पढ़ता।" शेखने समझानेकी कोशिश की, कि खलीफा धमवाक्योका अर्थ समझनेका अधिकार रखता है, कि सारी मिल्लतके लिये किसी व्यक्तिको जेलमें डाले। शेखको असफल होकर लौटना पडा। खलीफाके साथ दुश्मनी और बढ गई।

खलीफा समझने लगा, कि जब तक इस काटेको रास्तेसे निकाला नही जाता, तब तक खैरियत नही है। हसन सब्बाह-पुत्रका इस्माईली सप्रदाय गुप्त-हत्यायें करनेम वडी प्रसिद्धि रखता था। उस वक्त इस्माइलियोका मुखिया जलालुद्दीन हसन था—यह याद रखना चाहिये कि हमारे यहाके आगाखान उसी इस्माईली सप्रदायके मुखिया हैं। हसनसे कहकर खलीफाने कुछ फिदाइयो (मरनेके लिये तैयार व्यक्तियो) को ख्वारेज्मशाहको मारनेके लिये भेजा। फिदाइयाने इराकके ख्वारेज्मी उपराजको मार डाला और मक्काके अमीरको भी अरफातके महोत्सवके समय पवित्र स्थानमें जाकर मारा।

१२१५ई० में जब ख्वारेज्मशाहने गज़नीमे अपने बड़े लडकेको शासक मुकरर करते समय दफतरको ढुंढ़वाया, तो वहा खलीफाके कई पत्र मिले, जिनमें गोरियोको मुहम्मद ख्वारेज्मशाह पर आक्रमण करनेकी प्रेरणा दी गई थी। मुहम्मदने इन सब पत्रोको दिखलाकर अपने यहाके इमामोसे फतवा निकलवाया—"जो इमाम (खलीफा) इस तरहके अपराध करता है, वह अपने पदके योग्य नही है। और जो सुल्तान अपनेको इस्लामका अवलम्ब सावित कर चुका है और दीनके लिये युद्ध करनेमें अपना सारा समय देता है, उसके विरुद्ध यदि इमाम इस तरहके षड्यन्त्र

---

[1] हर इमाम कि वर् इम्साल इ हरकात कि जिक्र रफ्त इक़दाम नुमायद, इमामत-इ हक़ न बाशद। व सुल्तानेरा कि मदद-इस्लाम नुमायद व रोज़गार ब-जिहाद सरफ़ कर्दा बाशद, क़सद कुनद् आँ सुल्तानरा रसद कि दफ़ा चुनी इमाम कुनद, व इमाम दीगर नसब करदद। व जह दीगर आँ कि खिलाफ़त रासादाद हुसैन मुस्तहक अन्द, व दर-खान्दान् अब्बास गसब स्त।

करता है, तो उसको हक है, कि ऐसे इमाम (खलीफा) को हटाकर उसकी जगह दूसरेको नियुक्त करे। अब्बासियोंने जबदस्ती खिलाफत दखल कर ली है, वस्तुत वह हुसैनकी सतान अला-वशियोकी चीज है।"

यह फतवा निकालनेके बाद ख्वारेज्मशाहने नासिरको गद्दीसे हटाकर सैय्यद अलाउल्मुल्क तेरमिज्जीको खलीफा बना उसके नामसे खुतबा पढवाया और सेना ले बगदादके विरुद्ध कूच कर दिया। १२१७ ई० मे उसने सारे ईरानपर अपना पूरा अधिकार स्थापित कर लिया, लेकिन जाडोमें बगदादके विरुद्ध हमदानसे जो सेना भेजी, उसे कुर्दिस्तानमे बर्फानी तूफानमे पडकर बडी हानि उठानी पडी। बची-खुची सेनाको कुर्दोंने खतम कर दिया। बहुत थोडे लोग बचकर ख्वारेज्मशाहके पास पहुचे। यह ख्वारेज्मशाहकी प्रतिष्ठा पर जबदस्त चोट थी। लोगोमे यह ख्याल फैलाया जाने लगा, कि खलीफाके साथ दुश्मनी करनेका फल अल्लाने इस प्रकार दिया। उधर पूरबसे जो आक्रमण की खबरें आ रही थी, उसके कारण मुहम्मद और बढ़कर खलीफासे झगडा छेडनेकी स्थितिमें नही था। तो भी फरवरी १२१८ ई० में नेशापोर पहुचनेपर उसने खलीफाका नाम खुतबासे हटवा दिया। यही बात मेव, बलख, बुखारा और सरख्शके शहरोंमे भी की। लेकिन ख्वारेज्म, समरकन्द और हिरातमे ऐसा नही करवाया। इसी समय ख्वारेज्म-शाहके घरमें झगडा हो गया। राजमाता तुर्कान खातूनने उग्र रूप धारण किया, जिसमें मुल्ला और सैनिक भी खातूनकी ओर थे। मुल्लोको ऐसा करनेके लिये कारण था। १२१६ ई० में शाहने शेख नजमुद्दीन कुबरा (सूफी सप्रदाय कुबरी के सस्थापक) के शिष्य तरुण शेख मजदुद्दीन बगदादीको कत्ल करवा दिया। यह सदेह किया जाता था, कि सुल्तानकी मा तुर्कान खातून उससे फसी। ख्वारेज्मशाहकी सेना अधिकतर भाडेकी थी। १२वी शताब्दीमें साधारण लोग बहुत नीची निगाहसे देखे जाते थे, और उन्हें मजूरकी तरह पूरी तौरसे अपने अधीन रखनेकी कोशिश की जाती थी। सुल्तान सिंजर सल्जूकीकी कहावत थी—"गरीबो (कमजोरो) से मजबूतो (बडो) की रक्षा करना उससे कही आवश्यक है, जितना कि मजबूतोकी स्वेच्छाचारी आचरणसे कमज्जोरोकी रक्षा करना। यदि मजबूत कमज्जोरका अपमान करें, तो यह अन्याय (मात्र) है, जब कि कमज्जोर द्वारा मजबूतका अपमानित किया जाना अन्याय और अपमान दोनो है। अगर जन-साधारणको अधीनताके बधनसे बाहर निकलने-का मौका मिले, तो बिलकुल अशान्ति और अव्यवस्था मच जायेगी। छोटे बडोंके कर्तव्यको पालन कर सकते हैं, लेकिन बडे छोटोंके कर्तव्यको नही पूरा कर सकते। साधारण लोग चाहेंगे कि अमीरोकी तरह रहें, लेकिन फिर उनके करनेका काम कोई नही करेगा।" मजूरो और किसानोंके बारेमे सिंजरकी सरकारका नियम था—"उन्हें बादशाहोकी भाषा मालूम नही है। उन्हें अपने शासकोंसे समझौता करने या उनके विरुद्ध विद्रोह करने का कोई ज्ञान नही है। उनका सारा प्रयत्न केवल इसी एक उद्देश्यके लिए है, कि वह जीविकाके साधनोको प्राप्त करें, बीबी-बच्चोंके पालन करनेके साधनोको प्राप्त करें। इसके लिये उनको दोषी नही ठहराया जा सकता, यदि वह बराबर शान्ति का उपभोग करना चाहें।"

(१) शासन-व्यवस्था

ख्वारेज्मशाही शासनके बाद मगोल शासन स्थापित हो जाता है, जब कि पहिलेसे चली

आयी शासनो-प्रथाकी जगहपर जगह-जगह से ली हुई चिंगीसीय शासन-व्यवस्था चालू होती है। इसी व्यवस्थाको तैमूर तथा दूसरे इस्लामी शासकने भी स्वीकार किया। वही मुगलो द्वारा भारतमे लाकर प्रचलित की गई। इसलिये ख्वारेज्मशाहके समय तक चली आती पुरानी राज्य-व्यवस्थाके बारेमें कुछ कह देना आवश्यक है। जैसा कि हमने पहिले कहा, गोरियोकी सेनामें केवल भाडेके सैनिक नही रहते थे, बल्कि आस-पासके पहाडोंके इस्लामिक गाजी भी लूटके लोभ और धर्म प्रचारके ख्यालसे शामिल होते थे। ख्वारेज्मशाहकी सेना बिलकुल भाडेकी टट्टू थी। ऐसी सेनाको अनुरक्त और अपने हाथमें रखनेके लिये शाह उनको असैनिक अधिकारियोंके ऊपर मानता था। असैनिक अधिकारी निम्न प्रकार थे—

वजीर काजी और मुस्तौफी—यह राज्यके सर्वोच्च अधिकारी थे।

वकील—दरबारके अतिरिक्त दीवान-खास का भी वकील होता था। वही भारी रकम और सेनाके खर्चके लिए निश्चित की हुई निधिका नियामक था। मगोल कालमे शायद यही वकील खारिजी (बाह्य) वकील कहा जाने लगा।

मुशरिफ—प्रान्तोमें वकीलका काम इसके आधीन था।

इनके अतिरिक्त शाहजादोवाले प्रदेशोके भी वजीर होते थे, जिन्हें सुल्तान नियुक्त करता था।

सुल्तानी वजीर कुछ कुछ वशक्रमागत होते थे। जैसे मुहम्मदका वजीर निजामुल्मुल्क मुहम्मद मसऊद-पुत्र हारावी तकाशके वजीरका पुत्र था।

जानदार (वधिक)—सल्जूकियोंके समय इस अधिकारीका महत्व अधिक बढ गया था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके समय इस पदपर काम करनेवाला अधिकारी "अयाज जहान पहलवान" के नामसे पुकारा जाता था और उसे दस हजारी सवारका मनसब (पद) था।

जागीर—सल्जूकियोकी भाति इस समय भी सैनिक सेवाओंके लिये जागीरें दी जाती थीं। तकाशके समय बारचिनलिग कतके नियुक्त सेनापतिको रबात-तुगानीन इलाकेका एक प्रधान गाव दीवान-अद (सैनिक विभाग) की मार्फत मिला था। उसी सुल्तानके समय राज-राजा-यगान-दुग्दूको एक गाव नुखास-मिल्क (माफी) के तौरपर मिला था।

(२) मॉसे झगडा—

प्रेमीके मारे जानेके बाद भी राजमाताकी बातोको मुहम्मद मानता था। जब निजा-मुल्मुल्क मुहम्मद हरवीको वजीर पदसे हटाया गया, तो राजमाताके कहनेपर मुहम्मदने उसके पूर्व गुलाम सालेह-पुत्रको "नासिरुद्दीन" और "निजामुल्मुल्क" की पदवी देकर वजीर बनाया। राजमताहीके कहने पर अपने सब से छोटे पुत्र कुतुबुद्दीन उजलाग शाहको ख्वारेज्मशाहने अपना युवराज बनाया, क्योंकि उसकी मा राजमाताके कबीलेकी थी। बडे शाहजादे जलालुद्दीन मगूबिरतीको खुश करनेके लिये हिरात छोड सारा गोरी राज्य प्रदान किया। युवराजको ख्वारेज्म, खुरासान और माजन्दरानका शासन मिला था, किन्तु असली शासन-शक्ति तुर्कान खातूनके हाथमें थी।

फरवरी-मार्च १२१८ ई० में हिरातसे लौट कर सुल्तान नेशापोर पहुचा, तो उसे वजीर मुहम्मद सालेह-पुत्रकी अयोग्यताका पता लगा,। शाहने उसे पदसे हटाकर तुर्कान-खातूनकी ओर इशारा करते हुए कहा—"जा अपने उस्तादके दरवाजे पर।" दरबारमें आनेपर तुर्कान

खातूनने बडी तैयारीके साथ पदच्युत वजीरका स्वागत करवा उसे युवराजका वज़ीर नियुक्त किया। सुल्तानने जब अन्तर्वेदमें रहते यह बात सुनी, तो वह जल-भुन गया और उसने इज्जुद्दीन तुगरलको उक्त वज़ीरका सिर काटनेका हुकम देकर भेजा। तुर्कान खातूनने तुगरलको गिरफ्तार नही किया, लेकिन सारी सभाके सामने यह कहनेके लिये मजबूर किया, कि सुल्तानने स्वय निजामुल्मुल्कके पदकी स्वीकृति दे दी है। आखिर सुल्तान भी इसे मजूर करनेके लिये मजबूर हुआ। अपने शासित प्रदेशोमे तुर्कान खातूनकी चलती थी। सैनिक भी उसीके साथ थे। सैनिक वर्गकी मुखिया राजमाता थी।

निजामुल्मुल्कके हटानेके बाद अपने शासित प्रदेशोमे ख्वारेज्मशाहने कोई वज़ीर नियुक्त नही किया, बल्कि यह काम दरबारके ६ वकीलोको सुपुर्द कर दिया। उन्हीकी सबसम्मत रायसे काम चलाया जाता था। इन वकीलोमे एक अभिलेख (दफ्तर) दीवान का मुखिया था। यह कहना मुश्किल है, कि मुहम्मदके दिलमें क्यो ऐसा ख्याल आया, कि व्यक्तिकी जगह उसने एक परिषद्के हाथमें शासन-सूत्र देना पसन्द किया। पुराने समयसे चली आती नौकरशाही परम्पराके यह बिलकुल विरुद्ध था। अब्बासियोके समय जो राजनीतिक ढाचा पूर्वी मुसलिम जगत्में स्थापित किया गया था और जिसे उनमे ताहिरियो और सामानियोने स्वीकार करके और विकसित किया, उस व्यवस्थाको मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने बिलकुल तोड दिया। इसके कारण नौकरशाहीका मान हेठा हो गया।

राजमाता अपने जार मुल्ला मज्दुद्दीनकी हत्याको क्षमा नही कर सकती थी और मुल्ला-वर्ग भी अपने एक प्रसिद्ध मुल्लाके मरवाने और खलीफाका नाम खुतबासे निकलवा देनेके लिये नाराज था। काफिरोंके जुयेसे जिन लोगोको मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने स्वतत्र किया था, वह भी उसके शासनकी कठोरताके कारण विद्रोही बन गये थे, क्योकि उनको उसने बडी निर्दयतासे दबाया था। इस प्रकार शासन, उसके हरेक यत्र और जनताके हरेक वर्गमे अविश्वास पैदा हो गया था, और यह ऐसे समय जब कि तीनो कालका सबसे अधिक प्रतिभाशाली सगठनकर्ता चिंगिस खान सीमात पर आ पहुचा था।

ख्वारेज्मी वशका अवशिष्ट इतिहास अगले अध्याय में आयेगा।

स्रोत-ग्रन्थ

1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W W Bartold)
2 Heart of Asia (E D Ross)
३ किताबुल्-हिन्द (अबूरेहाँ अल्बेरूनी)
४ आर्खिग्रेक्तुर्निये पाम्यातिनिकि तुर्कमेनिइ (मास्को १९३९)
५ ओचेक इस्तोरिइ तुर्कमेन्स्कओ नरोदा (व० व० बरतोल्द, १९२४) (तारीख रशीदी, मिर्जा हैदर, अनुवादक E D Ross)
6 A History of Mongol of Central Asia

अध्याय ७

चिंगिस् खान (—१२२६)

मंगोल ऐसी भूमिके रहनेवाले थे, "जहा न शहर या कस्बा क्या[1] गाव भी नहीं के बराबर हैं। चारों ओर वृक्ष-वनस्पति-हीन बालूकी भूमि है। इस भूमिका शताश भी खेतीके योग्य नही है। बहुत थोडी सी जगहोको नदियोकी धारायें सिंचित करती है। यद्यपि पशुपालनके लिये इस भूमिके घासके मैदान बहुत अनुकूल है, लेकिन वहां भी कोई बडे वृक्ष नही दिखाई पडते। घोडेकी लीद और याकके कडेसे ही वहाके राजा और राजकुमार तक अपना भोजन पकाते है। आबोहवा बहुत ही कठोर है। गर्मियोंके मध्य में भी वहा ऐसे स्थान हैं, जहा भयकर तूफान और वर्षा आती, बिजलीसे कितने ही आदमी और पशू मारे जाते ह। इस समय भी भारी हिम-वर्षा हो जाती है। कभी कभी इतनी ठडी हवा चलती है, कि आदमी मुश्किलसे घोडेपर बैठ सकता है। ऐसे ही एक तूफानमें हम धरतीपर पड गये थे और उस धूलकी धुधमे कुछ नही देख पाते थे। वहा अक्सर एकाएक ओले पडने लगते हैं और असह्य गर्मीके बाद तुरन्त ही परले दर्जेकी सर्दी होने लगती है।" यह किसी आधुनिक यात्री या लेखकके वाक्य नहीं है, बल्कि चिंगिसके मरनेके थोडे ही समय बाद मगोलियामें पहुचे कैथलिक साधू कारपीनीका लेख है। मगोल लोगोंकी शकल-सूरत का अतिरंजित वर्णन एक लेखकने इस प्रकार किया है—"उनका चेहरा

३४ चिंगिस

बडा ही भयंकर और घृणोत्पादक होता है। जिसपर दाढ़ी-मूछका नामोनिशान केवल ऊपरी ओठो और ठुड्डीपर कुछ गिन लेने लायक बालोंके सिवाय नही मिलता। वह हर किस्मके जानवरोका मास खाते है, जिनमे घोडेका मास बहुत पसद करते है। जानवरको काटकर बिना नमकके ही उबाल लेते है, फिर उसके टुकडे करके नमकीन पानीमें डुबोकर खाते ह। कुछ लोग बैठकर भी खाते ह, नही तो प्राय खडे-खडे खा लेते है। भोजके समय स्वामी और सेवक एक समान भाग पाते है। उनका पेय कूमिस (एक प्रकारकी शराब) घोडीके दूध से बनाई जाती है

---

[1] Heart of Asia

जिसे वडे वडे वर्तनोमें से प्यालेमें डालकर आकाश और चारो दिशाओंके देवताओंकी ओर थोडा सा फेंक कर पीते है। पीनेके समय सरदार अपने सेवकको चखाकर प्याला मुहमें लगाता है। वह इच्छानुसार बीबिया रख सकते हैं, लेकिन व्यभिचार और चोरीके लिये मगोल मृत्यु-दण्ड देते थे। उनका उस समय कोई धम या धार्मिक रीति-रिवाज नही था। लाशको कई दिन रखकर जला देते और कभी कभी मृत पुरुषके हथियारो और सोने-चादीकी दूसरी चीजोके साथ कुछ दास-दासियोको मारकर उनके साथ गहरी कब्रोमे गाड देते। श्राद्ध या स्मारकके तौरपर मारे हुए घोडेकी खालमें भूसा भरकर किसी ऊची जगह या दरख्तपर टाग देते।

१ तैयारी

मगोलोकी यही अवस्था थी, जब कि उनमे १२ वी शताब्दीके मध्य (११६२ ई०) में पीछे चिंगिस खानके नामसे प्रसिद्ध तेमोचिन पैदा हुआ। उस समय उत्तरी चीनका शासक किन्-राजवश था, जो कि मचु जातिसे सबध रखता था। इसी किन्-वशने खिताइयोको भगाया था, इसे हम बतला आये हैं। मोकू ताता (मगोल तातार) कबीलेके खिलाफ किन् सम्राट्ने युद्ध घोपित किया था, फिर ११४७ ई० में उन्होने मगोल राजा औलो-बोतजिले कगान (कुतुला, कुतलक) से सुलह की। यही वश राज्य कर रहा था, जब कि ११६१ ई० में किन सम्राट् शी-चुङने मकू-तातारके विरुद्ध युद्ध-घोषणा की। इसके कुछ समय बाद बोइरनोर (सरोवर) के तातारोने मगोलोको बुरी तरहसे हराया। हम अनेक बार देख चुके है, कि घुमन्तुओकी पूर्ण पराजय और उनका उच्छेद एक बात नही है। उस शताब्दीके बीतते बीतते चीन सरकारने कराइतो और मगोलोको तातारोके विरुद्ध उभाडा। मगोलोंके पास इतनी शक्ति अब भी थी, कि किन्-सम्राट् उनकी सहायता चाहता था। इसी सबधमें तेमुचिनको पहिले-पहल आगे आनेका अवसर मिला। उसने मरुभूमिके सरदारोमेंसे चुनकर अपनी सेना बना युद्धमें भाग लिया। तातारोंपर विजय हुई और कराइतोका खान पूर्वी मगोलियामे प्रधान व्यक्ति माना जाने लगा। मगोल सेनाने अपने नेता तेमुचिनको कगान (खान) घोपित किया। कराइतोंके खान वाङखानने भी इसमें अपनी सहमति प्रकट की। तेमुचिनने खानकी उपाधि स्वीकृत करते इसी समय अपने कबीलेका नाम फिरसे मगोल रखना स्वीकार किया। कुतला कगानके बाद "मगोल" नाम लुप्त हो चुका था। मगोल शब्द चिंगिसके समय भी केवल सरकारी तौरसे इस्तेमाल होता था, साधारण लोग उससे अपरिचित थे। अब मगोल राजवशके सरकारी कागजोमें इसका प्रयोग होने लगा, जिससे चीनमें उन्हें मगोल कहा जाने लगा, लेकिन मगोलिया तथा वाहर अब भी ताता (तातार) ही इनका नाम था। "मगोल" नाम घोपित करते तेमूचिनने यह दिखलाना चाहा, कि मैं कुतलक कगानका उत्तराधिकारी हूं और उसी वीर कगानका रुधिर मेरी नसोंमे बह रहा है— यद्यपि ऐतिहासिक तौरसे यह दावा गलत था।

परपरा बतलाती है, कि इसी समय तेमुचिनने अपने १० दरबारी दरजे कायम किये—

१ कोरची—धनुप बाण ले चलनेवाले चार आदमी।
२ बाउरची—खाने-पीनेका निरीक्षण करनेवाले तीन आदमी।
३ अखताची—चरागाह के निरीक्षक।

४ तेरेगिन—गाडियोकी तैयारीका निरीक्षक एक आदमी, जिसे पीछे युतची भी कहा जाने लगा। यही बुढापेमे बुकाउल और बावरची होता।

५ चेरवी—घरके कारवारको देखनेवाला निरीक्षक एक आदमी।

६ चार आदमी तलवारोको लेकर चलनेवाले, जिनका मुखिया तेमुचिनका भाई जूची कसर था।

७ दो अख्ताची, जो कि घोडोकी शिक्षाके निरीक्षक थे, इनका मुखिया तेमुचिनका भाई विलगुतइ था।

८ तीन घोडोके चरागाहके निरीक्षक।

९ चार खोला, ओयरा, जो कि दूर या नजदीक वाणोमे गुप्त सदेश रखकर ले जाते थे।

१० परिषद्के रक्षक दो अमीर, जो कि खानके दाहिने बायें बैठते और उसे सलाह देते।

३५ मगोल महाशकट

यह परपरा कहा तक सच है,इसे नही कहा जा सकता, किन्तु १२०३ ई० तक तेमुचिनने अपने प्रतिहारी (केशिक) का सगठन निश्चय ही कर लिया था। अब तक वह कराइतो पर विजय प्राप्त करके सपूर्ण पूर्वी मगोलियाका स्वामी बन गया था। उस समय ७० आदमी दिनमें पहरा देते, जिन्हें तुर्गवुत कहते और ८० केब्तेवुत रातमे पहरा देते(एक वचन केब्तेवुर)। यह ओर दूसरे अधिकारी मिलकर केशिकतेन् (एक वचन केशिक) कहलाते। इन प्रतिहारोमें कोर्ची (धनुधर), बाउर्ची (रसोइया), एगूर्देची (द्वारपाल), अख्ताची (सवार) भी शामिल थे। खानके घरू प्रबन्धके अधिकारी ६ चेर्बी थे। इनके अतिरिक्त एक हजार बहादुर खानके

वैयक्तिक प्रतिहार थे। युद्धके समय यही हरावल गारदका काम करते और शान्तिके (वगातिर) समय दरबारके गारद बनकर रहते।

१२०६ ई० मे तेमूचिनने नैमन कबीलेको हराकर उनके राजा जमुकाको मारा। अब सारा मगोलिया उसके अधीन था। इसी समय तेमूचिन ने ९ सफेद चोटीवाला झडा खडा कर राजाके तौरपर आसन ग्रहण किया। यही समय है, जबकि उसने चिगिस कगान (खान) की पदवी धारण की, जिसका अथ है चक्रवर्ती राजा। चिगिसने अब फिरसे अपने गारदका सगठन किया। केब्तेवुत (रात्रि प्रतिहारो) की सख्या ८० से ८०० कर दी, जो पीछे १००० हो गई। कोर्ची भी बढाकर ४०० और पीछे १००० कर दिये गये। इसी तरह तुर्गेवुत (दिन-रक्षक) भी १००० हो गये। हजार बहादुरोके नमूनेपर छ हजार बहादुरोका गारद बनाया गया। ये सब मिलकर पीछे दस हजार हो गये। पहरे (कराउल) की चार बारिया मुकर्रिर की गईं। हरेक बारीमें तीन दिन-रात ड्यूटी देनी पडती। दस हजार प्रतिहारोमें भर्ती करानेके लिए हरेक साहसिक सेनापति अपने साथ अपने पुत्र, एक सबधी और दस साथीको भी लाता। दशिकका पुत्र और स्वतत्र मगोल आमतौरसे अपने साथ एक सबधी और तीन साथियोको भरती करानेके लिये लाता। घोषणा हो जाती, कि जो कोई गारद मे शामिल होना चाहता है, उसे कोई न रोके। चिगिसने ऐसा नियम बनाया था, कि सध्याके बाद कोई आदमी खानके तबूके पास फटक नही सकता था, बिना साथमें प्रतिहारके कोई खानके तबूमें प्रवेश नही कर सकता था। अगर नियम उल्लघन करके कोई भीतर आता, तो प्रहरी हथियार चला सकता। कौन से दिन कितने गारद ड्यूटी पर है, इसके बारेमें कोई पूछ नही सकता था। चिगिसका अनुशासन बडा ही सख्त था। ड्यूटीके दिन न आनेपर पहिली बार ३० कोडे मारे जाते, दूसरी बार ७० और तीसरी बार ३७ कोडे मारकर उसे निकाल दिया जाता। कप्तानोको भी ड्यूटीपर ठीकसे न आनेपर वही सजा दी जाती। जहा एक ओर गारदके सैनिको और कप्तानोका अनुशासन कडा था, वहा उनके विशेषाधिकार भी बहुत थे। खानके गारद के एक सिपाही का दर्जा सेनाके हजारी अफसरके बराबर था, युद्धमें असलग्न एक गारद १०० अफसरके बराबर माना जाता था। गारदके आदमीको सजा तब तक नही दी जा सकती थी, जब तक कि कमाडर उसके बारेमे खानसे पूछ नही लेता। अपने एक घनिष्ट साथी सुबुदे बगातिर (बहादुर) को एक अभियान पर भेजते समय चिगिसने हिदायत की थी—"जो कोई भी तुम्हारी आज्ञा माननेसे इन्कार करे, अगर वह मेरा परिचित है, तो उसे मेरे पास लाओ, यदि नही है, तो उसी जगह उसे मरवा डालो।"[1] खानका गारद उसी समय युद्धमें भाग लेता, जबकि खान भी उसमें सम्मिलित होता। शिविरमें खानके तबूके सामने मूल हजार बहादुर रक्खे जाते। कोर्ची और तुर्गेवुत दाहिनी ओर डेरा डालते और बाकी सात हजार बायी ओर। चिगिसके अधिकाश विख्यात सेनापति इन्ही दस हजार वाले गारद में से आये।

१ शासन, शिक्षा

कराइत और नैमानभी घुमतू कबीले थे, लेकिन वह मगोलोसे अधिक सस्कृत थे। मगोलो

---

[1] वही

को संस्कृत बनानेका काम पीछे इन्हीनेही किया। १२०३ ई० में चिंगिसके दरबारमें कितने ही मुसलिम व्यापारी आये। व्यापारके सिलसिलेमें मध्य-एसियाके लोग मुसलमानोंके शासनके पहिले से भी सुदूर उत्तरके घुमन्तुओमे जाया करते थे, इसलिए चिंगिसके दरबार में उनका पहुचना कोई अचरजकी बात नही थी। हो सकता है, कराइत और नैमन कबीलोंके अतिरिक्त इन मुसलमान व्यापारियोंके द्वारा भी चिंगिसको कुछ बाते मालूम हुई, जिससे प्रेरित होकर उसने अपने गारदका सगठन और शिक्षा-दीक्षाका प्रबन्ध किया। १२०६ ई० मे नैमनो पर विजय प्राप्त करनेसे पहिले चिंगिसके राज-काजमें अभी लिखित कार्यवाही नही होती थी। नैमन खानका मुद्राधर उइगुर ताशा-तुन था, जिसे विजयके बाद चिंगिसने वही काम सुपुर्द किया। उसी के जिम्मे चिंगिस ने अपने पुत्रोंको उइगुर अक्षर सिखानेका भी काम दिया। चिंगिसकी दो मुहरें (मुद्रायें) थी, जिनमेंसे एक का नाम अल-तमगा (रक्त-मुद्रा) और दूसरीका नाम कोक-तमगा (नील-मुद्रा) था। दोनो नाम तुर्की भाषाके हैं। नील तमगाका प्रयोग खान अपने परिवारके लिये पत्र लिखते समय करता। १२०६ के बाद चिंगिसके राज्य प्रबन्धने नया रूप लिया, जबकि दफ्तर और दूसरे असैनिक पदोंकी व्यवस्था की गई।

मगोलोंके प्रथम शिक्षक और राजकर्मचारी उइगुर थे। उइगुरोंके बारेमें हम कह आये है, कि वह बहुत पहिले ही सुसंस्कृत हो चुके थे और बौद्ध धर्मके गहरे प्रभावमें आये थे। जब चिंगिसका राज्य चीन और मुसलिम देशोंमें फैला, तब भी दरबार और दफ्तरमें उइगुरोकी ही प्रधानता रही। उइगुरोने स्वय चीन, भारत, तुर्किस्तान आदि देशोंके बौद्ध, मानी और नेस्तोरी प्रचारकों द्वारा शिक्षा प्राप्त की थी। मगोलोंके गुरु इस प्रकार उइगुर हुए। उइगुरोंके बारेमें इतिहासकार औफीने लिखा है—"कराखिताइयो और उइगुरोंमें कुछ लोग सूर्यकी पूजा करते हैं, कुछ ईसाई हैं, यहूदी छोड बाकी सभी धर्मोंके अनुयायी उनमें पाये जाते हैं। " उसने यह भी लिखा है, कि उइगुर लोग शान्तिप्रिय होते हैं, उनमें योद्धाके गुण नही हैं। उइगुरा और कराखिताइयोमें बौद्धोंकी अधिक संख्या थी। मगोल राज्यमें लेखक या राजकर्मचारीको बख्शी कहा जाने लगा, जिसका कारण यही था, कि पहिले वे अधिकतर उइगुर भिक्षु होते थे। भिक्षुका उच्चारण आज भी मगोल भाषामें बख्शी है। उक्त लेखकने लिखा है, कि प्रार्थना करते वक्त उइगुर अपने मुहको उत्तरकी ओर रखते है और हाथ जोडकर जमीन पर पडे दोनो हाथो पर अपने ललाटको रखते है। यह निश्चय ही बौद्धोंके नमस्कारका ढग है, जिसे आज भी सिहल, बर्मा, स्याम में देखा जा सकता है। भिक्षुओकी इतनी प्रधानता ही बतलाती है, कि उइगुरोमें बौद्धोकी अधिकता थी, जिसके ही कारण जल्दी ही बौद्ध धर्म मगोलोका जातीय धर्म बन गया, और अबतक है। मुसलिम इतिहासकारोने लिखा है—"उइगुरोंके मदिरोमे मरे आदमियोकी मूर्तिया होती थी। वह पूजाके समय घटीका उपयोग करते थे। युरोपीय यात्री रुब्रिक (१२५१ ई०) ने उनके मत्रोंमें "ओ मणि पद्मे हु" को भी उद्धृत किया है। चीनी पर्यटक चाङ्चुङ्के अनुसार उइगुर बौद्ध भिक्षु लाल कपडा पहनते थे। वर्तमान मगोलोंकी तरह उइगुर भी अपनी धर्म-पुस्तकको नोमे कहते थे। यह ग्रीक शब्द शायद सिरियासे मानीके अनुयायियो द्वारा मध्य-एसिया पहुचा। उइगुर बौद्धो और ईसाइयोमें आपसी प्रतिद्वन्द्विता नही थी। उइगुर ईसाई चिह्नने बौद्धोंकी करलुकासे रक्षा की थी, क्योंकि वह उइगुर थे। बौद्ध और ईसाई दोनो ही प्रकारके उइगुर मुसलमानोंके सख्त दुश्मन थे। मगोल भाषामें

लिये उइगुर लिपिका इस्तेमाल करनेका एक फल यह हुआ, कि मगोलोके जितने पारपरिक नियम (यासा) थे, उन्हे तथा चिगिस खानके वाक्यो (विलिक) को लेखवद्ध करके जमा किया जाने लगा। वहुत समय तक ये अभिलेख मगोल सम्राटोंके लिये सर्वोच्च प्रमाण रहे। सवसे पहिले चिगिसके दत्तक पुत्र शीकी कुतुकू नोयोनने नई लिपि लिखना-पढना सीखा। चिगिसने उसे आज्ञा दी—"मै तुझे चोरी और जालसाजीके मामलोमे न्याय और दण्ड देनेके कामपर नियुक्त करता हू। जो कोई मृत्यु-दण्डके योग्य हो, उसे मृत्युका दण्ड दे, जो कोई सजाका अधिकारी हो, उसे सजा दे। लोगोमें सम्पत्तिके बटवारेका जो मामला हो, उसका तू फैसला कर, काले तख्ते पर अपने निणयको लिख, जिसमें कि आगे चलकर दूसरे उसे वदल न सके।" पीछे यासाका सरक्षक चिगिसका द्वितीय पुत्र जगतइ (चगताई) हुआ।

किसी भी जिलेका असैनिक प्रवन्धक मुखिया दैसी कहा जाता था। जूचीके भी दैसी (दस हजारी) होते थे और कराखिताई कमाण्डरके भी दैसी थे। सैनिक तथा शासन विभागोंके सगठन के समय एक पद "विकी" का भी होता था। चिगिस खान मरते समय तक भूतपूजक (शमनी) रहा, इसीलिए उसने विकी (शमन) का पद कायम किया। वारिन कवीलेके वृद्धतम पुरुप को विकी नियुक्त करते समय चिगिसने आज्ञा दी थी—"तू सफेद घोडेपर चढ, सफेद पोशाक पहन, और जन-साधारण में सबसे ऊचे स्थानपर बैठ। अच्छा वप और महीना चुन और निणयके अनुसार प्रजाको सम्मान और आज्ञानुवर्त्तन करने दे।"

घुमन्तुओके रवाजके मुताविक चिगिसके भी राज्यमे राजकुमारो और राज-सवधियोको अपने अपने शासन-क्षेत्र मिलते थे। १२०७ और १२०८ ई० में खानने जगली जातियोको जीता। इनका प्रदेश सालिगा और येनीसेइके बीचमें येनीसेइकी उपत्यकामे था। सिविर-जातिकी भूमिसे लेकर दक्षिण तटके जगलो तक रहनेवाली जातियोका शासक पिताकी ओरसे ज्येष्ठ पुत्र जूची नियुक्त हुआ। सवसे वडा पुत्र होनेसे उसे सवसे दूरका इलाका मिला। साम्राज्य के वढ़नेपर जूची और उसके ज्येष्ठ पुत्रको उत्तर-पश्चिमके सीमान्तके इलाके मिले। इतिहासकार रशीदुद्दीनके अनुसार जूची का मुर्त (उर्दू) इर्तिश नदीके आसपास रहता था।

२. ख्वारेज्मशाहसे वैमनस्य[1]

१२०७ ई० के वाद कुछ वप तैयारीके थे। १२११ ई० में मंगोल सेनाने जहा चीनकी ओर पैर बढ़ाना शुरू किया, वहा इसी समय पश्चिममें सप्तनद भूमिमें भी पहुचकर उत्तरी सप्त-नदको मगोल साम्राज्यमें मिला लिया,यह हम पहिले वतला चुके हैं। चीनमें फस जानेके कारण पश्चिमकी ओरका वढ़ाव थोडे समयके लिये रुक गया। लेकिन नैमन और मरगित कवी-लोको—जो मगोलोंके डरसे पश्चिमकी ओर भगे थे—सास लेने देना मगोल पसन्द नही करते थे। १२१५ ई० में पेकिङ-विजयके साथ प्राय सारा उत्तरी चीन चिगिसके हाथमे आ गया। मुहम्मद ख्वारेज्मशाह भी चीन-विजयका स्वप्न देख रहा था। अपने समकालीनोकी तरह भूगोलका ज्ञान उसे स्पष्ट नही था, इसलिये चीनकी शक्ति और विस्तारका पता ख्वारेज्मशाहको कैसे लग सकता था? लेकिन जव उसे चीनके विजयका पता लगा, तो विशेप जानकारीके लिये उसने चिगिसके पास वहाउद्दीन राजीको अपना दूत बनाकर भेजा। वहाउद्दीन चीनमे जा चिगिससे मिला। किन्-सम्राट् स्वान्-चुङका पुत्र मगोलोका वन्दी था। वहाउद्दीनने अपनी आखो चारो

और युद्धकी भयकर ध्वसलीला देखी। मारे गये लोगोकी हड्डिया पहाडकी तरह ढेर की हुई थीं, मनुष्यकी चर्बीसे घास चिपचिपी हो गई थी। सडती हुई लाशोंसे निकलती दुर्गंधके कारण वहा-उद्दीनके कुछ साथी बीमार होकर मर गये। पेकिङ्के दरवाजेपर हड्डियोका भारी ढेर लगा हुआ था। वहाउद्दीनने सुना, जिस दिन राजधानी पर मगोलोका अधिकार हुआ, उस दिन साठ हजार लडकियोने शत्रुओंके हाथमें न पडनेके डरसे नगर-प्राकारसे कूदकर प्राण दे दिये। चिगिसने दूतका वडे सत्कारके साथ स्वागत किया और कहा—मैं ख्वारेज्मशाहको पश्चिमका वादशाह मानता हू और अपनेको पूर्वका। मैं चाहता हू कि हम दोनो सुलह और दोस्ती से रहें और व्यापारी एक राज्यसे दूसरे राज्यमें स्वतत्रता-पूवक यात्रा करे। अभी चिगिसको सारी दुनियाका वादशाह वननेका स्वप्न नही आया था। यह हम जानते ही है, कि मगोलोंसे वहुत पहिले उनके पूवज हूण तथा छठी सदीके तुर्क भी उभय-मध्यएसियाके स्थायी शासक रहे। मगोल व्यापारके महत्वसे अपरिचित नही थे। येनीसेइ नदीके उत्तरी पहाडोंसे वहुत सा अनाज मगोलिया जाता था, जिसके वदलेमे उन्हें चमडा और दूसरी चीजें मिलती थी। ये व्यापारी उइगुर और मुसलमान होते थे। ख्वारेज्मशाह व्यापारके लिये उतना उत्सुक नही था। वह यही जानना चाहता था, कि उसके प्रतिद्वन्द्वीकी शक्ति कितनी है।

व्यापार चीनसे रूस तक होता था। इसमें शक नही, उसमे वहुत नफा था, लेकिन खतरा भी अधिक था। उधारपर दिये मालके डूब जानेका डर था, राज्य-विप्लवसे भी हर वक्त हानि की सभावना रहती थी। एक समय यदि अधिक लाभ होनेके कारण व्यापारी हाथ पैर वढ़ाते, तो दूसरे ही समय भारी हानि उठानेकी नौवत भी आ जाती। त्रेवेजेन्द यूनान और रूसके व्यापारका केन्द्रीय वन्दरगाह था। जव सल्जूकी सुल्तानने उसपर आक्रमण किया, तो उसके कारण वहाके व्यापारियो—जिनमें अधिकाश मुसलमान थे—को वहुत हानि उठानी पडी। उसी तरह १२०९ ई० मे करा-खिताइयों और ख्वारेज्मशाहके वीच जव सुलह हो गई, तो तुरन्त ही वडे वडे कारवा चल पडे। इन्हीके साथ कवि शेख सादी काशगर पहुचे थे। मुसलिम राज्योके व्यापारी उत्तरी रास्ते से मगोलिया और चीन गये, क्योंकि दक्षिणमें उन्हे कुचलुक से भय था। ओर्मुज और किश के वन्दरोंके वीचमें झगडा उठ खडा हुआ था, इसीलिए इस समय चीनका सामुद्रिक मार्ग वन्द हो गया था। वहाउद्दीनके साथ व्यापारियो का कारवां भी था, जिनमें अहमद खोजन्दी, अमीर हुसैन-पुत्र और अहमद वालचिच भी थे। वह अपने साथ जरवफ्त (जरदोजी), सूती और जन्दानी कपडेको लेकर गये थे। १०–२० दीनारकी चीजके लिये तीन सोने के वालिश (एक वालिश पचहत्तर दीनार) मागे। चिगिसने नाराज होकर कहा कि उर्दूसे लाकर ऐसी चीजोको दिखलाओ, जिसमे इस व्यापारी को मालूम हो, कि हमारे लिये यह नयी चीज नही है। उसके वाद उसने वालचिच का सारा माल लुटवा लिया। यह देखकर खोजेन्दीने दाम कहने मे इन्कार करते हुये कहा—"मैं यह सव चीजें खान की भेंट के लिये लाया हू।" खानका दिल कुछ नरम पडा और उसने उसके सुनहरी धारीवाले मालपर प्रतिथान एक सुनहरी वालिश सूती थानपर एक चादीकी वालिश देने का हुकम दिया। फिर वालचिचका भी वही दाम दिलवा दिया। उस समय मगोलोंने मुसलमानोंके साथ वहुत महानुभूति और सम्मान दिखलाते हुये, उन्हें सफेद नमदेके तम्बू मे टिकाया। पीछे अपने कडुवे तजुर्वे के कारण मगोलोंने अनेकवार मुसलमानो के साथ वडी निष्ठुरता दिखलायी।

ख्वारेज्मशाहके दूतके जवाबमें चिंगिसने भी अपना दूत भेजा, जिसके साथ व्यापारियोंका एक कारवाँ भी था। इस दूत-मडलके मुखिया थे महमूद (ख्वारेज्म), अली ख्वाजा (बुखारा) यूसुफ कका (उतरार)। भेट की चीजे थी—चीनके पहाडोंसे निकला सोनेका एक डला, जोकि ऊटके कोहानके बराबर था और गाडीपर लादकर भेजा गया था, बहुमूल्य धातु, अकीक (जेड पत्थर) के टुकडे, खुतूनू (वलरस) की सीगे, कस्तूरी, ऊटके ऊनसे बना कपडा तर्गू। दूतोने ख्वारेज्मशाहसे कहा—"हमारे खानने आपके पराक्रम और विजयोंके बारेमें सुना है। वह चाहते है कि आपके साथ शान्तिकी सधि करें और आपको अपने सर्वप्रिय पुत्रोंके बराबर मानें। उन्हे विश्वास है, ख्वारेज्मशाहने भी मगोलो के विजयोको, विशेषकर चीन-विजय, और विजित देशोंकी सपत्तिके बारेमें सुना होगा, इसलिये दोनो राज्यो के बीचमें शान्ति और सुरक्षित व्यापारिक सपर्क की स्थापना दोनो के लिये लाभदायक होगी।" ख्वारेज्मशाहने खुले दरबारमे क्या जवाब दिया, इसे इतिहासकारोने नही लिखा। पीछे उसने महमूद ख्वारेज्मीको एकान्तमे बुलाकर कहा—"ख्वारेज्मी होनेके कारण पहिले तुम्हें अपने देशके हितका ध्यान होना चाहिये। तुम मुझसे सच्ची सच्ची बातें कह दो, फिर जाकर मेरे गुप्तचर बन खानके दरबारमें रहो।" ख्वारेज्मशाहने उसे एक बहुमूल्य रत्न इनाम देनेका वचन दिया, फिर यह भी पूछा—"क्या यह बात सच है, कि तमगाचकी नगरी (पेकिङ) पर चिंगिसका दखल हो गया ?" दूतके हा कहनेपर मुहम्मदने कहा—"उस काफिरको मुझे पुत्र कहने का हक नही है।" महमूदने सुल्तानके गुस्से के डरसे जब कह दिया कि चिंगिसकी सेना आपकी सेनाके बराबर नही है। तब ख्वारेज्मशाहने चिंगिसके साथ सधि करनेकी स्वीकृति दी।

दूत-मडलके प्रस्थान-समय के आस-पास ही मगोलिया से व्यापारिक कारवा चला। जब वह ख्वारेज्म राज्यके सीमान्त नगर उतरारमें पहुचा, उसी समय चिंगिसका दूत-मडल लौट रहा था। कारवामें चार व्यापारी थे—उमर ख्वाजा उतरारी, हम्माल मरागी, फखरुद्दीन दीज़की बुखारी और अमीनुद्दीन हरावी। कारवामे कुल ४५० आदमी थे, जो सभी मुसलमान थे। सोना, चादी, ताबा, चीनी, रेशम, तर्गू, समूर आदि माल पाच सौ ऊटोपर लदा था। उतरारका शासक इनालचिक काइर खान (इनाल खान) तुर्कान खातून का सबधी सुल्तानके मामाका पुत्र था। उसने गुप्तचर कहकर कारवा को रोक लिया, फिर सबको मरवा दिया। इस हत्याके कई कारण बतलाये जाते हैं—कहा जाता है, कारवा मे एक हिन्दू भी था, जो पहिले से इनाल खानको जानता था, इसलिये उसने बिना आदाब किये बडी घनिष्ठता दिखलाते इनालको सबोधित किया, जिससे वह नाराज हो गया। कोई कहते हैं, कि उसे इस धनी कारवाको लूटनेका लालच हो गया और अपने झूठे सदेहको सुल्तानके पास लिख भेजा, जिसके ही हुकमपर कत्ल करवाया। ४५० मेंसे केवल एक आदमी जान बचाकर भाग सका। उसने जाकर यह भयकर समाचार चिंगिस खानको सुनाया। चिंगिस बडी ही धीर-गभीर प्रकृतिका आदमी था। भारी उत्तेजनापूर्ण परिस्थितियोमें भी वह आत्मसयम कर सकता था, जिसका प्रमाण उसने इस समय दिया। उसने तकाशके एक सेवकके पुत्र कफराज बुगराको दो तातारो (मगोलो) के साथ ख्वारेज्मशाहके पास इस दुष्कृत्यके प्रति विरोध प्रकट करनेके लिये भेजा और माग की कि इनालचिकको दण्ड देनेके लिये हमारे हाथमें दे दो। ख्वारेज्मशाहने दूतोंसे मिलनेसे ही इन्कार कर दिया, बल्कि उन्हे भी मार डालनेका हुक्म दिया। कफराजको कतल करा उसके साथियोकी दाढ़ी मुडवाकर छोड दिया

गया। अब चिंगिस अपने पश्चिमाभिमुख अभियानको कैसे रोक सकता था? प्रभावशाली मुसलमान सलाहकारोने शाहको बहुत समझाया, कि चिंगिस ख्वारेज्म-साम्राज्यके साथ अच्छा संबध स्थापित करना चाहता है, वह कोई बडा कदम उठाना नही चाहता। "बेटा" कहकर वह अपमान नही बल्कि अधिक प्रेम प्रकट करना चाहता था।

इसम शक नही, बगदाद, अफगानिस्तान और सारे अन्तर्वेदके स्वामी ख्वारेज्मशाहकी भी धाक चिंगिसपर थी। व्यापारिक हितोंके लिये यही बात अनुकूल थी, कि ख्वारेज्मशाहसे सुलह की जाय, क्योंकि उसने कुचलुकके साथके अपने युद्धोंके समय ही व्यापार, पथको बन्द कर दिया था।

ख्वारेज्मशाहके ऊपर चिंगिस तब तक प्रहार नही कर सकता था, जब तक कि कराखिताई राज्यके स्वामी कुचलुकको समाप्त नही कर दे। कुचलुक उस वशका भगोडा राजकुमार था, जिसे खतम करके चिंगिसने अखड मगोलियाका शासन अपने हाथमे लिया था। चिंगिसको मौका मिल गया, जबकि इलिके राजा बुजार (जू चीके दामाद) पर शिकार करते वक्त एकाएक आक्रमण करके कुचलुकने उसे बन्दी बना लिया। मगोल सेनाके आनेके डरसे ही कुचलुक वहासे हटा, लेकिन बुजारको मार कर। मगोल सेनापति जेबे नोयनने उसके पुत्र सुग्नाग तगिनको गद्दीपर बैठाया और बुजारकी लडकी उलुक खातूनको चिंगिसके लिये ले लिया। मगोल सेना कुल्जाके रास्ते आगे बढ़ सप्तनद होते काशगर पहुची। कुचलुकने तरिम-उपत्यकाके मुसलमानोपर बहुत अत्याचार किये थे, इसलिये वहाके लोगोने मगोलोका मुक्तिदाताके तौरपर स्वागत किया। कुचलुक वहासे भाग निकला, लेकिन सरीकुलमें मारा गया। जेबने कुचलुकका सिर कटवा मगाया। इस प्रकार जिसकी प्रबल शक्ति ख्वारेज्मशाहके लिये एक बडे सिर ददका कारण थी, उसे अ-प्रयास ही मगोलोंके एक सेनापतिने खतम कर दिया। लेकिन इससे ख्वारेज्मशाहका सिर दद कम नही हो सकता था, क्योंकि अब एक दुर्धर्ष तथा पहिलेसे शत्रु बनाया चिंगिस उसके दरवाजेपर ताल ठोक रहा था। मुहम्मद अपनेको इस्लामका सुल्तान कहता था, लेकिन उसीने मुसलमानोकी निष्ठुर हत्या करवाई, जब कि चिंगिसके भेजे हुए दूत-मडलके चार सौ पचास मुसलमानोमेंसे सिर्फ एक उसके हाथसे बचकर निकल पाया। ऐसी स्थितिमें उसे मुसलमान कैसे इस्लामका जहादी मान सकते थे?

४ अभियान

चिंगिसने जल्दी नही की—"रिपु-रुज-पावक-पाप, इनहि न गनिये छोट करि"। उसने ख्वारेज्मशाहकी शक्तिको कम नही बल्कि बहुत बढ़ा-चढ़ाकर आका, इसीलिये खास तैयारी किये बिना अभियान करना पसद नही किया। इस अभियानमें वह अपने सारे पुत्रो तथा प्रधान-सेनापतियोंके साथ स्वय शामिल हुआ। मगोलियासे चलकर १२१९ ई० की गर्मिया का उसने इर्तिश नदीके तटपर बिताया। पतझडके समय उसकी यात्रा शुरू हुई। चिंगिस कयालिगके अत्यत सुदर मैदानमें डेरा डाले हुए था, वही अलमालिगका स्वामी सुग्नाग तगिन उइगुर इदिकुत (राजा) बार्चुक, और स्थानीय करलुकाका राजा अरसलन खान उसमे आ मिले। सेनाकी सख्या डेढ़-दो लाखके करीब थी। चीन और हिया (तगुत)पर अभी पूरी तौरसे विजय नही हो पायी थी, इसलिये वहाके लिये काफी मगोल सेना छोडनी पडी थी। इसमें शक

नही, ख्वारेज्मशाह्की सेना इससे भी ज्यादा थी, लेकिन जैसा कि हम वतला चुके हैं, वहा घरमें ही राजमाता तुर्कान खातून और उसकी पक्षपातिनी वहुत सी भाडेकी तुर्क सेना ख्वारेजमशाह्से बिगडी हुई थी, जिससे उसको बराबर विश्वासघातका डर लगा रहता था। शहाबुद्दीन खीवगीने शाह्को सलाह् दी थी, कि सिर-दरियाके पार मोर्चा लगाकर चिंगिसके आक्रमणकी प्रतीक्षा करनी चाहिये। उसने समझा, कि इतनी दूर तक आनेमें मगोल सेना काफी थकी-मादी तथा अपने केन्द्र से बहुत दूर होगी, इसलिये लडनेमें सुभीता रहेगा। लेकिन मगोल सेना किसी दूसरी ही धातु की वनी थी। मगोल सेना मुख्यत सवार-सेना थी। एक मगोलके लिये जहा उसका घोडा यात्राका शीघ्रगामी साधन, युद्धका अच्छा वाहन था, वहा खानेकी कोई चीज न मिलनेपर घोडेके पैरकी नसमें छेद करके उसके खूनसे वह् अपनी भूख भी शान्त कर सकता था। ऐसे सैनिकोसे लडना आसान काम नही था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाह्का ख्याल था पहिले सिर-दरिया पर मुकाविला करें, फिर अन्तर्वेदमें पग-पग पर लोहा लें। लेकिन, वह होने नही पाया। वक्षु पार, हिन्दूकुश पार, गजनी या हिन्दुस्तान (पजाव) तक लडनेका मसूवा धरा ही रह गया। सिर-नदसे भागकर वह् समरकन्द आया। नगर-प्राकार वनानेका तीन सालका प्रोग्राम था, लेकिन १२ फरवरी (१२१९) को जव मगोल सेनायें वहा पहुची, तो अभी काम शुरू भी नही हुआ था। किलेकी खाईं वनानेकी वात सुनकर मुहम्मदने कहा—"मगोल अपने घोडोको फेंक कर इसको पाट सकते हैं।" वहासे भी बिना लडे ही वह वक्षुके तटपर गया। एक दिन उसके तम्बूपर वाण लगे पाये गये। यह अपने लोगोका काम था। ऐसी स्थितिमें ख्वारेज्मशाह् चिंगिस जैसे प्रवल शत्रुसे लडनेकी हिम्मत कैसे करता? १२२० का वसन्त आ गया, लेकिन अभी भी इस्लामके नामपर भरती की गई सुल्तानकी नव-सगठित सेना एकत्रित नही हो पायी। पहिले की सेना अधिकतर तुर्कोंकी थी, जिसपर माके पक्षपाती सेनापतियोंके विरोधी होनेके कारण विश्वास नही किया जा सकता था।

५ अन्तर्वेद-विजय

सितम्वर १२१९ में चिंगिसने उतरारके करीब पहुचकर योजनाके अनुसार अपनी सेनाको निम्न प्रकार वाट दिया—

(१) एक वाहिनी, जिसमे उइगुर भी थे, उतरारके लिये छोड दी। (२) दूसरी वाहिनी जूचीके नेतृत्वमें निम्न सिर-दरियाकी ओर, (३) पाच हजारकी एक छोटी वाहिनी सिरके ऊपर अवस्थित वानाकत और खोजन्दकी ओर भेजी, (४) चौथी वाहिनीको अपने लडके तूलुयके साथ लेकर चिंगिसने सुल्तानकी सेनाके रास्तेको वीचसे काटनेके लिये बुखाराकी ओर प्रस्थान किया। उतरार के पतनके पहिले ही शफी अकरा की ओरसे वदरुद्दीन अमीद चिंगिसकी तरफ हो गया। उसके पिता और चचा उतरारके काजी थे, जिन्हे सुल्तानने उतरार-विजय करते समय कत्ल करवा दिया था। वदरुद्दीनने ख्वारेज्मशाह्के भीतरी झगडों तथा सेना आदिकी सारी वाते मगोलोको वतला दी। ख्वारेज्मशाहने मुसलमान काजियोंको कतल करके मुसलिम व्यापारियो तक को अपना विरोधी वना लिया था। ये सभी चिंगिसके पक्षमें प्रचार करते तथा सभी भेद वतलाते थे। चिंगिस आजन्म अनपढ रहा। वह् एक विलकुल ही पिछडे हुए कवीलेमें पैदा हुआ था, लेकिन उसकी प्रतिभाका लोहा सारी दुनिया मानती है। उसकी विजयोंके सामने कुरव,

दारयवहु और सिकन्दर ही नही वल्कि नेपोलियन और हिटलर भी बच्चे मालूम होते है। यह हम उसके विजय-क्षेत्रको देखकर कह सकते है। बिना पक्की योजना बनाये और उसे ठीक तौरसे काममें लाये चिंगिस आगे नहीं बढता था। सिर नदी शायद इस समय जमी हुई थी, इसलिये उस महानद को पार करनेमें चिंगिसकी सेनाको दिक्कत नहीं हुई। एक मंजिल पर जरनूक का किला आया। निवासियोंके पास हाजिब दानिशमन्दको भेजकर कहवा दिया, कि तुम्हारे धन और प्राणको कोई हाथ नहीं लगायेगा। किला और निवासियोने बिना लडे ही आत्मसमर्पण कर दिया। मगोलोने अपने वचनका पूरी तौरसे पालन किया। किलेको तोडकर उसी इलाकेके जवानोकी उसने एक वाहिनी सगठित की, जो मुहासिरे (घिरावे) के काममें सहायता करती। मगोलोने शहरका नाम कुतलुकवालिक (सौभाग्य नगर) रख दिया। जरनुकमें ही तुर्कमान भी आ मिले, और उन्होने बुखाराका एक नया रास्ता बतलाकर चिंगिसको गुप्त मार्ग जनवरी १२२० ई० में नूर पहुंचा दिया। बीच मे निर्जल क्जिजिल्-कुमकी मरुभूमि है, लेकिन वहा कारवाका रास्ता मौजूद था। नहर खराब नहीं हुई थी, बालूकी भूमि जहा कम पडती थी, वहासे सेना पार हुई। हरावलका सेनापति ताइर बहादुर था। नूरके बागोंमें वह रातके समय पहुंचे। जाडोंके कारण पत्ते झड गये थे, इसलिये वृक्ष सूखेसे मालूम होते थे। तायरने नगर-प्राकारको लाघनेके लिये सीढी बनानेके वास्ते वृक्षो को काटनेका हुकम दिया। शहरवालोने समझा, शायद विदेशी व्यापारी आकर डेरा डाल रहे है। उन्हे ख्याल नही था, कि चिंगिस सेना मरुभूमिका रास्ता पकडेगी। जब पूरी एक वाहिनी (डिवीजन) आ पहुची, तब उन्हे गल्ती मालूम हुई। चिंगिसने सुबुदायके हाथमें आत्म-समर्पण करनेके लिये दूत भेजा था। नगर निवासियोंके लिए दूसरा चारा नहीं था। मगोलोने उन्हें खाद्यसामग्री, खेतीका सामान और पशुओको लेकर बाहर चले जानेका हुकुम दिया। चिंगिसकी सेनामें कितनी व्यवस्था और अनुशासन था, इसका यह प्रमाण था, कि मगोल सेनाने निवासियोंसे साल भरका कर—पन्द्रह सौ दीनार—भर वसूल किया। यह नगरके लिये कुछ नहीं था। आधी रकम तो स्त्रियोंके कानकी बालियोंसे ही निकल आई। स्थानीय अमीरके पुत्र इल्-ख्वाजाके साठ आदमी कामके लिये भरती किये गये, जिन्होने दबूसियाके मुहासिरेके समय काम किया।

फरवरीमें चिंगिस बुखारा पहुच गया। वहा ख्वारेज्मशाहकी बीस या तीस हजार सेना (जिसमे बारह हजार सवार थे) सेनापति इख्तियारुद्दीन कुतलू और इनचखान आगुल् हाजिबके अधीन तैयार थी। दूसरे सेनापतियोंमें कराखिताइयोका बन्दी हमीदपूर और सुयुन्च खानभी थे। तीन दिनके मुहासिरेके बाद इनच घिरावेकी पाती तोडकर निकल भागा। मगोलोने उसका पीछा किया और बहुत थोडे आदमियोंके साथ वह वक्षु पार होनेमे समर्थ हुआ। हमीदपूर युद्धमें काम आया। प्रतिरक्षियोने साथ छोड दिया, फिर बुखारा-निवासियोंका आत्मसमर्पणके सिवाय कोई रास्ता नहीं रह गया। काजी बदरुद्दीन के नेतृत्वमे नागरिकोका एक प्रतिनिधिमण्डल भेजा गया, और १० (या १६) फरवरी का मगोल बुखारा नगरमे दाखिल हुए। किलेके चार सौ प्रतिरक्षी १२ दिनो तक और डटे रहे। इनमे चिंगिस द्वारा पराजित गुरखान का भी था, जिसने बडी बहादुरी दिखलायी। सुल्तानके लिये जा रसद ढोई जा रही थी, उसे नागरिकोने मगोलोको दे मट्टी डालकर किलेकी खाईको पाट दिया। किला सर होनेपर वहाकी सारी सेनाको मगोलोने मार डाला। उनगरमें चिंगिसके सवारी हुए ...

चादी लूटी गई थी, उसे धनी व्यापारियोंने लौटा दिया। मगोलोंके हुकम पर नागरिक केवल अपने शरीरपर के कपडोंके साथ बाहर निकल गये। उनके प्राण छोड दिये गये, किन्तु विना प्रतिरोध आत्मसमर्पण न करनेके दण्डमे विजयी सेनाने उनकी सपत्तिको लूटा और जो शहरसे बाहर नही निकले थे, उन्हे मार डाला। इमाम जलालुद्दीन अली हसन (हुसैन)-पुत्र जन्दीने अपनी आखो मस्जिदोंको लुटते और कुरानके पन्नोंको घोडोकी टापोंके नीचे रौदे जाते देखा था। इमामजादा रुकुनुद्दीन उस समय बुखाराके सबसे बडे विद्वान् थे। उन्होने अली हुसैन-पुत्रको क्रोध प्रकट करते देखकर कहा—"चुप रहो, अल्लाके क्रोधका तूफान आया है, तिनकेको कुछ कहनेका अधिकार नही है।" लेकिन जब मगोलोने वन्दियो और स्त्रियोंके साथ क्रूरता दिखलानी शुरू की, तो इमामजादा और उसके पुत्रोंने उसमें बाधा देनी चाही, जिसपर वह मार डाले गये। चिगिसने एक बडी मस्जिदमें लोगोको जमा करवाया, फिर कोई कुछ कर न बैठे इसका विना कुछ ख्याल किये। निधडक घोडेपर चढ़ा वह मस्जिदके भीतर चला गया,[1] उसने घोडेपर से ही कहा —"लोगोंके पापोंके दड केलिये अल्लाके क्रोधके रूपमे मैं भेजा गया हू।" चिगिसने नगरके मुखियो और वृद्धोका नाम वतलानेके लिये कहा, फिर उन्हे बुलाकर पैसे और दूसरी चीजोकी माग पेश की। चिगिस बुखारामें केवल दो घटे रहा। लूटके बाद मगोलोने शहरको जला दिया। ईटकी बनी इमारते जामा मस्जिद तथा कुछ महल बच पाये। यह भी कहा जाता है कि, शहरमें आग जान-बूझकर नही लगाई गई। यह ठीक भी है, क्योंकि चिगिस अपनेको लुटेरा नही बल्कि स्थायी विजेता-शासक समझता था।

बुखारासे जब मगोल सेना समरकन्दकी ओर जाने लगी, तो वह अपने साथ भारी सख्यामें लोगोको वन्दी बनाकर ले गई। मगोल सैनिक घोडोपर थे, और अभागे वन्दी पीछे-पीछे पैदल चल रहे थे। यदि कोई वदी थक कर गिर पडता, तो वह उसे मार डालते। अपनी साधारण नीतिके अनुसार मगोल किसानोको पकडकर उनसे मिट्टी खोदने, खाई पाटने या दूसरे मुहासिरे सबधी काम लेते। रास्तेमे दबूसिया और सरेपूलमें ही उनका थोडासा प्रतिरोध हुआ। मगोल सेना जरफशाँ (सोग्द) नदीके दोनो तटोंसे कूच कर रही थी, शायद चिगिस स्वय उत्तरी तटसे जा रहा था। बीचमें पडते किलोको फतह करनेके लिये कुछ सेनाको छोडकर वह आगे बढ जाता। समरकन्दमें ख्वारेज्म-शाहकी (६० हजार तुर्क, ५० हजार ताजिक, २० हाथी की सेना थी)। दूसरे इतिहासकारोंके अनुसार तुर्क, ताजिक, गूज, खलज और करलुक सब मिलाकर १ लाख सैनिक थे। समरकन्दका शासक तुर्कान खातून का भाई तुगाई खान था। मार्चमें समरकन्द पहुचकर चिगिसने कोक-सराइ (नील प्रासाद) में डेरा डाला। उसने कैदियोको भी सैनिकोंके रूपमे खडा कर हर दस आदमियोपर एक झडा दे सेनाको भारी भरकम दिखलाकर नागरिकोको भयभीत कर दिया। चिगिसके दोनो पुत्र जगताय और उगुताय भी उतरारसे बहुतसे कैदी लिये आ पहुचे थे। दूसरे शहरोकी अपेक्षा उतरारमें अधिक दिनो तक मुहासिरा करना पडा था। इनाल खान को प्राण बचाकर भागनेका कोई रास्ता नही मिला, इसलिये वहाँ उसने जान तोडकर मुकाबिला

---

[1] समरकन्दके बारेमें ए-ल्यु-च् शइने लिखा है—"नगरके चारो ओर लगातार बीसो मील तक अगूर और दूसरे फलोंके बाग, फलोद्यान, जलाशय, बहती नहरे, चौकोर कुड, गोल तडाग चले गये हैं। सचमुच समरकन्द बडा ही मनोहर प्रदेश है।"

दारयवहु और सिकन्दर ही नही वल्कि नेपोलियन और हिटलर भी बच्चे मालूम होते है। यह हम उसके विजय-क्षेत्रको देखकर कह सकते हैं। विना पक्की योजना बनाये और उसे ठीक तौरसे काममें लाये चिंगिस आगे नही बढता था। सिर नदी शायद इस समय जमी हुई थी, इसलिये उस महानद को पार करनेमे चिंगिसकी सेनाको दिक्कत नही हुई। एक मजिल पर जरनूक का किला आया। निवासियोंके पास हाजिव दानिशमन्दको भेजकर कहवा दिया, कि तुम्हारे धन और प्राणको कोई हाथ नही लगायेगा। किला और निवासियोने विना लडे ही आत्मसमर्पण कर दिया। मगोलोने अपने वचनका पूरी तौरसे पालन किया। किलेको तोडकर उसी इलाकेके जवानोकी उसने एक वाहिनी सगठित की, जो मुहासिरे (घिरावे) के काममे सहायता करती। मगोलोने शहरका नाम कुतलुकवालिक (सौभाग्य नगर) रख दिया। जरनुकमे ही तुर्कमान भी आ मिले, और उन्होने बुखाराका एक नया रास्ता वतलाकर चिंगिसको गुप्त मार्ग जनवरी १२२० ई० में नूर पहुचा दिया। वीच में निर्जल किजिल-कुमकी मरुभूमि है, लेकिन वहा कारवाका रास्ता मौजूद था। नहर खराव नही हुई थी, वालूकी भूमि जहा कम पडती थी, वहासे सेना पार हुई। हरावलका सेनापति ताइर वहादुर था। नूरके वागोमें वह रातके समय पहुचे। जाडोंके कारण पत्ते झड गये थे, इसलिये वृक्ष सूखेसे मालूम होते थे। तायरने नगर-प्राकारको लाघनेके लिये सीढी वनानेके वास्ते वृक्षो को काटनेका हुकम दिया। शहरवालोने समझा, शायद विदेशी व्यापारी आकर डेरा डाल रहे हैं। उन्हें ख्याल नही था, कि चिंगिस सेना मरुभूमिका रास्ता पकडेगी। जव पूरी एक वाहिनी (डिवीजन) आ पहुची, तव उन्हें गलती मालूम हुई। चिंगिसने सुवुदायके हाथमें आत्म-समर्पण करनेके लिये दूत भेजा था। नगर निवासियोंके लिए दूसरा चारा नही था। मगोलोने उन्हे खाद्यसामग्री, खेतीका सामान और पशुओको लेकर वाहर चले जानेका हुकुम दिया। चिंगिसकी सेनामें कितनी व्यवस्था और अनु शासन था, इसका यह प्रमाण था, कि मगोल सेनाने निवासियोंसे साल भरका कर—पन्द्रह सौ दीनार—भर वसूल किया। यह नगरके लिये कुछ नही था। आधी रकम तो स्त्रियोंके कानकी वालियोंसे ही निकल आई। स्थानीय अमीरके पुत्र इल्-ख्वाजाके साठ आदमी कामके लिये भरती किये गये, जिन्होने दवूसियाके मुहासिरेके समय काम किया।

फरवरीमे चिंगिस वुखारा पहुच गया। वहा ख्वारेज्मशाहकी वीस या तीस हजार सेना (जिसमे वारह हजार सवार थे) सेनापति इख्तियारुद्दीन कुतलू और ईनचखान ओगुलू हाजिवके अधीन तैयार थी। दूसरे सेनापतियोमें कराखिताइयोका वन्दी हमीदपूर और सुयुच खान भी थे। तीन दिनके मुहासिरेके वाद इनच घिरावेकी पाती तोडकर निकल भागा। मगोलोने उसका पीछा किया और वहुत थोडे आदमियोंके साथ वह वक्षु पार होनेमे समर्थ हुआ। हमीदपूर युद्धमे काम आया। प्रतिरक्षियोने साथ छोड दिया, फिर वुखारा-निवासियोको आत्मसमर्पणके सिवाय कोई रास्ता नही रह गया। काजी वदरुद्दीन के नेतृत्वमे नागरिकोका एक प्रतिनिधिमडल भेजा गया, और १० (या १६) फरवरी को मगोल वुखारा नगरमें दाखिल हुए। किलेके चार सौ प्रतिरक्षी १२ दिना तक और डटे रहे। इनमें चिंगिस द्वारा पराजित गुरखान जामुखा भी था, जिसने वडी वहादुरी दिखलायी। सुल्तानके लिये जो रसद इकट्ठा की गई थी, उसे नागरिकोने मगोलोको दे मट्टी डालकर किलेकी खाईको पाट दिया। किला सर होनेपर वहाकी सारी सेनाको मगोलोने मार डाला। उत्तरारमें चिंगिसके सार्थकी हत्या करके जो

चादी लूटी गई थी, उसे धनी व्यापारियोने लौटा दिया। मगोलोके हुकम पर नागरिक केवल अपने शरीरपर के कपडोंके साथ वाहर निकल गये। उनके प्राण छोड दिये गये, किन्तु विना प्रतिरोध आत्मसमर्पण न करनेके दण्डमें विजयी सेनाने उनकी सपत्तिको लूटा और जो शहरसे वाहर नही निकले थे, उन्हें मार डाला। इमाम जलालुद्दीन अली हुसन (हुसैन)-पुत्र जन्दोने अपनी आखो मस्जिदोको लुटते और कुरानके पन्नोको घोडोकी टापोंके नीचे रोदे जाते देखा था। इमामजादा रुकुनुद्दीन उस समय बुखाराके सबसे वडे विद्वान् थे। उन्होने अली हुसैन-पुत्रको क्रोध प्रकट करते देखकर कहा—"चुप रहो, अल्लाके क्रोधका तूफान आया है, तिनकेको कुछ कहनेका अधिकार नही है।" लेकिन जव मगोलोने बन्दियो और स्त्रियोंके साथ क्रूरता दिखलानी शुरू की, तो इमामजादा और उसके पुत्रोने उसमे बाधा देनी चाही, जिसपर वह मार डाले गये। चिंगिसने एक वडी मस्जिदमें लोगोको जमा करवाया, फिर कोई कुछ कर न बैठे इसका बिना कुछ ख्याल किये। निधडक घोडेपर चढ़ा वह मस्जिदके भीतर चला गया,[1] उसने घोडेपर से ही कहा —"लोगोके पापोंके दड केलिये अल्लाके क्रोधके रूपमे मै भेजा गया हू।" चिंगिसने नगरके मुखियो और वृद्धोका नाम वतलानेके लिये कहा, फिर उन्हें बुलाकर पैसे और दूसरी चीजोकी माग पेश की। चिंगिस बुखारामें केवल दो घटे रहा। लूटके वाद मगोलोने शहरको जला दिया। ईटकी वनी इमारतें जामा मस्जिद तथा कुछ महल बच पाये। यह भी कहा जाता है कि, शहरमें आग जान-बूझकर नही लगाई गई। यह ठीक भी है, क्योकि चिंगिस अपनेको लुटेरा नही बल्कि स्थायी विजेता-शासक समझता था।

बुखारासे जव मगोल सेना समरकन्दकीओर जाने लगी, तो वह अपने साथ भारी सख्यामें लोगोको वन्दी बनाकर ले गई। मगोल सैनिक घोडोपर थे, और अभागे वन्दी पीछे-पीछे पैदल चल रहे थे। यदि कोई वदी थक कर गिर पडता, तो वह उसे मार डालते। अपनी साधारण नीतिके अनुसार मगोल किसानोको पकडकर उनसे मिट्टी खोदने, खाई पाटने या दूसरे मुहासिरे सबधी काम लेते। रास्तेमे दबूसिया और सरेपूलमे ही उनका थोडासा प्रतिरोध हुआ। मगोल सेना जरफशाँ (सोग्द) नदीके दोनो तटोंसे कूच कर रही थी, शायद चिंगिस स्वय उत्तरी तटसे जा रहा था। वीचमें पडते किलोको फतह करनेके लिये कुछ सेनाको छोडकर वह आगे वढ जाता। समरकन्दमें ख्वारेज्म- शाहकी (६० हजार तुर्क, ५० हजार ताजिक, २० हाथी की सेना थी)। दूसरे इतिहासकारोंके अनुसार तुर्क, ताजिक, गूज़, खलज और करलुक सब मिलाकर १ लाख सैनिक थे। समरकन्दका शासक तुर्कान खातून का भाई तुगाई खान था। मार्चमें समरकन्द पहुचकर चिंगिसने कोक-सराइ (नील प्रासाद) में डेरा डाला। उसने कैदियोको भी सैनिकोंके रूपमे खडा कर हर दस आदमियोपर एक झडा दे सेनाको भारी सरकम दिखलाकर नागरिकोको भयभीत कर दिया। चिंगिसके दोनो पुत्र जगताय और उगुताय भी उतरारसे वहुतसे कैदी लिये आ पहुचे थे। दूसरे शहरोकी अपेक्षा उतरारमें अधिक दिनो तक मुहासिरा करना पडा था। इनाल खान को प्राण बचाकर भागनेका कोई रास्ता नही मिला, इसलिये वहाँ उसने जान तोडकर मुकाबिला

---

[1] समरकन्दके वारेमें ए-ल्यु-च् शइने लिखा है—"नगरके चारों ओर लगातार बीसो मील तक अगूर और दूसरे फलोंके वाग, फलोद्यान, जलाशय, वहती नहरें, चौकोर कुड, गोल तडाग चले गये हं। सचमुच समरकन्द वडा ही मनोहर प्रदेश है।"

किया। उसके पास २० हजार (दूसरोंके अनुसार ५० हजार) सवार थे, जिनमें हाजिव कराजा १० हजारकी कुमक लेकर आ पहुंचा था। ५ महीनेके मुहासिरेके बाद आत्मसमर्पण करने का निश्चय करके कराजा अपने आदमियोंके साथ बाहर निकल आया, लेकिन चिंगिस-पुत्र जगताय और उगुताय स्वामीके प्रति विश्वासघाती आदमी पर विश्वास नहीं कर सकते थे, इसलिये उन्होंने कराजाको कत्ल करवा दिया। नागरिकोंको बाहर निकालकर मंगोलोंने शहरको लूटा। किला एक मास और डटा रहा, जिसके पतनके बाद प्रतिरक्षक सैनिक मार डाले गये। तीरोंके खतम हो जाने पर इनाल खानने ईंटें फेंकनी शुरू की। वह जिन्दा पकडा गया और उसे चिंगिसके पास कोकसराय भेज दिया गया, जहां उसे बडी निष्ठुरताके साथ मारा गया।

समरकन्दके मुहासिरेके खतम होनेके बाद प्रतिरक्षकोंने छापामारी शुरू की, लेकिन उसका परिणाम उनके लिये बहुत ही भयंकर निकला। मंगोलोंने भी छिपकर उनपर आक्रमण किया और ५० (या ७०) हजार आदमियोंमेंसे एकको भी जीता नहीं छोडा। मुहासिरेके पांचवें दिन तुर्कों और नागरिकोंने आत्मसमर्पण करनेका निश्चय किया। किलेमें थोडेसे ही आदमी रह गये थे। तुगाइखानके नेतृत्वमें तुर्कोंने अपनी सेवायें मंगोलोंको अर्पित की, जिन्होंने पहिले स्वीकार कर लिया। नागरिकोंके प्रतिनिधि काजी और शेखुल् इस्लामके नेतृत्वमे मंगोलोंके पास आये। नमाजगाह द्वारसे भीतर घुसकर मंगोल तुरन्त किलाबन्दी तोडनेमें लग गये। नियमानुसार नागरिकोंको निकालकर यहां भी सेनाने शहरको लूटा, लेकिन काजी, शेखुल्इस्लाम तथा उनके ५० हजार संबंधोंको प्राणदान मिला। चिंगिस और उसके मंगोल अभी किसी व्यवस्थित धर्मके अनुयायी नहीं थे, वह भूत-प्रेतपूजक (शमनी) होनेसे सभी धर्मों और उनके पुरोहितोंके प्रति सम्मान दिखलाते थे। समरकन्दके मुल्लोंने बुखारियोंकी तरह विरोध नहीं किया, इसलिये मंगोलोंने उनके साथ नरमीका बर्ताव किया। किलेको तोडनेके लिये उसकी मिट्टीकी दीवारोंको नहरका बांध तोडकर भिगो दिया गया, इस प्रकार दीवारके गिरानेमें दिक्कत नहीं हुई। दुर्गके पतनसे पहिली रात अल्प एर खान हजार आदमियोंके साथ मंगोलों की पंक्तिको तोडकर सुल्तानके पास चला गया, बाकी हजार सैनिकोंको किलेकी मस्जिदमें जमाकर मंगोलोंने कत्ल कर डाला। यह वही मस्जिद थी, जिसे ख्वारेज्मशाहने बनवाया था। मंगोलोंने उसे जला भी दिया। सुल्तानकी ३० हजार तुर्क सेना तुगाइखान तथा अपने सारे नेताओंके साथ मार डाली गयी। ३० हजार कारीगरों और शिल्पकारोंको चिंगिसने अपने पुत्रों और संबंधियोंमें बांट दिया, बाकीको मुहासिरेमें काम करनेके लिये भरती कर लिया। नगरपर दो लाख दीनार कर लगाया गया। हत्याकाण्डके बाद समरकन्दकी आबादी एक चौथाई रह गई।

समरकन्दकी विजय के बाद चिंगिसने सेनाको थोडा विश्राम लेने दिया।

६ जूची की सफलता

जूचीके अधीन जो सेना निम्न सिर्-दरियाकी ओर भेजी गई थी, वह पहिले सिग्नाक (उतरार से २४ फरसख[1]) पहुंची। जूचीने हसन हाजीको भेजकर नागरिकोंको आत्मसमर्पण करनेके लिए कहा। निवासियोंने हाजीको मार डाला। मंगोलोंके सामने इससे बडा अपराध कोई हो

---

[1] फरसख—१६०० हाथ, (६ मील)।

नही सकता था। ७ दिनके मुहासिरेके बाद शहर पर कब्जा करके मगोलोने वहाके एक भी आदमीको जीता नही छोडा। हसनके पुत्रको नगरका शासक बना आगे बढ जूचीकी सेनाने उजगन्द, बरचिनलिगकन्त और अशनासको ले लिया। अशनासकी सेना गुडो और बदमाशोको मिलाकर सगठित की गई थी, जिन्होने मगोलोका सख्त मुकाबिला किया। ओगुत् कबीलेके चीन तीमूर पीछे ईरानमें सेनापति—को—जन्दवालोंसे बात करनेके लिये भेजा गया। लोगोने उसके साथ बुरा सलूक किया। जूची अभी आक्रमण न कर किपचको(कगलिशो) की बस्ती कारकोरम में विश्राम करना चाहता था। २१ अप्रैल १२२० को उसे नागरिकोंके दुराग्रहके कारण आगे बढ़ना पडा। नागरिकोंने नगर-द्वार बन्द कर लिया, लेकिन प्रतिरोधके लिये बहुत लडाई नही की, इसलिये जन्दके विजय होनेपर जिन लोगोने चीन तीमूरके साथ बुरा बताव किया था, उन्हीको मारा गया। अली ख्वाजा बुखारीको ज्चीने यहाका राज्यपाल नियुक्त किया। जूची इसके लिये वहा नही ठहरा। दूसरे साल उसने ख्वारेज्मपर चढ़ाई हुई। मगोलोकी जो सेना यहा छोड दी गई थी, उसीने जाकर बिना रोक-टोकके यानीकन्त (शहरकन्त) ले लिया। जिन शहरोको मगोल जीतकर वहा अपने शासक नियुक्त करते जा रहे थे, वह उनके हाथमे बराबर नही रहे और मगोलोकी भी यही मशा थी। वह चाहते थे, कि सबसे बडी प्रतिरोधक शक्तियोको पहिले खतम किया जाय, फिर छोटोको दबाना मुश्किल नही होगा।

सेनापति अलाक नोयन(बारिन)के नेतृत्वमें ५ हजारकी वाहिनी बनाकतपर गई। कोखोता कबीलेके सेनापति सुकेलु और तुगाई दूसरे मगोल-सेनापति थे, जो इस वाहिनीके साथ गये थे। इलालगूमली के तुर्क सैनिकोने तीन दिन तक मुकाबिला किया, फिर शहरने आत्मसमर्पण कर दिया। छावनीके सैनिक मार डाले गये, कारीगर और तरुण मुहासिरे सबधी कामोंके लिये साथ ले लिये गये। नगरमे लूट-मार हुई। यहासे सेना समरकन्दमे चिंगिसके पास चली गई।

५० हजार दूसरे सैनिकोंके साथ २० हजार मंगोलोको चिंगिसने फरगाना-विजयके लिये भेजा। वहाके शासक तीमूर मलिकने जब देखा, कि शहरमे रहकर हम कुछ नही कर सकते, तो अपने हजार साथियोंके साथ सिर-नदीके बीचके एक टापूमें चला गया। यह टापू खोजन्दसे एक वर्स्त (१ मील) नीचे था। १८९६ ई० में रूसियोंने यहा खुदायी की, जिसमे बहुतसे सोने-चादी-ताबे के सिक्के, घरेलू कामके बहुत तरहके बर्तन तथा दूसरी चीजे मिली थी। यह टापू तटसे काफी दूर था, इसलिये तैमूर मलिकके आदमियो तक न बाण पहुच सकता था, न कतापुल्तसे फेंके पत्थर ही। मगोलोने बन्दियोको दस दस की टुकडीमें बाटकर उनपर एक-एक मगोलको नियुक्त किया। वह खोजन्दसे तीन फरसखपर अवस्थित पहाडीसे पत्थर काटकर ढोने लगे और मगोल सवार इस पत्थरको नदीमे फेंककर बाध बाधने लगे। शायद बाध तैयार हो गया था अथवा रसदकी कमी पड गयी, इसलिये तैमूर मलिक टापू छोडनेके लिये बाध्य हुआ।

पहिले ही से छिपा रखी ७ नावो पर रसद और आदमियोको चढ़ाकर वह रातके समय मशालकी रोशनीमे दरियाके नीचेकी ओर भाग चला। दोनो किनारोसे मगोल बाण-वर्षा करते हुए पीछा करने लगे। बनाकतके नजदीक मगोलोने सिर-दरियामे जजीर डालकर नावोको रोकनेकी कोशिश की, लेकिन तैमूर मलिक निकल भागनेमे सफल हुआ। बरचीनलिंगकन्त और जन्दके पास उलुस इदीने नावोका पुल बाध कर कतापुल्त (पत्थर फेंकनेका यत्र) खडा कर रखा था। तैमूर उससे पहिले ही नदीके किनारे उतर गया। वह भागा जा रहा था और मगोल उसका

पीछा कर रहे थे। रसदपानी और सारे अनुचर खतम हो गये, तो भी वह पराक्रमी वीर अकेले ख्वारेज्म पहुचा तैमूर इसके बाद भी मुहम्मदके उत्तराधिकारी जलालुद्दीनकी ओरसे लडता रहा। मुसलमानोकी ओरसे कभी कभी आदमियोको अद्भुत पराक्रमके साथ लडते देखा गया लेकिन वह मुट्ठी भर ही रहे। एक विशाल सेनाको पूरी तौरसे सगठित करके प्रतिरोध करने म वह कभी सफल नही हुए, इसीलिए तातारो (मगोलो) की मुख्य सेनाके सामने उन्हबरावर पीछे हटना पडा। मगोलोकी ओर मुश्किलसे कही व्यक्तिगत वीरताके असाधारण उदाहरण मिले, पर उनमे गजबका अनुशासन था। उनके वडे वडे सेनापति अपने स्वामीकी इच्छाके आज्ञाकारी चतुर सेवक के सिवाय और कुछ नही थे। स्थितिके अनुसार अपनी सेनाओको अलग करते, फिर इकट्ठा करते और वडी तेजीके साथ आक्रमण करते हुए वह इस बातका ध्यान रखते थे, कि किसी एक जगहकी असफलताके कारण सारी योजना न विफल हो जाय। वडे कठोर अनुशासनमें पले हुए मगोल सैनिक किसी समय इस बातकी कोशिश नही करते थे, कि अपने को अपने साथियोंसे वेहतर योद्धा साबित करे। उनका काम यही था, कि प्रभु या नेता जो आज्ञा द, उसे अक्षरश पालन करे। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने यद्यपि अपने राज्यको वहुत वढाया था, उसकी धाक भी वहुत ज्यादा थी, लेकिन मगोलोकी लोह सेनासे जव उसका सामना पडा, तो वह उतना भी प्रतिरोध नही कर सका, जितना कि उसके पुत्र जलालुद्दीन ने किया। वदरुद्दीनकी सम्मतिसे ख्वारेज्मशाही के सेनापतियाने चिंगिसको कितने ही पत्र लिखे थे, जो ख्वारेज्मशाहके हाथ मे पड गये। इसके कारण उसको और भी सदेह हो गया। वह अपने आदमियो पर विश्वास नही कर सकता था। वक्षु नदीके तटपर कालिफ और अन्दखुदके घाटोको ख्वारेज्मशाहने रोक रखा था। वहासे उसने समरकन्दकी सहायताके लिये १० हजार सवार और २० हजार सेना भेजी, मगर वह वहा तक नही पहुच सकी।

७ मुहम्मद का अन्त

समरकन्दकी विजयके वाद चिंगिसने फिर अपनी सेनाका नई तौरसे विभाजन किया—(१) एक वाहिनी खोजन्द और फरगानाके लिये, (२) सेनापति अलाक नोयन और हजारी यसाउर (जालेरी) की वाहिनी वख्श, तालकान और कुलावके लिये, (३) जेबे, सुबोतइ और तोकूचरा वहादुरके नेतृत्वमें तीनो वाहिनियोंको भेजते हुए चिंगिसने हुक्म दिया—शान्त निवासियोको बिना छेडे ख्वारेज्मशाहका पीछा करो।

ऐसा करनेसे पहिले ही ७ हजार कराखिताई सेना और अलाउद्दीन (अलाउलमुल्क) न सुल्तान को छोडकर चिंगिसकी ओर जा करसुल्तानकी सैनिक कमजोरियोको वतलाया। इराकके शासकके पुत्र रुकुनुद्दीनके वजीरकी सम्मति मान सेना न जमाकर सुल्तान उस प्रदेशम चला गया। अलाउद्दीनने वहुत समझाया—"सेनाको अपने पास रखना चाहिये, नही ता प्रजा राजवशको दोषी ठहराते कहेगी' शान्तिके समय कर ले लेकर खाते रहे और सकटके समय पीठ दिखाकर भाग गये।" सुल्तानके दोनो पुत्र मृत्युके समय तक पिताके साथ रहे। जेबे और उसकी सेनाके आनेके पूर्व ही सुल्तानने वक्षु-तट छोड दिया। पजाव (मध्य-एसिया) में देखभाल के लिये एक चौकी छोडकर मगोल सेना सिर-दरियाकी भाति वक्षुका भी आसानीसे पार हो गई। लकडीका एक लम्बा सा ढाचा बना वह उसे वैलके चमडेसे मढ देते, जिससे उसके भीतर पानी नही जाता।

इसी चमडेकी नावमें अपने वर्त्तन और हथियार भी रख, घोडोको पानीमें डाल देते, और उनकी पूछ पकडकर चमडेकी नाव को हाथ लगाये पार हो जाते। इस प्रकार हरेक चीज—घोडा, हथियार, रसद और आदमी—एक ही साथ नदीके परले पार पहुच जाते। इतिहासकार इब्नुल्असीरकी उपरोक्त बातमें थोडी सी भूल मालूम होती है। प्लानो कार्पीनीने मगोलोंके बारेमें कहा है—"उनके पास एक हलकासा गोल चमडा होता है, जिसके सिरे पर बहुतसी मुद्धिया रहती है। इन मूद्धियोंके भीतरसे एक रस्सी पार कराकर इतना कस दिया जाता है कि भीतर एक छोटा सा गोल अवकाश बन जाता है। जिसमे कपडा, हथियार और दूसरी चीजें डालकर मुहको खूब अच्छी तरह बाध दिया जाता है। जीन और दूसरे कडे सामान बीचमे रख दिये जाते है, जिनके ऊपर आदमी बैठ जाते है। इस प्रकार तैयार किया हुआ पात्र घोडेकी पूछसे बाध दिया जाता है। एक आदमी रास्ता दिखानेके लिये घोडेपर आगे आगे तैरता चलता है। कभी कभी पासमें पतवार भी होती है, जिसके द्वारा वह अपने चमडेकी नावको खेते हैं। घोडोको पानीमें खदेड दिया जाता है। एक सवार घोडा तैराते आगे आगे चलता है, बाकी घोडे उसका अनुसरण करते है। गरीब मगोलोमें हरेक आदमीके पास एक-एक अच्छी तरह सिया हुआ चमडेका थैला रहता है, जिसमें वह अपने कपडे तथा दूसरी चीजोको रखकर मुहको अच्छी तरह बाध घोडेकी पूछमें बाध देता है, फिर उपरोक्त क्रमसे नदी पार कर जाता है।" नदी पार करनेके लिये जो चमडेका थैला इस्तेमाल किया जाता है, वही रेगिस्तानी यात्रामे पानी भरनेकी मशकका काम देता है। मगोलोंके कमसरियतका सगठन कितना सरल और मजबूत था, यह उपरोक्त वर्णनसे मालूम होगा।

ख्वारेज्मशाहने कही भी चिंगिससे डटकर लडनेकी कोशिश नही की। सिरदरिया, समरकन्द, वक्षु (आमू दरिया) सब जगह वह पीठ ही दिखाता रहा। १८ अप्रैल १२२० ई० को नेशापोर पहुचनेपर उसे खबर मिली, कि मगोल वक्षु पार हो गये। भयके मारे सुल्तान एक दिन भी नेशापोरमें नही ठहरा। विस्ताममें उसने रत्नोसे भरी दो सदूकें अरदहन भेजनेके लिये अपने दरबारी वकील अमीन ताजुद्दीन उमर विस्तामीको सुपुर्द की। इसी किलेमें पीछे सुल्तानका शव भी आया। रत्न नही बच सके। किलेको पीछे मगोलोने दखल कर लिया और उन्होने सदूकें लेकर चिंगिस खानके पास भेज दी। ख्वारेज्मशाह रे (तेहरान) होते कजवीन भागा, जहा उसका पुत्र रुकुनुद्दीन गूरगजी ३० हजार सेनाके साथ पडा हुआ था। जेबे और सुबुतइके पास इतनी सेना नही थी, जिसके साथ कि वह पीछा कर रहे थे। उनको नष्ट कर डालनेका यह बडा अच्छा मौका था, लेकिन सुल्तान तो हर मौकेपर चूकनेका का ही ढग जानता था। उसने अपनी रानी (गयासुद्दीन पीरशाहकी मा) और दूसरी स्त्रियोको कारूनके किलेमें भेज दिया, जिसका किलेदार ताजुद्दीन तुगान था। अतावेग नसरतुद्दीन हजारास्प लूरिस्तानीको बुलाकर राय पूछनेपर उसने सलाह दी, कि लूरिस्तान पारसकी पर्वतमालाके पीछे तथा उर्वर प्रदेश है। वहा चलकर लूरियो, शूलियो और पारसियोकी १ लाख सेना जमाकर मगोलोको मार भगाया जाये। सुल्तानने उसकी सलाहका यह अर्थ लगाया, कि वह मेरे द्वारा अपने दुश्मन फारसको अतावेगसे बदला लेनेके लिये यह सब कह रहा है। सुल्तान इराकमें ही था, कि पता लगा, मगोल और नजदीक आ गये। वह अपने पुत्रो सहित भागकर कारूनके किलेमें चला गया। वहा भी केवल एक दिन रहा, फिर पथप्रदर्शक और सवारीके घोड़े ले बगदादके

रास्तेपर मगोलोंसे वचते हुए आगे बढ़ा। कूचके समय मगोल अपने नमदे, घोड़े, हथियारके सिवाय और कुछ नहीं रखते थे। वह किसीको लूटते नहीं थे, न घरोको जलाते थे, न पशुआको मारते थे। हा, कुछ लोगाको घायल करके मार डाल्ते या कमसे कम रास्तेसे भगा देते थे। पहिली वार ज्यादा कडाई करते थे—प्लानो कारपीनी जैसे समसमायिक लेखकोने उनके बारेमे यही लिखा है।

जेबे और सुबुतइ रास्तेमे कहीं भी लूटने,-मारनेके लिये न रुकते अपने कदमको तेज करते सुल्तान का पीछा कर रहे थे। वह उसे कही सुस्ताने नही देते थे। चिंगिस खानकी आज्ञा पालन करते उन्होने रास्तेमें खुरासानके किसी नगरको कोई भी हानि नही पहुचाई, सिवाय बूशाग (हिरात प्रदेश) के, जहा एक मगोल सेनप मार दिया गया था। उन्होंने इस शहरको बरबाद कर दिया, हरएक आदमीको मार डाला। तुकूचारने कहीं से अपने कानमें एक दाना ले लिया था, जिसके लिये चिंगिसने उसे प्राण-दण्ड की सजा दे दी, पीछे पदच्युत कर दिया। सुबुतयाने बिना कठिनाई के रे (तेहरान) को जीत लिया। पता लगा, सुल्तान हमदानकी ओर भागा जा रहा है। मगोलोंके आनेसे पहिले ही सुल्तान रेसे रवाना हो चुका था। कजवीन और कारुन के बीच मगोल सुल्तानसे मिले, मगर वह पहिचान न सके। उन्होंने कुछ बाण छोडे, जिससे सुल्तान घायल होकर कारूनके किलेमें पहुचा। जब मगोलोने किलेका मुहासिरा किया, तो सुल्तान उसे छोड चुका था। वह रास्ता बदलकर सरेचाहान पहुच गया। मगोल रास्ता भूल गये, जिसपर उन्होंने अपने पथप्रदर्शकको मार डाला और वह फिर लौट पडे। अन्तमें २० हजार सेनाके साथ सुल्तान हमदानके पास दौलताबादके मुहासिरेमें फस गया, जिससे वह बहुत मुश्किलसे निकल सका। उसके अधिकाश अनुयायी यहीं मारे गये। पश्चिमी सीमातके पास जा कर केवल यही एक लडाई हुई। यद्यपि उसके पास मगोलोंसे अधिक सेना थी, लेकिन तो भी लडनेकी जगह सुल्तानने भागकर प्राण बचाना ही पसन्द किया। हमदानसे लौटते वक्त मगोलोने जुनजान और कजवी-नको नष्ट कर दिया। बेग तागुद और कुचबुगा खानके नेतृत्वमें मिली ख्वारेज्मी सेनाको भी उन्होंने यहीं कहीं नष्ट किया। जाडेके आरम्भमें मगोलोने आजुरवायजानपर आक्रमण किया। अर्दबील ध्वस्त हुआ। कास्पियन तटपर अवस्थित मुगानको भी उन्होंने बरबाद किया। रास्तेमें गुर्जियो (जार्जियन) के साथ लडाई हुई, लेकिन तब तक मुहम्मद ख्वारेज्मशाह दुनियासे चल बसा था।

अन्तमें भागते हुए मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने अबूसकून शहरके पास एक द्वीपमे जाकर शरण ली, जो कि गुरगान नदीके मुखपर गुरगान शहरसे तीन दिनके रास्तेपर अवस्थित था। शायद वह वर्तमान अशुरआदेका द्वीप था। वहा पहुचते समय ही वह गुर्दे की बीमारीसे बहुत पीडित हो गया, जीनेकी आशा नही रह गई। मरते समय उसने अपने अनुयायियोको बडी उदारताके साथ पदवियां, दर्जे, जागीरें प्रदान की, जिनको उसके पुत्र जलालुद्दीनने भी माना। इसी द्वीपमें दिसम्बर १२२० ई० में सुल्तान मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने सदा के लिये आखे मूद ली। उसके पास कफनका कपडा भी नही था, जिसके लिये एक अनुचर ने अपना चोगा दिया। एक रूसी इतिहासकारने लिखा है—"यह था अन्त एक ऐसे बादशाहका, जिसने कि सल्जूकी साम्राज्यके अधिकाश भाग को ~ ' ञ यामें ला दिया था। मगोल आक्रमणके समय उसने बड़ी निंदनीय कमजोरी दिखलाई।"

मुहम्मद ख्वारेज्मशाहके रुपमें इस्लामको, ऐसियाके सारे मुसलिम देशोको ही नही वल्कि भारतके पराजित प्रदेशको भी एक साम्राज्यके रूपमे परिणत करनेका आखिरी मौका मिला था । अभी उस विशाल इस्लामिक साम्राज्यकी सीमायें स्पष्ट नही थी, लेकिन वह धीरे धीरे उभडती आ रही थी। जान पडता है, मुहम्मद अपने पडोसियोकी निर्बलताके कारण सफल हुआ था। यदि उसमें अपनी वैसी क्षमता होती, और इस्लामिक जगतके शासक-वर्गमे अपने स्वार्थोके लिये भीषण फूट न होती, तो शायद चिंगिसको विश्व-विजयका ख्याल भी न आता। एक तरफ चिंगिस था, जो कि जवर्दस्तसे जवदस्त उत्तेजनाके समय भी उत्तेजित हो अपनी बुद्धिको खो नही वैठता था। सगठन करनेमें अद्वितीय था, पास आये लोगोको अपने आकर्षणसे इतना वाध लेता, कि वह कभी उसे छोडनेका ख्याल नही करते। अनुशासन और शिक्षा-दीक्षा द्वारा सावारण अनपढ़ घुमन्तू तरुणोको जेबी और सुवुताय जैसा महान् सेनापति वना देता। दूसरी तरफ तुर्कान खातूनका पुत्र मुहम्मद ख्वारेज्मशाह था, जो अपने सहायको और अनुचरोको ही नही अपनी मा को भी अपना जानी दुश्मन वना लेता, किसी वातके निर्णय करनेकी शक्ति नही रखता और योद्धाका निर्भीक हृदय तो मानो उसे मिला ही नही था।

८ जलालुद्दीन[1] मुहम्मद-पुत्र (१२२०–१२३१ई०)

मुहम्मदका उत्तराधिकारी जलालुद्दीन यदि वापकी जगह गद्दीपर वैठा होता, तो शायद मगोलोको इतनी आसानीसे सफलता नही मिली होती, लेकिन जलालुद्दीनको तो उस वक्त गद्दी मिली, जवकि विशाल ख्वारेज्मी साम्राज्य छिन्न-भिन्न हो चुका था, उसकी सैनिक शक्ति तितर-बितर हो गई थी। १२२० ई० के वसन्तमें सारा अन्तर्वेद चिंगिसके अधीन हो गया था। समरकन्दसे उसने नूशावस्कामको बुखाराका मगोल शासक वनाकर भेजा था। गरमियोको चिंगिसने नशाव (नखशाव) मे बिताया। इतनी मजिल मारनेके वाद घोडोको चरने तथा विश्राम लेनेके लिये छोडना आवश्यक था। चिंगिसके निवासके कारण पीछे नशाव एक पवित्र स्थान बन गया, जहा पिछले जमानेमें मगोल सेनप अक्सर गर्मियां विताया करते। एक जगताई खानने यहा महल (करशी) वनवाया जिसके कारण इसका वर्तमान नाम पडा। वावरने पानीकी शिकायत करते हुए भी यहाके वसन्तके सौंदर्यकी बडी प्रशसा की है। मगोलोके आनेके पहिले ही किश (शहरसब्ज) की महिमा घट चुकी थी, और अब उनके आनेके बाद नसाबके भाग्यने पलटा खाया। शरदमें चिंगिस जाकर तेरमिजके ऊपर पडा। लोगोने आत्म-समर्पण करनेसे इन्कार कर दिया। फिर दोनों ओरसे कतापुल्तकी मार शुरू हुई। अन्तमें मगोलोकी मारके सामने प्रतिरक्षियोंके हथियार कुठित हो गये। ११ दिनके मुहासिरेके बाद किला सर हुआ। प्रतिरोधी नगरोंके लिये उपयुक्त दण्ड तेरमिजको मिला—नगरको नष्ट कर सभी निवासियोको मार डाला गया। १२२०-१२२१ के जाडोको चिंगिसने वक्षु तटपर बिताया। सभी बडी नदियोकी तरह वक्षुका कछार भी घुमन्तुओंके शरद-निवासके लिये बहुत उपयुक्त स्थान था। पीछे जगताईने "सालीसराय" के नामसे यहा अपनी एक राजधानी बनवाई।

---

[1] Turkistan (Bartold)

(१) विद्याकेन्द्र ख्वारेज्म–

चिंगिस ख्वारेज्मशाहसे लड रहा था, लेकिन अभी तक हुए उसके सारे संघर्ष ख्वारेज्मकी भूमिपर नही हुए थे। यह पहिले ही कह आये है, कि मुहम्मद ख्वारेज्मशाहने अपनी राजधानी समरकन्द मानी थी और ख्वारेज्मपर उसके पुत्रकी अभिभाविकाके तौर पर राजमाता तुर्कान खातूनका शासन था। ख्वारेज्म सेनाका भारी भाग और उसके सेनापति भी तुर्क थे, जिनमेंसे अधिकाश तुर्कान खातूनके मातृपक्षीय थे। इसीलिये तुर्कान खातून सैनिक वर्गकी मुखिया थी। ख्वारेज्म बडा समृद्ध प्रदेश था और १२०४ ई० में शहाबुद्दीन गोरीके हमलेसे बाल-बाल बचा था। बाहरसे आई लक्ष्मी यहा धीरे धीरे जमा होती गई थी। ११ वी-१२ वी सदी वह समय था, जब कि मुसलिम जगतकी शक्ति एकताबद्ध हो आगे नही बढ रही थी। भिन्न-भिन्न विद्या और सभ्यताम बढे पराजित देशोकी बहुत कुछ अवनति हो चुकी थी, क्योकि जिस गतिसे मुसलमानोने ध्वसका काम किया, उसी गतिसे निर्माणका काम नही किया। इसमें शक नहीं, बगदादी खलीफोंके आरम्भिक जमानेमें दुनियाके ज्ञान-विज्ञानके अनुवाद और प्रचारका कितना ही काम हुआ था, लेकिन इस्लामकी सफलतामें ज्ञान-विज्ञानको नही बल्कि धर्मान्धताको परम सहायक माना गया था। ख्वारेज्मने अपनी पिछली पीढ़ियोकी देनको अभी उतना नही खोया था। अभी भी वह अपनी विद्या-निधियोंका रक्षक तथा विद्वानोका पृष्ठपोषक था। इसी समय बहुत से महत्वपूर्ण ग्रथ सग्रह किये गये थे। शहरिस्तानी १११६ (५१० हि०) में ख्वारेज्मका अच्छा विचारक हुआ। "वह एक अच्छा विद्वान् था। यदि उसके विचारो और रुचियोपर दर्शन या नास्तिकताका प्रभाव न होता, तो वह इमाम (धर्मिक नेता) बना होता। यह देखकर आश्चर्य होता है, कि जहा उसकी विद्या और विचाराकी परिपूर्णता देखकर आश्चर्य करना पडता है, वहा किन्ही किन्ही बातोमें वह ऐसे विचार रखता है, जिनका कोई आधार नही। वह ऐसे विषयोको पसद करता, जिनका कि न कोई बौद्धिक प्रमाण था, न पारम्परिक—दीनके प्रकाशके प्रति विश्वासघात और इन्कार करनेसे भगवान् हमारी रक्षा करे। इस सबका कारण यही था कि वह शरीयत (धर्मशास्त्र) के प्रकाशसे मुह मोडकर दर्शनके घपलेमें पड गया। हम उसके पडौसी और सहायक थे। वह यह समझानेकी बडी कोशिश करता था, कि (ग्रीक) दार्शनिकों के विचार बहुत ठीक है, और उनके विरुद्ध जो आक्षेप किये जाते है, वह गलत है। कुछ सभाओंमें मै भी मौजूद था, जिनमें वह उपदेशकका कर्तव्य पालन करते (उपदेश दे) रहा था। मैने एक बार भी उसके मुहसे यह कहते नही सुना 'अल्लाहने ऐसे कहा' अथवा 'अल्लाके पैगम्बरने ऐसा कहा' और न कभी उसने शरीयतकी एक भी गुत्थीके बारेमे अपना कोई निश्चय प्रकट किया। अल्लाह ही जानता है, उसके क्या विचार थे।' शहरिस्तानीके बारेमें यह एक समसामयिक इतिहासकारके उद्गार थे।

राजवशके अन्तिम समयमें कवि फखरुद्दीन राजी ख्वारेज्म-दरबारमें रहा। कवि मुबारक शाह हुसन बिन मरवारोदी फखरुद्दीन (मृ० १२०६ ई०) ने गोरियोंके दरबारमें रहते अपना घर बनवाया था, जिसमें पुस्तकोका बडा अच्छा सग्रह था, जिसके साथ यहा शतरज भी रक्खा रहता था। वहा बैठकर विद्वान् स्वाध्यायका आनन्द लेते। इसी तरह गूरगाचमें वकील शहाबुद्दीन खीवगी पाच मदर्सों (विद्यापीठो) में अध्यापक था। उसने शाफई जामा-मस्जिदके पास ऐसा विशाल

पुस्तकालय स्थापित किया था, जिसके बारेमें कहा जाता है "न भूतो न भविष्यति"। मगोलोंके आक्रमणकी खबर सुनकर उसे ख्वारेज्म छोडना पडा। अपनी पुस्तकोंको छोडते वक्त उसे बडा दु ख हुआ और उनमेंसे कितनी ही महत्वपूर्ण पुस्तकोंको वह अपने साथ लेता गया। वह नसामे था, जबकि चिंगिसके दामाद तोकूचारने उस शहरको जीता। उसी समय शहाबुद्दीन मारा गया। मरनेके बाद उसकी किताबें दूसरोंके हाथमें चली गयी, जिन्हें इतिहासकार नसावीने फिरसे जमा करनेमे सफलता पाई, लेकिन पीछे वह भी यह कहते हुए देश छोडनेके लिये मजबूर हुआ —"मैंने जो चीजें वहा छोडी, उनमें केवल पुस्तकोंके लिये ही मुझे दु ख है।" शाहजादा गयासुद्दीन पीरशाहने जब नसाको दखल किया, तो पुस्तकोंका सग्रह लुप्त हो गया।

(२) ख्वारेज्म का पतन

ख्वारेज्म जैसे समृद्ध देश और तुर्कों जैसी वीर सेना तुर्कान खातूनके हाथमे थी, जिससे वह जूचीको काफी परेशान कर सकती थी, इसे चिंगिस भी जानता था। इसीलिये चिंगिसने दूत भेजकर खातून को कहलवाया—मेरी तुमसे कोई दुश्मनी नही है। मै तो केवल तुम्हारे पुत्रके अत्याचारोंके कारण उससे लड रहा हू। दूतके आनेके बाद ही यह खबर मिली, कि सुल्तान वक्षु पार भाग गया। मा बेचारीकी हिम्मत क्या होती, उसने भी पुत्रका अनुसरण किया। राजधानी छोडनेसे पहिले खातूनने गुरगाचमें बन्दी पडे सारे शाहजादोंको नदीमे डुबोनेका हुक्म दे दिया। इन मरनेवाले में २० शाहजादो तथा अपने भाई और दो भतीजोंके साथ बुखाराका सदर बुरहान-उद्दीन भी था। खातून पहले भागकर याजिर (पश्चिमी तुर्कमानिया) गयी। फिर वहासे माजन्दरान प्रदेशमें लारजान और इलालके किलोमें उसने शरण ली। मगोलोने तुर्कान खातूनको वहा जा घेरा। उस विशाल किलेके चारो ओर लकडीका घेरा बना बाहरसे सबध-विच्छेद करा दिया। वर्षा नही हुई, इसलिये पानीकी कमीके कारण चार मास बाद इलालके किलेका पतन हुआ। पतनके बाद भारी वर्षा शुरू हुई। मगोलोने वहा मिली शाहजादियोको बाट लिया। उस्मान खान समरकन्दकी बेवा खान सुल्तानको जूचीने लिया। पीछे उसने एमिलके एक रगरेजकी बीबी बनकर अपनी जिन्दगी बितायी। तुर्कान खातूनको पकडकर मगोलिया भेजा गया। जहा वह १२३२ (६३० हि०) तक जिन्दा रही। देश छोडनेके समय उसे तथा दूसरी स्त्रियोको आज्ञा दी गई, कि वह अपने दु खको जोरके साथ क्रन्दन करके प्रकट करें। खातूनके वजीर निजामुलमुल्क को १२२१ में कत्ल करवा दिया गया था।

खातूनके राजधानी छोडकर भागनेपर अली कूहे-दुरुगानने राजकीय खजाने और दूसरी चीजोंको अपने हाथमें कर लिया। १२२० की गर्मियोमें खोजन्दसे भागा वीर तैमूर मलिक ख्वारेज्म पहुचा था। ऐसे योग्य नेताको पाकर सेनाने आक्रमण कर जूचीके हाथसे यानीकन्तको छीन कर मगोल शासकको मार डाला। जाडो तक शासन-प्रबन्ध भी फिरसे ठीक कर लिया गया, जिसका श्रेय मुशरिफ इमादुद्दीन और वकील शरफुद्दीनको था। उन्होने लोगोमें घोषित कर दिया, कि सुल्तान मुहम्मद शाह जिन्दा है, हम उसके पाससे आये हैं। इसके थोडे ही समय बाद ख्वारेजमी शाहजादे जलालुद्दीन, उजलगशाह और अकशाह पहुच गये। शाहजादे मृत्युके समय तक सुल्तानके साथ रहे थे और पिता को दफनाने के बाद सवारो के साथ मनकिशलक आ वहाके निवासियोंसे घोडे ले राजधानी पहुचे थे। राजधानीमें पहुचकर उन्होने

सुल्तानकी मृत्युकी घोषणा कर दी। मृत सुल्तानने उजलगशाहको गद्दी देनेकी वसीयत की थी, जिसे हटाकर जलालुद्दीन गद्दी पर बैठा। उजलगके कहनेपर भी झगडा नही मिटा और पहिले का शासक कुतुलुक खान तूर्जी पहलवान—जो ७ हजार सवारो का सेनप था—षडयंत्र करनेके लिये तैयार हो गया। खबर पाने पर जलालुद्दीन, तैमूर मलिक और ३ सौ सवारोंको साथ ले खुरासानकी ओर भागा। चिंगिस जैसा भयंकर शत्रु सिरपर था, लेकिन तब भी वह अपने भीतरी झगडोंको मिटानेके लिये तैयार नही थे। जलालुद्दीनके जानेके ३ दिन बाद मगोलोंके आ पहुचनेकी खबर सुन उजलग और अकशाह भी ख्वारेज्म छोडकर भागे।

सिंहासनके लिये लडनेवाले शाहजादोंकेहटते ही सभी सेनापति एक हो गुरगाचकी रक्षाके लिये तैयार हो गये। किसी किसी इतिहासकारका मत है, कि उन्हीमेंसे एक तथा तुकान खातूनके सबधी खुमारतगिनने सुल्तानकी पदवी धारण की। दूसरे सेनापति थे ओगुल हाजिब (बुखारा प्रतिरक्षक), यरतुका पहलवान और अली कूहे-दुरूगान (सिपहसालार)। गुरगाच जसे बडे शहरको जीतनेके लिये चिंगिसने एक और बडी सेना भेजी। दक्षिण-पूर्वसे जगतइ और उगुतइ की सेना बुखारा होते ख्वारेज्मकी ओर बढी, और उत्तर-पूर्व से जूचीकी सेना। जूचीके आनेसे पहिले ही मगोल सेनाकी सख्या १ लाख हो गई थी। धोखा देनेके लिये थोडी सख्यामें आकर मगोलोंने ढोरोंको हाकना शुरू किया। नगर-रक्षक उनके फेरम पडकर दरवाजा-आलमीसे निकल उनका पीछा करने लगे। एक फरख पर बागखुरम था, जहा पर मगोल छापा मारनेके लिये तैयार थे। उन्होंने सूर्यास्तमे पहिले ही एक हजार ख्वारेज्मियोका वध कर दिया, बाकी बचोका पीछा करते वह अकाबीलान दरवाजेसे शहरके भीतर घुस गये, लेकिन अधेरा होनेसे पहिले ही बाहर हो गये। अगले दिन युद्ध शुरू हुआ। मगोल दरवाजा तोडनेकी कोशिश कर रहे थे। फरीदून गोरी५०० योद्धाओंके साथ उसकी रक्षा कर रहा था। इसी समय जगतइ और उगुतइकी सेना आ पहुची। आत्मसमर्पणके लिये बातचीत होने लगी और साथ ही मगोल मुहासिरा करने की तैयारी भी करने लगे। मगोलोका एक बडा हथियार था कतापुल्त, जिसके द्वारा वह बडे बडे पत्थर फेकते थे। गुरगाचके पास कोई पहाड नही था, इसलिये उन्होंने तूतके वृक्षोंको काटकर उनका गोला बनाया। हरेक पेडको गोल-गोल टुकडोंमें काटा जाता, फिर उन्ह पानीमें इतना भिगोया जाता, कि वह काफी बडे हो जाय।

जूचीके आते ही नगरको चारो ओरसे घेर लिया गया। साथ आये बन्दियोंने दस दिनोंमें खाइया पाट दी, फिर दीवार ढानेके लिए सुरगें खुदने लगी। मगोलोकी कारवाइयोको देखकर खुमारतगिन इतना डर गया, कि वह आत्मसमर्पण के लिये दरवाजेसे बाहर निकल आया। इसका प्रभाव दूसरोंपर बुरा पडा, तो भी प्रतिरोध जारी रहा। सुल्तान खुमारके आत्मसमर्पण के समय ही मगोल अपने झडेको प्राकार पर गाड चुके थे, लेकिन नागरिकोंके प्रतिरोध के कारण उन्हें एक-एक सडक और एक-एक मुहल्लेके लिये लडना पडा। भाडोंमें नफ्या (मिट्टीका तेल) भरकर उसके जरिये उन्होंने घरोंमें आग लगा दी। नगरका बहुत सा भाग जल गया था। जब उन्हें पता लगा कि आग अपना काम बहुत धीरे धीरे कर रही है, तो उन्होंने आमू दरियाके जलसे शहरको काटनेके लिये नदीपर एक पुल बनाना शुरू किया, जिसपर काम करनेके लिये तीन हजार मगोल नियुक्त किये गये। ख्वारेज्मियोंने उन्हें घेरकर मार डाला। नगर प्राकार पर अधिकार होने तक ख्वारेज्मियोंसे अधिक मगोल मारे गये थे। पुराने गुरगाचमें

मारे गये इन मगोलोकी हड्डियोका पहाड खडा हो गया था। शायद गुरगाच जल्दी ही सर हो जाता, लेकिन चिंगिसके दोनो पुत्रो जगताइ और जूचीमें मतभेद हो गया। जूचीको मिलनेवाले प्रदेशमें होनेसे वह शहरको वचाना चाहता था, इसीलिए जोरका आक्रमण न कर वह लोगोको आत्मसमर्पण करनेके लिये कह रहा था। जूची नही चाहता था, कि दीहातको भी नष्ट कर दिया जाय। समझदार लोगोने प्रतिरोधको वेकार समझकर उसे वन्द करनेकी सलाह दी, लेकिन उनकी वात नही चली। उधर जूची किसी वातका जल्दी निश्चय नही कर रहा था, इसलिये उसका छोटा भाई जगताई वुरा मान गया। यह खवर जव चिंगिसको मिली, तो उसने तीनो सेनाओका प्रधान-सेनापति उगुतइको वनाया।

मगोल गुरगाचके मुहल्लोको एकके वाद एक दखल करते गये। जव प्रतिरक्षकोंके हाथमें केवल तीन मुहल्ले रह गये, तो नागरिकोने आत्मसमर्पण करनेका निश्चय करके नगरके मुहतसिब फकीह अलीउद्दीन खैयातीको जूचीके पास दया की भिक्षा मागनेके लिये भेजा। लेकिन मगोलोको इतना नुकसान उठाना पडा था, कि अव जूची भी उनकी प्रार्थना स्वीकार नही कर सकता। सभी नागरिकोको वाहर खेतोमे जमाकर उनमेंसे कारीगरोको अलग किया गया। उस समय कितनोने अपने पेशेको इस ख्यालसे छिपाया, कि और शहरोकी तरह शायद उन्हें भी अपने शहरमें रहने दिया जाय। गुरगाचमे दो लाख कारीगर मिले, जिन्हे ले जाकर मगोलोने अपने पूर्वी राज्य में वहुतसी वस्तिया वसाई। छोटे उम्रके वच्चो और स्त्रियोको उन्होने दास बना लिया। वाकी नागरिकोको मार डाला या गुलाम वना लिया। इतिहासकार रशी-दुद्दीनके अनुसार उस समय ५० हजार मगोल सिपाहियोमें प्रत्येकको चौवीस गुलाम मिले थे। मगोलोने अव तक जितने शहर लिये थे, उन सवसे अधिक आफत का पहाड गुरगाचके ऊपर ढाया गया। दूसरे शहरोमें कत्लआमके वाद कुछ आदमी वच भी रहे "कुछ लोग कही छिप गये, कुछ भाग गये, कुछ घसीटकर वाहर लाये जानेपर भी वच निकलनेमें सफल हुए, कुछने मुर्दोके भीतर लेटकर अपने प्राण वचाये।" पर यहाँ कत्लआमके वाद मगोलोने गुरगाचके वाधको नष्ट कर दिया, जिससे सारे शहरमें पानी भर गया, जिसने इमारतोको भिगोकर ढा दिया। वहुत समय तक नगरकी भूमि पानीमें डूवी रही और जो भी तातारो (मगोलो) से वचनेकी कोशिश करता, वह वाढमें अथवा मकानोंके भीतर प्राण गवाता। गुरगाचमें केवल दो इमारतें वच रही जिनमें एक था कूशे-अखचक (प्राचीन प्रासाद) और दूसरा सुल्तान तकाशका मकवरा। इसी वाधके टूटनेके कारण ख्वारेज्मके और नगर भी पानीमें डूव गये और एक वार फिर वक्षु अपनी पुरानी धारसे काश्पियन समुद्रमें गिरने लगी। अप्रैल १२२१ में गुरगाच पर मगोलोका अधिकार हुआ। जगताइ और उगुताइ अपने पिताके पास तालकान लौट गये, जो उस नगरका मुहासिरा कर रखा था।

(३) जलालुद्दीन भगोडा—

ख्वारेज्मी शाहजादोंके भागनेकी खवर सुनकर चिंगिसने खुरासानके उत्तरी सीमान्त नगरोमें गारद रख दिये। जलालुद्दीन अपने तीन सौ सवारोंके साथ नसाके पडोस में पडे सात सौ मगोलोंके ऊपर टूट पडा। उनमेंसे मुश्किलसे ही कुछ भाग निकलनेमें सफल हुए। उसके भाई उजलग और अकशाह मगोल गारदसे वच निकले, लेकिन देशके भीतर जानेपर मगोलोने उन्हें

घेरकर मार डाला। चद दिनो वहा रहनेके वाद ६ फरवरी १२२१ को जलालुद्दीन नसासे आगे चला। जूज्ञान (कोहिस्तान ओर खुरासानकी सीमा पर काइनसे तीन दिनके रास्ते पर) में उसने किलाबन्दी करनी चाही। लेकिन जब इसकी खबर वहाके निवासियोको मिली, तो मगोलोंके सर्वनाशी कार्योंकी खबरोंसे भयभीत हो उन्होने विरोध किया। जलालुद्दीन और आगे चला। वहा १० हजार सेना लेकर अमीनुलमुल्क उससे आ मिला, फिर दोनो कधार होते गजना पहुचे।

११ चिंगिस साम्राज्य (१२२० ई०)

१२२१ के वसन्तमें चिंगिसने वक्षु पारकर वलखपर अधिकार किया। लोगोने पहिले बिना रोक-टोकके आत्मसमपण किया,लेकिन पीछे विद्रोह कर दिया। इसपर मगोलोने शहरको लूटकर बरबाद कर दिया। बलख आज भी मादरेशहर (नगरोकी माता) कहा जाता है, किन्तु १२२१ में मगोलो द्वारा मटियामेट किया यह शहर उसके बाद फिर आबाद नही हो

किलेको जा घेरा। तालकान और वलखकी पहाडियोंके बीच मगोल सेनाये पडी हुई थी। नुसरतका मुहासिरा नौ महीने तक रहा।

(४) गजनी का झगडा—

गजनी वहुत समयसे गोरियोकी राजधानी रही। इस प्रदेशमे तुर्कोसे गोरियोकी सख्या अधिक थी। महमूद गजनवीके तुर्को ओर शहाबुद्दीनके गोरियोका वैमनस्य पहिलेसे ही चला आ रहा था, जिसने इस वक्त घोर रूप धारण किया। ख्वारेज्मशाहके स्वय तुर्क होनेसे उसके अनुचर तुर्क अपनेको वडा समझते थे, लेकिन मगोलोंके सामने दुम दबाकर भागते इन तुर्कोकी धाक अब गोरियोंके मनमे बिलकुल नही रह गई थी। जलालुद्दीनने पेशावरके राज्यपाल इख्तिया-रुद्दीन मुहम्मद अली-पुत्र खरपोश्तको गजना भुला लिया था। गजनीके तुर्क राज्यपाल अमीनु-लमुल्कको अनुपस्थित देखकर उसने शासनको अपने हाथमे लेना चाहा। अमीनुलमुल्कने अधि-कार-विभाजन कर देनेके लिए कहा। इसपर गोरी खरपोश्तने कहा—"गोरी और तुर्क एक साथ नही रह सकते।" किलेदार सलाहुद्दीन नसाईने भोजके समय खरपोश्तका काम-तमाम कर दिया और गोरियोको खबर मिलनेसे पहिले ही शहरपर अधिकार कर लिया। दो-तीन दिन वाद आकर अमीनुलमुल्कने शासन अपने हाथमे ले लिया। जिस समय गजनीमे यह घटनाए घट रही थी, उसी समय चिंगिस नसरतकूहका मुहासिरा किये हुए था। छोटी-छोटी मगोल सेनाऐं आस-पासके इलाकोमें जाकर लड रही थी। अमीनुलमुल्क दो तीन हजारकी एक मगोल सेनाका पीछा करने गया। सलाहुद्दीनको अकेला पा गोरियोने उसे मार डाला और शासनका भार तेरमिजसे आए दो भाई रजीउलमुल्क ओर उम्दतुलमुल्कके हाथमे चला गया। रजीउलमुल्कने अपनेको सुल्तान घोषित किया। अब तुर्को और गोरियोका झगडा दूर तक फैल गया। जब तुर्कोको इस विश्वासघातका पता लगा, तो पेशावर, खुरासान, अन्तर्वेदके भगोडे खल्जी ओर तुर्कमानोने सैफुद्दीन अगराक मलिकके नेतृत्वमे सगठित हो गोरी सेनाको हरा रजीउलमुल्कको मार डाला। अब अम्दतुलमुल्कने अपनेको सुल्तान घोषित किया। उसके विरुद्ध भी बलखके भगोडे राज्यपाल इमादुद्दीनके पुत्र आजम मलिक ओर काबुलके राज्यपाल मलिकशेरने गोरियोको साथ ले गजनी पर कब्जा कर लिया। गजनीकी यही अवस्था थी, जबकि तीस हजार सेनाके साथ अमीनुलमुल्कको लिये जलालुद्दीन वहा पहुचा। यही तीस हजार और सेना उससे आकर मिल गई। तुर्को और गोरियोका झगडा खतम हो गया। जलालुद्दीनके सेनापति थे—अमीनुलमुल्क, अकराक, आजिम मलिक, अफगान-नेता मुजफ्फर मलिक और करलुक नेता हसन।

(५) जलालुद्दीनकी एक सफलता—

इसी गगा-जमुनी सेनाको लेकर जलालुद्दीन ख्वारेज्मशाह मगोलोंसे मुकाविला करके रूठी कुल-लक्ष्मीको मनानेके लिये आगे बढा। उसने परवानमे जाकर डेरा डाला। वालियान (वालिस्तान, तुखारिस्तान) को घेरे हुए एक मगोल सेना बैठी थी, जिसे जलालुद्दीनने घर दबाया। हजार मगोल मारे गये, बाकी पजशीर नदीके पार भाग गये। ख्वारेज्मियोने पुल तोड दिया। यह खबर सुनकर चिंगिसने सेनापति शिकी कुतुकू नोयनको मुकाविलेके लिये भेजा। परवानसे एक फरसख आगे बढकर जलालने लडाई की। दो दिन तक घमासान युद्ध होता रहा। दूसरी

रात शिकीने मगोलोको नमदेका घोडा वनाकर दिखलानेका हुक्म दिया। घोडोकी इतनी सख्या देखकर कुछ आतक तो छाया, लेकिन जव जलालुद्दीनने स्वय अपने घोडेको आगे वढ़ाया, तो गाज़ियोको भी हिम्मत आयी। शिकी थोडेसे आदमियोको लेकर अकेला आगे वढा। युद्धमें मगोलोकी जवदस्त हार हुई, और चद आदमियोके साथ शिकी अपनी जान लेकर युद्ध-क्षेत्रसे भगा। इसका परिणाम एक तो यह हुआ, कि वलखके किलेका मुहासिरा उठ गया और कुछ दूसरे नगर भी मगोलोके हाथसे निकल गये। जलालुद्दीनने कितने ही मगोलोको वडी वेदर्दीसे मारा। एक समसामयिक मुसलिम इतिहासकारके शब्दोमे—"मगोल जलालुद्दीनके सामने लाये जाते थे, अपना गुस्सा उतारनेके लिये वह उनके कानोको चिरवाता। जव मगोल तडफडाते, ता जलालुद्दीन वहुत प्रसन्न होता, उसका चेहरा प्रफुल्लित हो उठता। मगोल इस लोकमे यातना सह रहे थे, परलोकमे उनके भाग्यमें इमसे भी ज्यादा कठोर यातना वदी थी।" इस जीतमें वहुत सा मालेगनीमत (लूटका माल) प्राप्त हुआ, जिसके वटवारेमें झगडा हो गया। सैफुद्दीन अकराक, आजम मलिक और मुजफ्फर मलिकने सुल्तानका साथ छोड दिया। अव उसके साथ केवल अमीनुल्मुल्क और तुर्क सैनिक रह गये।

(६) पराजय

हारकी खवर सुनकर चिंगिस जरा भी घवराहट न प्रकट कर, पूर्णतया शान्त रहा। उसने सिर्फ इतना ही कहा—"शिकी कुतुकू सदा विजयी रहनेका आदी था, उसने कभी भाग्यके इस कठोर उलट-फेरको अनुभव नही किया। अव जव कि ऐसा अनुभव करना पडा, तो वह और अधिक सावधान रहेगा।" यह था उद्‌गार एक भीषण पराजयके समय उस विश्व-विजेता का। तालकान सर हो चुका था, इसलिए अव चिंगिस जलालुद्दीनकी खवर लेनेके लिये स्वतत्र था। तीन सेनापतियो के साथ छोड देनेके वाद जलालुद्दीन इस स्थितिमें नही था, कि वह मगोलोके साथ खुले मैदानमे लडता। वह हिन्दूकुशके दुर्गम दर्रोसे फायदा उठा सकता था, लेकिन उसने यह भी नही किया और पीछा करते हुए मगोलोके सामने सिंधुके किनारे तक हटता गया। चिंगिस तालकानसे सीधे गुजखानके रास्ते वामियान पहुचा। वामियानमें उसका जवर्दस्त मुकाबिला किया गया, जिसमे चिंगिसका अत्यत प्रिय पौत्र (जगताईका पुत्र) मुतुगिन मारा गया। चिंगिसका पारा गरम हो गया और उसने हुक्म दिया कि नगरमें किसीको जिन्दा न छोडा जाय। इसी समय उसने वामियानका नाम वदलकर मोवालिग (पापनगर) रख दिया।

मगोल सेनाने विना किसी विरोधके गज़नापर अधिकार किया। उन्होने सुना, कि सुल्तान पन्द्रह दिन पहिले यहासे आगे गया। चिंगिसने मावायलवचको ग़ज़नाका शासक नियुक्त किया। गजनामें भी कत्लआम और लूट मचाते वह सिंधके किनारे पहुचा। इस समय तक जलालुद्दीनने अभी नावोका भी पूरा इतजाम नही कर पाया था। पृष्ठ-रक्षक सेनाने काफी प्रतिरोध किया, किन्तु मगोलोकी प्रधान सेनाके आजाने पर वह और कुछ करनेमें सफल नही हुई। सिंधमें सिर्फ एक नाव तैयार हो पाई थी, जिसपर चढ़ा-कर ख्वारेज्मशाहकी वेगमें पार भेजी जानेवाली थी। लहरोके मारे वह भी चट्टानसे टकरा कर टूट गई। इस प्रकार ख्वारेज्मशाह अपने भारी भरकम अन्त पुर और दूसरे सामानके कारण सिंधुकी प्रतिरक्षासे भी लाभ नही उठा सका और उसे वुधवार २४ नवम्बर १२२१ ई० को निर्णयात्मक युद्ध करनेके लिये मजवूर होना पडा।

यह युद्ध नीलाब और सिंधुके सगमके पास घोडाटाप स्थानमें हुआ। मुसलिम सेना अपने सुल्तानके नेतृत्वमें वडी वहादुरीसे लडी, जिससे एकवार मगोलोमे भगदड मच गई और खुद चिंगिसको भी पीछे हटना पडा। इसी वीच १० हजार मगोल वहादुरोने अमीनुल्मुल्क-सचालित दक्षिण पार्श्व पर हमला कर दिया। पासा पलट गया। जलालुद्दीनका सात-आठ सालका लडका मगोलोंके हाथमें पडा, जिसे पीछे उन्होने मार डाला। मगोलो के हाथ मे न पड जायें, इस डरमे जलालुद्दीनके हुक्मसे उसकी मा, वेगम और दूसरी ही कितनी ही औरतें सिंधुमे डुवा दी गईं। सुल्तान अपने घोडेको नदीमें डाल पार हो गया। तिफलिस (जार्जिया) विजयके समयमे सुल्तान ने इस घोडेको अपने साथ रखा था, और वह उसपर कभी नही चढा था। चार हजार सवार उसके साथ नदी तट तक पहुचे, किन्तु उनमें से केवल तीन सौ ही तीन दिन वाद नदीके निचले भागमें वहकर आ मिले। चिंगिसने तुरन्त अपनी सेना सिंधु पार नही भेजनी चाही। अगले साल उसने २० हजार सेना भेजी, जो मुल्तान* तक पहुची, जहा दिल्लीके सुल्तान अल्तमश (अल्ततमश, करलुक)को मगोलोका मुकाविला करना पडा। मुल्तानकी गर्मी (११५°-१२०°) इतनी असह्य सिद्ध हुई, कि अल्तमशकी सेना नही वल्कि इसी गर्मीने मगोलोको सिंधु पार जाने के लिये मजवूर किया। १२२२ का साल मगोलोने अफगानिस्तानके ठडे पहाडी इलाकोको जीतनेमें विताया।

---

[1] चिंगिसके हमलेके ६१ वर्ष वाद १२८४ (६८३ हि०) मे फिर एक वार मगोल सेनापति इतमर ३० हजार सेनाके साथ मुल्तानके शासक सुल्तान मुहम्मदके खिलाफ आया था, जिसमें सुल्तान मारा गया और उसके दरवारी कवि अमीर खुसरो वन्दी वने, किन्तु सयोग से जान वचा कर भाग निकले। खुसरोने इस घटनाको अपने एक कसीदेमें वर्णन किया है, जिसे वदाऊनीने उद्धृत किया है। इस वर्णनसे हमें मगोलोंके प्रति तुर्कोंके भावका पता लगता है। खुसरो स्वय तुर्क था—

"मुसलमानोंके खूनने वहकर रेगिस्तानको रगा,
जवकि मुसलमान वन्दी फूलोंकी मालाकी तरह गरदनसे वधे थे।
मैं भी पकडा गया और भयसे मेरी नसोंमें खून वहानेको एक रक्त-विन्दु भी नही रह गया।
मै पानीकी तरह जहा-तहा दौडता फिरा,
धाराके ऊपरके वुलवुलोंकी तरह मेरे पैरोंमें असख्य छाले थे।
अत्यत प्याससे मेरी जीभ जली और सूखी जाती थी,
और भोजन विना मेरा पेट मानो लुप्त हो गया।
जाडेके पत्रहीन वृक्ष या कांटोसे छिले फूलकी तरह,
मुझे नगा वनाकर छोड दिया।
मुझे पकडनेवाला मगोल घोडेपर वैठा,
जैसे पहाडके सानुपर सिंह टहल रहा हो।
उसके मुह और काखसे उवकाई लानेवाली गध आ रही थी।
उसकी ठुड्डीपर झाडीकी तरह या निम्न रोमकी तरह दाढ़ी लगी थी,
यदि कमजोरीसे मं जरा सा पिछड जाता,
वो वह अपने तरमे और कभी अपने भालेसे डराता।

९ खुरासानमें विद्रोह दमन

तालकान जीतनेके वाद १२२१ के आरम्भमे चिंगिसने अपने पुत्र तूलुयको खुरासानके शहरो पर अधिकार करनेके लिये भेजा। जीते हुए शहरोंसे लोगोंको भर्त्ती करता तूलुय जब मव पहुचा, तो उसकी सेना ७० हजार हो गई थी। खुरासानमे भी मगोलोंने गजना और ख्वारेज्मकी ध्वस-लीलाकी पुनरावृत्ति की। ख्वारेज्मियोंमे अभी बहुत से सिंहासनके भूखे आपसमे लड रहे थे। मेर्वके भूतपूर्व वजीर मुदोद्दन्मुल्क शर्फुद्दीन मुजफ्फरको भी वादशाह होनेका ख्याल आया था। इसके कारण तूलुयका काम आसान हो गया। ३ मासके भीतर ही छोटे-छोटे नगर ही नही वल्कि मेव, नेशापोर आर हिरात पर भी मगोलोंका झडा फहराने लगा। २५ फरवरी १२२१ ई० को मेर्व फतह हुआ। मगोलोंने चार सौ कारीगरोंको छोड बाकी सभी निवासियोंको मार डाला। स्थानीय आभिजात्यवर्गके सरदार जियाउद्दीन अली और मगोल सेनापति वारमास शहरके शासक नियुक्त हुए। वचे-खुचे वाशिन्दोंको एकत्रित करनेका काम दूसरी वार आकर नई मगोल सेनाने किया। १० अप्रैल सनीचरके दिन नेशापोर दखल हुआ। उसके भाग्यमें और भी क्रूरता वदी थी। नवम्वर १२२० ई० मे नेशापोरके प्राकारसे चलाये गये वाणका शिकार तुक्चार हुआ था, इसलिये अपने वहनोईका वदला लेनेके लिये तूलुयने कुछ भी दया दिखलानेसे इनकार कर दिया। शहरकी नीव तक उखेडकर उसे जोत दिया गया। कुछ कारीगरोको छोडकर सारे वाशिन्दोंको मार डाला गया। ध्वसलीला मचाते समय भी मगोल जानते थे, कि कारीगरोंके

मै लम्वी सास ले रहा था और सोचता था
इस स्थितिसे छुट्टी पाना असभव है।
लेकिन अल्लाकी मेहरवानीसे मुझे छुट्टी मिल गई,
विना छातीमें वाणसे विधे या तलवारसे दो टुकडे हुए।"

६१ साल वाद जो वला खुसरो और उसके साथियोंपर पडी, वह चिंगिसकी सेनाके लाखो वन्दियोंके ऊपर भी घटी होगी। प्यासके मारे खुसरोका मगोल सवार और उसका घोडा रावीमे पानी पीनेके लिये टूट पडे, और तुरन्त ही मर गये। उस समय खुसरोको भागनेका मौका मिला। लेकिन खुसरोके जैसे सौभाग्यशाली कितने रहे होंगे? खुसरोने मगोलोके वारेमें उस समय लिखा था, जवकि उन्होने सिर्फ हिन्दुस्तानके किनारेको जरासा छुआ भर था। शेरुल्-अजम (२) में (शिवलीने) में खुसरोके निम्न पद्य भी उद्धृत हैं—

"यह घटना है या आकाशसे वला आकर प्रकट हुई।
यह आफत है या प्रलय दुनियामे आकर जाहिर हुई।
आफतकी वाढ़के सामने दुनियाकी जड उखड गई,
कष्ट जैसे इस साल हिन्दुस्तानमें आकर प्रकट हुआ।
हवासे (सूखे) फूलपत्तोकी तरह मित्र-मडली विखर गई,
मानो फुलवाडीमें पत्तोका विखराव आकर प्रकट हुआ।
वस चारो ओर दुनियाकी आखोंमे पानी वह चला।
मुल्तानके अन्दर दूसरे पचआव आकर प्रकट हुए।"

मारनेसे धनके उत्पादक हाथ खतम हो जायेंगे, इसलिये वह उन्हे नही मारते थे। कारीगर ही तरह तरहकी बहुमूल्य चीजोको पैदा करते थे, जिनके कारण उस समय व्यापार-लक्ष्मी अपनी चरम सीमा पर पहुची हुई थी। अरबोने भी अपने विजयकालमे उत्पीडित जनोको अपनी ओर खीचकर अपनी शक्ति बढाई थी, उसी बातको दुहराते मगोल भी उत्पीडित, उपेक्षित और अपमानित जातियोको अपनी ओर कर रहे थे। इसका पता इसीसे मालूम होगा, कि नेशापोरको जीतकर तुलुयने चार सौ ताजिकोके साथ एक मगोल सेनपको वहा शासन करनेके लिये छोड दिया। हिरातका भाग्य कुछ अच्छा था। वहा सुल्तानकी १२ हजार सेनाके सिवाय और कोई नही मारा गया। शहर पर भी तुलुयने एक मगोल और एक मुसलमान दो सयुक्त-राज्यपाल नियुक्त किये।

१२२१ के उत्तरार्द्धमें अफवाह उडाई गयी, कि इस्लामके सुल्तानने मगोलोपर भारी विजय प्राप्त की है। इसके कारण खुरासानके कुछ नगरोमे विद्रोह हो गया। विद्रोह दबानेके लिये जियाउद्दीन मेर्वसे सरख्स गया। बारमासने कारीगरो और दूसरे युद्धबन्दियोको बुखारा भेजनेके लिये शहरसे हटाया। लोगोने समझा, सुल्तान आ रहा है, इसलिये यह भागनेकी तैयारी कर रहे हैं। बारमासने दरवाजेपर जा नगरके कुलीनोको बुलाकर समझानेकी कोशिश की। उसका कोई फल न देख, जिसको भी पाया, उसे मार कर वह बुखारा चला गया। वहा उसकी मृत्यु हो गई, किन्तु मेर्ववाले बन्दी यही थे। जियाउद्दीन फिर लौटा, मगोल भी फिर आगये। इसी समय सुल्तान जलालुद्दीनका गार्द-अफसर कुशतगिन पहलवान एक बडी सेना लेकर आ पहुचा। शहरके गुडे भी उससे मिल गये। जियाउद्दीन दूसरे मगोलोंके साथ भागकर मरागके किलेमे पहुचा। कुशतगिनने शहरकी मरम्मत करवाई और खेती-बारीको फिरसे आबाद करना चाहा। वह थोडे ही समयमें इतना मजबूत हो गया, कि बुखारापर आक्रमण कर वहाके मगोल-गवनरको भी मारनेमें सफल हुआ। इस विद्रोहको १२२२ ई० की गर्मियोके अन्तमे ही मगोल दबा सके। कराजा नोयनके सरख्स पहुचने पर कुशतगिन अपने हजार सिपाहियोंके साथ मेव छोडकर भाग गया। सरख्श ओर नेशापोरके बीचमे सगबस्तके पास उसके बहुतसे आदमियोको मगोलोने मार डाला। मेर्वने आकर मगोलोने अपना गुस्सा फिर दुबारा कत्लआम करके उतारा, जिसमें एक लाख आदमियोने प्राण गवाये। उन्होने सेनापति अकमलिक हुमाऊको बाकी बचोको ढूढकर मारनेके लिए छोड दिया। हुमाऊने अपने मालिकोने भी अधिक क्रूरता का परिचय दिया। मगोलोके नगरसे हटते ही फिर सिंहासनके कई दावेदार खडे हो गये। अबीवद, खरकान और मेव का शासन ताजुद्दीन उमर मसऊद-पुत्रने सभाला। उसने मगोलोकी रसदको भी लूटा, लेकिन नसाका मुहासिरा करते हुए वह मारा गया। इसके बाद तीसरी बार कुतुकू नोयन अपने साथ मगोल, खल्जी ओर अफगान सेना लेकर आया। खल्जियो और अफगानोने मगोलोसे भी ज्यादा क्रूरता दिखलाई। अन्तर्वेदमे भी झगडा हुआ, लेकिन वहा बादशाह बननेका स्वप्न देखनेवाले नही पैदा हुए थे, बल्कि केवल मामूली डाकुओने अधिकार जमाना चाहा।

१० पश्चिमकी विजय-यात्रा

चिंगिसको अपने और अपनी सेनापर पूरा भरोसा था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहकी अस्थायी राजधानी समरकन्दको ले लेनेके बाद ही उसने समझ लिया था, कि अब मुहम्मद उसके सामने

९ खुरासानमें विद्रोह दमन

तालकान जीतनेके वाद १२२१ के आरम्भमें चिंगिसने अपने पुत्र तूलुयको खुरासानके शहरों पर अधिकार करनेके लिये भेजा। जीतें हुए शहरोंसे लोगोंको भर्त्ती करता तूलुय जव मेव पहुंचा, तो उसकी सेना ७० हजार हो गई थी। खुरासानमें भी मगोलोंने गज़ना और ख्वारेज्मकी ध्वस-लीलाकी पुनरावृत्ति की। ख्वारेज्मियोंमें अभी बहुत मे सिंहासनके भूखे आपसमें लड रहे थे। मेवके भूतपूर्व वज़ीर मुदोहन्मुल्क शर्फुद्दीन मुजफ्फरको भी वादशाह होनेका ख्याल आया था। इसके कारण तूलुयका काम आसान हो गया। ३ मासके भीतर ही छोटे-छोटे नगर ही नहीं वल्कि मेव, नेशापोर और हिरात पर भी मगोलोंका झडा फहराने लगा। २५ फरवरी १२२१ ई० को मेर्व फतह हुआ। मगोलोंने चार सो कारीगरोंको छोड वाकी सभी निवासियोंको मार डाला। स्थानीय आभिजात्यवर्गके सरदार जियाउद्दीन अली और मगोल सेनापति वारमास शहरके शासक नियुक्त हुए। वचे-खुचे वाशिन्दोंको एकत्रित करनेका काम दूसरी वार आकर नई मगोल सेनाने किया। १० अप्रैल सनीचरके दिन नेशापोर दखल हुआ। उसके भाग्यमें और भी क्रूरता वदी थी। नवम्वर १२२० ई० मे नेशापोरके प्राकारसे चलाये गये वाणका शिकार तुक्चार हुआ था, इसलिये अपने वहनोईका वदला लेनेके लिये तूलुयने कुछ भी दया दिखलानेसे इनकार कर दिया। शहरकी नींव तक उखेडकर उसे जोत दिया गया। कुछ कारीगरोंको छोडकर सारे वाशिन्दोंको मार डाला गया। ध्वसलीला मचाते समय भी मगोल जानते थे, कि कारीगरोंके

मैं लम्वी सास ले रहा था और सोचता था
इस स्थितिसे छुट्टी पाना असभव है।
लेकिन अल्लाकी मेहरवानीसे मुझे छुट्टी मिल गई,
विना छातीमें वाणसे विधे या तलवारसे दो टुकडे हुए।"

६१ साल वाद जो वला खुसरो और उसके साथियापर पडी, वह चिंगिसकी सेनाके लाखो वन्दियोंके ऊपर भी घटी होगी। प्यासके मारे खुसरोका मगोल सवार और उसका घोडा रावीमें पानी पीनेके लिये टूट पडे, और तुरन्त ही मर गये। उस समय खुसरोको भागनेका मौका मिला। लेकिन खुसरोके जैसे सौभाग्यशाली कितने रहे होंगे? खुसरोने मगोलोंके वारेमें उस समय लिखा था, जवकि उन्होंने सिर्फ हिन्दुस्तानके किनारेको जरासा छुआ भर था। शेरुल् अजम (२) में (शिवलीने) में खुसरोके निम्न पद्य भी उद्धृत हैं—

"यह घटना है या आकाशसे वला आकर प्रकट हुई।
यह आफत है या प्रलय दुनियामें आकर जाहिर हुई।
आफतकी वाढके सामने दुनियाकी जड उखड गई,
कष्ट जैसे इस साल हिन्दुस्तानमें आकर प्रकट हुआ।
हवासे (सूखे) फूलपत्तोंकी तरह मित्र-मडली विखर गई,
मानो फुलवाडीमें पत्तोंका विखराव आकर प्रकट हुआ।
वस चारो ओर दुनियाकी आखोंसे पानी वह चला।
मुल्तानके अन्दर दूसरे पचआव आकर प्रकट हुए।"

मारनेसे धनके उत्पादक हाथ खतम हो जायेंगे, इसलिये वह उन्हे नही मारते थे। कारीगर ही तरह तरहकी बहुमूल्य चीजोको पैदा करते थे, जिनके कारण उस समय व्यापार-लक्ष्मी अपनी चरम सीमा पर पहुची हुई थी। अरबोने भी अपने विजयकालमे उत्पीडित जनोको अपनी ओर खीचकर अपनी शक्ति बढाई थी, उसी बातको दुहराते मगोल भी उत्पीडित, उपेक्षित और अपमानित जातियोको अपनी ओर कर रहे थे। इसका पता इसीसे मालूम होगा, कि नेशापोरको जीतकर तुलुयने चार सौ ताजिकोके साथ एक मगोल सेनपको वहा शासन करनेके लिये छोड दिया। हिरातका भाग्य कुछ अच्छा था। वहा सुल्तानकी १२ हजार सेनाके सिवाय और कोई नही मारा गया। शहर पर भी तुलुयने एक मगोल और एक मुसलमान दो सयुक्त-राज्यपाल नियुक्त किये।

१२२१ के उत्तरार्द्धमे अफवाह उडाई गयी, कि इस्लामके सुल्ताननें मगोलोपर भारी विजय प्राप्त की है। इसके कारण खुरासानके कुछ नगरोमे विद्रोह हो गया। विद्रोह दबानेके लिये जियाउद्दीन मेर्वसे सरख्श गया। बारमासने कारीगरो और दूसरे युद्धबन्दियोको बुखारा भेजनेके लिये शहरसे हटाया। लोगोने समझा, सुल्तान आ रहा है, इसलिये यह भागनेकी तैयारी कर रहे हैं। बारमासने दरवाजेपर जा नगरके कुलीनोको बुलाकर समझानेकी कोशिश की। उसका कोई फल न देख, जिसको भी पाया, उसे मार कर वह बुखारा चला गया। वहा उसकी मृत्यु हो गई, किन्तु मेर्ववाले बन्दी यही थे। जियाउद्दीन फिर लौटा, मगोल भी फिर आगये। इसी समय सुल्तान जलालुद्दीनका गार्द-अफसर कुशतगिन पहलवान एक बडी सेना लेकर आ पहुचा। शहरके गुडे भी उससे मिल गये। जियाउद्दीन दूसरे मगोलोके साथ भागकर मरागके किलेमे पहुचा। कुशतगिनने शहरकी मरम्मत करवाई और खेती-बारीको फिरसे आबाद करना चाहा। वह थोडे ही समयमें इतना मजबूत हो गया, कि बुखारापर आक्रमण कर वहाके मगोल-गवर्नरको भी मारनेमें सफल हुआ। इस विद्रोहको १२२२ ई० की गर्मियोके अन्तमें ही मगोल दबा सके। कराजा नोयनके सरख्श पहुचने पर कुशतगिन अपने हजार सिपाहियोंके साथ मेर्व छोडकर भाग गया। सरख्श और नेशापोरके बीचमें सगबस्तके पास उसके बहुतसे आदमियोको मगोलोने मार डाला। मेर्वमें आकर मगोलोने अपना गुस्सा फिर दुबारा कत्लआम करके उतारा, जिसमे एक लाख आदमियोने प्राण गवाये। उन्होने सेनापति अकमलिक हुमाऊको बाकी बचोंको ढूढकर मारनेके लिए छोड दिया। हुमाऊने अपने मालिकोसे भी अधिक क्रूरता का परिचय दिया। मगोलोके नगरसे हटते ही फिर सिंहासनके कई दावेदार खडे हो गये। अबीवद, खरकान और मेर्व का शासन ताजुद्दीन उमर मसऊद-पुत्रने सभाला। उसने मगोलोकी रसदको भी लूटा, लेकिन नसाका मुहासिरा करते हुए वह मारा गया। इसके बाद तीसरी बार कुतुकू नोयन अपने साथ मगोल, खल्जी और अफगान सेना लेकर आया। खल्जियो और अफगानोने मगोलोंसे भी ज्यादा क्रूरता दिखलाई। अन्तर्वेदमे भी झगडा हुआ, लेकिन वहा बादशाह बननेका स्वप्न देखनेवाले नही पैदा हुए थे, बल्कि केवल मामूली डाकुओने अधिकार जमाना चाहा।

१० पश्चिमकी विजय-यात्रा

चिंगिसको अपने और अपनी सेनापर पूरा भरोसा था। मुहम्मद ख्वारेज्मशाहकी अस्थायी राजधानी समरकन्दको ले लेनेके बाद ही उसने समझ लिया था, कि अब मुहम्मद उसके सामने

टिक नही सकता, इसलिये उसने अपने दो सेनापतियो चेपे और सुबोतइको हुक्म दिया—"दुनिया मे जहा भी मुहम्मदशाह जाये, उसका पीछा करो। जो नगर तुम्हारे लिये अपना द्वार खोल दे, उसे अछूता छोडना, लेकिन जो प्रतिरोध करे, उसे हमला करके सर करना। मुझे विश्वास है, कि यह काम उतना कठिन नही मालूम होगा, जितना कि दिखाई पडता है।" चिंगिसने इन दोनो सेनापतियोंको दो तुमान (२० हजार) सेना दी। अप्रैल १२२० में इन्होने समरकन्दसे प्रस्थान किया। दोनों सेनापति बलख, नेशापोर, रे (तेहरान), हमदान गये। फिर शरदमें कास्पियनके किनारे विश्रामके लिये ठहर गये। सुल्तान मुहम्मदके मरनेकी खबर सुनकर वह काकेशशकी ओर बढ़कर उन्होंने जार्जिया (गुर्जी) पर आक्रमण किया। दरबन्द (काकेशस) से आगे बढ़कर सुबोताइने किपचक घुमन्तुओको उनके मित्र अलानो और दूसरे शक-जातीय घुमन्तुओंसे फोड लिया। फिर वह रूसियोके ऊपर पडे। ८२ हजार सैनिकोके साथ पश्चिमी सीमान्त तकके रूसी राजुल लडनेके लिये इकट्ठा हुए, लेकिन वह मगोल सेनाको रोक नही सके। मजबूत किपचक योद्धा पार्श्वकी रक्षा करते हुए मगोलोको द्नियेपर नदीकी तरफ ले गये। रूसियोके पास सुबोतइ जैसा सैनिक नेता नही था। याद रखनेकी बात है, कि सुबोतइ जैसी कितनी ही मिट्टीमें पडी हुई प्रतिमाओको पारसकी तरह छूकर चिंगिसने महान् सेनापति बना दिया था। दो दिन तक लडाई हुई। रूसी महाराजुल अपने सरदारोंके साथ काफिरोके हाथा मारा गया। थोडेसे लोग जो बचे, वह द्नियेपरके ऊपर की ओर भागे। क्रिमियामें लडते समय चेपे घायल हो गया था, लेकिन उसने गेनोआके व्यापारियोंके एक सुदृढ दुर्गको सर किया। रास्तेमे चेपे मर गया। दोनो सेनापति शायद यूरोपके पश्चिमी छोर तक खून बहाते, किलोको सर करते चले जाते, यदि इसी समय लौटनेके लिये चिंगिसका हुक्म न आया होता। रास्तेमें मगोलोने पहिले की अछूती जगहोको फिर ध्वस्त किया—वोल्गाके किनारे हूणवशी बुलगारोंके नगरो और ग्रामोको मलियामेट कर दिया। एक फारसी इतिहासकारने लिखा था—"क्या तुमने सुना नही है, कि सूर्योदयके (उदयाचल) स्थानसे मुट्ठीभर आदमियोने चलकर लोगोमे अपनी ध्वस-लीला मचाते, रास्तेमें मौत बिखेरते पृथ्वीको कास्पियनके दरवाजे तक जीत लिया? फिर वह स्वस्थ और प्रसन्न लूटके मालसे लदे अपने स्वामीके पास लौट आये।" और यह सब कुछ केवल दो वर्षके भीतर। सुबोताइने काली मिट्टी-वाले दक्षिणी रूसकी विशाल चरभूमिका पता लगा लिया और पीछे फिर लौटकर उसने मास्कोको भी सर किया।

११ मगोल युद्धसाधन

(१) **चिंगिसकी सेनाका कार्य**—सन् १२१९-२५ के ६ वर्षोंमें चिंगिसकी सेनाने वह काम किया, जिसे सैनिक चमत्कार कहा जा सकता है। उत्तरी चीन जीतनेके बाद इसी समय उसने तिब्बतको जीता। कास्पियन समुद्र तक की भूमिको उन्होने केवल एक लाख आदमियो द्वारा जीत लिया और द्नियेपर नदी (उक्रइन) से लेकर चीन सागर तककी भूमिके जीतनेमें केवल ढाई लाख सैनिक इस्तेमाल किये। इसमें भी आधेसे ज्यादा मगोल नही थे। बाकियाको वह बरफकी गेंदकी तरह रास्तेमें अपने साथ लपेटते लिये चले गये। इतिहासकार लिखते है, कि इस अभियानके अन्त समय तक पचास हजार तुर्कमान चिंगिसकी सेनाके साथी बन गये थे। रेगिस्तानी किपचक घुमन्तुओको आत्मसात् कर जूचीकी सेनाने विशाल रूप ले लिया था।

आजक कोरियनो और मचुओके पूवज मगोलो की सेनाके अग वन गये थे।

(२) **मगोल हथियार**[1]—गुरगाचपर आक्रमण करते समय मगोलोने प्रज्वलित नफता (मिट्टीके तेल)के गोलोको इस्तेमाल किया था, जिसका प्रयोग इससे पहिले मुसलमानोने ईसाई धमयोद्धाओंके विरुद्ध नाममात्र ही कर पाया था। १२११ के वाद हम वारूदके उपयोग की वात सुनते है। हो-पाउ (आतिशबाजी) के तौरपर चीनी लोग गधक, शोरा और कोयलेके मिश्रण से बनी वारूद पहिले भी इस्तेमाल करते थे। लेकिन मगोलोने इसे युद्धका हथियार बना दिया लकडीके बने हुए मीनारोको वारूद फेककर वह जला देते। मगोलोंके भयसे आतकित एक लेखकने अतिशयोक्ति करते हुए लिखा था—"इसकी आवाज विजलीकी कडककी तरह होती है, जोकि सो लो(तीस मील)तक सुनाई देती है।" चिंगिसके मरनेके बाद १२३२ ई० मे काइफोङ नगरका मगोलोने मुहासिरा किया था। उसके वारेमे समसामयिक चीनी इतिहासकारने लिखा है—"मिट्टीके भीतर गढा खोदकर छिपे हुये मगोल गोलोकी चोटसे सुरक्षित थे। उस समय हमने चिन् स्यान्-लेई (एक ज्वाला-निक्षेपक यत्र) नामक मशीनको लोहासे वाधकर उसे फकनेका निश्चय किया। हमने मशीनको उस ओर कर दिया, जिधर मगोल सनिक थे। गोलोने फूटकर सैनिको और उनकी ढालोको खड-खड उडा दिया।" इसके वाद कुबिलेखानके समयके एक लेखकने लिखा है—"सम्राट्ने आज्ञा दी, कि अग्नि धनुष छोडा जाय। इसने तुरन्त शत्रु-सेनामे खलवली मचा दी।" मगोल वारूदका इस्तेमाल अभी मुख्यत शत्रुओको भयभीत करने या जलानेके लिये करते थे। वह तोप ढालना नही जानते थे, न उसमें वहुत सुधार कर पाये थे। १२३८-४६ मे विजय करते हुए वह सारे मध्य-यूरोपको अपने हाथमे कर चुके थे और सावु स्वाजके समय अव भी वह पूर्वी पोलदमें रहते थे। जमन सावु स्वार्जका निवास-स्थान फ्राइवुग एक मगोल छावनीसे तीन सौ मीलपर था। यही स्वार्ज है, जिसने पहिले पहल तोप ढालनेका आविष्कार किया। इसमे शक नही, कि उसने मगोलोके अग्नि-बन्दूक को देखा था। यूरोपने पीछे इन तोपोको अपने जहाजो पर लगाकर, विश्व-विजय किया चिंगिज खानके समय से बारूद युग आरभ होकर परमाणु वमके आविष्कारके समय तक चलता रहा।

शायद बाबर १५२५ ई० मे पानीपतमे विजयी होकर भारत का सम्राट् न बनता और मुगल वश इस देशमे अपने दृढ़ शासन और सुन्दर इमारतोको न वना सकता, यदि यूरोपसे सीखे हुए रूमी (तुर्की) कारीगरोने उसे वडे मुहकी तोपे ढालकर न दी होती।

इस प्रकार स्पष्ट है, कि सावु रोजर बेंकन (१२१४-१२९४ ई०) और स्वाजसे बहुत पहिले चीनियाने बारूद बना ली थी। वह उसके फूटनेके गुणको जानते थे, लेकिन उन्होने युद्धके लिये उसका इस्तेमाल नही सा किया। काम लायक पहिली तोप यूरोपवालोने बनाई, इसमें सदेह नही।

(३) **मगोल शिकार**—चीनियोकी आविष्कार-प्रियता और शासन-व्यवस्थाको लेकर मगोल पश्चिममें बहुत दूर तक घुस गये। कितनी ही चीजें उन्होने मुसलमानोसे भी सीखी। चीन और रूसके वीचमें सदाके लिये सबध स्थापित करना मगोलोका काम है। चिंगिसने

---

[1] अग्नि-बन्दूकके अतिरिक्त मगोलोंके दूसरे युद्ध-साधन थे—२० घोडोका रथ, १० आदमियोसे झुकनेवाला पाषाण-निक्षेपक धनुष, दो सौ तोपचियोवाला कतापुल्त, और उडने-वाली आग।

को एक उच्च विज्ञानके तौरपर विकसित किया। जैसे भारतने सैनिक चालोंके अभ्यासके लिये चतुरग (शतरज) का आविष्कार किया, उसी तरह चिगिसने शिकार द्वारा सैनिक व्यूह रचनाकी शिक्षा दी। चिगिसने मध्यएसियामें रहते समय १२२१ ई० में एक शिकार सगठित किया था, जिसका वणन इतिहासमे निम्न प्रकार मिलता है–"शिकार नहीं यह जगली जानवरोंके विरुद्ध एक बाकायदा अभियान था, जिसमे सारा युत (उर्दू) और खान तक भाग ले रहे थे। जहासे सेना कूच आरम्भ करनेवाली थी, वहा झडिया लगी हुई थी। इसी तरह क्षितिजके परे कुरताई शिकारके सगम-स्थान पर भी चिह्न लगा हुआ था। प्राय ८० मीलके भूभागको घेर हुए एक अधवृत्त सा बनाया गया। शिकारिया के पथ-प्रदशनम अधवृत्त अपने दोनो पार्श्वोको बन्द करते कुरताइके पास पहुचने लगा। जगली जानवरोमे भयका सचार होने लगा—हरिन कापते हुए सामने कूदते दिखाई पडे, बाघ इधर से उधर मुह फेरते सिर नीचा करके दहाडने लगे। लेकिन आखोमे दूर कुरताइमे परे शिकारोके चारो ओर वृत्त मजबूतीके साथ बन्द हो गया था। हल्ला अब और ज्यादा होने लगा। पहिले खानने यथेच्छ शिकार किया, तब दूसरोको शिकार करनेकी इजाजत मिली। यह रोमके खूनी खेलके अखाडेकी तरहका मगोल घुमन्तुओका शिकार-वाला अखाडा था। इस अखाडेमें जानेवालोंमेंसे कितने ही जानवरो द्वारा बुरी तरहस आहत या निहत हो बाहर निकाले गये। इस शिकार द्वारा चिगिस अपने सैनिकाको युद्धकी शिक्षा देता था, और सवारोकी पक्तिको मिला लेने के द्वारा वह पशुओ नही मनुष्योको घेरामे लानेका तरीका सिखलाता था।" बलखपर अधिकार करनेके बाद चिगिसने एक पूरे ग्रीष्मकालको इस महान् शिकारमें लगाया, लेकिन खान अब स्वय शिकारमें भाग नही लेता था।

उसने अपने ज्येष्ठ पुत्र जूचीको भाईसे झगडाकर गूरगाचको दखल करनेमें देर करनेके लिये फटकारा और उसे अपने उर्दूके साथ वहासे चले जानेके लिये कहा। जूची अराल समुद्रके परे की मरुभूमिकी ओर रवाना हुआ। चलते वक्त चिगिसने उसे हुक्म दिया अपने शत्रुओंके विरुद्ध आवे मन या आधी घृणाके साथ व्यूह-रचना तथा लूट नही करना चाहिए। तुम्हारा जो भी शत्रु सामने आवे उसकी मनुष्य-शक्तिको पूरी तारसे नष्ट कर देना।

१२ चिंगिस् सम्राट

(१) चाङ्चुन की यात्रा (१२२१ २४ ई०)

ख्वारेज्मशाहपर चढाई करनेके लिये प्रस्थान करके जब चिगिस खान इर्तिश नदीके तट-पर ठहरा था, उसी समय उसने चीनके ताववर्मी सन्त चाङ्-चुन्की प्रसिद्धिके बारेमें सुना। लोगोने बतलाया कि यह महात्मा अमृतसजीवनी जानते है। पर, वस्तुत चाङ्चुन् आध्यात्मिक सजीविनीका वेत्ता था। चीनके विजेता महान् खानका निमत्रण पाकर वह इनकार कैसे कर सकता था? वह खानके पास चला। अपनी यात्राका जो विवरण चाङ्चुनने लिखा है, उसमें मध्यएसियाकी उस समय आखो देखी दशाका पता लगता है। उसने सोचा था, चिगिससे मिलकर मै उसकी निमम हत्याओको रोकनेका कुछ प्रयत्न कर सकूगा। चाङ्चुन् मगोलिया, उइगुर प्रदेश, कुल्जा-प्रदेश, सप्तनद होते हुए नवम्बर १२२१ मे सैराम पहुचा। मगोलोके अभियानके समय जो सडकें तैयार और मरम्मत कराई गई थीं, वह अच्छी हालत में थी। चू नदी पर तख्तेका और तलसपर पत्थरका पुल बनवाया गया था। सिर्-दरियाके उत्तरवाले प्रदेशको

ख्वारेज्मशाहने उजाड दिया था, जो अब फिर आवाद हो गया था। समरकन्द तक उसे सभी जगह मगोल शासक नही वल्कि देशी अफसर मिले थे। सैराम एक वडा नगर था। २० नवम्वर को यहा वैराम-महोत्सव—नव-वर्षोत्सव मनाया जा रहा था। लोग झुडके झुड एक दूसरेका अनुकरण करते घूम रहे थे। सिर दरिया और सैरामके वीचमें दो और नगर मिले थे, जिनमे पहिला सैरामसे तीसरे दिन और दूसरा चौथे दिन आया था। सिर नदीपर नावाका पुल था। सिर नदीसे प्राय दो सौ ली (४० मील) के विस्तारमें सूखा-रेगिस्तान था। इसके दक्खिनमें समरकन्द तक पाच और नगर मिले। हर जगह मुसलमान अफसर थे, जिन्हाने चाङचुन्का वडा स्वागत किया। ३ दिसम्बरको चाङचुन्ने जरफ्शां पार किया और उत्तर-पूर्वी द्वारसे समरकन्दके भीतर दाखिल हुआ। कतलआमके वाद अब नगरकी आवादी चोथाई रह गई थी। चीनिया,कराखिताइयों और दूसरोंके साथ मिलकर लोगोको खेतो और वगीचोंके आवाद करनेकी इजाजत थी। मुखिया सदा भिन्न जातियोंके नियुक्त किये गये थे। नगरका शासक अहाइ करा-खिताई था, जिसको ताइ-सी (देशी) की उपाधि प्राप्त थी। वह चीनी सस्कृतिसे सुपरिचित था।

चाङचुन्की चिंगिससे जो बातचीत हुई,उसमें इसीने दुभाषियाका काम किया था। पहिले अहाई ख्वारेज्मशाहके वनवाये अरुण प्रासादमे रहता था, लेकिन पीछे नदीके उत्तर तरफ रहने लगा, क्योकि जीविका दुष्प्राप्य होनेके कारण नगरके आसपास झुडके झुड डाकू घूमा करते थे। चाङचुन्के आनेसे थोडा ही पहिले विद्रोहियोने आमू दरियाके नावोवाले पुलको नष्टकर दिया था। शायद जलालुद्दीनकी सफलताकी बातें सुनकर कुछ मुसलमान विद्रोहियोको ऐसा करनेका साहस हुआ। चाङचुन् समरकन्दमे पहिली बार २६ अप्रैल १२२२ ई० तक रहा, दूसरी बार मध्य जूनसे १४ सितम्वर तक, और तीसरी वार नवम्वरके आरभसे ३ दिसम्वर तक। इस प्रकार उसे नगरके वारेमें अच्छा परिचय प्राप्त करनेका मौका मिला। उसके वर्णनसे मालूम होता है कि नगरकी अवस्था अब साधारण सी हो गई थी। मुवज्जिनके अजान देते ही नर-नारी मस्जिदोकी ओर दौडते थे। उस समय तक स्त्रिया भी पुरुषोकी तरह साधारण नमाजमे भाग लेती थी। जो लोग नमाज पढ़नेमे ढिलाई करते, उन्हे कडा दण्ड दिया जाता। रमजानकी रातोको भोज हुआ करते। वाजार पण्य वस्तुओंसे भरे थे—सारा नगर तावेके वतनोंसे सोनेकी तरह चमकता था। १२२२ के वसन्तमें चाङचुन् और उसके साथी उपनगरमें घूमने गये। उन्हे सबसे सुन्दर स्थान पश्चिमी नगरान्त मालूम हुआ। शायद इसीको वावरने कूले-मगाक कहा है। आजकल इसे कूले-मागियान कहा जाता है, जो कि अनहारके इलाकेमें है। "वहा पर हमने चारो ओर सरोवर, घासके मैदान, मीनार और तबू देखे।" कही कही वाग भी थे, जिनका मुकाबिला चीनी बाग नही कर सकते थे। सितम्बर १२२२ में जरफशाँकी पहाडियोकी ओरसे दो हजार डाकुओका झुड शहरके पूरवमें प्रकट हुआ। समरकन्दके नागरिक प्रतिरात्रि आस्मानको आगकी ज्वालासे लाल देखते थे। अपने अन्तिम निवासके समय (नवम्वर-दिसम्वर में) सन्तने अपने लिये मिली रसदको खिचडी-लप्सी भूखो को खिलानेके लिये तैयार कराई। खानेवाले वडी सख्यामें जमा हो गये।

सन्त अप्रेलके अन्तमें चिंगिससे मिलने गया। इससे कुछ पहिले ही वक्षु पार (बलख) का यातायात स्थापित हो गया था—जगतइ वर्षके आरम्भमें ही विद्रोहियोको खतमकर पुलको फिरसे वनवा चुका था। चिंगिस इस समय हिन्दूकुशके दक्षिणमे था, जहासे उसके आनेकी सूचना

चाङचुनको माचमे मिली। २७ अप्रैलको समरकन्द छोड चौथे दिन वह किश (शहरसब्ज) पार हुआ। दरवन्द (लोहद्वार) से गुजरते समय चिंगिसके खास हुक्मसे एक हजार मगोल और मुसलमान सैनिको को लिये सेनप बुगुरजी सत के साथ साथ चल रहा था। दरवन्द पार होनेके वाद चाङचुनने दक्षिणका रास्ता लिया और गारद ऊपरी सुरखानमें डाकुओंके विरुद्ध गया। पहाडी लोग अभी हथियार नही रख चुके थे। चाङचुन और उसके साथी सुरखान और वक्षु नदीको नावोंसे पार हुए। उस वक्त सुरखानके दोनो तटोपर उन्होने घना जगल देखा था। वक्षुके घाटसे चार दिनका रास्ता चलनेपर १६ मईको चाङचुन् चिंगिस खानके शिविरमें पहुचा।

चिंगिसने चाङचुन्से मृतसजीनीके वारेमें पूछा। जिसके उत्तरमे सन्तने कहा—"जीवन को कायम रखनेके उपाय है, किन्तु अमरताकी कोई औषधि नही है।" यह सुन खानने निराश होनेका कोई चिह्न नही प्रकट किया, वल्कि सन्तकी ईमानदारीकी प्रशसा की। २५ मई को उसने सन्तके उपदेशोको सुननेका निश्चय किया था, किन्तु इसी समय पहाडोमें मुसलिम विद्रोहियोकी कार्रवाइयोकी खवर मिली, जिससे उपदेश सुननेका समय नवम्वर तकके लिये स्थगित कर दिया गया। सन्त समरकन्दकी ओर लौट आया, और गरमीके वढ़नेपर चिंगिस हिमवत्त पर्वतोकी ओर चला गया। उस समय सन्त भी कुछ दिनो मगोल सेनाके साथ रहा। लौटते समय एक हजार सवारोंके साथ एक मुसलिम सेनप पथ-प्रदर्शन करते सन्तको दूसरे रास्तेसे पहाड ही पहाड ले गया। चाङचुन् लिखता है, कि वक्षुके दक्षिणमे लोहद्वारसे भी अधिक कठिन पहाडी घाटी है। रास्तेमें उसे अभियानमे लौटती एक मगोल सेना मिली, जिससे २ थी (चीनी मोहर) चादीके सिक्केसे संतने पचास मूर्गे खरीदे। सितम्वरमें जव वह किशसे वक्षुकी ओर रवाना हुआ, तो उसके साथ चलनेके लिये हजार पैदल और तीन सौ सवार सैनिक मिले। अव की लोहद्वार नही वल्कि दूसरे रास्तेसे यात्रा करनी पड़ी, जो कि दक्षिण-पश्चिमकी ओरसे था। रास्तेमें नमकका चश्मा और लाल सेंधा नमक मिला। नावसे वक्षु पार हो वह वलख पहुचा, जिसके ध्वसावशेषोका वर्णन करते हुए चाङचुन्ने लिखा है—"वहुत दिन नही हुए, विद्रोह करनेके कारण नगर छोडकर लोग भाग गये। कुत्तोका भूकना अव भी नगरमें सुनाई देता है।" २८ सितम्वरको चाङचुन्का दल मगोल-शिविरमें पहुचा, जो वलखसे पूरव किसी स्थानपर था। चिंगिस अव मुसलिम देशसे स्वदेश लौटनेके रास्तेमें था। सन्त भी उसके साथ कुछ दिनो तक रहा।

(२) **चिंगिस मगोलिया लौटा**—ख्वारेज्मशाह के विद्रोही सेनापति सैफुद्दीन अगराक और आजिम मलिक की सेना अभी नष्ट नही हुई थी, इसलिये चिंगिस को तीन मास तक सिंधु तटपर रहना पडा। मगोलिया लौटने के लिये वह भारतसे हिमालय और तिव्वत का रास्ता पकडना चाहता था। उसकी सेना में वहुत से उइगुर और तिव्वती वौद्ध थे, जो वौद्ध तीर्थोंकी यात्रा करने के कारण भारत के रास्ते को जानते थे। उसने दिल्ली सुल्तान शमशुद्दीन अल्तमश को चिट्ठी लिखकर कहा, कि हम इस रास्ते जाना चाहते हैं, उसका प्रवन्ध करो। लेकिन जान पडता है, चिंगिस ने स्वय अपना इरादा वदल दिया, नही तो अल्तमश की क्या शामत आयी थी, कि वह चिंगिस की इच्छा का विरोध करता। हिमालय की जोतें भी वरफ के कारण वन्द थीं। चिंगिस को यह भी खवर मिली, कि तगुत (ह्रिया) राजा ने विद्रोह कर दिया है। ज्योतिषियो ने भी हिमालय का रास्ता पकडने को वुरा वतलाया। फरवरी या मार्च १२२२ ई० में चिंगिस पेशा-

वरसे काबुल के लिये रवाना हुआ। खान का हुकम था, इसलिये लाखो मजदूरो ने मिलकर डांडे पर पडी हुई वरफ को साफ कर दिया। वामियान के पहाडो से होते वह वगलान पहुचा, और वहीआसपास के विश्राम स्थानो में उसने गरमियो के दिन विताये। रास्ता चलते हुये मगोल सेनापतियों का एक काम था, वहा के पहाडी किलो को तोडना, यातायात को ठीक करना और रसद की रक्षा करना। उत्तरी अफगानिस्तान जैसे दुर्गम रास्तेमे भी मुख्य मगोल सेना को किसी कठिनाई का सामना नही करना पडा, यह चिंगिस की सैनिक दूरदर्शिता और प्रतिभा का प्रमाण था। मगोलो को सबसे अधिक हानि तालकान में उठानी पडी, जहा पर गजना जाते वक्त चिंगिस ने अपनी रसद को छोड दिया था। अशियार (गर्जिस्तान) के पहाडी किलेका मुखिया अमीर मुहम्मद मरगानी ने रसद के ऊपर धावा वोल दिया, और सोने और दूसरे वहुमूल्य सामान से भरे बोझो को लूट ले गया, वहुत से घोडो को भी उसने छीना और काफी युद्ध-वन्दियो को मुक्त कर दिया। १२२३ के आरभ मे मगोलो ने उसके किले को १५ महीने के मुहासिरे के वाद दखल किया। १२२१ और १२२३ के वीच में गर्जिस्तान के दूसरे किलो को भी मगोलो ने जीत लिया।

चाङ-चुन् के अनुसार चिंगिस की सेना तैरते पुल (नावो के पुल) द्वारा ६ अक्तूवर १२२२ को वक्षु पार हुई। २०,२४ और २८ अक्तूवर को तीन वार चिंगिस ने चाङ-चुन् का भाषण सुना, जिसका अनुवाद अहाइ ने किया और खान के हुकम से वह व्याख्यान लिख लिया गया। नवम्बर के आरम्भ में समरकन्द पहुचने पर सन्त को सुल्तान के पुराने महलमें उतारा गया। मगोल-शिविर शहर से छ मील (३० ली) पूरव मे था। चिंगिस अधिक नही ठहरा और उसने चाङचुन् को कष्ट न हो, इसके लिये उसे अपनी इच्छानुसार चलने की इजाजत दे दी। जनवरी १२२३ में चिंगिस का शिविर सिर्-दरियाके दक्षिण तट पर था। शायद १० मार्च को वह चिर्चिक नदी के तट पर पूर्वी पवतो के पास था। चिंगिस सूअर का शिकार करते घोडे से गिर गया, और जगली सूअर ने हमला करके करीव करीव उसे मार डाला था। चाङचुन् ने उसे वुढापे में शिकार न करने की सलाह दी, जिसे चिंगिस ने स्वीकार किया। तुरन्त शिकार छोडना अपने लिये उसने मुश्किल समझा, तो भी अगले दो महीने उसने शिकार में भाग नही लिया।

१२२२ के शरद मे वक्षु पार होने के वाद चिंगिसने समरकन्द मे काफी समय विताया। इस समय जगतय और उगुतय जरफशा के मुहाने के पास कराकुलमें चिडियो का शिकार कर रहे थे। उन्होंने वहाँ से पचास ऊटो पर तलही चिडियो को अपने वाप के पास भेजा। १२२३ के वसन्त में चिंगिस ने अपनी उत्तराभिमुख यात्रा शुरू की। सैराम से तीन मजिल पर शायद चिरचिक के तट पर जगताय और उगुतय से उसकी मुलाकात हुई। कुरुल्ताई (महापरिषद्) भी यही हुई। अकलसाद्र पवत से उत्तर दुलानवाशी के मैदान में ज्येष्ठ पुत्र जूची भी पिता से आ मिला। उसने २० हजार सफेद घोडों की भेंट पेश की थी। पिता की आज्ञा से वह जगली गदहो का शिकार करने गया। १२२३ ई० की गर्मियों को मगोलो ने यही विताया। यही उइगुर अमीरो पर अभियोग लगाकर उन्हे मृत्युदण्ड दिया गया। चिंगिस अपने पुत्रो के आने पर कुछ की प्रतीक्षा करने लगा। १ अप्रैल को चाङचुन् ने उससे विदाई ली। आगे १२२४ की गर्मियो को चिंगिस नेट इर्तिश तट पर विताया और १२२५ के वसन्त में वह अपने उर्दू मे मगोलिया पहुच गया।

(३) **जूचीकी मृत्यु**—१२२३ ई०से अन्तर्वेद और ख्वारेजमम मगोलोका अकण्टक राज्य शुरू हो गया। ख्वारेजम के नगरोको समालनेमे जितना समय लगा, उससे कही जल्दी अन्तर्वेदके नगर फिरसे आवाद हो गये। ख्वारेजम की विजय के वाद जूचीने वहा चिनतिमूर को राज्यपाल नियुक्त किया। खुरासान और माजन्दरानका भी अधिकार जूचीको मिला था। जूची गुरगाचको ध्वस्त होने से नही वचा सका, यह कह आये ह, मगर थोडे ही समय में उसके पास एक वडा नया शहर वस गया। गुरगाच का नाम वदल कर मगोलो ने उसे उरगज कर दिया, जो आज भी इसी नाम मे मशहूर है। १० वी सदी मे शहर वक्षु नदी के वायें किनारे पर था। १३ वी सदी मे जव वह विशाल साम्राज्य की राजधानी वना, तो नदी के दोनो तरफ शहर वस गया और यातायात के लिये कई पुल वना दिये गये। नया उरगज वक्षु की दूसरी धारा पर वसाया गया। यह धारा उस समय कास्पियन में गिरने लगी थी। आगे वह धारा वन्द हो गई। [१९५० ई० से सोवियत सरकार ने फिर वक्षु से एक वडी नहर (महान् तुर्कमान नहर) निकालकर उसे कास्पियन समुद्र से मिलाने का काम शुरू कर दिया है।] वर्तमान कून्या-उरगच का अस्तित्त्व १९ वी सदी से है। मंगोलो के समय से ही उरगच यूरोप और एसिया के वणिक्पथ पर होनेसे वहुत वडा व्यापारिक केंद्र वन गया। व्यापार को अधिक दिनो तक अस्तव्यस्त हालत में नही रखा जा सकता था, इसलिये व्यापारिक नगर को वढ़ने मे सुभीता हुआ, तो भी ख्वारेज्म-देश को सभलने में वहुत समय लगा। वक्षु का टूटा वाघ वहुत समय तक नही तैयार किया जा सका और ३ शताब्दियो तक वक्षु कास्पियन समुद्र में गिरती रही।

जूची अपने पिता के साथ मगोलिया नही गया। उसे अपने विशाल प्रदेश का शासन करना था। उसने अपने पुत्रो को पिता के साथ कर दिया, लेकिन जूची के न आने से उसके साथ पिता का मनमुटाव सदा के लिये हो गया। पिता की मृत्यु से ६ महीने पहिले १२२७ ई० में जूची मर गया।

(४) **चिंगिसकी मृत्यु (१२२७ ई०)**—सैंसठ साल की उमर में भी चिंगिस शरीर से सुदृढ़ और सुपुष्ठ था। उसकी आखें विल्ली की तरह कजी थी। सिर पर थोडा सा सफेद वाल, शरीर लम्वा-चौडा और ललाट प्रशस्त था। लम्वी दाढी ठुड्ढी पर लटकती थी। चिंगिस में असाधारण आत्मसयम था। किसी भी परिस्थिति में वह एक-तरफा भाव नही प्रकट करता था। जरूरत पडने पर वह हजारो-लाखो को कत्ल करवा सकता था, लेकिन जलालुद्दीन की तरह वह यत्रणा देकर मारना पसन्द नही करता था। उसकी सतानो में रूस का स्वामी वातू-खान रूसी इतिहास कारोकी आखो में खूनी पशु था, लेकिन मगोलों के लिये वह साइन खान (भला खान) था। जगतइ और गूयुक खान को कभी मुह पर मुस्कराहट लाते देखा नही गया। वह प्रजा में भय सचार करना शासक का आवश्यक कर्तव्य समझते थे। उगुतय मुसलमानो के प्रति वडी नरमी और न्याय दिखलाने के लिये प्रसिद्ध था। चिंगिस का सिद्धात था—

"न हलवा वन कि चट कर जायें भूखे। न कडवा वन कि जो चक्खे सो थूके।"

चिंगिस चोरी और झूठ का सख्त दुश्मन था। चिंगिस के अनुशासन में पले मगोल ऐसा करने की क्षमता नही रखते थे। शराव मे भी चिंगिस अति नही करता था। उसके हरम में चीन से रूस भारत से मगोलिया तक की सुन्दरिया चुन चुन कर लाई गई थी। लेकिन उसको

उनके बारे में भी व्यसनी नही कहा जा सकता। कड़ा अनुशासन, और दृढ़ संगठन चिंगिस का मूलमंत्र था। दूसरे संगठनों की तरह सेना, सैनिक नेताओं और स्वयं खान के लिये स्त्रियों को पहुंचाना बहुत कड़ाई के साथ किया जाता था। बुढ़ापे मे भी चिंगिस शरीर और मन से बिलकुल स्वस्थ था। वह स्वयं घुमन्तू जाति में पैदा हुआ था। अपने तथा अपने उत्तराधिकारियों के लिये वह उसी जीवन को पसन्द करता था, लेकिन साथ ही वह बौद्धिक संस्कृति से भी समझौता करना चाहता था। जिसका प्रभाव उसके उत्तराधिकारियों पर अधिक पड़ा। यह संगठन ही था, जिसके बल पर चिंगिस की मृत्यु (१२२७ ई०) के ४५ साल बाद तक एसिया और यूरोप मे फैला उसका विशाल साम्राज्य विश्रृंखलित नहीं हुआ। पीछे चीन, मध्यएसिया, रूस और ईरान में अलग अलग राज्य अवश्य कायम हुए, तो भी वह चौदहवी सदी तक चलते रहे।

१२२७ ई० के अगस्त में ७२ साल की उमर में चिंगिस मंगोलिया में मरा। उसने अपने पुत्रों के लिये एक विशाल साम्राज्य, एक विशाल और सुसंगठित सेना और साथ ही राजनीति तथा शासन-नियम छोड़े। उसका विजित भूखंड प्रशान्त महासागर से पश्चिम में यूक्सिन तक फैला हुआ था। उसकी प्रजा मे चीनी, तंगुत (अमदो), अफगान, ईरानी, तुर्क आदि जातियां थी उसने अपने चारों लड़को के लिये अलग अलग भूभाग बांट दिये थे पर साथ ही कहा था, कि सारे मंगोल-साम्राज्य का एक खाकान होगा।

(५) **चिंगिसकी समाधि**—चिंगिस की समाधि कहां बनी थी, इसके बारे में निश्चयपूर्वक कुछ कहना मुश्किल है। उलानबातुर (उर्गा) के पास खानउला पहाड़ है, उसे भी चिंगिस की समाधि का स्थान बताया जाता है। इसके अतिरिक्त उर्दुस (ह्वाङ-हो) प्रदेश में येतृजिन्क्रो में मंगोलीय तृतीय मास में इक्कीस दिन के लिये सारे मंगोल राजा जमा होते थे। यही पर महान् खाकान का चारजामा, एक धनुष और दूसरी चीजे रक्खी हुई है। वह एक शिविरमें में लाई जाती है। यहां पर कोई नगर नहीं है, बल्कि कटे हुए पत्थरों की दीवारों के चारों तरफ डेरा डालने का स्थान है। यही पर नमदे के दो तंबू खड़े किये जाते है, जिनमे से एक में एक पत्थर का डब्बा रखा रहता है। डब्बे के भीतर क्या है, यह किसी को मालूम नहीं। अब भी विशेष-अधिकार प्राप्त पांच सौ परिवार उसकी रक्षा करते है। यह स्थान चीन के महाप्राकार से बाहर ह्वाङ हो के मोड़ के दक्खिन में उत्तरी आक्षांश ९० तथा देशान्तर १०४०° में है।

(६) **जलालुद्दीनका अवसान (१२३१ ई०)**—जलालुद्दीन ख्वारेजमशाह वैसे सिंध के किनारे मंगोलो से लड़ते वक्त बच निकला और कितनी ही छोटी-मोटी लड़ाइयां लड़ता रहा, लेकिन मंगोलोंके सामने फिर वह जम नही सका। अन्त में पश्चिमी ईरान के पहाड़ो मे रहते समय एक कुर्द ने १२३१ (६२८ हि०) ने उसे मार डाला।

(७) **परिणाम**—मंगोल-विजय से मध्यएसिया मे एक नये युग का आरम्भ हुआ, इसमें संदेह नही। यही नहीं बल्कि हम कह सकते हैं, कि मंगोलोंके कारण दुनिया के इतिहास में एक नये युग का आरम्भ हुआ। मंगोलो द्वारा ही बारूद और मुद्रणकला यूरोप में पहुंची, जिसे अपना कर आगे यूरोप दुनिया का अगुआ बन गया। जहां तक मध्य एसिया का संबंध है, मंगोलों ने विजयी इस्लाम के अभिमान को चूर-चूर कर दिया। अरब-विजेताओ ने भारी विश्वासघात और दूसरे तरीको से जितनी असानी से अपने राज्य का विस्तार किया था, उससे वह समझने लगे थे, कि इस्लाम दुनिया में विजय और शासन करने के लिये आया है। यद्यपि मंगोलों

को अब अरबो के शासन के मध्याह्न काल में अरबी शक्ति से मुकाबिला करने का मौका नहीं मिला। इस समय मध्यएसिया, ईरान, क्षुद्रेसिया तथा भारत के भी शासक मुसलमान होते हुए भी अरब नही तुर्क थे, तो भी इस्लाम की अजेयता के गीत चारों ओर गाये जाते थे। मगोल क्रूर थे, लेकिन चिंगिस ने उन्हें ऐसी कड़ी शिक्षा दी थी, कि वह धोखा देने के लिये जिस झूठ की बड़ी आवश्यकता थी, उसे वाल नही सकते थे, चोरी कर नहीं सकते थे। धर्म के बारे में वह निष्पक्ष रहते थे, विजित जातियो के सहयोग के इच्छुक थे, और उनके आदमियो की योग्यता नुसार सैनिक और असैनिक बड़े बड़े पदो का देने म भी आनाकानी नहीं करते थे। व्यापार के महत्त्व को वह समझते थे, इसीलिये वह कारीगरो का कभी नहीं मारते थे। वह सड़को और पुलो की मरम्मत का बहुत ध्यान रखते थे और उजड़े खेतो और बागो को जल्द से जल्द आबाद करने में सहायता करते थे। यही कारण था, जो देश की उत्पादक शक्तिया बड़ी तेजी के साथ फिर से अपने कामको पूर्ववत् करने लगती,व्यापार खूब चमकने लगता। मगोलो ने देशो की सीमाओं का तोडने म इस्लाम से भी ज्यादा काम किया। मुहासिरे का काम करने के लिये युद्ध-बन्दियो की बड़ी बड़ी फौजें सगठित कर वह एक स्थान से दूसरे स्थान, एक देश से दूसरे देश ले जाते थे। जहा भी कोई नया सैनिक हथियार या साधन मिलता, वह उसका उपयोग करते और बनाने वाले कारीगरो को दूर तक ले जाते। गुरगाच के एक लाख कारीगरो को वह अपने साम्राज्य के पूर्वी भाग म ले गये थे। अपने शत्रुओ के प्रति कठोर अवश्य थे और उन्होंने गुरगाच, बुखारा समरकन्द, बलख, नेशापोर, मेव तथा और बहुत से छोटे-मोटे नगरो के लाखो आदमियो को घास-मूली की तरह काटा। चिंगिस इसे विजय की एक कुजी मानता था प्रतिरोध करनेवालो को एक मतबे बडी निष्ठुरता के साथ पीस डालो, उनके बाल बच्चो तक को मत छोड़ो, फिर दूसरो को इससे कड़ी शिक्षा मिलेगी। तैमूर ने भी चिंगिस के इस गुर को अपनाया और द्वितीय विश्वयुद्ध मे हिटलर ने भी चिंगिस से इस गुरुमत्र को लिया। लेकिन एक बार जब लड़ाई बन्द हो जाती, विद्रोही दब जाते, तो मगोल निर्माण के लिये भी एक सुसगठित विशाल शासन और दूसरे साधन प्रस्तुत करते।

(८) **यास्सा**—चिंगिस के बनाये नियमो को यास्सा कहा जाता था। तैमूर और उसके वशज बाबर पैगम्बर मुहम्मद के अनुयायी थे, लेकिन जहा तक राजनीति और युद्धनीति का सबध था, वह मुहम्मद की शरीयत के भी ऊपर चिंगिस के यास्सा को मानते थे। शायद बहुत लोगो को मालूम नही है, कि भारत के मुगल बादशाहों में खतना नही किया जाता था, जोकि चिंगिस से अपने सबध को दिखलाने के लिये ही था। चिंगिस जन्म भर अनपढ़ रहा, लेकिन वह लिखने पढने के महत्व से इन्कार नही करता था। जैसे ही उइगुर लिपि मगोल भाषा के लिये प्रयुक्त हुई, वैसे ही चिंगिस के मौखिक नियमो और आज्ञाओको लिखा जाने लगा। चिंगिस को मगोल लोग बोग्दा (देवप्रेषित) कहते थे। कारपीनीने लिखा है—"वह (मगोल) सबसे अधिक अपने स्वामी (चिंगिस) के आज्ञाकारी थे। वह उसका भारी सम्मान करते और धोखा देने के लिये कभी एक शब्द भी नही बोलते थे। शायद ही कभी वह आपसमें लडते-झगडते, एक दूसरेको घायल करते या मारते। चिंगिस के राज्य में कही चोर-डाकू नही मिलते थे, इसीलिए मगोलो के घोड़े, खजाने तथा सब तरह के माल से लदी हुई गाडिया ऐसे ही खडी कर दी जाती, उनकी रखवाली का इतिजाम नही किया जाता। मगोलो के गल्ले का कोई पशु यदि खो जाता, तो लोग उसे

चीजो के अफसर के पास पहुचा देते ।'अपने भीतर एक दूसरे के साथ वह बडी नम्रतापूर्वक बर्ताव करते ह। भोजन की कमी हो तब भी वह मुक्त-हृदय से आपस मे बाटकर खाते है। कष्ट के समय वह बडे धैर्यशाली हैं। चाहे मगोलो को एक या दो दिन से अन्न न मिला हो,तो भी वह गाते है, विनोद करते हैं। यात्रा मे सर्दी और गर्मी दोनो को बिना दु ख प्रकट किये बर्दाश्त करते हैं। यद्यपि अक्सर शराब के नशे मे मस्त हो जाते है, लेकिन उसके कारण वह कभी झगडा नही करते। बदमस्ती उनके भीतर एक सम्मान की चीज मानी जाती है। जब कोई मगोल अत्यधिक पान करके कै करता है, तो वह फिर पीना शुरू करता है। दूसरे लोगो के प्रति वह अत्यत अभिमानी और रोब दिखलाने वाले होते हैं। चाहे कोई कितना ही बडा आदमी क्यो न हो, दूसरी जाति के आदमी को मगोल नीच दृष्टि से देखते हैं। हमने इस तरह का बर्ताव खान के दरबार मे रूस के महाराजकुल, जार्जिया के राजकुमार, बहुत से सुल्तानो और बडे आदमियो के साथ होते देखा, जो कि भेट और सम्मान प्रकट करने के लिये दरबार मे आये थे। यहा तक कि उनकी सेवा के लिये जो तातार (मगोल) नियुक्त किये गये थे, चाहे उनकी स्थिति कितनी ही हीन हो, लेकिन वह इन बन्दी कुलीनो के आगे आगे जाते और उनसे ऊचा स्थान ग्रहण करते। दूसरे आदमियो से वह जरा सी बात पर बिगड जाते हैं। इतने अभिमानी है, कि जिस पर विश्वास नही किया जाता।"

ऐसी जाति के पथ-प्रदर्शन के लिये चिंगिस खान ने यास्सा बनाया था। बाबरने लिखा है—"मेरे पूर्वज और परिवार के लोग बडे पवित्र भाव से चिंगिस के नियमो (यास्सा) का अनुसरण करते थे। अपने भोजो, दरबारो, उत्सवो और विनोद-मडलियो मे, अपने उठने और बैठने में उन्होंने कभी चिंगिस के नियमो के विरुद्ध आचरण नही किया।

यास्सा के कुछ नियम निम्न प्रकार हैं—

"१ यह विधान किया जाता है, कि स्वर्ग और पृथ्वी के कर्ता केवल एक भगवान् पर विश्वास करना चाहिये। केवल वही अपनी इच्छा से जीवन और मृत्यु,गरीबी और अमीरी प्रदान करता है। वह हरेक चीज पर पूर्ण अधिकार रखता है।

२ धार्मिक नेताओ, उपदेशको, साधुओ, धर्माचारी व्यक्तियो, मस्जिद के मुअज्जिनो, चिकित्सकों, और मुर्दा नहलाने वालो को राज्य की ओर से भोजन देना चाहिये।

३ खानजादो (राजकुमारो), खानो, अफसरों और दूसरे मगोल सरदारो द्वारा महा-परिषद् (कूरिल्ताई) में निर्वाचित हुए बिना जो अपने को खाकान (सम्राट) घोपित करे, वह चाहे जो भी हो, उसे मृत्यु-दण्ड दिया जायगा।

४ मगोलो के अधीनस्थ जातियों के सरदार या कबीले की सम्मानीय उपाधियोको धारण करना निषिद्ध है।

५ जिसने अधीनता नही स्वीकार की है, ऐसे किसी राजा, प्रदेश या जाति से सुलह करना निषिद्ध है।

६ सेना के आदमियों को १०, १००, १०००, १०००० के विभागो में विभाजन करने के नियम को कायम रखा जाय। इस प्रबन्धके अनुसार बहुत थोडे समयमें एक वाहिनी और सेना-पति की इकाइयो को तैयार किया जा सकता है।

७ जैसे ही कोई अभियान आरभ हो, उसी समय प्रत्येक सिपाही को अपने उस अफसर

के हाथ से हथियार मिलने चाहिये, जिसके कि वह अधीन है। सिपाहियों को हथियार अच्छी हालत में रखना चाहिये, और युद्ध से पहिले अफसर से उसका निरीक्षण करा लेना चाहिये।

८ कमांडिंग सेनापति की आज्ञा के बिना शत्रु का लूटने की सजा मृत्युदण्ड है। लेकिन आज्ञा मिलने के बाद सिपाही को लूटने का उतना ही अवसर मिलना चाहिये, जितना अफसर को और जो कुछ भी वह अपने साथ ले जाय, यदि उसने खान के लिये उगाहक-अफसर को उसमें से भाग दे दिया है, तो बाकी को अपने पास रखने का उसे हक है।

९ सेना के आदमियों को अभ्यस्त रखने के लिये प्रत्येक जाड़े में एक भारी शिकार का प्रबंध किया जायेगा। इसके लिये साम्राज्य के हरेक आदमी को मार्च और अक्तूबर के बीच के महीनों में हरिन, हरिनी, खरगोश, जंगली गदहों और कितनी ही चिड़ियों का शिकार करना मना है।

१० खाने के लिये मारे जानेवाले जानवर का गला रेतना मना है। मारने के लिये बांध कर उनकी छाती छेदनी चाहिये, और शिकारी को चाहिये, कि हाथ से कलेजे को निकाल ले।

११ पहिले चाहे इसका निषेध रहा हो, किन्तु अब जानवरों के खून और अंतड़ी का खाना विहित है।

१२ नवीन साम्राज्य के सरदारों और अफसरों को उतनी ही रियायतें और सुरक्षायें मिलनी चाहिये, जिनकी सूची बना दी गई है।

१३ जो आदमी लड़ाई में भाग नहीं लेता, उसे कुछ निश्चित समय तक बिना मजूरी साम्राज्य के लिये काम करना होगा।

१४ जिस आदमी ने एक घोड़े या टाघन या उसके मूल्य के बराबर ही चीज की चोरी की है, उसे मृत्यु-दण्ड दिया जायगा, और उसके शरीर को दो टुकड़े कर दिया जायगा। इससे कम की चोरी की हुई चीज के लिये मूल्य के अनुसार ७, १७, २७ तक बेंत मारने की सजा दी जायगी, लेकिन चोरी गई चीज के मूल्य का नौ गुना दण्ड देने पर शारीरिक दण्ड से छुटकारा मिल सकता है।

१५ साम्राज्य का अधीनस्थ कोई आदमी किसी मंगोल को सेवक या दास नहीं रख सकता। कुछ थोड़ी सी स्थितियों को छोड़कर प्रत्येक (मंगोल) पुरुष को सेना में भरती होना पड़ेगा।

१६ जो कोई विदेशी दासी को भागने से नहीं रोकता या उन्हें शरण, खाना या कपड़ा देता है, उसे मृत्युदण्ड दिया जायगा। उस आदमी को भी इसी प्रकार का दण्ड दिया जायगा, जो कि भगोड़े दास से भेंट होने पर उसे उसके मालिक के पास नहीं पहुंचाता।

१७ विवाह कानून आज्ञा देता है कि हरेक आदमी अपनी स्त्री को खरीद सकेगा। अपने भाई-बन्धुओं में प्रथम और दूसरी श्रेणी के नजदीकी सम्बन्धियों के बीच में विवाह वर्जित है। एक आदमी दो बहनों को ब्याह सकता है, उतनी ही रखेलियों को रख सकता है। अपने पति की इच्छा के अनुसार स्त्रियां सम्पत्ति, तथा क्रय-विक्रय के काम को कर सकती हैं। आदमी (मंगोल) को केवल शिकार और युद्ध में लगना चाहिये। दासियों से पैदा हुए बच्चे वैसे ही वैध संतान हैं

जैसे कि पत्नियो के बच्चे । प्रथम पत्नी की प्रथम सतान को दूसरे बच्चो से अधिक सम्मान मिलना चाहिये । हरेक चीज का वही उत्तराधिकारी माना जायेगा ।

१८ व्यभिचार की सजा मृत्यु-दण्ड है । जो इसका अपराधी है, उसे उसी समय मारा जा सकता है ।

१९ अगर दो परिवार व्याह द्वारा सबधित होना चाहते हैं, और यदि उनके पास छोटे बच्चे है, उनमे से एक लडका है, और दूसरा लडकी, तो उन बच्चो का विवाह हो सकता है । यदि बच्चे मर जाये, तो भी विवाह-बन्धन मौजूद रहेगा ।

२० बिजली कडकने (वर्षा) के समय बहते पानी मे नहाना या कपडा धोना निषिद्ध है ।

२१ गुप्तचर, झूठे गवाह, हीन-दुराचारी ऐसे सभी आदमियो तथा जादूगरो को मृत्यु की सजा दी जायगी ।

२२ जो अफसर और सरदार अपनी ड्यूटी पर नही पहुचते, अथवा खान के बुलाने पर नही आते—विशेषकर दूर के प्रदेशो मे होते हुये—ऐसे आदमियो को कत्ल कर दिया जायगा । अगर उनका अपराध कुछ हलका हो, तो उन्हे स्वय खान के पास आना होगा ।

नही कहा जा सकता, यास्सा के इन नियमो मे से सभी चिंगिस के मुह से निकले थे । तो भी आशा की जाती है, कि इनमें से अधिकाश बातें चिंगिस की ही है । पैती दे. लाक्रुवा ने यास्सा का अनुवाद करते हुये लिखा है, कि मुझे पूरी सूची नही मिली । क्रुवा ने इन्हें फारसी इतिहासकारो, रुवरिक और कारपीनी के ग्रथो से जमा किया ।

स्रोत-ग्रन्थ

1 Turkistan Down to the Mongol Invasion (W Bartold)

2 Heart of Asia (E D Ross)

3 Chingis Khan (Harold Lamb, London 1924)

४ युआन चाओ बि शि (सपादक स० अ० कोजिन)

5 Life of Jengis Khan (R K Douglus, 1877)

6 Introduction a l'histoire de l' Asia Turcs et Mongol des Origines a' 1405 (Leon Cohun Paris 1896)

7 (Travel of) John of Plano Carpini (London 1900)

8 Ibna Batuta (Paris 1853)

9 Marco Polo (अनुवादक Henry Yule, 1921)

10 The Journey to the Eastern Parts of the World (William of Rubrique, London 1900)

11 Medieval Researches from Eastern Asiatic Sources (Liu Chutsui, London 1888)

12 A Literery History of Persia, (E G Browne, 1906-20)

13 Cambridge Medievel History Vol iv, The Eastern Roman Empire 1923)

14 Melange d' Histoire et de Geographie Orientale (H Cordier Paris 1920)

15 Cathy and the Way Thither (Henry Yule)

१६ जामउत्-तवारीख (फज्लुल्ला रशीदुद्दीन)

१७ तारीख जहांगुशा (अलाउद्दीन अता-मलिक १२५७-६० ई०)

18 Chronology of Ancient Nations (Alberuni, अनुवादक E Sachan

19 Histoire general des Huns, de Turcs, des Mongols et des autres Tartars Occidenteux (J Deguigne)

20 Vie de Djenghiz Khan (मीर खान्द, अनु० Joubert)

21 Discription Topographique et Historique de Boukhara (Nerchakhy, Schefer)

22 Histoire des Mongols (D ' Ohesson)

२३ तबकात-नासिरी (जुज़जानी)

२४ मंगोलिया स्त्राना तगुतोफ (न म प्र्झेवाल्स्की, मास्को १९४६)

२५ किताबुल-हिन्द (अबूरेहा अल्बेरुनी, अनु० सैयद असगर अली, अंजुमन तरक्की उर्दू दिल्ली १९४१)

२६ मंगोल्स्कया पोवेस्त ओ खाने खरन् गङ (ग० द० सम्भेफ, लेनिनग्राद १९३७)

परिशिष्ट १

मध्यएसिया का इतिहास (१)

पुस्तक-सूचि

अल्बेरूनी । अबूरैहाँ "किताबुल्‌हिन्द" (अंजुमन त० उर्दू, दिल्ली १९४१)

आर्खितेक्तुर्निये पाम्यात्निकि तुर्कमेनिइ (मास्को १८३९)

आर्खेओलोगिचेस्किये रस्कोप्कि व् त्रिअलेति (त्बिलिसि १९२८)

इनस्त्रान्त्सेफ । क० हुन्नु इ गुन्नी (लेनिनग्राद १९२६)

उपाध्याय । भागवतशरण प्राचीन भारतका इतिहास (पटना १९४९)

उपाध्याय । वासुदेव भारतीय सिक्के (प्रयाग १९४८)

ओर्बेली । इ०अ० "प्राव्लोमा सेल्जुस्कओ इस्कुस्त्वो"। "सिनखोनिचेस्किये तबलित्सी द्ल्या पो खिज्रे ना येवरोपेइस्कोये लेताइस् चिस्लेनिये (लेनिनग्राद १९४०)

क्रात्किये सोओब्श्चेनिया, VII, X, XII, (लेनिनग्राद)

क्रिस्तियान्सन । आर्थर ईरान दर जमान सासानियान (अनुवादक रशीद यासमी तेहरान १३१७)

जुजजानी "तबकात-नासिरी"

ताल्स्तोफ । स० प० खोरेज्म्स्कया एक्सपेदेत्सिया (१९३९), नोवियें मतेरिअली पो इस्तोरिइ कुल्तुरि द्रेव्नओ खोरज्म। (वेस्त्नेक द्रेव्नइ इस्तोरिइ (१९४६)

त्रेवर । क०व० कोव्रा इज नोइन उला (लेनिनग्राद् १९४७) । पाम्यात्निकि ग्रेको-बाक्त्रि-इस्कओ इस्कुस्त्वा (मास्को)

त्रुदी अत्देला नुमिजमातिकी (लेनिनग्राद १९४५), त्रुदी उज्बेकिस्तान्स्कओ अकदमी नाउक (ताशकंद १९४०)

निजामुल्मुल्क "सियासतनामा" (लाहोर)

पाम्यात्निकि व् चेस्त कुतुलतेमिना (क्रा० सा० XII २-४)

पिगुलेव्स्कया । न सिरिइस्कये इस्तोच्निकि पो इस्तोरिइ नरोदोफ (लेनिनग्राद १९४१)

प्र्झेवाल्स्की । न० म० मंगोलिया इ स्त्राना तंगुतोफ़ (मास्को १९४६)

बरतोल्द । व० व० ओचेर्क इस्तोरिइ तुर्कमान्स्कओ नरोद (१९२४), ओचेर्क इस्तोरिइ सेमिरेच्या (वेर्नी १८९८), किर्गिज़ी (फ्रुन्जे १९२७)

बेर्न्श्ताम । अ० न० आर्खेओगिचेस्किइ ओचेर्क सेवेर्नोइ किर्गिजिइ (फ्रुंजे १९४१), सेवेर्नोकिर्गिज्जि इ पो चुइस्कओ कनाला (फ्रुंजे १९४३), त्युरोक (लेनिनग्राद १९४६), सोग्दिइस्कया कलोनिजात्सिया सेमिरेच्या

मलिक। अलाउद्दीन अता तारीख जहांगुशा (१२५७-६० ई०)
मालोफ। इ०न० द्रेव्ने तुरत्स्किये नाद्ग्रोविया स् नाद्पिस्यामि वास्मइना रे तलस (१९२९)
पेफिमेंको। पी० पो० पेर्वोवेत्नोये ओब्श्चेस्त्वा (लेनिनग्राद १९४५)
रशीदुद्दीन। फज्लुल्ला जामे-उत् तवारीख
वेइमार्न। व०व० इस्कुस्त्वा स्रेद्निइ आजिइ (मास्को १९४०)
वोस्तोकोवेदेनिये II (लेनिनग्राद १९४१)
शुस्कोव्स्की रज्वलिनी स्तारओ मेर्व (१८९८)
सब्नेयेफ। ग० द० मगोल्स्कया पोवेस्त आ खोन् मरन् गइइ (लेनिनग्राद १९३७)
सांकृत्यायन। राहुल इस्लामकी रूपरेखा (प्रयाग १९४७), दर्शन दिग्दर्शन (प्रयाग १९४७), "सोवियत भूमि"—दिल्ली १९५३
सोव्यत्स्कया एत्नोग्राफिया (१९४६)
स्त्रूवे। न०व० इस्तारिया द्रेब्ने ओ वोस्तोका (लेनिनग्राद १९४१)
हेरेदोतस अनुवादक – फ० मिश्चेंको—इस्तोरिया व् द्रेव्यानि क्निगाख I, II (१८८५-८६)
Alberumı : Chronology of Ancient Nations (**Tr E Sachau**)
Allen J : Coins of Ancient India (London 1936)
Ayyangar T T S , Stone Age in India
Bartold W , Turkistan Down to the Mongol Invasion (London 1928)
Bergmann. F G , : Les Scythes (Paris)
Berthelot A , : L' Asie Ancienne Centrale et Sud Orientale d' apre's Ptolomie (Paris 1930)
Bloomfield L Language (1933)
Boas Franz, & others, : General Anthropology (Newyork 1938)
Bullettine de l' Acedamy Royal des Sciences et de lettre de Dennemark No 3 (Copenhague)
Burkitt. M C , : Our Early Ancesters (London 1929)
Carpini John Plano, Travel of (London 1900)
Cordier H , Melonge d'historique et de Geographique Orientale (Paris 1920)
Czalicka. M , The Turks of Central Asia in History and at the Present Day (Oxford 1918)
Desqugue Histoire des Huns (Paris 1756)
D' Ohesson : *Histoire des Mongol*
Douglus R. K , : Life of Jengis Khen (London, 1877)
Elliot-Smith. G The Evolution of Man (London, 1927) In the Beginning, (London, 1940)

Gardner P Catalogue of Coins in the Bri tish Museum (London 1886)

Gorden-Childe V C The Aryan

The Bronze Age

The Most Ancient East (London, 1928)

Progress and Archaeology (London 1944)

Guignes J de, Histoire generale des Huns des Turks, des Mongole et de Autre Tartares Occidentaux (Paris, 1756-58)

Haddon A C History of Anthropology (London)

Hall H The Ancient History of Near East (London 1936)

Rawlinson G Herodotus (London)

Hiuen Tsang (Tr Julien) Memoir Sur les Contries Occidentale

Hotsma Recuecil de Textes relatif a l'histoire de seldjucides (Paris)

Ibn-Batuta Travel (Paris 1453)

Inscription de l' Arkhon re cueillies per l' expidition Finnois (1890)

Jasperson O Language its nature, Devolopment and Origin (1923)

Journal of American Oriental Society (1917 Sept) The Story of Chang-Kien

Keith. Arthur Antiquity of Man 2 vols (London) New Discovery relating to the Antiquity of Man (London 1931)

Lamb Herold , Chingis Khan (London 1928)

Leith. Duncan Geology in the Life of Man (London, 1945)

Lerch Sur les monnides de Boukhare-Khoudats

Lowie R H , Primitive Society (1920)

Maspero G Histoire Ancienne de l' Orient 3 vols (Paris 1905)

Meillet A., and m Cohen Les Languge du Monde (Paris 1924)

Mirkhond (Tr Joubert) Vie de Djenghis Khan

Mitra P Prehistoric India (Calcutta, 1928)

Moret A Histoire de l' Orient, 2 vols (Paris)

Morogon J de : L' Humanite Prehistorique (Paris)

Marcopolo (Tr Henry yule) Travel (London, 1921)

Nemeth J : Die Kokturkischen Grabins chriften aus dem Taledes Talas in Turkistan (Budapest)

Nerchakhi (Tr Schefer) : Discription Topographiqye et Historique de Bok hara

Oppert Le people et la langue des Medes

Paggots. Prehistoric India (London, 195)

Parker. E H : A Thousoud Years of Tartars (Shanghai 1895)

: The Turko-Scythien (China Review, 1892)

Pumpelly R. : Exploration in Turkistan 2 vols (1903-4)

Quennell M and C H B : Everyday Life in the Old Stone Age (London)

Radloff. W : Altturkische studien IV

Rapson. Coins of Ancient India (London)

Rawlinson H Inscription of Darius

Ridley G N Man the Verdict of Science (London, 1940)

Ruza Nour Oughous-Name (Alexandrie, 1928)

Ross-E D. (Tr) A History of Mongol of Centrerl Asia (Tarikh i Rashidi) (London)

Heart of Asia (London, 1999)

Rubriiue William The Journey to the Eastern parts of the world (London, 1900)

Saint-Martin Vivien de , : Surles Huns Blanc ou Ephthalites

Shiratorie K., A Study on the titles Kaghan and Khatun (Tokyo, 1926)

: Sur l' Origine des Hung-nu (Journal Asiatique C C X. I (1923)

Smith V : Early History of India

Sten-Kono : Notes on Indo-Scythianu Chronology

Stein M A : Manuscript in Turkish runic script from Miren and Tunh-uang (J R A S, 1912 Jan)

Sykes. P M Ancient Empires of the East

Persia 2 vols

Tarn W W : Greek in Bactria and India (Cambridge, 1938)

: Hellenistic Civilization (1930)

: Selucid-Parthien Studies (1930)

Taylor E B Anthropology 2 vols (London, 1946)

Researches to the Early History of Mankind (London 1878)

Tsui-chi : A Short History of Chinese Civilisation (London, 1945)

Thierry Am : Histoire d' Attila et de ses successurcs (Paris, 1855)

Thomes F W : Tibetan Documents Concerning Chinese Turkistan (J R A. S , 1934)

Thomsen. V. : Westturken

Traver. C.: Excavation in Northern Mongolia (Leningrad)
: Terraeotta from Afrasiab (Leningread, 1936)
Ujfaly. Migration des peoples et perticulerement Cells Touraniens (Paris, 1873)
Vambery A. History of Bokhara (1873), Sketches of Central Asia (1868), Travel in Central Asia (London, 1861)
Washborn Early History of Turks
Watters T On yuan Chwang's Travel in India, 2 vols
Wylie History of Hingnu in their relation with china (London, 1892)

परिशिष्ट २

नामानुक्रमणी

क

१–२ वसिलेओस्—अन्तिओखो II (२६२-२४७ ई० पू०) (पृ० १६८)

२ दिओदोतोउ I (२४५-२३० ई० पू०) (पृ० १७०)

४–५ वसिलेओस् एउथुदिमोउ I (२२५-१८९ ई० पू०) (पृ० १७१)

६–७ वसिलेउ एउथुदिमोउ

ख

१–२ वसिलेओस् मेगलेउ एउक्रतिदोउ (१६९-१५९ ई० पू०) (पृ० १७८)

३–४ वसिलेओस् एओतिरोस् एउक्रतिदोउ (१६०-१५० ई० पू०)

५–६–७ वसिलेओस् दिमित्रिओउ (१८३-१६७ ई० पू०) (पृ० १७३)

८–९ वसिलेओस् अन्तिमखो (१५० ई० पू०) (पृ० १७५)
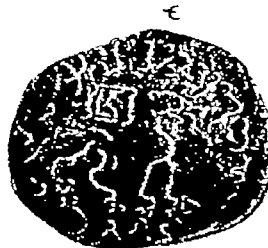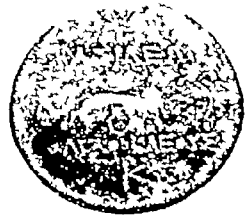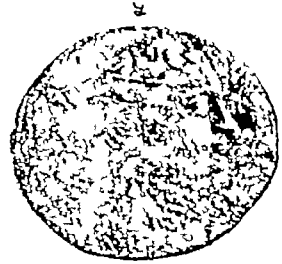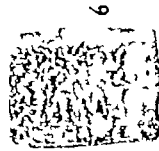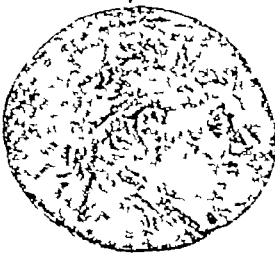
१–२ वसिलेओस् दिकइओउ (पृ० १७९) इलिओक्लेओउस (१५९-१३६ ई० पू०)
३–४ वसिलेओस् एउथुदिमोउ (१८३-१७४ ई० पू०) (पृ० १७१)
५–६ वसिलेओस् अगथोक्लेओउस् (५०-० ई० पू०) (पृ० १७९)
७ वसिलोओस् दिकइओउ ह्लिओक्लेओउ महरजस ध्रमिक्स हेलियक्रेयस (१५९-१३६ ई० पू०) (पृ० १७९)
८ अपोल्लोदोतोउ ज्रोतिरोस् महरजस अपलवतस (ई० पू० २ शतक) (पृ० १७९)
९ वसिलेओस् मेगलेउ अज़ोउ (ई० पू० १ शतक) महरजस रजदिरजस महतस अयस (पृ० १८२)